व्रत कथा कोष

अनुवादक एवं संग्रहकर्ता : परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज

प्रकाशक :

श्री दि. जैन कुंथु विजय ग्रंथमाला समिति

जयपुर (राजस्थान)

प्रकाशन संयोजक

शान्ति कुमार गंगवाल

श्री दिगम्बर जैन कुन्थु विजय ग्रंथमाला समिति

सतरहवाँ पुष्प

आचार्य जिनसेन सिंहनंद्यादि पूर्वाचार्य कृत

व्रत कथा कोष

[पद्याम्बानुवाद सहित]

संग्रहकर्त्ता :

परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थुसागरजी महाराज

प्रकाशन संयोजक :

शान्ति कुमार गंगवाल

प्रकाशक :

श्री दिगम्बर जैन कुन्थु विजय ग्रन्थमाला समिति

कार्यालय :

१९३६, जौहरी बाजार, घी वालों का रास्ता, कसेरों की गली.

जयपुर–३०२००३ (राजस्थान)

परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थु सागरजी महाराज के विशाल संघ का रोहतक (हरियाणा) में वर्ष १९९१ के वर्षायोग के समय मुनि दीक्षा समारोह के शुभावसर पर प्रकाशित

सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल्य : स्वाध्याय/[redacted]) रुपये

मुद्रक : मूनलाइट प्रिन्टर्स, जयपुर-३

ग्रंथ प्राप्ति स्थान :

श्री दिगम्बर जैन कुन्थु विजय ग्रन्थमाला समिति

१९३६, जौहरी बाजार, घी वालों का रास्ता,

कसेरों की गली, जयपुर-३ (राज.)

श्री १००८ भगवान पार्श्वनाथ

इस शताब्दी के प्रथम दिगम्बराचार्य परम तपस्वी

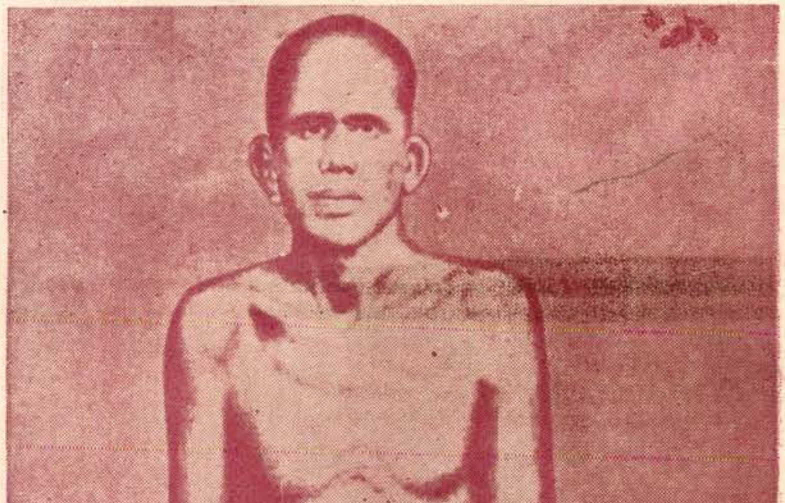

परम पूज्य समाधि सम्राट चारित्र चक्रवर्ती श्री १०८
आचार्य आदिसागरजी महाराज (अंकलीकर)

बहु भाषाविद् मंत्रवादी तीर्थभक्त शिरोमणि समाधि सम्राट

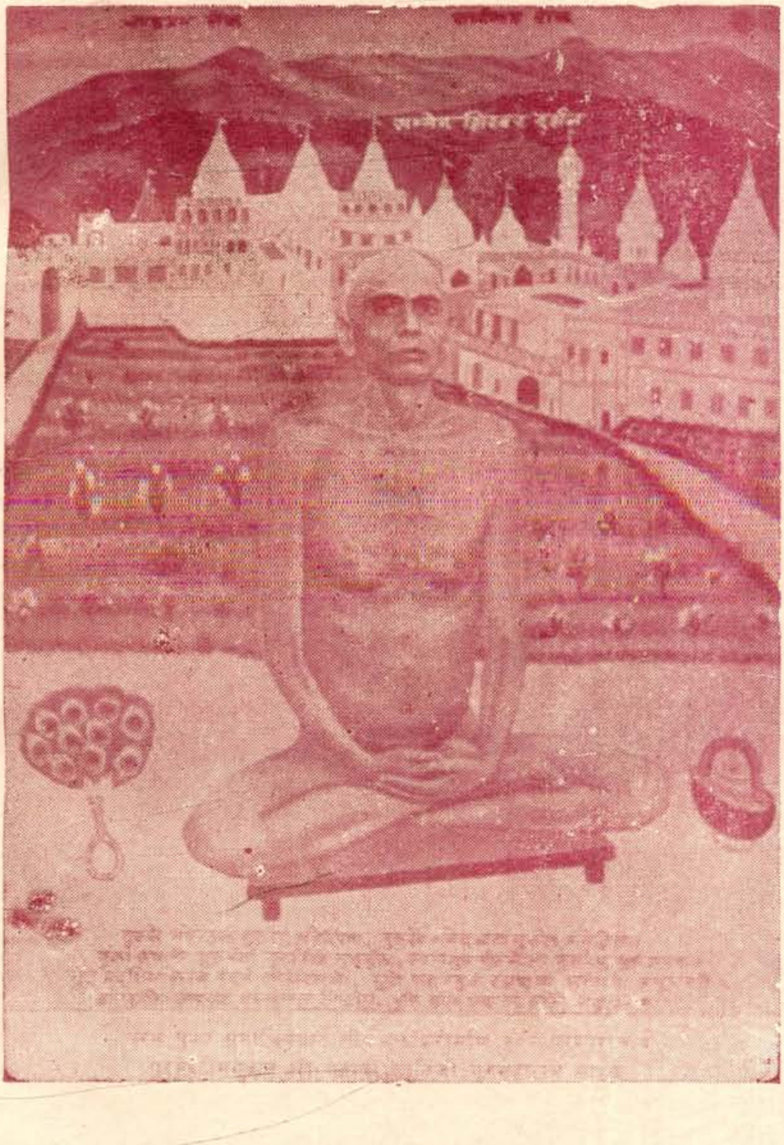

परम पूज्य श्री १०८ आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज

सन्मार्ग दिवाकर निमित्त ज्ञान शिरोमणि

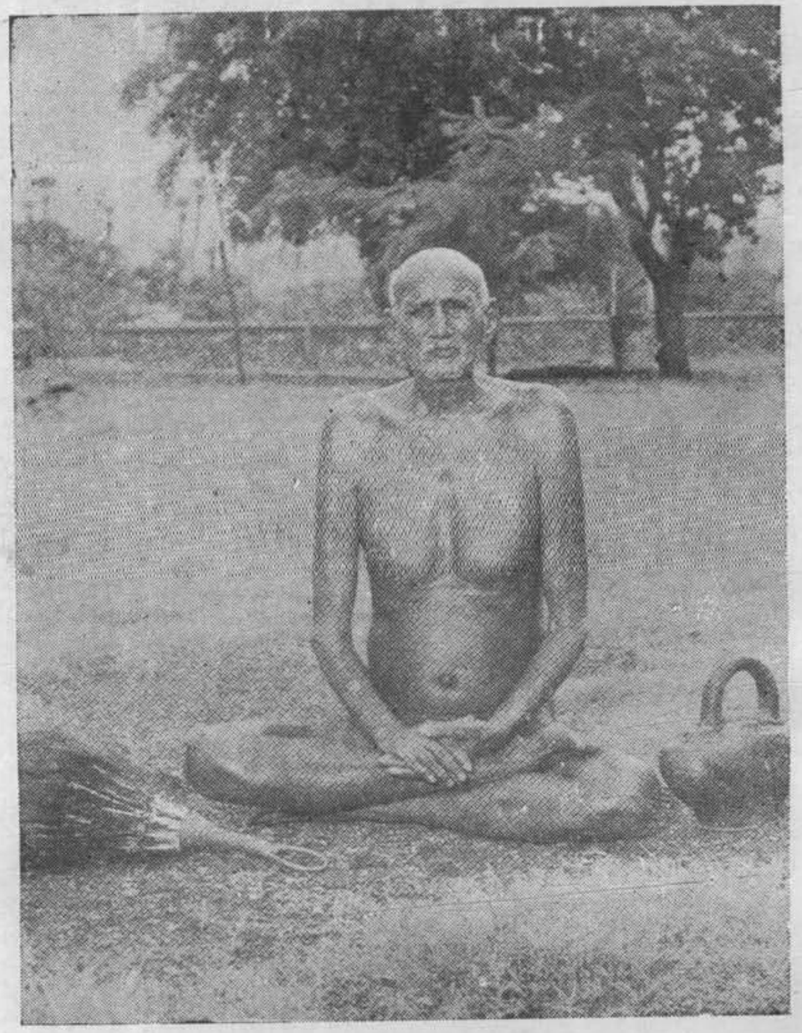

परम पूज्य श्री १०८ आचार्यरत्न विमलसागरजी महाराज

परम पूज्य श्री १०८ आचार्य आदिसागरजी महाराज
के तृतीय पट्टाधीश

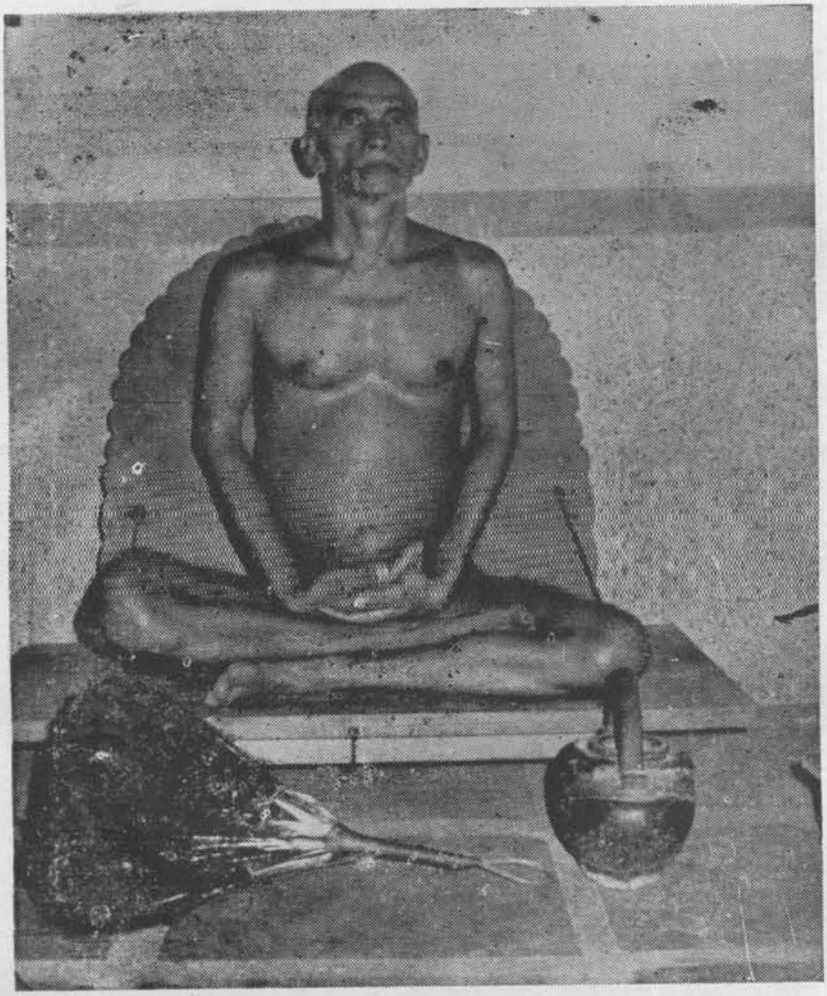

परम तपस्वी मुक्तिपथनायक संत शिरोमणि
श्री १०८ आचार्य सन्मतिसागरजी महाराज

ग्रन्थ के संग्रहकर्त्ता

वात्सल्य रत्नाकर, श्रमणरत्न, स्याद्वाद केशरी,
जिनागम सिद्धान्त महोदधि, वादिभसूरी

परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थुसागरजी महाराज

परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थुसागरजी महाराज के
परम शिष्य उपाध्याय, एलाचार्य, सिद्धान्त चक्रवर्ती

श्री १०८ कनकनन्दिजी महाराज

विदुषिरत्न, सम्यकज्ञान शिरोमणि सिद्धान्त विशारद,
जिनधर्म प्रचारिका

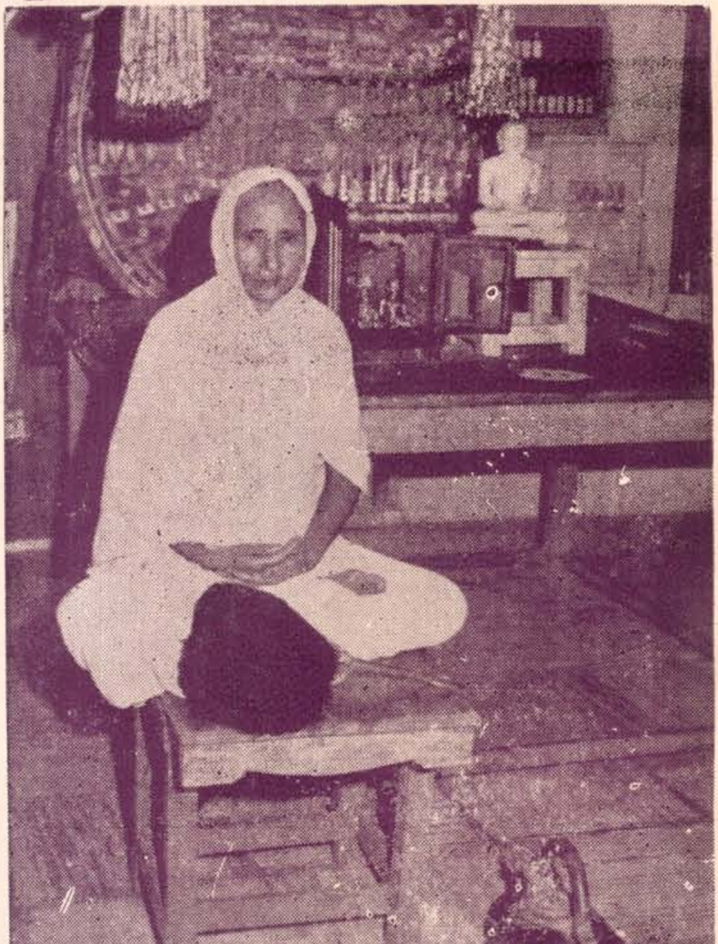

परम पूज्या श्री १०५ गणिनी आर्यिका विजयामती माताजी

—: वर्तमान में :—

परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थु सागरजी महाराज के संघस्थ साधुगण।

परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थुसागरजी महाराज से
ग्रन्थ प्रकाशन कार्य करवाने हेतु शुभाशीर्वाद प्राप्त
करते हुए ग्रन्थमाला के प्रकाशन संयोजक
शान्तिकुमार गंगवाल

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशन खर्च में विशिष्ट आर्थिक सहयोगी

श्री शोभागमल मगनलाल पंतगिया

श्रीमती ललिताबाई शोभागमल पंतगिया

ब्र. हंसाबेन

स्वर्गीय लाला सुमतिप्रशादजी

लक्ष्य बनाकर मानव जीवन को सफल करें

इस ससार में भटकते हुये जीव ने अपना लक्ष्य ही नहीं बनाया कि मुझे ऐसा क्या कार्य करना चाहिये जिससे मुक्ति की प्राप्ति हो। लौकिक कार्यों के लक्ष्य बनाने में तो निपुण रहा किन्तु आत्म कल्याण के कार्यों को करने की सुध आज तक न ली।

दिशाहीन पतवार जैसे भटकती रहती है वैसी ही दशा इस संसारी प्राणी की है। एक बार सच्चे हृदय से जिनवाणी माँ व अरहंत देव की बात स्वीकार करके, अपनी संसार यात्रा का अन्त करने में जुट जा।

मनुष्यगति में मुक्ति प्राप्ति का मौका मिला किन्तु उसे व्यर्थ ही खाने-सोने में बिता दिया। आगे किस गति में जायेंगे इसकी चिन्ता ही न की। आचार्यों ने बता दिया है कि जैसे भाव जीवों के होंगे वैसी ही गतियां इसे मिलती रहेंगी। स्वयं किये कर्मों का फल अवश्य ही भोगना होगा।

लौकिक में भी नीम बोय और आम की इच्छा करे असंभव है उसी प्रकार कार्य पाप के करे और पुण्य प्राप्ति की इच्छा करे सर्वथा असंभव कार्य है। भावों की विशुद्धता पाकर ही निगोदिया जीव बाहर आता है।

मानव जीवन पाकर तो लक्ष्य बनाकर ही कार्य करना है। जिस गति से आये हैं व जिस गति का बन्ध हो चुका है वैसे ही इस जीव के अच्छे बुरे भाग्य होते हैं फिर भी लक्ष्य पूर्वक बुरे कार्यों का त्याग करके, अच्छे कार्यों का करना जरूरी है। मानव जीवन की सफलता लक्ष्य बनाकर कार्य करने में ही है।

उपवास की मूल भावना को समझें

व्रत उपवास भी मानव जीवन में कार्यकारी तभी है जब आत्मसम्मुख होकर किये जायें अन्यथा वे लंघन जैसे हैं। गरीब भिखारी भी भूखा रह जाता है किन्तु उसकी इच्छा असीम होने के कारण उसका उपवास नहीं कहलायेगा।

उपवास का शब्दार्थ तो यह है उप याने आत्मा के वास याने समीप पहुचना। जो जितना अधिक आत्मा के समीप जायेगा उतना ही अधिक दृढ़ता पूर्वक उसका बाह्य उपवास भी सार्थक होगा।

मात्र आहार-पानी का त्याग कर देना ही उपवास नहीं है। बीमारी की दशा में भी इनका त्याग हो जाता है। अन्तरंग में इच्छायें न हों, भोजनपान सबंधी तभी बाह्य का भी त्याग उपवास है। अन्तरंग इच्छाओं का सीमित करना ही सच्चा उपवास है।

अन्तरंग परिणामों की संभाल करना ही सच्चा उपवास है। जैन धर्म की नींव भी भावों पर ही निभर है। भाव बिगड़ते रहें और उपवास होता रहे वह तो मात्र दिखावे का उपवास होगा। बंध मोक्ष की दशा भावों के अनुसार होगी।

आत्म सन्मुख होकर, बाह्य भी भोजन पानादिक का किया गया त्याग ही सच्चा

परम पूज्य श्री १०८ सन्मार्ग दिवाकर निमित्त ज्ञान शिरोमणि
'खण्ड विद्या धुरंधर'' आचार्य विमल सागरजी महाराज का

मंगलमय शुभाशीर्वाद

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता है कि श्री दिगम्बर जैन कुंथु विजय ग्रंथमाला समिति जयपुर (राजस्थान) से सतरहवें पुष्प के रूप में "व्रत कथा कोष" ग्रंथ का प्रकाशन हो रहा है। इस ग्रंथ का संकलन गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज ने कठिन परिश्रम करके किया हैं। इसके लिये महाराज को हमारा आशीर्वाद है कि भविष्य में भी इसी प्रकार के महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का संग्रह करने का कार्य करते रहे।

प्रकाशित हो रहे, ग्रंथ के माध्यम से भव्य जीव व्रतों की जानकारी प्राप्त कर, उनका महत्व समझ कर, व्रत धारण कर पूर्ण लाभ प्राप्त कर सकेंगे, ऐसा हमारा पूर्ण विश्वास है।

ग्रंथमाला समिति बहुत ही लगन व परिश्रम से कार्य करके निरन्तर ही महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन कार्य कर रही है। श्री शान्ति कुमार जी गंगवाल जो कि ग्रंथमाला के प्रकाशन संयोजक है उनकी सेवाएं अत्यन्त प्रशंशनीय है। ग्रंथमाला समिति इसी प्रकार आगे भी महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन कर जिनवाणी प्रचार-प्रसार सेवा का कार्य करती रहे, इसके लिये गंगवालजी को व इनके अन्य सभी सहयोगियों को हमारा बहुत २ मंगलमय शुभाशीर्वाद है।

आचार्य विमलसागर

इस शताब्दि के प्रथम दिगम्बराचार्य आदिसागरजी महाराज (अंकलीकर) के तृतीय पट्टाधीश परमपूज्य श्री १०८ आचार्य परम तपस्वी मुक्ति पथ नायक संत शिरोमणि सन्मतिसागरजी महाराज का

मंगलमय शुभाशीर्वाद

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि श्री दिगम्बर जैन कुंथु विजय ग्रंथमाला समिती जयपुर (राज.) द्वारा एक बृहद ग्रंथ "व्रत कथा कोष" का प्रकाशन करवाया जा रहा है। इस ग्रंथ का संग्रह युग प्रधान चारित्र चक्रवर्ती आचार्य आदिसागरजी महाराज (अंकलीकर) की परम्परा के सूर्य गणधराचार्य श्री कुंथु सागरजी महाराज ने बहुत ही कठिन परिश्रम से किया है। विवेक: व्रत पालनं" अर्थात् व्रत के पालन करने से विवेक की प्राप्ति होती है। इसके विपरीत 'व्रतेन बिना य प्राणी पशुखे न संशय" अर्थात् बिना व्रतों के पालन किए यह प्राणी पशु के समान होता है। व्रतों के पालन करने से भेद विज्ञान की प्राप्ति होती है। अतः प्रकाशित हो रहे ग्रंथ के माध्यम से कल्याणेच्छु सभी भव्य आत्माऐं पूर्ण लाभ प्राप्त करेंगे। ऐसा हमारा दृढ़ विश्वास है। ग्रंथमाला के प्रकाशन संयोजक, गुरू उपासक श्री शान्ति कुमारजी गंगवाल को तथा इनके सभी सहयोगीयों को इस कार्य के लिए हमारा भूरी-भूरी मंगलमय शुभाशीर्वाद है।

आचार्य सन्मति सागर

ग्रंथ के संग्रहकर्त्ता परमपूज्य वात्सल्य रत्नाकर श्रमणरत्न, स्याद्वाद केशरी, जिनागम सिद्धान्त महोदधि वादिभ सूरी श्री १०८ गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज के प्रकाशित ग्रन्थ के बारे में विचार एवं मंगलमय शुभाशीर्वाद

भगवान आदिनाथ से लेकर भगवान महावीर तक चौबीस तीर्थंकर हुए है। प्रत्येक तीर्थंकर ने धर्म का स्वरूप भव्य जीवों के लिए कहा है।

चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर थे। उन्होंने भी अन्य तीर्थंकरों के द्वारा प्रतिपादित धर्म को ही कहा है। भगवान महावीर ने धर्म का स्वरूप दो प्रकार से बताया है—

(1) मुनिधर्म
(2) श्रावक धर्म।

उक्त दोनों प्रकार के धर्मों में भगवान ने सम्पूर्ण कर्म निर्जरा का कारण संयमपूर्वक तप को कहा है।

जो संयम पूर्वक सुतप का सहारा लेता है, उस जीव के शीघ्र ही आठों कर्म नष्ट हो जाते हैं और वह सिद्धालय में जाकर अनंतकाल तक अनंत सुख भोगता है।

आचार्यों ने आगम में भी यही बात कही है। तत्वार्थ-सूत्रकार भगवान उमा स्वामी ने तत्वार्थसूत्र में कहा है—

"तपसानिर्जरा च।"

सुतप से कर्म की निर्जरा होती है। तप के पहले सु विशेषण लगाने का कारण यही है कि संयमपूर्वक तप करो, वह ही सच्ची निर्जरा का कारण है। वैसे तो प्रत्येक जीव को प्रतिक्षण (कर्म स्थिति पूर्ण होने पर) कर्म निर्जरा हो रही है, लेकिन वह निर्जरा आश्रवपूर्वक है, आश्रवपूर्वक निर्जरा जीव का संसार ही बढ़ाती है। सच्ची कर्म निर्जरा संवर पूर्वक होती है। संवर संयम से होता है।

तप से कर्म निर्जरा होती है, इसलिए 'सुतप करो'-ऐसा कहा है। सुतप ही संपूर्ण कर्म निर्जरा में कारण होता है। तपपूर्वक की गई निर्जरा ही जीव को मोक्ष में ले जाती है। ज्ञानी को, संयमी को अपनी शक्ति के अनुसार अवश्य ही तप करना चाहिए।

आगम में आचार्यों ने तप के दो भेद बताये हैं—

(1) अंतरंग तप (2) बहिरंग तप।

अंतरंग तप छह प्रकार का होता है—(1) प्रायश्चित् (2) विनय (3) वैयावृत्त (4) स्वाध्याय (5) व्युत्सर्ग (6) ध्यान।

बहीरंग तप भी छह प्रकार का होता है—(1) अनशन (2) अवमौदर्य (3) वृत्ति-परिसंख्यान (4) रसपरित्याग (5) विविक्त शय्यासन (6) कायक्लेश।

सम्यग्दृष्टि संयमी को अंतरंगपूर्वक बहिरंग तप होता है। मिथ्यादृष्टि के बाह्य-रूप में हीअंतरंग और बहिरंग तप होते हैं। सम्यक्त्वपूर्वक किया हुआ तप पूर्णत: कर्मनिर्जरा करने में कारण होता है, किन्तु मिथ्यात्वपूर्वक किया हुआ तप मात्र पुण्य बंध का कारण होता है। सम्यग्दृष्टि को पुण्यबंध भी और कर्मनिर्जरा भी होते हैं। अभव्य का पुण्य नौवें ग्रैवेयक तक ले जाकर पुन: संसार में भ्रमण कराता रहता है। भव्य मिथ्यादृष्टि का पुण्य परम्परा से सम्यक्त्व उत्पत्ति का कारण होता है। और सम्यग्दृष्टि का पुण्य परम्परा से मोक्ष की प्राप्ति कराता है। इसलिए प्रत्येक जीव को चाहे मिथ्यादृष्टि हो या सम्यग्-दृष्टि हो, दोनों को संयमपूर्वक बुद्धिपूर्वक पुण्यबंध करना चाहिए। जीव के लिए यही योग्य है अन्यथा अशुभ भावों में पड़कर दुर्गति में जायेगा।

हां कुतप करने का आचार्यों ने निषेध किया हैं, क्योंकि कुतप के प्रभाव से जीव देवगत्यादि के सुख भोगकर पुन: संसार में भ्रमण करने लगता है। अनादिकाल से जीव ने कुतप तो अनंत बार किया है, किन्तु सुतप नहीं किया, नहीं तो अब तक जीव मोक्ष चला जाता।

अंतरंग पूर्वक बाह्यतप करना चाहिए, वही सच्ची कर्म निर्जरा का कारण होता है। बहुत लोग वर्तमान में अध्यात्म का सहारा लेकर सहज ही कह देते हैं—दान, पूजा, जप, तप, संयम, चारित्रादि संसार का कारण है, मोक्ष का कारण नहीं। उनके लिए मेरा कहना है कि–किस जीव के लिए संयम तपादिक संसार कारण है? वे मात्र अभव्य या दूरान्दूर भव्य के लिए संसार का कारण है, भव्य के लिए नहीं। भव्य चाहे मिथ्यात्व अवस्था में हो चाहे सम्यक्त्व अवस्था में हो, उसके लिए व्रत तप संसार का कारण न बनकर परम्परा से मोक्ष का कारण होता है। क्योंकि वह भव्य है, भव्य कभी न कभी सम्यग्दृष्टि बनेगा ही। सम्यग्दृष्टि बना तो कभी न कभी मोक्ष जाएगा ही, वह संसार में नहीं रूल सकता। लेकिन यह बात अभव्य में घटित नहीं होगी। अभव्य तो कितना ही तप करे, किंतु संसार में ही भ्रमण करेगा।

मिथ्यादृष्टि का पंचाग्नि तपादिक है, वह तो एक बार दु:ख का कारण हो सकता है किन्तु मिथ्यादृष्टि का संयमपूर्वक किया हुआ अनशनादि बाह्य तप दु:ख का कारण नहीं हो सकता, वह व्यर्थ नहीं जायेगा, फल देकर ही रहेगा।

फल क्या होगा ! उसको अपार पुण्यबंध होगा, उस पुण्य के प्रभाव से मनुष्य गति, उत्तम कुल जाति उत्तम संहनन, देव-गुरु-शास्त्र का सानिध्य, गुरु उपदेश की उपलब्धि, सुयोग्य द्रव्य, क्षेत्र काल, भाव आदि भाव प्राप्त होगा संयम धारण करने को भावना जाग्रत होगी, निकट भव्यता प्राप्त होगी। मिथ्यात्व अवस्था में संयमपूर्वक किया हुआ तप का ही प्रभाव है, जो ऐसी स्थिति में जीव को लाकर धर दिया, जिससे जीव मोक्ष जाने की पात्रता वाला बन गया। वह एक दिन अवश्य सम्यक्त्वी बनकर परम्परा से मोक्ष चला जायेगा।

क्या बिना पुण्य के जीव सम्यक्त्वरूप परिणमन कर सकता है ? नहीं कभी नहीं। प्रत्येक कार्य के लिए पुण्य की परम आवश्यकता है । इसलिए आचार्यों ने कहा है—हे भव्य जोव ! मोक्ष प्राप्ति के लिए अवश्य ही बुद्धिपूर्वक पुण्य करो । गुणभद्र स्वामी ने आत्मानुशासन में कहा है—

"पुण्यं कुरूष्कृति पुण्यमनीहशोऽपि" इत्यादि।

पुण्य करो, भव्य पुण्य करो बुद्धिपूर्वक पुण्य करो पुण्य करो, पुण्य तो सुख का कारण होगा ही, पुण्यात्मा जीव को एक न एक दिन अवश्य मोक्ष प्राप्त होगा ही।

जिसके पास पुण्य नहीं है, वह तो संसार में भी कुछ नहीं कर सकता। भोजन का एक ग्रास मुख में जाना हो तो भी भी पूर्व पुण्य चाहिए। मुंह में जाने के बाद पेट में जाने के लिए भी पुण्य चाहिये नहीं तो मुंह का ग्रास मुंह मे और हाथ का ग्रास हाथ में ही रह जाता है।

आचार्यों का पूर्ण उपदेश है कि भव्य जीवों को अवश्य ही इहलोक और परलोक के सुख के लिए पुण्य करना चाहिये। कुछ लोगों का कहना है कि पुण्य तो हेय है पुण्य से भी संसार बढ़ता है तो क्या सचमुच में ही संसार बढ़ता है ? नहीं आचार्यों ने कहीं पर भी यह बात नहीं कही है हां मात्र मिथ्यादृष्टि अभव्य के द्वारा किया हुआ पुण्य संसार वृद्धि का कारण हो सकता है। किन्तु भव्य मिथ्यादृष्टि का व सम्यग्दृष्टि का पुण्य कभी भी संसार को नष्ट करने का ही कारण होगा। जैसे—वज्रजंघ श्रीमती ने चारण ऋद्धि मुनि को आहार दान दिया, रामचंद्र के जीव ने दस भव पहले रात्रि भोजन का त्याग किया, श्रीपाल ने रात्रि भोजन का त्याग किया, करकंदु के जीव ने ग्वाला की पर्याय में सहस्रदल कमल भगवान को चढ़ाया सेठ सुदर्शन के जीव ने ग्वाला की पर्याय में मुनिराज की बात को हृदय में धारण किया था, इत्यादि जितने भी संसार से मुक्त हुए जीवों की दशा सुधरी और मोक्ष गये वे सब पहले मिथ्यादृष्टि ही थे और मिथ्यात्व के मंद उदय में किया हुआ पुण्य का उदय ही सम्यक्त्व उत्पत्ति का भाव कराता है, अन्य अवस्था में नहीं।

रोटी तभी बन सकती है, जब पहले पूर्ण तय्यारी की हो, पूर्ण तैयारी के अभाव में रोटी रूप कार्य नहीं बन सकता उसी प्रकार मिथ्यात्व कर्म के मन्द उदय में किये हुए पुण्य, जो दान, व्रत, संयम भक्ति पूजा तप देवदर्शन गुरुपदेश मुनिव्रत धारण करने के बाद पाले हुए अट्ठाईस मूल गुण, श्रावकों के बाह्य बारह व्रत, षट् कर्म आदि अनेक प्रकार की धार्मिक क्रिया रूप भूमिका से बंधने वाले पुण्य से ही

सम्यक्त्व प्राप्त होने की अवस्था प्राप्त होती है, पापकर्म के उदय से कभी भी उपरोक्त दान पूजादिक की भावना उत्पन्न ही नहीं होती है, फिर सम्यक्त्व उत्पन्न होने की बात ही नहीं हो सकती, सम्यक्त्व उत्पन्न होने के लिए पूर्वोक्त सामग्री की परम आवश्यकता होती है, फिर भव्य पुण्यात्मा का कभी संसार बढ़ नहीं सकता।

मोक्ष प्राप्ति के लिए सम्यक्त्व की परम आवश्यकता है। सम्यक्त्व प्राप्ति के लिए पुण्य की परम आवश्यकता है। यही क्रम ससारी जीवों को मोक्ष जाने का है। इसलिए हमारे आचार्यों ने पुण्य बांधने के लिए अनेक विकल्प रखें। इसमें मन नहीं लगे तो ये करो, इसमें मन नहीं लगे तो ये करो, कुछ न कुछ धर्मध्यान की क्रिया चलनी चाहिये।

अनादि से आत्मा के साथ चलने वाले जो पापपुञ्ज हैं, उनको आत्मा से दूर करने के लिए एक यही उपाय हैं, दूसरा नहीं। इसलिए मन, वचन, काय से पुण्य की क्रिया करते रहो।

आचार्यो ने इस धर्मध्यान से सम्बन्धित ही व्रतों का स्वरूप कहा है—अनशन करना अवमौदर्य, रसपरित्याग करना। अनशन माने प्रौषधोपवास करना अवमौदर्य माने भूख से कम खाना नित्य रस परित्याग करना माने घी, तेल, नमक, छोड़कर भोजन करना।

व्रतों के भेदों में आचार्यों ने षोडशकारण, दशलक्षरण अष्टान्हिका, पञ्चमेरू, पुष्पाञ्जली, रत्नत्रय, सुगन्धदशमी, अनंतव्रत, चंदनषष्टि सिंहनिष्क्रीडित, कवलचन्द्रायरण मुक्तावली, रत्नावली एकावली, द्विकावली, णमोकार पैंतीसी, रविवार, शुक्रवार, गौरी-व्रत, आदि आदि मिलाकर आचार्यो ने कम से कम साढ़े तीन सौ व्रत कथाओं का निरूपरण किया हैं।

जिसको जिनसेन स्वामी ने हरिवंश पुराण में, वरांग चरित्र में, आदि-पुराण में आदि अनेक प्रथमानुयोग शास्त्रों में लिखा है।

अलग से पद्मनंदी आचार्य श्री ने, देवसेन, सिंहनंदी आदि आचार्यो ने व्रतों को उनके स्वरूप को लिखा हैं।

तिथि, दिन, वार, नक्षत्रादिकों में ये व्रत किये जाते हैं, जीव जैसा द्रव्य, जैसा क्षेत्र, जैसा काल, जैसा भाव बताया, वैसे करके मोक्ष की तैयारी करता है और परम्परा से जीव मोक्ष चला जाता है।

मैंने अनेक प्रकार के व्रत कथा कोष संग्रह देखे हैं। हस्तलिखित और छपे हुए ग्रन्थों में देखे हैं। कहीं कहीं चित्रलिखित शैलियों में उपलब्ध होते है। जयपुर में लूणकरणजी पांड्या के मन्दिर में सुगंध दशमी व रविवार व्रत की कथा सुन्दर चित्रों के साथ उपलब्ध होती है।

आचार्यों ने व भट्टारकों ने व विद्वानों ने भी अपनी अपनी शैली में जो उपलब्ध था, उसे लिखा है, स्वयं अपने मन से कुछ नहीं लिखा है। नाना प्रकार की पुस्तके

छप चुकी है, लेकिन किसी में कुछ कमी है तो किसी में कुछ कमी है। कहीं कथा है तो विधि नहीं, कहीं विधि है, तो कथा नहीं! कहीं एक कथा है तो कहीं २०-३० कथाओं का संग्रह है, ज्यादा से ज्यादा वर्तमान में छपी हुई पुस्तकों में १०० कथाओं का संकलन मिल जाता है। सूरत से छपी हुई व्रत कथा संग्रह, पं. बारेलालजी से सग्रहित टीकमगढ़ छपी हुई व्रत कथा संग्रह, महाराष्ट्र से छपी हुयी एक पुस्तक अज्ञात जी की सग्रहित से और पं. वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री का जिनेन्द्र व्रत कथा संग्रह और डा नेमी चन्द्र जी शास्त्री आरा के द्वारा संग्रहित व्रत तिथि निर्णय आदि अनेक पुस्तको में अनेक प्रकार की विधियां है।

व्रत करने वालों को एक ही पुस्तक में सब विधि व व्रत कथा उपलब्ध नहीं होती है। उत्तरस्थ विधि में और दक्षिणस्थ विधि में बहुत फरक है। जो कथाएं उत्तर में मिलती है वे दक्षिण में नहीं मिलती हैं। जो दक्षिण में मिलती है, वे उत्तर में नहीं मिलती है। सर्वांगीय व्रत विधान कथा एक जगह नहीं मिलती है।

वैसे तो इन सब प्रतियों में ज्ञान पीठ से छपी हुई डा. नेमीचन्द्र जी आरा द्वारा संग्रहित व्रत तिथि निर्णय अपने आप में कुछ पूर्ण है, लेकिन सब व्रत विधि नहीं है। उत्तर भारत में तो यही कथा की पुस्तक उपलब्ध होती है। पं. बारेलालजी शास्त्री टीकमगढ़ द्वारा संग्रहित व्रत कथा संग्रह पुस्तक तो अच्छी है लेकिन कथा सांगोपांग नहीं है। सोलापुर की वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री द्वारा जिनेन्द्र व्रत विधान का संग्रह किया है वह कन्नड़ भाषा से मराठी में अनुवादित है. उसमें ३०० व्रत कथा का सग्रह है। संग्रह अच्छा है, किंतु व्रत तिथि निर्णय उसमें नहीं है।

कथाओं का संग्रह सबसे ज्यादा इसी पुस्तक में है। जिन व्रतों के उत्तर भारत में नाम तक नहीं मिलते बस वही पच्चीस, तीस व्रत विधान और ज्यादा से ज्यादा सौ एक व्रत विधान मिलते हैं। महाराष्ट्र में एक और पुस्तक मिलती है, अज्ञातजी द्वारा संग्रहित है लेकिन इन्होंने जिनेन्द्र व्रत कथा और व्रत तिथि निर्णय के कुछ अंश लेकर संक्षिप्तिकरण कर दिया है। वह पुस्तक भी अपूर्ण है।

इन सब संकलनों को देखा जाय तो सब अपने आप में अधूरे दिखते है। कई दिनों से विचार कर रहा था कि एक ऐसा संकलन किया जाय जिससे सम्पूर्ण व्रत विधि कथाएं, उद्यापन विधि, व्रतिक को एक ही जगह उपलब्ध हो, अनेक पुस्तके नहीं देखना पड़े। धर्मात्मा भव्य जीवों को व्रत विधान की सुविधा हो जाय ऐसा विचार करके हमने सब पुस्तके सामने रखकर व्रत कथा संग्रह का एक संकलन तैयार किया है।

एक दिन शुभ मुहूर्त में मंगलाचरण प्रारम्भ कर दिया गया करीब दो साल के कठोर साधना व परिश्रम से अपने आप में एक पूर्ण व्रत कथा विधि तैयार हो गया। वर्ष १९८७ के चातुर्मास से प्रारम्भ करके १९८९ के चातुर्मास में बडौत नगरी में पूर्ण किया।

मैंने ज्यादा से ज्यादा सोलापुर के वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री के जिनेन्द्र व्रत कथा संग्रह का मराठी से हिन्दी अनुवाद किया है और उसके साथ कवि गोविन्द के व्रत कथा का भी सहारा लिया है व्रत तिथि निर्णय का पूर्ण अंश इसमें लिया है क्योंकि डा. नेमीचन्द्रजी ने व्रत तिथि निर्णय में बहुत परिश्रम करके एक अच्छा व्रत तिथि निर्णय सहित संक्षिप्त व्रत कथा का संग्रह किया है, मेरे को तो वह पुस्तक बहुत पसन्द आई है, जितना योग्य समझा पूरा का पूरा विषय मैंने इस ग्रन्थ में संकलित किया बाकी सारा संग्रह महाराष्ट्र भाषा के जिनेन्द्र व्रत कथा संग्रह का हिन्दी में अनुवाद किया है। कुछ अज्ञात जी के पुस्तक से भी संकलित किया है, इस संग्रह को सर्वांगीन बनाने के लिये बहुत ही परिश्रम किया है।

इस संग्रह में दक्षिणात्य और उतरा पथ की सर्वविधि ध्यान में रखी है। जिसकों दाक्षिणात्य विधि पसन्द हो वह दक्षिणात्य विधि करे जिसे उत्तरापथ की विधि पसन्द हो वह उतरा पथ की विधि करे।

जैसे उदाहरण के लिए दक्षिण परम्परा तो आगमिक परम्परा है, जैसा आगम में लिखा है वैसी पूजा पद्धति पाई जाती है और वह सही भी है। जैसे पंचामृत अभिषेक शासन देवता को पूजा वायना प्रदान, फूलों से जाप, उनसे पूजा, हरे फल, नैवेद्यादिक चढ़ाना, आदि आदि।

किन्तु उत्तर भारत में कहीं पर ये विधियां है तो कहीं पर नहीं हैं। मुझे तो जैसा आगम में और व्रत विधानों में मिला वैसा ही लिखा है/है वहां, नहीं है लिखना और वहां है लिखने का मेरा कोई अधिकार नहीं है। सब प्रथमानुयोग के ग्रंथों में इन सबका सप्रमाण वर्णन पाया जाता है और वैसी ही पद्धति दक्षिण भारत में है। यहां मेरा यह कहना है कि जिस तरफ की जो पद्धति है या जिस मन्दिर की जो पद्धति, रीति रिवाज, रुढ़ि परम्परा हो वहां वैसा कर लेने देवें अथवा स्वयं करे, पूजा पद्धति में फरक होने पर भी सैद्धान्तिक कोई मतभेद नहीं होना चाहिए। जिस शहर या गांव को जैसी पद्धति हो वहां वैसा करे, किसी प्रकार का विवाद नहीं करे।

पूजा आदि तो कषायें मिटाने के लिए होती है। किसी क्रिया को लेकर कषाय बढ़ती है तो वहाँ धर्म नहीं होता है धर्म तो कषायों की शांति में है। यही बात रत्नकरण्ड श्रावकाचार में पं. सदासुखदासजी ने कही है अपनी-अपनी श्रद्धा भक्ति ज्ञान शक्ति के अनुसार विवेकपूर्वक जिनेन्द्र आराधना करते रहना चाहिए। कोई एक द्रव्य से, कोई दो द्रव्य से कोई पांच द्रव्य से तो कोई आठों ही द्रव्यों से जिनेन्द्र पूजा करता है। एक दूसरे को मिथ्या मत कहो। जिसकी श्रद्धा नहीं है वह मत करो लेकिन करने वाले को और आगम गलत मत कहो इसी में शांति है।

इसलिए मैंने तो आगम के आलोक में जिस प्रकार व्रत कथाओं में लिखा वैसा लिखा है, इसमें लिखित क्रियायें आपको पसन्द नहीं है तो नहीं करे, आप अपनी श्रद्धा के अनुसार करें, लेकिन व्रत विधि की निन्दा नही करे, नहीं तो रविव्रत

का उदाहरण देख लीजिए श्रेष्ठी परिवार ने रविव्रत की निन्दा की धन के अहंकार में तब उनको क्या-क्या कष्ट भोगने पड़े ।

ध्यान रखिए, अवश्य ध्यान रखिए व्रत की निन्दा मत करिये। आगमानुसार और जैसी व्रत की विधि हो वैसा करना चाहिए। हीनाधिक करने से फल में भी हीनाधिकता हो जाती है विश्वास रखकर भाव शुद्धि पूर्वक क्रिया करे, क्रिया तभी फल-दायी हो सकती है अन्यथा नहीं।

इस प्रकार यह व्रत कथा कोष का मैंने संग्रह किया है, अनुवाद किया है, मैंने अपनी तरफ से इसमें कुछ भी नहीं लिखा है। जानकार शुद्धकर के पढ़े। मुझे क्षमा करे में तो एक छद्मस्थ जीव हूं मुझ में इतना ज्ञान कहां ?

उपयोग की स्थिरता के लिए कुछ न कुछ लिखने का अभ्यास पड़ गया है इस-लिए स्वयं के लाभार्थ कुछ न कुछ लिखता रहता हूं। आप सब भी अवश्य ही लाभा-न्वित होइये तभी मेरा श्रम सार्थक होगा।

इस संग्रह में हमारे शिष्य बालाचार्य पद्मनंदी जी व हमारी शिष्या आर्यिका करूणा श्री माताजी ने बहुत सहायता की है उसके लिए उनको मेरा बहुत-बहुत आशी-र्वाद है।

जो भी मैंने आज तक लिखा संग्रह किया अनुवाद किया या टीकायें लिखी उन सबका कुछ न कुछ किसी के नाम पर ही किया है। जैसे विमल टीका, विजया टीका, सन्मति टीका, आदि आदि। इसी प्रकार इस संग्रह के अनुवाद का नाम पद्माम्बानुवाद रखा है। मैं अपने नाम से कुछ नहीं करना चाहता हूं।

इस व्रत कथा कोष के संग्रह करने में मैंने व्रत कथा कोष सूरत, व्रत तिथि निर्णय ज्ञान पीठ, जिनेन्द्र व्रत कथा संग्रह सोलापुर, अज्ञात आदि का मैंने सहयोग लिया है। इन सबका मैं आभारी हूं और संग्रह कर्त्ताओं को मेरा आशीर्वाद है।

व्रत कथा कोष के प्रकाशन खर्च में जिन-जिन दातारों ने सहयोग किया है उन सभी को मेरा शुभाशीर्वाद है।

हमारी ग्रंथमाला के कर्मठ कार्यकर्त्ता प्रकाशन संयोजक श्री शान्ति कुमारजी गंगवाल है जो कठिन परिश्रमी होने के साथ-साथ सच्चे पुरुषार्थी है इनके सुपुत्र प्रदीप कुमारजी भी आप जैसे ही है। इन्हीं के विशेष सहयोग से यह ग्रंथमाला निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर है और अब तक 16 महत्वपूर्ण ग्रंथो का प्रकाशन हो चुका है और यह ग्रंथ सत्रहवें पुष्प के रूप में प्रकाशित हुआ है। अतः श्री शांति कुमारजी प्रदीप कुमार जी गंगवाल व ग्रंथमाला के सभी कार्यकर्त्ताओं को मेरा बहुत-बहुत मंगलमय शुभा-शीर्वाद है।

गणधराचार्य कुंथुसागर

परमपूज्या श्री १०५ गणिनी आर्यिका विदुषिरत्न सम्यग्ज्ञान
शिरोमणि सिद्धान्त विशारद, जिनधर्म प्रचारिका
विजयामती माताजी का

मंगलमय शुभाशीर्वाद

ग्रंथमाला समिति के प्रकाशन संयोजक श्री शान्ति कुमार जी गंगवाल के पत्र से विदित हुवा कि श्री दिगम्बर जैन कुंथु विजय ग्रंथमाला समिति जयपुर (राजस्थान) के द्वारा १७वें पुष्प के रूप में "व्रत कथा कोष" ग्रंथ का प्रकाशन करवाया जा रहा है। यह जानकर परम हर्ष है।

ग्रंथ प्रकाशन कार्य के लिये ग्रंथमाला समिति के प्रकाशक संयोजक श्री शान्ति कुमार जी गंगवाल व उनके सहयोगीयों को हमारा पूर्ण आशीर्वाद है कि आप इसी प्रकार धर्म प्रभावना का कार्य करते हुए सदा आगमानुकूल आर्ष परम्परा के पोषक ग्रंथों का प्रकाशन करते रहे।

गणिनी आर्यिका विजयामती

प्रस्तावना

व्रत पर्व और त्यौहार संस्कृति के थर्मामीटर हैं। भारतीय चिंतन में संस्कृति को मानव जीवन का नवनीत और सभ्यता को परिधान कहा गया है। व्रत जीवन को पवित्रता प्रदान करते हैं। व्रतों से अपने पापों का प्रायश्चित आत्मा की शुद्धि, विचारों में विशालता, मन में पवित्रता हृदय में करूणा, वात्सल्य और अहिंसाभाव जागृत होता है, लौकिक अभ्युदय की उपलब्धि तथा प्रगति और प्रेरणा के लिए सभी देशों, सभी धर्मों और सभी जातियों में व्रतों का महत्वपूर्ण स्थान है। विधि पूर्वक यथासमय किये गए व्रत इच्छित फलदाता होते हैं एवं सरस कथाएं मानव जीवन में साहस-धैर्य-मनोरंजन के साथ-साथ जीवन को प्रेरणादायक संबल प्रदान करती है। वैदिक साहित्य के "निर्णय-सिंधु" ग्रंथ में-व्रतों के नक्षत्र, तिथि, विधि, हवन, जाप, कर्मकाण्ड दान, एवं सभी आवश्यक विषयों का विशद विवेचन है। दीपमालिका, रक्षाबंधन, विजयादशमी होलिकादहन-त्यौहार और व्रत दोनों रूपों में प्रचलित है। नवरात्रि, गणेशचतुर्थी, शिवरात्रि, अनंत चतुर्दशी, डोलग्यारस, रामनवमी, जन्माष्टमी, महावीरजयंती, क्रिसमसडे, गुडफ्रायडे ओनम् के पर्व-त्यौहारों पर श्रद्धालु धार्मिक जन केवल व्रत-उपवास, फलाहार त्याग, दान, संयम पूर्वक पूजा अर्चना, देवदर्शन और गुरु सेवा ही नहीं करते अपितु अपने निवास, भवन, संस्थान,-देवालयों पूजाग्रहों को साफ स्वच्छ कर आकर्षक साज सज्जा से अलंकृत-कर दर्शनीय, मोहक और प्रभावशाली भी बनाते हैं, एवं तत्सम्बन्धी-कथा कीर्तन, भजन, प्रदर्शनी और चल समारोहों का आयोजन कर अपनी भावना का वृहद प्रदर्शन कर अपने को धन्य एवं गौरवान्वित भी अनुभव करते हैं।

धवलाटीका, त्रिलोकसार, लौकिक्तिता, धार्मिक ग्रंथों के अलावा ज्योतिष्करण्डक, जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, प्रभति ग्रंथों में नवीन-वर्षारंभ श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को माना गया है। उसी दिन प्रभु महावीर की प्रथम दिव्यध्वनि खिरी थी। कालचक्र उत्सर्पिणी अवसर्पिणी युग का प्रारम्भ भी इसी तिथि से, तथा युग की समाप्ति आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा-गुरु पूर्णिमा को माना गया है। श्रावण कृष्ण प्रतिपदा को अभिजित नक्षत्र बालवकरण-रौद्र मुहूर्त में युगारम्भ हुआ-देखें-तिलोयपण्णती १/७०। धवला और तिलोयपण्णति में अवसर्पिणी के चतुर्थकाल के अंतिम भाग में ३३ वर्ष ८ माह १५ दिन शेष रहने पर श्रावण नामक प्रथम माह में कृष्ण पक्ष प्रतिपदा के दिन अभिजित नक्षत्र में धर्मतीर्थ की उत्पत्ति हुई, अतः उत्तराषाढ़ा नक्षत्र की अंतिम १५ घटियों तथा श्रवण नक्षत्र की आदि की ४ घटियों में अभिजित नक्षत्र होता है, तभी वीर शासन जयंति मनाना चाहिए। इसी प्रकार श्रावण शुक्ला सप्तमी प्रातःकाल विशाखा नक्षत्र में ही भगवान पार्श्वनाथ का निर्वाणोत्सव मनाना चाहिए। तथैव हरिवंश पुराण के बीसवें सर्ग में विष्णु कुमार

आदि ७०१ मुनियों की रक्षा-कथा-श्रावण शुक्ला पूर्णिमा-श्रवण नक्षत्र उदया तिथि में ही मनाने का विधान है, एवं पूजन-हवन-पूर्वक यज्ञोपवीत धारण को कहा गया है एवं तीनों कालों में ओं ह्रों अर्हं श्री चन्द्रप्रभु जिनाय कर्म भस्म विधूननं सर्व शांति वात्सल्योपवर्द्धनं कुरु कुरु स्वाहा।" का जाप करना चाहिए।

यह एक अनाज के भोजन से, आठ वर्षों तक करके उद्यापन पूर्वक पूर्ण करें इसी दिन श्रेयांसनाथ भगवान का निर्वाण भी हुआ था। इसी प्रकार वासुपूज्य स्वामी का निर्वाण दिवस भी फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा को मध्याह्न के समय ही "तिलोयपण्णती के अनुसार मनावें। भगवान महावीर का निर्वाणोत्सव कार्तिक कृष्णा अमावस्या को एवं स्वाती नक्षत्र में ही मनाया जाना चाहिए। दीपावली पूजा-लक्ष्मी पूजन-शुद्ध अष्टद्रव्य मंगल कलश, नारिकेल, गणेश, सरस्वती, चित्र, स्वस्तिक, नवीन केशरिया, गुलाबी, श्वेत वस्त्र, एवं बहीखाते-रुपयों की थैली, देवशास्त्र गुरु अर्घ्य, परमेष्ठि पूजन, नवदेव गणधर गणेश पूजन पूर्वक शुद्ध धोती कुरते में करे बहियों पर श्री ऋषभाय नमः, श्री महावीराय नमः, श्री गौतम गणधराय नमः श्री केवलज्ञान सरस्वत्यै नमः श्री लक्ष्म्यै नमः श्री वर्द्धताम् पूर्वक करना चाहिए दीपक ही जलावें- फटाके-बारूद आदि का प्रयोग जीवनाशक है अतः त्याज्य है। फल सूखे मेवे काजू, किसमिस, नारियल एवं ऋतु फल ताजे, शुद्ध, जीवरहित बांटना ही पुण्यकारक लक्ष्मीवर्द्धक है।

भगवान ऋषभदेव का निर्वाण महोत्सव माघ कृष्णा चतुर्दशी उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के चौथे चरण में ही मनाना चाहिए-इसी समय अभिजित मुहूर्त भी प्राप्त हो जाता है, जो सभी शास्त्रों पुराणों द्वारा सर्व सम्मत है।

महावीर जयंती :—चैत्र शुक्ला त्रयोदशी उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र कन्या राशि-मकर लग्न में मनाना चाहिए। वैशाख शुक्ला तृतीया अक्षय तृतीया कहलाती है इस दिन हस्तिनापुर के राजा श्रेयांस ने भगवान आदिनाथ को इक्षु रस का आहार देकर अपने जीवन को धन्य किया, इक्षु रस का भोजन अक्षय स्वास्थ्य हृदय पुष्टिकारक अमृत है इस दिन उदया तिथि प्रातःकाल में ही सभी पूजा-पाठ-दान-धर्म आदि करना विशेष श्रेयस्कर है।

श्रुत पंचमी :— ज्येष्ट शुक्ला पंचमी को षट् खण्डागम का प्रणयन हुआ, चतुर्विध संघ ने आगम शास्त्रों की पूजा की उत्सव मनाया, यह जिनवाणी दिवस है-धरसेन के शिष्य भूतबलि और पुष्पदंत ने शास्त्र रचना की एवं भूतबलि ने इस दिन पूर्ण किया, इस दिन श्रुत पूजा के साथ सिद्ध भक्ति, श्रुतभक्ति, शांतिभक्ति पाठ के साथ १०८ मन्त्राहुति भी देना चाहिए।

मानव जीवन शोधन के लिए व्रत जरूरी है समस्त श्रावकाचार और मुन्याचार व्रत रूप ही है। सागर धर्मामृत में – अध्याय-2 ' संकल्प पूर्वक; सेव्यो नियमोऽशुभकर्मण। निर्वृत्तिर्वा व्रतं स्याद्वा प्रवृति शुभकर्मणि।" सेवनीय विषयों का संकल्प करना, हिंसादि व्रतों का त्याग करना, शुभ प्रवृत्तियों में प्रवृति, पात्रों को दान देना-ही व्रत है।" रत्नत्रय, दशलक्षण अष्टान्हिका, षोड़शकारण, मुक्तावली, पुष्पाञ्जलि, रविव्रत सुगन्धदशमी आदि

व्रतों की विधिपूर्वक क्रिया, पापनाशक, ग्रहशांति कर, पुण्यवर्द्धक, अभीष्ट साधक है आचार्य वसुनंदि ने श्रावकाचार में कहा है-जिनगुण सम्पत्ति, षोड़शकारण, रत्नत्रय, नंदीश्वर पंति, विमानपंति आदि के द्वारा यह मानव, देव, स्वर्ग-भोगों को भोगकर, मानव पर्याय में तपध्यान से मोक्षपद प्राप्त करता है यथार्थ में व्रत रहित मानव पशु तुल्य ही है।

व्रतों के प्रमुख भेद :—१ सावधोनि २ निरवधीनि ३ दैवसिक ४ नैशिक ५ मासावधि ६ वर्षावधि ७ काम्य, ८ अकाम्य ९ उत्तमार्थ हैं।

निरवधि व्रतों में :—कवलचंद्रायण, तपोञ्जलि, जिनमुखावलोकन, मुक्तावली, द्विकावली एकावली है।

सावधि व्रत :—तिथि की अवधि में किये जाते हैं—सुखचिंतामणिभावना, पंचविंशतिभावना, द्वात्रिंशतभावना सम्यक्त्व पचविंशतिभावना और णमोकार पंचत्रिंशत भावना आदि है।

दिनों की अवधि से किये जाने वाले व्रतों में दुःख हरण व्रत, धर्म चक्रव्रत, जिनगुण सम्पत्ति सुख सम्पत्ति, शीलकल्याणक, श्रुतिकल्याणक, चंद्र कल्याणक है।

दैवसिक व्रतों में :—दिनों की प्रधानता रहती है-अष्टमी, चतुर्दशी रत्नत्रय-दशलक्षण दैवसिक व्रत हैं आकाश पचमी व्रत नैशिक व्रतों में आता है। षोड़शकारण, मेघमाला आदि मासिक व्रत कहलाते हैं। जो व्रत किसी फल की कामना से किये जाते हैं हैं वे काम्यया अभीष्ट है। जो निष्काम किये जाते हैं वे अकाम्य हैं।

व्रतों का विकास :—प्रारंभ में व्रत थोड़े थे, प्राचीन शास्त्रों में मूलगुण-बारह व्रत, ग्यारह प्रतिमा संल्लेखना व्रतों का उल्लेख है, किन्तु हरिवंश पुराण, अन्य शास्त्रों में इनके विविध रूप, भेद और विस्तृत उल्लेख हैं व्रत-कर्मों की निर्जरा करते हैं। आस्रव को रोकते हैं। तपपूर्ण, ध्यानसिद्धि और आत्मानंद देते हैं जैसा कि पूर्व में कहा है-नवीन वर्षारंभ-वीरशासन जयंति से होता हैं- अतः श्रावण मास में वीरशासन जयंति, अक्षय निधि, गरूड़ पंचमी, मोक्ष सप्तमी, अक्षय फल दसवीं, द्वादशी, रक्षा बंधन मनायें।

अक्षय निधि व्रत :—श्रावण शुक्ला नवमीं को ब्रह्मचर्य, जिनपूजा, उपवास, दान, गुरु सेवा स्वाध्याय पूर्वक रात्रि जागरण सहित करना होता है। त्रिकाल णमोकार की ११ मालाएं एवं ओं ह्रीं वृषभजिनाय नमः। पूर्वक जाप जरूरी है। मोक्ष सप्तमी को ओं ह्रीं पार्श्वनाथाय नम :। का त्रिकाल जाप करें। गरुड़ पंचमी को ओं ह्रीं अर्हद्भ्यो नमः के जाप का विधान है। मनोकामना सिद्धि के लिए श्रावण शुक्ला षष्ठी व्रत का विधान है।

इसमें मन्त्र ओं ह्रीं श्री नेमिनाथाय नमः जपे एवं कल्याण मन्दिर स्तोत्र का पाठ करें अष्टमी और चतुर्दशी पर्व तिथियां—ये जया, है एवं रिक्त को पूर्ण करती है।

फलदायक हैं इनमें एकाशन– उपवास फिर एकाशन-इस प्रकार तीन दिन में प्रोषधोपवास करें सिद्ध भक्ति, श्रुत भक्ति आलोचना, शांतिपाठ, एवं ओं ह्रीं णमो सिद्धाणम् सिद्धाधिपतये नमः का जाप करना चाहिए।

व्रतों के उद्यापन रत्नत्रय–मंदिरजी में एक गोल चौकी या टेबल पर रत्नत्रय व्रतोद्यापन का मण्डल बनाना चाहिए, चार फुट लम्बी, चार फुट चौड़ी–श्वेत वस्त्र बिछाकर लाल, पीले हरे, नीले, श्वेत रंग के चांवलों से मण्डल मांडना चाहिये बीच में ओं ह्रीं रत्नत्रय व्रताय नमः । लिखें दूसरा मण्डल सम्यकदर्शन का होता है- इसके १२ कोठे हैं सम्यकज्ञान के ४८ कोठे—सम्यक् चारित्र के ३३ कोठे मांडना, शुद्ध जल से भगवान का अभिषेक करें (सौभाग्यवती कुंवारी-शुद्ध वस्त्रालंकृत महिलाएं-शुभ मुहूर्त में जल लावें) छत्र, चमर, झारी, मंगल द्रव्य, जप, माला, कलश, दश शास्त्र, दस बर्तन, दस लक्षण यन्त्र, १०० चांदी स्वस्तिक, दस नारियल, १०० सुपारी आवश्यक हैं। दस घरों में फल बांटना चाहिए।

षोड़शकारण :—मण्डल २५६ कोष्टक का होता है। दर्शनविशुद्धि में ६८ कोष्टक, विनय सम्पन्नता में ५, शीलभावना में १०, अभीक्षण ज्ञानोपयोग में ४२, संवेग में १४, शक्ति समाज में ४, शक्तित्रय में २४, साधु समाधि में ४, वैयावृत में ४, अर्हद भक्ति में १३, आचार्य भक्ति में १२, श्रुत भक्ति में २, प्रवचन भक्ति में ५, आवश्यक परिहार में ६, मार्ग प्रभावना में १०, प्रवचन वात्सल्य में ४ कुल २५६ कोष्टक का मांडना रंगीन चांवलों से किसी अनुभवी-विद्वान के मार्ग दर्शन में मांडना चाहिए।

जलयात्रा, अभिषेक, मंगलाष्टक, सकलीकरण, अंगन्यास, स्वस्ति वाचन आदि के उपरान्त षोड़शकारण। व्रतोपधान पूजा करनी चाहिए। एवं पुण्यावाहन, शांतिपाठ विसर्जन पाठ करें। सोलह घरों में फल वितरित करें।

सामग्री :—षोड़शकारण यन्त्र, पूजन सामग्री, २५६ चांदी के स्वस्तिक, २५६ सुपारी १६ शास्त्र, १६ नारियल, बर्तन, छत्र, चंवर, मंगल द्रव्य, चंदोवा, दान को फल, नगद रुपये होवें।

अष्टान्हिका :—चारों दिशाओं में १३ कुल ५२ चैत्यालयों का मण्डल बनावें जलयात्रा अभिषेक–पूजन विधि पूर्वक करें मन्दिर में आठ उपकरण, आठ-आठ शास्त्र, पूजन सामग्री, चंदोवा, ५२ चांदी के स्वस्तिक, ५२ सुपारी ४ नारियल हों सिद्धचक्र मंडल बनावें। ८१ कोष्ठकों का मण्डल, बीच में पार्श्वनाथ प्रभु की प्रतिमा हो मन्दिरजी में ९ शास्त्र, ९ बर्तन, उपकरण, चंदौवा, ८१ स्वस्तिक, ८१ सुपारी, ९ नारियल, पूजन सामग्री, नौ श्रावकों के घर बांटने को नौ-नौ फल बांटें। ९ श्रावकों को भोजन कराये।

रविवार व्रतोद्यापन :—इसमें मन्दिरजी को उपकरण, शास्त्र ९ बर्तन पूजन सामग्री, चदोवा, ८१ स्वस्तिक चांदी के, ८१ सुपारी, ९ नारियल सिद्ध यन्त्र, ८१ कोष्ठक मांडना, मध्य में पार्श्वनाथ मूर्ति श्रावकों के ९ घरों में ९ फल और नव श्रावकों को शुद्ध आहार देना चाहिए।

इसी प्रकार पुष्पांजलि, त्रिलोकतीज, मुकुट सप्तमी, अक्षय फल दसवीं श्रावण द्वादशी, रोहिणीव्रत, आकाश पंचमी, कवल चान्द्रायण, जिनगुण सम्पत्ति, चतुर्दशी, निर्जरा पंचमी, कर्मक्षय व्रतोद्यापन एवं अन्य व्रतों को भी भावशुद्धि, विधि पूर्वक विद्वान, सयमी शास्त्रज्ञों के मार्ग दर्शन में करना चाहिए।

प्रथमानुयोग में व्रतों के फल प्राप्त करने वालों के चरित्र वर्णित है—हरिवंश पुराण के ३४ वें सर्ग में सर्वतोभद्र रत्नावली, सिंह निष्क्रीड़ित, व्रतों का विस्तृत वर्णन है पद्मपुराण, आदि पुराण, हरिवंश पुराण, आराधना कथा कोष, व्रत कथा कोष, हरिवंश कथा कोष आदि शास्त्रों में सभी व्रतों के पालने वाले महापुरुषों की पुण्य कथाएं पठनीय, मननीय, विचारणीय एवं जीवन में ग्रहणीय हैं। इनमें कर्म फल की अनिवार्यता है एवं व्रतों से पुण्य पाप का नाश तथा मनोकामना सिद्धी के वर्णन विवरण है।

इन व्रतों से स्वस्थ शरीर, निर्मल बुद्धि, पवित्रमन, स्थिरचित्त, एवं आत्मिक आनंद के साथ, लौकिक-सांसारिक सुख भोग, पुत्र, पतिप्राप्ति, दरिद्रनाश, यश-प्रतिष्ठा, रोग निवृति, एवं अपयश नाश, राज सम्मान-प्रतिष्ठा तथा सुख वैभव प्राप्त होते हैं। व्रती व्यक्ति को समाज-आदर सम्मान तो देता ही है, उसका गुणानुवाद होता है। एवं घोड़े हाथियों पर बाजे-गायन-समारोह पूर्वक उसकी शोभायात्रा भी निकलती है रविवार व्रत से दारिद्रयनाश, एवं सुगन्ध दशमी व्रत से श्मसान भूमि में भी राजा के द्वारा पाणि-ग्रहण तथा कोढी कुष्ठी श्रीपाल को मैना सुन्दरी की सिद्धचक्र पूजा-जल से सुन्दर काम देवों का रूप पुनः प्राप्त हो जाता है।

वादिराज मुनि का कुष्टनाश, मानतुंग आचार्य के ताले टूटना, बेड़ी जंजीरे टूटना मेंढ़क को फूल की पूजा भावना से (श्रेणिक हाथी पांव से दबकर मृत्युवाद) स्वर्ग की प्राप्ति एवं धर्म तथा पुण्य के प्रभाव से कुत्ते से देवता की योनि प्राप्त होना शास्त्रों में सुविख्यात है। दान, व्रत, और उनके फल विश्व विदित हैं। एक बट का बीज भूमि में जाने से विशाल वट वृक्ष पैदा होता है-उसी प्रकार एक क्षण की पवित्र दान भावना और कार्य से सर्व संसार सुख संभव है। As you sow. So you Reap, जैसा करोगे-वैसा बोओगे, वही फल मिलेंगे। तप करते हुए मुनिराज ने जलते हुए दावानल में सैकड़ो हाथियों को देखा, द्रवित हुए, भावना भायी जीवों की रक्षा होवे, तत्काल वर्षा हुई सभी हाथियों के प्राण बचे। श्रद्धा से अंजन चोर, निरंजन हो गया। मातग चाण्डाल, अहिंसा व्रत से सम्यकदृष्टि एवं श्रद्धा से देव पूजित बना, भावना से एक छोटी (गोमटघंटी) सी घंटी के जल से अभिषेक करवाकर, (वृद्धा और पुत्र की इच्छा भावना) गोमटेश्वर बाहुबली कहलाएं। पद्मपुरी में मूला जाट को प्रभु ने स्वप्न दिया श्री महावीर जी में गय्या के दूध से अभिषेक स्वीकार करके यह सिद्ध कर दिया कि भावना-भक्ति और पवित्रता मन में ही है। स्वयं में ही प्रसुप्त सिद्धि और शक्ति है। व्रतों को विधि पूर्वक करने से लौकिक, सुख एवं मोक्ष का विधान शास्त्रों में है। यह ग्रंथ पहली बार जैन श्रावकों को व्रत-उनकी क्रिया, विधि, फल और उसके नायकों को एक साथ प्रस्तुत करता है।

प्रस्तुत ग्रंथ में जो कथाएं हैं-वे सार्व देशिक, सार्वकालिक, (सार्वज) तीन मानव मात्र को सुखदायक हैं। इनका महत्व ईसप की कथाओं, पंचतंत्र और (हितोप) देश, कथा सरित्सागर और लौक कथाओं से भी अधिक है क्योंकि कथाएं, रात्रि कथा, निंदा कथा, कलह कथा, युद्ध कथा, राज छल कथा, त्रियाहठ कथा विषय भोग कथा, धूर्त कथानक एवं गल्प—मनोरंजक, कल्पना पूर्ण कथाएं नहीं हैं अपितु मौलिक—पौराणिक-शास्त्र सम्भूत- प्राचीन–उपादेय एवं मानव जीवन को सुखद् स्वस्थ, सुसंस्कृत, शालीन जीवन की समस्याओं का निराकरण करके–इच्छित सफलताएं देने वाली हैं। गणधराचार्य श्री कुंथुसागर महाराज की इस कृति को प्रकाशित करके श्री गंगवाल शांतिकुमारजी ने केवल जैन जगत की सेवा की है, अपितु राष्ट्रभाषा हिन्दी का भण्डार भी भरा है। विश्वास है पिछले प्रकाशनों की तरह यह कृति भी सभी के स्नेह आदर की पात्र बनेगी।

डा. प्रो. अक्षय कुमार जैन
ज्योतिष विशेषज्ञ
५१/२ रावजी बाजार, इंदौर

प्रकाशित ग्रन्थ के बारे में मेरे विचार

साहित्य जीवन का अध्ययन है। सच्चे अर्थों में मानवीय भावों की सर्वश्रेष्ठ अनुकृति है, जीवन की सुन्दर व्याख्या और व्यवहार का उचित मुहावरा है, मानव समाज का मस्तिष्क होता है साहित्य, मनीषियों ने साहित्य उसे ही कहा है जिसमें हित की भावना सन्निहित हो "हितेन सहितम् सहितस्य भावः साहित्यम्' आचार्य कुन्तक के अनुसार-साहित्य वह है जिसमें शब्द और अर्थ की परस्पर स्पर्द्धामय मनोहारिणी श्लाघनीय स्थिति हो"

साहित्य सोद्देश्य होता है, साहित्य से ही मानव मस्तिष्क, सभ्यता, संस्कृति एवं सामाजिक विवेक का विकास होता है इसीलिए साहित्य को समाज का प्रतिबिम्ब, दर्पण, दीपक व मस्तिष्क कहा गया है। साहित्य अतीत का दर्पण, वर्तमान का प्रतिबिम्ब व भविष्य के लिए दीपक होता है।

साहित्य की मुख्य दो विद्या है। गद्य और पद्य किन्तु गद्य और पद्य के पृथक-पृथक अनेकों भेद हैं–गद्य साहित्य की सबसे लोकप्रिय विद्या कहानी ही है। यह अपनी यर्थाथता, मनौवैज्ञानिकता एवं वर्णनात्मकता के कारण अत्यन्त प्रभावशाली है। यह जीवन का एक खण्ड चित्र प्रस्तुत करती है। कहानी का उद्देश्य मनोरंजन के साथ-साथ व्यक्ति और समाज के महत्वपूर्ण अनुभवों, नीति और उपदेश को अभिव्यक्ति प्रदान करना भी है, इसने अपने चंचल और थिरकते रूप में सम्पूर्ण सृष्टि के इतिहास को समाहित कर लिया है।

गद्य की इस सशक्त विद्या का प्रारम्भ लेखन युग से भी प्रारम्भ का है, मानव में जब स्मृति, संवेदनशीलता एवं मनोभावों की अभिव्यक्ति का अभ्युदय हुआ तब से ही कहानी का उद्भव काल माना जाता है मानव ने जड़-चेतन, दृश्य और अदृश्य के माध्यम से धर्म, नीति, सामाजिकता राजनीति, ज्ञान विज्ञान एवं व्यावहारिकता का ज्ञान देने हेतु कहानी को ही सशक्त अवलम्ब माना, इसकी संप्रेषणीयता इतनी प्रभावी और अनुकूल रही कि अपने उद्भव काल ही अद्यतन कहानी संवेदनात्मक चंचल सरिता की तरह प्रवाहित एवं समादत है। प्रत्येक काल खण्ड में 'कहानी' की उपयोगिता सर्वमान्य एवं सर्वग्राह्य रही।

जैन शासन में भी कहानी का अभ्युदय आदिनाथ तीर्थंकर के देशना काल से ही है, समोशरण में जिज्ञासुओं के अनेकों प्रश्नों का समाधान कहानी कथा के माध्यम से प्रभावी ढंग से विश्लेषित करने का वर्णन है, जैनागम के सिद्धान्तों एवं मानव जीवन पर इनके प्रभाव का कथा कहानी के माध्यम से सांगोपांग वर्णन है सत्य तो यह है कि आदि तीर्थंकर ने भी आबाल वृद्ध, प्रतिभा सम्पन्न, मन्द व सामान्य बुद्धि युक्त जनमानस के

लिए कहानी कला को ही समुचित समझा और है भी, इसीलिए जैनागम के चार प्रकार में प्रथमानुयोग अर्थात् कहानी कथा के पुराणों व कोषों को ही समस्त वाङ्मय में प्राथमिकता भी दी गई और हृदय ग्राह्यता को प्रथम कारण माना गया है ।

वर्तमान में भी कथा-कहानी के महत्व को अधिमान एवं प्रतिष्ठा जनक स्थान प्राप्त है, इनके माध्यम से बच्चों को भी संस्कारित किया जा सकता है तथा सरलता से व्रतों के महत्व पूजार्चना की वैज्ञानिकता, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र को मोक्ष मार्ग में भूमिका, चारों अनुयोग साथ ही सम्पूर्ण विश्व के ज्ञान विज्ञान से सम्बन्धित साहित्य भूमण्डल, स्वर्ग नरक, धर्म, दर्शन, एवं विज्ञान, पाप-पुण्य निमित्त उपादान, एवं मानव जीवन की गरिमा व महिमा को समझा जा सकता है ।

वर्तमान में "परमारथ के कारणे, साधुन धरा शरीर" के जीवन साक्षो, जीवनोत्थान के प्रेरणा पुंज, जाज्वल्यमान श्रमण-रत्न, वात्सल्य रत्नाकर, स्याद्वाद केशरी परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज ने एक कुशल संघटक, शिल्पी एवं मूर्तिमन तीर्थ के भांति समाज को सही दिशा निर्देश एवं तत्वज्ञान आगम परिचय कराने हेतु "व्रत कथा कोष" को रत्न मजूंषा प्रदान की हैं । नि:सन्देह समस्त समाज इस अनुपम कृति से लाभान्वित होकर अपना मनुष्य जन्म सार्थक करेगा । चूंकि ये कथा कोरी कल्पना नहीं है, सत्य है, हम जैसे ही मानवों का अनुभव-कोष है, हम पुनीत पथ पर अग्रसर होकर गुरू-प्रयास को एवं आशीर्वाद से साक्षात्कार करें भौतिक ताप के इस संक्रमण युग में शीतल फुहार का आध्यात्मिक आनन्द लेकर जीवन सुवासित करें—

वस्तुतः गणधराचार्य श्री जी के करूणा-भाव का प्राणि जगत युगों-युगों तक ऋणी रहेगा !

प्रस्तुत ऐतिहासिक, विशिष्ट ग्रन्थ का प्रकाशन श्री दिगम्बर जैन कुंथु विजय ग्रन्थमाला समिति द्वारा हो रहा है इसके प्रकाशन संयोजक परम गुरुभक्त, साहित्य सेवी एवं निस्पृह धर्मशील श्री शांति कुमारजी गगंवाल है जो अपनी अहर्निश साधना से अल्प समय में ही १७ वां पुष्प समर्पित कर रहें हैं ।

सद् संकल्प के लिए हार्दिक बधाई एवं निरन्तर प्रगतिशीलता के लिए मंगल कामनाये ।

गुरु-चरणों में सविनय नमित
डा. (श्रीमती) नीलम जैन
सम्पादक-धर्म दर्शन विज्ञान शोध प्रकाशन

———

प्रकाशकीय

मुझे हार्दिक प्रशन्नता है कि श्री दिगम्बर जैन कुंथु विजय ग्रंथमाला समिति जयपुर (राजस्थान) द्वारा १७वें पुष्प के रूप में प्रकाशित "व्रत कथा कोष" ग्रंथ का विमोचन परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथु सागरजी महाराज के कर-कमलों द्वारा करवाने का परम सौभाग्य प्राप्त हो रहा है।

"व्रत कथा कोष" एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण ग्रंथ सिद्ध होगा क्योंकि गणधराचार्य महाराज ने बहुत ही कठिन परिश्रम करके सारे व्रतों का पूर्ण विवरण इस ग्रंथ में संग्रह करने का कार्य किया है। ग्रंथ में व्रतों के नाम, व्रत करने की विधि, व्रत समाप्त हो जाने पर उद्यापन विधि, किस संकट से मुक्ति पाने के लिये किसने व्रत किया था आदि-आदि यह सब पाठकों को एक ही ग्रंथ में पढ़ने को प्राप्त हो सकेगा।

परम पूज्य गणधराचार्य महाराज ने भव्य जीवों के लाभार्थ जो यह कार्य किया है, हम सब उसके लिये कृतज्ञ है और आपके श्री चरणों में कोटिशः २ बार नमोस्तु अर्पित करते हैं।

परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य महाराज आर्ष परम्परा के दृढ़ स्तम्भ है। समता वात्सल्यता निर्ग्रन्थता आपके विशेष गुण है। जो भी आपके एक बार दर्शन लाभ प्राप्त कर लेता है, वह अपने आपको धन्य मानता है।

स्वकल्याण के साथ २ आपके भाव पर कल्याण के लिये भी सदैव बने रहते हैं। जिसका उदाहरण आपका विशाल संघ है।

वर्तमान में आपके संघ में २९ साधु है जिसमें से आप ही के दीक्षित मुनियों की संख्या १७ हैं जो भारत वर्ष में विद्यमान किसी भी संघ में नहीं हैं। यह हमारे लिये बहुत ही गौरव व प्रसन्नता की बात है कि ऐसा विशाल संघ हमारे मध्य विराजमान है।

पूर्वाचार्यो द्वारा लिखित तीर्थंकरो की वाणी के अनुसार भव्य जीवों को ग्रंथ पढ़ने को उपलब्ध हो सके और साथ ही साथ उन महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन भी हो सके जिनका प्रकाशन आज तक नहीं हुआ है। इसके लिये आपकी प्रेरणा व शुभाशीर्वाद से जयपुर (राजस्थान) में वर्ष १९८१ में श्री दिगम्बर जैन कुंथु विजय ग्रंथमाला समिति की स्थापना की गयी। आपने अनेक ग्रंथ लिखे। जो ग्रंथ अन्य भाषाओं में थे उनका अनुवाद किया और टीकाएं भी की। इस ग्रंथमाला से विभिन्न महत्वपूर्ण विषयों पर १६ महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन हो चुका है। और १७वें ग्रंथ का आज विमोचन होने जा रहा है। ग्रंथमाला द्वारा प्रकाशित सभी ग्रंथ एक से बढ़कर एक सुन्दर आकर्षक

तथा विषय में परिपूर्ण होने से महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए है और सभी पाठकों ने स्वाध्याय करके लाभ प्राप्त किया है।

इस प्रकार गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज के गुणों के बारे में जितना लिखा जावें उतना ही कम है। मात्र मैं तो इतना ही समझता हूँ कि वर्तमान युग में परम पूज्य गणधराचार्य महाराज आर्ष परम्परा के दृढ़ स्तम्भ होने के साथ २ त्याग तपस्या की साक्षात मूर्त्ति है।

ग्रंथ में प्रकाशनार्थ, प्रस्तावना आदरणीय प्रोफेसर अक्षय कुमारजी जैन इन्दौर वालों ने लिखने की जो कृपा की है इसके लिये हम ग्रंथमाला समिति की ओर से बहुत २ धन्यवाद देते हैं कि भविष्य में भी आपका सहयोग तथा मार्ग दर्शन इस ग्रंथमाला समिति को सदैव प्राप्त होता रहेगा।

धर्मनिष्ठ गुरू भक्त बहिन डॉक्टर नीलमजी जैन ने भी ग्रंथ में प्रकाशनार्थ, "ग्रंथ के बारे में मेरे विचार" लेख भिजवाकर हमें सहयोग प्रदान किया है उनका भी हम ग्रंथमाला की ओर से आभार व्यक्त करते हुए धन्यवाद देते हैं।

ग्रंथ प्रकाशन में प्रकाशन खर्चो के भुगतान हेतु आर्थिक सहयोग की आवश्यकता होती है ग्रंथमाला समिति के पास स्थायी जमा राशि नहीं है फिर भी प्रकाशन कार्य निरन्तर दातारों से समय २ पर प्राप्त आर्थिक सहयोग के आधार से हम करा सके हैं। इसी संदर्भ में पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक भद्रबाहूजी महाराज (बेलगाँव) वालों का विशेष आभार प्रकट करते हैं कि जिन्होंने आरा (बिहार) में आयोजित पंचकल्याणक महोत्सव के शुभावसर पर ग्रंथमाला समिति को पूर्व ग्रंथों के प्रकाशन खर्चो में सहयोग हेतु इक्यावन हजार रुपयों का आर्थिक सहयोग प्रदान किया था। क्षुल्लक महाराज के चरणों में इच्छामि अर्पित करते हुए हम आशा प्रकट करते हैं कि भविष्य में भी महत्त्वपूर्ण ग्रंथों के प्रकाशन कार्य में आपका सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

प्रस्तुत ग्रंथ के प्रकाशन खर्चो के भुगतान हेतु जिन २ दातारोने हमें सहयोग प्रदान किया है उन सभी का हम ग्रंथमाला समिति की ओर से आभार व्यक्त करते हुए धन्यवाद देते हैं।

ग्रंथमाला समिति के प्रकाशन कार्यो में सभी सहयोगी कार्यकर्त्ताओं का बहुत २ आभारी हूँ कि आप सभी ने समय पर कार्य पूरा करवाने में सहयोग प्रदान किया है। मेरे सुपुत्र श्री प्रदीप कुमार गंगवाल ने परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथु सागरजी महाराज के शुभाशीर्वाद से इस कार्य में कठिन परिश्रम किया है। अन्य सहयोगीगण सर्व श्री मोतीलालजी हाड़ा, श्री लिखमी चन्द जी बख्शी, श्री हीरालालजी सेठी, श्री लल्लू लाल जी जैन (गोधा), श्री रवि कुमार गंगवाल, जैन संगीत कोकिला रानि बहिन श्रीमती कनक प्रभा जी हाड़ा, श्रीमती मेम देवी गंगवाल का समय २ पर सहयोग मिलता रहा है। अतः सभी को बहुत २ धन्यवाद देते हैं।

ग्रंथ प्रकाशन का कार्य बहुत, ही कठिन कार्य होता है कितनी ही बाधाएं इसमें आती है ये तो करने वाले व कराने वाले ही भलि भांति समझ सकते हैं। क्योंकि कई

हाथों से कार्य निकलता है। फिर कार्य निर्विघ्न व समय पर पूरा हो जाना, यह बहुत बड़ी उपलब्धि होती है लेकिन गुरू आशीर्वाद से सब कार्य आसान हो जाते हैं जिनको दृढ़ श्रद्धान होता है। पूज्य आचार्यो व गणधराचार्य महाराज के शुभाशीर्वाद पर दृढ़ श्रद्धान करके हमने ग्रंथ प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ करवाया और अनेकों बांधाएं आने के बावजूद भी हमने सदैव की भांति इस ग्रंथ का प्रकाशन कार्य पूर्ण करवाने में सफलता प्राप्त की है।

ग्रंथ, प्रकाशन के कार्यों को बहुत ही सावधानी पूर्वक देखा गया है फिर भी इतने विशाल कार्य में त्रुटियों का रहना स्वाभाविक है। मेरा स्वयं का अल्प ज्ञान है। मैं तो मात्र परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज की आज्ञा को शिरोधार्य करके यह कार्य कर रहा हूँ। अतः साधु वर्ग विद्वत जन व अन्य पाठकों से निवेदन है कि त्रुटियों के लिये मुझे क्षमा प्रदान करें।

परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथु सागरजी महाराज के विशाल संघ का वर्ष १९९१ का वर्षायोग हरियाणा प्रान्त के रोहतक नगर में होने जा रहा है। और आज दिनांक २२-७-९१ को एलक कनक कुमार नन्दिजी महाराज व ब्रह्मचारी श्री संजय कुमार जी की मुनि दीक्षा भव्य समारोह के साथ गणधराचार्य महाराज द्वारा प्रदान की जा रही है। ऐसे मांगलिक शुभावसर पर गणधराचार्य महाराज के शुभाशीर्वाद से हमें भी आकर कार्यक्रम में शामिल होने का सौभाग्य प्राप्त हो सका हैं और इसी शुभावसर पर ग्रंथमाला द्वारा प्रकाशित व्रत कथा कोष ग्रंथ की प्रथम प्रति गणधराचार्य महाराज के कर कमलों में भेंट कर प्रार्थना करता हूं कि आप इस ग्रंथ का विमोचन कर हमें लाभान्वित करने की कृपा करें।

गुरु उपासक
संगीताचार्य, प्रकाशन संयोजक
शान्ति कुमार गंगवाल (बी. कॉम)
जयपुर (राज०)

आवरण पृष्ठ का परिचय

जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी में शिव मन्दिर नाम का नगर था, वहां मनोरमा रानी सहित राजा प्रियंकर निरन्तर विषयों में मग्न रहता था। उसे इतना भी मालूम नहीं था कि धर्म किसे कहते है ? एक दिन सुगुप्ति नामक मुनिराज चर्यार्थ वहां पर आते है, रानी जैसे ही देखती है, ग्लानि से चित्त भर जाता है और खाती हुई पान की पीक मुनिराज पर थूक देती है। मुनिराज अन्तराय जान वापिस चले जाते है।

जब विनाशकाल आता है, तब बुद्धि भी विपरित बन जाती हैं, फिर अन्त में पाप का फल भोगना पड़ता है। रानी मरकर गधी, सूकरी, कूकरी बनती है। जब इन पर्यायों में तीव्र दुःख भोग चुकी। पाप हल्का हुआ तो बसन्त तिलक नगर में राजा विजयसेन तथा रानी चित्ररेखा के दुर्गन्धा नाम की कन्या उत्पन्न हुई। जब वह बड़ी हुई तो राजा को और भी चिन्ता हुई, लेकिन कर्म के आगे किसकी चली हैं। एक दिन उसी नगर के पास उद्यान में सागरसेन मुनि संघ सहित पधारे। राजा भी परिजन, पुरजन सहित वन्दना को गये, भक्तिपूर्वक वन्दना कर धर्मोपदेश सुना और फिर अवसर पाकर पूछ ही बैठे दुर्गन्धा की कथा। मुनिराज ने अवधिज्ञान से जानकर बता ही दिया सब कुछ। मुनिनिन्दा व दुर्व्यवहार का प्रभाव। तब राजा गुरुदेव से प्रार्थना करता है कि महा मुनिश्वर कृपया इस दुख से छूटने का कोई उपाय तो बताइये। राजा की प्रार्थना को सुनकर मुनिराज श्री ने बताया, समीचीन श्रद्धा सहित पापों का स्थूलरूप से त्याग और सुगन्ध दशमी व्रत। पाप के भार से बहुत दुःख भोग चुकी थी वह कन्या। अपनी भवावलि गुरु-मुख से सुन हृदय दुःखी हुआ और पश्चाताप करती हुई ग्रहण किया सुगन्ध दशमी व्रत और यथा विधि उसका पालन किया। आयु समाप्ति पर दशवे तीर्थंकर के कल्याणक में देवों का आगमन देख निदान किया, और बन गई अप्सरा। वहां के सुख भोगकर वही कन्या जो अप्सरा थी वह पृथ्वी तिलक नगर में राजा महापाल की महारानी मदनसुन्दरी के मदनावती नाम की, सुगन्धित शरीरी रूपवान कन्या हुई। इस कन्या का विवाह कौशाम्बी नगर के राजा अरिदमन के पुत्र पुरुषोत्तम के साथ हुआ। कुछ समय बाद एक दिन उसी नगर में सुगुप्ताचार्य महाराज संघ सहित पधारे। राजा पुरुषोत्तम भी मदनावती के साथ वन्दना को गया, और वन्दना कर पूछ ही बैठा, गुरूवर मदनावती सुगन्ध शरीरी क्यों है ? तब मुनिराज ने बताया कि यह सुगन्ध दशमी व्रत का प्रभाव है। बस फिर क्या था दोनों ने ही दीक्षा ले ली और तपश्चरण करके रानी का जीव सोलहवें स्वर्ग में देव हुआ। स्वर्ग के अनुपम सुख भोग वह रानी का जीव वसुन्धरा नगर के राजा के यहां रानी देवी की कुक्षि से जन्म लेकर कनकसेतु यथा समय राज सुख भोगकर अपने पुत्र मकरध्वज को राज्य देकर दीक्षा ग्रहण किया और तपश्चरण करके घातिया कर्मों का नाश करके बन गये केवलज्ञानी। कुछ समय दिव्य ध्वनि से सम्बोधा भव्य जीवों को और अन्त में शेष कर्मों का भस्मीभूत करके मोक्ष को प्राप्त किया।

श्री दिगम्बर जैन कुन्थु विजय ग्रंथमाला समिति जयपुर (राजस्थान)

का

परिचय

(स्थापना एवं किये गये प्रकाशित ग्रन्थों की संक्षिप्त जानकारी)

श्री दिगम्बर जैन कुन्थु-विजय ग्रन्थमाला समिति जयपुर (राजस्थान) की स्थापना परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थु सागरजी महाराज व श्री १०५ गणिनी आर्यिकारत्न विजयामती माताजी के नाम से वर्ष १९८१ में की गई थी। इस ग्रंथमाला समिति का प्रमुख उद्देश्य पूर्वाचार्यों द्वारा रचित तीर्थंकरों की वाणी के अनुसार साहित्य प्रकाशन करना है।

लघुविद्यानुवाद—

इस ग्रन्थमाला समिति ने प्रथम पुष्प के रूप में 'लघुविद्यानुवाद" (यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र विद्या का एक मात्र संदर्भ ग्रन्थ) का प्रकाशन करवाकर इसका विमोचन श्री बाहुबलि सहस्त्राभिषेक के शुभावसर पर चामुण्डराय मण्डप में दिनांक २४-२-८१ को श्रवण बेलगोल में परमपूज्य सन्मार्ग दिवाकर निमित्त ज्ञान शिरोमणि श्री १०८ आचार्य रत्न विमल सागरजी महाराज के कर-कमलों द्वारा करवाया गया था।

इस समारोह में देश के विभिन्न प्रान्तों से पधारे हुये लाखों नर-नारियों के अलावा काफी संख्या में मंच पर दिगम्बर जैनाचार्य मुनिगण व अन्य साधुवर्ग उपस्थित थे। समाज के गणमान्य व्यक्तियों में सर्व श्री भागचन्दजी सोनी, साहू श्रेयांस प्रसादजी जैन, श्री निर्मल कुमारजी सेठी, श्री त्रिलोकचन्दजी कोठ्यारी, श्री पूनमचन्द जी गंगवाल (झरिया वाले) आदि उपस्थित थे। समारोह की अध्यक्षता श्री पन्नालालजी सेठी (डीमापुर) वालों ने की थी। समारोह में मूड़बद्री व कोल्हापुर के भट्टारक महास्वामी जी भी उपस्थित थे।

श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अनाहत (यंत्र मन्त्र विधि)—

ग्रन्थमाला समिति ने द्वितीय पुष्प "श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अनाहत" (यन्त्र-मन्त्र विधि पुस्तक) कन्नड से हिन्दी में अनुवादित करवाकर इसका प्रकाशन दिनांक ९-५-८२ को श्री पार्श्वनाथ चूलगिरि अतिशय क्षेत्र जयपुर (राजस्थान) में आयोजित पंचकल्याणक महोत्सव के शुभावसर पर भारत गौरव श्री १०८ आचार्यरत्न देशभूषणजी महाराज के कर-कमलों द्वारा विमोचन करवाया गया। इस समारोह में भी देश के विभिन्न प्रान्तों से आये हुये काफी संख्या में लोगों ने भाग लिया और समारोह बहुत ही सुन्दर रहा। समारोह की अध्यक्षता श्री सुरेशचन्दजी जैन दिल्ली वालों ने की।

तजो मान करो ध्यान—

भारत गौरव आचार्यरत्न श्री १०८ देशभूषण जी महाराज का चातुर्मास वर्ष १९८२ में जयपुर में हुआ और इसी वर्ष दशलक्षण पर्व के शुभावसर पर समिति ने अपने तृतीय पुष्प के रूप में "तजो मान करो ध्यान" पुस्तक का प्रकाशन करवाकर आचार्य श्री के ही कर कमलों द्वारा दिनांक २९-८-८२ को महावीर पार्क, जयपुर (राजस्थान) में हजारों नर-नारियों के बीच इस पुस्तक का विमोचन करवाया। यह समारोह भी बहुत ही सुन्दर था।

हुम्बुज श्रमण सिद्धांत पाठावलि—

ग्रन्थमाला समिति ने चतुर्थ पुष्प "हुम्बुज श्रमण सिद्धान्त पाठावलि" ग्रन्थ का प्रकाशन करवाकर इसका विमोचन परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थुसागरजी महाराज के हासन (कर्नाटक) चातुर्मास में आयोजित इन्द्रध्वज विधान के विसर्जन के शुभावसर पर दिनांक २-१२-८२ को हजारों जन-समुदाय के बीच बड़ी धूमधाम से इस महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रन्थराज का विमोचन करवाया। इस समारोह में मूडबद्री के भट्टारक महास्वामी जी भी उपस्थित थे।

हुम्बुज श्रमण सिद्धान्त पाठावली एक महत्वपूर्ण ग्रन्थरत्न है। **यह ग्रन्थ लगभग ७५ ग्रन्थों का १००० पृष्ठों का गुटका है।** इसमें साधुओं के पाठ करने के सभी आवश्यक स्तोत्रों का संकलन कर प्रकाशन करवाया है। इस ग्रन्थ के प्रकाशन से साधुओं को अनेक ग्रन्थ साथ में नहीं रखने पड़ेंगे। साधु संघ के विहार के समय अनेक ग्रन्थों को मार्ग में ले जाने से जो दिक्कत होती थी, वो अब नहीं होगी और साथ ही जिनवाणी का भी अविनय नहीं होगा। मात्र एक ही ग्रन्थराज (हुम्बुज श्रमण सिद्धांत पाठावलि) के रखने से सारा कार्य हो जावेगा। इस प्रकार के ग्रन्थ का प्रकाशन प्रथम बार ही हुआ है ऐसा सभी साधुओं व विद्वानों का मत है। साधुवर्ग इस प्रकाशन से बहुत लाभान्वित हुआ है। यह ग्रन्थ सभी संघों में साधुओं को ग्रन्थमाला की ओर से मात्र डाक खर्च पर स्वाध्याय हेतु वितरित किया गया है।

पुनर्मिलन—

ग्रन्थमाला समिति ने पंचम पुष्प "पुनर्मिलन" (अंजना का चरित्र) पुस्तक का प्रकाशन करवाकर श्री पार्श्वनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव (श्री दिगम्बर जैन आदर्श महिला विद्यालय श्री महावीरजी अतिशय क्षेत्र) के जन्म कल्याणक के शुभावसर पर दिनांक १२-२-८४ को श्री १०८ आचार्य सन्मतिसागरजी महाराज (अजमेर) के कर-कमलों द्वारा हजारों की संख्या में उपस्थित जन-समुदाय के बीच करवाया। समारोह में साधु संघ के अलावा श्रीमान् निर्मल कुमारजी जैन (सेठी) श्री माणकचन्दजी पालीवाल, *श्री मदनलालजी चांदवाड़ श्री त्रिलोकचन्दजी कोठ्यारी, श्री प्रकाशचन्दजी पांड्या आदि* श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा के पदाधिकारी उपस्थित थे। समारोह में स्व०

आदरणीय पण्डित साहब श्री बाबूलालजी जमादार, श्री भरतकुमारजी काला, श्री काका हाथरसी आदि महानुभावों ने भी भाग लिया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री माणकचन्दजी पालीवाल ने की। इस प्रकार समिति के द्वारा पंचम पुष्प 'पुर्नमिलन' पुस्तक का विमोचन भी बहुत ही सुन्दर रहा।

श्री शीतलनाथ पूजा विधान (संस्कृत)—

ग्रन्थमाला समिति ने षष्ठम पुष्प "श्री शीतलनाथ पूजा विधान" कन्नड से संस्कृत भाषा में अनुवादित करवाकर अलवर (राजस्थान) में आयोजित पंचकल्याणक में जन्म कल्याणक के शुभावसर पर श्री १०८ आचार्य सन्मतिसागरजी महाराज (अजमेर) के कर-कमलों द्वारा दिनांक ५-३-८४ को बड़ी धूमधाम से इसका विमोचन कराया। शांति विधान के समान ही यह शीतलनाथ विधान है। इस विधान की पुस्तक के प्रकाशन से उत्तर भारत के लोग भी अब इससे लाभ उठा सके, जो कन्नड भाषा नहीं जानते है।

वर्षायोग स्मारिका—

श्री १०८ आचार्य सन्मतिसागर महाराज (अजमेर) ने वर्ष १९८४ का चातुर्मास जयपुर में किया। ग्रन्थमाला समिति ने इस शुभावसर पर एक बहुत ही सुन्दर वर्षायोग स्मारिका का प्रकाशन करवाकर बुलियन बिल्डिंग, जयपुर (राजस्थान) में विशाल जनसमुदाय के बीच दिनांक २८-१०-८४ को श्री १०८ आचार्य सन्मतिसागर जी महाराज (अजमेर) के कर-कमलों द्वारा विमोचन करवाया। इस स्मारिका में वर्षायोग में आयोजित कार्यक्रमों के चित्रों की झलक प्रस्तुत की गई है और अलग-अलग विषयों पर ही ज्ञानोपयोगी साधुओं द्वारा लिखित लेख प्रकाशित किये गये हैं। समारोह की अध्यक्षता श्रीमान् ज्ञानचन्दजी जैन (जयपुर) ने की थी।

श्री सम्मेद शिखर माहात्म्यम—

परमपूज्य श्री १०८ आचार्यरत्न धर्मसागरजी महाराज ने विशाल संघ सहित अपना १९८५ का वर्षायोग श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र लूणवां (राजस्थान) में किया। समिति ने इस अवसर पर अष्टम पुष्प के रूप में "श्री सम्मेदशिखर माहात्म्यम" ग्रन्थ का प्रकाशन करवाकर आचार्य श्री के करकमलों द्वारा दिनांक १४-७-८५ को विशाल जनसमुदाय के बीच विमोचन किया।

श्री सम्मेदशिखर माहात्म्यम् ग्रन्थ एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। श्री सम्मेदशिखर जी के महत्त्व पर प्रकाश डालने वाला इस प्रकार के ग्रन्थ का प्रकाशन आज तक नहीं हुआ है। इस ग्रन्थ में २४ तीर्थंकरों के चित्र, प्रत्येक कूट का चित्र अर्घ व उसका फल प्रकाशित किया गया है। संसार में सम्मेदशिखरजी सिद्धक्षेत्र जैसा कोई क्षेत्र नहीं है। क्योंकि यह तीर्थराज अनादिकाल का है और इस सिद्धक्षेत्र से हमारे २४ तीर्थंकरों में से २० तीर्थंकर मोक्ष पधारे और उनके साथ-साथ असंख्यात मुनिराज मोक्ष पधारे हैं। इसलिये इस क्षेत्र का कण-कण पूजनीय व वंदनीय है। इस क्षेत्र की वंदना करने से मनुष्य के जन्म जन्म के

पापों का क्षय हो जाता है और उसके लिए मोक्षमार्ग आसान हो जाता है तथा उसे नरक व पशुगति में जन्म नहीं लेना पड़ता और वह ४९ वें भव में निश्चय ही मोक्ष की प्राप्ति करता है। कहा भी है:—

भाव सहित वंदे जो कोई।
ताहि नरक पशुगति नहीं होई।।

इस प्रकार इस ग्रन्थ के प्रकाशित होने से अनेक भव्यात्माओं ने इस ग्रन्थ को पढ़कर सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र की यात्रा कर धर्म लाभ प्राप्त किया है और कर रहे हैं।

रात्रि भोजन त्याग कथा—

परमपूज्य श्री १०८ आचार्यरत्न निमित्तज्ञान शिरोमणि विमलसागरजी महाराज विशाल संघ सहित राणाजी की नसियाँ खानियां जयपुर (राजस्थान) में वर्षायोग करने हेतु दिनांक ३-७-८७ को पधारे। ग्रन्थमाला समिति ने दिनाँक ५-७-८७ को ही अपना नवम् पुष्प रात्रि भोजन त्याग कथा पुस्तक का प्रकाशन करवाकर इसका विमोचन आचार्य श्री के कर-कमलों से करवाया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा के महामन्त्री श्री त्रिलोकचन्दजी कोठयारी ने की। मुख्य अतिथि श्री पूनमचन्द जी गंगवाल (झरियावाले) व श्री सोहनलालजी सेठी थे।

केशलुञ्चन क्या और क्यों ?

परमपूज्य श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी महाराज के जयपुर (राजस्थान) में वर्षायोग के समय आचार्य श्री की आरती, जिनवाणी स्तुति, वर्षायोग करने वाले साधुओं की सूची का प्लास्टिक कवरयुक्त कार्ड प्रकाशित करवाकर निःशुल्क वितरण किये गये। आचार्य श्री, उपाध्याय श्री, संघस्थ साधुओं के केशलुञ्चन समारोह के अवसर पर एक लघु पुस्तिका केशलुञ्चन क्या और क्यों ? का प्रकाशन करवाकर निःशुल्क वितरण किया गया।

जन्म जयन्ति पर्व क्यों ?

दिनांक १४-७-८७ को आचार्य श्री की ७२ वीं जन्म जयन्ति के शुभावसर पर जन्म-जयन्ति पर्व क्यों ? एक लघु-पुस्तिका का प्रकाशन करवाकर निःशुल्क वितरण किया। इससे जन-समुदाय को जन्म-जयन्ति पर्व मनाने की जानकारी सुलभ हो गई।

शीतलनाथ पूजा विधान (हिन्दी)—

वर्षायोग समाप्ति पर परमपूज्य श्री १०८ आचार्यरत्न विमलसागरजी महाराज विशाल संघ (४३) पिच्छी सहित दिनांक २७-११-८७ को ग्रन्थमाला के कार्यालय पर पधारे। इतने **विशाल संघ का समिति के कार्यालय पर पधारना ग्रन्थमाला के इतिहास में स्वर्ण अवसर था।** इस शुभावसर पर आचार्य श्री के कर-कमलों से श्री १००८

धर्मनाथ भगवान की मूर्ति विराजमान की गई। ग्रन्थमाला का कार्यालय हमारे निवास स्थान पर है और हमारे निजी खर्च से यह कार्यक्रम सम्पन्न करवाया। तत्पश्चात् समिति द्वारा प्रकाशित दशम् पुष्प "श्री शीतलनाथ पूजा" विधान (हिन्दी) का विमोचन आचार्य श्री के करकमलों द्वारा करवाया गया।

श्री भैरव पद्मावती कल्प :

परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थुसागरजी महाराज विशाल संघ सहित वर्ष १९८७ का वर्षायोग अकलूज (महाराष्ट्र) में पूर्ण धर्म प्रभावना के साथ समाप्त करके चतुर्विध संघ के साथ तीर्थराज श्री सम्मेदशिखरजी पहुँचे। ग्रन्थमाला समिति ने इस उपलक्ष्य में ११ वां पुष्प "श्री भैरव पद्मावती कल्प:" ग्रन्थ का प्रकाशन करवाकर इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ का विमोचन परमपूज्य श्री १०८ आचार्य सन्मार्ग दिवाकर निमित्तज्ञान शिरोमणि विमलसागरजी महाराज के कर-कमलों द्वारा दिनांक १३-३-८८ को विशाल जन-समूह के मध्य प्रवचन हाल में श्री महावीरजी अतिशय क्षेत्र पर अष्टान्हिका पर्व पर करवाया। यह समारोह बहुत ही सुन्दर रहा।

सच्चा कवच—

परमपूज्य श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी महाराज विशाल संघ सहित कुछ दिनों तक श्री महावीरजी अतिशय क्षेत्र पर ही विराजे। इसी बीच दिनांक ३१-३-८८ को श्री महावीर जयन्ति का शुभावसर आया और ग्रन्थमाला समिति ने इस शुभावसर पर १२वां पुष्प "सच्चा कवच" का प्रकाशन करवाकर श्री शांतिवीर नगर, सन्मति भवन में कार्यक्रम आयोजित करके परमपूज्य श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी महाराज के करकमलों द्वारा इस पुस्तक का विमोचन करवाया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता परम गुरुभक्त श्री ज्ञानचन्दजी जैन बम्बई वालों ने की, और हजारों की संख्या में इस समारोह में लोगों ने भाग लेकर धर्म लाभ प्राप्त किया।

फोटो प्रकाशन एवं निःशुल्क वितरण—

माह फरवरी ८७ में बोरीवली बम्बई में आयोजित मानस्तम्भ पंचकल्याणक महोत्सव के शुभावसर पर (जन्म-कल्याणक महोत्सव) दिनांक ६-२-८७ को परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थु सागरजी महाराज व श्री १०५ गणिनी आर्यिका विजयामति माताजी के फोटो प्रकाशित कर इसका विमोचन न्यूयार्क निवासी धर्म स्नेही गुरुभक्त श्री महेन्द्रकुमारजी पाण्ड्या व उनकी धर्म पत्नि श्रीमति आशादेवीजी पाण्ड्या के करकमलों द्वारा करवाया। दोनों फोटो बहुत ही सुन्दर व मनमोहक हैं। विशिष्ट गुरुभक्तों को निःशुल्क वितरण की गई है। इसके साथ-साथ जिन मन्दिरों व क्षेत्रों पर समिति द्वारा फ्रेम में जड़वाकर फोटो लगवाये गये है।

"श्री गोम्मट प्रश्नोत्तर चिंतामणि"—

ग्रन्थमाला समिति ने तेरहवें पुष्प के रूप में श्री गोम्मट प्रश्नोत्तर चिंतामणि ग्रन्थ का प्रकाशन करवाकर आरा (बिहार) में आयोजित पंचकल्याणक महोत्सव में जन्म कल्याणक के शुभावसर पर दिनांक ११-१२-८८ को परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थु सागरजी महाराज के कर-कमलों द्वारा हजारों की संख्या में उपस्थित जन-समुदाय के बीच करवाया।

श्री गोम्मट प्रश्नोत्तर चिंतामणि ग्रन्थ जैन रामायण सरिका (गागर में सागर) के समान ११०० पृष्ठों का वृहद ग्रन्थ है। ३८ ध्यान के रंगीन चित्र इसमें प्रकाशित किये गये है। इस ग्रन्थ के संकलनकर्त्ता परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थु सागरजी महाराज ही है। ग्रन्थ के सम्बन्ध में गणधराचार्य महाराज के विचार निम्न प्रकार है—

ग्रन्थ में करूणानुयोग, द्रव्यानुयोग आदि सभी प्रकार की चर्चायें संग्रहित की गई है और आधार लिया गया है जिनागम का मैं समझता हूं कि स्वाध्याय प्रेमियों को इस एक ही ग्रन्थ के स्वाध्याय करने से जिनागम का बहुत कुछ ज्ञान हो सकता है, इस ग्रन्थ में गुण स्थानानुसार श्रावक धर्म, मुनि धर्म, आत्म ध्यान पींडस्थ रूपातीत आदि ध्यान और उनके चित्रों सहित वर्णन किया गया है, और अनेक सामग्री संकलित की गई है। यह ग्रन्थ अपने आप में एक नया ही संग्रहित हुआ है, इस ग्रन्थ में सभी ग्रन्थों से लेकर २,१७८ श्लोकों का संग्रह है।

इस ग्रन्थ में पूर्वाचार्यकृत गोम्मटसार, जीवकाँड, त्रिलोकसार, मूलाचार, ज्ञानार्णव, समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, रत्नकरंड श्रावकाचार, तत्वार्थ सूत्र, राजवार्तिक आचारसार, अष्टपाहुड, हरिवंश पुराण, आदि पुराण, वसु नन्दी श्रावकाचार, परमात्म प्रकाश, पुरुषार्थ सिद्धायुपाय, समयसार कलश, धवलादि, उमा स्वामी का श्रावकाचार, जैन सिद्धान्त प्र. दशभक्त्यादि संग्रह, चर्चाशतक, चर्चासमाधान, स्याद्वाद चक्र, चर्चासागर सिद्धान्तसार प्रदीप, मोक्ष मार्ग प्रकाशक, त्रिकालवर्ती महापुरुष आदि बड़े-२ ग्रन्थों, का आधार लेकर संग्रह किया गया है।

धर्म ज्ञान एवं विज्ञान—

ग्रन्थमाला समिति ने चौदहवें पुष्प के रूप में "धर्म ज्ञान एवं विज्ञान" पुस्तक का भी प्रकाशन करवाकर आरा (बिहार) में आयोजित पचकल्याणक महोत्सव में जन्म कल्याणक के शुभावसर पर परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थु सागरजी महाराज के करकमलों द्वारा दिनांक ११-१२-८८ को करवाया है। इस पुस्तक में जैन धर्म के तत्वों का सरल भाषा में उल्लेख किया गया है। पुस्तक के लेखक गणधराचार्य महाराज के परम शिष्य एलाचार्य उपाध्याय सिद्धान्त चक्रवर्ति परमपूज्य श्री १०८ कनकनन्दिजी महाराज है। पुस्तक सभी के लिए पठनीय है।

शांति मण्डल कल्प: (पूजा)—

परमपूज्य श्री १०८ आचार्य आदि सागरजी महाराज (अंकलीकर) की ४६वीं पुण्य तिथि (समाधि दिवस) के उपलक्ष में आयोजित समारोह में परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य महाराज के करकमलों द्वारा श्री दिगम्बर जैन मन्दिर चम्पा बाग, ग्वालियर में भारी जनसमूह के बीच दिनांक ५-३-८६ को करवाया।

संघाधिपति आचार्यो का फोटो कलैण्डर का प्रकाशन—

ग्रन्थमाला समिति ने संघाधिपति आचार्यो का फोटो कलैण्डर प्रकाशित करवाकर इस कलैण्डर की प्रथम प्रति परमपूज्य सन्मार्ग दिवाकर निमित्तज्ञान शिरोमणि श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी महाराज को दिनांक २३-१२-८८ को सिद्धक्षेत्र श्री सोनागिरजी में भेंट की गई।

इस फोटो कलैण्डर के मध्य में वर्तमान युग के प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य परमपूज्य समाधि सम्राट श्री १०८ आचार्य आदि सागरजी महाराज (अकंलीकर) का फोटो प्रकाशित किया गया है।

इसके चारों ओर परमपूज्य श्री १०८ आचार्य शांति सागरजी महाराज, आचार्य महावीर कीर्तिजी महाराज, आचार्य देशभूषणजी महाराज, आचार्य विमलसागरजी महाराज, आचार्य धर्मसागरजी महाराज, आचार्य सन्मतिसागरजी महाराज, आचार्य अजितसागरजी महाराज, आचार्य विद्यासागरजी महाराज, आचार्य विद्यानन्दजी महाराज, आचार्य बाहुबली सागरजी महाराज, आचार्य सुबलसागरजी महाराज, गणधराचाय कुन्थुसागरजी महाराज के फोटो प्रकाशित किये गये हैं।

इसके नीचे श्री १०५ गणिनी आर्यिका विजयामती माताजी, गणिनी आर्यिका सुपार्श्वमती माताजी, गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी, गणिनी आर्यिका कुलभूषण मति माताजी के फोटो प्रकाशित किये गये हैं।

इसमें परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थु सागरजी महाराज के विशाल संघ तथा आर्यिका संघ के फोटो भी प्रकाशित किये गये है। मध्य में आरा (बिहार) में श्री चन्द्रप्रभु मन्दिर में विराजमान अतिशयकारी श्री ज्वालामालिनी देवी का फोटो प्रकाशित किया गया है।

इस प्रकार यह कलैण्डर बहुत ही सुन्दर तथा मनमोहक है। इसके प्रकाशन में समिति का यही उद्देश्य है कि एक ही फोटो कलैण्डर के माध्यम से सभी भव्य आत्माओं को सभी साधुओं के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हो सके।

प्रथम पुष्प लघुविद्यानुवाद ग्रन्थ का पुन: प्रकाशन—

ग्रन्थमाला समिति द्वारा प्रथम पुष्प के रूप में प्रकाशित 'लघुविद्यानुवाद' ग्रन्थ

का पुनः प्रकाशन करवाया गया है। यह ग्रन्थ यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र विषय का एक मात्र संदर्भ ग्रन्थ है।

घण्टाकर्ण मन्त्र कल्प :

ग्रन्थमाला समिति ने १६वें पुष्प के रूप में घण्टाकर्ण मन्त्र कल्पः ग्रन्थ का प्रकाशन करवाकर श्री दिगम्बर जैन चन्द्रप्रभु जिनमंदिर अतिशयक्षेत्र तिजारा (अलवर) के प्रांगण में परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज के कर-कमलों द्वारा दिनांक ३०-१-६१ को करवाया है। इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ में यन्त्र मन्त्र प्रकाशित किये गये हैं जिनके माध्यम से श्रद्धा सहित ग्रन्थ में वरिणत विधि से उपयोग करने पर अनेक प्रकार के रोग शोक आधि-व्याधि से भव्य जीव छुटकारा पा सकते हैं।

ग्रंथमाला समिति के कार्यों में यह बात विशेष उल्लेखनीय है कि यह ग्रंथमाला समिति सभी आचार्यो साधुओं विशिष्ट विद्वानों, पत्रों के प्रकाशकों, प्रकाशन खर्च में सहयोग करने वाले सभी दातारों को सभी प्रकाशन व्यक्तिगत रूप से भेंट करती है या मात्र डाक खर्च पर भिजवाती है।

इस प्रकार पाठकगण अवलोकन करे, कि ग्रन्थमाला समिति के सीमित आर्थिक साधन होते हुए भी इतने कम समय में उपरोक्त महत्वपूर्ण ग्रन्थों के प्रकाशन करवाने में सफलता प्राप्त की है। सभी ग्रंथ एक से बढ़कर एक है और सभी ज्ञानोपार्जन के लिए विशेष लाभकारी सिद्ध हुये है। ऐसे सभी आचार्यों साधुओं विद्वानों के विचार हमें समय-२ पर प्राप्त होते रहे है, यह सभी सफलता परम पूज्य सभी आचार्यो व साधुओं के शुभाशीर्वाद के साथ-२ परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थु सागरजी महाराज व श्री १०५ गणिनी आर्यिका विजयामती माताजी के शुभाशीर्वाद से हो सका है। इसके लिये हम सभी कृतज्ञ है और उनके चरणों में नतमस्तक होकर शत-२ बार नमोस्तु अर्पित करते हैं।

मुझे आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि पाठकगण ग्रंथमाला समिति द्वारा प्रकाशित ग्रंथों का स्वाध्याय करके पूर्ण ज्ञानोपार्जन कर रहे हैं और आगे भी इस ग्रन्थ-माला से जिन महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन होगा उनसे पूर्ण लाभ उठा सकेगें और त्रुटियों के लिये क्षमा करेंगे।

शान्तिकुमार गंगवाल
प्रकाशन संयोजक
श्री दिगम्बर जैन कुन्थु विजय ग्रंथमाला समिति,
(जयपुर राज०)

अनुक्रमणिका

व्रत	पृष्ठ सं०
व्रत तिथि निर्णय	१—३०
मेघमाला व्रत करने की तिथियां और विधि	३१
रत्नत्रय व्रत की तिथियों का निर्णय	३३
मुनिसुव्रत पुराण के आधार पर व्रत तिथि का प्रमाण	३५
व्रत तिथि निर्णय के लिये निर्णय सिन्धु के मत का निरूपण तथा खण्डन	३६
व्रत तिथि के निर्णय के लिए विभिन्न मत	६१
व्रत करने का फल	१०७
व्रतोपयोगी आवश्यक विधियां	१०८
उपवास का लक्षण	१०६
व्रत कथा कोष	११२
अष्टदिक्कन्या व्रत कथा	१३०
आयुकर्म निवारण व्रत कथा	१३२
अधिक सप्तमी व्रत कथा	१३२
अनन्त व्रत विधि	१३४
अनंत व्रत कथा	१३७
अष्टकर्म चूर्ण व्रत विधि व कथा	१४८
अहिंगही व्रत विधि व कथा	१४६
अनन्त भव कर्महराष्टमी व्रत विधि व कथा	१५१
अक्षय सुख सम्पत्ति व्रत कथा	१५३
अष्टान्हिका व्रत की विधि	१५३
दवसिक व्रतों का वर्णन	१५६
नन्दीश्वर व्रत कथा	१५६
अष्टान्हिका व्रत कथा	१५७
अनन्त सौन्दर्य व्रत कथा	१५६
अणाति पूर्णिमा व्रत कथा	१५६
आर्त ध्यान निवारण व्रत कथा	१६३
अभय कुमार व्रत कथा	१६३
अपकाय निवारण व्रत कथा	१६३
आचाम्लवर्धन व्रत कथा	१६४
अष्ट प्रतिहार्योदय व्रत कथा	१६५
अष्टविध व्यन्तर देव कथा	१६६

व्रत	पृष्ठ सं०
अज्ञान निवारण व्रत कथा	१६७
अथ अरनाथ तीर्थंकर चक्रवर्ती व्रत कथा	१६८
आकाश पंचमी व्रत कथा	१६९
अचौर्य महाव्रत व्रत कथा	१७३
अहिंसा महाव्रत कथा	१७३
अयोग केवली गुणस्थान व्रत कथा	१७३
अप्रमत्त गुण स्थान व्रत कथा	१७४
अपूर्वकरण गुणस्थान व्रत कथा	१७४
अनिवृत्तिकरण गुणस्थान व्रत कथा	१७५
अविरत गुणस्थान व्रत कथा	१७५
अनन्त दर्शन व्रत कथा	१७६
अनन्त ज्ञान व्रत कथा	१७७
अनन्त वीर्य व्रत कथा	१७७
अनन्त सुख व्रत कथा	१७८
अमूढ़ दृष्टयंग व्रत कथा	१७८
अनन्त मिथ्यात्व निवारण व्रत कथा	१७९
आहार पर्याप्ति निवारण व्रत कथा	१७९
अरतिकर्म निवारण व्रत कथा	१७९
औदारिक शरीर निवारण व्रत कथा	१८०
अक्ष अक्षय तृतीया व्रत कथा	१८०
अथ इन्द्रिय पर्याप्ति निवारण व्रत कथा	१८५
इन्द्रध्वज व्रत कथा व विधि	१८५
एकावली व्रत की विधि और फल	१८६
इष्ट सिद्धिकारक निःशल्य अष्टमी व्रत	१८७
अथ एकांतनय व्रत कथा निवारण	१८८
अथ एकांत मिथ्यात्व निवारण व्रत कथा	१८८
अथ एकेन्द्रिय जाति निवारण व्रत कथा	१८९
अथ एकादश रुद्र व्रत कथा	१८९
अथ उपगूहनांग व्रत कथा	१९०
उत्तम मुक्तावली व्रत की विधि	१९०
अथ उपशांत कषाय गुणस्थान व्रत कथा	१९३
अथ उपभोगांतराय निवारण व्रत कथा	१९३
अथ उच्छ्वास पर्याप्ति निवारण व्रत कथा	१९४
उत्तरायण व्रत कथा	१९४

व्रत	पृष्ठ सं०
उपसर्ग निवारण व्रत कथा	१९६
ऋषि पंचमी व्रत	२००
एसोनव व्रत	२००
एसोदश व्रत	२०१
कंजिक व्रत	२०१
कृष्ण पंचमी व्रत	२०२
कांजी बारस व्रत	२०२
कली चतुर्दशी व्रत	२०२
कर्मचूर व्रत	२०२
कोकिला पञ्चमी व्रत	२०३
कनकावली व्रत की विशेष विधि	२०३
अथ करकुच व्रत कथा	२०४
कन्या संक्रमण व्रत कथा	२०५
सिंह सक्रमण व्रत कथा	२०५
कर्क संक्रमण व्रत कथा	२०५
मिथुन संक्रमण व्रत कथा	२०६
वृषभ संक्रमण व्रत कथा	२०६
मेष संक्रमण व्रत कथा	२०६
कवल चन्द्रायण व्रत कथा	२०६
कल्याण तिलक व्रत विधि और कथा	२०८
अथ कुन्थुनाथ तीर्थंकर चक्रवर्ती व्रत कथा	२०९
कथ कुबेरकांत अथवा कुमारकांत व्रत कथा	२१०
केवलबोध व्रत कथा	२११
कायगुप्ति व्रत कथा	२१२
अथ कापोतलेश्या निवारण कथा	२१२
अथ कुष्णलेश्या निवारण व्रत कथा	२१२
कर्मनिर्जरा व्रत की विधि	२१३
केवलज्ञान व्रत कथा	२१४
कृष्णदेवकी व्रत अथवा संतान रक्षा व्रत कथा	२१६
कुम्भ संक्रमण व्रत कथा	२१७
अथ कुनय व्रत कथा	२१७
कल्याणमाला व्रत कथा	२१७
अथ कल्पकुज व्रत कथा	२१९

व्रत	पृष्ठ सं०
अथ कल्पांबर (कल्पामर) व्रत कथा	२२०
काम्य व्रतों का फल	२२०
अकाम्य व्रतों का वर्णन	२२१
उत्तम फलदायक व्रतों का निर्देश	२२३
अथ कंदर्प सागर व्रत कथा	२२४
श्रुति कल्याणक व्रत कथा	२२५
कैवल्य सुखदाष्टमी व्रत कथा	२२५
कुंज पंचमी व्रत कथा	२२७
अथ कर्मदहन व्रत कथा	२२८
कर्म निर्जरा व्रत कथा	२३५
कलधौतार्णव व्रत कथा	२४०
अथ कल्याणमंगल व्रत कथा	२४१
कीर्त्तिधर व्रत कथा	२४१
कामदेव व्रत कथा	२४२
कारुण्य व्रत कथा	२४३
पंचकल्याणक व्रत तिथि बोधक चक्र	२४४
गणधर वलय व्रत कथा	२४६
गुरु द्वादशी व्रत कथा	२४८
गोरी व्रत कथा	२४९
अथ गुललवण व्रत कथा	२५२
गन्ध अष्टमी व्रत	२५६
गोत्र कर्म निवारण व्रत कथा	२५६
चौंतीस अतिशय व्रत	२५६
चन्द्रकल्याणक व्रत	२५७
चौबीस तीर्थंकर व्रत	२५७
तीन चौबीसी व्रत	२५७
तीर्थंकर बेला व्रत	२५८
अथ चतुर्दश मनु व्रत कथा	२५९
बाहरसौ चौंतीस व्रत या चारित्र शुद्धि व्रत	२६०
चारित्र्य शुद्धि व्रत कथा	२६१
चारित्रमाला व्रत कथा	२६१
चंदना देवी व्रत कथा	२६२
चतुरिन्द्रिय जाति निवारण व्रत कथा	२६३

व्रत	पृष्ठ सं०
अथ चारुदत्त व्रत कथा अथवा चारुमुख व्रत कथा	२६३
अथ चक्रवाल व्रत कथा	२६४
अथ चतुर्विंशति गणिनी व्रत कथा	२६६
चतुर शीति गणधर व्रत कथा	२६७
अथ चतुर्विंशति दातृ व्रत कथा	२६८
अथ चतुर्विंशति श्रोतृ व्रत कथा	२६९
चन्दन षष्ठी व्रत विधि	२७०
चंद्र षष्ठी व्रत कथा	२७०
अथ चतुर्विंशति पक्ष व्रत कथा	२७३
अथ चतुर्विंशतियक्षी व्रत कथा	२७४
अथ चतुर्विंशति गणिनी व्रत कथा	२७४
चारित्राचार व्रत कथा	२७५
अथ चतुष्पर्व व्रत कथा	२७६
चूडामणि व्रत कथा	२७६
चक्रोदय व्रत कथा	२७७
अथ छेदोपस्थापना चारित्र व्रत कथा	२७८
अथ श्री जिनेन्द्र पंचकल्याण व्रत कथा	२७८
ज्येष्ठ जिनवर व्रत की विधि	२८०
जिन मुखावलोकन व्रत की विधि	२८१
जिन रात्रि व्रत का स्वरूप	२८५
जिनेन्द्र गुण सम्पत्ति व्रत	२८६
जिन गुणसम्पत्ति व्रत की विधि	२८६
श्री जिन गुण सम्पत्ति व्रत कथा	२८७
जीवदया अष्टमी व्रत कथा	२९२
अथ जियदत्तराय अथवा सर्वकामित प्रद व्रत कथा	२९३
अथ जुगुप्सा कर्म निवारण व्रत कथा	२९८
जिन चंद्र व्रत कथा	२९८
अथ जम्बू स्वामी व्रत कथा	२९९
अथ जीवंधर स्वामी व्रत कथा अथवा बुधवार व्रत कथा	२९९
अथ जयसेन चक्रवर्ती व्रत कथा	३०१
तपोऽञ्जलि व्रत का लक्षण	३०१
तूल संक्रमण व्रत कथा	३०३
तिर्यञ्चगति निवारण व्रत कथा	३०३

व्रत	पृष्ठ सं०
मनुष्य गति निवारण व्रत कथा	३०३
देवगति निवारण व्रत कथा	३०४
अथ तेज काय निवारण व्रत कथा	३०४
तपाचार व्रत कथा	३०४
दुग्धरसी व्रत	३०५
दुःखहरण व्रत, द्वादशीव्रत, लघु द्विकावली व्रत	३०६
दर्शनावरणीय कर्मनिवारण व्रत कथा	३०८
द्विपंच व्रत	३०९
अथ देवविरत गुणस्थान व्रत कथा	३१०
अथ दीपावली व्रत अथवा लक्षावली व्रत कथा	३१०
अथ दानान्तराय कर्म निवारण व्रत कथा	३१०
अथ द्विद्रिय जाति निवारण व्रत कथा	३१०
दशपर्व व्रत कथा	३१३
दक्षिणायण व्रत कथा	३१४
दर्शनाचार व्रत कथा	३१४
सर्वदोष परिहार व्रत कथा	३१५
अथ दुर्गति निवारण व्रत कथा	३१६
अथ दशदिक्पालक व्रत कथा	३१७
अथ दुरिता निवारण व्रत कथा	३१८
तिथि क्षय होने पर दक्षलक्षण व्रत की व्यवस्था और व्रत का फल	३२२
दशलाक्षणिक व्रत कथा	३२३
अथ दशप्राणनिवारण व्रत कथा	३२५
अथ दारिद्रय विनाशक व्रत कथा	३२५
द्वारावलोकन व्रत	३२६
धनकलश व्रत कथा	३२७
धनुसंक्रमण व्रत कथा	३२८
अथ धर्म प्रभावनांग व्रत कथा	३२९
धर्मोदय व्रत कथा	३२९
धर्मचक्र व्रत कथा	३३०
अथ धन्यकुमार अथवा धन्यभूति व्रत कथा	३३०
णमोकार पैंतीसी व्रत	३३२
नित्यानंद व्रत कथा विधि	३३३

व्रत	पृष्ठ सं०
नैशिक व्रत	३३६
अथ नीललेश्या निवारण व्रत कथा	३३७
अथ निश्वास पर्याप्ति निवारण व्रत कथा	३३७
अथ नवबल देव व्रत कथा	३३७
अथ नवप्रतिवासुदेव व्रत कथा	३३८
अथ निश:ल्याष्टमी व्रत कथा	३३९
नवरात्रि व्रत कथा	३४१
अथ नपुंसकवेद निवारण व्रत कथा	३४२
निर्णय व्रत कथा	३४२
अथ निग्रथ महाव्रत व्रत कथा	३४३
अथ निश्चयनय व्रत कथा	३४३
नामकर्म निवारण व्रत कथा	३४४
अथ नीतिसागर व्रत कथा	३४४
नरकगति निवारण व्रत कथा	३४४
अथ नि:शंकितांग व्रत कथा	३४५
अथ निकांक्षितांग व्रत कथा	३४६
अथ नागश्री व्रत कथा	३४६
अथ नव वासुदेव व्रत कथा	३४७
नंद्यावर्त व्रत कथा	३४९
नंदावर्ति व्रत कथा	३५०
अथ नवनारद व्रत कथा	३५१
अथ नवग्रह व्रत कथा	३५२
अथ नित्यसुखदाष्टमी व्रत कथा	३५४
नित्योत्सव व्रत कथा	३५६
अथ नित्यसौभाग्य (सप्तज्योति कुंकुं) व्रत कथा	३५७
नागपंचमी और श्रियालषष्ठी व्रत कथा	३५८
निरतिशय व्रत कथा	३६२
नवनिधि भांडार व्रत कथा	३६४
निर्दोष सप्तमी व्रत कथा	३६५
नक्षत्रमाला व्रत, नित्यरसी व्रत	३७०
मन्द सप्तमी व्रत, निर्जर पञ्चमी व्रत	३७१
पञ्चालंकार व्रत कथा	३७२
पुराणान्नत्याग व्रत विधि कथा	३७४

व्रत	पृष्ठ सं०
पंच सूना निवारण व्रत कथा	३७७
पंच ससार व्रत कथा	३७७
पर्व मंगल व्रत कथा	३७८
पर्व सागर व्रत कथा पुण्य सागर व्रत कथा	३७६
अथ श्री पंचमी व्रत कथा	३८०
श्रुत पंचमी व्रत कथा	३८३
पञ्चमन्दर व्रत कथा	३८४
अथ प्रमत्त गुण स्थान व्रत कथा	३८६
अथ पचेन्द्रिय जाति निवारण व्रत कथा	३६०
पंच मास चतुर्दशी व्रत शील चतुर्दशी और रूप चतुर्दशी व्रत	३६२
पुष्पाञ्जलि व्रत की विशेष विधि और व्रत का फल	३६५
अथ पंच परमेष्ठी व्रत कथा	४०१
पार्श्वतृतीया (तदगी) व्रत कथा	४०२
अथ श्रीपाल व्रत कथा	४११
अथ पंच पांडव व्रत कथा	४१२
अथ पद्मदत्त चक्रवर्ति व्रत कथा	४१५
अथ पंच कुमार व्रत कथा अथवा गुरुवार व्रत कथा	४१६
अथ पंच महाक्षेत्रपाल व्रत कथा	४१७
अथ पीतलेश्या निवारण व्रत कथा	४१८
अथ पद्मलेश्या निवारण व्रत कथा	४१८
अथ पृथ्वीकाय निवारण व्रत कथा	४१८
बसरबलगद व्रत विधि व व्रत कथा	४२५
अथ बुधाष्टमी व्रत कथा	४२८
अथ बृहत श्रुतस्कंध व्रत कथा	४३०
अथ भाषा पर्याप्ति निवारण व्रत कथा	४३२
अथ भयकर्म निवारण व्रत कथा	४३३
अथ भागीरथ व्रत कथा	४३३
भवदु:ख निवारण व्रत कथा	४३५
भवसागर व्रत कथा	४३५
अथ भवरोगहराष्टमी व्रत कथा	४४१
अथ भरत चक्रवर्ति व्रत कथा	४४३
मुकुट सप्तमी व्रत और निर्दोष सप्तमी व्रतों का स्वरूप	४४४
मंगलार्णव व्रत कथा	४४६

व्रत	पृष्ठ सं०
मंगल भूषण व्रत कथा	४४९
मुक्तावली व्रत कथा	४५१
माघमाला व्रत कथा	४५७
मोक्ष सप्तमी व्रत	४६२
मंगल त्रयोदशी व्रत कथा	४६४
मोहनीय कर्म निवारण व्रत कथा	४६६
अथ मिथ्यात्वगुण स्थान व्रत कथा	४७५
मंगलगौरी व्रत कथा	४७६
मोक्ष लक्ष्मी निवास व्रत कथा	४७७
फल मंगलवार व्रत कथा	४७८
मीन संक्रमण व्रत कथा	४७९
अथ मृषानंद निवारण व्रत कथा	४८०
मकर संक्रमण व्रत कथा	४८०
मुष्टितंदुल व्रत कथा	४८१
महोदय व्रत कथा	४८३
अथ मनपर्याप्ति निवारण व्रत कथा	४८४
मनोगुप्ति व्रत कथा	४८४
मंगलवार व्रत कथा	२८४
अथ (मिगी आरल) त्रिमुष्टि लाजा व्रत कथा	४८५
अथ मघवा चक्रवर्ति व्रत कथा	४८७
अथ यथाख्यातचारित्र व्रत कथा	४८९
रत्नावली व्रत कथा	४९०
रात्रिभुक्ति त्याग व्रत कथा	४९३
रक्षा बन्धन व्रत कथा	४९४
रत्नत्रय व्रत कथा	५१९
अथ रति कर्म निवारण व्रत कथा	५२०
रविवार व्रत कथा	५२२
अथ रौद्र ध्यान निवारण व्रत कथा	५३६
रत्नशोक व्रत कथा	५३७
रामनवमी व्रत कथा	५३७
रोहिणी व्रत कथा	५३९
रस परित्याग व्रत की विधि व कथा	५५३
रूपातिशय व्रत कथा और विधि	५५४

व्रत	पृष्ठ सं०
रूपार्थ वल्लरी व्रत कथा	५५६
रत्नभूषण व्रत कथा	५५७
लब्धि विधान व्रत कथा	५६०
अथ लाभांतरायकर्म निवारण व्रत कथा	५६२
लोकमंगल व्रत कथा	५६२
लक्ष्मी मंगल व्रत कथा	५६३
वस्तु कल्याण व्रत कथा	५६५
वृश्चिक संक्रमण व्रत कथा	५६८
सकल श्रेयोनिधि व्रत कथा	५६६
अथ विषयानन्द निवारण व्रत कथा	५७२
अथ वात्सल्यांग व्रत कथा	५७२
विद्यामंडूक व्रत कथा	५७२
वैक्रियिक शरीर निवारण व्रत कथा	५७३
आहारक शरीर निवारण व्रत कथा	५७३
तेजस शरीर निवारण व्रत कथा	५७३
कार्मण शरीर निवारण व्रत कथा	५७४
वेदनीय कर्मनिवारण व्रत कथा	५७४
अथ विपरीतनय व्रत कथा	५७४
अथ ब्रह्मचर्य महाव्रत कथा	५७५
अथ वीर्यान्तराय निवारण व्रत कथा	५७५
अथ विपरीत मिथ्यात्व निवारण व्रत कथा	५७६
अथ वायुकाय निवारण व्रत कथा	५७७
वीर्याचार व्रत कथा	५७७
वर्धमान व्रत कथा	५७७
वचन गुप्ति व्रत कथा	५७८
वसुधा भूषण व्रत कथा	५७८
वर्णसागर व्रत कथा	५७६
अथ वास्तुकुमार व्रत कथा	५८०
विनय संपन्नता व्रत व कथा	५८१
शिवरात्री व्रत कथा	५८३
अथ शरीर पर्याप्ति निवारण व्रत कथा	५८४
शुद्ध दशमी व्रत कथा	६०१
अथ शुक्ललेश्या निवारण व्रत कथा	६०४

व्रत	पृष्ठ स०
अथ शोककर्म निवारण व्रत कथा	६०४
शतेन्द्र व्रत कथा	६०८
अथ शुक्ल ध्यान प्राप्ति व्रत कथा	६१०
अथ षोडश क्रिया व्रत कथा	६११
अथ षट्कन्याका व्रत कथा	६१२
सकल सौभाग्य व्रत कथा	६२५
सुगन्ध दशमी व्रत कथा	६३२
अथ स्तेयानन्द निवारण व्रत कथा	६४७
अथ सुदर्शन सेठ व्रत कथा	६४७
सौभाग्य व्रत कथा	६४८
समाधि विधान व्रत कथा	६४९
सौख्य सुत सम्पत्ति व्रत कथा	६५०
अथ संशय मिथ्यात्व निवारण व्रत कथा	६७१
अथ स्थितिकरणांगव्रत कथा	६७१
अथ संरक्षणानन्द निवारण व्रत कथा	६७१
अथ सागर चक्रवर्ती व्रत कथा	६७१
अथ सुभौम चक्रवर्ती व्रत कथा	६७६
अथ सुकुमार व्रत कथा	६७७
सारस्वत व्रत कथा	६८०
सीतादेवी व्रत कथा	६८१
योग धारण व्रत कथा	६८२
सहस्रनाम व्रत कथा	६८३
अथ स्नेहनय व्रत कथा	६८४
अथ स्त्री वेद निवारण व्रत कथा	६८५
सप्तर्द्धि व्रत कथा	६८५
अथ सत्यवचन महाव्रत कथा	६८५
अथ संयतासंयत व्रत कथा	६८६
अथ सूक्ष्मसांपराय चारित्र व्रत कथा	६८६
अथ सामायिक चारित्र व्रत कथा	६८७
अथ संयत व्रत कथा	६८७
अथ सुनय व्रत कथा	६८८
अथ सप्तयक्षी व्रत अथवा देवकी व्रत कथा	६८८
अथ संयोगकेवली गुणस्थान व्रत कथा	६८९

व्रत	पृष्ठ सं०
अथ सासाकन गुणस्थान व्रत कथा	६८६
अथ सम्यग्मिथ्यात्व (मिश्र) गुणस्थान व्रत कथा	६९०
अथ सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान व्रत कथा	६९०
अथ समवसरण मंगल व्रत कथा	६९०
सर्वथा कृत्य व्रत कथा	६९१
अथ सनतकुमार चक्रवर्ति व्रत कथा	६९२
सर्वसंपत्कर व्रत कथा	६९३
अथ शुक्रवार व्रत कथा	६९४
सुगन्ध बंधुर व्रत कथा	६९७
अथ सर्वार्थ सिद्धि व्रत कथा	६९९
सिद्ध व्रत कथा	७००
सूतक परिहार व्रत कथा	७०१
अथ हस्तपंचमी व्रत कथा	७१०
अथ हिसानंद निवारण व्रत कथा	७११
अथ हास्य कर्म निवारण व्रत कथा	७११
अथ हरिषेण चक्रवर्ति व्रत कथा	७११
अथ क्षायिक भोग व्रत कथा	७१३
अथ क्षायिक लाभ व्रत कथा	७१३
अथ क्षायिक दान व्रत कथा	७१३
क्षीण कषाय गुणस्थान व्रत कथा	७१४
अथ क्षायिक उपभोग व्रत कथा	७१४
अथ क्षायिक सम्यक्त्व व्रत कथा	७१५
त्रिलोक भूषण व्रत कथा	७१६
त्रिकाल तृतीया व्रत कथा	७१७
अथ त्रीन्द्रिय जाति निवारण व्रत कथा	७२०
अथ त्रसकाय निवारण व्रत कथा	७२०
त्रिभुवन तिलक व्रत कथा	७२०
त्रपन क्रिया व्रत कथा	७२२
ज्ञानावरणीय कर्म निवारण व्रत कथा	७२६
ज्ञान साम्राज्य व्रत कथा	७२७
अथ ज्ञानचन्द्र अथवा जिनचन्द्र व्रत कथा	७२८
सूतक विचार	७३१-७४७

दिनांक २२-७-६१ को श्री दिगम्बर जैन जतीजी भवन रोहतक (हरियाणा) में आयोजित "व्रत कथा कोष" ग्रन्थ के विमोचन समारोह के चित्रों की झलक

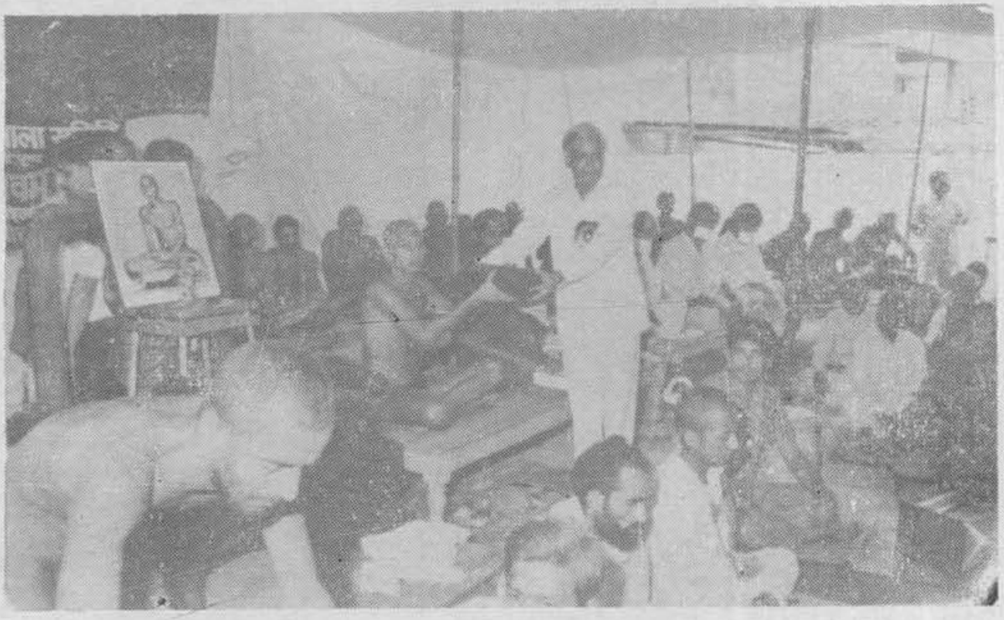

व्रत कथा कोष ग्रंथ की प्रति परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थुसागरजी महाराज को विमोचन करने हेतु भेंट करते हुए ग्रंथमाला के प्रकाशन संयोजक शान्ति कुमार गंगवाल

प्रकाशित ग्रंथ का उपस्थित जन समुदाय को दिग्दर्शन कराते हुए परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थुसागर जी महाराज

उपस्थित जन समुदाय को ग्रंथमाला द्वारा किये गये कार्यों व प्रकाशित ग्रंथ के बारे में जानकारी देते हुए प्रकाशन संयोजक शान्ति कुमार गंगवाल

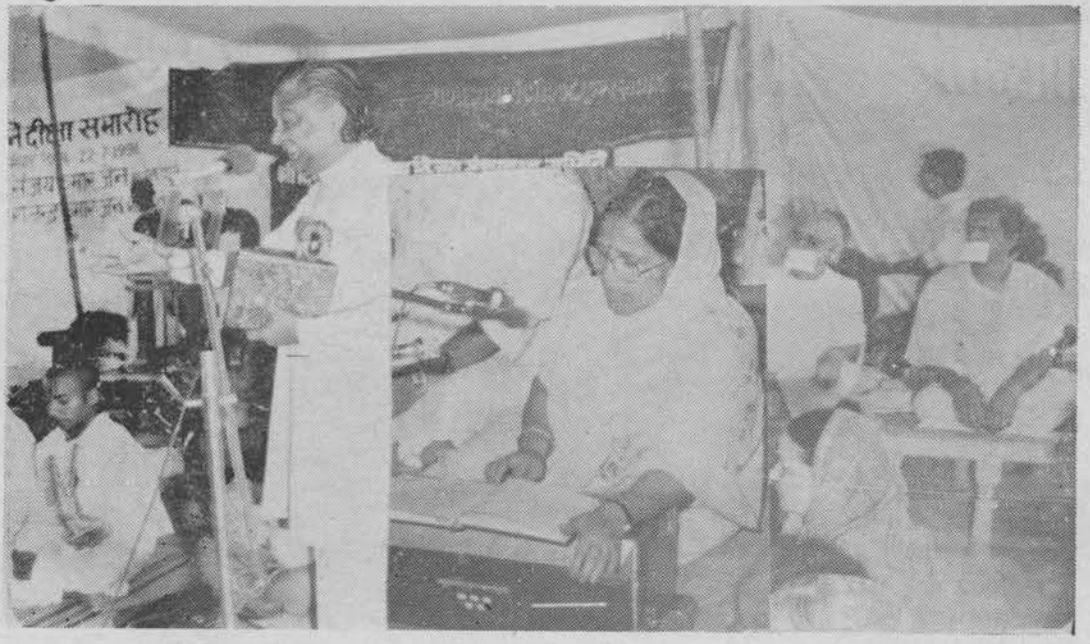

समारोह में भक्ति संगीत का कार्यक्रम प्रस्तुत करते हुए संगीत रत्न श्री सुभाष चन्द्र जैन पंकज मथुरा एवं जैन संगीत कोकिलारानी श्रीमती कनक प्रभा जी हाडा जयपुर

व्रततिथि निर्णय

श्रीमन्तं वर्धमानेशं भारतीं गौतमं गुरुम् ।
नत्वा वक्ष्ये तिथीनां वै निर्णयं व्रतनिर्णयम् ।।१।।

अर्थ :—श्रीमत् अनन्त चतुष्टयरूप अंतरंग श्री, और समवशरण आदि विभूतिरुप बहिरंग श्री—इन दोनों श्री से युक्त भगवान महावीर स्वामी को, जिनवाणी को, सरस्वती रुप दिव्यध्वनि को एवं गुरु गौतम गणधर को नमस्कार करके व्रत निर्णय को कहता हूँ ।

श्री पद्मनंदी मुनिना पद्मदेवेन वाऽपरा ।
हरिषेणेन देवादिसेनेन प्रोक्तमुत्तमम् ।।२।।

ग्राह्यं तच्चेदिवान्यद्वा चतुर्गुण प्रकल्पितम् ।
विधानं च व्रतानां वै ग्राह्यं प्रोक्तं समुत्तमम् ।।३।।

अर्थः—श्री पद्मनंदी मुनि अपर नाम पद्मदेव मुनि, हरिषेण, एक देवसेन से, जो चतुर्गुण प्रकल्पित—यथासमय नियम तिथि को धारण, विधिपूर्वक पालन, विधेय मंत्र का जाप और प्रोषधोपवास युक्त उत्तम व्रत कहे गये हैं, उन्हें ग्रहण करना चाहिए अथवा इन्हीं आचार्यों के समान अन्य आचार्यों के द्वारा प्रतिपादित व्रतों को ग्रहण करना चाहिए । व्रतों के लिए जो विधि—विधान, नियम तिथि, जाप्यमंत्र, अनुष्ठान करने के नियम बताये गये हैं, उन्हें निश्चयपूर्वक ग्रहण करना चाहिए ।

श्रुतसागर सूरीश भावशर्माभ्रदेवकः ।
छत्रसेनादित्यकीर्तिसकलाविसुकीर्तिभिः ।।४।।

अर्थ :—श्रुतसागर आचार्य, भावशर्मा, अभ्रदेव, छत्रसेन, आदित्यकीर्ति, सकलकीर्ति आदि आचार्यों के द्वारा प्रतिपादित व्रततिथि-निर्णय को कहता हूँ ।

क्रमतोऽहं प्रवक्ष्ये वै तिथिव्रतसुनिर्णयौ ।
मतं ग्राह्यं सांप्रतं कुलादि घटिकाप्रभम् ।।५।।

अर्थः —मैं क्रम से तिथिनिर्णय और व्रतनिर्णय को कहता हूँ। इस समय व्रत के लिए छह घटी प्रमाण तिथि का मान ग्रहण करना चाहिए।

विवेचन :—प्राचीन भारत में हिमाद्रि और कुलाद्रि, दो मत व्रततिथियों के निर्णय के लिए प्रचलित थे। हिमाद्रि मत का आदर उत्तर भारत में था और कुलाद्रि मत का दक्षिण भारत में था। हिमाद्रि मत में वैदिक आचार्य तथा कतिपय श्वेताम्बराचार्य परिगणित हैं। हिमाद्रि मत में साधारणतः व्रततिथि का मान दस घटी प्रमाण स्वीकार किया गया है। हिमाद्रि मत केवल व्रतों का निर्णय ही नहीं करता बल्कि अनेक सामाजिक, पारिवारिक व्यवस्थाओं का प्रतिपादन भी करता है। हिमाद्रि मत के उद्धरण देवीपुराण, विष्णुपुराण, शिवसर्वस्व, भविष्य एवं निर्णय सिंधु आदि ग्रन्थों में मिलते हैं।

इन उद्धरणों को देखने से यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि प्राचीनकाल में उत्तर भारत में इसका बड़ा प्रचार था। पारिवारिक और सामाजिक जीवन की अर्थ-व्यवस्था, दण्डव्यवस्था, जीवनोन्नति के लिए विधेय अनुष्ठान आदि का निर्णय उक्त मत के आधार पर ही प्रायः उत्तर भारत में किया जाता था।

ऋषिपुत्र की संहिता के कुछ उद्धरण भी इस मत में समाविष्ट हैं। हेमचन्द्राचार्य द्वारा प्ररूपित नियम भी इसी मत में गिनाये गये हैं। गर्ग, वृद्धगर्ग और पाराशर के वचन भी हिमाद्रि मत में शामिल हैं।

कुलाद्रि मत दक्षिण भारत में प्रचलित था। इस मत की द्रविड संज्ञा भी पायी जाती है। दिगम्बर जैनाचार्यों की गणना भी इसी मत में की जाती थी, किन्तु प्रधान रूप से केरल पक्ष ही इसमें शामिल था। इस मत के अनुसार वही तिथि व्रत के लिए ग्राह्य मानी जाती थी, जो सूर्योदयकाल में छह घटी हो। यों तो इस मत में भी कई शाखा, उपशाखाएं प्रचलित थीं, जिनमें व्रत तिथि की भिन्न-भिन्न घटिकाएं परिगणित की गई हैं।

ज्योतिष शास्त्र में वर्ष, अयन, ऋतु, मास, पक्ष और दिवस ये छह भेद काल के बताए हैं। वर्ष के पांच भेद हैं—सावन, सौर, चान्द्र, नाक्षत्र और बार्हस्पत्य। हेमाद्रि मत में सौर, चांद्र और बार्हस्पत्य-ये तीन भेद ही वर्ष के माने हैं।

सावन वर्ष में ३६० दिन, सौर वर्ष में ३६६ दिन, चान्द्र वर्ष में ३५४$\frac{१२}{१३}$ दिन तथा अधिक मास सहित चन्द्र वर्ष में ३८३ दिन २१$\frac{१८}{६२}$ मुहूर्त और नाक्षत्र वर्ष में ३२७$\frac{५१}{६७}$ दिन होते हैं।

बार्हस्पत्य वर्ष का प्रारम्भ ई. पू. ३१२८ से हुआ है। यह प्रायः माघ से लेकर माघ तक माना जाता है। इसकी गणना बृहस्पति की राशि से की जाती है। बृहस्पति एक राशि पर जितने दिन रहता है, उतने दिनों का बार्हस्पत्य वर्ष होता है। गणना करने पर प्रायः यह १३ महिनों का होता है। व्यवहार में चान्द्रवर्ष ही ग्रहण किया जाता है। इसका प्रारम्भ चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से होता है।

अयन के संबंध में ज्योतिष शास्त्र में बताया है कि तीन सौर ऋतुओं का एक अयन होता है। सूर्य आकाश मण्डल में जिस पथ से जाते हुए देखा जाता है, वही भूकक्ष अथवा अयन मण्डल है। यह चक्राकार है, परन्तु पुरी तरह से गोल नहीं है, कहीं कहीं थोड़ा वक्र भी है। इसके दक्षिण उत्तर कुछ दूरी तक फैला हुआ एक चक्र है, जो राशि चक्र कहलाता है। राशिचक्र और अयन मण्डल दोनों ३६० अंशों में विभक्त हैं। क्योंकि एक वृत्त में चार समकोण होते हैं और प्रत्येक कोण ९० अंश का होता है। इस प्रकार ३६० अंश को १२ राशियो में विभक्त करने पर प्रत्येक राशि का ३० अंश प्रमाण आता है।

इन विभक्त राशियों के नाम इस प्रकार हैं—मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन।

राशिचक्र का कल्पित निरक्षवृत्त विषुवरेखा कहलाता है। इस रेखा के उत्तर-दक्षिण २३ अंश २८ कला के अंतर पर दो बिन्दुओं की कल्पना की जाती है। एक बिन्दु उत्तरायणान्त (उत्तर की ओर जाने की अन्तिम सीमा) और एक बिन्दु दक्षिणायनान्त (दक्षिण की ओर जाने की अंतिम सीमा) है। उन दोनों बिन्दुओं के मध्य जो एक कल्पित रेखा है, उसका नाम अयनान्त वृत्त है। सूर्य जिस पथ से उत्तर की ओर जाता है, उसे उत्तरायण और जिस पथ से दक्षिण की ओर जाता है, उसे दक्षिणायन कहते हैं।

व्यवहार में कर्क राशि के सूर्य से लेकर धनु राशि के सूर्य तक दक्षिणायन और मकर से लेकर मिथुन तक सूर्य उत्तरायण कहलाता है। कुछ कार्यों में अयन शुद्धि ग्राह्य समझी जाती है। मांगलिक कार्य प्रायः उत्तरायण में ही संपन्न होते हैं।

दो महीने की एक ऋतु होती है। सौर और चान्द्र ये दो ऋतुओं के भेद हैं। चैत्र महिने से आरम्भ की जाने वाली गणना चान्द्र ऋतु गणना होती है अर्थात् चैत्र–वैशाख में बसन्त ऋतु, जेष्ठ–आषाढ़ में ग्रीष्मऋतु, श्रावण–भाद्रपद में वर्षा ऋतु, आश्विनकार्तिक में शरद्ऋतु, अगहन-पौष में हेमन्त ऋतु, माघ-फाल्गुन में शिशिर ऋतु होती है।

सौर ऋतु को गणना—मेष राशि के सूर्य से की जाती है। अर्थात् मेष-वृषभ राशि के सूर्य में ग्रीष्मऋतु, सिंह-कन्या राशि के सूर्य में वर्षा ऋतु, तुला-वृश्चिक राशि के सूर्य में शरदऋतु, धनु-मकर राशि के सूर्य में हेमन्त ऋतु और कुम्भ-मीन राशि के सूर्य में शिशिरऋतु होती है। विवाह, प्रतिष्ठा आदि शुभ कार्य सौरऋतु के अनुसार किये जाते हैं।

मास की गणना चार प्रकार से की जाती है—सावन, सौर, चान्द्र और नाक्षत्र। तीस दिन का एक सावन मास होता है। सूर्य की एक संक्रान्ति से लेकर अगली संक्रान्ति तक सौरमास माना जाता है। कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक चान्द्रमास माना जाता है। अश्विनी नक्षत्र से लेकर रेवती नक्षत्र तक नाक्षत्रमास माना जाता है। यह प्रायः $२७\frac{२१}{६७}$ दिन का होता है।

व्यवहार में शुभाशुभ के लिए चान्द्र और सौर मास ही ग्रहण किये जाते हैं। कई आचार्यों का मत है कि विवाह और व्रत में सौरमास और पौष्टिक शान्ति में सावनमास, सांवत्सरिक कार्य में चान्द्रमास ग्राह्य माने गये हैं। क्षयमास और अधिकमास दोनों ही सभी प्रकार के शुभकार्यों के लिए त्याज्य है। हेमाद्रि मत के अनुसार कोई भी शुभकार्य इन दो मासों में नहीं किया जाना चाहिए। परन्तु कुलाद्रि मत में इन दो मासों की अंतिम तिथियां मात्र शुभकार्यों के लिए त्याज्य मानी हैं तथा इन दोनों का पूर्वार्ध-मध्य भाग ग्राह्य माना है।

पक्ष के दो भेद हैं—कृष्णपक्ष और शुक्लपक्ष प्रायः सभी मांगलिक कार्यों के लिए शुक्लपक्ष ही ग्राह्य माना है। कृष्णपक्ष में पंचमी तिथि के पश्चात पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, वेदिप्रतिष्ठा जैसे महान शुभ कार्य नहीं किये जाते हैं।

प्रतिपदादि तिथियों के नाम प्रसिद्ध हैं। अमावस्या तिथि के आठ प्रहरों में पहले प्रहर का नाम सीनीवाली, मध्य के पांच प्रहरों का नाम दर्श और आठवें प्रहर का नाम कुहू है।

किन्हीं-किन्हीं आचार्यों का मत है कि तीन घटिका रात्रि शेष रहने के समय से रात्रि के समाप्ति तक सिनीवाली, प्रतिपदा से विद्ध अमावस्या का नाम कुहू, चतुर्दशी से विद्ध अमावस्या का नाम दर्श है।

सूर्यमण्डल समसूत्र से अपनी कक्षा के समीप में स्थित परन्तु शरवश से पृथक स्थित चन्द्रमण्डल हो तो सिनीवाली, सूर्यमण्डल में आधे चन्द्रमा का प्रवेश हो तो दर्श और जब सूर्यमण्डल और चन्द्रमण्डल समसूत्रों में हों तो कुहू होता है।

प्रतिपदा सिद्धि देने वाली, द्वितीया कार्य साधन करने वाली, तृतीया आरोग्य देने वाली, चतुर्थी हानिकारक, पंचमी शुभप्रद, षष्ठि अशुभ, सप्तमी शुभ, अष्टमी व्याधि नाशक, नवमी मृत्युदायक, दशमी द्रव्यप्रद, एकादशी शुभ, द्वादशी और त्रयोदशी कल्याणप्रद, चतुर्दशी उग्र, पूर्णिमा पुष्टिप्रद एवं अमावस्या अशुभ है।

तिथि के सम्बन्ध में केशवसेन तथा महासेन का मत निम्न प्रकार से है—

केषाञ्चित् धर्मघटिकाप्रभं सम्मतमस्ति च ॥
केषाञ्चिद्विंशतिघटिप्रभं सम्मतमस्ति च ॥६॥

केषांचित् केशवादीनां मते कर्णामृत पुराणादिषु धर्मघटिकाप्रभं मतम्। **केचिदाहुः**—सेनादीनां काष्ठापारीणां मते विंशति घटि मतम्। तेषां ग्रंथेषु सारसंग्रहादिषु तन्मतं तद्वयं दशप्रभं विंशतिघटिप्रभं न मूलसंघरत सूरयः समाद्रियन्ते। अतस्तद्वयं निर्मलसमं बहुभिः कुलाद्रिमतमाहृतमित्यत अवछिन्नपारम्पर्यात तदुपदेशबहुसूरिवाक्याच्च सर्वजनसुप्रसिद्धत्वाच्च रसघटिमतं श्रेष्ठमन्यत कल्पनोपेतं मतं, सेनन-

न्दिदेवा उपेक्षन्तेऽनाद्रियन्तेऽतः कुन्दकुन्दाद्युपदेशात् रसघटिका ग्राह्या कार्या इत्यर्थाः ।।६।।

अर्थ :—किसी के मत (केशवसेन के मत) से दस घटिका तिथि होने पर भी सूर्योदय से लेकर दस घटिका तक अर्थात् चार घण्टे तक तिथि के रहने पर दिन भर के लिए वही तिथि मानी जाती है। दूसरे आचार्यों के मत से बीस घटिका अर्थात् सूर्योदय से आठ घण्टे तक रहने पर ही तिथि दिनभर के लिए मानी गयी है।

आचार्य केशवसेन के मत से सूर्योदय काल में दस घटिका रहने पर ही तिथि ग्राह्य मान ली जाती है। सेनगण काष्ठपारिणों के मत में बीस घटिका रहने पर ही तिथि ग्राह्य मानी जाती है। इन दो सम्प्रदायों के मतों को (दस घटिका और बीस घटिका वाले मतों को) मूलसंघ के आचार्य प्रमाण नहीं मानते हैं। अतः इन दोनों मतों के अलावा बहुतों के द्वारा माना गया कुलाद्रिमत माना गया है। इस मत के द्वारा समर्थित निर्दोष परम्परा से प्राप्त तथा इस निर्दोष परम्परा के उपदेशक आचार्यों के वचन से एवं सभी मनुष्यों में प्रसिद्ध होने से छह घटिका-प्रमाण तिथि को प्रमाण माना गया है।

तिथि का जो अन्य मान माना गया है, वह कल्पना मात्र है, समिचीन नहीं है। इसकी सेन और नन्दिगण के आचार्य उपेक्षा अर्थात् अनादर करते हैं। अतः एव कुन्दकुन्दादि आचार्यों के उपदेश से सभी मतों की अपेक्षा छह घटिका प्रमाण तिथि का मान ग्राह्य है।

विवेचन—जिस प्रकार तारिख चौबीस घंटे तक ही रहती है, उस प्रकार तिथि २४ घण्टे तक नहीं रहती है। तिथि में वृद्धि और ह्रास होता है। कभी-कभी एक तिथि दो दिन तक जाती है। जिसे तिथि की वृद्धि कहते हैं। कभी-कभी किसी तिथि का लोप हो जाता है। जिसे अवम या क्षयतिथि कहते हैं। अधिक से अधिक एक तिथि २६ घण्टा ५४ मिनिट तक हो सकती है। अर्थात् पहले दिन जो तिथि सूर्योदय से आरम्भ होती है, वह अगले दिन सूर्योदय के बाद २ घण्टा ५४ मिनिट तक रह सकती है। एक तिथि का घटात्मक या दण्डात्मक मान ६७ घटिका १५ पल होता है। प्रायः ६० घटिका तिथि एकाध ही होती है। प्रतिदिन हीनाधिक प्रमाण

तिथि होती रहती है। अब प्रश्न यह उठता है कि जब ६० घटिका प्रमाण कोई तिथि न हो तो व्रतादि के लिए कौन सी तिथि ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि पांच घटिका के हिसाब से तिथि वृद्धि और छह घटिका के हिसाब से तिथि का क्षय होता है।

उदाहरण—जेष्ठ शुक्ला पंचमी मंगलवार को ५ घटिका ३० पल है। जिस व्यक्ति को पंचमी का व्रत करना हो, क्या वह पंचमी का व्रत मंगलवार को करेगा ? यदि मंगलवार को व्रत-करता है तो उस दिन ५ घटिका ३० पल अर्थात् सूर्योदय से २ घण्टा १२ मिनट तक पंचमी है, उसके बाद षष्ठि तिथि आती है। व्रत उसे पंचमी का करना है, षष्ठि का नहीं। फिर वह किस प्रकार व्रत करें ?

आचार्य ने विभिन्न मतमतान्तरों का खण्डन करते हुए कहा है कि जिस दिन सूर्योदय काल में ६ घटिका से न्यून तिथि हो उस तिथि का व्रत नहीं करना चाहिए। किन्तु उसके पहले दिन व्रत करना चाहिए। जैसे उक्त उदाहरण में पंचमी का व्रत मंगलवार को न करके सोमवार को करना चाहिए ? क्योंकि मंगलवार को पंचमी तिथि ५ घटिका से कम है। यदि मंगलवार को पंचमी तिथि ६ घटिका १५ पल होती तो, वह व्रत इसी दिन किया जाता। तिथियों का मान घटिका, पल प्रत्येक पंचांग में लिखा रहता है।

व्रत के अलावा अन्य कार्यों के लिए वर्तमान तिथि ही ग्रहण की जाती है। अर्थात् जिस कार्य का जो काल है, उस काल में जो तिथि व्याप्त हो उसे ही ग्रहण करना चाहिए। उदाहरणार्थ यों कहा जा सकता है कि किसी व्यक्ति को जेष्ठ शुक्ला पंचमी में विद्यारम्भ करना है। जेष्ठ पंचमी मंगलवार को ५ घटिका ३० पल है तथा सोमवार को जेष्ठ सुदी चतुर्थी १० घटिका १५ पल है। विद्यारम्भ के लिए सोमवार ठीक रहता है, सोमवार चतुर्थी छह घटिका से ज्यादा है, व्रत के लिए इस दिन चतुर्थी कहलायेगी परन्तु १० घटिका १५ पल के उपरान्त पंचमी मानी जाएगी। १० घटिका १५ पल के चार घण्टा छह मिनट हुए। सूर्योदय इस दिन ५ बजकर २० मिनट पर होता है। अतः ९ बजकर २३ मिनट के पश्चात् सोमवार को विद्यारम्भ किया जा सकता है। यात्रा के लिए भी यही बात है। यदि किसी को पश्चिम दिशा में जाना हो तो वह पंचमी तिथि में ९ बजकर २३ मिनट के पश्चात् जायेगा तथा पूर्व में जानेवाला मंगलवार को पंचमी तिथि रहते हुए प्रातःकाल ७ बजकर ३२

मिनट तक यात्रारम्भ करेगा । दान, अध्ययन, शांति–पौष्टिक कर्म आदि के लिए सूर्योदय काल की तिथि ग्राह्य है ।

तिथियों की नंदा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा संज्ञायें बताई गई हैं । प्रतिपदा, षष्ठि और एकादशा की नंदा; द्वितीया, सप्तमी और द्वादशी की भद्रा संज्ञा, तृतीया, अष्टमो और त्रयोदशी की जया; चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी की रिक्तासंज्ञा; एवं पंचमी, दशमी और पूर्णिमा या अमावस्या की पूर्णासंज्ञा है ।

नंदासंज्ञक तिथियां मंगलवार को, रिक्तासंज्ञक तिथियाँ शनिवार को, पूर्णासंज्ञक तिथियां बृहस्पतिवार को पड़े तो सिद्धा कहलाती हैं । सिद्धा तिथियों में किया गया अध्ययन, व्यापार, लेन-देन अथवा किसी भी प्रकार का नवीन कार्य सिद्ध होता है । नंदासंज्ञक तिथियों में चित्रकला, उत्सव, गृह निर्माण, तान्त्रिक कार्य (जड़ी-बूटी, ताबीज आदि देने के कार्य), कृषि सम्बन्धी कार्य एवं गीत, नृत्यादि प्रभृति कार्य सुचारु रूप से सम्पन्न होते हैं । भद्रातिथियों में विवाह, आभूषण निर्माण, गाड़ी की सवारी एवं पौष्टिक कार्य, जयासंज्ञक तिथियों में संग्राम, सैनिकों को भर्ति करना, युद्ध क्षेत्र में जाना एवं खर और तीक्ष्ण वस्तुओं का संचय करना; रिक्तासंज्ञक तिथियों में शस्त्रप्रयोग, विष प्रयोग, निन्द्यकार्य, शास्त्रार्थ आदि कार्य एवं पूर्णासंज्ञक तिथियों में मांगलिक कार्य, विवाह, यात्रा, यज्ञोपवित आदि कार्य करना चाहिए । अमावस्या को मांगलिक कार्य नहीं किये जाते हैं । इस तिथि में प्रतिष्ठा, जपारम्भ, शांति पौष्टिक कर्म और शांतिकर्म का भी निषेध किया गया है ।

चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, द्वादशी और चतुर्दशी इन तिथियों की पक्ष-रन्ध्र संज्ञा है । इनमें उपनयन, विवाह, प्रतिष्ठा, गृहारम्भ आदि कार्य करना अशुभ माना गया है । यदि इन तिथियों में कार्य करने की अत्यन्त आवश्यकता हो तो इनके आरम्भ की पांच घटिकाएं अर्थात् दो घण्टे अवश्य त्याज्य हैं । अभिप्राय यह कि उपर्युक्त तिथियों में सूर्योदय के दो घण्टे बाद कार्य करना चाहिए ।

रविवार को द्वादशी, सोमवार को एकादशी, मंगलवार को पंचमी, बुधवार को तृतीया, बृहस्पतिवार को षष्ठि, शुक्रवार को अष्टमी और शनिवार को नवमी तिथि के होने पर दग्धयोग कहलाता है । इस योग में कार्य करने से नाना प्रकार के विघ्न आते हैं । अभिप्राय यह है कि वार और तिथियों के संयोग से कुछ शुभ और

कुछ अशुभ योग बनते हैं । यदि रविवार को द्वादशी तिथि हो तो दग्धयोग होता है । इसमें शुभ कार्य आरम्भ नहीं करना चाहिए । इसी प्रकार आगे आनेवाली तिथियों को भी समझना चाहिए ।

रविवार को चतुर्थी, सोमवार को षष्ठि, मंगलवार को सप्तमी, बुधवार को द्वितीया, गुरुवार को अष्टमी, शुक्रवार को नवमी और शनिवार को सप्तमी तिथि विषमयोग संज्ञक कहलाती हैं । अर्थात् उपर्युक्त तिथियां रवि आदि वारों के साथ मिलने से विषम होती हैं । इन विषम योगों में कोई भी शुभ कार्य आरम्भ नहीं करना चाहिए । नाम के समान ही यह योग फल देता है ।

रविवार को द्वादशी, सोमवार को षष्ठि, मंगलवार को सप्तमी, बुधवार को अष्टमी, बृहस्पतिवार को नवमी, शुक्रवार को दशमी और शनिवार को एकादशी तिथियां हुताशनयोग संज्ञक कहलाती हैं । इन तिथियों में रवि आदि वारों के संयोग होने पर शुभ कार्य करना त्याज्य है ।

विषमदग्धहुताशनयोग बोधक चक्र

रवि.	सोम.	मंगल.	बुध.	बृह.	शुक्र.	शनि.	योग
१२	११	५	३	६	८	९	दग्धयोग
४	६	७	२	८	९	७	विषमयोग
१२	६	७	८	९	१०	११	हुताशनयोग

चैत्र में दोनों पक्षों की अष्टमी, नवमी; वैशाख में दोनों पक्षों की द्वादशी; जेष्ठ में कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, शुक्लपक्ष की त्रयोदशी; आषाढ़ में शुक्लपक्ष की सप्तमी, कृष्णपक्ष की षष्ठि; श्रावण में द्वितीया, तृतीया; भाद्रपद में प्रतिपदा,

द्वितीया; आश्विन में दशमी, एकादशी; कार्तिक में कृष्णपक्ष की पंचमी, शुक्लपक्ष की चतुर्दशी; मार्गशिर्ष में सप्तमी, अष्टमी; पौष में चतुर्थी, पंचमी; माघ में कृष्ण-पक्ष की पंचमी और शुक्लपक्ष की षष्ठि एवं फागुन में शुक्लपक्ष की तृतीया शून्य-संज्ञक हैं।

इन तिथियों में मांगलिक कार्य आरम्भ करने से वंश और धन की हानि होती है। ज्योतिष शास्त्र में उपर्युक्त तिथियां निर्बल बतायी गई हैं। इनमें विद्या-रम्भ, गृहारम्भ, वेदिप्रतिष्ठा, पंचकल्याणक, जिनालयारम्भ, उपनयन आदि कार्य नहीं करने चाहिए।

मेष और कर्क राशि के सूर्य में षष्ठि; मीन और धनु के सूर्य में द्वितीया; वृषभ और कुम्भ के सूर्य में चतुर्थी; कन्या और मिथुन के सूर्य में अष्टमी; सिंह और वृश्चिक के सूर्य में दशमी; मकर और तुला के सूर्य में द्वादशी तिथियां दग्धासंज्ञक कहलाती हैं।

मतान्तर से धनु और मीन के सूर्य में द्वितीया; वृषभ और कुम्भ के सूर्य में चतुर्थी; मेष और कर्क के सूर्य में षष्ठि; मिथुन और कन्या के सूर्य में अष्टमी; सिंह और वृश्चिक के सूर्य में दशमी; तुला और मकर के सूर्य में द्वादशी तिथियां दग्धासंज्ञक कहलाती हैं।

कुम्भ और धनु के चन्द्रमा में द्वितीया; मेष और मिथुन के चन्द्रमा में चतुर्थी; तुला और सिंह के चन्द्रमा में षष्ठि; मकर और मीन के चन्द्रमा में अष्टमी; वृषभ और कर्क के चन्द्रमा में दशमी; वृश्चिक और कन्या के चन्द्रमा में द्वादशी-तिथियां चन्द्रदग्धा कहलाती हैं। इन तिथियों में उपनयन, प्रतिष्ठा, गृहारम्भ, आदि कार्य करना वर्जित हैं।

सूर्यदग्धा तिथि-यन्त्र

धनु और मीन के सूर्य में	२	मिथुन और कन्या के सूर्य में	८
वृषभ और कुम्भ के सूर्य में	४	सिंह और वृश्चिक के सूर्य में	१०
मेष और कर्क के सूर्य में	६	तुला और मकर के सूर्य में	१२

चन्द्रदग्धा तिथि-यन्त्र

कुम्भ और धनु के चन्द्रमा में	२	मकर और मीन के चन्द्रमा में	८
मेष और मिथुन के चन्द्रमा में	४	वृषभ और कर्क के चन्द्रमा में	१०
तुला और सिंह के चन्द्रमा में	६	वृश्चिक और कन्या के चन्द्रमा में	१२

इस प्रकार विभिन्न कार्यों के लिए शुभाशुभ तिथियों का विचार कर अशुभ तिथियों का त्याग करना चाहिए। प्रत्येक शुभ कार्य में समय शुद्धि का विचार करना परमावश्यक है। व्रतारम्भ के लिए तिथि का प्रमाण छः घटी सर्व सम्मति से स्वीकार किया गया है।

तिथिप्रमाण के लिए पद्मदेव का मत—

इत्यादिमातमलोक्य नियतं रसघटीप्रमम्।
अयं श्री पद्मदेवादि सूरिभिर्ज्ञानधारिभिः ॥७॥

अर्थ—इस प्रकार व्रत-तिथि के प्रमाण के लिए नाना मत मतान्तरों का अवलोकन करके ज्ञानवान श्री पद्मदेव आदि महर्षियों ने रस घटी-छः घटी प्रमाण तिथि के मत को ही प्रमाण माना है। अर्थात् जैन मान्यता में उदया-तिथि व्रत के लिए ग्राह्य नहीं है। किन्तु छह घटी प्रमाण तिथि होने पर ही व्रत के लिए ग्राह्य मानी गई है।

पद्मदेव के मत का उपसंहार—

तदेव पद्मदेवाचार्योक्तं रसघटिमतं व्रत विधाने ग्राह्यम्।

अर्थ—व्रतविधान के लिए छह घटिका प्रमाण ही पद्मदेव आचार्य के मत से ग्रहण करना चाहिए। दस घटिका प्रमाण व्रत तिथि को नहीं मानना चाहिए। श्री कुन्दकुन्दाचार्य तथा मूलसंघ के अन्य आचार्यों का मत भी छः घटिका प्रमाण तिथि ग्रहण करना है।

विविधातिथिसमयाते क्रियते हि व्रतं कथम्।
प्रच्छेति गुरुं शिष्यो विनयावनतमस्तकः ॥८॥

अर्थ—एक ही दिन कई तिथियों के आ जाने पर व्रत कब करना चाहिए अर्थात् कभी-कभी एक ही दिन तीन-तीन तिथियां होती हैं। ऐसी अवस्था में व्रत कब करना चाहिए इस प्रकार का प्रश्न विनम्र एवं नतमस्तक होकर शिष्य ने गुरु से पूछा।

विवेचन—मध्यम मान तिथि का यद्यपि ६० घटिका है, परन्तु स्पष्ट मान तिथि का सदा घटता बढ़ता रहता है, कोई भी तिथि ६० घटिका प्रमाण एकाध बार ही आती है। कभी कभी ऐसा अवसर भी आता है, जब एक ही दिन तीन तीन तिथियां आती हैं।

उदाहरण—जेष्ठ सुदी द्वितीया प्रातः काल १ घटिका १५ पल है, इसी दिन तृतीया का प्रमाण ५२ घटिका ३० पल पंचाग में लिखा है। सूर्योदय ५ बजकर १५ मिनट पर होता है, अतः इस दिन ५ बज कर ४५ मिनट तक द्वितीया रही, इसके पश्चात रात के २ बज कर ४५ मिनट तक तृतीया तिथि रही। तदुपरान्त चतुर्थी तिथि आ गई। इस प्रकार एक ही दिन तीन तिथि पडीं। जिस व्यक्ति को तृतीया का व्रत करना है, वह इस प्रकार की विद्ध तिथियों में कैसे करें? यदि इस दिन व्रत करना है तो तीन तिथियां रहने से व्रत का फल नहीं मिलेगा। तथा इसके पहले व्रत करेगा तो तृतीया तिथि नहीं मिलती है, अतः किस प्रकार व्रत करना चाहिए ?

ज्योतिष शास्त्र में व्रत तिथि के निर्णय के लिए अनेक प्रकार से विचार किया है। तिथियों के क्षय और वृद्धि के कारण ऐसी अनेक शंकास्पद स्थितियां उत्पन्न होती हैं। तब श्रद्धालु व्यक्ति पशोपेश में पडता है कि अब किस दिन व्रत करना चाहिए। क्योंकि व्रत का फल तभी यथार्थरूप से मिलेगा, जब व्यक्ति व्रत को निश्चित तिथि पर करें। तिथि टाल कर व्रत करने से व्रत का पूरा फल नहीं मिलेगा। जिस प्रकार असमय की वर्षा कृषि के लिए उपयोगी होने के बदले हानिकारक होती है, उसी प्रकार असमय पर किया गया व्रत भी फलप्रद नहीं होता। यों तो व्रत सदा ही आत्म शुद्धि का कारण होता है, कर्मों की निर्जरा होती ही है। पर विधिपूर्वक व्रत करने से कर्मों की निर्जरा अधिक होती है। तथा पुण्य प्रकृतियों का बंध भी होता है।

वेधातिथि का लक्षण—

वेधायाः लक्षणं किमिति चेदाह—सूर्योदयकाले त्रिमुहूर्ताभावात् क्षयाभावाच्च विद्धा सा वेधा ज्ञेया। सूर्योदयकालवर्तिन्या तिथ्या वेधत्वात्।

अर्थ—वेधा तिथि का लक्षण क्या है।

आचार्य कहते हैं—सूर्योदय समय में जो तिथि तीन मुहूर्त छह घटी से कम होने अथवा उसका क्षय का अभाव होने के कारण अन्य तिथि के साथ सम्बद्ध रहती है वह वेधा या विद्धा तिथि कहलाती है। सूर्योदय काल में रहने वाली तिथि के साथ वेध सम्बन्ध करने के कारण वेधा तिथि कहलाती है।

व्रतोपनयन आदि कार्यों के लिए तिथि का मान–

सोदयं दिवसं ग्राह्यं कुलाद्रि घटिका प्रमम् ।
व्रते वटोपमागस्य गुरुः प्राहतिथिति स्फुटम् ।। ६ ।।

अर्थ—छह घटी प्रमाण होने पर दिनभर के लिए वही तिथि मान ली जाती है । अतः व्रत ग्रहण, उपनयन, प्रतिष्ठा आदि कार्य उसी तिथि में करने चाहिए इस प्रकार पूर्वोक्त प्रश्न के उत्तर में गुरु ने स्पष्ट कहा है ।

विवेचन—प्राचीन भारत में तिथिज्ञान के लिए दो मत प्रचलित थे–हिमाद्रि और कुलाद्रि । हिमाद्रिमत उदयकाल में तिथि के होने पर ही तिथि को ग्रहण करता था, पर कुलाद्रिमत उदयकाल में छह घटी प्रमाण तिथि के होने पर ही तिथि को ग्रहण करता था । षटकुलाचल होने के कारण छह घटी प्रमाण उदयकाल में तिथि का प्रमाण मानने से ही इस मत का नाम कुलाद्रिमत या कुलाद्रि घटिका मत पड़ गया था । कुछ लोग हिमाद्रिमत का प्रमाण दस घटी प्रमाण भी मानते थे ।

ज्योतिष शास्त्र में तिथियां दो प्रकार की बतायी गई हैं-शुद्धा और विद्धा । 'दिने तिथ्यन्तर सम्बन्ध रहिता शुद्धा' अर्थात् दिनमान में एक ही तिथि हो, किसी अन्य तिथि का सम्बन्ध न हो तो शुद्धा तिथि कहलाती है ।'तत्सहिता विद्धा' एक दिन में दो तिथियों का सम्बन्ध हो तो विद्धा तिथि कहलाती है । आरम्भसिद्धि ग्रंथ में विद्धा तिथि का विश्लेषण करते हुए कहा है कि जो तिथि तीन वारों में वर्तमान रहे, वह वृद्धा कहलाती है । मतान्तर से इसका नाम विद्धा तिथि है । जब एक ही दिन में में तीन तिथियाँ या दो तिथियां वर्तमान रहें वहां भी विद्धा तिथि मानी जाती है ।

जब एक दिन में तीन तिथियां वर्तमान रहें, वहां मध्यवाली तिथि का क्षय माना जाता है । तथा जब एक दिन में दो तिथियाँ वर्तमान रहें, तब उत्तरवाली तिथि का क्षय माना जाता है ।

जैसे रविवार की रात्रि में तीन घटी रात्रि शेष रहने पर पंचमी आरम्भ हुई, सोमवार को ६० घटी पंचमी है तथा मंगल को प्रातःकाल में तीन घटी पंचमी है पश्चात् षष्ठि तिथि आरम्भ होती है । यहां पंचमी तिथि रविवार, सोमवार और मंगलवार इन तीन दिनों में व्याप्त है, अतः वृद्धा तिथि मानी जायेगी । यह तिथि प्रतिष्ठा, गृहारम्भ, उपनयन आदि समस्त शुभ कार्यों में त्याज्य मानी गई है ।

तीन तिथियों की एक दिन में स्थिति इस प्रकार मानी जाती है—शुक्रवार को अष्टमी प्रातःकाल एक घटी १५ पल है, नवमी ५१ घटी ४० पल है और दशमी छह छटी ५ पल है तथा शनिवार को दशमी ४९ घटी २० पल है । इस प्रकार की स्थिति में शुक्रवार को अष्टमी, नवमी और दशमी तीनों तिथियां रही हैं । इन तीनों में से नवमी तिथि क्षयतिथि मानी जायेगी । अतः नवमी के कार्य का निषेध रहेगा ।

जैनाचार्यों ने प्रतिष्ठा, गृहारम्भ, व्रतोपनयन, प्रभृति मांगलिक कार्यों के लिए तिथिवृद्धि और तिथिक्षय दोनों को त्याज्य बताया है । प्रातःकाल में जब तक ६ घटी प्रमाण तिथि न हो तब तक कोई भी शुभकार्य नहीं करना चाहिए ।

विष्णु धर्मपुराण, नारद संहिता, वशिष्ठ संहिता, मुहूर्तदीपिका, मुहूर्त-माधवीय आदि वैदिक ज्योतिष के ग्रंथों में भी धर्मकृत्य के लिए तीन मुहूर्त अर्थात् छह घटी प्रमाण तिथि का विधान किया गया है । विद्धा तिथि के होने पर किसी-किसी आचार्य ने तीन मुहूर्त प्रमाण तिथि को भी अग्राह्य बताया है ।

समस्त शुभ कार्यों में व्यतिपात योग, भद्रा, वैधृतिमाम का योग, अमा-वस्या, क्षयतिथि, वृद्धा तिथि, क्षयमास कुलिकयोग, अर्धयाम, महापात, विष्कंभ और वज्र के तीन-तीन दण्ड, परिध योग का पूर्वार्ध, शूलयोग के पांच दण्ड, गण्ड और अति-गण्ड के छह-छह दण्ड एवं व्याघात योग के नौ दण्ड समस्त शुभ कार्यों में त्याज्य हैं ।

प्रत्येक शुभ कार्य के लिए पंचांग शुद्धि देखी जाती है–तिथि, नक्षत्र, वार, योग और करण । इन पांचों के शुद्ध होने पर ही कोई भी शुभ कार्य करना श्रेष्ठ होता है । यों तो भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए भिन्न-भिन्न तिथियां ग्राह्य की गई हैं, परन्तु समस्त शुभ कार्यों में प्रायः १–४–६–१२–१४–३० तिथियां त्याज्य मानी गई हैं । ग्राह्य तिथियों में भी क्षय और वृद्धा तिथियों का निषेध किया गया है ।

अश्विनी, भरणी, कृतिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विषाखा, अनु-राधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तरा भाद्रपदा और रेवती–ये २७ नक्षत्र हैं ।

धनिष्ठा से रेवती तक पांच नक्षत्रों को पंचक माना जाता है। इन पांचों नक्षत्रों में तृणकाष्ठ का संग्रह करना, खाट बनाना, झोंपड़ी बनाना निषिद्ध है।

अश्विनी, रेवती, मूल, आश्लेषा और जेष्ठा इन पांचों में जन्मे बालक को मूलदोष माना जाता है। कोई-कोई मघा नक्षत्र को भी परिगणित करते हैं।

उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरा भाद्रपदा और रोहिणी ध्रुव एवं स्थिर संज्ञक हैं। इनमें मकान बनाना, बगीचा तैय्यार करना, जिनालय बनाना, शांति और पौष्टिक कार्य करना शुभ होता है। स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र चर या चल संज्ञक हैं। इनमें मशीन चलाना, सवारी करना, यात्रा करना शुभ है।

पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वा भाद्रपदा, भरणी और मघा उग्र तथा क्रूर संज्ञक हैं। इनमें प्रत्येक शुभकार्य त्याज्य है। विशाखा और कृतिका मिश्र संज्ञक हैं। इनमें सामान्य कार्य करना अच्छा होता है। हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित क्षिप्र अथवा लघुसंज्ञक हैं। इनमें दुकान खोलना, ललित कलाएं सीखना या ललित कलाओं का निर्माण करना, मुकदमा दायर करना, विद्यारम्भ करना, शास्त्र लिखना उत्तम होता है।

मृगशिरा, रेवती, चित्रा और अनुराधा मृदु या मैत्र संज्ञक हैं। इनमें गायन, वादन करना, वस्त्रधारण करना, यात्रा करना, क्रीडा करना, आभूषण बनवाना आदि शुभ है। मूल, जेष्ठा, आर्द्रा और आश्लेषा तीक्ष्ण या दारुण संज्ञक हैं। इनका प्रत्येक शुभ कार्यों में त्याग करना आवश्यक है।

विष्कम्भ, प्रीति, आयुष्मान, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतिपात, वरीयान, परिध, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, ऐन्द्र और वैधृति ये २७ योग होते हैं। इन योगों में वैधृति व्यतिपात योग समस्त शुभ कार्यों में त्याज्य है, परिध योग का आधा भाग वर्ज्य है।

बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि, शकुनी, चतुष्पद, नाग और किंस्तुघ्न ये ११ करण होते हैं। बव करण में शांति और पौष्टिक कार्य; बालव में गृहनिर्माण, गृहप्रवेश, निधि-स्थापन, दान-पुण्य के कार्य; कौलव में पारिवारिक कार्य; मैत्री, विवाह आदि; तैतिल में नौकरी, सेवा, राजा से मिलना आदि राज कार्य; गर

में कृषि कार्य; वणिज में व्यापार क्रय विक्रय आदि कार्य; विष्टि में उग्रकार्य; शकुनी में मंत्र तंत्र सिद्धि, औषध, निर्माण आदि; चतुष्पद में पशु खरीदना-बेचना पूजापाठ करना आदि; नाग में स्थिर कार्य एवं किंस्तुघ्न में चित्र खींचना, नाचना, गाना आदि कार्य करना श्रेष्ठ माने गये हैं। विष्टि भद्रा समस्त शुभ कार्यों में त्याज्य हैं।

वारों में रविवार, शनिवार, मंगलवार क्रूर माने गये हैं। इनमें शुभ कार्य करना प्रायः त्याज्य है। मतान्तर से रविवार ग्रहण भी किया गया है। किन्तु मंगलवार और शनिवार को सर्वथा त्याज्य बताया गया है। शुक्रवार, गुरुवार और बुधवार समस्त शुभ कार्यों में ग्राह्य माने गये हैं, सोमवार को मध्यम बताया है। राज्याभिषेक, नौकरी, मंत्र सिद्धि, औषधनिर्माण, विद्यारम्भ, संग्राम, अलंकार निर्माण, शिल्प निर्माण, पुण्यकृत्य, उत्सव, याननिर्माण, सूतिका स्नान आदि कार्य रविवार को करने से; कृषि, व्यापार, गान, चांदी-मोति का व्यापार, प्रतिष्ठा आदि कार्य सोमवार को करने से; क्रूर कार्य, खान-खोदना, ऑपरेशन करना, सूतिका स्नान आदि काम मंगलवार को करने से; अक्षरारम्भ, शिलान्यास, कर्णवेध, काव्य-निर्माण काव्य तर्क कला आदि का अध्ययन, व्यायाम करना, कुश्ती लड़ना आदि कार्य बुधवार को करने से; दीक्षारम्भ, विद्यारम्भ, औषध निर्माण प्रतिष्ठा, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, सीमन्तोन्नयन, पुंसवन, जातकर्म, विवाह, स्तनपान, सूतिका स्नान, भूम्युपवेशन एवं अन्नप्राशन आदि मांगलिक कार्य गुरुवार को करने से; विद्यारम्भ, कर्णवेध चूडाकरण, वाग्दान, विवाह, व्रतोपनयन, षोडशसंस्कार आदि कार्य शुक्रवार को करने से एवं गृहप्रवेश, दीक्षारम्भ तथा अन्य क्रूर कार्य शनिवार को करने से सफल होते हैं।

विशेष समाचार के लिए तो प्रत्येक कार्य के विहित मुहूर्त को ग्रहण करना चाहिए। सामान्य से उपर्युक्त तिथि, नक्षत्र, योग, करण और वार सिद्धि का विचार कर जो तिथि आदि जिस कार्य के लिए ग्राह्य हैं, उन्हीं में उस कार्य को करना चाहिए शुभ समय पर किया गया कार्य अधिक फल देता है।

व्रत के लिए छह घटी प्रमाण तिथि न मानने वालों के दोष—

ये गृण्हन्ति सूर्योदयं शुभ दिनमसद् दृष्टिपूर्वा नराः ।
तेषां कार्यमनेकधा व्रत विधिर्मार्गमेवेति च ।।
धर्माधर्म विचार हेतु रहिताः कुर्वन्ति मिथ्यानिषम् ।
तिर्यक्शुभ्रमेवाश्रिता जिनपतेर्बाह्यं मता धर्मतः ।।१०।।

अर्थ—जो मिथ्यादृष्टि सूर्योदय में रहने वाली तिथि को ही शुभ मानते हैं, उनके व्रत और तिथियां अनिश्चित रहने के कारण अनेक हो सकते हैं तथा व्रत विधि और कार्य भी अनिश्चित ही होते हैं । ये धर्म और अधर्म के विचार से रहित होकर असत् तिथि में व्रत करते हैं, जिससे जैन धर्म से विरुद्ध आचरण करने के कारण तिर्यञ्च और नरक गति को प्राप्त होते हैं । अभिप्राय यह है कि आगमविरुद्ध तिथियों को ही प्रमाण मानकर व्रत करना आगमविरुद्ध है। आगमविरुद्ध व्रत करने से नरक और तिर्यंचगति में भ्रमण करना पड़ता है ।

विवेचन—विधि पूर्वक व्रत करने से समस्त पाप सन्ताप दूर हो जाते हैं, पुण्य की वृद्धि होती है तथा परम्परा से मोक्ष की प्राप्ति होती है । जैनाचार्यों ने व्रत को तिथि का प्रमाण सूर्योदय काल में कम से कम छह घटी प्रमाण माना है । इससे कम प्रमाण तिथि होने पर पिछले दिन व्रत करने का आदेश दिया है । अन्य धर्म वालों ने उदय तिथि को ही प्रमाण माना है । यदि उदय काल में एक घटी या इससे भी कम तिथि हो तो व्रत के लिए ग्रहण करने का आदेश दिया है ।

उदाहरणार्थ—यों कहना चाहिए 'क' व्यक्ति को चतुर्दशी का व्रत करना है । चतुर्दशी शनिवार को एक घटी दस पल है । जैनाचार्यों के मतानुसार चतुर्दशी का व्रत शनिवार को नहीं करना चाहिए क्योंकि इस दिन चतुर्दशी उदय काल में छह घटी से न्यून है, अतः शुक्रवार को ही व्रत करना होगा । अजैन/वैदिक आचार्यों के के मतानुसार चतुर्दशी शनिवार को है । इनके मतानुसार उदयकालीन तिथि ही दिनभर के लिए ग्रहण की जाती है ।

व्रत विधि में सबसे आवश्यक अंग समय शुद्धि है । असमय का व्रत कल्याणकारी नहीं हो सकता । सम्यग्दृष्टि श्रावक अपने सम्यग्दर्शन की विशुद्धि के लिए व्रत करता है वह व्रत के दिन अपने खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार को अत्यन्त

पवित्र बनाने का प्रयत्न करता है। आरम्भ और परिग्रह का उतने समय के लिए त्याग करता है। प्रभु की पूजा करता हुआ उनके गुणों का चिंतवन करता है। अपनी आत्मा में पवित्रता की भावना भरता है। सारांश यह है कि वह अपनी भावना मुनि धर्म को प्राप्त करने की करता है। व्रती श्रावक नित्य और नैमितिक दोनों प्रकार के के व्रतों का पालन करता हुआ अपनी आत्मा को उज्जवल, निर्मल और कर्मकलंक से रहित करता है। व्रत आत्मा के शोधन में अत्यन्त सहायक होते हैं। इस व्रत-तिथि निर्णय में आचार्यों ने व्रतों के लिए तिथियों का निश्चय किया है। जैनाचार में व्रत उपवास के लिए तिथियों का विधान किया गया है। यहां आचार्य ने कितने प्रमाण तिथि के होने पर व्रत करना चाहिए, इसका विस्तार से निरुपण किया है। योग्य समय में व्रत करने से विशेष फल की प्राप्ति होती है।

तिथिह्रासे प्रकर्तव्य किं विधानं ? सकला तिथि: का ? कथं मत निर्णय: ? इति चेतदाहः ?

अर्थ—तिथि के ह्रास में व्रत करने का क्या नियम है ? कब व्रत करना चाहिए ? सकला/सम्पूर्ण तिथि क्या है ? उसमें किस प्रकार का मत व्यक्त किया गया है ? इस प्रकार के प्रश्न पूछे जाने पर आचार्य कहते हैं—

तिथि ह्रास में व्रत करने का विधान—

त्रिमुहूर्तेषु यत्रार्क उदेत्यस्तं समेति च।
सा तिथिः सकला ज्ञेया उपवासादि कर्मणि ॥११॥

संस्कृत व्याख्या—यस्यां तिथौ त्रिमुहूर्तेषु अग्रे वर्तमानेषु षट्स्वर्कः उदेति सा तिथि: दैवासिकव्रतेषु रत्नत्रयाह्निकदशलाक्षणिक रत्नावली कनकावली द्विकावल्येकावलीमुक्तावलीषोडशकरणादिषु सकला ज्ञेया। चकरात् या तिथि: उदयकाले त्रिमुहूर्तादिदनागतदिवसेऽपि वर्तमाना तिथ्युदयकाले त्रिमुहूर्तादिना सा अस्तंगतातिथिर्ज्ञेया। तद्व्रतं गतदिवसे एव स्यात् अर्कास्तमनकाले त्रिमुहूर्ताधिकत्वादिति हेतोः। च शब्दात् द्वितीयाऽर्थोऽपि ग्राह्यः त्रिमुहूर्तेषु सत्सुयस्यामर्कः अस्तमेति सा तिथि: जिनरात्रिर्गगनपचमीचंदनषष्ठ्यादिषु नैशिकव्रतेषु सकला ग्राह्या इति तात्पर्यार्थः।

अर्थ—दैवासिक व्रतों में रत्नत्रय, अष्टान्हिका, दश लक्षण, रत्नावली, एकावली, द्विकावली, कनकावली, मुक्तावली, षोडशकारण आदि में सूर्योदय के समय की तीन मुहूर्त अर्थात् छह घटी से लेकर छह मुहूर्त अर्थात् बारह घटी तक उक्त व्रतों

की प्रतिपादित तिथियों के होने पर व्रत किये जाते हैं। रात्रि व्रतों में जिनरात्रि, आकाश पंचमी, चंदनषष्ठि, नक्षत्रमाला आदि में अस्तकालीन तिथि ली गई है अर्थात् जिस दिन तीन मुहूर्त अर्थात् छह घटी तिथि सूर्य के अस्त समय में रहे उस दिन वह तिथि नैशिक (रात्रि) व्रतों में ग्रहण की गई है। अभिप्राय यह कि दैवासिक व्रतों में उदयकाल में छह घटी तिथि का और नैशिक व्रतों में अस्तकाल में छह घटी तिथि का रहना आवश्यक है।

विवेचन—श्रावक के व्रत मूलतः दो प्रकार के होते हैं—नित्यव्रत और नैमित्तिक व्रत। पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत इन बारह व्रतों का नित्य पालन किया जाता है। अतः ये नित्य व्रत कहे जाते हैं। नैमितिक व्रतों का पालन किसी विशेष अवसर पर ही किया जाता है, इनके लिए तिथि और समय निश्चित है तथा नैमित्तिक व्रतों में श्रावक अपने मुलगुण, उत्तर गुणों को शुद्ध करता है। उतरोत्तर अपनी आत्मा का विकास करता जाता है।

नैमित्तिक व्रतों की संख्या १०८ है। इन १०८ व्रतों में कुछ पुनरूक्त होने के कारण व्यवहार में ८० व्रत लिए जाते हैं। वर्तमान में १०–१५ ही प्रमुख व्रतों का प्रचार देखा जाता है।

नैमित्तिक व्रतों के प्रधान दो भेद हैं—दैवासिक और नैशिक। जिन व्रतों की समस्त क्रियाएं दिन में की जाती हैं, वे दैवासिक व्रत एवं जिन की क्रियाएं रात में की जाती हैं, वे नैशिक व्रत कहलाते हैं। दोनों ही प्रकार के व्रतों में प्रोषधोपवास, ब्रह्मचर्य एवं धर्मध्यान करना आवश्यक है। फिर भी कुछ कारण ऐसे हैं, जिनका व्रत की उपयोगिता और व्यावहारिकता के अनुसार रात या दिन में करना आवश्यक है।

रत्नावली व्रत में ७२ उपवास किये जाते हैं। यह व्रत श्रावण कृष्ण द्वितीया से आरंभ किया जाता है। इसमें प्रत्येक मास में छह उपवास करने का विधान है। व्रत करने वाला प्रथम श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन एकाशन करता है और श्रावण कृष्ण द्वितीया का उपवास करता है। उपवास के दिन पूजा, स्वाध्याय और जाप करता हुआ ब्रह्मचर्य से रहता है। श्रावण कृष्ण तृतीया के दिन दोनों समय शुद्ध भोजन करता है। पुनः चतुर्थी के दिन एकाशन करता है तथा पंचमी को प्रोषधोपवास करता है,

सप्तमी एकाशन करता हुआ अष्टमी को उपवास करता है। इस प्रकार कृष्णपक्ष में द्वितीया, पंचमी, अष्टमी को तीन उपवास करता है।

शुक्लपक्ष में द्वितीया को एकाशन, तृतीया को उपवास, चतुर्थी को एकाशन, पंचमी को उपवास, षष्ठि को एकाशन, सप्तमी को एकाशन, अष्टमी को उपवास करता है। इस प्रकार शुक्ल पक्ष में तृतीया, पंचमी और अष्टमी को उपवास करता है।

श्रावण मास वर्ष का प्रथम मास माना जाता है। इसलिए व्रत का आरम्भ श्रावण मास से होता है। व्रत करने वाला श्रावण मास में कुल छह उपवास करता है। इसी प्रकार प्रत्येक मास में कृष्णपक्ष में द्वितीया, पंचमी, अष्टमी तथा शुक्ल पक्ष में तृतीया, पंचमी और अष्टमी को व्रतिक को उपवास करने चाहिए। १२ मास में उपवासों की संख्या ७२ होती है। रत्नावली व्रत में इस प्रकार ७२ उपवास किये जाते हैं। यह एक वर्ष का व्रत है। द्वितीय वर्ष भाद्रपद मास में इसका उद्यापन करना चाहिए। उद्यापन की शक्ति न हो तो व्रत को दो वर्ष करना चाहिए।

एकावली व्रत भी श्रावण से प्रारम्भ किया जाता है। श्रावण कृष्ण चतुर्थी, अष्टमी और चतुर्दशी को व्रतिक को उपवास करना चाहिए तथा शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा, पंचमी, अष्टमी और चतुर्दशी को उपवास करना चाहिए। इस प्रकार श्रावण मास में सात उपवास करना चाहिए। भाद्रपद आदि मासों में भी कृष्ण पक्ष की चतुर्थी, अष्टमी और चतुर्दशी को तथा शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा, पचमी, अष्टमी और चतुर्दशी को इस प्रकार सात उपवास प्रत्येक महिने में किये जाने चाहिए।

द्विकावली व्रत में दो दिन लगातार उपवास करना पड़ता है। इस व्रत के लिए भी दो उपवासों का ही ग्रहण किया गया है। श्रावण के कृष्ण पक्ष में चतुर्थी-पंचमी, अष्टमी नवमी और चतुर्दशी-अमावस्या तथा शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा-द्वितीया, पंचमी, षष्ठि, अष्टमी-नवमी और चतुर्दशी-पूर्णिमा इस प्रकार कुल सात उपवास करने चाहिए भाद्रपद आदि मासों में भी उक्त तिथियों में व्रत करने चाहिए। एक वर्ष में ८४ उपवास इस व्रत में किये जाते हैं। प्रत्येक उपवास दो दिनों का होता है।

इन दैवासिक व्रतों के लिए सूर्योदयकाल में कम से कम छह घड़ी तिथि का रहना आवश्यक है। जैसे किसी को रत्नावली व्रत करना है। इस व्रत का प्रथम उपवास श्रावण के कृष्ण पक्ष की द्वितीया को होता है। यदि शनिवार को द्वितीया

तिथि छह घड़ी से अल्प हो तो यह उपवास शुक्रवार को किया जाएगा । इसी प्रकार सर्वत्र जानना ।

आकाशपंचमी व्रत भाद्रपद शुक्ला पंचमी को किया जाता है । चतुर्थी को एकाशन कर पंचमी को व्रत रखना चाहिए । रात्रि को णमोकार मंत्र का जाप करते हुए, स्तोत्र पढ़ते हुए, स्वाध्याय करते हुए बर्तना चाहिए । रात्रि को जागरण आवश्यक है । खुले स्थान में रात को पद्मासन लगाकर ध्यान लगाना चाहिये । इस व्रत के दिन और रात आकाश की ओर देखकर बिताये जाते हैं ।

भाद्रपद मास की षष्ठि को व्रत किया जाता है । इस दिन प्रोषधोपवास करके रात्रि जागते हुए बिताना चाहिये । चंदन-षष्ठि को रात को विशेष क्रियायें करनी पड़ती हैं । खड़े होकर पच परमेष्ठी का ध्यान करते हुए रात बिताने का इस व्रत में विधान है । रात्रि को क्रियाओं को मुख्यता के कारण ये व्रत नैशिकव्रत कहलाते हैं ।

नैशिकव्रतों के लिए उदयकालीन तिथि ग्रहण नहीं की जाती है । अस्तकालीन तिथि लेने का विधान है । सूर्य के अस्त समय में तीन घटी तिथि हो तो नैशिक या प्रदोष व्रत करना चाहिए ।

उदाहरण—रविवार को पंचमी तिथि १० घटी १५ पल है । इस दिन उदयकालीन तिथि है, पर अस्त समय में पंचमी नहीं है, किन्तु षष्ठि आ जाती है, अतः आकाशपंचमी का व्रत रविवार को न करके शनिवार को करना चाहिए । यद्यपि ऐसी अवस्था में दशलक्षण व्रत रविवार से ही आरम्भ किया जायेगा किन्तु आकाशपंचमी का व्रत शनिवार को ही कर लिया जायेगा ।

'प्रदोषन्यायिनो ग्राह्या तिथिर्नक्तव्रते सदा' अर्थात् रात्रिव्रतों के लिए संध्याकालीन तिथि का ग्रहण करना आवश्यक है । आकाश-पंचमी व्रत रात्रि-व्रतों में परिगणित है, अतः इसके लिए संध्या काल में पंचमी तिथि का रहना आवश्यक है ।

तिथि-ह्रासे सति किं विधानमति चेदाह—

अर्थ—तिथि-ह्रास होने पर व्रत करने का क्या नियम है ? इस प्रश्न का उत्तर आचार्य देते हैं—

(दशलाक्षणिक और अष्टान्हिका व्रतों में बीच की तिथि घटने पर व्रत करने का नियम—)

तिथि–ह्रासे प्रकर्तव्यं सोदये दिवसे व्रतम् ।
तदादिदिनमारभ्य व्रतान्तं क्रियते व्रतम् ॥१२॥

अर्थ—तिथि के क्षय होने पर, तिथि जिस दिन उदयकाल में छह घड़ी हो उस दिन से व्रत आरम्भ करना चाहिये । तात्पर्य यह है कि दशलक्षण एवं अष्टान्हिक आदि व्रतों में तिथिक्षय होने पर एक दिन पहले से व्रत करें ।

तिथि-ह्रासे क्षये सति वा कुलाद्रि घटिका प्रमाण हीने सति सोदये दिवसे व्रतं कार्यम् । सोदयस्य लक्षणं किमिति चेत्तर्हि-सोदयं दिवसं ग्राह्यं कुलाद्रि घटी प्रममिति कर्त्तव्यम्' व्रतप्रारम्भस्यादिदिनमारभ्य व्रतान्तं व्रतं क्रियते यथाष्टान्हिक दिवसेषु मध्ये काचित्तिथिः क्षयंगता अतो व्रतस्यादिदिनं सप्तमीदिनं ग्राह्यम् । एवं दाशलक्षणिक दश दिनेषु मुख्य पंचमी चतुर्दशी पर्यन्तेषु तिथिक्षयवशाच्चतुर्थी ग्राह्या । तथैव सर्वत्रापि ग्राह्यम् ।

परञ्चैतावान् विशेषः—अयं नियमः दैवासिक नियतावधिक नैशिकेषु भवति ग्राह्यः । न तु मासिकादिषु मासिकादिनी मेघमालाषोडशकारणादीनि तत्रापि यथा षोडशकारण व्रतं प्रतिपद्दिनमारभ्य षोडशभिरूपवासैः पंचदश पारणाभिश्चैकत्रिकृतैरेकत्रिंशद्दिवसैः प्रतिपत्पर्यन्तं समाप्तिमुपगच्छति ।

यदि प्रतिपदमारभ्य तृतीय प्रतिपत्पर्यन्तं तिथिक्षयवशाद्दिनसंख्याहानिः स्यात् तदा यस्मिन्दिनेप्रतिपदामारभ्य प्रतिपत्पर्यन्तं कार्यम् । तस्य प्रतिपत् त्रयमेव ग्राह्यं कथितम् नतु मासिकजातस्य दिनं त्वपरे मासे ग्राह्यं भवति तदा व्रतकर्तुः व्रतहानिर्भवति ।

अर्थ—तिथि के क्षय होने पर अथवा उदयकाल में तिथि के छह घटी न होने पर सोदय में एक दिन पहले व्रत करना चाहिये ।

सोदय का लक्षण क्या है ? आचार्य कहते हैं–जिस दिन कम से कम छह घटी प्रमाण तिथि हो, वही दिन सोदय कहलाता है, अतः क्षय होने पर या उदयकाल में छह घटी प्रमाण तिथि के न होने पर व्रत प्रारम्भ होने के एक दिन पहले से ही व्रत करना चाहिये और व्रत की समाप्ति पर्यन्त व्रत करते रहना चाहिये ।

जैसे—अष्टान्हिका व्रत अष्टमी से प्रारम्भ होकर पूर्णिमा को समाप्त होता है। इन आठ दिनों के मध्य में यदि दशमी तिथि का अभाव है, व्रत सात ही दिन करना न पड़े, इसलिये व्रत सप्तमी से प्रारम्भ करना चाहिये। इसी प्रकार दशलाक्षणिक व्रत के दिनों में भी यदि तिथि का अभाव हो तो पंचमी के बदले चतुर्थी से ही व्रत आरम्भ करना चाहिये। क्योंकि पर्युषणपर्व का आरम्भ भाद्रपद शुक्ला पंचमी से लेकर भाद्रपद शुक्ला चतुर्दशी तक माना जाता है। यह दशलक्षण व्रत दश दिनों तक किया जाता है, यदि इसमें किसी तिथि के क्षय होने से दिनों की संख्या कम हो तो यह व्रत चतुर्थी से ही कर लिया जायेगा।

हां, जिन्हें पंचमी, अष्टमी, चतुर्दशी का व्रत करना है, उन्हें उन-उन तिथियों के आने पर ही व्रत करना चाहिये।

इस नियम (तिथि का अभाव होने पर व्रत एक दिन पहले करना चाहिये) में इतना विशेष है कि यह सर्वत्र लागु नहीं पड़ता। नियत अवधिवाले नैशिक और दैवासिक व्रत में ही लागू पड़ता है, मासिक व्रतों में मेघमाला, षोडशकारण आदि में लागू नहीं पड़ता है।

जैसे—षोडशकारण व्रत प्रतिपदा से आरम्भ होकर सोलह उपवास और पंद्रह पारणायें—इसप्रकार इकतीस दिन तक करने के उपरान्त प्रतिपदा को समाप्त होता है।

इस व्रत में तीन प्रतिपदायें पड़ती हैं, पहली भाद्रपद कृष्णपक्ष की, द्वितीय-भाद्रपद शुक्लपक्ष की और तीसरी अश्विन कृष्णपक्ष की। यदि पहली प्रतिपदा/भाद्रपद कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से लेकर तीसरी प्रतिपदा/अश्विन कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा तक किसी तिथि की हानि होने से दिनसंख्या कम हो, तो भी व्रत प्रतिपदा से आरंभ कर तीसरी प्रतिपदा तक अर्थात् भाद्रपद कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से आरंभ कर अश्विन मास कृष्णपक्ष की प्रतिपदा तक करना चाहिये।

यहां तीनों प्रतिपदाओं का ग्रहण करने का विधान किया गया है। मासिक व्रतों में अन्य महिनों के दिन ग्रहण नहीं किये जाते हैं। भाद्रपद से आरंभ होने वाला

व्रत श्रावण से आरंभ नहीं किया जा सकता है। ऐसा करने पर व्रतहानि है, और व्रत करनेवाले को फल नहीं मिलेगा।

विवेचन—पर्व व्रतों के अतिरिक्त नियत अवधिवाले व्रत भी होते हैं। पर्व व्रतों के लिए आचार्यों ने तिथि का प्रमाण छह घटी निर्धारित किया है, जिस दिन छह घटी प्रमाण व्रततिथि होगी, उसी दिन व्रत किया जायेगा। नियत अवधिवाले व्रतों के लिए यह निश्चय करना होगा कि निश्चित अवधि के भीतर यदि कोई तिथि क्षय होती है तो व्रत कब करना चाहिये, क्योंकि तिथिक्षय हो जाने से नियत अवधि में एक दिन घट जायेगा, व्रत पूरे दिनों में किया नहीं जा सकेगा, ऐसी अवस्था में व्रत करने के लिए क्या व्यवस्था करनी होगी?

आचार्य ने इसके लिए नियम बताया है कि नियत अवधिवाले दशलाक्षणिक व्रत और अष्टान्हिका व्रतों के लिये बीच की किसी भी तिथि का क्षय होने पर एक दिन पहले से व्रत करना चाहिये, जिससे व्रत के दिनों की संख्या कम न हो सके।

ज्योतिषशास्त्र में व्रतों के लिये तिथियों का प्रमाण निश्चित किया गया है। यद्यपि व्रतों के लिये तिथियों का प्रतिपादन करना आचारशास्त्र का विषय है, किन्तु उन तिथियों का समय निर्धारित करना ज्योतिषशास्त्र का विषय है।

प्राचीनकाल में प्रधानरूप से ज्योतिषशास्त्र का उपयोग तिथि और समय निर्धारण के लिये ही किया जाता था। इस शास्त्र का उत्तरोत्तर विकास भी कर्तव्य कर्मों के निर्धारण के लिये ही हुआ है।

उदयप्रभसूरी, वसुनंदी आचार्य और रत्नशेखर सूरी ने शुभाशुभ समय का निर्धारण करते समय बताया है कि व्रतों के लिए प्रतिपादित तिथियों को यथार्थ रूप से व्रत के समयों में ही ग्रहण करना चाहिये अन्यथा असमय में किये गये व्रत का फल विपरीत होता है।

जो श्रावक नैमित्तिक व्रतों का पालन करता है, वह अपने कर्मों की निर्जरा असमय में ही कर लेता है। समस्त आरंभ और परिग्रह छोड़ने में असमर्थ गृहस्थ

को अपनी समाधि सिद्ध करने के लिये नित्य-नैमित्तिक व्रतों का पालन अवश्य करना चाहिए ।

अष्टान्हिका और दशलक्षणी व्रत के लिये नियम बताया गया है कि एक तिथि घट जाने पर एक दिन पहले से व्रत करना चाहिये, यह नियम षोडशकारण व्रत में लागू नहीं होता हैं । यह व्रत बीच की तिथि घटने पर भी प्रतिपदा से ही आरंभ कर लिया जायेगा । मासिक होने के कारण भाद्रपद मास की कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से आरंभ कर आश्विन मास की कृष्णपक्ष की प्रतिपदा तक यह किया हो जायेगा ।

बीच में एक तिथि का क्षय होने पर यह श्रावण मास को पूर्णिमा से आरंभ करने से, यह तीन महिने में पूरा माना जायेगा जब कि आगम में इसे अश्विन-भाद्रपद मास में करने का विधान है । इसलिये एक दिन पहले से प्रारंभ करने पर इसमें मासच्युति नाम का दोष आ जायेगा, जिससे व्रत करने वाले को पुण्य के स्थान पर पाप का फल भोगना पड़ेगा ।

प्रचलित व्रतों में लगातार कई दिनों तक चलने वाले तीन ही व्रत हैं-दशलक्षण, अष्टान्हिका और सोलहकारण । इनमें पहले दो व्रतों के लिये तिथि घटने पर एक दिन पहले से व्रत करने का विधान है, पर अंतिम तीसरे व्रत के लिए यह नियम नहीं है । अन्तिम व्रत में तीन प्रतिपदाओं का होना आवश्यक है । तीनों पक्ष की तीन प्रतिपदाओं के आ जाने पर ही व्रत पूर्ण माना जायेगा ।

जैनेतर ज्योतिष के आचार्यों ने भी नियत अवधि वाले व्रतों की तिथियों का निर्णय करते हुए बताया है कि एक तिथि की हानि हो जाने पर एक दिन पहले और एक तिथि की वृद्धि होने पर एक दिन बाद तक व्रत करने चाहिये । तिथि की हानि होने पर सूर्योदयकाल में थोड़ी भी तिथि हो तो नियत अवधि के भीतर ही व्रत की समाप्ति हो जाती है ।

जैन एवं जैनेतर तिथि-निर्णय में इतना अंतर है कि जैनमत सूर्योदय काल में छह घड़ी तिथि का प्रमाण मानता है, अतः सूर्योदय समय में इससे अल्प प्रमाण तिथि के होने पर तिथिक्षय या तिथिह्रास जैसी बात आ जाती है ।

जैनेतर मत में अल्प प्रमाण तिथि के होने पर उस दिन वह तिथि व्रतोपवास के लिये ग्राह्य मानी जाती है । जिससे नियत अवधिवाले व्रतों को एक दिन

पहले करने की नौबत नहीं आती है । हां, कभी कभी समग्र तिथि का अभाव होने पर एक दिन पहले व्रत करने की स्थिति उत्पन्न होती है, अन्यथा नहीं ।

प्रोषधोपवास के लिए तो आचार्य ने छह घड़ी प्रमाण तिथि बतलायी है । तथा दैवासिक एवं नैशिक व्रतों के लिए भी छह घड़ी प्रमाण उदय और अस्तकालीन तिथियां ग्रहण की गई हैं, परंतु एकाशन के लिए तिथि कैसे ग्रहण करनी चाहिये और एकाशन करने वाले श्रावक को कब एकाशन करना चाहिये, इसके लिये क्या नियम बताया है ?

एकाशन के लिए तिथि–विचार

ज्योतिषशास्त्र में एकाशन के लिए बताया गया है कि **'मध्यान्हव्यापिनी ग्राह्या एकभक्ते सदा तिथिः'**—अर्थात् दोपहर में रहने वाली तिथि एकाशन के लिए ग्रहण करना चाहिये ।

एकाशन दोपहर में किया जाता है । जो एकभुक्ति–एक बार भोजन करने का नियम लेते हैं, उन्हें दोपहर में रहने वाली तिथि का ग्रहण करना चाहिये । एकाशन करने के सम्बन्ध में कुछ विवाद है कुछ आचार्य एकाशन दिन में कभी भी कर लेने पर जोर देते हैं और कुछ दोपहर के उपरान्त करने का आदेश देते हैं ।

ज्योतिषशास्त्र में एकाशन का समय निश्चित करते हुये बताया है कि **'दिनार्धसमयेऽतीते भुज्यते नियमेन यत्'** अर्थात् दोपहर के उपरान्त ही भोजन करना चाहिये । यहां दोपहर के उपरान्त का अर्थ अपरान्हकाल का पूर्व–उत्तर भाग नहीं किन्तु अपरान्ह काल का पूर्व भाग लिया जायेगा ।

जो लोग दश बजे एकाशन करने की सम्मति देते हैं, वे भी ज्योतिषशास्त्र की अनभिज्ञता के कारण हो ऐसा करते हैं । आजकल के समय के अनुसार एकाशन एक बजे और दो बजे के बीच में कर लेना चाहिये । दो बजे के उपरान्त एकाशन करना शास्त्र विरुद्ध है ।

एकाशन के लिये तिथि का निर्णय इस प्रकार करना चाहिये कि दिनमान में पांच का भाग देकर तीन से गुणा करने पर जो गुणनफल आवे, उतने घट्यादि मान के तुल्य एकाशन की तिथि का प्रमाण होने पर एकाशन करना चाहिये ।

उदाहरण के लिये जैसे किसी को चतुर्दशी को एकाशन करना है, इस दिन रविवार को चतुर्दशी २३ घटी ४० पल है, और दिनमान ३२ घटी ३० पल है। क्या रविवार को एकाशन किया जा सकता है ?

यहां दिनमान ३२/३० को पांच का भाग दिया–३२/३०÷५=६/३० इसको तीन से गुणा किया ६/३०×३=१६/३० गुणनफल हुआ। मध्यान्ह काल का प्रमाण गणित को दृष्टि से १६/३० घट्यादि हुआ। तिथि का प्रमाण २३/४० घट्यादि है। यहां मध्याह्न काल के प्रमाण से तिथि का प्रमाण अधिक है अर्थात् तिथि मध्यान्ह काल के पश्चात् भी रहती हैं। एकाशन के लिये इसे ग्रहण करना चाहिये अर्थात् चतुर्दशी का एकाशन रविवार को किया जा सकता है, क्योंकि रविवार को मध्यान्ह में चतुर्दशी तिथि रहती है।

दूसरा उदाहरण— मंगलवार को अष्टमी ७ घड़ी १० पल है। दिनमान ३२/३० पल है। एकाशन करने वाले को क्या अष्टमी को एकाशन करना चाहिये ?

पूर्वोक्त गणित के नियमानुसार ३२/३०÷५=६/३० इसे तीन से गुणा करने पर ६/०३×३=१६/३० घट्यादि गुणनफल आया, यह गणितागत मध्यान्हकाल का प्रमाण है। तिथि का प्रमाण ७ घड़ी १० पल है, यह मध्यान्हकाल के प्रमाण से अल्प है, अतः मध्यान्हकाल में मंगलवार को अष्टमी तिथि एकाशन के लिये ग्रहण नहीं की जायेगी। क्योंकि मध्यान्ह काल में इसका अभाव है। अतः अष्टमी का एकाशन सोमवार को करना होगा।

एकाशन करने के तिथि-प्रमाण में और प्रोषधोपवास के तिथि-प्रमाण में बड़ा-भारी अन्तर आता है। प्रोषधोपवास के लिये मंगलवार को अष्टमी तिथि ७/३० होने के कारण ग्राह्य है। क्योंकि छह घटी से अधिक प्रमाण है। अतः उपवास करने वाला मंगलवार को व्रत करे और एकाशन करने वाला सोमवार को व्रत करे–यह आगम की दृष्टि से अनुचित-सा लगता है, इस विवाद को जैनाचार्यों ने बड़े सुन्दर ढंग से सुलझाया है।

मूलसंघ के आचार्यों ने एकाशन और उपवास दोनों के लिये ही कुलाद्रि छह घटी प्रमाण तिथि ही ग्राह्य बतायी है। आचार्य सिंहनंदी का मत है कि एकाशन के

लिये विवादस्थ तिथि का विचार न करके छह घटी तिथि ग्रहण करनी चाहिये। सिहनंदी ने एकाशन की तिथि का विस्तार से विचार किया है। उन्होंने अनेक उदाहरणों और प्रतिउदाहरणों के द्वारा मध्यान्ह-व्यापिनी तिथि का खण्डन करते हुये छह घटी प्रमाण को ही सिद्ध किया है। अतएव एकाशन के लिये पर्व-तिथियों में छह घटी प्रमाण तिथियों को ही ग्रहण करना चाहिये।

"तिथिर्यथोपवासे स्यादेक भक्तेऽपि सा तथा" इस प्रकार का आदेश रत्नशेखर सूरी ने भी दिया है। जैनाचार्यों ने एकाशन की तिथि के संबध में बहुत ऊहापोह किया है। गणित से भी कई प्रकार से आनयन किया है।

प्राकृत ज्योतिष के तिथि-विचार प्रकरण में विचार-विनिमय करते हुये बताया है कि सूर्योदय काल में तिथि के अल्प होने पर मध्यान्ह में उत्तर तिथि रहेगी, परन्तु एकाशन के लिये रसघटी प्रमाण होने पर पूर्व तिथि ग्रहण की जा सकती है। यदि पूर्व तिथि रसघटी प्रमाण से अल्प है तो उत्तर तिथि लेनी चाहिये। यद्यपि उत्तार तिथि मध्यान्ह में व्याप्त है, पर कुलाद्रि घटिका प्रमाण में अल्प होने के कारण उत्तर तिथि ही व्रत-तिथि है।

अतएव संक्षेप में उपवास तिथि और एकाशन तिथि दोनों एक ही प्रमाण ग्रहण की गई है। यद्यपि जैनतर ज्योतिष में एकाशन तिथिको व्रततिथि से भिन्न माना जाता है तथा गणित द्वारा अनेक प्रकार से उसका मान निकाला गया है। परन्तु जैनाचार्यों ने इस विवाद को यहीं समाप्त कर दिया है, उन्होंने उपवासतिथि को ही व्रततिथि बतलाया है। एकाशन की पारणा मध्यान्ह में एक बजे करने का विधान किया गया है। यद्यपि काष्ठासंघ और मूलसंघ में पारणा के सम्बन्ध में थोड़ा-सा विवाद है, फिर भी दोपहर के बाद पारणा करने का उदयतः विधान है।

षोडशकारण और मेघमाला व्रत का विशेष-विचार—

नहि व्रतहानिः कथं पूर्वं प्रति षष्ठोपवास कार्यो भवति एका पारणा भवति न तु भावनोपवास हानि भवति प्रतिपद्दिनमारभ्य तदन्तं क्रियते व्रतं एकव्रतं त्रिप्रतिपत्कदाचितम् मासिकेषु च वचनात्। तथा श्रुतसागर, सकलकीर्ति, कृतिदामोदराभ्रदेवादिकथा वचनाच्चेति न तु पौर्णिमा ग्राह्या भवति।

अत्र केषाञ्चिद् बलात्कारीणां षोडशदिवसाधिकत्वाच्चेति विशेषः । एतासामपि विशेषश्च प्रतिपदमारभ्य अश्विनप्रतिपत्पर्यंतं तिथिक्षयाभावेन कृते षष्ठ द्वयेन चैकत्रिंशद्दिनैः पाक्षिकेष्वेव समाप्तिः । सत्पदशोपवासेन पूर्णाभिषेकेन स्यादेव सोपवासो महाभिषेकं कुर्यात् । यदा तु तिथिहानिस्तदा षष्ठकारण मारभ्य प्रतिपद्देव पूर्णाभिषेकः नापरदिने तथोक्तं षोडशकारण वारिदमाला रत्नत्रयादीनां पूर्णाभिषवे प्रतिपत्तिथिरपि नापरा ग्राह्येति वचनात् अपरा द्वितीया न ग्राह्येति ।

अर्थ—षोडशकारण व्रत के दिनों में एक तिथि की हानि होने पर भी एक दिन पहले से व्रत नहीं किया जाता है । इससे व्रतहानि की आशंका भी उत्पन्न नहीं होती है । तिथि की हानि होने पर दो उपवास लगातार पड़ जाते हैं ।

बीचवाली पारणा नहीं होती है । एक दिन पहले व्रत न करने से षोडशकारण भावनाओं में से किसी एक भावना की तथा उपवास की हानि नहीं होती है । क्योंकि प्रतिपदा से लेकर प्रतिपदा पर्यंत ही व्रत करने का विधान है । इसमें तीन प्रतिपदाओं का होना आवश्यक है, क्योंकि इस व्रत को मासिक व्रत कहा गया है । अतः इसमें तिथि को अपेक्षा मास की अवधि का विचार करना अधिक आवश्यक है । श्रुतसागर, सकलकीर्ति, कृतिदामोदर और उग्रदेव आदि आचार्यों के वचनों के अनुसार तिथिहानि होने पर भी पूर्णमासी व्रत के लिये कभी भी ग्रहण नहीं करनी चाहिये ।

यहां पर कोई बलात्कारगण के आचार्य कहते हैं कि सोलहकारण व्रत के दिनों में तिथिहानि होने पर अथवा तिथिवृद्धि होने पर आदि दिवस भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा व्रत के लिये ग्रहण नहीं करना चाहिये । क्योंकि सोलह दिन से अधिक या कम उपवास के दिन हो जाते हैं । तात्पर्य यह है कि बलात्कारगण के कुछ आचार्य सोलहकारण व्रत के दिनों में तिथिक्षय या तिथि-वृद्धि होने पर पूर्णिमा या द्वितीया से व्रतारंभ करने की सलाह देते हैं । परन्तु इतनी विशेषता है कि तिथिहानि या तिथिवृद्धि न होने पर प्रतिपदा से व्रत आरंभ होता है । और आश्विन कृष्णा प्रतिपदा तक इकतीस दिन पर्यंत यह व्रत किया जाता है । इस व्रत की समाप्ति तीन पक्ष में ही करनी चाहिये । जब तिथि की हानि नहीं होती हो, तो सोलह उपवास और अभिषेक पूर्ण

करने के पश्चात् सत्रहवें उपवास अर्थात् तृतीया के दिन महाभिषेक करें। परन्तु जब तिथिहानि हो तो प्रतिपदा के दिन ही पूर्ण अभिषेक करना चाहिए, अन्य दिन नहीं। कुछ आचार्यों का मत है कि षोडशकारण, मेघमाला, रत्नत्रय आदि व्रतों के पूर्ण अभिषेक के लिए प्रतिपदा तिथि ही ग्रहण की गयी है, अन्य तिथि नहीं। इन व्रतों का पूर्ण अभिषेक प्रतिपदा को ही होना चाहिए, द्वितीया को नहीं। तात्पर्य यह है कि षोडशकारण व्रत में तिथिक्षय या तिथिवृद्धि होने पर प्रतिपदा तिथि ही महाभिषेक के लिए ग्राह्य है। इस व्रत का आरंभ भी प्रतिपदा से करना चाहिए और समाप्ति भी प्रतिपदा को; उपवास करने के पश्चात् द्वितीया को पारणा करने पर।

विवेचन—सोलहकारण व्रत के दिनों के निर्णय के लिए दो मत हैं—श्रुत-सागर, सकलकीर्ति आदि आचार्यों का प्रथम मत तथा बलात्कारगण के आचार्यों का दूसरा मत।

प्रथम मत के प्रतिपादक आचार्यों ने तिथिहानि या तिथिवृद्धि होने पर प्रतिपदा से लेकर प्रतिपदा तक ही व्रत करने का विधान किया है। दिन संख्या प्रतिपदा से आरंभ की गयी है, यदि आश्विन कृष्णा प्रतिपदा तक कोई तिथि बढ़ जाय तो एक दिन या दो दिन अधिक व्रत किया जा सकेगा; तिथियों के घट जाने पर एक या दो दिन कम भी व्रत किया जाता है। यह बात नहीं है कि एक तिथि के घट जाने पर प्रतिपदा के बजाय पूर्णिमा से कर लिया जाय।

व्रतारंभ के लिये नियम बतलाया है कि प्रथम उपवास के दिन प्रतिपदा तिथि का होना आवश्यक है, तथा व्रत की समाप्ति भी प्रतिपदा के दिन ही होती है।

षोडशकारण व्रत की मासिक व्रतों में गणना की गयी है। अतः इसमें एक या दो दिन पहले आरंभ करने की बात नहीं उठती है। जो लोग यह आशंका करते हैं कि तिथि के घट जाने पर उपवास और भावना में हानि आयेगी? उनकी यह शंका निर्मूल है, क्योंकि यह व्रत मासिक बताया गया है। अतः प्रतिपदा से आरम्भ कर प्रतिपदा में ही इसकी समाप्ति हो जाती है। तिथि के क्षय होने पर दो दिन तक लगातार उपवास पड़ सकता है। तथा दो दिन के स्थान पर एक दिन में भावना की जायेगी। बलात्कारगण के आचार्य तिथि-

वृद्धि और तिथिहानि दोनों को महत्व देते हैं; उनका कहना है कि सोलहकारणव्रत नियतअवधिसंज्ञक होने के कारण इसकी दिन संख्या इकतीस ही होनी चाहिये। यदि कभी तिथिहानि हो तो एक दिन पहले और तिथिवृद्धि हो तो एक दिन पश्चात् अर्थात् पूर्णमासी को व्रतारंभ करना चाहिए। इन आचार्यों की दृष्टि में प्रतिपदा का महत्व नहीं है। इनका कथन है कि यदि प्रतिपदा को महत्व देते हैं तो उपवास संख्या हीनाधिक हो जाती है, तिथिहानि होने पर सोलह के बदले पंद्रह उपवास करने पड़ेंगे। तथा तिथिवृद्धि होने पर सोलह के बदले सत्रह उपवास करने पड़ेंगे। अतः उपवाससंस्था को स्थिर रखने के लिए एक दिन आगे या पहले व्रत करना आवश्यक है। इन आचार्यों ने व्रत की समाप्ति प्रतिपदा को ही मानी है तथा इसी दिन सोलहवां अभिषेक पूर्ण करने पर जोर दिया है। कुछ आचार्य प्रतिपदा के उपवास के अनन्तर द्वितीया को पारणा तथा तृतीया को पुनः उपवास कर महाभिषेक करने का विधान बताते हैं। बलात्कारगण के आचार्य इस विषय पर सभी एकमत हैं कि व्रत की समाप्ति प्रतिपदा को होनी चाहिए। व्रतारंभ करने के दिन के सम्बन्ध में विवाद है। कुछ पूर्णिमा से व्रतारंभ करने को कहते हैं। कुछ प्रतिपदा से और कुछ द्वितीया से।

उपर्युक्त दोनों ही मतों का समीकरण एवं समन्वय करने पर प्रतीत होता है कि बलात्कारगण, सेनगण, पुन्नारगण और काणूरगण के आचार्यों ने प्रधान रूप से सोलहकारण व्रत में तिथिह्रास और तिथिवृद्धि को महत्व नहीं दिया है। अतएव इस व्रत को सर्वदा भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा से आरम्भ तथा आश्विन कृष्णा प्रतिपदा को समाप्त करना चाहिए। इसके प्रारम्भ और समाप्ति दोनों में ही प्रतिपदा का रहना आवश्यक माना है। प्रथम अभिषेक भी प्रतिपदा को प्रथम उपवासपूर्वक किया जाता है, पारणा के दिन अभिषेक नहीं किया जाता, अन्तिम सोलहवें उपवास के दिन सोलहवां अभिषेक किया जाता है। सत्रहवाँ अभिषेक कर द्वितीया को पारणा करने का विधान भी है।

मेघमाला व्रत करने की तिथियाँ और विधि—

मेघमाला व्रत के पूर्ण अभिषेक के लिए भी प्रतिपदा तिथि ही ग्रहण की गयी

है। यह व्रत भी ३१ दिन तक किया जाता है। इसका प्रारंभ भी भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा से होता है और व्रत की समाप्ति भी आश्विन कृष्णा प्रतिपदा को बतायी गयी है। मेघ-माला व्रत में सात उपवास और चौबीस एकाशन किये जाते हैं। प्रथम उपवास भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा को, द्वितीय भाद्रपद कृष्णा अष्टमी को, तृतीय भाद्रपद कृष्णा चतुर्दशी को, चतुर्थ भाद्रपद शुक्ला प्रतिपदा को, पञ्चम भाद्रपद शुक्ला अष्टमी को, षष्ठम भाद्रपद शुक्ला चतुर्दशी को और सप्तम आश्विन कृष्णा प्रतिपदा को करने का विधान है। शेष दिनों में चौबीस एकाशन करने चाहिए। पांच वर्ष तक पालन करने के उपरान्त इस व्रत का उद्यापन किया जाता है। जितने उपवास बताये गये हैं, उतने ही अभिषेक किये जाते हैं। तथा उपवास के दिन, रात्रि जागरणपूर्वक बितायी जाती हैं और अभिषेक भी उपवास की तिथि को ही किया जाता है। इस व्रत में ब्रह्मचर्य व्रत का पालन तथा संयम धारण किया जाता है। संयम और ब्रम्हचर्य धारण श्रावण शुक्ला चतुर्दशी से आरंभ होता है तथा आश्विन कृष्णा द्वितीया तक पालन किया जाता है।

इस व्रत की सफलता के लिए संयम को आवश्यक माना है। मेघपंक्ति आकाश में आच्छन्न हो तो पञ्चस्तोत्र का पठण करना चाहिए। इस व्रत का नाम मेघ-माला इसलिए पड़ा है क्योंकि इसमें सात उपवास उन्हीं दिनों मे करने का विधान है, जिन दिनों में ज्योतिष की दृष्टि से वर्षायोग आरंभ होता है। अर्थात् वृष्टि होने या मेघों के आच्छादित होने से उक्त व्रत के सातों ही दिन मेघमाला या वर्षायोग संज्ञक हैं। आचार्यों ने इस मेघमाला व्रत का विशेष फल बताया है।

जैनाचार्यों ने मेघमाला व्रत का आरंभ तिथिवृद्धि के होने पर भी भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा से माना है। तथा इसकी समाप्ति भी आश्विन कृष्णा प्रतिपदा को मानी है। इसमें तीन प्रतिपदाओं का विशेष महत्व है, तथा इन तीनों का प्रमाण भी सोदयदिवस-सूर्योदयकाल मे छः घटी प्रमाण तिथि का होना को ही बताया है। सोलहकारण व्रत के समान तिथिक्षय या तिथिवृद्धि का प्रभाव इस पर नहीं पड़ता है। तिथिवृद्धि के होने पर एक उपवास कभी-कभी अधिक करना पड़ता है। क्योंकि तीनों प्रतिपदाओं का रहना इस व्रत में आवश्यक बतलाया गया है। मेघमाला व्रत के

उपवास के दिन मध्यान्ह में पूजापाठ करने के उपरान्त दो घटी पर्यन्त कायोत्सर्ग करना तथा पञ्च परमेष्ठी के गुणों का चिंतन करना अनिवार्य है । मध्यान्ह काल का प्रमाण गणितविधि से निकालना चाहिए । दिनमान में पाँच का भाग देकर तीन से गुणा कर देने पर मध्यान्ह का प्रमाण आता है । जैसे भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा के दिन दिनमान का प्रमाण ३१ घटी ५१ पल है । इस दिन मध्यान्ह का प्रमाण निकालना है । अतः गणितक्रिया की, ३१/१५÷५ =६१७ इसको तीन से गुणा किया तो — ३१७×३=१८/२१ गुणाकार (गुणनफल) अर्थात १८ घटी २१ पल मध्यान्ह का प्रमाण है । घण्टा मिनट में यही प्रमाण ७ घंटा २० मिनट २४ सेकंड हुआ । अर्थात सूर्योदय से ७ घंटा २० मिनिट २४ सेकंड के पश्चात मध्यान्ह है । यदि इस दिन सूर्य ५/३० बजे उदित होता है तो १२ बजकर ५० मिनिट १४ सेकंड से मध्यान्ह का आरंभ माना जायेगा । मेघमाला व्रत में उपवासों के दिन ठीक मध्यान्ह काल मे सामायिक और कायोत्सर्ग करना चाहिए । मेघमाला व्रत के समान रत्नत्रय व्रत में भी अभिषेक प्रतिपदा को ही किया जाता है अर्थात इन दोनों व्रतों की समाप्ति प्रतिपदा को होती है ।

रत्नत्रय व्रत की तिथियों का निर्णय

रत्नत्रयेऽप्येवमवधारणं कार्यं, यतः तस्य तिथिव्रतत्वान्नाधिका अतः यथा व्रतं कार्यं तथा नान्यथा भवति ।

अर्थ—रत्नत्रय व्रत को संपन्न करने के लिए यह अवधारण करना चाहिए कि इस व्रत की तिथिसंख्या अधिक नहीं है । अतः इसप्रकार व्रत करना चाहिए, जिससे व्रत मे किसी प्रकार का दोष न आवे ।

विवेचन—रत्नत्रय व्रत एक वर्ष में तीन बार किया जाता है । भाद्रपद, माघ और चैत्र में यह व्रत उक्त महिनों के शुक्ल पक्ष में ही संपन्न होता है । प्रथम शुक्ल पक्ष की द्वादशी को एकाशन करना चाहिए । त्रयोदशी, चतुर्दशी और पौर्णिमा का तेला करना चाहिए । पश्चात् प्रतिपदा को एकाशन करना चाहिए । इस प्रकार पाँच दिन तक संयम धारण कर ब्रम्हचर्य व्रत का पालन करना चाहिए । तीन वर्ष के उपरान्त इसका उद्यापन करते हैं—यह व्रत करने की उत्कृष्ट विधि है । यदि शक्ति न हो

तो त्रयोदशी और पूर्णिमा को भी एकाशन किया जा सकता है। परन्तु चतुर्दशी को उपवास करना आवश्यक है। प्रधानरूप से इस व्रत में तीन उपवास लगातार करने का नियम है। त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा इन तीनों तिथियों में व्रत, पूजन और स्वाध्याय करते हुए उपवास करना चाहिए। अतः इस व्रत के तीन दिन बताये गये हैं। एकाशन और संयम के दिन मिलाने से वह पांच दिन का हो जाता है।

यदि रत्नत्रय व्रत की प्रधान तीन तिथियों त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा में से किसी एक तिथि की हानि हो तो क्या करना चाहिए ? क्या तीन दिन के बदले में दो ही दिन उपवास करना चाहिए या एक दिन पहले से उपवास कर व्रत को नियत दिनों में पूर्ण करना चाहिए। सेनगण और बलात्कारगण के आचार्यों ने एकमत होकर रत्नत्रय व्रत की तिथियों का निश्चिय करते हुए कहा है कि तिथि की हानि होने पर एक दिन पहले से व्रत करना चाहिए। किंतु इस व्रत के संबंध में इतना विशेष है कि चतुर्दशी का उपवास रसघटिका प्रमाण चतुर्दशी के होने पर ही किया जाता है। यदि ऐसा भी अवसर आवे जब उदयकाल में चतुर्दशी तिथि न मिले तो जिस दिन घट्यात्मक मान के हिसाब से अधिक पड़ती हो, उसी दिन चतुर्दशी का उपवास करना चाहिए। इस व्रत की समाप्ति के लिए प्रतिपदा का रहना भी आवश्यक माना गया है। जिस दिन प्रतिपदा उदयकाल में छः घटी प्रमाण हो अथवा उदयकाल मे छः घटी प्रमाण प्रतिपदा के न मिलने पर घट्यात्मक रूप से ज्यादा हो उसी दिन महाभिषेकपूर्वक व्रत की समाप्ति की जाती है।

आचार्य सिंहनन्दी ने रत्नत्रय व्रत की तिथियों का निर्णय करते समय स्पष्ट कहा है कि व्रत में किसी प्रकार का दोष न आवे, इस प्रकार से व्रत करना चाहिए। तिथिवृद्धि होने पर एक दिन अधिक व्रत करना ही पडता है, परंतु चतुर्दशी के दिन प्रोषधोपवास और प्रतिपदा के दिन अभिषेक करना परमावश्यक बताया गया है। इन दोनों तिथियों को टलने नहीं देना चाहिए। चतुर्दशी को मध्यान्ह मे विशेष रूपसे 'ॐ ह्रीं सम्यगदर्शन ज्ञानचारित्रेभ्यो नमः' इस मंत्र का जाप करना चाहिए। मध्यान्ह काल का प्रमाण गणित से लेना चाहिए - यथा चतुर्दशी के दिन दिनमान का प्रमाण

२८/२० है, इस दिन सूर्योदय ६/५० मिनट पर होता है। मध्यान्ह जानने के लिए २८/२०÷५=५/१६ इसको तीन से गुणा किया तो ५/१६×३=१५/५७ इसका घण्टात्मक मान ६/२२/४८ हुआ, सूर्योदय काल मे जोड़ा तो १ (एक) बजकर १२ मिनट ४८ सेकण्ड पर मध्यान्ह काल आया।

मुनिसुव्रत पुराण के आधार पर व्रततिथि का प्रमाण

तदुक्तं मुनिसुव्रत पुराणे—

षष्ठांशोऽप्युदये ग्राह्या तिथिव्रत परिग्र हैः।
पूर्वमन्यतिथेर्योगो व्रतहानिः करोति च ॥

अस्यार्थ : व्रतपरिग्रहैः सूर्योदये तिथेः षष्ठांशमपि ग्राह्यं, अत्रापि शब्देन षष्ठांशादधिको ग्राह्य इति निर्विवादः, न न्यून्यांश इति द्योत्यते कुतः यस्मात् व्रत परिग्रहाणां षष्ठांशात् पूर्वमन्यतिथि संयोगव्रतहानिकरः व्रतनाशकरो भवतीत्यर्थः।

अर्थ—व्रत करनेवालों को सूर्योदय काल में षष्ठांश तिथि के रहने पर व्रत करना चाहिए। षष्ठांश से अधिक तिथि होने पर तो व्रत किया जा सकता है, पर न्यूनांश होने पर व्रत नहीं किया जा सकेगा, क्योंकि अन्य तिथि का संयोग होने से व्रतहानि होती है, व्रत का फल नहीं मिलता है। इस श्लोक में अपि शब्द आया है, जिसका अर्थ षष्ठांश से अधिक तिथि ग्रहण करने का है अर्थात षष्ठांश से अधिक या षष्ठांश से तुल्यतिथि उदयकाल में हो तभी व्रत किया जा सकता है। षष्ठांश से अल्प तिथि के होने पर व्रत नहीं किया जाता।

विवेचन—आचार्य ग्रंथान्तरों के प्रमाण देकर व्रततिथि का निर्णय करते हैं। मुनिसुव्रत पुराण में बताया गया है कि उदयकाल में षष्ठांश तिथि या षष्ठांश से अधिक तिथि के होने पर ही व्रत करना चाहिए। तिथि का मध्यम मान ६० घटी प्रमाण माना जाता है। स्पष्ट मान प्रतिदिन भिन्न-भिन्न होता है। स्पष्ट मान का पता लगाना ज्योतिषी का ही काम है, साधारण व्यक्ति का नहीं। किन्तु मध्यम मान ६० घटी प्रमाण निश्चित है। इसका षष्ठांश दस घटी हुआ, अतः यह अर्थ लेना अधिक संगत होगा कि जो तिथि उदयकाल में दस घटी कम से कम अवश्य हो वही व्रत के लिये उपयुक्त मानी गयी है। दस घटी से कम प्रमाण तिथि के रहने पर,

उससे पहले दिन व्रत करने का आदेश दिया है। मुनिसुव्रत पुराणकार का यह मत निर्णयसिंधु में प्रतिपादित दीपिकाकार के मत से मिलता-जुलता है। दीपिकाकार भी तिथि का प्रमाण षष्ठांश ही मानते है। परन्तु उन्होंने तिथि का स्पष्ट प्रमाण न ग्रहण कर मध्यम ही मान लिया है। आचार्य ने स्पष्ट माना है।

उदाहरण—बुधवार को पंचमी तिथि ८ घटी १२ पल है। तथा इसके पहले मंगलवार को चतुर्थी तिथि १० घटी १५ पल है, अब गणित से निकालना यह है कि पंचमी तिथि का स्पष्ट मान क्या है? मंगलवार की चतुर्थी १० घटी १५ पल है, उपरान्त पंचमी मंगलवार को आंरभ हो जाती है। अतः ६० घटी अहोरात्र प्रमाण में से चतुर्थी तिथि के घट्यादि घटाया–(६०/०)–(१०/१५)=४६/४५ मंगलवार को पंचमी तिथि का प्रमाण आया। बुधवार को पंचमी तिथि ८ घटी १२ पल है, दोनों दिन की पंचमी तिथि के प्रमाण को दिया तो कुल पंचमी तिथि=(४६/४५)+(८ १२)=५७/५७ पंचमी तिथि हुई, इसका षष्ठांश लिया तो ५७/५७÷६=९/३९/३० हुआ। बुधवार को पंचमी तिथि ८ घटी १२ पल है, जो पंचमी तिथि के षष्ठांश ९ घटी ३९ पल और ३० विपल से कम है। अतः मुनिसुव्रत पुराणकारके मत से पंचमी का व्रत बुधवार को नहीं किया जा सकता, यह व्रत मंगलवार को ही कर लिया जाएगा। दीपिकाकार ने गणितक्रिया से बचने के लिए मध्यम तिथि का मान स्वीकार कर उसका षष्ठांश दस घटी स्वीकार कर लिया है। अर्थात् सूर्योदय काल में दस घटी से कम तिथि अग्राह्य मानी जाएगी। मुनिसुव्रत पुराणकारके मत से भी तिथि का प्रमाण उदयकाल में दस घटी ही लेना चाहिए।

व्रततिथि निर्णय के लिए निर्णयसिन्धु के मत का निरुपण तथा खण्डन—

पुनः प्रश्नं करोति यस्यां तिथौ सूर्योदयो भवति सा तिथिः संपूर्णा ज्ञातव्या तदुक्तं—

यां तिथिं समनुप्राप्य उदयं याति भास्करः।
सा तिथिः सकला ज्ञेया दानाध्ययन कर्मसु॥

इति तस्योत्तरमेतद्वचनं निर्णयसिन्धौ वैष्णवे ज्ञातव्यं न तु जिनमते पंचसारग्रन्थे।

अर्थ—यहाँ कोई प्रश्न करता है कि जिस तिथि में सूर्योदय होता है, वही तिथि संपूर्ण दिन के लिए मानी जाती है। अतः उसी का नाम सकला है। कहा भी है कि जिस तिथि में सूर्योदय होता है, वह तिथि दान, अध्ययन, षोडश संस्कार आदि के लिए पूर्ण मानी गयी है। आप व्रत के लिए छः घटी प्रमाण या समस्त तिथि का षष्ठांश प्रमाण उदयकाल में होने पर तिथि को ग्राह्य मानते हैं, ऐसा क्यों ? इसका उत्तर निर्णयसिन्धु नामक ग्रंथ में दिया गया है। क्योंकि वैष्णव मत में दान अध्ययन, पूजा, अनुष्ठान व्रत आदि के लिए उदयातिथि को ही प्रमाण माना गया है, जैनमत में नहीं। जैनाचार्यों ने पंचसार नामक ग्रन्थ की संधि और १२२ वें श्लोक में इस मत का खण्डन किया है। तात्पर्य यह है कि वैष्णव मत में व्रत और अनुष्ठान के लिए उदयकाल में रहनेवाली तिथि को ही ग्राह्य माना है, जैनमत में नहीं।

विवेचन—ज्योतिश्चन्द्रार्क में बताया है कि "या तिथि समनुप्राप्य आसाद्य उदयं भास्करः याति स्वक्षितिजेऽर्द्धोदितो भवति सा तिथिः संपूर्णदिनेऽपि बोध्या। कुत्र दानाध्ययनकर्मसु दानादि पुण्यकर्मसु च। यथा पूर्णिमा प्राप्त-मुहूर्तार्द्ध मात्र स्यापि स्नानदानादौ समस्त दिनेऽपि मंतव्या। तथैव प्रतिपदा अध्ययनकर्मसु मन्तव्या" अर्थात् जिस समय सूर्य आकाश में आधा उदित हो रहा हो उस समय जो तिथि रहती है, सम्पूर्ण दिन के लिए वही तिथि मान ली जाती है। दान, अध्ययन, व्रत आदि पुण्य-कार्य उसी तिथि में किये जाते हैं। जैसे पूर्णिमा प्रातःकाल में एक घटी रहने पर भी स्नान, दान, व्रत आदि कार्यों के लिए प्रशस्त मानी जाती है। उसीप्रकार प्रति-पदा अध्ययन कार्य के लिए सूर्योदय समय में एक घटी या इससे भी अल्प प्रमाण रहने पर प्रशस्त मान ली गयी है। अतएव व्रत के लिए उदयप्रमाण ही तिथि लेनी चाहिए। जैनाचार्यों ने इस उदयकालीन तिथि की मान्यता का जोरदार खण्डन किया है। उन्होंने अपने मत के प्रतिपादन में अनेक युक्तियां दी हैं।

उदयकालीन तिथि को व्रत के लिए संपूर्ण मानने में तीन दोष आते हैं— विद्धा तिथि होने के कारण, उदय के अनन्तर अल्प काल में ही तिथि के क्षय हो जाने से व्रततिथि के प्रमाण का अभाव और निषिद्ध तिथि में व्रत करने का

दोष । यदि उदयकाल में एक घटी प्रमाण व्रततिथि मान ली जाय तो उदयतिथि होने के कारण वैष्णवों में ग्राह्य मानी जाएगी। परन्तु जैनमत के अनुसार इसमें पूर्वोक्त तीनों दोष वर्तमान हैं। यह तिथि सूर्योदय के २४ मिनट बाद ही नष्ट हो जाएगी। तथा आगे आने वाली तिथि सूर्योदय के २४ मिनट बाद आरंभ हो जायगी। अतः व्रत संबंधी धार्मिक अनुष्ठान व्रतवाली तिथि में नहीं होंगे, बल्कि वे अव्रतिक तिथि में संपन्न किये जायेंगे; जिससे असमय में करने के कारण उन धार्मिक अनुष्ठानों का यथोचित फल नहीं मिलेगा। उदाहरण के लिए यों मान लिया जाय की किसी को अष्टमी का व्रत करना है। मंगलवार को अष्टमी एक घटी पंद्रह पल है अर्थात् सूर्योदयकाल में आधा घण्टा प्रमाण है। यदि सूर्योदय ५ बजकर १५ मिनट पर होता है तो ५ बजकर ४५ मिनट से नवमी तिथि आरंभ हो जाती है। व्रती सूर्योदय काल में सामायिक, स्तोत्रपाठ करता है। इन क्रियाओं को उसे कम से कम ४५ मिनट तक करना चाहिये। सूर्योदय काल में ३० मिनट अष्टमी है, पश्चात् नवमी तिथि है। क्रियाएँ ४५ मिनट तक करनी हैं, अतः इनमें पहिला दोष विद्धा-तिथि में प्रातःकालीन क्रियाओं को करने का आता है। विद्धा-तिथि में की गयी क्रियाएँ, जो कि व्रततिथि के भीतर परिगणित हैं, व्यर्थ होती हैं, पुण्य के स्थान पर अज्ञानता के कारण पापबन्धकारक हो जाती हैं। अतः प्रथम दोष विद्धा-तिथि में प्रारंभिक व्रत संबंधी अनुष्ठान के करने का है। दूसरा दोष यह है कि व्रतारंभ करने के समय व्रततिथि का प्रभाव क्षीण रहता है, जिससे उपर्युक्त उदाहरण में कल्पित अष्टमी, अष्टमी-व्रत की क्रियाओं में आती ही नहीं। आचार्यों का कथन है कि उदयकाल में कम से कम दशमांश तिथि के होने पर ही तिथि का प्रभाव माना जा सकता है। छः घटी प्रमाण उदयकाल में तिथि का मान इसलिए प्रामाणिक माना गया है, क्योंकि मध्यम मान तिथि का ६० घटी होता है। इसका दशमांश छः घटी होता है, तिथि का प्रभाव छः घटी है, अतः तिथि का प्रमाण छः घटी प्रमाण होने पर पूर्ण माना जाता है। कारण स्पष्ट है कि सूर्योदय के पश्चात् रस घटी प्रमाणवाली तिथि कम से कम २$\frac{१}{२}$—तक रहती है। जिससे प्रारंभिक धार्मिक-कृत्य करने में विद्धा-तिथि या अव्रतिक-तिथि का दोष नहीं आता है। मात्र उदयकालीन तिथि स्वीकार

कर लेने से व्रत के समस्त कार्य पूजपाठ, स्वाध्याय आदि अव्रत की तिथि में संपन्न किये जायेंगे, जिससे व्रत करने का फल नहीं मिलेगा।

ज्योतिषशास्त्रों में गणित द्वारा तिथि के प्रमाण का साधन किया जाता है। बताया गया है कि दिनमान में पांच का भाग देने से जो प्रमाण आवे उतने प्रमाण के पश्चात तिथि में अपना प्रभाव या बल आता है। दिनमान के पञ्चमांश से अल्प तिथि बिल्कुल निर्बल होती है। यह तिथि उस बच्चे के समान है, जिसके हाथ पैर में शक्ति नहीं, जो गिरता-पड़ता कार्य करता है। जिसकी वाणी भी अपना व्यवहार सिद्ध करने में असमर्थ है और जो सब प्रकार से अशक्त है। अतः निर्बल तिथि में व्रत आदि कार्य संपन्न नहीं किये जा सकते हैं। जो व्यक्ति उदयकाल में रहनेवाली तिथि को ही व्रत के लिए ग्रहण करने का विधान बतलाते हैं। उनके यहां प्रभावशाली या बलवान् तिथि व्रत के लिए हो ही नहीं सकती है। अधिक से अधिक दिनमान ३३ घटी का हो सकता है और कम से कम २७ घटी का। ३३ घटी का पंचमांश ६ घटी ३६ पल हुआ और २७ घटी का पंचमांश ५ घटी २४ पल हुआ। अतएव बड़े दिनों में जब की दिनमान अधिक होता है ६ घटी ३६ पल के होने पर तिथि में अपना बल आता है। पंचमांश से अल्प होने पर तिथि अबोध-शिशु मानी जाती है। अतएव उदयकालीन तिथि व्रत के लिए ग्राह्य नहीं है। सर्वदा व्रत सबल तिथि में किया जाता है, निर्बल में नहीं। अतः जैनाचार्यों ने व्रततिथि का प्रमाण छः घटी माना है, वह ज्योतिष शास्त्र से सम्मत भी है। गणित के द्वारा भी इसकी सिद्धि होती है।

तीसरा दोष जो उदयकालीन तिथि मानने में आता है, वह व्रत के लिए निश्चित् तिथियों में बाधा उत्पन्न होना है। जब व्रतसमय में गणितागत सबल तिथि ही नहीं रही तो फिर व्रतों के लिए तिथियों का निश्चय क्या रहेगा ? तथा क्रम का भंग हो जाने पर अक्रमिक दोष भी आवेगा। अतएव व्रत के लिए उदयकालीन तिथि ग्रहण नहीं करनी चाहिए, किन्तु छः घटी प्रमाण तिथि को ही स्वीकार करना चाहिए।

तिथिवृद्धि होने पर व्रतों की तिथि का विचार—

काऽधिका तिथिमध्ये च क्षपणो नैव कारयेत् ।
गणितोद्दिष्टमार्याणां संयमादिप्रसाधम् ॥१३॥

अर्थ—आचार्यों ने व्रत के दिनों में तिथिवृद्धि हो जाने पर किस तिथि को व्रत करने का व्रती के लिए निषेध किया है ? तात्पर्य यह है कि शिष्य गुरू से प्रश्न करता है कि हे प्रभो ! आपने तिथिक्षय होने पर व्रत करने का विधान बतला दिया, अब कृपा कर यह बतलाइये कि संयमादि का साधन व्रततिथिवृद्धि होने पर किस दिन नहीं करना चाहिए ?

विवेचन—ज्योतिषशास्त्र में तिथिक्षय होने पर तथा तिथिवृद्धि होने पर व्रत की तिथियों का निर्णय बतलाया गया है। सिंहनन्दी आचार्य ने पूर्व में तिथि-क्षय होने पर व्रत कब करना चाहिए ? तथा नियत अवधिवाले व्रतों को मध्य में तिथि-क्षय होने पर कब करना चाहिये ? इसका विस्तार सहित निरूपण किया है। यहां से आचार्य तिथिवृद्धि के प्रकरण का वर्णन करते हैं कि तिथि के बढ़ जाने पर क्या एक दिन व्रत ही नहीं किया जायगा ? आचार्य स्वयं इस प्रश्न का उत्तर आगे वाले श्लोक में देंगे। यहां यह विचार करना है कि तिथि बढ़ती क्यों है ? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि तिथि का मध्यम मान ६० घटी बताया गया है, किन्तु स्पष्ट मान सदा घटता-बढ़ता है। इस वृद्धि और ह्रास के कारण ही कभी कभी एक तिथि की हानि और कभी कभी एक तिथि की वृद्धि हो जाती है। गणित द्वारा तिथि का साधन निम्नप्रकार किया गया है —

स्पष्ट चन्द्रमा में से स्पष्ट सूर्य को घटाकर जो शेष आवे उसके अंशादि बना लेना चाहिए। अंशादि में १२ का भाग देने पर लब्ध तुल्यगत तिथि होती है और जो शेष बचे, वह वर्तमान तिथि का भुक्तभाग होता है। इस भुक्तभाग को १२ अंशों में से घटाने पर वर्तमान तिथि का शेष भोग्यभाग आता है। इस भोग्यभाग को ६० से गुणा कर गुणनफल में चन्द्रसूर्य के गत्यन्तर का भाग देने से वर्तमान तिथि के भोग्य-घटीपल निकलते हैं। उदाहरण—स्पष्ट चन्द्रमा राश्यादि २/१४/४३/३४ में से स्पष्ट सूर्य राश्यादि ८/२३३/३०/४ घटाया तो शेष राश्यादि ५/२१/१३/३० इसके अंशादि बनाये तो १७१/१३/३० हुए। इनमें १२ का भाग दिया तो लब्धितुल्य

१४ चतुर्दशीगत तिथि हुई। शेष अंशादि ३/१३/३० वर्तमान तिथि पूर्णिमा का भुक्तभाग हुआ। इसे १२ अशों में से घटाया तो पूर्णिमा का भोग्यभाग अंशादि ८/४६/३० हुआ। इसकी विकलाएं बनाईं तो ३१५९० हुईं। चन्द्रगति कलादि ७८७/५ में से सूर्यगतिकलादि ६१/२३ को घटाया तो गत्यन्तर कलादि ७२५-४२ हुआ। इसकी विकलाएं बनाईं तो ४३५४४ हुई। अब त्रैराशिक की ६० घटी चन्द्रमा की आपेक्षिक गति ४३५४२ विकला है, तो कितनी घटी में उसको आपेक्षिक गति ३१५९० विकला होगी ? अतः $\frac{३१५९० + ६०}{४३५४२}$ = घटयादिमान ४३/३२ हुआ।

अर्थात् पूर्णिमा का प्रमाण ४३ घटी ३२ पल आया। इसप्रकार प्रतिदिन का स्पष्ट तिथिमान कभी ६० घटी से अधिक हो जाता है, जिससे तिथि की वृद्धि हो जाती है, क्योंकि अहोरात्र मान ६० घटी ही माना गया है। अतः एक ही तिथि दो दिन भी रह जाती है। उदाहरण के लिए यों समझना चाहिये कि रविवार को प्रतिपदा का स्पष्ट मान ६७/१० आया। रविवार का मान सूर्योदय से लेकर सूर्योदय के पहले तक ६० होता है, अतः प्रथम दिन ६० घटी तिथि चौबीस घण्टे तक रही, शेष ७ घटी और १० पल प्रमाण प्रतिपदा तिथि अगले दिन अर्थात् सोमवार को रहेगी शिष्य का प्रश्न तिथिवृद्धि होने पर नियत अवधि के व्रतों की तिथिसंख्या निश्चित करने के लिए है।

तिथिवृद्धि होने पर व्रततिथि की व्यवस्था :—

पुनरष्टाह्निकामध्ये तिथि वृद्धिर्यदाभवेत्।
तदा नव दिनानि स्युर्व्रते चाष्टाह्निकार्यके ।।१४।।
सिद्धचक्रस्य मध्ये तु या तिथिर्वृद्धिमाप्नुयात्।
तद्विदधिस्साधिका कुर्यादिकि स्याधिकं फलम् ।।१५।।

अर्थ—यदि अष्टाह्निका व्रत की तिथियों की बीच में कोई तिथि बढ़ जाय तो व्रती को नौ दिन तक अष्टाह्निका व्रत करना चाहिए। सिद्धचक्र अष्टाह्निका के तिथियों के मध्य में तिथि बढ़ जाने पर सिद्ध-चक्रविधान करनेवाले को नौ दिन तक

विधान करना चाहिए, क्योंकि अधिक दिन तक करने से अधिक फल की प्राप्ति होती है। अतः तिथिवृद्धि होने पर व्रत एक दिन कम करने की आपत्ति नहीं आती है।

विवेचन—नियत अवधिवाले दैवसिक और नैशिक व्रतों के मध्य में तिथि-क्षय और तिथि वृद्धि होने पर उन व्रतों के दिनों की संख्या को निर्धारित किया है। तिथिक्षय होने पर एक दिन पहले से व्रत करना चाहिए, किन्तु तिथिवृद्धि होने पर एक दिन बाद तक नहीं किया जाता है। तिथिक्षय में नियत अवधि में से एक दिन घट जाता है, जिससे दिनसंख्या नियत अवधि से कम हो जाने के कारण अष्टान्हिका और दशलक्षण जैसे व्रतों में एक दिन कम हो जाने का दोष आयेगा। अष्टान्हिका व्रत के लिए आठ दिन निश्चित हैं। तथा यह व्रत शुक्लपक्ष में किया जाता है। तिथिक्षय होने पर शुक्ल पक्ष में ही एक दिन पहले से व्रत करने की गुंजाइश है; क्योंकि अष्टमी के स्थान में सप्तमी से भी व्रत करने पर शुक्लपक्ष ही रहता है। इसीप्रकार दशलक्षण व्रत में भी चतुर्थी से व्रत करने पर शुक्ल पक्ष ही माना जायगा। यहां एक-दो-दिन पहले भी व्रत कर लेने पर पक्ष या मास बदलने की संभावना नहीं है। जिस नियत अवधिवाले व्रत में पक्ष या मास के बदलने की सम्भावना प्रकट की गयी है, उसमें व्रत निश्चित तिथि से ही आरम्भ किया जाता है। जैसे षोडशकारण व्रत के सम्बन्ध में पहले कहा गया है कि तिथि के घट जाने पर भी यह व्रत प्रतिपदा से ही आरम्भ किया जायगा। तिथिक्षय का प्रभाव इस व्रत पर नहीं पड़ता है और न तिथिवृद्धि का प्रभाव ही कुछ होता है।

तिथिवृद्धि हो जाने पर व्रत एक दिन अधिक किया जाता है, इसकी दिनसंख्या तिथि-वृद्धि के कारण घटती नहीं; बल्कि बढ़ी हुई तिथि में भी व्रत किया जाता है। अष्टान्हिका व्रत की तिथियों के बीच में यदि एक तिथि बढ़ जाय तो उस बढ़ी हुई तिथि को भी व्रत करना होगा। तिथिवृद्धि के समय व्रत-तिथि का निर्णय यही है कि जिस दिन व्रतारम्भ करने की तिथि है उसका भी व्रत करना पड़ेगा। तिथि वृद्धि का परिणाम यह होगा कि कभी-कभी बेला दो उपवास कर जाना पड़ेगा। तथा कभी ऐसा भी अवसर आ सकता है, जब दो दिन लगातार पारणा ही की जाय। उदाहरण के लिए यों समझना चाहिए की मंगलवार को अष्टमी पूरे दिन है, बुधवार को भी प्रातः काल अष्टमी तिथि का प्रमाण ५ घटी १३ पल है।

यहां दो अष्टमियां हुई हैं। प्रथम अष्टमी भी पूर्ण है और द्वितीय अष्टमी को भी सूर्योदय काल में छः घटी प्रमाण होने से व्रत के लिए ग्राह्य माना है; अतः यहां व्रत करने वाले को दोनों अष्टमियों को उपवास करने पड़ेंगे। नवमी का दिन अष्टान्हिका व्रत में पारणा का है, यदि दो नवमी पड़ जाय तो दो दिन लगातार पारणा करनी होगी। कुछ लोग बढ़ी हुई तिथि को उपवास ही करने का विधान बतलाते हैं। सिद्धचक्र विधान के करने में भी वृद्धिगत तिथि को ग्रहण किया गया है अर्थात् आठ दिनों के स्थान में नौ दिन तक विधान करना चाहिए अधिक दिन तक विधान करने से अधिक फल की प्राप्ति होगी।

जो लोग यह आशंका करते हैं कि नियत अवधि के अनुष्ठान और व्रतों में अवधि का उल्लंघन क्यों किया जाता है ? यदि अवधि का उल्लंघन ही अभीष्ट था तो तिथि क्षय के समय अवधि स्थिर रखने के लिए एक दिन पहले से व्रत करने को क्यों कहा ?

इस प्रश्न का उत्तर आचार्य ने बहुत विचार विनिमय करने के उपरान्त दिया है। आचार्य सिंहनंदी ने बताया कि यों समस्त व्रतों का विधान तिथि के अनुसार ही किया गया है। जिस व्रत के लिए जो विधेय तिथि है, वह व्रत उसी तिथि-में सम्पन्न किया जाता है, परन्तु विशेष परिस्थिति के आ जाने पर मध्य में तिथि क्षय की अवस्था में नियत अवधिवाले व्रतों की अवधि को ज्यों की त्यों स्थिर रखने के लिए एक दिन पहले करने का नियम है। तिथिवृद्धि में विधेयतिथि की ही प्रधानता रहती है।

अतः एक दिन के बढ़ जाने पर भी नियत अवधि ज्यों की त्यों स्थिर रहती है। नियत अवधि के व्रतों में अवधि का तात्पर्य वस्तुतः व्रत समाप्ति के दिन से है। व्रतसमाप्ति निश्चित तिथि को ही होगी।

उदाहरण—अष्टान्हिका व्रत की समाप्ति पूर्णिमा को होनी चाहिये। यदि पूर्णिमा का कदाचित क्षय हो और आगे वाली तिथि प्रतिपदा हो तो प्रतिपदा को इस व्रत की समाप्ति न होकर पूर्णिमा के अभाव में

चतुर्दशी को ही इस व्रत की समाप्ति की जाएगी। क्योंकि चतुर्दशी की छाया में पूर्णिमा अवश्य आ जायगी।

तिथि का सर्वथा अभाव कभी नहीं होता है, केवल उदय-काल में तिथि का क्षय दिखलाया जाता है। जिस तिथि का पंचांग में क्षय लिखा रहता है। वह तिथि भी पहले वाली तिथि की छाया में कुछ घटी प्रमाण रहती है। अतएव अष्टान्हिका व्रत की समाप्ति प्रतिपदा को कभी नहीं की जायगी (पूर्णिमा के अभाव में चतुर्दशी ग्राह्य बताई गई है। क्योंकि चतुर्दशी आगे आने वाली पूर्णिमा से विद्ध है।)

इसी प्रकार एक तिथि बढ़ जाने पर भी अष्टान्हिका व्रत की समाप्ति पूर्णिमा को ही होगी। यदि कदाचित दो पूर्णिमाएं हो जाय और दोनों ही पूर्णिमा उदय काल में छः घटी से अधिक हो तो किस पूर्णिमा को व्रत की समाप्ति की जायगी। प्रथम पूर्णिमा को यदि व्रत की समाप्ति की जाती है, तो आगे वाली पूर्णिमा भी सोदय तिथि होने के कारण समाप्ति के लिए क्यों नहीं ग्रहण की जाती ?

आचार्य सिंहनन्दीने इसी का समाधान 'अधिकस्याधिक फलम्' कहकर किया है। अर्थात् दूसरी पूर्णिमा को व्रत समाप्त करना चाहिए क्योंकि पूर्णिमा भी रस-घटी प्रमाण उदय काल में होने से ग्राह्य है। एक दिन अधिक व्रत कर लेने से अधिक फल मिलेगा। अतएव दो पूर्णिमाओं के होने पर आगे वाली दूसरी पूर्णिमा को व्रत समाप्त करना चाहिए।

जब दो पूर्णिमाओं के होने पर पहली पूर्णिमा ६० घटी प्रमाण है और दूसरी प्रमाण तीन घटी प्रमाण है, तब क्या दूसरी पूर्णिमा को व्रत समाप्त किया जायगा ? आचार्य ने इस आशंका का निर्मूलन करते हुए बताया है। की दूसरी पूर्णिमा छः घटी से कम होने के कारण व्रत की पूर्णिमा ही नहीं है, अतः उसे तो पारणा के लिये प्रतिपदा तिथि में परिगणित किया गया है। व्रत की समाप्ति ऐसी अवस्था में में प्रथम पूर्णिमा को ही कर ली जायगी तथा आगे वाली पूर्णिमा जो की प्रतिपदा से संयुक्त है पारणातिथि में आयगी।

जब कभी दो चतुर्दशियां अष्टान्हिका व्रत में पड़ती हैं तो तीन उपवास के पश्चात् प्रतिपदा को पारणा करने का नियम है। साधारणतया चतुर्दशी और पूर्णिमा इन दोनों तिथियों का एक उपवास करने के उपरान्त प्रतिपदा को पारणा की जाती है। अष्टान्हिका व्रत का महाभिषेक पूर्णिमा को ही हो जाता है।

या तिथि र्व्रतपूर्णे तु वृद्धिर्भवति सा सदा।
तस्यां नाडी प्रमाणायां पारणा क्रियते व्रतस्य ॥१६॥

अर्थ—व्रत की समाप्ति होने पर जो तिथि वृद्धि को प्राप्त होती है, यदि वह एक नाडी-घटी प्रमाण हो तो उसमें पारणा की जाती है। अभिप्राय यह है कि जब व्रत की समाप्तवाली तिथि की वृद्धि हो तो प्रथम तिथि में व्रत की समाप्ति कर द्वितीय तिथि छः घटी प्रमाण से अल्प हो तो उसी में पारणा करना चाहिए। यदि छः घटी प्रमाण से द्वितीय तिथि अधिक हो या छः घटी प्रमाण हो तो उसी में ही व्रत की समाप्ति करनी चाहिए।

विवेचन—जब व्रत समाप्ति वाली तिथि की वृद्धि हो तो प्रथम या द्वितीय तिथि को व्रत को पूर्ण करना चाहिए? इस पर आचार्यों के दो मत हैं–प्रथम मत प्रथम तिथि को व्रत की समाप्ति कर अगली तिथि के एक घटी प्रमाण रहने पर पारणा करने का विधान करता है। दूसरा मत अगली तिथि के छः घटी या इससे अधिक होने पर उस दिन व्रत समाप्ति पर जोर देता है तथा अगले दिन पारणा करने का विधान करता है। जैनाचार्यों ने तिथिवृद्धि होने पर व्रत करने की अवधि का बड़ा सुन्दर विश्लेषण किया है।

गणितज्योतिष व्रत के लिये दो तिथियों को ग्राह्य नहीं मानता, इसकी दृष्टि में तिथि बढ़ती ही नहीं है और न कभी तिथि का अभाव होता है। तिथिवृद्धि और तिथिक्षय साधारण व्यक्तियों को मालूम होते हैं। हां, यह बात अवश्य है कि दो तिथियां परस्पर में विद्धप्रायः रहती हैं। पर तिथिवृद्धि उत्तरतिथि से संयुक्त तथा उत्तरतिथि पुनरागत पूर्वतिथि से संयुक्त होती है। व्रत में पूर्वतिथि उत्तरतिथि से संयुक्त ग्राह्य की गयी है, उत्तरतिथि पुनरागत पूर्वतिथि से संयुक्त ग्राह्य नहीं की

जाती है। उदाहरण के लिए यों समझना चाहिये की सोमवार को अष्टमी ७ घटी ३० पल है, पश्चात् नवमी प्रारम्भ हो जाती है। वहां अष्टमी पर या पूर्व तिथि है, जो नवमी से संयुक्त है; क्योंकि ८ घटी ३० पल के उपरान्त नवमी तिथि मंगलवार को लिखि मिलेगी। अतः उदय काल में ही तिथि का प्रमाण लिखा जाता है। अथवा यों कहना चाहिये कि पारणा तिथि का ही तिथ्यादि मान पंचांग में अंकित रहता है, उत्तर तिथि का नहीं। जो तिथि पञ्चांग में अंकित है वह पर या पूर्व तिथि है और जो अंकित नहीं है; वह उत्तर तिथि कहलाती है। पुनरागत पूर्व तिथि वह है, जो उत्तर तिथि के समाप्त होने पर अगले दिन आने वाली हो। जैसे पूर्व उदाहरण में अष्टमी के उपरान्त नवमी तिथि बतायी गयी है, यदि इसी दिन नवमी भी समाप्त हो जाय और पुनरागत दशमी से संयुक्त हो तो यह उत्तरतिथि पुनरागत पूर्व तिथि से संयुक्त कही जाती है। व्रत के लिए यह तिथि त्याज है।

तिथितत्त्व नामक ग्रन्थ में बताया गया है कि दो प्रकार की तिथियाँ होती हैं—परयुक्त और पूर्वयुक्त। व्रत विधि के लिए द्वितीया, एकादशी, अष्टमी, त्रयोदशी और अमावस्या परयुक्त होने पर ग्राह्य नहीं हैं। अभिप्राय यह है कि इन तिथियों को व्रत के लिए पूर्ण होना चाहिए। जब तक ये तिथियां दिनभर नहीं रहेंगी, इनमें प्रतिपादित व्रत नहीं किये जा सकते हैं। उदाहरण के लिए यो समझना चाहिये कि अष्टमी तिथि यदि उदयकाल में ७ घटी ३० पल है तो परयुक्त होने के कारण इस दिन व्रत नहीं करना चाहिए। परन्तु जैनाचार्य तिथितत्व के इस मत को अप्रामाणिक ठहराते हैं। उनका कथन है कि छः घटी प्रमाण उदयकाल में तिथि के होने पर वह विधेयतिथि व्रत के लिए स्वीकार की गयी है।

पुनरप्यन्येषा सेनगणस्य सूरीणां वचनमाह—

मेरुव्रतं बिना शेषव्रते येनाधिका तिथिः।
घटयेकर सपद्धोना त्रिविधा तिथि संस्थितिः ॥१७॥

अर्थ—व्रत समाप्ति-तिथि की वृद्धि होने पर व्रत के लिए क्या व्यवस्था करनी चाहिए ? इसके लिए सेनगण के अन्य आचार्यों के मत को कहते हैं—मेरुव्रत के बिना समस्त व्रतों में वृद्धिगत तिथि जितनी अधिक होती है, उसमें से एक घटी,

छः घटी और चार घटी प्रमाण घटाने पर तीन प्रकार से व्रत तिथि की स्थिति आ जाती है।

विवेचन—पांच मेरू सम्बन्धी ८० चैत्यालयों के व्रत किये जाते हैं। पहले चार उपवास भद्रशाल वन के चारों मन्दिर सम्बन्धी करने चाहिये। पश्चात् एक वेला करने के उपरान्त नन्दन वन के चार उपवास करने चाहिये, पुनः एक वेला करने के उपरान्त सौमनस वन के चार उपवास किये जाते हैं, पश्चात् एक वेला के उपरान्त पाण्डुक वन के चार उपवास किये जाते हैं, उपरान्त एक वेला करनी चाहिये। इस प्रकार एक मेरु के सोलह प्रोषधोपवास चार तेला तथा बीस एकाशन होते हैं। तात्पर्य यह है कि मेरुव्रत के उपवास में प्रथम सुदर्शन मेरु सम्बन्धी सोलह चैत्यालयों के सोलह प्रोषधोपवास करने पड़ते हैं। प्रथम सुदर्शन मेरु के चार वन हैं—

भद्रशाल, नन्दन, सौमनस और पाण्डुक वन। प्रत्येक वन में चार चार जिनालय हैं। व्रत करने वाला प्रथम भद्रशाल वन के चारों चैत्यालयों के प्रतीक चार प्रोषधोपवास करता है। प्रथम वन के प्रोषधोपवासों में आठ दिन लगते हैं। अर्थात चार प्रोषधोपवास और चार पारणाए इस प्रकार आठ ही दिन लग जाते हैं अर्थात चार प्रोषधोपवास और चार पारणाए करनी पड़ती हैं।

सौमनस वन के प्रतीक चारों चैत्यालयों के चार उपवास और चार पारणाएं करनी पड़ती हैं। इसी प्रकार पाण्डुक वन के उपवासों में भी चार प्रोषधोपवास और पारणाएँ की जाती हैं। इस प्रकार प्रथम सुदर्शनमेरू के सोलह चैत्यालयों के प्रतीक सोलह उपवास, पारणाएँ और प्रत्येक वन के उपवासों के अन्त में एक तेला दो दिनका उपवास, इस तरह कुल चार तेलाए करनी पड़ती हैं। प्रथम मेरु के व्रतों में कुल ४४ दिन लगते हैं। १६ प्रोषधोपवास के १६ दिन, १६ पारणाओं के १६ दिन और ४ तेलाओं के ८ दिन तथा प्रत्येक तेला के उपरान्त एक पारणा की जाती है। अतः ४ तेलाओं सम्बन्धी ४ दिन इस प्रकार कुल १६+१६+८+४= ४४ दिन प्रथम मेरु के व्रतों में लगते हैं। ४४ दिन पर्यन्त शील व्रत का पालन किया

जाता है। प्रथम मेरु के व्रतों के पश्चात लगातार द्वितीय मेरु विजय के भी उपवास करने चाहिये।

विजय मेरू के सोलह चैत्यालय सम्बन्धी सोलह उपवास तथा प्रत्येक उपवास के अनन्तर पारणा की जाती है। प्रत्येक मेरु पर भद्रशाल, नन्दन, सौमनस और पाण्डुक ये चारों वन हैं। तथा प्रत्येक वन में प्रधान चार चैत्यालय हैं। प्रत्येक वन में चैत्यालयों के उपवासों के अनन्तर तेला की जाती है तथा प्रत्येक तेला के उपरान्त पारणा भी। इस प्रकार द्वितीय मेरु सम्बन्धी सोलह उपवास, चार तेलाएं तथा बीस पारणाएं की जाती हैं।

इनकी दिन संख्या भी १६+८+४+१६=४४ ही होती है। तृतीय अचल मेरू संबंधी भी १६ उपवास, तेलाएँ ४ तथा पारणाएँ २०. अतः इसकी दिन-संख्या भी ४४ ही होती है। इसी प्रकार पुष्करार्ध के दोनों मेरू मन्दिर और विद्युन्माली संबंधी उपवासों की संख्या तथा दिन संख्या पूर्ववत ही है। पंच मेरू संबंधी व्रत करने की दिन संख्या ४४×५=२२० होती है। इस व्रत में ८० प्रोषधोपवास, २० तेलाएं और १०० पारणाएं की जाती हैं। इन उपवास, तेला, और पारणाओं की दिनसंख्या जोड़ने पर भी पूर्ववत ही होती है। क्योंकि २० तेलाओं के ४० दिन होते हैं, अतः ८०+४०+१००=२२० दिन तक व्रत करना पड़ता है। व्रत के दिनों में पूजन, सामायिक तथा भावनाओं का चिन्तन विशेष रूप से किया जाता है। मेरू व्रत का प्रारम्भ श्रावण मास से माना जाता है। युग या वर्ष का प्रारम्भ प्राचीन भारत में इसी दिन से होता था। श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से प्रारम्भ कर लगातार २२० दिन तक यह व्रत किया जाता है। एक बार व्रत करने के उपरान्त उसका उद्यापन कर दिया जाता है।

आचार्य ने बताया है कि तिथिवृद्धि का प्रभाव मेरू व्रत पर कुछ भी नहीं पड़ता है, क्योंकि यह व्रत वर्ष में ७ महीने १० दिन तक करना होता है। इसमें तिथि वृद्धि और तिथि क्षय बराबर होते रहने के कारण दिन संख्या में बाधा नहीं आती है।

एक अन्य हेतु यह भी है कि मेरू व्रत के करने में किसी तिथि का ग्रहण नहीं किया गया है। इस व्रत का तिथि से कोई सबंध नहीं है, यह तो एक दिन उपवास, पश्चात् पारणा इस प्रकार चार उपवास और चार पारणाओं के अनन्तर एक तेला-दो दिन तक लगातार उपवास करना पड़ता है, पश्चात् पारणा की जाती है। इस प्रकार उपर्युक्त विधि के अनुसार उपवास और पारणाओं का संबंध किसी तिथि से नहीं है। बल्कि यह व्रत दिन से संबंध रखता है। इसलिए इस व्रत पर तिथिवृद्धि और तिथिक्षय का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता है। आचार्य ने इसी कारण मेरू व्रत को छोड़ शेष समस्त व्रतों के संबंध में विधान बतलाया है कि नियत अवधि वाले व्रतों की अंतिम तिथि के बढ़ने पर पारणा की तिथि इस प्रकार निकाली जाती है कि वृद्धा तिथि प्रमाण में से एक घटी, छः घटी और चार घटी प्रमाण घटा देने पर जो शेष आवे वही पारणा का समय आता है अर्थात् पारणा के लिए तीन प्रकार की स्थिति बतलाई है।

तात्पर्य यह है कि यदि वृद्धितिथि अगले दिन छः घटी प्रमाण हो, चार घटी प्रमाण हो अथवा एक घटी प्रमाण हो तो उस दिन व्रत नहीं किया जायेगा, किन्तु पारणा की जायेगी। यदि वृद्धितिथि अगले दिन छः घटी प्रमाण से अधिक है तो उस दिन भी व्रत ही करना पड़ेगा। सेनगण के आचार्यों ने एक मत से स्वीकार किया है कि अगले दिन वृद्धितिथि का प्रमाण छः घटी से ऊपर अर्थात् सात घटी होना चाहिए। बीच में तिथि वृद्धि होने पर उपवास या एकाशन करना चाहिए व्रत की समाप्ति वाली तिथि के लिए ही यह नियम स्थिर किया गया है।

मेरू व्रत का संबंध श्रावण के दिन से है, अतः इसकी समाप्ति या मध्य में तिथियों की उदयास्त संज्ञाएं या तिथियों की घटिकाएं गृहीत नहीं की गयी हैं। जिन व्रतों का संबंध चान्द्रतिथियों से है, उनके लिए तिथिवृद्धि और तिथिक्षय ग्रहण किया जाते हैं। आचार्य ने यहाँ पर अन्तिम तिथि की वृद्धि होने पर उसकी व्यवस्था बतलाई है।

मेरु व्रत की विधि—प्रथम मेरू संबंधी व्रतों के दिनों में "ॐ ह्रीं सुदर्शन

मेरू संबंधी षोडश जिनालयेभ्यो नमः" इस मन्त्र का जाप त्रिकाल करना चाहिये। द्वितीय मेरू सबंधी व्रतों के दिनों में "ॐ ह्रीं विजय मेरू संबंधी षोडश जिनालयेभ्यो नमः" तृतीय मेरू संबंधी व्रतों के दिनों में "ॐ ह्रीं अचल मेरू संबंधी षोडश जिनालयेभ्यो नमः" चतुर्थ मेरू संबंधी व्रतों के दिनों में "ॐ ह्रीं मंदिर मेरू संबंधी षोडश जिनालयेभ्यो नमः" और पंचम मेरू संबंधी व्रतों के दिनों में "ॐ ह्रीं विद्युन्माली मेरू संबंधी षोडशाजिनालयेभ्यो नमः" मन्त्र का जाप करना चाहिए।

पारणा के दिनों में एक अनाज का ही प्रयोग करना चाहिए। फलों में सेव, नारियल, आम, नारंगी, मौसमी का उपयोग कर सकते है। रात्रि जागरण करना भी आवश्यक है। व्रत के दिनों में भगवान की पूजा करनी चाहिए। पंच मेरू की पूजा के साथ त्रिकाल-चौबीसी, विद्यमान विंशति तीर्थंकर और पंचपरमेष्ठी की पूजा करनी चाहिए। शील व्रत का पालन भी आवश्यक है।

इस व्रत का फल—लौकिक और पारलौकिक अभ्युदय की प्राप्ति के साथ स्वर्गसुख और विदेह में जन्म होता है। तीन चार भव में जीव निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

व्रततिथि प्रमाण के सम्बन्ध में विभिन्न आचार्यों के मत—

"कर्नाटक प्रान्ते रविमितघटी तिथिः ग्राह्या। मूलसंघेरसघटी तिथिः ग्राह्या। जिनसेनवाक्यतः काष्ठासंघे त्रिमुहूर्तात्मिका तिथिः ग्राह्या। तिथिर्ग्रहीता वसुपलहीनं द्विघटीमितं मुहूर्तमित्युच्यते।"

अर्थ—कर्नाटक प्रान्त में बारह घटी प्रमाण व्रत की तिथि ग्रहण की गई है। मूलसंघ के आचार्यों ने छह घटी प्रमाण व्रत तिथि को कहा है। जिनसेनाचार्य के अनुसार काष्ठासंघ में तीन मुहूर्त प्रमाण तिथि का मान ग्रहण किया गया है। आठ पल हीन दो घटी अर्थात् एक घटी बावन पल का एक मुहूर्त होता है।

विवेचन—व्रत तिथि के प्रमाण का निश्चय करने के संबंध में जैनाचार्यों में थोड़ा मतभेद है। भिन्न-भिन्न देशों के अनुसार व्रत के लिए भिन्न-भिन्न प्रमाण

माना गया है । कर्नाटक प्रान्त में बारह घटी व्रत तिथि के होने पर ही व्रत के लिए तिथि ग्राह्य बताई है ।

श्री[illegible]ाचार्य ने अपनी ज्योतिर्ज्ञानविधि में व्रत तिथि का विचार करते हुए कहा है कि [illegible]थि अपने सम्पूर्ण प्रमाण के पंचमांश हो वही व्रत के लिए ग्राह्य होती है । श्रीधराचार्य के व्रतविचार से प्रतीत होता है कि बारह घटी प्रमाण तिथि का मान मध्यम तिथि के हिसाब से लिया गया है । दक्षिण भारत में जैनेतर विद्वानों में भी श्रीधराचार्य के मत का आदर है ।

जब मध्यम तिथि का मान साठ घटी मान लिया जाता है उस समय पञ्चमांश बारह घटी ही आता है । किन्तु स्पष्ट मान १२ घटी शायद ही कभी आवेगा । गणित की दृष्टि से स्पष्ट मान निम्न प्रकार लाना चाहिए ।

उदाहरण—गुरूवार को पञ्चमी १५ घटी २० पल है तथा बुधवार को चतुर्थी १८ घटी ३० पल है । यहां पञ्चमी का कुल मान निकाल कर यह निश्चय करना है कि गुरूवार को पञ्चमी श्रीधराचार्य के मत से ग्राह्य हो सकती है या नहीं ? तिथि का कुल मान तभी मालूम हो सकता है जब एक तिथि के अन्त से लेकर अहोरात्र पर्यन्त जितना मान हो उसे पंचांग में अंकित तिथिमान में जोड़ दिया जाय । यहां पर पञ्चमी का मान निकालना है । बुधवार को चतुर्थी की समाप्ति १८/३० के उपरान्त हो जाती है । अर्थात् पञ्चमी तिथि बुधवार को सूर्योदय के १८/३० घट्यात्मक मान के उपरान्त आरंभ हो गई है । अतः बुधवार को पञ्चमी का प्रमाण–(६०/०)–(१८/३०)=(अहोरात्र-वर्तमान तिथि)=४२/३० घट्यादि मान बुधवार को पञ्चमी का हुआ । गुरूवार को पंचमी १५ घटी २० पल है । अतः दोनों मानों को जोड़ देने पर पंचमी तिथि का कुल प्रमाण निकल आयेगा । (४१/३०)+(१५/२०)=(५६/५०) । इसका पंचमांश निकालें तो—(५६/५०)÷५=११/२२ अर्थात् ११ घटी २२ पल प्रमाण पंचमी यदि सूर्योदयकाल में होगी तभी व्रत के लिए ग्राह्य मानी जायेगी । परन्तु हमारे उदाहरण में १५ घटी २० पल प्रमाण पंचमी गुरूवार को उदयकाल में बतायी गई है, जो कि

गणित के अनुसार पंचमांश से ज्यादा है। अतः गुरूवार को पंचमी का व्रत किया जाएगा।

मुनिसुव्रत पुराण के कर्त्ता ने व्रत की तिथि का मान कुल तिथि का षष्ठांश स्वीकार किया है। दक्षिण भारत के कर्नाटक प्रान्त में पंचमांश प्रमाण तिथि, तमिल प्रान्त में षष्ठांश प्रमाण तिथि, तैलगु प्रान्त में त्रिमुहूर्तात्मिका तिथि व्रत के लिए ग्रहण की गई है। उत्तर भारत में सर्वत्र प्रायः रसघटी प्रमाण तिथि ही व्रत के लिए ग्राह्य मानी गई है।

मूलसंघ और सेनगण के आचार्य तिथि-प्रभाव और तिथि-शक्ति की अपेक्षा छह घटी प्रमाण तिथि ही व्रत के लिये ग्रहण करते हैं। काशी, कोशल, मगध एवं अवन्ति आदि समस्त उत्तर भारत के प्रदेशों में मूलसंघ का ही मत तिथि के लिए ग्राह्य माना जाता है।

काष्ठासंघ के प्रधान आचार्य जिनसेन हैं, इन्होंने व्रत की तिथि का प्रमाण तीन मुहूर्त अर्थात् ५ घटी ३६ पल बताया है। हस्तिनापुर, मथुरा और कोशल देश में प्राचीन काल में इस मत का प्रचार था। मूलसंघ और काष्ठासंघ के व्रततिथि प्रमाण में कोई विशेष अन्तर नहीं है; मात्र चौबीस पल का ही अन्तर है जो कि मध्यम और समन्वय करने पर स्पष्ट प्रतीत होता है कि व्रत करने के लिये तिथि का मान छह घटी से ज्यादा होना चाहिये। सेनगण के कतिपय आचार्यों ने इसी कारण व्रत की तिथि का मान तीन मुहूर्त से लेकर छह मुहूर्त तक बताया है।

तीन मुहूर्त प्रमाण तिथि लेकर व्रत करने से जघन्य फल; चार मुहूर्त प्रमाण तिथि में व्रत करने से मध्यम फल तथा छह मुहूर्त प्रमाण तिथि में व्रत करने से उत्तम फल मिलता है। तीन मुहूर्त से अल्प प्रमाण तिथि में व्रत करने से व्रत निष्फल होता है। निर्णयसिंधु में हेमाद्रि मत का वर्णन करते हुए बताया गया है कि विवाद होने पर तिथि का प्रमाण समस्त पूर्वान्हि-व्यापी लेना चाहिये। पूर्वान्ह का प्रमाण गणित से निकालते हुए बताया है कि दिनमान में ५ का भाग देकर जो लब्ध आवे, उसे २ से गुणा करने पर पूर्वान्ह का मान आता है।

उदाहरण बुधवार को दिनमान २८ घटी ४० पल हैं। तथा इसी दिन चतुर्दशी तिथि ६ घटी ७ पल है। ऐसे में क्या उक्त तिथि बुधवार को पूर्वान्हव्यापी है। क्या इसे व्रत के लिए ग्रहण करना चाहिए ?

दिनमान २८/४० में ५ का भाग देने पर भाग (२८/४० ÷ ५ = ५/४४) ५/४४ आता है, इसे २ से गुणा कर (५/४४ × २ = ११/२८) ११/२८ आता है। बुधवार को किसी तिथि के पूर्वान्ह का मान ११/२८ होना चाहिए तभी वह व्रत के ग्राह्य मानी जाएगी, किन्तु बुधवार को चतुर्दशी ६/७ है, अतः वह पूर्वान्ह-व्यापी न होने से व्रत के लिए ग्राह्य नहीं है।

हिमाद्रि मत कर्नाटक प्रान्तीय श्रीधराचार्य के मत से मिलता-जुलता है, केवल गणित प्रक्रिया में थोड़ा-सा अन्तर है। गणित से प्राप्त फल दोनों का लगभग एक-सा ही है। दीपिकाकार एवं मदनरत्नकार सत्यव्रत ने उदय तिथि का खण्डन करते हुए बताया है कि जब तक पूर्वान्ह-काल में तिथि न हो तब तक व्रतारम्भ और व्रत-समाप्ति नहीं करनी चाहिए। देवल ने भी उक्त मत का समर्थन किया है तथा जो केवल उदय-तिथि को ही प्रमाण मानते हैं, उनका खण्डन किया है। देवल तथा सत्यव्रत का मत बहुत कुछ मूलसंघ के आचार्यों से समानता रखता है। तिथि-शक्ति और तिथि के बलाबल की प्रधानता को हेतु मानकर पूर्वान्ह-काल-व्यापी तिथि को व्रत के लिए ग्राह्य माना है। इन्होंने पूर्वान्ह का प्रमाण भी एक विलक्षण ढंग से निकाला है। इन्होंने दिनमान का पञ्चमांश ही पूर्वान्ह माना है। यद्यपि अन्य गणित के आचार्यों ने पञ्चमांश पर पूर्वान्ह काल का प्रारम्भ और दो पञ्चमांश पर पूर्वान्ह की समाप्ति मानी है। दिनमान का मान्य पञ्चमांश कह देने से ही पूर्वान्ह का ग्रहण हो जाता है।

निष्कर्ष यह है कि अनेक मतमान्तरों के रहने पर भी जैनाचार्यों ने व्रत के लिए छह घटी से लेकर बारह घटी तक तिथि का प्रमाण बताया है।

दशलक्षण और सोलहकारण व्रत के दिनों की अवधि का निर्धारण—

कारणे लक्षणे धर्मे दिनानि दश षोडशात् ।
न्यूनाधिक-दिनानि स्युराद्यन्त विधि संयुते ॥१८॥

अधिका तिथिरादिष्टा व्रतेषु बुधसत्तमैः ।
आदिमध्यान्तभेदेषु यथाशक्ति विधीयते ।।१९।।

अर्थ—दशलक्षण और सोलहकारण व्रत के दिनों की संख्या क्रमशः दश और सोलह है । तिथिक्षय और तिथिवृद्धि में व्रत प्रारंभ करने की तिथि से लेकर व्रत समाप्त करने की तिथि तक दिनों की संख्या न्यूनाधिक भी होती है । मध्य में क्षय होने पर दिनों की संख्या कम होती है । और तिथिवृद्धि होने पर दिनों की एक संख्या बढ़ जाती है ।

व्रत के जानकार विद्वान लोगों ने तिथिवृद्धि होने पर एक दिन अधिक व्रत करने का आदेश दिया है । अतः आदि, मध्य और अन्त भेदों में शक्ति के अनुसार व्रत करना चाहिए । तात्पर्य यह है कि तिथि के बढने पर एक दिन की बजाय वह व्रत दो दिन करना चाहिए । व्रत के आदि, मध्य और अन्त में तिथि के क्षय होने पर शक्ति के अनुसार व्रत करना चाहिए ।

विवेचन—यद्यपि सोलहकारण व्रत के दिनों की संख्या तथा उसकी अवधि के सम्बन्ध में पहले ही विस्तार से कहा जा चुका है । सोलहकारण व्रत में एक तिथि के बढ़ जाने पर दिनों की संख्या बढ़ जाती है, किन्तु व्रत के दिनों मध्य में एक दिन के घट जाने पर दिनों की संख्या में एक दिन कम कर दिया जाता है । यह व्रत भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा से लेकर आरम्भ होता है और आश्विन कृष्णा प्रतिपदा को समाप्त किया जाता है अतः बीच की तिथि के नष्ट होने पर भी तिथि अवधि ज्यों की त्यों रहती है । व्रत आरम्भ और व्रत समाप्त करने की तिथियां इसमें निश्चित रहती हैं, अतः तिथिक्षय में एक दिन आगे व्रत नहीं किया जाता है और ३१ दिन की जगह व्रत ३० दिन ही किया जाता है ।

दशलक्षण व्रत में एक दिन के घट जाने पर एक दिन आगे से व्रत करने की परिपाटी भी है तथा यह शास्त्र सम्मत भी है । दशलक्षण व्रत के बीच में जब किसी तिथि का क्षय रहता है, तब उसे पूरा करने के लिए एक दिन आगे तक व्रत किया जाता है । दस दिनों के स्थान पर यह व्रत कभी नौ दिन तक नहीं किया जाता है ।

जब तिथि बढ जाती है तो इस व्रत की अवधि ग्यारह दिन की हो जाती है। तिथि बढने पर एक दिन घटाना नहीं है। व्रत की समाप्ति चतुर्दशी को की जाती है। तिथि घटने पर भी व्रत की समाप्ति चतुर्दशी को की जाती है। हाँ, पंचमी को व्रत आरम्भ न कर तिथिक्षय की स्थिति में चतुर्थी को व्रतारम्भ किया जाता है। सेनगण आचार्यों ने व्रत की समाप्ति की तिथि निश्चित कर दी है। व्रतारम्भ के सम्बन्ध में मूलसंघ और काष्ठासंघ के आचार्यों में थोड़ा मतभेद है। मूलसंघ के आचार्य मध्य में तिथिक्षय होने पर चतुर्थी को ही व्रतारम्भ मान लेते हैं। उनके अनुसार मध्य में तिथिक्षय की अवस्था में पंचमी विद्ध चतुर्थी ग्रहण की गई है। सूर्यास्त के समय में पंचमी तिथि आ ही जाती है। ऐसा नियम भी है कि जब दशलक्षण व्रत के मध्य में किसी तिथि का क्षय होता है तो चतुर्थी तिथि मध्यान्ह के पश्चात पंचमी से विद्ध हो ही जाती है। अतएव मूलसंघ के आचार्यों ने एक दिन पहले से व्रत करने का विधान किया है। यद्यपि उदयकाल में रसघटी प्रमाण तिथि को ही व्रत के लिए ग्राह्य बताया है, परन्तु 'त्रिमुहूर्तेषु यत्रार्क उदेत्यस्तं समेति च' श्लोक में च शब्द का पाठ रखा है, जिससे स्पष्ट है कि सूर्यास्त काल में तीन मुहूर्त प्रभाव तिथि के होने पर भी तिथि व्रत के लिए ग्राह्य मान ली जाती है। यद्यपि आचार्य ने स्पष्ट कर दिया है कि यह विधान नैशिक व्रतों के लिए ही है।

"त्रिषुहूर्तेमु यत्रार्कः" श्लोक की संस्कृत व्याख्या में बताया है "या तिथि तिथिरूदयकाले त्रिमुहूर्ताद्दिनागतद्विवसेऽपि वर्तमाना तिथि उदयकाले त्रिमुहूर्ताद्देनागतदिवसेऽपि वर्तमाना तिथिः" आचार्य के इस कथन से अस्तकाल में तीन घटी रहने वाली तिथि भी व्रत के लिए ग्राह्य मान ली जाती है। यद्यपि आगे चलकर अपने व्याख्यान में नैशिक व्रतों के लिए अस्तकालीन तिथि का उपयोग करने के लिए कहा गया है। फिर भी व्याख्या में दो बार "त्रिमुहूर्त्ताद्दिनागतदिवसेऽपि वर्तमाना।" पाठ आ जाने से यह अर्थ स्पष्ट हो जाता है कि दशलक्षण और अष्टान्हिका व्रत के मध्य में तिथि का अभाव होने पर ग्रहण कर ली जाती है, जिससे नियत अवधि में भी बाधा नहीं पड़ती है।

मध्य में तिथिक्षय होने पर उपर्युक्त व्यवस्था मान ली जायगी। किन्तु आदि

और अन्त में तिथिक्षय होने पर उक्त दोनों व्रतों के लिए क्या व्यवस्था रहेगी ? आचार्य सिंहनन्दी ने इस प्रश्न का उत्तर भी उपर्युक्त पद्यों में दिया है। आपने बतलाया है कि आदि तिथि का क्षय होने का अर्थ है—दशलक्षण के लिए पंचमी का ही अभाव होना। जब सूर्योदयकाल में पंचमी नहीं रहेगी तो चतुर्थी विद्ध पंचमी ही व्रत के लिए पंचमी मान ली जायेगी। गणित प्रकिया के अनुसार यही सिद्ध होता है कि जब उत्तर तिथि का अभाव होता है तो पूर्व तिथि भी पिछले दिन अल्प प्रमाण ही रहती है, जिससे क्षय होने वाली तिथि उस दिन सिद्ध हो जाती है। तात्पर्य यह है कि जिस पंचमी का अभाव हुआ है, वस्तुतः वह उसके पहले दिन उदयकाल में चतुर्थी के रहने पर मुक्त हो चुकी है, जिससे अगले दिन उदय काल में उसका अभाव हो गया है। उदाहरण के लिए यों कहा जा सकता है कि बुधवार को चतुर्थी ६ घटी २० पल है, गुरुवार को पंचमी का अभाव है और षष्ठी ५० घटी १६ पल है। ऐसी अवस्था में व्रत के लिए पंचमी कौनसी मानी जायगी ?

बुधवार को ६ घटी २० पल के उपरान्त पंचमी आ जायगी और उसी दिन ५६ घटी २५ पल पर समाप्त हो जाती है। गुरुवार को पंचमी का सर्वथा अभाव है। अतः व्रतारम्भ बुधवार से किया जायगा। यह नियम है कि जब उदयकाल में तिथि नहीं मिलती है, तो अपराह्नकालीन तिथि को ग्रहण कर लिया जाता है। अतएव आदि तिथि के क्षय होने पर दशलक्षण व्रत चतुर्थी से और अष्टाह्निका व्रत सप्तमी से किया जाता है। यदि अन्तिम तिथि क्षय हो तो यह व्यवस्था है कि जिस दिन गणित के हिसाब से अन्तिम तिथि पड़ती हो उसी दिन व्रत समाप्त करने चाहिए। अर्थात तिथिक्षय के पहले वाले दिन को व्रत समाप्त हो जाते हैं। कभी ऐसा भी होता है कि व्रत समाप्ति के दिन तिथि एक या दो घटी ही नाम मात्र होती है, ऐसी अवस्था में छः घटी प्रमाण से कम होने के कारण अग्राह्य है, परन्तु क्षय सदृश होने पर भी एक दिन व्रत अवधि में से न्यून रहने के कारण व्रत समाप्ति के लिए छः घटी से कम प्रमाण तिथि भी ग्रहण कर ली जाती है। निष्कर्ष यह है कि अन्तिम तिथि के क्षय होने पर दशलक्षण व्रत नौ दिन तथा अष्टाह्निका व्रत सात दिन तक ही करने चाहिए। एक दिन पहले से व्रत करना ठीक नहीं है।

व्रततिथि निर्णय के लिए अन्य मतमतान्तर

इति दमोदर कथितं रसघट्यां व्रतं नीतं देशसौराष्ट्र—शान्तिकृतमध्यदेशेषु विख्यातं कर्णाटके द्राविडे देशे च प्रसिद्धम् ।

अर्थ—इस प्रकार दामोदर के द्वारा कथित रसघटी प्रमाण तिथि व्रत के लिए ग्राह्य है । यह मत सौराष्ट्र–गुजरात, शान्तिकृत-उत्तरप्रदेश और बिहार प्रान्त का उत्तर पूर्वीय भाग, मध्य प्रदेश में प्रसिद्ध तथा कर्नाटक और द्राविड देश में मान्य है ।

विवेचन—दामोदर नाम के एक आचार्य हुए हैं, जिन्होंने व्रततिथि का प्रमाण छः घटी माना है । इन्होंने तिथिनिर्णय नाम का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ लिखा है । इनके रसघटी प्रमाण मत का उद्धरण इन्द्रनन्दी संहिता में भी पाया जाता है तथा इन्द्रनन्दी आचार्य ने स्वयं इसका उल्लेख किया है । तिथि प्रमाण के लिए अनेक मत-भेदों के होनेपर भी बहुमत से छः घटी मान ही ग्राह्य माना गया है । यह मत गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक और द्राविड देश में मान्य है । यद्यपि कर्नाटक देश में सामान्यतः तिथिमान बारह घटी मानने का उल्लेख किया गया है, परन्तु विशेषरुप से जैनाचार्यों ने छः घटी प्रमाण को ही ग्राह्य बताया है । तथा तिथि का तत्वभाग पन्द्रह घटी प्रमाण तक माना है ।

कर्नाटक देश के जैनेतर आचार्यों ने व्रततिथि का मान समस्त तिथि का दशमांश अथवा दिनमान का षष्ठाँश माना है । इसका समर्थन आचार्य के वचनों से भी होता है । यह मत जैनों में तामिल प्रदेश में आदरणीय समझा जाता था । इन्द्र-नन्दी और माघनन्दी आचार्यों के वचनों से भी इसकी पुष्टि होती है । अभ्रदेव के वचनों से भी प्रतीत होता है कि सूक्ष्म विचार के लिए व्रत तिथि का मान समस्त तिथि का दशमांश या दिनमान का षष्ठांश मानना चाहिए । जैसे अर्जित सम्पत्ति का षष्ठांश दान में दिया जाता है, उसी प्रकार दिनमान का षष्ठांश व्रत के लिए ग्राह्य होता है । उदाहरण—बुधवार को सप्तमी १५ घटी १० पल है, गुरुवार को अष्टमी ७ घटी ५४ पल है । यहाँ यह देखना है कि माघनन्दी और इन्द्रनन्दी के सिद्धान्ता-नुसार गुरुवार की अष्टमी व्रत के लिए ग्राह्य है या नहीं ? अहोरात्र मान में से

सप्तमी तिथि के प्रमाण को घटाया तो अष्टमी का प्रमाण आया—(६०/०)—(१५/१०) = (अहोरात्र - व्रत तिथि के पहले की तिथि) = ४४/५० = अनंकित व्रततिथि; जो कि पञ्चांग में अंकित नहीं की गयी है। इसमें पञ्चांग अंकित तिथि जोड़ने पर समस्त तिथि का प्रमाण होगा—

(अनंकित व्रततिथि + पञ्चांग अंकित व्रत तिथि) = (४४/५०) + (७/५४) = ५२/४४ समस्त तिथि का मान। इसका दशमांश = ५२/४४ ÷ १० = ५/१६/२४ अर्थात् चार घटी अठावन पल और चौबीस विपल प्रमाण या इससे अधिक होने पर तिथि व्रत के लिए ग्राह्य है। यहां पर अष्टमी ७ घटी ५४ पल है, यह मान गणितागत मान से अधिक होने के कारण व्रत तिथि के लिए ग्राह्य है। दिनमान २९ घटी ४० पल है, इसका षष्ठांश लिया तो—(२९/४०) ÷ ६ = ४/५६/४० अर्थात् ४ घटी ५६ पल ४० विपल हुआ। गुरुवार को अष्टमी ७ घटी ५४ पल है जो कि गणित द्वारा आगत मान से ज्यादा है। अतः यह तिथि भी व्रत के लिए सर्व प्रकार से ग्राह्य है। माघनन्दी आचार्य ने तिथि के लिए और भी अनेक मतों की समीक्षा की है, परन्तु सूक्ष्म विचार से उन्होंने दिनमान का षष्ठांश को दान, अध्ययन, व्रत और अनुष्ठान के लिए ग्राह्य बताया है।

इतीन्द्रनन्दिवचनम् अधिकायामुक्तं नियमसारे समयभूषणे च—

अधिका तिथिरादिष्टा व्रतेषु बुधसत्तमैः।
आदिमध्यान्तभेदेषु शक्तितश्च विधीयते ॥

अर्थः—यह इन्द्रनन्दी आचार्य के वचन हैं। अधिकतिथि-तिथि के बढ़ जाने पर नियमसार और समयभूषण में व्यवस्था बतायी गयी है कि अधिकतिथि के होने पर विवेकी श्रावकों को आदि, मध्य और अन्त भेदों में— दिनों में शक्तिपूर्वक आचरण करना चाहिए। यह श्लोक पहले भी आया है। सिंहनन्दी आचार्य का ही यह श्लोक है, यद्यपि इसी श्लोक के आशय का श्लोक इन्द्रनन्दी का भी है। पर तिथि व्यवस्था सिंहनन्दी की ही है।

तथाचोक्तं सिंहनन्दिविरचित पञ्चनमस्कारदीपिकायाम्—

शक्तिहीनं करोतु वाप्यधिकस्याधिकं फलम् ।
सशक्तिके च निःशक्तिके ज्ञेयं नेदमुत्तरम् ।।

अर्थ—सिंहनन्दी विरचित पञ्चनमस्कारदीपिका नामक ग्रन्थ में भी कहा है—तिथिवृद्धि होने पर जिसमें शक्ति नहीं है, उसको भी एक दिन अधिक व्रत करना चाहिए, क्योंकि एक दिन अधिक व्रत करने से अधिक फल की प्राप्ति होती है। जो यह प्रश्न करते हैं कि जिसमें शक्ति नहीं है, वह किस प्रकार अधिक दिन व्रत करेगा। शक्तिशाली को ही एक दिन अधिक व्रत करना चाहिए। शक्ति के अभाव में एक दिन अधिक व्रत करने का प्रश्न ही उठता नहीं है। आचार्य इस थोथो दलील का खण्डन करते हैं तथा कहते हैं कि व्रत करने वाला शक्तिशाली या शक्तिरहित है, यह कोई उत्तर नहीं है। व्रत सभी को तिथि-वृद्धि होने पर एक दिन अधिक करना चाहिए। व्रत ग्रहण करने वाला अपनी शक्ति को देखकर ही व्रत ग्रहण करता है।

विवेचन—आचार्य सिंहनन्दी ने पञ्चनमस्कारदीपिका नामक ग्रन्थ लिखा है। आपने इस ग्रंथ में तिथिवृद्धि होने पर व्रत कितने दिन तक करना चाहिए, इसकी व्यवस्था बतलायी है। कुछ लोग यह आशका करते हैं कि जिसमें शक्ति है, वह तिथि वृद्धि में एक दिन अधिक व्रत करेगा और जिसमें शक्ति नहीं है, वह नियत अवधि पर्यन्त ही व्रत करेगा। आचार्य ने इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा है कि व्रत करने में शक्ति, अशक्ति का प्रश्न नहीं है। अधिक दिन व्रत करने से अधिक फल की प्राप्ति होती है। जो शक्तिहीन हैं, उनको तो व्रतग्रहण नहीं करना चाहिए। अपने को शक्तिहीन समझना बहिरात्मा बनना है। आत्मा में अनन्त शक्ति है, कर्म बन्धन के कारण आत्मा की शक्ति आच्छादित है। कर्म बन्धन के टूटते ही या शिथिल होते ही पूर्ण या अपूर्ण रूप में शक्ति उद्‌भूत होती है।

व्रत करने का मुख्य ध्येय यही है कि कर्म बन्धन शिथिल हो जायं और ऐसा अवसर मिले जिससे इस कर्मबन्धन को तोड़ने में समर्थ हो सकें। व्रत करके भी अपने को निःशक्ति समझना बहिरात्मा का लक्षण है। यद्यपि जैनागम शक्तिप्रमाण व्रत करने का आदेश देता है। यदि उपवास करने की शक्ति नहीं है तो एकाशन

करना चाहिए। परन्तु शक्तिप्रमाण व्रत करने का अर्थ यह कदापि नहीं है कि अपनी शक्ति को छिपाया जाय। व्रत करने से शक्ति का प्रादुर्भाव होता है, जो अपने को निःशक्ति समझते हैं, उन्हें आत्मा का पक्का श्रद्धान नहीं हुआ है—भेद-विज्ञान की जागृति नहीं हुई है। भेदविज्ञान के उत्पन्न होते ही इस जीव को अपनी वास्तविक शक्ति का अनुभव हो जाता है।

शरीर से मोह करने के कारण ही यह जीव अपने को शक्तिहीन समझता है। परन्तु जैनदर्शन में शारीरिक शक्ति आत्मा की शक्ति से ही अनुप्रमाणित बतलायी है। अतः अनन्त बलशाली आत्मा को कभी भी शक्तिहीन नहीं समझना चाहिए। मैं चतुर हूँ, पण्डित हूँ, ज्ञानी हूँ, आदि मानना बहिरात्मापना है। रागी, द्वेषी, लोभी, मोही, अज्ञानी, दीन, धनी, दरिद्री, सुरूप, कुरूप, बालक, कुमार, तरुण, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, नपुंसक, काला, गोरा, मोटा, पतला, निर्बल, सबल आदि अपने को एकान्त रूप से समझना मिथ्यात्व का द्योतक है। जिसको शरीर में आत्मा की भ्रान्ति हो जाती है, जो शरीर के धर्म को ही आत्मा का धर्म मानता है, वह मिथ्यादृष्टि बहिरात्मा है। अतः व्रत करने में सर्वदा अपने को शक्तिशाली ही समझना चाहिए।

जो लोग अपने को शक्तिहीन कहकर व्रत करने से भागते हैं वे वस्तुतः आत्मा-नुभूति से हीन हैं। रत्नत्रय आत्मा का स्वरुप है, इसकी प्राप्ति व्रताचरण से ही हो सकती है। व्रताचरण संसार और शरीर से विरक्ति उत्पन्न करता है। मोह के कारण यह आत्मा अपने स्वरुप को भूला है, मोह के दूर होते ही स्वरुप का भान होने लगता है। शरीर अनित्य है और आत्मा नित्य। यह अनादि, स्वतःसिद्ध, उपाधिहीन एव निर्दोष है। इस आत्मा को तीक्ष्ण शस्त्र काट नहीं सकता है, जलप्लावन इसे भिगा नहीं सकता। पवन की शोषकशक्ति इसे सुखा नहीं सकती। ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, सम्यक्त्व, अगुरुलघुत्व आदि स्वाभाविक आठ गुण इसमें वर्तमान हैं। ये गुण इस आत्मा के स्वभाव हैं, आत्मा से अलग नहीं हो सकते। जो व्यक्ति इस मानव शरीर को प्राप्त कर आत्मा की साधना करता है, व्रतोपवास द्वारा विषय-कषायजन्य प्रवृत्तियों को दूर करता है, वह अपने मनुष्य जीवन को सफल कर लेता है।

शरीर के नाश होने पर भी यह आत्मा उस प्रकार नष्ट नहीं होता है, जैसे मकान के भीतर का आकाश, जो मकान के आकार का होता है, मकान के गिरा देने पर भी मूलस्वरूप में ज्यों का त्यों अविकृत रहता है। ठीक इसी प्रकार शरीर के नाश हो जाने पर भी आत्मा ज्यों की त्यों मूलरूप में रहता है। इसीलिये आचार्यों ने इस ज्ञान, दर्शनमय आत्मतत्व को प्राप्त करने का साधन व्रतोपवास आदि को माना है। उपवास करने से इन्द्रियों की उद्दामशक्ति क्षीण हो जाती है, विषय की ओर उनकी दौड़ कम हो जाती है। उपवास को आचार्यों ने शरीर और आत्मशुद्धि का प्रधान साधन कहा है। प्रमाद, जो कि आत्मा की उपलब्धि में बाधक है, उपवास से दूर किया जा सकता है। शरीर को सन्तुलित रखने में भी उपवास बड़ा भारी सहायक है। धर्म-ध्यान, पूजा-पाठ और स्वाध्यायपूर्वक उपवास करने का फल तो अद्भुत होता है। आत्मा की वास्तविक शक्ति प्रादुर्भूत हो जाती है।

सम्यग्दृष्टि श्रावक अपने सम्यग्दर्शन व्रत को विशुद्ध करने के लिये नित्य-नैमित्तिक सभी प्रकार के व्रत करता है। पञ्चाणु व्रतों के द्वारा अपने आचरण को सम्यक् करता हुआ मोक्षमार्ग में अग्रसर होता है। जैनागम में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि श्रावक को सर्वदा सावधान रहते हुए आत्मशोधन में प्रवृत्त होना चाहिए। यह गृहस्थधर्म भी इस आत्मा को संसार के बन्धन से छुड़ाने में सहायक है। यद्यपि मुनिधर्म धारण किये बिना पूर्ण स्वतन्त्रता इस जीव को नहीं प्राप्त हो सकती है, क्योंकि गृहस्थधर्म में परावलम्बन अधिक रहता है। अभ्रदेव ने अपने व्रतोद्योतन श्रावकाचार में स्पष्ट लिखा है कि समाधिमरण में सहायक दशलक्षण आदि व्रतों को इस जीव को अवश्य धारण करना चाहिए। व्रतों के प्रभाव से समाधिमरण सिद्ध होता है।

व्रततिथि के निर्णय के लिए विभिन्न मत--

तथा व्रतोद्योते--

रसघटीमतं वापि मतं दशघटीप्रमम्।
त्रिंशनाडीमतं वापि मूले दारुमतद्वये ॥१॥

मूलसङ्घे घटीषट्कं व्रतं स्याच्छुद्धिकारणम् ।
काष्ठासङ्घे च षष्ठांशं तिथेः स्याच्छुद्धिकारणम् ।।२।।
पूज्यपादस्य शिष्यैश्च कथितं षट्घटीमतम् ।
ग्राह्यं सकलसंघेषु पारम्पर्यसमागतम् ।।३।।

अर्थ—मूलसंघ के आचार्यों के मतानुसार छः घटी प्रमाण तिथि का मान है। काष्ठसंघ के आचार्यों के दो मत हैं— एक सिद्धान्त के आचार्य दस घटी प्रमाण व्रत की तिथि का मान बतलाते हैं तथा दूसरे सिद्धान्त के आचार्य बीस घटी प्रमाण व्रत की तिथि का मान बतलाते हैं। मूलसंघ में व्रत की शुद्धि छः घटी प्रमाण तिथि होने पर मानी है, किन्तु काष्ठासंघ में षष्ठांश प्रमाण तिथि ही व्रतशुद्धि का कारण मानी गयी है। पूज्यपाद के शिष्यों ने भी छः घटी प्रमाण व्रततिथि को कहा है। इस तिथि प्रमाण को ही परम्परागत आचार्यों के मतानुसार ग्रहण करना चाहिए।

विवेचन—व्रततिथि के निर्णय के सम्बन्ध में अनेक मतमतान्तर हैं। मूलसंघ, काष्ठासंघ, पूज्यपाद आदि आचार्यों की परम्परा के अनुसार व्रततिथि का मान भी भिन्न-भिन्न प्रकार से लिया गया है। यद्यपि व्यवहार में मूलसंघ के आचार्यों का मत ही प्रमाण माना गया है, फिर भी विचार करने लिए यहां सभी मतों का प्रतिपादन किया जा रहा है।

काष्ठासंघ के आचार्यों में दो प्रकार के सिद्धान्त पाये जाते हैं। कुछ आचार्य तिथि का प्रमाण षष्ठांश मात्र और कुछ तृतीयांश मात्र मानते हैं। तृतीयांश मात्र प्रमाण मानने वालों का कथन है कि जितनी अधिक तिथि व्रत के दिन सूर्योदयकाल में होगी, उतना ही अच्छा है। क्योंकि पूर्ण तिथि का फल भी पूरा ही मिलेगा। मध्यमान तिथि का ६० घटी होता है, अतः तृतीयांश का अर्थ २० घटी मात्र है। यदि स्पष्ट तिथि का मान निकालकर तृतीयांश लिया जाय तो अधिक प्रमाणिक न होगा। परन्तु स्पष्ट तिथि के मान का गणित करना होगा तभी तृतीयांश ज्ञात हो सकेगा।

उदाहरण—सोमवार को सप्तमी तिथि का मान पञ्चांग में १५ घटी २५ पल अंकित है और मंगलवार को अष्टमी १० घटी ४० पल अंकित की गयी है। कुल अष्टमी का प्रमाण निम्नप्रकार हुआ—

(अहरोत्र प्रमाण–पञ्चांग अंकित पूर्वतिथि–सप्तमी) =अनंकित व्रततिथि =अष्टमी का प्रमाण= (६०/७– (१५/२५)=४४/३५ अनंकित व्रततिथि अष्टमी (अनंकित व्रततिथि + पञ्चांग अंकित व्रततिथि) = (४४/३५)+(१०/४०)=समस्त व्रततिथि=५५/१५ इसका तृतीयांश निकाला तो–५५/१५÷३= १८/२५ अर्थात् १८ घटी २५ पल तृतीयांश प्रमाण आया। यदि अष्टमी सूर्योदय काल में १८ घटी २५ पल के तुल्य हो या इससे अधिक हो तभी काष्ठसंघ के द्वितीय मत के अनुसार ग्राह्य हो सकती है। प्रस्तुत उदाहरण में १० घटी ४० पल ही है, अतः व्रत के लिए ग्राह्य नहीं मानी जा सकती है। व्रत करने वाले को सोमवार के दिन ही इस सिद्धान्त के अनुसार व्रत करना पड़ेगा।

तृतीयांश प्रमाण व्रत के लिए तिथि मानने वाले मत की आलोचना—

मध्यम मान या स्पष्ट मान से समस्त तृतीयांश व्रत के लिए प्रमाण मानना उचित नहीं जंचता है। क्योंकि उदयकाल में तृतीयांश मात्र शायद ही कभी तिथि मिलेगी ऐसी अवस्था में व्रत सदा अनंकित तिथि में ही करना पड़ेगा। मध्यम मान की अपेक्षा २० घटी प्रमाण उदय तिथि का मान आवेगा और स्पष्ट मान की अपेक्षा से कभी २० घटी से अधिक २२ घटी के लगभग हो सकता है और कभी २० घटी से न्यून ही प्रमाण रहेगा। ऐसी अवस्था में उदयकाल से उक्त प्रमाण तुल्य व्रत के लिए तिथि मिलना सम्भव नहीं होगा। वर्ष में दो-चार बार ही ऐसी स्थिति आवेगी, जब २० घटी प्रमाण या इसके लगभग तिथि मिल सकेगी, अतः अधिकांश व्रतों में उदयकालीन तिथि को छोड़ अस्तकालीन तिथि ही ग्रहण करनी पड़ेगी।

दूसरी आपत्ति तृतीयांश मात्र व्रततिथि मानने में यह भी आती है कि प्रोषधोपवास करने वाले का प्रत्येक पर्व सम्बन्धी प्रोषधोपवास कभी भी यथासमय पर नहीं होगा। क्योंकि प्रोषधोपवास के लिए एकाशन की तिथि का विधान है, उपवास

के लिए भी निश्चित तिथि होनी चाहिए तथा पारणा के लिए भी विहित तिथि का होना आवश्यक है। जैसे किसी व्यक्ति को चतुर्दशी का प्रोषधोपवास करना है। सोमवार को त्रयोदशी ८ घटी २० पल है, मंगल को चतुर्दशी ७ घटी ५० पल है और बुधवार को पूर्णिमा ६ घटी ३० पल है। इस प्रकार की तिथिव्यवस्था होने पर क्या चतुर्दशी का प्रोषधोपवास मंगलवार को किया जा सकेगा और पूर्णिमा को पारणा हो सकेगी ?

प्रत्येक तिथि का तृतीयांश प्रमाण निकालने के लिए गणित क्रिया की। रविवार को द्वादशी १२ घटी ४० पल है। अतः (अहोरात्र-एकाशन के पूर्व की तिथि) =(६०/०)-(१२/४०)=४७/२० अनंकित त्रयोदशी तिथि, (अनंकित तिथि+अंकित तिथि)=(४७/२०) +(८/२०)= ५५/४० त्रयोदशी, इसका तृतीयांश= ५५/४०÷३=१८/३३/२० घट्यादि मान त्रयोदशी का।

(अहोरात्र–व्रत के पूर्व की तिथि) =(६०/०)-(८/२०)=५१/४० अनंकित चतुर्दशी (अनंकित+अंकित चतुर्दशी)=(५१/४०)+(७/५०)=५६/३० समस्त चतुर्दशी, इसका तृतीयांश =५५/४०÷३=१८/३३/२० घट्यादि मान त्रयोदशी का है।

(अहोरात्र–व्रत के पूर्व की तिथि)=(६०/०)-(८/२०)=५१/४० अनंकित चतुर्दशी (अनंकित+अंकित चतुर्दशी)=(५१/४०)+(७/५०)=५६/३० समस्त चतुर्दशी, इसका तृतीयांश ५६/३०÷३=१६/५० चतुर्दशी का तृतीयांश।

(अहोरात्र—व्रततिथि)=(६०/०)-(७/५०)=५२/१०अनंकित व्रत के बाद को पारणा तिथि; (अनंकित पारणा+अंकित पारणा)=(५२/१०)+(६/३०)=५८/४०, इसका तृतीयांश ५८/४०÷३=१६/३३/१० घट्यादि पूर्णिमा का।

प्रस्तुत उदाहरण में एकाशन की त्रयोदशी तिथि सोमवार को ८ घटी २० पल है, स्पष्ट मान से तृतीयांश का प्रमाण १८/३३/२० घट्यादि आया है। एकाशन की तिथि का प्रमाण तृतीयांश के प्रमाण से अल्प है, अतः सोमवार को एकाशन नहीं करना चाहिए। क्योंकि उस दिन त्रयोदशी तिथि ही नहीं है। यदि रविवार को एकाशन किया जाता है, तो उदयकाल में १२ घटी ४० पल तक द्वादशी तिथि भी रहती

है, अतः धर्मध्यान, सामायिक आदि क्रियाएं, जिनका सम्बन्ध प्रोषधोपवास से है, त्रयोदशी में सम्पन्न नहीं हो सकेंगी ।

चतुर्दशी को प्रोषधोपवास करना है, यह भी मंगलवार को ७ घटी ५० पल प्रमाण है । गणित से चतुर्दशी तृतीयाँश १९/५० घट्यादि आया है, अतः मंगल को उपवास नहीं किया जा सकता, उपवास सोमवार को करना पड़ेगा । इसी प्रकार पारणा मंगलवार को करनी होगी । उपवास और पारणा की क्रियाएं सम्पन्न करने की तिथियों में व्यतिक्रम हो जाता है । जिससे नियमित समय पर धार्मिक क्रियाएं नहीं हो सकेंगी ।

तीसरा दोष तृतीयांश प्रमाण तिथि मानने से यह आता है कि स्पष्ट मान के अनुसार तिथि का तृतीयांश लेने पर एकाशन की तिथि के अनन्तर एक दिन बीच में यों ही खाली रह जायगा तथा उपवास की तिथि एक दिन बाद ही पड़ेगी । उदाहरण के लिए यों समझना चाहिए कि किसी व्यक्ति को चतुर्दशी का प्रोषधोपवास करना है । त्रयोदशी बुधवार को १५/१२ है, गुरूवार को चतुर्दशी १६ घटी १० पल है । शुक्रवार को पूर्णिमा १७ घटी १५ पल है । ऐसी अवस्था में मंगलवार को त्रयोदशी का एकाशन करना पड़ेगा, बुधवार को यों ही रहना पड़ेगा । तथा गुरूवार को चतुर्दशी का उपवास करना पड़ेगा तथा शुक्रवार को पारणा । यह प्रोषधोपवास यथार्थ प्रोषधोपवास नहीं कहलाएगा । विधि में भी व्यक्तिक्रम हो जायगा, अतः तृतीयांश प्रमाण तिथि स्वीकार कर व्रत करना उचित नहीं है ।

सामान्यतः तृतीयांश मान तिथि का ग्रहण किया जाय तो ठीक है, पर उदय-काल में तृतीयांश प्रमाण मानना उचित नहीं जँचता है । इस प्रमाण में अनेक दोष आते हैं, तथा व्रत करने में व्यक्तिक्रम भी होता है ।

रस घटी प्रमाण भी तिथि का मान काष्ठासंघ के कुछ आचार्य मानते हैं । उनका कथन है कि समस्त तिथि का षष्ठांश व्रतके लिए ग्राह्य है । यदि उदयकाल में कोई भी तिथि अपने प्रमाण के षष्ठांश भी हो तो उसे व्रत के लिए विहित माना गया

है। दान, अध्ययन, उपवास और अनुष्ठान इन चारों कार्यों के लिए षष्ठांश प्रमाण तिथि के अतिरिक्त विधेय वस्तुओं का मान भी षष्ठांश ही कहा है। अर्थात् दान उपार्जित सम्पत्ति का षष्ठांश देना चाहिए। अध्ययन-समस्त-अहोरात्र प्रमाण का षष्ठांश मात्र अध्ययन स्वाध्याय में अवश्य लगाना चाहिए। उपवास के लिए भी विहित तिथि का समस्त तिथि के षष्ठांश प्रमाण होना आवश्यक है। अनुष्ठान में विधान-प्रतिष्ठा, मन्त्रसिद्धि आदि में संचित सम्पत्ति का षष्ठांश खर्च करना चाहिए। तथा अपने समय के छठें भाग को शुभोपयोग में बिताना आवश्यक है। अत एव काष्ठसंघ के आचार्यों ने व्रत के लिए विहित तिथि का उदयकाल में दस घटी प्रमाण मानने के लिए जोर दिया गया है। इससे कम प्रमाण तिथि के होने पर व्रत नहीं किये जा सकते हैं। यद्यपि स्पष्ट तिथि के प्रमाणानुसार रस घटी से हीनाधिक भी प्रमाण व्रततिथि का हो सकता है, परन्तु ऐसी स्थिति बहुत ही कम स्थलो में आती है। उदाहरण—सोमवार को त्रयोदशी ४० घटी १५ पल है। और मंगलवार को चतुर्दशी २४ घटी २० पल है। अतः मंगल को चतुर्दशी का षष्ठांश कितना हुआ, इसके लिए गणित क्रिया की—(६०/१)—(४०/१५)=१६/४५। (१६/४५)+(२४/३०)= ५४/१५ समस्त चतुर्दशी इस का षष्ठांश ५४/१५ ÷ ६ = ६/२/३० मंगलवार को चतुर्दशी यदि उदयकाल में ६ घटी २ पल ३० विपल हो तो यह तिथि व्रत के लिए ग्राह्य मानी जाएगी।

षष्ठांश प्रमाण व्रतके लिए उदयकाल में तिथि मानने वाले मत की समीक्षा—

काष्ठसंघ का षष्ठांश प्रमाण व्रत के लिए तिथि का मानना तृतीयांश प्रमाण माने गये व्रत की अपेक्षा से उत्तम है। व्यवहारिक दृष्टि से भी ग्राह्य हो सकता है। इसमें व्रतविधि में व्यक्तिक्रम की गुन्जाइश भी नहीं है। यद्यपि छः घटी प्रमाण व्रत तिथि को मान लेने पर, सभी व्रत सम्बन्धी विधान निश्चित तिथि में हो जाते हैं। किसी भी प्रकार की बाधा षष्ठांश तिथिमान में उपस्थित नहीं होती है। परन्तु सब प्रकार से ठीक होने पर भी एक बाधा इस तिथि को स्वीकार कर लेने पर आ ही जाती है। और वह है मानाधिक्य होने से सर्वदा अंकित तिथियों में व्रत नहीं किया जा सकेगा। एकाध बार ऐसा भी समय आ सकेगा, जब उदयकालीन तिथियों को छोड़कर अस्तकालीन तिथियों को ग्रहण करना पड़ेगा।

वास्तव में व्रत का फल तभी मिलता है, जब सूर्योदयकाल में विधेयतिथि कम-से-कम दो घटी सामायिक, प्रतिक्रमण आलोचना के लिए तथा तीन घटी प्रमाण पूजा के लिए और एक घटी प्रमाण आत्मचिन्तन के लिए और उपवास सम्बन्धी नियम ग्रहण करने के लिए रहे। मूलसंघ के आचार्यों ने इसी कारण छः घटी प्रमाण तिथि को व्रत के लिए ग्राह्य माना है। दस घटी प्रमाण तिथि को व्रतके लिए ग्राह्य मानने में सिर्फ दो युक्तियाँ है—"प्रथम षष्ठांशमपि ग्राह्यं दानाध्ययनकर्मणि" यह आगम वाक्य है। इसके अनुसार दान, पूजा-पाठ आदि के लिए षष्ठांश तिथि ग्रहण करनी चाहिए। दूसरी युक्ति जो कि अधिक बुद्धिसंगत प्रतीत होती है, वह है सामायिक, प्रतिक्रमण, पूजा-पाठ, स्वाध्याय और आत्मचितन के लिए दो-दो घटी समय निर्धारित करना। व्रत करने वाले श्रावक को व्रत के दिन प्रातःकाल दो घटी सामायिक, दो घटी प्रतिक्रमण, दो घटी पूजापाठ, दो घटी स्वाध्याय, दो घटी आत्मचितन करना चाहिए। अतः जो विधेय तिथि व्रत के दिन कम-से-कम दस घटी नहीं है, उसमें धार्मिक क्रियाएँ यथार्थरूप से सम्पन्न नहीं की जा सकती हैं। अतएव दस घटी या इससे अधिक प्रमाण तिथि को ही व्रत के लिए ग्राह्य मानना चाहिए।

छः घटी प्रमाण मूलसंघ और पूज्यपाद की शिष्यपरम्परा व्रत तिथि का मान स्वीकार करती है। इसकी उपपत्ति दो प्रकार से देखने को मिलती है। कुछ लोग कहते हैं कि तिथि की चार अवस्थाएँ होती हैं- बाल, किशोर, युवा और वृद्ध। उदयकाल में पाँच घटी प्रमाण तिथि बालसंज्ञक मानी जाती है। पाँच घटी के उपरान्त दस घटी तक किशोरसंज्ञक और दस घटी से लेकर बीस घटी तक युवासंज्ञक तथा अनंकित तिथि वृद्धसज्ञक कही गयी है। युवासंज्ञक तिथि के कुछ लोगों ने दो भेद किये हैं—पूर्व युवा और उत्तर युवा। दिनमान पर्यन्त पूर्ण युवा और दिनमान के पश्चात् उत्तर युवा संज्ञक तिथियाँ बतायी गयी हैं। इस परिभाषा के प्रकाश में देखने पर अवगत होता है कि सूर्योदय काल में पाँच घटी तक का समय बालसंज्ञक है, इसके पश्चात् किशोरसंज्ञक काल आता है। बालसंज्ञक समय में तिथि निर्बल मानी जाती है तथा किशोरसंज्ञा में तिथि निर्बल समझा जाती है। इसी कारण तिथि का प्रमाण छः घटी माना गया है। व्रत समय में तिथि बालसंज्ञा को छोड़ किशोर अवस्था को प्राप्त हो जाती है। तिथि का समस्त सार किशोर अवस्था में प्रादुर्भूत होता है। रसघटी

प्रमाण तिथि का मान, मान लेने में दूसरी युक्ति यह है कि तिथि का शक्तिशाली काल धर्मध्यान और आत्मचिंतन में बिताने का विधान चार घटी सूर्योदय के उपरान्त किया गया है। जिससे स्पष्ट मालूम होता है कि तिथि तत्व को अवगत-कर यही आचार्यों ने यह विधान किया है।

व्रत के आदि—मध्य-अन्त में तिथिहानि होने पर अभ्रदेव का मत—

आदिमध्यावसानेषु　हीयते　तिथिसत्तमा।
आदौ व्रतविधिः कार्या प्रोक्तं श्रीमुनिपुङ्गवैः ॥

अर्थ—अभ्रदेव ने अपने व्रतोद्योतन श्रावकाचार में व्रत के प्रारम्भ, मध्य और अन्त में तिथि के घट जाने पर व्यवस्था बतलायी है कि—यदि आदि, मध्य और अन्त में नियत अवधि वाले व्रतों की तिथियों में से कोई तिथि घट जाय तो व्रत करने वाले व्रती श्रावकों को एक दिन पहले से व्रत को करना चाहिए। ऐसा श्रेष्ठ मुनियों ने कहा है।

विवेचन—यद्यपि तिथिह्रास और तिथिवृद्धि के होने पर किस व्रत को कब से करना चाहिये तथा किस-किस व्रत को एक दिन अधिक करना चाहिए और किसको नहीं? तिथिवृद्धि और तिथि-ह्रास का प्रभाव किन-किन व्रतों पर नहीं पड़ता है? यह भी पहले विस्तार से लिखा जा चुका है। यहाँ पर आचार्य ने अभ्रदेव का मत उद्धृत कर यह बतलाने का प्रयत्न किया है कि जैनमान्यता में नियत अवधि वाले कुछ व्रतों के लिए चान्द्रतिथियाँ ग्रहण नहीं की गयी हैं, बल्कि सावन दिन मान कर ही व्रत किये जाने का विधान है। जो व्रत केवल एक दिन के लिये ही रखे जाते हैं, उनमें चान्द्रतिथि का ही विचार ग्रहण किया जाता है। षोड़शकारण व्रत में भी चान्द्रमास और चान्द्र तिथि का ही ग्रहण किया गया है, अतः यह तिथिह्रास होने पर भी व्रत एक दिन पहले से नहीं किया जाता है। मेघमाला व्रत को सावन दिनों के अनुसार किया ही जाता है, इस व्रत के लिए चान्द्रतिथियों का विधान भी नहीं है, प्रत्युत सावन दिन ही ग्रहण किये गये हैं। इसी कारण यह किसी खास निश्चित तिथि को नहीं किया जाता है। यद्यपि कुछ आचार्यों ने श्रावणमास की कृष्णा प्रतिपदा से इस व्रत के करने का आदेश दिया है, परन्तु है यह सावन व्रत है, इसी कारण इसमें सावन दिनों का

ग्रहण किया गया है । एकावली, द्विकावली व्रत भी सावन ही हैं, इनके करने के लिए भी चान्द्रतिथियों का कोई निश्चित विधान नहीं है । यद्यपि उक्त दोनों व्रतों में उपवास करने की तिथियां निश्चित हैं, फिर भी इन्हें चान्द्रदिन सम्बन्धी व्रत मानना उपयुक्त नहीं जंचता है । इन दोनों व्रतों का सौरदिन सम्बन्धी व्रत माना जाय, तो अधिक उपयुक्त हो सकता है ।

तिथि घटने का प्रभाव सबसे अधिक दशलक्षण, रत्नत्रय और अष्टान्हिका इन व्रतों पर पड़ता है । क्योंकि ये तीनों व्रत निश्चित अवधि वाले होते हुए भी सौर और चान्द्र दोनों ही प्रकार के दिनों से सम्बन्ध रखते हैं । व्रतारम्भ की तिथि-संख्या यथार्थ होने पर चान्द्रतिथि ग्रहण की जाती है । तात्पर्य यह है कि उदयकाल में कम से कम छः घटी प्रमाण पञ्चमी तिथि के होने पर दशलक्षण व्रत आरम्भ किया जाता है । तथा समाप्ति चतुर्दशी को । यदि आदि, मध्य और अन्त में तिथि-हानि हो तो एक दिन पहले अर्थात् चतुर्थी से ही व्रत प्रारम्भ कर दिया जाता है । समाप्ति सर्वदा चतुर्दशी को ही की जाती है । अष्टान्हिका व्रत में भी यही बात है, यह व्रत भी आदि, मध्य और अन्त में तिथि की हानि होने पर एक दिन पहले से प्रारम्भ कर दिया जाता है । इस व्रत की समाप्ति पूर्णिमा को होती है । रत्नत्रय व्रत को भी तिथि की हानि होने पर एक दिन पहले से करना चाहिए । इन सब व्रतों में तिथिक्षय होने पर व्रत एक दिन पहले से करते हैं । किन्तु तिथि-वृद्धि होने पर एक दिन और अधिक करते हैं । व्रततिथियों के आदि, मध्य और अन्त में तिथि की वृद्धि हो जाने पर नियत अवधि तक ही व्रत नहीं किया जाता । बल्कि एक दिन अधिक व्रत किया जाता है ।

तिथिक्षय होने पर गौतमादि मुनीश्वरों का मत—

> आदिमध्यान्तभेदेषु विधिर्यदि विधीयते ।
> तिथिह्रासे समुद्दिष्टं गौतमादिगणेश्वरैः ।।

अर्थ—आदि, मध्य और अन्त में यदि तिथिक्षय हो तो गौतमादि मुनीश्वरों का कथन है कि एक दिन पहले से व्रत तिथि को सम्पन्न करना चाहिए ।

विवेचन—जैनाचार्यों ने तिथिह्रास और तिथिवृद्धि होने पर नियत अधिक

के व्रतों को कितने दिन तक करना चाहिए, इसका विस्तार सहित विचार किया है। श्री गौतमगणधर तथा श्रुतज्ञान के पारगामी अन्य आचार्यों ने अपनी व्यवस्था देते हुए कहा है कि तिथिह्रास होने पर भी व्रत को अपनी निश्चित दिनसंख्या तक करना चाहिए। मध्य में अथवा आदि, अन्त में तिथिक्षय हो तो एक दिन आगे से व्रत का निश्चित दिनों तक पालन करना चाहिए। दशलक्षण, रत्नत्रय और अष्टान्हिका ये तीनों व्रत अपनी निश्चित दिनसंख्या तक किये जाते हैं। दशलक्षण व्रत के दस दिनों में से प्रत्येक दिन एक-एक धर्म के स्वरूप का मनन किया जाता है। तिथि-ह्रास के कारण यदि एक दिन कम व्रत किया जाय तो एक धर्म के स्वरुप के मनन का अभाव हो जायगा; जिससे समग्र व्रत का फल नहीं मिल सकेगा। जैनाचार्यों ने तिथि-ह्रास होने पर विभिन्न व्रतों के लिए विभिन्न व्यवस्थाएं बतलाई हैं।

कुन्दकुन्द, पूज्यपाद, जिनसेन, अभ्रदेव, सिंहनन्दी, दामोदर आदि आचार्यों ने दशलक्षण और अष्टान्हिका व्रत के लिए मध्य, अन्त या आदि में तिथिक्षय होने पर एक मत से स्वीकार किया है कि एक दिन पहले से व्रत करना चाहिए। गौतम-गणधर आदि प्राचीन आचार्यों से भी उक्त मत ही समर्थित है। सिंहनन्दी आचार्य ने तिथिक्षय की व्यवस्था करते हुए कहा है कि प्रत्येक तिथि में पांच मुहूर्त पाये जाते हैं—आनन्द, सिद्ध, काल, क्षय और अमृत। इन पांच मुहूर्त्तों में तिथिक्षय की अवस्था में अर्थात् उदयकाल में तिथि के न मिलने पर तिथि में तीन मुहूर्त्त रहते हैं—काल, आनन्द और अमृत। तिथि-क्षयवाला दिन अशुभ इसीलिए माना गया है क्योंकि इसमें प्रातःकाल छः घटी तक काल मुहूर्त रहता है, जो समस्त कार्यों को बिगाड़ने वाला होता है। उदयकाल में छः घटी प्रमाण तिथि के होने पर प्रथम आनन्द मुहूर्त आता है, तथा छः घटी के उपरान्त बारह घटी तक सिद्ध मुहूर्त रहता है जिससे इसमें किये गये सभी कार्य सफल होते हैं। व्रतोपवास और धर्मध्यान की क्रियाएं भी सफल होती हैं, क्योंकि आनन्द और सिद्धमुहूर्त अपने नाम के अनुसार ही फल देते हैं। मूलसंघ के आचार्यों ने इसी कारण व्रततिथि का प्रमाण छः घटी माना है। काष्ठासंघ में व्रततिथि का प्रमाण समस्त तिथि का षष्ठांश माना गया है, वह भी इसी कारण युक्तिसंगत है कि सिद्ध मुहूर्त तक काष्ठासंघ के आचार्यों ने तिथि को ग्रहण किया है। जो बीस घटी प्रमाण व्रततिथि का मान मानते हैं, उनका मत सदोष प्रतीत होता है, क्योंकि काल और क्षयमुहूर्त, जो कि अपने नाम के

समान ही फल देते हैं, उनके द्वारा मानी हुई तिथि के अन्त में विद्यमान रहते हैं। तिथि-क्षय के दिन सबसे प्रथम काल मुहूर्त आता है, जो यथानाम तथा गुणवाला होता हुआ अमंगलकारक होता है। परन्तु तिथि-क्षय के दिन मध्यान्ह के उपरान्त काल मुहूर्त का प्रभाव घट जाता है और आनन्द तथा अमृत मुहूर्त अपना फल देने लगते हैं। आचार्यों ने एक दिन पहले जो व्रत करने की विधि बतलायी है, उसका अर्थ यह है कि पहले दिनवाली तिथि का अन्तिम मुहूर्त, जो कि अमृतसंज्ञक कहा गया है, व्रततिथि के दिन के लिए फलदायक होता है।

तिथिह्रास और तिथिवृद्धि होने पर सुखचिन्तामणि व्रत की व्यवस्था—

अधिकगृहीतानुक्तातिथौ को विधिरिति चेत्तदाह—तिथिह्रासे व्रतिकैः तदादिदिनमारभ्य उपवासः कार्यः। अधिकतिथौ को विधि-रितिचेत्तदाह— यथाशक्ति द्वितीयायां तिथौ पुनः पूर्वप्रोक्तो विधिः कार्यः, हीनत्वात् त्रिमुहूर्त्तेतः व्रतविधिर्न भवति।

अर्थ—सुखचिन्तामणि व्रत में तिथिह्रास और तिथिवृद्धि होने पर व्रत करने की विधि क्या है? तिथिह्रास होने पर व्रत करने वालों को एक दिन पहले से व्रत करना चाहिए।

तिथिवृद्धि होने पर क्या व्यवस्था है?—आचार्य कहते हैं कि तिथिवृद्धि होने पर दूसरे दिन-बढ़े हुए दिन भी विधिपूर्वक व्रत करना चाहिए। यदि तिथि तीन मुहूर्त अर्थात् बढ़ी हुई तिथि छः घटी से अल्प हो तो उस दिन व्रत नहीं करना चाहिये।

विवेचन—तिथिह्रास और तिथिवृद्धि होने पर सुखचिन्तामणि व्रत में उपवास निश्चित तिथि को करना चाहिए। तिथि की वृद्धि होने पर एक दिन और उपवास करना पड़ेगा। परन्तु तिथि-वृद्धि में इस बात का सदा खयाल रखना पड़ेगा कि बढ़ी हुई तिथि छः घटी से अधिक होनी चाहिए। छः घटी से अल्प होने पर उस दिन पारणा कर ली जायगी। तिथिह्रास अर्थात् जिस तिथि को व्रत करना है, उसी का ह्रास/क्षय हो तो उस तिथि के पहले वाली तिथि को व्रत करना

होगा; क्योंकि व्रत की तिथि उस दिन सूर्योदय में न भी रहेगी तो भी अल्पकाल में अवश्य आ जायगी। अतएव एक दिन पहले व्रतवाली तिथि के वर्तमान रहने से व्रत एक दिन पूर्व करना होगा। सूर्योदय काल में यदि व्रत की तिथि छः घटी प्रमाण न हो तो भी व्रत एक दिन पहले करना पड़ेगा।

तिथि-ह्रास में व्रत तिथि की व्यवस्था पहले ही बतलायी गयी है। जैनागम में सोदयातिथि वही मानी गयी है, जो उदयकाल में कम से कम छः घटी प्रमाण हो। उदयातिथि के न मिलने पर अस्तकालीन तिथि ग्रहण की जाती है। उदाहरण के लिए यों समझना चाहिए कि किसी व्यक्ति को चतुर्दशी से सुखचिन्तामणि व्रत प्रारम्भ करना है। व्रत प्रारम्भ के दिन चतुर्दशी उदयकाल में ८ घटी १० पल प्रमाण थी, अतः व्रत कर लिया गया। अगली चतुर्दशी बुधवार को ३ घटी १० पल है और मंगलवार को त्रयोदशी ५ घटी १५ पल है। यहां यदि बुधवार को व्रत किया जाता है तो ३ घटी १० पल प्रमाण, जो कि उदयकाल में तिथि का मान है, छः घटी प्रमाण से अल्प है। अतः बुधवार को चतुर्दशी सोदया नहीं कहलायेगी। व्रत के लिए तिथि का सोदया होना आवश्यक है। सोदया न मिलने पर अस्तातिथि ग्राह्य की जाती है। इसलिए चतुर्दशी का व्रत मंगलवार को ही कर लिया जायगा।

तिथि-वृद्धि होने पर दो दिन लगातार व्रत करने की बात आती है। मान लीजिए कि बुधवार को एकादशी ६० घटी ० पल है और गुरुवार को एकादशी ६/४० पल है। इस प्रकार की स्थिति में प्रथम तिथि एकादशी पूर्ण है, अतः बुधवार को व्रत करना होगा। गुरुवार के दिन भी एकादशी का प्रमाण सोदया छः घटी से अधिक है, अतः गुरुवार को भी उपवास करना पड़ेगा। इस प्रकार तिथिवृद्धि में दो दिन लगातार उपवास करना पड़ता है। यदि यहाँ पर गुरुवार के दिन एकादशी ५ घटी ४० पल ही होती, तो सोदया—छः घटी प्रमाण न होने से उपवास के लिए ग्राह्य नहीं थी। अतएव गुरुवार को पारणा की जा सकती है। उपवास का दिन केवल बुधवार ही रहेगा। इस प्रकार तिथिक्षय और तिथिवृद्धि में सुखचिन्तामणि व्रत की व्यवस्था समझनी चाहिए।

अष्टाह्निकादि व्रतों में तिथि-क्षय होने पर पुनः व्यवस्था—

व्रतान्तं व्रतं कथं क्रियतेऽस्योपर्यभ्यदुक्तं च अपभ्रंश दूहा—

अट्ठिमजावय आणिट्टय जाणियह मज्झे तिहि ।
पडणहोइ तहवर आइहय अंतलो वय ।।

व्याख्या—अष्टम्या यावत्पूर्णिमान्तं व्रतं चाष्टाह्निकं जानीहि । अस्य मध्ये तिथिपतनं भवति, तर्हि व्रतस्यादिदिनमारभ्य व्रतान्तमवलोकयेत्यर्थः ।।

अर्थः—यदि व्रत के मध्य में तिथि-ह्रास हो तो व्रत की समाप्ति किस प्रकार करनी चाहिए, इस पर अन्य आचार्यों द्वारा कही गयी गाथा को कहते हैं—

अष्टमी से लेकर पूर्णिमा तक जो व्रत किया जाता है, उसे अष्टाह्निक व्रत कहते हैं । यदि इस व्रत के दिनों में किसी तिथि का ह्रास हो तो व्रत आरम्भ करने के एक दिन पहले से लेकर व्रत की समाप्ति तक व्रत करना चाहिए ।

तथान्यैरप्युक्ता—

वयविहीणं च मज्झे तिहिए पडणं वजाई होइ जई ।
मूलदिणं पारभिय अंते दिवसम्मि होइ सम्मतं ।।

व्याख्या—व्रतविधीनां च मध्ये तिथिपतनं यदि भवेत्, तदा मूलादिने प्रारभ्य अन्त्ये दिवसे च भवति समाप्तमिति केचित् ।

अर्थ—व्रत विधि के मध्य में यदि किसी तिथि का ह्रास हो तो एक दिन पूर्व से व्रत आरम्भ किया जाता है और व्रत की समाप्ति अन्तिम दिन होती है । यही सम्यक्त्व है, ऐसा कुछ आचार्य कहते हैं ।

मास अधिक होने पर सांवत्सरिक क्रिया कैसे करनी चाहिए ?

मासाधिक्ये किं कर्त्तव्यमिति चेत्तदाह—

संवत्सरे यदि भवेन्मासो वै चाधिकस्तदा ।
पूर्वस्मिन्न व्रतं कार्यं त्वपरस्मिन् कृतं शुभम् ।।

अर्थ—अधिकमास होने पर व्रत कब करना चाहिए ? आचार्य कहते हैं कि

यदि वर्ष में एक मास अधिक हो तो पहले वाले मास में व्रत नहीं करना चाहिए, किन्तु आगे वाले मास में व्रत करना चाहिए ।

विवेचन--सौर और चान्द्रमास में अन्तर रहने के कारण दो वर्ष छोड़कर तीसरे वर्ष में एक मास की वृद्धि हो जाती है, जो अधिकमास कहलाता है । इसका नाम शास्त्रकारों ने मलमास भी रखा है । यह अधिकमास चैत्र से लेकर आश्विन तक पड़ता है अर्थात् चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद और आश्विन ये ही महिने वृद्धि को प्राप्त होते हैं । इसका प्रधान कारण यह है कि सूर्य मन्द गति से गमन करता है और चन्द्रमा तेज गति से । इसलिए प्रति महिने मे अधिशेष की वृद्धि होती जाती है । जब दो महिनों में एक संक्रान्ति पड़ती है, तब अधिकमास आता है । बात यह है कि व्यवहार में चन्द्रमास लिए जाते हैं । प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमान्त चान्द्रमास की गणना होती है । सौरमास संक्रान्ति से लेकर संक्रान्ति तक होता है, यह पूरे ३० दिन का होता है । चन्द्रमास २९ दिन के लगभग होता है तथा जिस दिन चन्द्रमास आरम्भ होता है, उस दिन सौरमास नहीं । सौरमास सदा चान्द्रमास से आगे पीछे आरम्भ होता है, इसी कारण तीन वर्षों में एक महीने की वृद्धि हो जाती है ।

अधिकमास का आनयन गणित से निम्नप्रकार किया जाता है । दिनादि और अवम का योग करके दस गुणित कर वर्षगण में जोड़कर तीस का भाग देने पर उत्तर में अधिकमास संख्या होती है ।

सावन दिन और चान्द्र दिन का अन्तर अवम होता है । इसलिए सावन दिन और अवम के योग से चान्द्र दिन सिद्ध होते हैं ।

एक वर्ष में सावन दिन = ३६५/१५/३०/२२/३०
अवम दिन = ५/४८/२२/७/३०
एक वर्ष में चान्द्र दिन = ३७१/३/५२/३०
" सौर दिन = ३६०/०/०/०
= ११/३/५२/३०

एक वर्ष में इतने दिनादि बढ़ जाते हैं ।

इसका नाम वार्षिक अधिकमास या शुद्धि है। क्योंकि सौर और चान्द्र दिनों के अन्तर में अधिकमास होता है । अथवा अनुपात करने पर कल्पवर्षों में कल्पाधिकमास तो एक वर्ष में कितने ? से भी उपर्युक्त वार्षिक अधिकमास आ जाता है।

सावन दिन घटी आदि = ०/१५/३०/२२/३०

अवम दिन घटी आदि = ०/४८/२२/७ /३०

अधिशेष =११/३/५२/० दिनादि+क्षयाहादि अथवा अनुपात किया एक वर्ष में ११/३/५२/३० अधिकमास आता है तो गत वर्षों में कितने ? यहां सुविधा के लिए गुणक के दो खण्ड कर दिये—एक १० का और दूसरा पूर्वसाधित १/३/५२/३० का। इस प्रकार दिनादि और अवमादि के योग में दस गुणित वर्षसंख्या जोड़ने पर अधिक दिन आये, इनमें तीस का भाग देने पर अधिकमास होता है।

अतः $\frac{\text{दिनादि + क्षयादि + १० × वर्षगण}}{\text{३०}}$ = अधिकमास। यहां शकाब्द के अनुसार गणित कर कुछ अधिक मासों की सूची दी जा रही है—

शकाब्द	विक्रम सं.	अधिकमास	शकाब्द	विक्रम सं.	अधिकमास
१८७२	२००७	आषाढ़	१९२९	२०६४	ज्येष्ठ
१८७५	२०१०	वैशाख	१९३२	२०६७	वैशाख
१८७७	२०१२	भाद्रपद	१९३४	२०६९	आश्विन
१८८०	२०१५	श्रावण	१९३७	२०७२	आषाढ़
१८८३	२०१८	ज्येष्ठ	१९४०	२०७५	ज्येष्ठ
१८८५	२०२०	आश्विन	१९४२	२०७७	आश्विन
१८८६	२०२१	चैत्र	१९४५	२०८०	श्रावण
१८८८	२०२३	श्रावण	१९४८	२०८३	ज्येष्ठ
१८९१	२०२६	आषाढ़	१९५१	२०८६	चैत्र
१८९४	२०२९	वैशाख	१९५३	२०८८	आश्विन

शकाब्द	विक्रम सं.	अधिकमास	शकाब्द	विक्रम सं.	अधिकमास
१८९६	२०३१	आश्विन	१९५६	२०९१	आषाढ़
१८९९	२०३४	श्रावण	१९५९	२०९४	ज्येष्ठ
१९०२	२०३७	ज्येष्ठ	१९६१	२०९६	आश्विन
१९०४	२०३९	आश्विन	१९६४	२०९९	श्रावण
१९०७	२०४२	श्रावण	१९६७	२१०२	ज्येष्ठ
१९१०	२०४५	ज्येष्ठ	१९७०	२१०५	चैत्र
१९१३	२०४८	वैशाख	१९७२	२१०७	आश्विन
१९१५	२०५०	आश्विन	१९७५	२११०	आषाढ़
१९१८	२०५३	आषाढ़	१९७८	२११३	वैशाख
१९२१	२०५६	ज्येष्ठ	१९८१	२११६	आश्विन
१९२३	२०५८	आश्विन	१९८३	२११९	श्रावण
१९२६	२०६१	श्रावण	१९८६	२१२२	ज्येष्ठ
१९८९	२११५	चैत्र	१९९१	२१२७	श्रावण

इस प्रकार अधिकमास का परिज्ञान कर जिस मास की वृद्धि हो उसके अगले वाले मास में व्रत करना चाहिए। जैसे श्रावण मास अधिकमास है तो दो श्रावणों में से पहले श्रावण मास में व्रत नहीं किया जायगा, किन्तु दूसरे श्रावण में व्रत करना पड़ेगा।

मास-क्षय होने पर व्रत के लिए व्यवस्था–

मासहानौ किं कर्त्तव्यमिति चेत्तदाह–

संवत्सरे यदि भवेन्मासो वै हीयमानकः।
पूर्वस्मिश्च व्रतं कार्यं परस्मिन्न तु योग्यता ॥

अर्थः—मासहानि में क्या करना चाहिए? उत्तर देते हैं कि संवत्सर में यदि मासहानि हो तो पूर्व के महिने में व्रत करना चाहिए, आगे वाले महिने में नहीं। व्रत की योग्यता पूर्वमास में ही होती है, उत्तरमास में नहीं।

विवेचन–जैसे अधिकमास होता है, वैसे ही क्षयमास भी होता है। कभी-

कभी वर्ष में एक मास की हानि हो जाती है । स्पष्ट मान में जिस समय चान्द्रमास के प्रमाण से सौरमास का मान कम होता है, तब एक चान्द्रमास में दो संक्रान्तियों के सम्भव होने से क्षयमास होता है । वह सौरमास अल्प, तभी संभव है जब स्पष्ट रवि की गति अधिक हो । क्योंकि अधिक गति होने पर थोड़े सयम में राशिभोग होता है । क्षयमास प्रायः कार्तिक, मार्गशीर्ष और पौष में ही होता है । क्षयमास जिस वर्ष में होता हैं, उस वर्ष में अधिकमास भी होता है । मान लिया कि भाद्रपद अधिक-मास है, उस समय अधिशेष बहुत कम रहता है और क्रमशः घटता भी है, क्योंकि सूर्य अपने नीच के आसन्न है । अधिशेष जब घटते-घटते शून्य हो जाता है, तब क्षयमास होता है । कारण स्पष्ट है कि चान्द्रमास से रविवास कम होता है । क्षयमास के अनन्तर अधिकमास शेष एक चान्द्र मास के आसन्न पहुंच जाता है । इसके पश्चात् जब सूर्य पुनः अपने उच्च के आसन्न पहुंच जाता है । तब सौरमास के अल्प होने के कारण पुनः अधिकमास हो जाता है । इस प्रकार क्षयमास होने पर दो अधिकमास होते हैं । यदि पहला अधिकमास भाद्रपद को मान लिया जाय तो दूसरा अधिकमास चैत्र में पड़ेगा । तथा अगहन में क्षयमास होगा । क्षयमास १४१ वर्ष के अनन्तर आता है । पिछला क्षयमास वि. सं. १९३६ में पड़ा था अब अगला वि. सं. २०२० में कार्तिक में पड़ेगा । कभी-कभी क्षयमास १९ वर्षों के बाद भी पड़ता है । यदि समय पर क्षयसास पड़ा तो ४३३ वर्षों के पश्चात् भी आता है ।

यह नियम है कि जिस वर्ष क्षयमास पड़ेगा, उस वर्ष दो अधिकमास अवश्य होंगे । क्षयमास पड़ने पर व्रत पिछले महीने से किया जाता है । मान लिया कि कार्तिक क्षयमास है । एकावली व्रत करने वाले को कार्तिक के व्रत आश्विन में ही कर लेने होंगे अथवा नक्षत्र आदि व्रत जो मासिक व्रत हैं, वे कार्तिक का अभाव होने पर आश्विन में किये जाएंगे । यह पहले ही लिखा जा चुका है कि जिस वर्ष क्षयमास होता है, उस वर्ष अधिकमास पहले अवश्य पड़ता है और यह अधिकमास भी नीचासन्न सूर्य के होने पर अर्थात् भाद्रपद या आश्विन में आएगा । इस प्रकार एक महिने के बढ़ जाने से तथा एक महिना घट जाने से कोई विशेष गड़बड़ी नहीं होती है । व्रत के लिए बारह मास प्राप्त हो जाते हैं । परन्तु विचारणीय बात यह है कि अधिकमास पड़ने पर भी व्रत के लिए तो एक ही मास ग्राह्य है। दूसरा मास तो मलमास होने

के कारण त्याज्य है। अत एव क्षयमास होने पर मासिक व्रत करने वालों का एक महिने में दुगुने व्रत करने पड़ेंगे।

दुगुने व्रत करने के लिए क्षयमास के पहिले का महिना ही लिया जाएगा। क्षयमास से आगे का महिना नहीं। जिन व्यक्तियों को मासिक व्रत प्रारम्भ करना है, उन्हें क्षयमास के पूर्ववर्ती महिने से व्रत प्रारम्भ करने चाहिए।

तिथि का प्रमाण

तिथि प्रमाणं कियदित्युक्ते चाह-चतुःपञ्चाशत्घटीभ्यो न्यूना तिथिर्न भवति, अधिका तु सप्तषष्टि घटीप्रमाणं कथितम्। यतः जैनानां त्रिमुहूर्त्तोदय वर्त्तिनी तिथिः सम्मता, अधिकतिथेः प्रमाणं तु सप्तषष्टिघटी, अहोरात्रप्रमाणं षाष्टिघटी मतमतः सप्तघटिकाभ्योऽधिका पारणादिने पारणा न कर्त्तव्या, यदा तु चतुःपञ्च घटिकाप्रमाणं अपरदिने तिथिः तदा तस्मिन्नेव दिने पारणा कार्या, नान्यत्र।

अर्थ—तिथि का प्रमाण कितना होता है ? इस प्रकार का प्रश्न करने पर आचार्य उत्तर देते हैं—प्रत्येक तिथि ५४ घटी से कम और ६० से अधिक नहीं होती है। जैनाचार्यों ने उदयकाल में छः घटी प्रमाण तिथि का मान व्रत के लिए ग्राह्य बताया है। तिथि का अधिकतम मान ६० घटी होता है। अहोरात्र का प्रमाण ६० घटी माना जाता है, अतः पहले दिन कोई भी तिथि ६७ घटी से अधिक नहीं हो सकती। अगले दिन वृद्धि होने पर व्रततिथि अधिक से अधिक ७ घटी प्रमाण रहेगी। ऐसी अवस्था में उस दिन व्रत की पारणा नहीं की जाएगी, किन्तु उस दिन भी व्रत रखना होगा। यदि वृद्धिगत तिथि छः घटी से अल्पप्रमाण है तो उस दिन पारणा की जायगी, अन्य दिन नहीं।

विवेचन—गणित के अनुसार तिथि का प्रमाण अधिक से अधिक ६७ घटी और कम से कम ५४ घटी आता है। ५४ घटी प्रमाण से अल्पघटी प्रमाणवाली तिथि का ह्रास या क्षय माना जाता है। यद्यपि सूर्योदय काल में कम तिथियां ही ५४ घटी या इससे अधिक मिलेंगी; क्योंकि एक तिथि की समाप्ति होने पर दूसरी तिथि का आरम्भ हो जाता है। वास्तविक बात यह है कि प्रत्येक तिथि का मान गणित से ६० घटी नही आता है, जिससे सूर्योदय से लेकर सूर्योदयकाल तक एक ही तिथि रह सके। कभी-कभी ऐसा भी देखा जाता है कि मध्यम मतानुसार

एक ही दिन में तीन तिथियां भी रह जाती हैं तथा कभी दो दिन तक भी एक ही तिथि रह सकती है । आचार्य ने ऊपर इसी तिथि-व्यवस्था को बतलाया है ।

व्रततिथि–निर्णय के सम्बन्ध ये शंका–समाधान—

अत्र संशयं करोति "पद्मदेवैः प्रायो धर्मेषु कर्मसु" इत्यत्र प्राय इत्यव्ययं कथितम्, तस्य कोऽर्थः, उच्यते देशकालादिभेदात् तिथिमानं ग्राह्यम् ।

अर्थ—यहां कोई शंका करता है कि पद्मदेव ने तिथि का मान छः घटी बतलाते हुए कहा है कि प्रायः धर्मकृत्यों में इसी तिथिमान को ग्रहण करना चाहिए । यहां प्रायः शब्द अव्यय है, इसका क्या अर्थ है ? क्या छः घटी से हीनाधिक प्रमाण भी व्रत के लिए ग्रहण किया गया है ? आचार्य उत्तर देते हैं—देश-काल आदि के भेद से तिथिमान ग्रहण करना चाहिए, इस बात को दिखलाने के लिए यहां प्रायः शब्द ग्रहण किया है ।

विवेचन—तिथि का मान प्रत्येक स्थान में भिन्न-भिन्न होता है । अक्षांश और देशान्तर के भेद से प्रत्येक स्थान में तिथि का प्रमाण पृथक्-पृथक् होगा । पञ्चांग में जो तिथि के घटी, पल, विपल आदि लिखे रहते हैं, वे जिस स्थान का पञ्चांग होता है, वहां के होते हैं । अपने यहां के घटी, पल निकालने के लिए देशान्तर-संस्कार करना पड़ता है । इसका नियम यह है कि पञ्चांग जिस स्थान का हो उस स्थान के रेखांश के साथ अपने स्थान के रेखांश का अन्तर कर लेना चाहिए । अंशात्मक जो अन्तर हो उसे चार से गुणा करने पर मिनट, सैकण्ड रूप काल आता है इसका घट्यात्मक काल निकालकर पञ्चांग के घटी, पलों में संस्कार कर देने से स्थानीय तिथि काल निकाल-कर पञ्चांग के घटी, पलों में संस्कार कर देने से स्थानीय तिथि के घटी, पल निकल आते हैं । संस्कार करने का नियम यह है कि पञ्चांगस्थान का रेखांश अधिक हो और अपने स्थान का रेखांश कम हो तो ऋणसंस्कार, और अपने स्थान का रेखांश अधिक तथा पञ्चांगस्थान का रेखांश कम हो तो धनसंस्कार करना चाहिए । उदाहरण—विश्वपञ्चांग में बुधवार को अष्टमी का प्रमाण १० घटी १५ पल दिया है । हमें देखना यह है कि आरा में बुधवार को अष्टमी तिथि कितनी है ?

बनारस–पञ्चांग निर्माण का स्थान, का रेखांश ८३/० है और अपने स्थान

आरा का रेखांश ८४/४० है। इन दोनों का अन्तर किया (८४/४०)−(८३/०) =०/४०। इसको ४ से गुणा किया १/४०×४=६/४० मिनट, सैकण्ड आदि। ६ मिनट और ४० सैकण्ड के १६ पल ४० विपल हुए। आरा के रेखांश से पञ्चांग स्थान बनारस का रेखांश कम है, अतः वहां के तिथ्यादि मान में धन-संस्कार करना चाहिए। अतः (१०/१५)+(०/१६/४०)=१०/३१/४० अर्थात् आरा में बुधवार को अष्टमी १० घटी ३१ पल ४० विपल हुई। यदि यही तिथि मान आगरा में निकालना है तो—

आगरा का रेखांश ७८/१५ और बनारस का रेखांश ८३/० है, दोनों का अन्तर किया (८३/०)—(७८/१५)=४/४५, ४/४५×४=१९/०मिनट इसके घट्यादि बनाये। ०/४७/३० हुए। इष्ट स्थान का रेखांश पंचांग के रेखांश से अल्प है, अतः पंचांग के घटी, पलों में ऋण संस्कार किया। (१०/१५)−(०/४७/३०) =९/२७/३०; आगरा में बुधवार को अष्टमी तिथि का प्रमाण ९ घटी, २७ पल, ३० विपल हुआ। कलकत्ता में अष्टमी का प्रमाण—

कलकत्ता का रेखांश ८८/२४—बनारस का रेखांश ८३/०=५/२४, ५/२४ ×४=२१/३६ इसका घट्यात्मक मान ५३/५० हुआ। इसको बनारस के घटी, पलों में जोड़ा—

  १०/१५
+०/५३/५०
―――――――
 ११/८/५० तिथि का मान कलकत्ता में हुआ।

अपने स्थान के तिथिमान को निकालने के लिए नीचे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध नगरों के रेखांश दिये जा रहे है। जिससे कोई भी व्यक्ति किसी भी स्थान के पञ्चांग से अपने तिथिमान को निकाल सकता है।

रेखांश-बोधक सारणी

क्र. सं.	नाम नगर	प्रान्त	रेखांश-देशांश
१	अजमेर	राजपूताना	७४.४२
२	अमरावती	बरार	७७.४७
३	अम्बाला	पंजाब	७६.५२
४	अमरोहा	यू.पी.	७८.३१
५	अमृतसर	पंजाब	७४.४८
६	अयोध्या	यू.पी.	८२.१६
७	अलवर	राजपूताना	७६.३८
८	अलीगढ़	यू.पी.	७८.६
९	अहमदाबाद	बम्बई	७२.४०
१०	आगरा	यू.पी.	७८.१५
११	आरा	बिहार	८४.४०
१२	आसाम	आसाम	९३.०
१३	इटारसी	सी.पी.	७०.५१
१४	इन्दौर	मध्य भारत	७५.५०
१५	इलाहाबाद	यू.पी.	८१.५०
१६	उज्जैन	ग्वालियर स्टेट	७५.४३
१७	उदयपुर	राजपूताना	७३.४३
१८	कटनी	सी.पी.	८०.२७
१९	काठियावाड़	गुजरात	७१.०
२०	कर्णाटक	दक्षिण भारत	७८.०
२१	कराँची	सिन्ध	६७.४
२२	कल्याण	बम्बई	७३.१०
२३	कलकत्ता	बंगाल	८८.२४
२४	काञ्जीवरम्	मद्रास	७९.४५
२५	कानपुर	यू.पी.	८०.२४

क्र. सं.	नाम नगर	प्रान्त	रेखांश-देशांश
२६	कारकल	मद्रास	७६.४०
२७	कालीकट	मद्रास	७५.५६
२८	किशनगढ़	जैसलमेर	७०.४७
२९	किशनगढ़	राजपूताना	७४.५५
३०	कोटा	राजपूताना	७५.५२
३१	कोलूर	मद्रास	७४.५३
३२	कोल्हापुर	,,	७४.१६
३३	खण्डवा	सी.पी.	७६.२३
३४	खुरजा	यू.पी.	७७५०
३५	गया	बिहार	८५.०
३६	ग्वालियर	ग्वालियर	७८.१०
३७	गाजियाबाद	यू.पी.	७७.२८
३८	गाजीपुर	,,	८३.३५
३९	गुजरात	गुजरात	७२.३०
४०	गुजरानवाला	पंजाब	७४.१४
४१	गोरखपुर	यू पी.	८३.२४
४२	गोहाटी	आसाम	९१.४७
४३	चटगाँव	बंगाल	९२.५३
४४	चिदम्बरम्	मद्रास	७९.४४
४५	चुनार	यू.पी.	८२.५६
४६	छपरा	बिहार	८४.४७
४७	छोटा नागपुर	,,	८५.०
४८	जब्बलपुर	सी०पी०	७९.५९
४९	जयपुर	राजपूताना	७५.५२
५०	जैसलमेर	,,	७०.५७
५१	जोधपुर	,,	७३.४
५२	जौनपुर	यू.पी.	८२.४४

क्र. सं.	नाम नगर	प्रान्त	रेखांश-देशांश
५३	झालरापाटन	राजपूताना	७६.१२
५४	झाँसी	यू.पी.	७८.३७
५५	टौंक	राजपूताना	७५.५०
५६	ट्रावंकोर	मद्रास	७७.०
५७	डालटेनगंज	बिहार	८४.१०
५८	डेराइस्माइलखाँ	पंजाब	७०.५२
५९	डेरागाजीखाँ	,,	७०.५२
६०	ढ़ाका	बंगाल	९०.२६
६१	तिरूपति	मद्रास	७९.२०
६२	त्रिचनापल्ली	,,	७८.४६
६३	तंजौर	,,	७९.१०
६४	देहली	देहली	७७.१२
६५	देहरादून	यू.पी.	७८.५
६६	दौलताबाद	हैदराबाद	७५.१५
६७	धौलपुर	राजपूताना	७७.५३
६८	नागपुर	सी.पी.	७९.९
६९	नासिक	बम्बई	७३.५०
७०	पटना	बिहार	८५.१३
७१	पानीपत	पंजाब	७७.१
७२	पूना	बम्बई	७२.५५
७३	प्रतापगढ़	राजपूताना	७४.४०
७४	फतेहपुर	,,	७५.२
७५	फतेहपुर	यू.पी.	७७.४२
७६	फरूखाबाद	,,	७९.३७
७७	फलटन	बम्बई	७४.२९
७८	फिरोजपुर	पंजाब	७४.४०
७९	फैजाबाद	यू.पी.	८२.१२

क्र. सं.	नाम नगर	प्रान्त	रेखांश देशांश
८०	बड़ौच	बम्बई	७३.०
८१	बड़ौदा	,,	७३ ३०
८२	बद्रीनाथ	यू.पी.	७९.३२
८३	बनारस	,,	८३.०
८४	बम्बई	बम्बई	७२.५४
८५	वर्धा	सी.पी.	७८.३९
८६	बरार	,,	७७.०
८७	बरेली	यू पी.	७९.३०
८८	बलिया	,,	८४.११
८९	बस्ती	,,	८२.४६
९०	बहराईच	,,	८१ ३८
९१	बिमलीपट्टम	मद्रास	८३.३०
९२	बिलासपुर	सी.पी.	८२.१३
९३	बीकानेर	राजपूताना	७३.२
९४	बुंदेलखंड	सी.पी,	८०.०
९५	बून्दी	राजपूताना	७५.४१
९६	बेंगलोर	मैसूर	७७.३८
९७	भरतपुर	राजपूताना	७७ ३०
९८	भागलपुर	बिहार	८७.२
९९	भावनगर	बम्बई	७२.११
१००	भुसावल	,,	७५.४७
१०१	भेलसा	ग्वालियर	७७.५१
१०२	भोपाल	सी. पी.	७७.३६
१०३	मथुरा	यू. पी.	७७.४४
१०४	मद्रास	मद्रास	८०.१७
१०५	मनिपुर	आसाम	८५.३०
१०६	मदुरा	मद्रास	७८.१०

क्र. सं.	नाम नगर	प्रान्त	रेखांश-देशांश
१०७	महोवा	यू. पी.	७९.५५
१०८	मालवा	मध्यभारत	७५.३०
१०९	मिरजापुर	यू. पी.	८२.२
११०	मुजफ्फरनगर	,,	७७.४४
१११	मुजफ्फरपुर	बिहार	८५.२७
११२	मुर्शिदाबाद	बंगाल	८८.१९
११३	मुरादाबाद	यू. पी.	७८.४९
११४	मुरार	ग्वालियर	७८.११
११५	मुल्तान	पंजाब	७१.३१
११६	मेरठ	यू. पी.	७७.४१
११७	मैंगलूर	मद्रास	७४.५३
११८	मैनपुरी	यू. पी.	७९.३
११९	मैसूर	मैसूर	७६.४२
१२०	रतलाम	मध्यभारत	७५.७
१२१	राजकोट	बम्बई	७०.५९
१२२	राजनांदगांव	सी. पी.	८१.५
१२३	रायगढ़	,,	८३.२६
१२४	रायपुर	,,	८१.४१
१२५	रावलपिण्डी	पंजाब	७३.६
१२६	रांची	बिहार	८५.२३
१२७	रुड़की	यू. पी.	७७.५३
१२८	रुहेलखण्ड	,,	७९.०
१२९	लखनऊ	,,	८०.५९
१३०	ललितपुर	यू. पी.	७८.२८
१३१	लश्कर	ग्वालियर	७८.१०
१३२	लाहौर	पंजाब	७४.२६
१३३	लुधियाना	,,	७५.५४

क्र सं	नाम नगर	प्रान्त	रेखांश-देशांश
१३४	विजयापट्टम	मद्रास	७३.२०
१३५	विजयनगर	,,	७६.३०
१३६	ब्यावर	मारवाड़	७४.२१
१३७	शाहजहांपुर	यू. पी.	७६.२७
१३८	शिमला	पंजाब	७७.१३
१३६	शिवपुरी	ग्वालियर	७७.४४
१४०	श्रीनगर	कश्मीर	७४.५१
१४१	सतारा	बम्बई	७४.१
१४२	सहारनपुर	यू. पी.	७७.२३
१४३	सागर	सी. पी.	७८.५०
१४४	सांगली	बम्बई	७४.३६
१४५	सिरोही	राजपूताना	७२.५४
१४६	सिलहट	आसाम	६१.५४
१४७	सिलीगुड़ी	बंगाल	८८.२५
१४८	सिवनी	सी. पी.	७६.३५
१४६	सूरत	बम्बई	७२.५२
१५०	सोलापुर	बम्बई	७५.५६
१५१	हुब्बली	,,	७२.१२
१५२	हैदराबाद	दक्षिण भारत	७८.३०
१५३	होशंगाबाद	सी. पी.	७०.४५

व्रततिथि की व्यवस्था—

अवाप्य यामस्तमुपैति सूर्यस्तिथिं मुहूर्त त्रयवाहिनीं च ।
धर्मेषु कार्येषु वदन्ति पूर्णां तिथिं व्रतज्ञानधरा मुनीशाः ।।

व्याख्या:—यां तिथिम् अवाप्य प्राप्य सूर्योऽस्तं याति, अस्तमुपगच्छति । कथम्भूतां तिथिं प्रातर्मुहूर्तत्रयव्यापिनीम्; चकारात् मूलसंघरताः व्रतज्ञानधरा मुनी-

श्वराः उदयव्यापिनीमपि तिथि गृह्णन्ति । यथा पूर्वमुदयकालव्यापिनी तिथिर्ग्रहिता, चकारात् अस्तकालव्यापिन्याः तिथेरपि ग्रहणं भविष्यति तथैवात्रापि अवधेयम् । तां पूर्वोक्तां तिथिम् अखिलेषु धर्मेषु कार्येषु गौतमादिगणेश्वराः पूर्णां वदन्ति ।।

अर्थ:—प्रातः काल में तीन मुहूर्त रहने वाली जिस तिथि को प्राप्त कर सूर्य अस्त होता है, धर्मादि कार्यों में वह तिथि पूर्ण मानी जाती है; इस प्रकार का कथन व्रत धारण करने वाले मुनीश्वरों का है । इस श्लोक में 'च' शब्द आया है, जिसका अर्थ है कि सूर्योदय के पूर्व तीन मुहूर्त रहने वाली तिथि भी नैशिक व्रतों के लिए ग्राह्य है । तात्पर्य यह है कि इस श्लोक के अनुसार व्रत तिथि का ज्ञान दोनों प्रकार से ग्रहण किया गया है—उदय और अस्तकाल में रहने वाली तिथि के अनुसार । उदयकाल के उपरान्त कम-से-कम तीन मुहूर्त ५घटी ३६ पल प्रमाण विधेय तिथि के रहने पर ग्राह्य माना जाता है । इसी प्रकार व्रत वाली तिथि के सूर्योदय के पहले तक रहने पर भी नैशिक व्रतों के लिए तिथि ग्राह्य मान ली गयी है ।

विवेचन:—व्रत ग्रहण और व्रतोद्यापन के लिए इस श्लोक में तिथि का विधान किया गया है । यद्यपि सामान्यतः व्रत २ लिए कितनी तिथि ग्रहण होती है ? इसका विचार पहले खूब किया जा चुका है । इस समय व्रत ग्रहण और उद्यापन के के लिए कितनी तिथि ग्रहण करनी चाहिए । आचार्य विधान बतलाते हैं—व्रत ग्रहण और व्रतोद्यापन के लिए देवासिक और नैशिक व्रतों के निमित्त पृथक्-पृथक् तिथि का विधान बतलाते हैं । प्रथम नियम तो यह है कि सूर्योदय काल के उपरान्त ढाई घंटे तक व्रत की विधेयतिथि हो तो व्रत का प्रारम्भ और उद्यापन करना चाहिए । किन्तु यह नियम दैवसिक व्रतों के लिए ही है, नैशिक व्रतों के लिए नहीं । नैशिक व्रतों का नियम यह है कि सूर्योदय के पूर्व जो तिथि ढाई घण्टे रही हो, वही ग्राह्य हो सकती है । उदाहरण भाद्रपद शुक्ला पञ्चमी बुधवार को प्रातःकाल १०/१५ घट्यादि है और भाद्रपद चतुर्थी मंगलवार को १८/१० घट्यादि है । अब विचारणीय यह है कि दैवसिक व्रतों के लिए किस दिन पञ्चमी मानी जायगी और नैशिक व्रतों के लिए किस दिन ? बुधवार को १०/१५ घट्यादि मान पञ्चमी का है, इस दिन सूर्य पञ्चमी के इस मानके साथ अस्त होता है अतः दैवसिक व्रतों के लिए बुधवार की ही पञ्चम ग्राह्य होगी ।

नैशिक व्रतों के लिए मंगलवार की पञ्चमी ग्राह्य नहीं हो सकती है। क्योंकि मंगलवार को उदय के पूर्व पञ्चमी नहीं रहती है; किन्तु सोमवार को उदय के पश्चात् और मंगलवार को उदय के पूर्व ही पञ्चमी रहती है। अतः नैशिक व्रतों के लिए पञ्चमी सोमवार को ग्रहण की जायगी। मूलसंघ के आचार्यों ने उदय में रहने वाली छः घटी प्रमाण या इससे अधिक तिथि को दैवसिक और नैशिक दोनों ही प्रकार के व्रतों के लिए ग्राह्य मान लिया है। इस प्रकार से एक ही प्रकार का तिथि मान स्वीकार कर लेने से पूर्वापर विरोध नहीं आता है तथा तिथि भी व्रत के लिए सब प्रकार से ग्राह्य मान ली जाती है।

तथा चोक्तं षष्ठांशोपरि कर्णामृतपुराणे सप्तमस्कन्धे —

> **"यथोक्तविधिना तिथ्युदये व्रतविधिं चरेत्"**
> **अखण्डव्रतिमार्त्तण्डः चाखण्डा तिथिर्भवेत्।**
> **व्रतप्रारम्भणं तस्यामनस्तगुरुशुक्रयुत्॥**

अर्थः—कर्णामृतपुराण के सप्तम स्कन्ध में भी कहा गया है कि षष्ठांश मात्र तिथि का प्रमाण व्रत के लिए मानना चाहिए। व्रत की तिथि के दिन कही हुई व्रत विधि के अनुसार व्रत का आचरण करना चाहिए।

जिस दिन सूर्योदय काल में तिथि षष्ठांश मात्र हो अथवा समस्त दिन तिथि रहे, उस दिन वह तिथि अखण्डा/सकला कहलाती है। इस सकला तिथि को गुरू और शुक्र के उदय रहते हुए व्रत को ग्रहण करने की क्रिया करनी चाहिए। तात्पर्य यह है कि व्रत ग्रहण करने और उद्यापन करने के समय गुरू और शुक्र का अस्त रहना उचित नहीं है। इन दोनों ग्रहों के उदित रहने पर ही व्रतों का ग्रहण और उद्यापन किया जाता है।

विवेचन:—अपनी-अपनी गति से चलने वाले ग्रह सूर्य के निकट पहुंचते है, तो लोगों को दृष्टि से ओझल हो जाते हैं, इसी का नाम ग्रहों का अस्त होना कहलाता हैं। जब वे ही ग्रह अपनी-अपनी गति से चलते हुए सूर्य से दूर निकल जाते है, तो लोगों को दिखलायी पड़ने लगते हैं और न अस्त केवल सूर्य के प्रकाश से आच्छादित हो जाते हैं तथा सूर्य से आगे पीछे होने पर दृश्य होते हैं।

मंगल, गुरु और शनि सूर्य से अल्प गतिवाले हैं, अतः अस्त होने पर सूर्य ही इनसे आगे निकल जाता है। बुध सूर्य से तेज गति वाला है, अतः यह अस्त होने पर सूर्य से आगे निकल जाता है। यद्यपि मध्यम रवि, शुक्र और बुध तुल्य ही होते हैं। फिर भी स्पष्ट रवि और स्पष्ट बुध शीघ्र फलान्तर के तुल्य आगे-पीछे रहते हैं। जब दोनों एकत्रित हो जाते हैं, तो बुध अस्त माना जाता है। बुध के पूर्व दिशा में अस्त होने के बाद ३२ दिन में पश्चिम में उदय, पश्चिमोदय से ३२ दिन में वक्री, वक्र होने से ३ दिन में पश्चिम में अस्त, अस्त से १६ दिन में पूर्व दिशा में उदय, उदय से ३ दिन में मार्ग, मार्ग से ३२ दिन में पूर्व में ही अस्त होता है। शुक्र का पूर्वास्त से २ मास में पश्चिमोदय, उसके बाद ८ मास में वक्र, वक्र से २२/३० दिन में पश्चिम में अस्त, अस्त से साढे सात दिन में पूर्व दिशा में उदय, उदय से पौन-मास में मार्ग, मार्ग से ८ महिने में फिर पूर्व में अस्त होता है।

मंगल का अस्त के बाद ४ मास में उदय, उदय से १० मास में वक्र, वक्र से २ मास में मार्ग, मार्ग से १० मास में फिर अस्त होता है। बृहस्पति का अस्त से १ मास में उदय, उदय से सवा चार मास में वक्र, वक्र से ४ मास में मार्ग, मार्ग से सवा चार मास में अस्त होता है। शनि के अस्त से सवा मास में उदय, उदय से साढ़े तीन मास में वक्र, वक्र से साढ़े चार, मास में मार्ग, मार्ग से साढ़े तीन मास में फिर अस्त होता है। इस प्रकार उदय-अस्त की परिपाटी चलती रहती है। आचार्य ने बताया है कि शुक्र और गुरू के अस्त होने पर उद्यापन और व्रत ग्रहण करना वर्ज्य हैं। दशलक्षण, षोडशकारण, रत्नत्रय, मेरूपंक्ति, एकावली, द्विकावली, मुक्तावली आदि व्रतों के ग्रहण करने के लिए यह आवश्यक है कि गुरू और शुक्र उदित अवस्था में रहें। इनके अस्त रहने पर शुभ-कृत्य करना वर्जित है।

गुरू और शुक्र के अस्त होने पर प्रतिष्ठा, मन्दिर-निर्माण, विधान, विवाह, यज्ञोपवीत आदि कार्य भी नहीं किये जाते हैं। गणित से शुक्रास्त और गुरू अस्त का प्रमाण केन्द्रांश बनाकर निकाला जाता है। इन दोनों ग्रहों के अस्त होने पर शुभ कृत्य वर्ज्य माने गये हैं। आरम्भसिद्धिसूरी नामक ग्रन्थ में उदयप्रभसूरी ने शुक्र और गुरु के उदय होने पर भी उनका बाल्यकाल माना है। इस बाल्यकाल में भी शुभ कृत्यों के करने का निषेध किया गया है। अस्त होने के पूर्व इनको वृद्धावस्था का काल भी

माना गया है, जिस काल में सभी कृत्य करना वर्ज्य माना है। "गुरुशुक्रयोरुभयोरपि दिशोरूदयेऽस्ते च बाल्यं वार्धक्यं च सप्ताहमेवाहुः। अनयोः बाल्ये वार्धक्ये च सति शुभकार्यं न करणीयम्।" अर्थात् उदय हो जाने पर भी गुरू और शुक्र का बाल्यकाल एक सप्ताह माना गया है। इस काल में शुभ कृत्य करने का निषेध किया गया है।

कुछ आचार्यों ने शुक्र का पूर्व दिशा में पांच दिन तक वार्धक्य काल (जीर्णः शुक्रोऽहनि पञ्च प्रतीच्यां प्राच्यां बालस्त्रीज्यहानीह हेयः। त्रिहनान्येवं तानि दिग्वैपरीत्ये, पक्षं जीवोऽन्ये तु सप्ताहमाहुः।—आरम्मासि. पृ. २००) माना है तथा तीन दिन बाल्यकाल स्वीकार किया है। ये दोनों ही काल शुभ कार्यों के लिए त्याज्य हैं। कुछ लोग कहते हैं कि पूर्व में उदय होने पर शुक्र का बाल्यकाल तीन दिन और पश्चिम में उदय होने पर नौ दिन बाल्यकाल रहता है। पूर्व में शुक्र अस्त होने पर पन्द्रह दिन वार्धक्य काल और पश्चिम में अस्त होने पर पांच दिन वार्धक्यकाल होता है। गुरू का भी तीन दिन बाल्यकाल और पांच दिन वार्धक्य काल होता है। बाल्य और वार्धक्य काल में शुभ कृत्यों का करना त्याज्य माना है।

ज्योतिष में प्रत्येक शुभकार्य के लिए शुक्र और गुरु का बल, चन्द्रशुद्धि और सूर्यशुद्धि ग्रहण की जाती है। इन ग्रहों के बल के बिना शुभकार्यों का करना त्याज्य माना है। चन्द्रशुद्धि से तिथि, नक्षत्र, योग, करण और वार की शुद्धि अभिप्रेत है तथा विशेष रूप से चन्द्रराशि का विचार कर उसके शुभाशुभत्व के अनुसार फल को ग्रहण करना है। चन्द्रशुद्धि प्रत्येक कार्य में ली जाती है। तिथ्यादि की शुद्धि लेना तथा उनके बलाबलत्व का विचार करना एवं सूक्ष्म विचार के लिए मुहूर्त मान के आधार पर शुभाशुभत्व को ग्रहण करना चन्द्रशुद्धि से अभिप्रेत है। यात्रा, विवाह, उपनयन, प्रतिष्ठा, गृहनिर्माण, गृहप्रवेश आदि समस्त कार्यों के लिए चन्द्रशुद्धि का विचार करना आवश्यक है।

सूर्यशुद्धि भी प्रायः सभी महत्वपूर्ण माङ्गलिक कार्यों में ग्रहण की गयी है। यद्यपि चन्द्रमा की अपेक्षा सूर्य का स्थान महत्वपूर्ण है फिर भी छोटे-बड़े सभी कार्यों में इसके अनुकूलत्व और प्रतिकूलत्व का विचार नहीं किया गया है।

सूर्यशुद्धि में सूर्य की राशि का शुभाशुभत्व तथा चान्द्रमास और चान्द्र-तिथि पर पड़ने वाले सूर्य के प्रभाव का विचार किया जाता है ।

गुरु और शुक्र की शुद्धि तो देखी ही जाती है, पर विशेषतः इनके बला-बलत्व का विचार किया जाता है । शुक्र की अपेक्षा गुरु की शुद्धि अधिक माङ्गलिक कार्यों के लिए ग्रहण की गयी है । जब तक गुरु अनुकूल नहीं होता है तब तक विवाह, प्रतिष्ठा, उपनयन एवं व्रत ग्रहण आदि कार्य सम्पन्न नहीं किये जाते हैं, अतः व्रत के लिए गुरु और शुक्र के अस्त का विचार करना आवश्यक है ।

प्रतिपदा और द्वितीया तिथि के व्रत की व्यवस्था—

तिथेः षष्ठांशोऽपि व्रतकरनरैः सादरमतः,
व्रतश्शुद्धोद्धर्थं सततमुदये विद्यत यतः ।
विहायेन्दुं पूर्णं करनिकरविध्वस्ततिमिरं,
द्वितीयेन्दुः सर्वैः कनकनिचयाभोऽपि नमितः ।।

अर्थ—व्रत करने वाले नम्रीभूत श्रावक को सर्वदा व्रत की शुद्धि के लिए उदय काल में रहने वाली षष्ठांश प्रमाण तिथि को ग्रहण करना चाहिए । अपनी किरणों के समुदाय से अन्धकार को दूर करने वाले पूर्ण चन्द्रमा को छोड़ अर्थात् प्रतिपदा तिथि के दिन तथा द्वितीया के दिन सूर्योदय काल में रहने वाली षष्ठांश प्रमाण तिथि को ही व्रत के लिए ग्रहण करना चाहिए ।

विवेचन—काष्ठसंघ के आचार्यों ने पूर्णिमा, प्रतिपदा एवं द्वितीया तिथि में होने वाले व्रतों की व्यवस्था करते हुए बताया है कि समस्त तिथि का षष्ठांश मात्र व्रत के लिए ग्राह्य है । इसकी उपपत्ति बतलाते हुए उन्होंने कहा है कि तीस मुहूर्तों का एक दिन अहोरात्र होता है । इन तीस मुहूर्त्तों में ये पन्द्रह मुहूर्त दिन में और पन्द्रह मुहूर्त रात में होते हैं । रौद्र, श्वेत, मैत्र, सारभट, दैत्य वैरोचन, वैश्वदेव, अभिजित्, रोहण, बल, विजय, नैर्ऋत्य, वरुण, अर्यमन् और भाग्य ये मुहूर्त प्रत्येक तिथि में दिन को रहते हैं ।

रौद्रः श्वेतश्च ततः सारभटोऽपि च ।
दैत्यो वैरोचनश्चान्यो वैश्वदेवोऽभिजित्तया ।।
रोहणो बलनामा च विजयो नैर्ऋतोऽपि च ।
वरुणाश्चार्यमा च स्युर्भाग्यः पञ्चदश दिने ।।

सावित्रो धुर्यसंज्ञश्च दात्रको यम एव च ।
वायुर्हुताशनो भानुर्वैजयन्तोऽष्टमो निशि ।।
सिद्धार्थः सिद्धसेनश्च विक्षोभ योग्य एव च ।
पुष्पदन्तः सुगन्धर्वो मुहूर्त्तोऽन्योऽरूणो मतः ।।

धवला टीका जि० ४ पृ० ३१८-१९

रात्रि में सावित्र, धुर्य, दात्रक, यम, वायु, हुताशन, भानु, वैजयन्त, सिद्धार्थ, सिद्धसेन, विक्षोभ, योग्य, पुष्पदन्त, सुगन्धर्व और अरुण ये पन्द्रह मुहूर्त रहते हैं। प्रत्येक मुहूर्त दो घटी प्रमाण काल तक रहता है। कुछ आचार्य दिन में पांच मुहूर्त ही मानते हैं तथा कुछ छः मुहूर्त। दिन के पन्द्रह मुहूर्त्तों में रौद्र, श्वेत, मैत्र, सारभट और दैत्य आदि का गुण और स्वभाव बतलाते हुए कहा गया है कि प्रथम रौद्र मुहूर्त, जो कि उदयकाल में दो घटी तक रहता है, खर और तीक्ष्ण कार्यों के लिए शुभ होता है। इस मुहूर्त में किसी विलक्षण असाध्य और भयंकर कार्य को आरम्भ करना चाहिए। इस मुहूर्त का आदि भाग शुभ, मध्य भाग साधारण और अन्त भाग निकृष्ट होता है। इस मुहूर्त का स्वभाव उग्र कार्य करने में प्रवीण, साहसी और वंचक बताया गया है। दूसरे श्वेत मुहूर्त का आरम्भ सूर्योदय के दो घटी-४८ मिनट के उपरान्त होता है। यह भी दो घटी तक अपना प्रभाव दिखलाता है। इसका आदि भाग साधरण शक्ति हीन पर मांगलिक कार्यों के लिए शुभ, नृत्य गायन में प्रवीण, आमोद प्रमोद को रुचिकर समझने वाला एवं आल्हादकारी होता है। मध्य भाग इस मुहूर्त का शक्तिशाली, कठोर कार्य करने में समर्थ, दृढ़ स्वभाव वाला, श्रमशील, दृढ़ अध्यवसायी एवं प्रेमिल स्वभाव का होता हैं। इस भाग में किये गये सभी प्रकार के कार्य सफल होते है। अन्त भाग निकृष्ट हैं।

तीसरा मुहूर्त सूर्योदय के एक घण्टा ३६ मिनट पश्चात आरम्भ होता है। यह भी दो घटी तक रहता है। यह मुहूर्त विशेष रूप से पञ्चमी, अष्टमी और

चतुर्दशी को अपना पूर्ण प्रभाव दिखलाता है। इसका स्वभाव मृदु, स्नेहशील, कर्त्त-व्यपरायण और धर्मात्मा माना है। इसके भी तीन भाग हैं— आदि, मध्य और अन्त आदि भाग शुभ, सिद्धिदायक, मंगलकारक एवं कल्याणप्रद होता है। इसमें जिस कार्य का आरम्भ किया जाता है, वह कार्य अवश्य सफल होता है। तल्लीनता और कार्य करने में रुचि विशेषत: जागृत होती है। विघ्नबाधाएं उत्पन्न नहीं होतीं।

तीसरे मुहूर्त का मध्य भाग सबल, विचारक, अनुरागी और परिश्रम से भागने वाला होता है। इसका स्वभाव उदासीन माना है। यद्यपि इसमें आरम्भ किये जाने वाले कार्यों में नाना प्रकार की बाधाएं उत्पन्न होती हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि कार्य अधूरा ही रह जायगा फिर भी काम अन्ततोगत्वा पूरा हो ही जाता है। इस भाग का महत्व अध्ययन-अध्यापन एवं आराधन के लिए अधिक है। स्वाध्याय आरम्भ करने के लिए यह भाग श्रेष्ठ माना गया है। जो व्यक्ति गणित से तीसरे मुहूर्त के मध्य भाग को निकालकर उसी समय में विद्यारम्भ या अक्षरारम्भ करते हैं, वे विद्वान बन जाते हैं। यों तो इस समस्त मुहूर्त में सरस्वती का निवास रहता है। पर विशेषरूप से इसी भाग में सरस्वती का निवास है। तीसरे मुहूर्त का अन्तिम भाग व्यापार, अध्यवसाय, शिल्प आदि कार्यों के लिए प्रशस्त माना है। इस भाग में किये जाने वाले कार्य कठोरश्रम से पूरे होते हैं। इस भाग का स्वभाव मिलनसार, लोक व्यवहारज्ञ और लोभी माना गया है। इसी कारण व्यापार और बड़े बड़े व्यवसायों के प्रारम्भ करने के लिए इसे प्रशस्त बतलाया है। यह मुहूर्त स्थिरसंज्ञक भी है, प्रतिष्टा गृहारम्भ, कूपारम्भ, जिनालयारम्भ, व्रतोपनयन आदि कार्य इस मुहूर्त में विधेय माने गये हैं।

चौथा सारभट नाम का मुहूर्त सूर्योदय के दो घण्टा ३६ मिनट पश्चात् प्रारम्भ होता है। इसका समय भी दो घटी अर्थात् ४८ मिनट है। इस मुहूर्त की विशेषता यह है कि प्रारम्भ में यह प्रमादी उत्तर काल में श्रमशील, विचारक और स्नेही होता है। इसके भी तीन भाग हैं—आदि, मध्य और अन्त। आदि भाग शक्तिशाली अध्यवसायी, कार्यकुशल और लोकप्रिय होता है। इस भाग में कार्य करने पर कार्य सफल होता है, किन्तु अध्यवसाय और परिश्रम की आवश्यकता पड़ती है। पूजा-पाठ धार्मिक अनुष्ठान एवं शान्ति पौष्टिक कार्यों के लिए यह ग्राह्य माना गया है। इसमें उक्त कार्य किये जाने पर प्रायः सफल होते हैं, यद्यपि कार्य अन्त होने पर विघ्न-

बाधाएं आती हुई दिखलाई पड़ती हैं, परन्तु अध्यवसाय द्वारा कार्य सिद्ध होने में विलम्ब नहीं लगता है।

चौथे मुहूर्त का द्वितीय भाग भी आनन्द संज्ञक है। इसके ५ पलों में अमृत रहता है। जो व्यक्ति इसके अमृत भाग में कार्य करता है या अपने आत्मिक उत्थान में आगे बढ़ता है, वह निश्चय ही सफलता प्राप्त करता है। इसका तीसरा भाग जिसे अन्त भाग कहा जाता है, साधारण है। इसमें कार्य करने पर कार्य में विशेष सफलता नहीं मिलती है। अधिक परिश्रम करने पर भी फल अल्प मिलता है। जो व्यक्ति इस भाग में माङ्गलिक कार्य आरम्भ करते हैं, उनके वे कार्य प्रायः असफल ही रहते हैं।

पाँचवां दैत्य नाम का मुहूर्त है जो कि सूर्योदय के तीन घण्टा १२ मिनट पश्चात् प्रारम्भ होता है। यह शक्तिशाली, प्रमादी, क्रूर स्वभाव वाला और निद्रालु होता है। इसके आदि भाग में कार्य आरम्भ करने पर विलम्ब से होता है, मध्य भाग के कार्य में नाना प्रकार के विघ्न आते हैं। चंचलता आदि रहती है तथा उग्र प्रकृति के कारण झगड़े-झंझट तथा अनेक प्रकार से बाधाएं उत्पन्न होती हैं। अन्त भाग अशुभ होते हुए भी शुभ फलदायक है। इसमें श्रमसाध्य कार्यों को प्रारम्भ करना हितकारी माना गया है। जो व्यक्ति खर और तीक्ष्ण कार्यों को अथवा उपयोगी कलाओं के कार्यों को आरम्भ करता है। उसे इन कार्यों में बहुत सफलता मिलती है।

छठवां वैरोचन मुहूर्त सूर्योदय के चार घण्टे के उपरान्त आरम्भ होता है। इस मुहूर्त का स्वभाव अभिमानी, महत्वाकांक्षी और प्रगतिशील माना गया है। इसका आदि भाग सिद्धिदायक, मध्य भाग हानिप्रद और अन्त भाग सफलतादायक होता है। इस मुहूर्त में दान, अध्ययन, पूजा-पाठ के कार्य विशेष रूप से सफल होते हैं। जो व्यक्ति एकाग्रचित्त से इस मुहूर्त में भगवान का भजन, पूजन, स्मरण और गुणानुवाद करता है, वह अपने लौकिक और पारलौकिक सभी कार्यों में सफलता प्राप्त करता है। इस मुहूर्त का उपयोग प्रधान रूप से धार्मिक कृत्यों में करना चाहिए।

सातवां मुहूर्त वैश्वदेव नाम का है, इसका प्रारम्भ सूर्योदय के चार घंटा ४८ मिनट के उपरान्त होता है। यह मुहूर्त विशेष शुभ जाना जाता है, परन्तु कार्य करने

में सफलता सूचक नहीं है। इस मुहूर्त का आदि भाग निकृष्ट, मध्य भाग साधारण और अन्त भाग श्रेष्ठ होता है। आठवां अभिजित् नाम का मुहूर्त है। यह सर्वसिद्धि-दायक माना गया है। इसका प्रारम्भ सूर्योदय के ५ घण्टा ३६ मिनट के उपरान्त माना जाता है। परन्तु गणित से इसका साधन निम्न प्रकार से किया जाता है—

रविवार को २० अंगुल लम्बी सीधी लकड़ी, सोमवार को १६ अंगुल लम्बी लकड़ी, मंगल को १५ अंगुल लम्बी, बुधवार को १४ अंगुल लम्बी, गुरुवार को १३ अंगुल लम्बी, शुक्र और शनिवार को १२ अंगुल लम्बी चिकनी तथा सीधी लकड़ी को पृथ्वी में खड़ी करें, जिस समय उस लकड़ी की छाया लकड़ी के मूल में लगे उसी समय अभिजित् मुहूर्त का प्रारम्भ होता है। इसका आधा भाग अर्थात् एक घटी प्रमाण काल समस्त कार्यों में अभूतपूर्व सफलता देने वाला होता है। अभिजित् रविवार, सोमवार आदि को भिन्न-भिन्न समय में पड़ता है। इसका कार्यसाफल्य के लिए विशेष उपयोग है। प्रायः अभिजित् ठीक दोपहर को आता है; यही सामायिक करने का समय है। आत्मचिन्तन करने के लिए अभिजित् मुहूर्त का विधान ज्योतिष-ग्रन्थों में अधिक उपलब्ध होता है।

नौवां मुहूर्त रोहण नाम का है, इसका स्वभाव गम्भीर, उदासीन और विचारक है। यह समस्त तिथि का शासक माना गया है। यद्यपि पांचवां दैत्य मुहूर्त तिथि का अनुशासक होता है, परन्तु कुछ आचार्यों ने इसी मुहूर्त को तिथि का प्रधान अंश माना है। इस मुहूर्त में कार्य करने पर कार्य सफल होता है। बिघ्नबाधाएं भी नाना प्रकार की आती हैं, फिर भी किसी प्रकार से यह सफलता दिलाने वाला होता है। इसका आदिभाग मध्यम, मध्यभाग श्रेष्ठ और अन्तिमभाग निकृष्ट होता है। दसवां बल नामक मुहूर्त है। यह प्रकृति से निर्बुद्धि तथा सहयोग से बुद्धिमान् माना जाता है। इसका आदिभाग श्रेष्ठ, मध्यभाग साधारण और अन्त भाग उत्तम होता है। ग्यारहवां विजय नामक मुहूर्त है। यह समस्त कार्यों में अपने नाम के अनुसार विजय देता है। बारहवाँ नैर्ऋत् नाम का मुहूर्त है, जो सभी कार्यों के लिए साधारण होता है। तेरहवां वरूण नाम का मुहूर्त्त है, जिससे कार्य करने से धनव्यय तथा मानसिक परेशानी होती है। चौदहवां अर्यमन् नामक मुहूर्त्त है, यह सिद्धिदायक होता है

तथा पन्द्रहवां भाग्य नामक मुहूर्त्त है, जिसका अर्धभाग शुभ और अर्धभाग अशुभ माना गया है।

इस प्रकार दिन के पन्द्रह मुहूर्त्त में से षष्ठांश प्रभाव तिथि में पांच मुहूर्त्त आते हैं। प्रातःकाल में रौद्र, श्वेत, मैत्र, सारभट और दैत्य ये पांच मुहूर्त मध्यम मान से सूर्योदय से दस घटो समय तक रहते हैं। दैत्य मुहूर्त्त तिथि का शासक होता है, तथा पांचों मुहूर्त्त दिन के तृतीयांश भाग में भुक्त होते हैं, अतः कम-से-कम तिथि का मान दस घटी या षष्ठांश मात्र मानना आवश्यक है। क्योंकि शासक मुहूर्त्त के आये बिना तिथि अपना प्रभाव ही नहीं दिखला सकती है। शासक मुहूर्त्त षष्ठांश प्रमाण तिथि के मानने पर ही आता है; अतः दस घटी से न्यून तिथि का प्रमाण व्रत के लिए ग्राह्य नहीं किया जा सकता। व्रतविधि में जाप, सामायिक, पूजा-पाठ, स्वाध्याय, प्रतिक्रमण आदि क्रियाएं व्रत की तिथि में दैत्य मुहूर्त तक होनी चाहिए। क्योंकि समस्त तिथि दैत्य मुहूर्त्त के अनुसार ही अपना कार्य करती है। जिस व्रत तिथि में पांचवां मुहूर्त्त नहीं पड़ता है, वह तिथि व्रत के लिए ग्राह्य नहीं मानी जा सकती। आचार्य महाराज ने इसी कारण तिथि के षष्ठांश के ग्रहण करने पर जोर दिया है।

तिथिह्रास होने पर तृतीया व्रत का विधान—

तिथि नंष्टकलातोऽथ तृतीया व्रतमुच्यते—

वर्णाश्रमेतराणां च युक्तं तृतीयाह्रासकम्।
इत्यनन्तव्रतारम्भेति कृष्णसेनेन चोदितम्॥

अर्थ—तिथि क्षय होने पर अथवा तिथि का घट्यात्मक मान कम होने पर तृतीया व्रत का नियम कहते हैं।

वर्णाश्रमधर्म को न मानने वाले श्रमणसंस्कृति के प्रतिष्ठापक तृतीया तिथि की हानि होने पर द्वितीया को व्रत करने का विधान करते हैं। अनन्त व्रत का वर्णन करते हुए कृष्णसेन ने इसका वर्णन किया है। तात्पर्य यह है कि मूलसंघ के आचार्यों के मत में तृतीया तिथि के ह्रास होने पर अथवा तृतीया का घट्यादि प्रमाण छः घटी से अल्प होने पर द्वितीया को ही व्रत कर लेना चाहिए।

विवेचन—ज्योतिष शास्त्र के अनुसार प्रतिपदा तिथि पुर्वाण्हव्यापिनी व्रत के लिए ग्रहण की जाती है। द्वितीया तिथि भी शुक्ल पक्ष में पूर्वाण्हव्यापिनी और कृष्ण-पक्ष में सर्वदिन व्यापिनी ली गयी है। "पूर्वेद्युरसती प्रातः परेद्युस्त्रिमुहूर्त्तगा" अर्थात् जो द्वितीया पहले दिन न होकर अगले दिन वर्तमान हो तथा उदय काल में कम से-कम तीन मुहूर्त—६ घटी ३६ पल हो, वही व्रत के लिए ग्रहण करने योग्य है। द्वितीया तिथि को व्रत के लिए जैनाचार्यों ने छः घटी प्रमाण माना है। जो तिथि इस प्रमाण से न्यून होगी वह व्रत के लिए ग्राह्य नहीं हो सकती है। सर्वदिन व्यापिनी तिथि की परिभाषा भी यही की गयी है कि समस्त तिथि का षष्ठांश प्रमाण जो तिथि उदय काल में रहे, वह सर्वदिनव्यापिनी कहलाती है।

तृतीया तिथि को वैदिकधर्म में व्रत के लिए परान्वित ग्रहण किया गया है।

एकादश्यष्टमी षष्ठी पौर्णमासी चतुर्दशी।
आमावस्या तृतीया च ता उपोष्या, परान्विताः॥

—नि. सि. पृ. २३

इसका अभिप्राय यह है कि एक घटी प्रमाण या इससे अल्प रहने पर भी तृतीया तिथि परान्विन हो ही जाती है। अतः प्रातःकाल एकाध घटी तिथि के रहने पर भी व्रत के लिए उसका ग्रहण किया गया है। इस प्रकार वैदिकधर्म में प्रत्येक तिथि को व्रत के लिए हीनाधिक मान के रूप में ग्रहण नहीं किया गया है। प्रत्येक तिथि का मान व्रतकाल के लिए अलग बतलाया है। जैनाचार्यों ने इसी सिद्धान्त का खण्डन किया है और सर्व सम्मति से व्रततिथि का मान छः घटी अथवा समस्त तिथि का षष्ठांश माना है। आचार्य ने उपर्युक्त श्लोकों में प्रतिपदा, द्वितीया और तृतीया तिथि के नियम निर्धारित करते हुए यही बताया है कि जो तिथि छः घटी प्रमाण नहीं है, वह चाहे पूर्वविद्ध हो, चाहे परविद्ध, व्रत के लिए ग्रहण नहीं की जा सकती है। निर्णयसिन्धु में प्रत्येक तिथि की जो अलग-अलग व्यवस्था बतलायी है, वह युक्तिसंगत नहीं है। सामान्य रूप से प्रत्येक व्रत के लिए छः घटी या समस्त तिथि का षष्ठांश ग्रहण करना चाहिए।

व्रतों के भेद, निरवधि व्रतों के नाम तथा कवलचान्द्रायण की परिभाषा—

व्रतानि कति भेदानि, इति चेदुच्यते—

सावधिनि, निरवधिनि, दैवसिकानि, नैशिकानि, मासावधिकानि, वात्सरकानि, काम्यानि, अकाम्यानि, उत्तमार्थानि इति नवधा भवन्ति। निरवधिव्रतानि कवेलचान्द्रायणतपोऽञ्जलिजिनमुखावलोकन मुक्तावलीद्विकावलयेककवलवृद्धयहार व्रतानि। आमावस्यायाः प्रोषधं पुनः शुक्लपक्षे तु तन्न्यूनतप एक कवलं यावत् एष निरवधि कवलचान्द्रायणाख्यं व्रतं भवति, न तिथ्यादिको विधिर्भवति।

अर्थ—व्रत कितने प्रकार के होते हैं ? आचार्य इस प्रश्न का उत्तर देते हैं कि व्रतों के नौ भेद हैं—सावधि, निरवधि, दैवसिक, नैशिक, मासावधि, वर्षावधि, काम्य, अकाम्य और उत्तमार्थ। निरवधि व्रतों में कवलचान्द्रायण, तपोऽञ्जलि, जिनमुखावलोकन, मुक्तावली, द्विकावली, एकावली, मेरूपंक्ति आदि। अमावस्या का प्रोषधोपवास कर शुक्लपक्ष की प्रतिपदा, द्वितीया आदि तिथियों में एक-एक कवल की वृद्धि करते हुए पूर्णिमा को १५ ग्रास आहार ग्रहण करे। पश्चात् कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से एक-एक कवल कम करते हुए चतुर्दशी को एक ग्रास आहार ग्रहण करे। अमावस्या को पारणा करे। इसमें तिथि की विधि नहीं की जाती है। एकाध तिथि के घटने-बढ़ने पर दिनसंख्या की अवधि का इसमें विचार नहीं किया जाता है।

विवेचन—जिन व्रतों के आरम्भ और समाप्त करने की तिथि निश्चित रहती है तथा दिनसंख्या भी निर्धारित रहती है, वे व्रत सावधि व्रत कहलाते हैं। दशलक्षण, अष्टान्हिका, रत्नत्रय, षोडशकारण आदि व्रत सावधि व्रत माने जाते हैं। क्योंकि इन व्रतों के आरम्भ और अन्त की तिथियां निश्चित हैं तथा दिनसंख्या भी निर्धारित रहती हैं किन्तु आरम्भ और समाप्ति की तिथि निश्चित नहीं है, वे व्रत निरवधिव्रत कहलाते हैं। जिन व्रतों के कृत्यों का महत्त्व दिन के लिए है, वे दैवसिक व्रत कहलाते हैं, जैसे पुष्पांजलि, रत्नत्रय, अष्टान्हिका, अक्षय तृतीया, रोहिणी आदि।

जिन व्रतों का महत्त्व रात्रि की क्रियाओं और विधानों के सम्बन्ध के साथ रहता है, वे व्रत नैशिकव्रत कहलाते हैं। चन्दनषष्ठि, आकाशपञ्चमी आदि व्रत नैशिक माने गये हैं। महिनों की अवधि रखकर जो व्रत सम्पन्न किए जाते हैं, वे मासावधिक व्रत कहलाते हैं। संवत्सर पर्यन्त जो व्रत किये जाते हैं, वे काम्य तथा बिना

किसी फल प्राप्ति के जो व्रत किये जाते हैं, वे अकाम्य कहलाते हैं। उत्तम फल की प्राप्ति के लिए जो व्रत किये जाते हैं, वे उत्तमार्थ व्रत हैं। इस प्रकार नौ तरह के व्रत बतलाये गये हैं। इन व्रतों के करने से उत्तम भोगोपभोग की प्राप्ति होती है तथा कर्मों की निर्जरा होने से कर्मभार भी हलका होता है। निरवधि व्रतों में कवल-चान्द्रायण, तपोञ्जलि, जिनमुखावलोकन, मुक्तावली, द्विकावली बताये हैं। कवल-चान्द्रायण व्रत का प्रारम्भ किसी भी मास में किया जा सकता है, यह अमावस्या को आरम्भ होकर अगले महिने की चतुर्दशी को समाप्त होता है तथा इसकी अमावस्या को पारणा की जाती है। प्रथम अमावस्या को प्रोषधोपवास कर प्रतिपदा को एक ग्रास आहार, द्वितीया को दो ग्रास, तृतीया को तीन ग्रास, चतुर्थी को चार ग्रास, पञ्चमी को पाँच ग्रास, षष्ठि को छः ग्रास, सप्तमी को सात ग्रास, अष्टमी को आठ ग्रास, नवमी को नौ ग्रास, दशमी को दस ग्रास, एकादशी को ग्यारह ग्रास, द्वादशी को बारह ग्रास, त्रयोदशी को तेरह ग्रास, चतुर्दशी को चौदह ग्रास और पूर्णिमा को पन्द्रह ग्रास, प्रतिपदा को पुनः चौदह ग्रास, द्वितीया को तेरह ग्रास, तृतीया को बारह ग्रास, चतुर्थी को ग्यारह ग्रास, पञ्चमी को दस ग्रास, षष्ठि को नौ ग्रास, सप्तमी को आठ ग्रास, अष्टमी को सात ग्रास, नवमी को छः ग्रास, दशमी को पांच ग्रास, एकादशी को चार ग्रास, द्वादशी को तीन ग्रास, त्रयोदशी को दो ग्रास और चतुर्दशी को एक ग्रास आहार लेना चाहिए। अमावस्या के अनन्तर जिस प्रकार चन्द्रकलाओं की वृद्धि होती है, आहार के ग्रासों की भी वृद्धि होती चली जाती है। तथा चन्द्रकलाओं के घटने पर ग्राससंख्या भी घटती जाती है। इस व्रत का नाम कवलचान्द्रायण इसी-लिए पड़ा है कि चन्द्रमा की कलाओं की वृद्धि और हानि के साथ भोजन के कवलों की हानि और वृद्धि होती है।

जिनमुखावलोकन व्रत भी भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा से आश्विन कृष्णा प्रतिपदा तक किया जाता है। इस व्रत में सबसे पहले श्री जिनेन्द्र का दर्शन करना चाहिए, अन्य किसी व्यक्ति का मुंह नहीं देखना चाहिए। प्रतिपदा को प्रोषधोपवास कर षष्ठि को पारणा, सप्तमी को प्रोषधोपवास कर अष्टमी को पारणा, नवमी को प्रोषधोपवास कर दशमी को पारणा करनी चाहिए। इसी प्रकार एक दिन उपवास, अगले दिन पारणा करते हुए भाद्रपद मास को बिताना चाहिए। पारणा के दिन

एकाशन करना चाहिए। भोजन में माड़-भात या दूध अथवा छाछ लेना चाहिए। वस्तुओं की संख्या भी भोजन के लिए निर्धारित कर लेनी चाहिए। यह व्रत कवल-चान्द्रायण के समान भी किया जा सकता है। इसमें केवल-विशेषता इतनी ही है कि प्रातः जिनमुख का अवलोकन करना चाहिए। रात का अधिकांश भाग जागते हुए धर्म-ध्यान पूर्वक बिताना चाहिए।

मुक्तावली व्रत दो प्रकार का होता है—लघु और बृहत्। लघु व्रत में नौ वर्ष तक प्रतिवर्ष नौ-नौ उपवास करने पड़ते हैं। पहला उपवास भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को, दूसरा आश्विन कृष्णा षष्ठि को, तीसरा आश्विन कृष्णा त्रयोदशी को, चौथा आश्विन शुक्ला एकादशी को, पांचवां कार्तिक कृष्णा द्वादशी को, छठवां कार्तिक शुक्ला तृतीया को, सातवां कार्तिक शुक्ला एकादशी को, आठवां मार्गशीर्ष कृष्णा एकादशी को और नौवां मार्गशीर्ष शुक्ला तृतीया को करना चाहिए। मुक्तावली व्रत में ब्रह्मचर्य सहित अणुव्रतों का पालन करना चाहिए। रात में उपवास के दिन जागरण कर धर्मार्जन करना चाहिए। "ॐ ह्रीं वृषभजिनाय नमः" इस मन्त्र का जाप करना चाहिए।

बृहत् मुक्तावली व्रत ३४ दिनों का होता है। इस व्रत में प्रथम एक उपवास कर पारणा, पुनः दो उपवास के पश्चात् पारणा, तीन उपवास के पश्चात् पारणा, चार उपवास के पश्चात् पारणा तथा पांच उपवास के पश्चात् पारणा करनी चाहिए। अब चार उपवास के पश्चात् एक पारणा, तीन उपवास के पश्चात् पारणा, दो उपवास के पश्चात् पारणा एवं एक उपवास के पश्चात् पारणा करनी होती है। इस प्रकार कुल २५ दिन उपवास तथा ९ पारणाएं; इस प्रकार कुल ३४ दिनों तक व्रत किया जाता है। इस व्रत में लगातार दो, तीन, चार और पांच उपवास करने पड़ते हैं, दिन धर्मध्यान पूर्वक बिताने पड़ते हैं तथा रात को जागकर आत्मचिन्तन करते हुए व्रत की क्रियाएं सम्पन्न की जाती हैं। इस व्रत का फल विशेष बताया गया है। इस प्रकार निरवधि व्रतों का अपने समय पर पालन करना चाहिए, तभी आत्मोत्थान हो सकता है। बृहद् मुक्तावली में "ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं, ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ॐ ह्रः णमो लोए साहूणं" इस मन्त्र का जाप करना चाहिए।

बृहद् मुक्तावली और लघुमुक्तावली व्रत के मध्य में एक मध्यम मुक्तावली व्रत भी होता है। यह ६२ दिनों में पूर्ण होता है, इसमें ४६ उपवास और १३ पारणाएं होती हैं। मध्यममुक्तावली व्रत में भी बृहद् मुक्तावली व्रत के मन्त्र का जाप करना चाहिए। पारणा के दिन तीनों ही प्रकार के मुक्तावली व्रत में भात ही लेना चाहिए।

गुरु के समक्ष व्रतग्रहण करने का आदेश—

व्रतादानव्रतत्यागः कार्यो गुरुसमक्षतः।
नो चेत्तन्निष्फलं ज्ञेयं कुतः शिक्षादिकं भवेत्॥
यो स्वयं व्रतमादत्ते स्वयं चापि विमुञ्चति।
तद्व्रतं निष्फलं ज्ञेयं साक्ष्यभावात् कुतः फलम्॥
गुरुप्रद्दिष्टं नियमं सर्वकार्याणि साधयेत्।
यथा च मृत्तिका द्रोणः विद्यादानपरो भवेत्॥
गुर्वभावतया त्यक्तं व्रतं किं कार्यकृद् भवेत्।
केवलं मृतिकावेश्म किं कुर्यात् कर्तृवर्जितम्॥
अतो व्रतोपदेशस्तु ग्राह्यो गुर्वाननात् खलु।
त्याजश्चापि विशेषेण तस्य साक्षितया पुनः॥
क्रममुल्लंघ्य यो नारी नरो वा गच्छति स्वयं।
स एव नरकं यातिं जिनाज्ञा गुरुलोपतः॥

अर्थ—गुरू के समक्ष ही व्रतों का ग्रहण और व्रतों का त्याग करना चाहिए। गुरु की साक्षी के बिना ग्रहण किये और त्यागे गये व्रत निष्फल होते हैं अतः उन व्रतों से धन-धान्य, शिक्षा आदि फलों की प्राप्ति नहीं हो सकती है, जो स्वयं व्रतों को ग्रहण करता है और स्वयं ही व्रतों को छोड़ देता है, उसके व्रत निष्फल हो जाते हैं। गुरू की साक्षी न होने से व्रतों का क्या होगा? अर्थात् कुछ भी नहीं। गुरू से यथाविधि ग्रहण किये गये व्रतनियम ही सभी कार्यों को सिद्ध कर सकते हैं। जैसे भिल्लराज द्रोणाचार्य की मिट्टी की मूर्ति बनाकर उसे गुरू मानकर विद्या-साधन करता था,

उसे इस मृतिकामय गुरु की कृपा से विद्याएं सिद्ध हो गयी थीं, इस प्रकार गुरु की कृपा से ही व्रत सफल होते हैं। बिना गुरु की भावना के ग्रहण किये गये व्रत कुछ भी कार्यकारी नहीं हो सकते हैं। जैसे मिट्टी का घर बिना कर्ता के निरर्थक है, उसी प्रकार गुरु के साक्ष्य के बिना त्यक्त व्रत भी निष्फल हैं। अतएव गुरु के मुख से व्रतों को ग्रहण करना चाहिए तथा उन्हीं की साक्षीपूर्वक व्रतों को छोड़ना चाहिए। जो स्त्री या पुरूष क्रम का उल्लंघन कर स्वेच्छा से व्रत करते हैं, वे गुरू की अवेहलना एवं जिनाज्ञा का लोप करने के कारण नरक में जाते हैं।

विवेचन--व्रत सर्वदा गुरू के सामने जाकर ग्रहण करना चाहिए। यदि गुरू न मिलें तो किसी तत्वज्ञ, विद्वान, ब्रह्मचारी, व्रती या अन्य धर्मात्मा से व्रत लेना चाहिए। तथा व्रतों को गुरु या विद्वान, ब्रम्हचारी के समक्ष छोड़ना भी चाहिए। यदि गुरु, विद्वान, ब्रम्हचारी आदि का सान्निध्य भी प्राप्त न हो सके तो जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमा के सामने ग्रहण करने तथा छोड़ने चाहिए। बिना साक्ष्य के व्रतों का यथार्थफल प्राप्त नहीं होता है। शास्त्रों में एक उदाहरण प्रसिद्ध है कि एक सेठ का मकान बन रहा था, उसमें ईंट, चूना, सीमेन्ट ढोने का कार्य कई मजदूर कर रहे थे। एक मजदूर चुपचाप बिना अपना नाम लिखाए काम करने लगा, दिन भर कठोर श्रम किया। सन्ध्या समय जब सबको मजदूरी दी जाने लगी तो वह परिश्रमी मजदूर भी मुनीम के सामने पहुँचा और कहने लगा–सरकार मैंने दिनभर सबसे अधिक श्रम किया है, अतः मुझे अधिक मजदूरी मिलनी चाहिए। मुनीम ने रजिस्टर से मिलाकर सभी नामदर्ज मजदूरों को मजदूरी दे दी, परन्तु जिसने कठोर श्रम किया और अपना नाम रजिस्टर में दर्ज नहीं कराया था, उसे मजदूरी नहीं दी। मुनीम ने साफ-साफ कह दिया कि तुम्हारा नाम रजिस्टर में नोट नहीं है, अतः तुम्हें मजदूरी नहीं दी जा सकती। इसी प्रकार जिन्होंने गुरू की साक्ष्य से व्रत ग्रहण नहीं किया है, उन्हें उसके फल की प्राप्ति नहीं होती है, अथवा अत्यल्प फल मिलता है। अतएव स्वेच्छा से कभी भी व्रत ग्रहण नहीं करने चाहिए।

व्रत की आवश्यकता

व्रतेन यो विना प्राणी पशुरेव न संशयः।
योग्यायोग्यं न जानाति भेदस्तत्र कुतो भवेत्॥

भावार्थ :—व्रत-रहित प्राणी निःसंदेह पशु के समान ही है। जिसे योग्यायोग्य का ज्ञान नहीं है, ऐसे मनुष्य और पशु में क्या भेद है ? कुछ भी नहीं।

व्रत का लक्षण

संकल्प पूर्वकः सेव्ये नियमोऽशुभकर्मणः।
निवृत्तिर्बा व्रतं स्याद्वा प्रवृत्तिः शुभकर्मणि ॥

भावार्थ :—सेवन करने योग्य विषयों में संकल्प पूर्वक निमय करना, अथवा हिंसादिक अशुभ कर्मों से संकल्प पूर्वक विरक्त होना, अथवा पात्रदानादिक शुभ कर्मों में संकल्प पूर्वक प्रवृति करना, व्रत कहलाता है।

यथाशक्ति व्रत पालन करना आवश्यक है

पंचम्यादि विधिं कृत्वा शिवान्ताभ्युदयप्रदम्।
उद्योतयेद्यथासम्पन्निमित्ते प्रोत्सहेन्मनः ॥

भावार्थ :—मोक्ष पर्यन्त इन्द्र, चक्रवर्ती आदि पदों के अभ्युदय को देने वाले, पंचमी, पुष्पाञ्जलि, मुक्तावली, रत्नत्रयादिक व्रतों को शास्त्रानुसार ग्रहण करके अपनी शक्ति और सम्पत्ति के अनुसार उनका उद्यापन कराये, क्योंकि दैनिक (नित्य) क्रियाओं की अपेक्षा नैमितिक क्रियाओं के करने में मन अधिक उत्साह को प्राप्त होता है।

व्रत अनशन का ही भेद है

साकार-सर्वतोभद्र-सिंहनिष्क्रीड़ितादयः।
साकांक्षस्योपवासस्य भेदाश्चैकान्तरादयः ॥

—आचारसार

भावार्थ :—साकार, सर्वतोभद्र, सिंहनिष्क्रीड़ित, उपवास और एकाशनादि ये सभी साकांक्ष अनशन के भेद हैं।

व्रत निरतिचारपूर्वक ही पालन करना चाहिए

व्रतानि पुण्याय भवन्ति जन्तो,
नं सातिचाराणि निषेवितानि।
शस्यानि किं क्वापि फलन्ति लोके,
मलोपलीढानि कदाचनापि ॥

—सा. ध.

भावार्थ :—जीवों को व्रत पुण्यफल देते हैं। परन्तु अतिचार सहित व्रत पुण्य-जनक नहीं होते हैं। जैसे धान्य यदि साफ किए न जायें, वे मलयुक्त बने रहें, तो वे कभी भी फलवती नहीं होते हैं। उनमें पैदा हो जाने वाले फालतू घास वगैरह साफ करने से ही वे फलवती होते हैं। इसी प्रकार निरतिचार व्रतों से ही पुण्य प्राप्त होता है, सातिचार व्रतों से नहीं।

व्रतों के आचरण में शिथिलता होना अतिचार है

अतिक्रमो मानसशुद्धिहानि :
व्यतिक्रमो यो विषयाभिलाषः ।
तथातिचारं करणालसत्वं
भंगो ह्यनाचारमिह व्रतानाम् ।।

पु० सि०

भावार्थ :—मन की शुद्धि में हानि होना सो अतिक्रम, विषयों की अभिलाषा सो व्यतिक्रम, इन्द्रियों की असावधानी अर्थात् व्रत के आचरण में शिथिलता सो अतिचार और व्रत का सर्वथा भंग होना सो अनाचार है। जैसे खेत के बाहर एक बैल बैठा था, उसने विचारा कि निकटवर्ति खेत को चरना सो अतिक्रम, खड़ा हो कर चलना सो व्यतिक्रम, बारी (बाढ़) तोड़ना सो अतिचार, और खेत चरना सो अनाचार है।

लिये हुए व्रत की रक्षा पूरे यत्नपूर्वक करनी चाहिये

प्राणान्तेऽपि न भंतव्यं गुरुसाक्षिश्रितं व्रतम् ।
प्राणान्तस्तत्क्षणे दुःखं व्रतभंगो भवे भवे ।।

सा० ध० ७–५२

भावार्थ :—गुरु अर्थात् पंचपरमेष्ठी, अथवा व्रतदाता—इनकी साक्षीपूर्वक लिए हुए किसी भी व्रत को अपने प्राण भी नष्ट हो जायें तो भी नहीं छोड़ना चाहिए। क्योंकि प्राणनाश केवल मरण के समय में ही दुःख का कारण है, परन्तु व्रत का भंग भव-भव में दुःख का कारण है।

प्रमाद व अज्ञानता से व्रत भंग हो जाये तो प्रायश्चित

समीक्ष्य व्रतमोदय मात्तं पाल्यं प्रयत्नतः ।
छिन्नं दर्पात् प्रमादाद्वो प्रत्यवस्थाप्यमंजसा ।।

सा० ध० २–७९

भावार्थ :—कल्याण चाहने वाले गृहस्थ को देश कालादिक का अच्छी तरह विचार करके व्रत ग्रहण करना चाहिए। और ग्रहण किये व्रत को यत्नपूर्वक पालन करना चाहिये। तथा मद के आवेश में अथवा प्रमाद से व्रत के खण्डित हो जाने पर सम्यक् रीति से शीघ्र ही प्रायश्चित लेकर उसे फिर से ग्रहण करना चाहिए।

व्रत के दिनों में श्रावक का अनिवार्य कर्त्तव्य

प्रातः सामायिकं कुर्यात्ततः तात्कालिकां क्रियाम् ।
धौताम्बरधरो धीमान् जिनध्यानपरायणः ।।

भावार्थ :—विवेकी व्रती श्रावक प्रातः काल ब्राह्म मुहूर्त में उठकर सामायिक करें। और बाद में शौचादिक से निवृत होकर शुद्ध साफ वस्त्र पहन कर श्री जिनेन्द्र देव के ध्यान में तत्पर रहे।

महाभिषेकमद्भुत्यैर्जिनागारे व्रतान्वितैः ।
कर्त्तव्यं सह संघेन महापूजादिकोत्सवम् ।।

भावार्थ :—श्री मंदिर जी में जाकर सब को आश्चर्य करने वाला ऐसा महा अभिषेक करे। फिर अपने संघ के साथ समारोहपूर्वक महापूजन करे।

ततो स्वगृहमागत्य दानं दद्यान् मुनीशिने ।
निर्दोषं प्राशुकं शुद्धं मधुरं तृप्तिकारणम् ।।

भावार्थ :—पश्चात् अपने घर आकर मुनियों को निर्दोष-प्रासुक, शुद्ध मधुर तृप्ति करने वाला आहार देकर शेष बचे हुए आहारसामग्री से अपने कुटुम्ब के साथ सानंद स्वयं आहार करें।

प्रत्याख्यानोद्यतो भूत्वा ततो गत्वा जिनालयम् ।
त्रिः परीत्य ततः कार्यास्तद्विध्युक्त जिनालयम् ।।

भावार्थ—फिर मन्दिर जी में आकर प्रदक्षिणा देवे और व्रतविधान में कहे गये मंत्रों का जाप्य करे।

व्रत का उद्यापन —

संपूर्णे ह्यनु कर्त्तव्यं स्वशक्त्योद्यापनं बुधैः।
सर्वथा येऽप्यशक्त्यादिव्रतोद्यापन सुद्विधौ॥

भावार्थ :—व्रतमर्यादा पूर्ण हो जाने पर स्वशक्ति के अनुसार उद्यापन करे, यदि उद्यापन की शक्ति न होवे तो व्रत का जो विधान (मर्यादा) है, उससे दुगुना करे।

उद्यापन विधि

कर्त्तव्यं जिनागारे महाभिषेकमद्भुतम्।
संघैश्चतुर्विधै सार्धं महापूजादिकोत्सवम्॥
घण्टाचामरचंद्रोपक भृंगार्यातिकादयः।
धर्मोपकरणान्येवं देयं भक्त्या स्वशक्तितः॥
पुस्तकादि महादानं भक्त्या देयं वृषाकरम्।
महोत्सवं विधेयं सुवाद्यगीतादिनर्तनैः॥
चतुर्विधाय संघायाहारदानादिकं मुदा।
आमंत्र्य परया भक्त्या देयं सम्मानपूर्वकम्॥
प्रभावना जिनेन्द्राणां शासनं चैत्यधामनि।
कुर्वन्तु यथाशक्त्या स्तोकं चोद्यापनं मुदा॥

भावार्थ—खूब ऊंचे-ऊंचे विशाल जिनमंदिर बनवाये और उनमें बड़े समारोहपूर्वक प्रतिष्ठा कराकर जिन प्रतिमा विराजमान करे। पश्चात् चतुर्प्रकार संघ के साथ प्रभावनापूर्वक महा अभिषेक कर महापूजा करे। पश्चात् घण्टा, झालर, चमर, छत्र, सिंहासन, चंदोवा, झारी, भृंगारी, आरती अनेक धर्मोपकरण शक्ति के अनुसार भक्तिपूर्वक देवे। आचार्यादि महापुरुषों को धर्मवृद्धि हेतु शास्त्र प्रदान करें। और उत्तमोत्तम बाजे, गीत और नृत्य आदि के अत्यन्त आलोचन से मन्दिर में महान् उत्सव करें। चतुर्विध संघ को विशिष्ट सम्मान के साथ भक्तिपूर्वक बुलाकर अत्यन्त

प्रमोद से आहारादि चतुर्प्रकार दान देवे। भगवान् जिनेन्द्र के शासन का माहात्म्य प्रकट कर खूब प्रभावना करे। इस प्रकार अपनी शक्ति के अनुसार उद्यापन कर व्रत विसर्जन करें।

भाद्रपदमास में व्रतों की प्रधानता

अहो भाद्रपदाख्योऽयं मासोऽनेकव्रताकरः।
धर्महेतुपरो मध्येऽन्यमासानां नरेन्द्रवत् ॥

— मल्लिपुराणे

भावार्थ :—जिस प्रकार मनुष्यों में श्रेष्ठ राजा माना जाता है, उसी प्रकार समस्त मासों में भाद्रपद मास भी श्रेष्ठ है। क्योंकि वह अनेक प्रकार के व्रतों का स्थान-स्वरूप है और धर्म का प्रधान कारण है।

व्रत करने का फल

अनेकपुण्यसंतानकारणं स्वनिर्बंधनम्।
पापघ्नं च क्रमादेतत् व्रतं मुक्तिवशीकरम् ॥
यो विधत्ते व्रतं सारमेतत्सर्वसुखावहम् ॥
प्राप्य षोडशभं नाकं स गच्छेत् क्रमशः शिवम् ॥

भावार्थ :—व्रत अनेक पुण्य की संतान का कारण है, स्वर्ग का कारण है, संसार के समस्त पापों का नाश करने वाला है एवं मुक्तिलक्ष्मी को वश में करने वाला है, जो महानुभाव सर्वसुखोत्पादक श्रेष्ठ व्रत धारण करते हैं वे सोलहवें स्वर्ग के सुखों का अनुभव कर अनुक्रम से अविनाशी मोक्षसुख को प्राप्त करते हैं।

व्रतीश्रावक के भोजन के अन्तराय

द्रष्ट्वाऽऽर्द्रचर्मास्थिसुरा मांसास्त्रक्पूयपूर्वकम्।
स्पृष्ट्वा रजस्वलाशुष्कचर्मास्थिशुनकादिकम् ॥
श्रुत्वातिकर्कशाक्रन्द-विड्वरप्राय-निः स्वनम्।
भुक्त्वा नियमितं वस्तु भोज्येऽशक्यविवेचनैः ॥
संसृष्टे सति जीवद्भिर्जीवैर्वा बहुभिर्मृतैः।
इदं मांसमिति दृष्टं संकल्पे चाशनं त्यजेत् ॥

भावार्थ :—व्रतों का पालन करने वाला गृहस्थ—गीला चमड़ा, हड्डी, मदिरा, माँस, लोहू तथा पीप आदि पदार्थों को देख करके तथा रजस्वला स्त्री, सूखा चमड़ा, हड्डी, कुत्ता, बिल्ली और चाण्डालादि को स्पर्श करके तथा इसका मस्तक काटो, इत्यादि अत्यन्त कठोर रूप (रोने के) शब्दों को, तथा परचक्र के आगमनादि विषयक विडवरप्राय शब्दों को सुन करके तथा त्यागी हुई वस्तु को खा करके और खाने योग्य पदार्थ से अशक्य है अलग करना जिसका ऐसे जीते हुए अथवा मरे हुए दो इन्द्रियादि जीवों के भोजन में मिल जाने पर तथा यह खाने योग्य पदार्थ मांस के समान है इस प्रकार खाने योग्य पदार्थ में मन के द्वारा संकल्प होने पर भोजन को छोड़ देवे।

व्रतोपयोगी आवश्यकविधियां

(१) **कांजी**—सिर्फ पानी और भात मिलाकर खाना, अथवा सिर्फ चावलों का धोवन या मांड पीना।

(२) **आंवली**—छहों रस के बिना सिर्फ नीरस एक अन्न पानी के साथ लेना।

(३) **बेलड़ी**—पानी, भात और मिर्च मिलाकर खाना।

(४) **एकलठाना**—मात्र एक वक्त का परोसा हुआ भोजन संतोषपूर्वक लेना।

प्रोषध और उपवास

चतुराहारविसर्जनमुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः।
स प्रोषधोपवासो यदुपोष्यारम्भमाचारति॥

भावार्थ :—चारों प्रकार के आहार का त्याग करना, सो उपवास है। एक बार भोजन करना सो प्रोषध (एकाशन) है। और उपवास करके पारने के दिन १६ प्रहर बाद आरम्भ अर्थात् एक बार भोजन लेना सो प्रोषधोपवास है।

उपवास के तीन भेद

(१) **उत्तम उपवास**—धारणा के दिन दो प्रहर उपवास की प्रतीक्षा कर १६ प्रहर धर्मध्यान में व्यतीत करना।

(२) मध्यम उपवास—धारने के दिन दो घड़ी दिन शेष रहे उपवास धारण कर १२ प्रहर धर्मध्यान में व्यतीत करना ।

(३) जघन्य उपवास—उपवास के दिन प्रातःकाल प्रतिज्ञा कर ८ प्रहर धर्मध्यान में व्यतीत करना ।

उपवास का लक्षण

कषायविषयारम्भत्यागो यत्र विधियते ।
उपवासः स विज्ञेयो शेषं लंघनकं विदु: ॥

भावार्थः—कषाय-विषय और आरम्भ का संकल्पपूर्वक त्याग सो उपवास है, शेष को लंघन समझना चाहिये ।

विशेष :—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के अनुसार अपनी शक्ति देखकर उत्तम, मध्यम अथवा जघन्य जैसा उचित समझे सो करें ।

उपवास के दिन भी श्री जिनेन्द्र पूजन करने की आज्ञा

प्रातः चोत्थाय ततः कृत्वा तात्कालिकं क्रियाकलापम् ।
निर्वर्त्तयेद्यथोक्त जिनपूजां प्रासुकैर्द्रव्यैः ॥

भावार्थ :—प्रभात में ही उठकर तात्कालिक शौचनिवृत्ति आदि सर्व क्रियाओं को करके प्रासुक अर्थात् जीव रहित शुद्ध अष्टद्रव्यों से आर्षग्रन्थों में कही हुई विधि के अनुसार श्री जिनेन्द्र देव का पूजन करें ।

स्त्रियों को भी पूजन अभिषेक व व्रताचरणादि करने का उल्लेख

कियत्काले गते कन्या आसाद्य जिनमंदिरम् ।
सपर्यां महतीं चकुर्मनोवाक्कायशुद्धितः ॥
श्रावकव्रतसंयुक्ता बभूवुस्ताश्च कन्यकाः ।
क्षमादिव्रतसंकीर्णाः शीलांगपरिभूषिताः ॥

गौतम चारित्रे

भावार्थ :—उन तीनों कन्याओं ने श्रावक व्रत धारण करके क्षमादि दश धर्म

और शील व्रत धारण किया, कुछ समय बाद उन्होंने जिनमन्दिर में जाकर मन वचन काय की शुद्धि-पूर्वक श्री जिनेन्द्र भगवान् की बड़ी पूजा की ।

गृहीतगंधपुष्पादिप्रार्थना सपरिच्छदा ।
अथैकदा जगामैषा प्रातरेव जिनालयम् ।।
त्रिः परीत्य ततः स्तुत्वा जिनांश्च चतुराशया ।
संस्नाप्य पूजयित्वा च प्रयाता यति संसदि ।।

जिनदत्त चरित्र

भावार्थ :—एक दिन सेठानी जीवंजसा स्नान आदि से शुद्ध होकर दास-दासियों के साथ सवेरे ही जिनमन्दिर में भगवान जिनेन्द्रदेव के दर्शन के लिए गई । वहाँ पहुँचकर उसने पहिले तो जिनेन्द्रदेव की तीन प्रदक्षिणा दी और बाद स्तुति-पूर्वक भगवान का बिंबाभिषेक किया, पूजा की और फिर वह मुनियों की सभा में गई ।

अथैकदा सुता सा च सुधी मदनसुन्दरी ।
कृत्वा महाभिषेकाय जिनानां सुखकोटिदम् ।।

श्रीपाल चरित्र

भावार्थ :—एक दिन गुणवती वह मैनासुन्दरी करोड़ों सुखों के देने वाले जिनेन्द्र भगवान् का महा अभिषेक करती भई ।

तदा वृषभसेना च प्राप्य राज्ञीं पदं महत् ।
दिव्यां भोगान्प्रभुंजाना पूर्वपुण्यप्रसादतः ।।
पूजयंती जगत्पूज्यान् जिनान् स्वर्गापवर्गदान् ।
दिव्यैरष्टमहाद्रव्यैः स्नपनादिभिरुज्जवलैः ।।

आराधना कथाकोष

भावार्थ :—पूर्वपुण्य के प्रभाव से उस वृषभसेना ने महारानी के पद को प्राप्त किया । तथा स्वर्ग और मोक्ष देने वाले श्री जिनेन्द्र भगवान् की अभिषेक पूर्वक अष्टद्रव्य से पूजा की ।

अभिषेकैर्जिनेन्द्राणामत्युदारैश्च पूजनैः ।
दानैरिच्छभिपूरैश्च क्रियतामशुभेरणम् ।।
एवमुक्ता जगौ सीता देव्यः साधुसमीरितम् ।
दानं पूजाभिषेकश्च तपश्चाशुभसूदनम् ।।

पद्मपुराण पर्व ६६

भावार्थ :— यहां सीता से कहा गया है कि हे देवि, अशुभ कर्म को दूर करने के लिए श्री जिनेन्द्र भगवान् का अभिषेक तथा पूजन करो और दान दो, इसे सीता ने स्वीकार किया ।

इतीमं निश्चयं कृत्वा दिनानां सप्तकं सती ।
श्री जिनप्रतिबिम्बानां स्नपनं सा तदाकरोत् ।।

षट्कर्मोपदेशमाला

भावार्थ :—वह मदनावली रानी आर्यिका के उपदेशानुसार मुनिनिंदा से उत्पन्न हुए रोग की शान्ति के अर्थ सात दिन तक तीनों समय श्री जिनेन्द्र भगवान् का अभिषेक पूर्वक पूजन करती भई ।

श्री जिनेन्द्रपदाम्भोजसपर्यायां सुमानसाः ।
शचीव सा तदा जाता जैनधर्म परायणा ।।

गौतम चरित्रे

भावार्थ :—वह स्थंडिला नाम की ब्राह्मणी जिन भगवान् की पूजा में अपना चित्त लगाती थी, और इन्द्राणी के समान जैन धर्म में तत्पर हो गई थी ।

नित्यं श्रीमज्जिनेन्द्राणां पूजां कल्याणदायिनीम् ।
पात्रदानं व्रतं शीलं सोपवासं सुनिर्मलम् ।।

आराधना कथाकोषे

भावार्थ :—वह नीली बाई प्रतिदिन कल्याण देने वाले श्री जिनेन्द्र पूजन, पात्रदान, व्रत, शील, उपवास आदि उत्तम कार्यों में तल्लीन रहती थी ।

व्रतों की दो तरह की मर्यादा

नियमः परमितकालो यावज्जीवं यमो ध्रियते ।

भावार्थ :—काल मर्यादा के साथ जो व्रत धारण किया जाता है वह नियम है । और जो व्रत जीवन पर्यन्त को ग्रहण किया जाता है वह यम है ।

व्रत कथा कोष

घाति कर्म को नष्ट कर, पायो केवल ज्ञान ।
हुये अर्हन्त परमात्मा, हो जाने को भव पार ।।
गणधर सारद माय को, नमन करूं मैं आज ।
महावीरकीर्ति गुरुदेव को, करूं नमन हर्षाय ।।
व्रत कथा संग्रह करूं, हो जिससे पुण्य अपार ।
परंपरा से मोक्ष मिले, अष्ट कर्म नश जाय ।।

अनंतानंत आकाश के ठीक मध्य भाग में ३४३ घनराजू प्रमाण क्षेत्र का अनादिनिधन पुरुषाकार लोकाकाश है ।

वह घनवात, घनोदधिवात और तनुवात वलयों से वेष्टित् है । अधोलोक, मध्यलोक और उर्ध्वलोक इन तीन विभागों से विभक्त है । यह लोकाकाश उर्ध्व, मध्य और अधोलोक इस प्रकार तीन भागों में बटा हुआ है । इस (लोकाकाश) के बीचोंबीच १४ राजू ऊँची और १ राजू चौड़ी लम्बी चौकोर स्तंभवत् एक त्रस नाड़ी है अर्थात् इसके बाहर त्रस जीव (दो इंद्रिय, तीन इंद्रिय, चार इंद्रिय, पांच इंद्रिय जीव) नहीं रहते हैं। परन्तु एकेन्द्रिय जीव स्थावर निगोद तो समस्त लोकाकाश में त्रस नाड़ी और उससे बाहर भी वातवलयपर्यंत रहते हैं । इस त्रस नाड़ी के उर्ध्व भाग में सबसे ऊपर तनुवातवलय के अन्त में समस्त कार्यों से रहित अनंत दर्शन, ज्ञान, सुख और वीर्यादि अनंत गुणों के धारी अपनी-अपनी अवगाहना को लिए हुए अनंत सिद्ध भगवान् विराजमान हैं । उससे नीचे अहमिन्द्रों का निवास है और फिर सोलह स्वर्गों के देवों का निवास है । स्वर्गों के नीचे मध्यलोक के उर्ध्व भाग में सूर्य-चन्द्रमादि ज्योतिषी देवों का निवास है । (इन्हीं के चलने अर्थात् नित्य सुदर्शन आदि मेरुओं की प्रदक्षिणा देने से दिन रात और ऋतुओं का भेद अर्थात् काल का विभाग होता है ।) फिर नीचे के भाग में पृथ्वी पर मनुष्य, तिर्यञ्च, पशु और व्यन्तर

जाति के देवों का निवास है । मध्य लोक से नीचे अधोलोक (पाताललोक) है । इस पाताललोक के ऊपरी कुछ भाग में नारकी जीवों का निवास है ।

उर्ध्वलोकवासी देव, इन्द्रादि तथा मध्य व पातालवासी (चारों प्रकार के) इन्द्रादि देव तो अपने पूर्व संचित पुण्य के उदयजनित फल को प्राप्त हुए इन्द्रिय विषयों में निमग्न रहते हैं । अथवा अपने से बड़े ऋद्धिधारी इन्द्रादि देवों की विभूति व ऐश्वर्य को देख कर सहन न कर सकने के कारण आर्त्तध्यान (मानसिक में) निमग्न रहते हैं । और इस प्रकार वे अपनी आयु पूर्ण कर वहां से मर कर मनुष्य व तिर्यञ्चादि गति में स्व-स्व कर्मानुसार उत्पन्न होते हैं ।

इसी प्रकार पातालवासी नारकी जीव भी निरन्तर पाप के उदय से परस्पर मारण, ताडन, छेदन-वध-बन्धनादि नाना प्रकार के दुःखों को भोगते हुए अत्यन्त आर्त व रौद्र ध्यान से आयु पूर्ण करके मरते हैं । और स्व-स्व कर्मानुसार मनुष्य व तिर्यञ्च गति को प्राप्त करते हैं ।

तात्पर्यः--ये दोनों (देव तथा नारक) गतियां ऐसी हैं कि इनमें से बिना आयु पूर्ण हुए न तो निकल सकते हैं और न वहां से सीधे मोक्ष ही प्राप्त कर सकते हैं । क्योंकि इन दोनों गति के जीवों का शरीर वैक्रियिक है, जो कि अतिशय पुण्य व पाप के कारण उनके फल सुख किंवा दुःख भोगने के लिए ही प्राप्त हुआ है । इसलिए इनसे इन पर्यायों में चारित्र धारण नहीं हो सकता, और चारित्र बिना मोक्ष नहीं होता है । इसलिये इन गतिओं से निकलकर मनुष्य या तिर्यञ्च गतियों में आना ही पड़ता है ।

तिर्यञ्च गति में भी एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चौइन्द्रिय और असैनी पंचेंद्रिय जीवों को तो मन के अभाव से सम्यग्दर्शन ही नहीं हो सकता है । और बिना सम्यग्दर्शन के सम्यग्ज्ञान तथा सम्यक् चारित्र भी नहीं होता है । तथा बिना सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र के मोक्ष नहीं होता है । रहे सैनी पचेंद्रिय जीव, सो इनको सम्यक्त्व हो जाने पर अप्रत्याख्यानावरण कषाय के क्षयोपशम होने से एकदेश व्रत हो सकता है । परन्तु व्रत नहीं, तब मनुष्य गति ही ऐसी गति ठहरी कि जिसमें यह जीव सम्यक्त्व सहित पूर्ण चारित्र को धारण करके

अविनाशी-मोक्षसुख को प्राप्त कर सकता है। मनुष्यों का निवास मध्यलोक ही में है। इसलिये मनुष्य क्षेत्र का कुछ संक्षिप्त परिचय देकर कथाओं का प्रारम्भ करेंगे।

लोकाकाश के मध्य में १ राजू चौड़ा १ राजू लम्बा मध्यलोक है। जिसमें त्रस जीवों का निवास १ राजू लम्बे और १ राजू चौड़े क्षेत्र ही में है। (मध्यलोक का आकार □□□O□□□) इस १ राजू मध्यलोक के क्षेत्र में जंबूद्वीप और लवण समुद्र आदि असंख्यात द्वीप और समुद्र के चूड़ी के आकारवत् एक-दूसरे को घेरे हुए द्वीप से दूना समुद्र और समुद्र से दूना द्वीप इस प्रकार दूने-दूने विस्तार वाले हैं।

इन असंख्यात द्वीप समुद्रों के मध्य में थाली के आकार का गोल एक लाख महायोजन व्यास वाला जम्बूद्वीप है। इसके आस-पास लवण समुद्र, फिर धातकी खण्डद्वीप, फिर कालोदधि समुद्र और फिर पुष्कर-द्वीप के बीचोंबीच एक गोल दीवार के आकार वाले पर्वत से (जिसे मानुषोत्तर पर्वत कहते हैं) दो भागों में बटा हुआ है। इस पर्वत के उस ओर मनुष्य नहीं जा सकता है। इस प्रकार जम्बू, धातकी और पुष्कर आधा (ढाई द्वीप) और लवण तथा कालोदधि ये दो समुद्र मिलकर ४५ महायोजन व्यास वाला क्षेत्र मनुष्यलोक कहलाता है और इतने क्षेत्र से मनुष्य रत्नत्रय को धारण करके मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं।

जीव कर्म से मुक्त हो जाने पर अपनी स्वाभाविक गति के अनुसार ऊर्ध्व-गमन करते हैं। इसलिए जितने क्षेत्र से जीव मोक्ष प्राप्त करके ऊर्ध्वगमन करके लोक-शिखर के अन्त में जाकर धर्मद्रव्य का आगे अभाव होने के कारण अधर्म द्रव्य की सहायता से ठहर जाते हैं; उतने (लोक के अन्त वाले) क्षेत्र को सिद्ध क्षेत्र कहते हैं। इस प्रकार सिद्ध क्षेत्र भी पैंतालीस लाख योजन का ही ठहरा।

इस ढाई द्वीप में पांच मेरु और तीन सम्बन्धी बीस विदेह तथा पांच भरत और पांच ऐरावत क्षेत्र है। इन क्षेत्रों में से जीव रत्नत्रय से कर्म नाश कर सकते हैं। इसके सिवाय और कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, जहां भोगभूमि [युगलियों] की रीति प्रचलित है। अर्थात् वहां के जीव मनुष्यादि अपनी सम्पूर्ण आयु विषय-भोगों ही में बिताया करते हैं। वे भोगभूमियां उत्तम, मध्यम, जघन्य ३ प्रकार

की होती हैं। और उनकी क्रम से तीन, दो और एक पल्य की बड़ी-बड़ी आयु होती है। आहार बहुत कम होता है। ये सब समान (राजा प्रजा के भेद रहित) होते हैं। उनको सब प्रकार की सामग्री कल्पवृक्षों द्वारा प्राप्त होती है। इसलिये वे व्यापार धन्धा आदि की झंझट से बचे रहते हैं। इस प्रकार वे (वहां के जीव) आयु पूर्ण कर मन्द कषायों के कारण देव गति को प्राप्त होते हैं। भरत और ऐरावत क्षेत्रों के आर्य खण्डों में उत्सर्पिणी अवसर्पिणी (कल्पकाल) के छः काल (सुखमा-सुखमा, सुखमा, सुखमा–दुखमा, दुखमा–सुखमा, दुखमा और दुखमा–दुखमा) की प्रवृत्ति होती है। सो इनमें भी प्रथम के तीन कालों में तो भोगभूमि की ही रीति प्रचलित रहती है। शेष तीन काल कर्मभूमि के होते हैं। इसलिए इन शेष कालों में चौथा (दुखमा–सुखमा) काल है, जिसमें त्रेसठ शलाका आदि महापुरुष उत्पन्न होते हैं।

पांचवें और छठवें काल में क्रम से आयु, काय, बल, वीर्य घट जाता है और इन कालों में कोई भी जीव मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता है। विदेह क्षेत्रों में ऐसी काल-चक्र की फिरन नहीं होती है। वहां तो सदैव चौथा काल रहता है। और कम से कम २० तथा अधिक से अधिक १६० श्री तीर्थंकर भगवान तथा अनेकों सामान्य केवली और मुनि श्रावक आदि विद्यमान रहते हैं और इसलिये सदैव ही मोक्षमार्ग का उपदेश व साधन रहने से जीव मोक्ष प्राप्त करते रहते हैं। जिन क्षेत्रों में रहकर जीव आत्मधर्म को प्राप्त होकर मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं अथवा जिनमें मनुष्य असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प व विद्यादि द्वारा आजीविका करके जीवन निर्वाह करते हैं, वे कर्मभूमिज कहलाते हैं।

इस मनुष्य क्षेत्र के मध्य जो जंबूद्वीप है, उसके बीचों-बीच सुदर्शन मेरु नाम का स्तम्भाकार एक लाख योजन ऊंचा पर्वत है। इस पर्वत पर सोलह अकृत्रिम जिनमंदिर हैं। यह वही पर्वत है जिस पर भगवान का जन्माभिषेक इन्द्रादि देवों द्वारा किया जाता है। इसके सिवाय ६ पर्वत और भी दण्डाकार (भीत के समान) इस द्वीप में हैं, जिनके कारण यह द्वीप सात क्षेत्रों में बँट गया है। ये पर्वत सुदर्शन मेरु के उत्तर और दक्षिण दिशा में आड़े पूर्व-पश्चिम तक समुद्र से

मिले हुये हैं । इन सात क्षेत्रों में से दक्षिण की ओर से सब के अन्त के क्षेत्रों को भरत क्षेत्र कहते हैं ।

इस भरत क्षेत्र में भी बीच में विजयार्द्ध पर्वत पड़ जाने से यह दो भागों में बँट जाता है । और उत्तर की ओर जो हिमवान् पर्वत पर पद्मद्रह है, उससे गंगा और सिंधु दो महा नदियां निकलकर विजयार्द्ध पर्वत को भेदती हुई पूर्व और पश्चिम से बहती हुई दक्षिण समुद्र में मिलती हैं । इससे भरत क्षेत्र के छः खण्ड हो जाते हैं, इन छः खण्डों में से सबसे दक्षिण का बीचवाला खण्ड आर्यखण्ड कहलाता है । और शेष ५ म्लेच्छ खण्ड कहलाते है । इसी आर्यखण्ड में तीर्थंकरादि महापुरुष उत्पन्न होते हैं । यही आर्यखण्ड कहलाता है ।

इसी आर्यखण्ड में मगध नाम का एक प्रदेश है, जिसे आजकल बिहार प्रांत कहते हैं ।

इस मगध देश में राजगृही नाम की एक बहुत मनोहर नगरी है । और इस नगरी के समीप विपुलाचल, उदयाचल आदि पांच पहाड़ियां हैं, तथा पहाड़ियों के नीचे कितनेक उष्ण जल के कुण्ड बने हैं । इन पहाड़ियों व झरनों के कारण नगर की शोभा विशेष बढ़ गई है । यद्यपि कालदोष से अब यह नगर उजाड़ हो रहा है, परन्तु उसके आस-पास के चिन्ह देखने से प्रकट होता है कि किसी समय यह नगर अवश्य ही बहुत उन्नत रहा होगा ।

आज से ढाई हजार वर्ष पहिले अन्तिम (चौबीसवें) तीर्थङ्कर श्री वर्द्धमान स्वामी के समय में इस नगर में महामण्डलेश्वर महाराजा श्रेणिक राज्य करता था । वह राजा बड़ा प्रतापी, न्यायी और प्रजापालक था । वह अपनी कुमार अवस्था में पूर्वोपार्जित कर्म के उदय से अपने पिता द्वारा देश से निकाला गया था और भ्रमण करते हुए एक बौद्ध साधु के उपदेश से बौद्ध मत को स्वीकार कर चुका था । वह बहुत काल तक बौद्ध मतावलम्बी रहा । जब यह श्रेणिक कुमार निजबाहु बुद्धिबल से विदेशों में भ्रमण करके बहुत विभूति व ऐश्वर्य सहित स्वदेश को लौटा, तो वहां के निवासियों ने इन्हें अपना राजा बनाना स्वीकार किया । इस समय इनके पिता उपश्रेणिक राजा का स्वर्गवास हो चुका था, और इनके एक

भाई चिलात नाम के अपने पिता द्वारा प्रदत्त राज्य करते थे। इनके राज्यकार्य में अनभिज्ञ होने तथा प्रजा पर अत्याचार करने के कारण प्रजा अप्रसन्न हो गई थी, इसी से सब प्रजा ने मिलकर राज्य-च्युत कर दिया था।

ठीक है, राजा प्रजा पर अत्याचार नहीं कर सकता, वह एक प्रकार से प्रजा का रक्षक (नौकर) ही होता है। क्योंकि प्रजा के द्वारा द्रव्य मिलता है, अर्थात् उसकी जीविका प्रजा के आश्रित है इसलिए वह प्रजा पर नीतिपूर्वक शासन कर सकता है न कि स्वेच्छाचारी होकर अन्याय कर सकता है। उसका कर्त्तव्य है कि वह प्रजा की भलाई के लिए सतत प्रयत्न करे, तथा उसकी यथासाध्य रक्षा व उन्नति का उपाय करता रहे, तभी वह राजा कहलाने योग्य हो सकता है, और प्रजा भी तभी उसकी आज्ञाकारिणी हो सकती है। राजा और प्रजा का संबंध पिता और पुत्र के समान होता है, इसलिए जब-जब राजा की ओर से अन्याय व अत्याचार बढ़ जाते हैं, तब-तब प्रजा अपना नया राजा चुन लिया करती है और उस अत्याचारी अन्यायी राजा को राज्यच्युत करके निकाल देती है।

इसी नियमानुसार राजगृही की प्रजा ने अन्यायी चिलात नामक राजा को निकाल कर महाराजा श्रेणिक को अपना राजा बनाया और इस प्रकार श्रेणिक महाराज नीतिपूर्वक पुत्रवत् प्रजा का पालन करने लगे।

पश्चात् इनका एक और ब्याह राजा चेटक की कन्या चेलना कुमारी से हुआ। चेलना रानी जैनधर्मानुयायी थी और राजा श्रेणिक बौद्ध मतानुयायी था। इस प्रकार यह केर-बेर (केला और बेरी) का साथ बन गया था। इसलिए इनमें निरन्तर धार्मिक वाद-विवाद हुआ करता था। दोनों पक्षवाले अपने अपने पक्ष के मण्डन तथा परपक्ष के खण्डनार्थ प्रबल-प्रबल युक्तियां दिया करते थे। परन्तु 'सत्य-मेव जयते सर्वदा" की उक्ति के अनुसार अन्त में रानी चेलना ही की विजय हुई। अर्थात् राजा श्रेणिक ने हार मानकर जैनधर्म स्वीकार कर लिया और उसकी श्रद्धा जैनधर्म में अत्यन्त दृढ़ हो गई। इतना ही नहीं किन्तु वह जैनधर्म, देव या गुरुओं का परम भक्त बन गया और निरन्तर जैनधर्म की उन्नति में सतत प्रयत्न करने लगा।

एक दिन इसी राजगृही नगर के समीप उद्यान (वन) में बिपुलाचल पर्वत पर श्रीमद्देवाधिदेव परम भट्टारक श्री १००८ वर्द्धमान स्वामी का समवशरण आया, जिसके अतिशय से वहां के उपवनों में छह ऋतुओं के फूल-फल एक ही साथ लग गये तथा नदी, सरोवर आदि जलाशय जलपूर्ण हो गये। वनचर, नभचर व जलचर आदि जीव सानन्द अपने-अपने स्थानों में स्वतन्त्र निर्भय होकर विचरने और क्रीड़ा करने लगे, दूर-दूर तक रोग मरी व अकाल आदि का नाम भी न रहा, इत्यादि अनेकों अतिशय होने लगे। तब वनमाली उन फूल और फलों की डाली लेकर यह आनन्ददायक समाचार राजा के पास सुनाने के लिए गया और विनययुक्त भेंट करके सब समाचार कह सुनाये।

राजा श्रेणिक यह सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुवा और अपने सिंहासन से तुरन्त ही उतर कर विपुलाचल की ओर मुँह करके परोक्ष नमस्कार किया। पश्चात् वनपाल को यथेच्छ पारितोषिक दिया और यह शुभ संवाद सब नगर में फैला दिया। अर्थात् घोषणा करा दी कि-महावीर भगवान का समवशरण विपुलाचल पर्वत पर आया है, इसलिये सब नरनारी वन्दना के लिये चले और राजा स्वयं भी अपनी विभूति सहित हर्षित मन होकर वन्दना के लिये गया। जाते २ मान-स्तम्भ पर दृष्टि पड़ते ही राजा हाथी से उत्तर कर पांच प्यादे के साथ समवशरण में रानी आदि स्वजनपुरजनों सहित पहुंचा और सब ठौर यथायोग्य वन्दना स्तुति करता हुआ और भक्ति से नम्रीभूत स्तुति करके मनुष्यों की सभा में जाकर बैठ गया। और सब लोग भी यथायोग्य स्थानों में बैठ गये।

तब मुमुक्षु (मोक्षभिलाषी) जीवों के कल्याणार्थ श्री जिनेन्द्र देव के द्वारा मेघों की गर्जना के समान ॐकार रूप अनक्षरवाणी (दिव्य-ध्वनि) हुई। यद्यपि इस वाणी को सब उपस्थित समाज अपनी-अपनी भाषा में यथा-सम्भव निज ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम के अनुसार समझ लेते हैं, तथापि गणधर (गणेश जो कि मुनियों की सभा में श्रेष्ठ चार ज्ञान के धारी होते हैं) उक्त वाणी को द्वादशांगरूप कथन कर भव्य जीवों को भेदभाव रहित समझाते हैं सो उस समय श्री महावीर स्वामी के समवशरण में उपस्थित गणनायक श्री गौतम स्वामी ने प्रभू की वाणी को सुनकर सभाजनों को सात तत्व, नव पदार्थ, पंचास्तिकाय इत्यादि

का स्वरूप समझाकर रत्नत्रय (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान सम्यक् चारित्र) मोक्षमार्ग का कथन किया और सागार (गृहस्थ) धर्म का तथा अनगार (साधु) धर्म का उपदेश दिया जिसे सुनकर निकटभव्य (जिनकी संसार-स्थिति थोड़ी रह गई है अर्थात् मोक्ष होना निकट रह गया है) जीवों ने यथाशक्ति मुनि अथवा श्रावक के व्रत धारण किये। तथा जो शक्तिहीन जीव थे और जिनको दर्शनमोह का उपशम व क्षय हुआ था। सो उन्होंने सम्यक्त्व ही ग्रहण किया। इस प्रकार जब वे भगवान धर्म का स्वरूप कथन कर चुके, तब उस सभा में उपस्थित परम श्रद्धालु भक्त राजा श्रेणिक ने विनय युक्त नम्रीभूत हो श्री गौतम स्वामी (गणधर) से प्रश्न किया कि हे प्रभु व्रत की विधि किस प्रकार है और इस व्रत को किसने पालन किया तथा क्या फल पाया? सो कृपाकर कहो, ताकि हीनशक्तिधारी जीव भी यथाशक्ति अपना कल्याण कर सके और जिनधर्म की प्रभावना होवे।

नोट :—इस भूमिका को प्रत्येक व्रतकथा को पढ़ते समय पहले पढ़ना फिर व्रतकथा पढ़ना चाहिए, अवश्य ध्यान रखें। बहुत ही पुण्यसंचय होगा।

जिस व्रतविधि के आगे कथा नहीं है वहां इस कथा को पढ़ें। जिसमें उद्यापनविधि नहीं लिखी है वहां सामान्यतया पंचपरमेष्ठि विधान या चौबीसी विधान कर, दान पूजादिक देकर, मंदिर में उपकरणादि भेंट कर हाथ जोड़ लेना चाहिए।

व्रतों के उद्यापन

व्रत-विधान अवगत हो जाने पर उनके उद्यापन की विधि का जान लेना आवश्यक है। सम्यक् प्रकार अनुष्ठान के बाद उद्यापन कर देने पर ही व्रतों का फल प्राप्त होता है। उद्यापन की विधि निम्न प्रकार है—

रत्नत्रय व्रत के उद्यापन की विधि :—

इस व्रत का उद्यापन भाद्रपद शुक्ला पूर्णिमा को किया जाता है अथवा पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा के अवसर पर कभी भी किया जा सकता है। उद्यापन करने के दिन श्री मन्दिर जी में जाकर सर्वप्रथम एक गोल चौकी या टेबल पर रत्नत्रय व्रतोद्यापन का मण्डल बनाना (मांडना) चाहिए। चौकी चार फुट लम्बी और इतनी ही चौड़ी होनी चाहिए। चौकी पर श्वेत वस्त्र बिछाकर लाल, पीले, हरे, नीले और

श्वेत रंग के चावलों से मण्डल बनाना चाहिए । इस मण्डल में कुल ९३ कोठे होते हैं । मण्डल गोलाकार बनता है । मण्डल के बीच में "ॐ ह्रीं रत्नत्रयव्रताय नमः' लिखें । इसके पश्चात् दूसरा मण्डल सम्यग्दर्शन का होता है । इसके बारह कोठे हैं । तीसरा मण्डल सम्यग्ज्ञान का होता है, इसके ४८ कोठे हैं । चौथा मण्डल सम्यक्चारित्र का होता है, इसके ३३ कोठे हैं ।

घटयात्रा विधि :—मन्दिर में सर्वप्रथम भगवान् के अभिषेक के लिए जल लाने की क्रिया करे । जलयात्रा की विधि—समस्त उद्यापनों के लिए जलयात्रा का विधान यह है कि सौभाग्यवती स्त्रियां घर से तूल में लिपटे और कलावा से सुसंस्कृत नारियलों से ढ़के कलश जलाशय के पास ले जावें । जलाशय के पूर्वभाग या उत्तर भाग में भूमि को जल से धोकर पवित्र करे । पश्चात् उस भूमि पर चावलों का चौक बनाकर चावलों का पुञ्ज रखें और कलशों को उन पर स्थापित कर दिया जाय । चौक के चारों कोनों पर दीपक जलाना चाहिए । पश्चात् निम्न विधान कर कुएँ से जल निकाला जाय ।

पद्मापादनतो महामृतभवानन्दप्रदाना नृणां ।
जैनो मार्ग इवावभासिविमलो योगीव शीतीभवन् ।
जैनेन्द्रस्तपनोचितोदकतया क्षीरोदवत्तत्सतां ।
पूज्यं त्वां शुभशुद्ध जीवननिधिं कासारसंपूजये ।।१।।

'ॐ ह्रीं पद्माकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा पढ़कर' जलाशय/कुएँ पर अर्घ चढ़ावे ।

श्रीमुख्यदेवीः कुलशैलमूर्धपद्मादि पद्माकरपद्मसक्ताः ।
पयःपटीराक्षतपुष्पहव्य प्रदीपधूपोद्धफलैः प्रयक्ष्ये ।।२।।

ॐ ह्रीं श्रीप्रभृतिदेवताभ्यः इदं जलादि अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा । यहां से जलाशय की पूजा करे ।

गङ्गादिदेवीरतिमङ्गलाङ्गा गङ्गादि विख्यातनदीनिवासाः ।
पयःपटीराक्षतपुष्पहव्यप्रदीपधूपोद्धफलैः प्रयक्ष्ये ।।३।।

ॐ ह्रीं गंगादिदेवीभ्य: इदं जलादि अर्घ्यं निर्वपा० ।

सीतानदीविद्ध महाह्रदस्थान् ह्रदेश्वरान्नागकुमारदेवान् ।
पयःपटीराक्षतपुष्पहव्यप्रदीपधूपोद्धफलैः प्रयक्ष्ये ।।४।।

ॐ ह्रीं सीता विद्धमहाह्रददेभ्यः इदं जलादि अर्घ्यं नि० ।

सीतोत्तरामध्यमहाह्रदस्थान् ह्रदेश्वरान्नागकुमारदेवान् ।
पयःपटीराक्षतपुष्पहव्यप्रदीपधूपोद्धफलैः प्रयक्ष्ये ।।५।।

ॐ ह्रीं सीतोदाविद्धमहाह्रददेवेभ्यः इदं जलादि अर्घ्यं नि० ।

क्षीरोदकालोदक तीर्थवर्तिश्रीमागधादीनमरानशेषान् ।
पयःपटीराक्षतपुष्पहव्यप्रदीपधूपोद्धफलैः प्रयक्ष्ये ।।६।।

ॐ ह्रीं लवणोदकालोदमागधादितीर्थ देवेभ्यः इदं जलादि अर्घ्यं नि० ।

सीतातदन्त्यद्वयतीर्थवर्तिश्रीमागधादीनमरानशेषान् ।
पयःपटीराक्षतपुष्पहव्यप्रदीपधूपोद्धफलैः प्रयक्ष्ये ।।७।।

ॐ ह्रीं सीतासीतोदामागधादि तीर्थ देवेभ्यः जलादि अर्घ्यं नि० ।

समुद्रनाथांल्लवणोदमुख्य संख्याव्यतीताम्बुधिभूतिभोक्तृ ।
पयःपटीराक्षतपुष्पहव्यप्रदीपधूपोद्धफलैः प्रयक्ष्ये ।।८।।

ॐ ह्रीं संख्यातीत समुद्रदेवेभ्यः जलादि अर्घ्यं नि० ।

लोकप्रसिद्धोत्तमतीर्थं देवान्नन्दीश्वरद्वीपसरः स्थितादीन् ।
पयःपटीराक्षतपुष्पहव्यप्रदीपधूपोद्धफलैः प्रयक्ष्ये ।।९।।

ॐ ह्रीं लोकाभिमततीर्थ देवेभ्यः इदं जलादि अर्घ्यं नि० ।

गङ्गादयः श्रीमुखाश्च देव्यः श्रीमागधाद्याश्च समुद्रनाथाः ।
ह्रदेशिनोऽन्ऽयेऽपि जलाशयेशास्ते सारयन्त्वस्य जिनोचिताम्भः ।।

उपर्युक्त श्लोकों को पढ़कर कुएँ से जल निकालना आरम्भ करना चाहिए और जल को छानकर एक बड़े बर्तन में रख लेना, पश्चात् निम्न मन्त्र पढ़कर कलशों में जल भरना चाहिए ।

ओं ह्रीं श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी शान्तिपुष्टयः श्रीदिक्कुमार्यो जिनेन्द्रमहाभिषेककलशमुखेष्वेतेषु नित्यविशिष्टः भवत भवत स्वाहा ।

तीर्थेनानेन तीर्थान्तरदुरधिगमोदार दिव्यप्रभावः
स्फूर्जत्तीर्थोत्तमस्य प्रथितजिनपतेः प्रेषितप्राभृताभान् ।
श्रीमुख्यख्यातदेवीनिवहकृतमुखाध्यासनोभूतशक्ति-
प्रागल्भ्यानुद्धरामो जयजयनिनदे शातकुम्भीयकुम्भान् ।।

इस श्लोक को पढ़कर जलशुद्धि विधानपूर्वक करे । विसर्जन करके जल-कलशों को सौभाग्यवती स्त्रियों अथवा कन्याओं द्वारा ले आना चाहिए । कलशों की संख्या ६ रहती है ।

जल लाकर भगवान का अभिषेक करना चाहिए । अभिषेक के पश्चात् निम्न मन्त्र पढ़कर केशर मिश्रित जलधारा छोड़नी चाहिए ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं नमोऽर्हते भगवते श्रीमते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वक्षामरकामरविनाशनाय-ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा पवित्रतर गन्धोदकेन जिनमभिषिञ्चामि । मम सर्वशान्ति कुरु कुरु तुष्टि कुरु कुरु पुष्टि कुरु कुरु स्वाहा ।

जल लाने के उपरान्त महाभिषेक, तदनन्तर स्वस्ति मङ्गलविधान करे। पश्चात् सकलीकरण की क्रिया करनी चाहिए । यह सकलीकरण की क्रिया स्नानोपरान्त जलयात्रा के पूर्व भी की जा सकती है । परन्तु उत्तम मार्ग यही है कि जलयात्रा के उपरान्त सकलीकरण क्रिया की जाय । इसके पश्चात् मङ्गलाष्टक, सहस्रनाम आदि स्वस्तिविधान एवं रत्नत्रय व्रतोद्यापन की पूजा करनी चाहिए । पूजन के पश्चात् निम्न मन्त्र पढ़कर संकल्प छोड़ना चाहिए । संकल्प, सुपाड़ी, हल्दी, पीली सरसों और एक पैसा रहना चाहिए ।

ओं अथ भगवतो महापुरुषस्य श्रीमदादिब्रह्मणो मते त्रैलोक्य मध्यमध्यासीने मध्यलोके श्रीमदनावृतयक्षसंसेव्यमाने दिव्यजम्बूवृक्षोपलक्षितजम्बूद्वीपे महनीयमहामेरोर्दक्षिणभागे अनादिकालसंसिद्धभरतनामधेयप्रविराजितषट्खण्डमण्डितभरतक्षेत्रे सकल

शलाकापुरुषसम्बन्धविराजितार्यखण्डे परमधर्मसमाचरण (इस स्थान पर अपने प्रदेश का नाम जोड़ना चाहिए) प्रदेशे अस्मिन् विनेयजनताभिरामे (इस स्थान पर अपने नगर का नाम जोड़ना चाहिए) नगरे अस्मिन् दिव्यमहाचैत्यालय प्रदेशे एतदवसर्पिणीकालावसाने प्रवृत्तसुवृत्तचतुर्दशमनूपमान्वितसकललोकव्यवहारे श्री वृषभस्वामि पौरस्त्यमङ्गलमहापुरुषपरिषत्प्रतिपादित परमोपशमपर्वक्रमे वृषभसेनसिंहसेनचारुसेनादिगणगणधरस्वामिनिरूपितविशिष्टधर्मोपदेशे पञ्चमकाले प्रथमपादेमहतिमहावीरवर्धमानतीर्थङ्करोपदिष्टसद्धर्मव्यतिकरेश्रीगौतमस्वामिप्रतिपादितसन्मार्गप्रवर्तमाने श्रेणिकमहामण्डलेश्वरसमाचरितसन्मार्गविशेषे......मितेविक्रमांङ्के भाद्रपदमासे शुक्लपक्षे पूर्णिमायांतिथौ.........वासरे प्रशस्ततारकायोगकरणनक्षत्रहोरामुहूर्त लग्नयुक्तायाम् अष्टमहाप्रातिहार्य शोभितश्रीमदर्हत्परमेश्वरसन्निधौ अहं.........रत्नत्रयनामक व्रतं स्थापयामि ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वशान्तिर्भवतु सर्वकल्याणं भवतु श्री क्लीं नमः स्वाहा ।

जलधारा के पश्चात् गन्धोदक लेने का मन्त्र—

मुक्तिश्रीवनिताकरोदकमिदं पुण्यांकुरोत्पादकं
नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्रपदवीराज्याभिषेकोदकम् ।।
सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलतासंवृद्धिसंपादकं ।
कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिनस्नानस्य गन्धोदकम् ।।

इसके अनन्तर पुण्याहवाचन, शान्ति, विसर्जन आदि को सम्पन्न करे।

रत्नत्रयव्रतोद्यापन की सामग्री :—

उद्यापन के लिए पूजन सामग्री, रत्नत्रय यन्त्र, तेरह शास्त्र, मन्दिर के लिए तेरह पूजन के बर्तन, छत्र, चमर, झारी आदि मंगलद्रव्य, चंदोवा तथा नगदी रूपये दान देना चाहिए । उद्यापन के उपरान्त साधर्मी भाइयों के तेरह घरों में फल भेजना चाहिए । यदि शास्त्र और पूजन के बर्तन तेरह-तेरह देने की शक्ति न हो तो कम से कम तीन । अवश्य देने चाहिए । इस व्रत का उद्यापन तीन वर्षों में किया जाता है । पूजन में चढ़ाने के लिए ९३ चांदी के स्वस्तिक, इतनी ही सुपारियां, चार नारियल रहने चाहिए । ये नारियल प्रत्येक वलय की पूजा

में चढ़ाने चाहिए। सुपारी, साथिया प्रत्येक अर्घ में लेना चाहिए। यह अर्घ्य मांडने के कोठे में चढ़ेगा।

नोट :—किसी भी व्रतोद्यापन में घटयात्रा (जल यात्रा) को कर सकते हैं, घटयात्रा की विधि उपरोक्त ही है, इस विधि को किसी भी व्रत के घटयात्रा में कर सकते हैं। यही घटयात्रा की विधि है।

श्री आदिनाथ जयंति व्रत

चैत्र वदी नवमी दिन जान, उपजे आदिनाथ भगवान।

भावार्थ :—चैत्र वदी नवमी के पवित्र दिन में चौदहवें कुलकर श्री नाभिराज तथा मरुदेवी रानी की पवित्र कूख से धर्मतीर्थ के प्रवर्त्तक श्री ऋषभनाथ भगवान् ने अवतार लिया, इस दिन महाभिषेकपूर्वक पूजन विधान व उपवास करे। शास्त्रसभा धर्मोपदेश द्वारा धर्म की खूब प्रभावना करे।

श्री ह्रीं श्री वृषभनाथाय नमः—इस मंत्र का त्रिकाल जाप्य करें।

श्री आदिनाथशासनजयंति व्रत

फागुन वदि एकादशि जान, वाणी खिरी आदि भगवान।

भावार्थ :—फाल्गुन कृष्ण ११ के दिन श्री आदिनाथ महात्मा ने घातिया कर्मों का नाश कर केवलज्ञान प्राप्त किया और संसार के प्राणियों के हितार्थ अपनी दिव्यध्वनि द्वारा इस दिन प्रथम उपदेश दिया, इसलिये इस पवित्र दिन धर्मप्रभावना करे और उपवास करे।

'**ओं ह्रीं श्री वृषभाय नमः**' इस मंत्र का त्रिकाल जाप्य करे।

श्री आदिनाथनिर्वाणोत्सव व्रत

माघ वदी चौदशि दिन कह्यो, आदिनाथ प्रभु शिवपुर लह्यो।

भावार्थ :—माघ वदी १४ के पवित्र दिन श्री आदिनाथ भगवान् ने मोक्ष प्राप्त किया था। इस दिन उपवास करे।

'**ओं ह्रीं श्री वृषभाय नमः**' इस मंत्र का त्रिकाल जाप्य करे।

अशोकरोहिणी व्रत

दोहा—व्रत अशोकरोहिणी तनो, करहुँ जे भवि जीव ।
सात बीस प्रोषध सकल धरत्रिशुद्धिता कीव ।।

अडिल्ल छंद–जिस दिन महा नक्षत्र रोहिणी आय है ।
ताके प्रोषध करे सकल सुखदाय है ।
अनुक्रमतें उपवास सत्ताईस जानिये ।
बरस सवा द्वय माहिं पूर्णता मानिये ।

—कि. सिं. क्रि.

भावार्थ :—यह व्रत दो वर्ष और तीन महिने में पूर्ण होता है । प्रत्येक मास में रोहिणी नक्षत्र के दिन उपवास करे । नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे । व्रत समाप्त होने पर उद्यापन करे ।

वह व्रत अंग देश में चम्पा नगरी के राजा मघवा की पुत्री रोहिणी तथा हस्तिनापुर के राजा वीतशोक के पुत्र अशोक ने किया था, जिससे दोनों पति-पत्नी स्वर्गादिक सुख भोग मोक्ष को प्राप्त हुए ।

अनस्तमी व्रत

अनस्तमी व्रत विधि इम पाल; घटिका द्वय रवि अघवत टाल ।
दिवस उदय घटिका द्वय चढ़े, चहुं प्रकार आहारहिं तजे ।।

—कि. सिं. क्रि.

भावार्थ :—यह व्रत जीवन पर्यन्त के लिए ग्रहण किया जाता है । दो घड़ी (४८-मिनट) दिन चढ़ने के बाद और २ घड़ी दिन शेष रहने के पहले भोजन से निवृत्त हो जाये । शेष समय में चारों प्रकार के आहारों का त्याग करे । प्रतिदिन त्रिकाल नमस्कार मन्त्र का जाप्य करे ।

मगध देश के सुप्रतिष्ठ नगर के एक बगीचे में सागरसेन नाम के मुनि के पास मांस का लोलुपी एक स्यार आया । मुनिराज ने उसे धर्मोपदेश देकर रात्रि-भोजन त्याग का व्रत दिया । उस स्यार ने उसका जीवन पर्यन्त भावपूर्वक पालन

किया, जिसके प्रभाव से मरण बाद उसी ग्राम में सेठ कुबेरदत्त के यहाँ प्रीतकर नाम का पुत्र हुआ, और वह संसार से उदास होकर जिनदीक्षा ग्रहण कर कर्मनाश कर मोक्ष प्राप्त किया।

आचारवर्धन (अत्राम्लवर्धन व्रत)

इक से दश लग प्रोषध करे, बिच बिच इक इक पारणा धरे।
फिर दश से इक लग व्रत धार, इक इक बीच पारणा सार।
कुल इक शत उपवास कराय, अरु उन्नीस पारणा थाय।
(सुदृष्टितरंगिणी)

भावार्थ :—यह व्रत ११९ दिन में पूरा होता है, जिसमें १०० उपवास और १९ पारणा होती हैं। किसी भी मास से व्रत प्रारम्भ करे। एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, इस क्रम से १० उपवास तक करे, फिर एक एक घटाकर एक उपवास तक आवे। इस प्रकार व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

अंतराय कर्म निवारण व्रत कथा

इस व्रत की विधि भी पूर्व लिखित प्रमाण है, अषाढ शुक्ल सप्तमी को एकासन अष्टमी को उपवास, चंद्रप्रभ तीर्थंकर की आराधना करे, मंत्र जाप्य भी उसी प्रकार करे, कथा भी रानी चेलना की पढ़े।

अपूर्व व्रत की विधि

भगवन् ! अपूर्वव्रतस्य किं स्वरूपमिति पृष्टे उत्तरमाह श्रूयतां श्रावकोत्तम ! भाद्रपदमासे शुक्लपक्षे पूर्वादिदिवसत्रये त्रिरात्रं च क्रियते; तत्र भुक्तिरेकान्तरेण वा पञ्चाब्दादि यावत्काय ततश्चोद्यापनम्, पूर्वतिथिक्षये पूर्वा तिथिरमावस्या कार्या एतद्व्रतं पाक्षिकं चान्यैः प्रोक्तं तेषामपेक्षया द्वितीया पूर्वाभवति, व्रतं तु चतुर्थीपर्यन्तं भवति। परन्तु नैतन्मतं प्रमाणं, कथं बलात्कारिणां मते चतुर्थी दशलाक्षणिकव्रतस्यादि धारणादिनत्वात् न ग्राह्या; अधिकतिथावछिकमार्गेण व्रतं कार्यम् दाने लाहे भोग उपभोगे वीरियेण संमतेण केवलद्धीउ दंसणणाणे चरित्तेय इति फलं ज्ञातव्यम्।

अर्थ :—हे भगवन् ! अपूर्व व्रत का क्या स्वरूप है ? इस प्रकार प्रश्न करने पर, गौतम गणधर ने उत्तर दिया—हे श्रावकोत्तम सुनिये--भाद्रपद मास में शुक्ल पक्ष

में पूर्वादि तीन दिन और तीन रात्रियों में व्रत करते हैं। एक दिन व्रत, पश्चात् एकाशन पुनः व्रत इस प्रकार तीन दिन व्रत किया जाता है। पांच वर्ष तक व्रत करने के उपरान्त उद्यापन किया जाता है। पूर्व तिथि के क्षय होने पर पूर्वा तिथि अमावस्या मानी जाती है। कुछ आचार्य इस व्रत को पाक्षिक मानते हैं। उनके मत से तिथिक्षय होने पर पूर्वा द्वितीया तिथि ली गयी है, अतः द्वितीया से चतुर्थी पर्यन्त व्रत करना चाहिए। परन्तु यह मत प्रामाणिक नहीं है, क्योंकि बलात्कार गण के आचार्य चतुर्थी तिथि को दशलक्षण व्रत की धारणा तिथि मानते हैं। अतः चतुर्थी का ग्रहण नहीं होना चाहिए।

तिथिवृद्धि होने पर एक दिन अधिक व्रत करना चाहिए। इस व्रत का फल अपूर्व ही होता है। दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य, सम्यक्त्व, क्षायिक लब्धि, क्षायिक ज्ञान, क्षायिक दर्शन और क्षायिक चारित्र आदि की प्राप्ति इस व्रत के करने से होती है।

विवेचन—अपूर्व व्रत भादों सुदी प्रतिपदा से लेकर तृतीया तक किया जाता है। इसका दूसरा नाम त्रैलोक्यतिलक व्रत भी है। इस व्रत में प्रतिपदा को उपवास कर गृहारम्भ का त्याग कर तीनों काल की चौबीसी की पूजा करनी चाहिए अथवा तीन लोक की रचना कर अकृत्रिम चैत्यालयों की स्थापना कर विधिपूर्वक पूजा करनी चाहिए। तीनों काल **'ओं ह्रीं त्रिलोकसम्बन्ध्य कृत्रिम-जिनालयेभ्यो नमः'** मन्त्र का जाप करना चाहिए। द्वितीया के दिन उपवास करना और शेष धार्मिक विधि पूर्ववत् ही सम्पन्न की जाती है। तृतीया के दिन उपवास करना घर का आरम्भ त्याग कर जिनालय में जाकर उत्साहपूर्वक धार्मिक अनुष्ठानों को पूर्ण करना। अकृत्रिम जिनालयों का पूजन, त्रिकाल सम्बन्धी चतुर्विंशति जिनपूजन आदि पूजन विधानों को विधिपूर्वक करना चाहिए। इस दिन तीनों काल **'ॐ ह्रीं त्रिकालसम्बन्धित्रिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः'** इस मंत्र का जाप किया जाता है। रात जागरण कर धर्मध्यानपूर्वक बितायी जाती है तथा चौबीसों भगवान् की स्तुतियों को रात में पढ़कर भावनाओं को पवित्र किया जाता है। तिथिक्षय होने पर इस व्रत को अमावस्या से आरम्भ करना चाहिए। समाप्ति सर्वदा ही तृतीया को की जाती है। लोक में तिलक व्रत का विधान अन्यत्र केवल तृतीया का

ही मिलता है, परन्तु पूरी विधि तीन दिनों में सम्पन्न की जाती है। तीन वर्ष या पांच वर्ष व्रत करने के पश्चात् उद्यापन किया जाता है।

अक्षयनिधि व्रत की विधि के सम्बन्ध में विशेष—

अक्षयनिध्याख्यं व्रतं श्रावणशुक्लपक्षे दशमीदिने दशाब्दमध्यघटोपरिस्थित-चतुर्विंशतिकायाः स्नपनं पूजनं च कार्यम्, दशवर्षपर्यन्तं व्रतं भवतीति। पुत्रपौत्रादिवृद्धि-करञ्चेति।

अर्थ :—अक्षयनिधि व्रत में विशेष विधि यह है कि श्रावण शुक्ला दशमी के दिन दस कमलों के ऊपर घड़े को स्थापित कर उसके ऊपर चौबीस भगवान् की प्रतिमाओं को या किसी भी भगवान् की प्रतिमा को स्थापित कर अभिषेक और पूजन करना चाहिए। इसी प्रकार भादों वदी दशमी और भादों सुदी दशमी को भी व्रत करना चाहिए। अक्षयनिधि व्रत के दश वर्ष तक करने से पुत्र-पौत्र, धन-धान्य की वृद्धि होती है।

विवेचन :—अक्षयनिधि व्रत के सम्बन्ध में दो मान्यताएं हैं—प्रथम मान्यता श्रावणवदी दशमी; भादों वदी दशमी और भादों सुदी दशमी इन तीन तिथियों में व्रत करने की है। इस मान्यता का आचार्य ने पहले वर्णन किया है।

व्रत अर्षनिधि का उपवास।
श्रावणसुदि दशमी करितास॥
भादों वद जब दशमी होय। तिनहूं के प्रोषध अवलोय॥
अवर सकल एकन्त जुकरै। सो दस वर्षा हि पूरो करै॥
उद्यापन करि छांडै ताहि। तांतरिपुगणौ करिहै जाहि॥
—क्रियाकोश किशनसिंह।

द्वितीय मान्यता के अनुसार यह व्रत श्रावण वदी दशमी में आरम्भ किया जाता है तथा भादों वदी दशमी को समाप्त होता है। इसमें दोनों दशमी तिथियों में उपवास तथा शेष तिथियों में एकाशन किये जाते हैं। व्रतारम्भ के दिन दस कमलों के ऊपर केशर,

चन्दन आदि से संस्कृत मिट्टी के घड़े को स्थापित कर, घड़े के ऊपर थाल रखा जाता है। थाल में अष्टकमलदल बनाकर भगवान् की प्रतिमा सिंहासन पर स्थापित की जाती है। इस विधि से प्रतिदिन भगवान् का अभिषेक और पूजन किये जाते हैं। अर्थात् श्रावण सुदी दशमी के दिन प्रतिमा घट के ऊपर स्थापित की जाती है, वह भादों वदी दशमी तक स्थापित रहती है। प्रतिदिन अभिषेक और पूजन होते रहते हैं। इस व्रत में प्रतिदिन दस अष्टक, दस अर्घ और दस फल चढ़ाये जाते हैं। प्रतिदिन तीनों समय सामायिक किया जाता है। तथा त्रेसठ शलाकापुरुषों के पुण्य चरित्रों का अध्ययन, मनन और चिन्तन आदि कार्य सम्पन्न किये जाते हैं।

एकाशन के दिनों में भी प्रथम दिन माड़भात, द्वितीय दिन रसत्याग पूर्वक आहार, तृतीय दिन दूध त्याग सहित आहार, चतुर्थ दिन दही त्याग सहित आहार, पञ्चम दिन नमक त्याग सहित आहार, षष्ठ दिन नियमित रूप से एक ही अन्न का आहार, सप्तम दिन पुनः माड़भात, अष्टम दिन अलौना–बिना नमक और मीठे का भोजन, नवम दिन ऊनोदर, दशम दिन दही त्याग पूर्वक आहार, एकादशवें दिन माड़भात, द्वादशवें दिन एक अन्न आहार, त्रयोदशवें दिन परिगणित वस्तुओं का आहार, चौदहवें दिन ऊनोदर या माड़भात और पन्द्रहवें दिन उपवास किया जाता है। ये सभी दिन संयम के दिन कहलाते हैं। इनमें वाणीसंयम और इन्द्रियसंयम का पालन करना चाहिए। भादों वदी एकादशी को व्रत समाप्त होने के पश्चात् एकाशन किया जाता है। पश्चात् पूर्ववत् सारी क्रियाएं सम्पन्न होने लगती हैं। इस व्रत को विधि पूर्वक सम्पन्न करने से सभी लौकिक सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

अक्षयनिधि व्रत की विधि

अक्षयनिधिनियमस्तु श्रावणशुक्ला दशमी भाद्रपदशुक्ला तत्कृष्णा चेति दशमीत्रयं पञ्चवर्षं यावत् व्रतं कार्यम्; दशमीहीनौ तु नवम्यां वृध्दौ तु यस्मिन् दिने पूर्णा दशमी तस्मिन्नेव दिने व्रतं कार्यम्; वृद्धिगत तिथौ सोदयप्रमाणेऽपि व्रतं न कार्यम्।

अर्थ :—अक्षयनिधि व्रत श्रावणशुक्ला दशमी, भाद्रपदशुक्ला दशमी, भाद्रपद कृष्णा दशमी, इस प्रकार तीन दशमियों को किया जाता है। यह व्रत पांच वर्ष

तक करना होता है। दशमी तिथि की हानि होने पर नवमी को व्रत और दशमी तिथि की वृद्धि होने पर जिस दिन पूर्ण दशमी हो उस दिन व्रत किया जाता है। वृद्धिगत तिथि छः घटी से अधिक हो तो भी दूसरे दिन व्रत करने का विधान नहीं है। यह व्रत वर्ष में तीन दिन से अधिक नहीं किया जाता है, तिथिवृद्धि होने पर भी एक दिन अधिक करने का नियम नहीं है।

विवेचन :—अक्षयनिधि व्रत श्रावण सुदी दशमी, भादों वदी दशमी और भादों सुदी दशमी इन तीनों दशमी तिथियों को वर्ष में एक बार किया जाता है। इस व्रत का दूसरा नाम अक्षयफल दशमी व्रत भी है। अक्षयनिधि व्रत करने वाले को दशमी के दिन प्रोषध करना चाहिए। गृहारम्भ छोड़कर श्रीजिन-मन्दिर में जाकर भगवान् आदिनाथ का अभिषेक और पूजन करना चाहिए। '**ॐ ह्रीं नमो ऋषभाय**' इस मन्त्र का जाप उपवास के दिन १००८ बार करना चाहिए। रात्रि में जागरण, शक्ति न होने पर अल्पनिद्रा ली जाती है। धर्मध्यान व्रत के दिन विशेष रूप से किया जाता है। शीलव्रत श्रावण सुदी नवमी से लेकर भादों सुदी एकादशी तक इस व्रत के धारी को पालना चाहिए।

अष्टदिक्कन्या व्रतकथा

व्रत विधि :—कार्तिक शुक्ला ६ को एकासन करना। आठ दिन तक प्रातः-काल स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजा सामग्री लेकर चैत्यालय जायें। जिनेंद्र को नमस्कार करके नंदादीप जलाएं। श्री चन्द्रप्रभु की प्रतिमा श्यामज्वालामालिनी यक्षयक्षी सहित स्थापित करके पंचामृताभिषेक करें। एक पाटे पर आठ स्वस्तिक बना-कर उस पर पान गंधाक्षत फल वगैरह रखकर वृषभ से लेकर चन्द्रप्रभु पर्यन्त आठ तीर्थ-करों की अष्टक, स्तोत्र जयमाला बोलते हुए अष्टद्रव्य से पूजा करें। श्रुत व गुरु की पूजा करना यक्ष यक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करना। अष्टदिक्कन्यका की अर्चना करना ॐह्रीं अर्हं श्रीचन्द्रप्रभाय श्यामज्वालामालिनीयक्षयक्षीसहिताय नमः स्वाहा" इस मन्त्र से १०८ सुन्दर सफेद पुष्प चढ़ायें। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करें। श्री जिनसहस्रनाम स्तोत्र पढ़कर श्री चंद्रप्रभ तीर्थंकर चरित्र पढ़े। यह व्रतकथा पढ़े। एक पात्र में आठ पान रखकर अष्टद्रव्य व एक नारियल रखकर महार्घ्य करे।

सत्पात्र को आहारादि दें। उस दिन उपवास करके धर्मध्यापूर्वक समय बितायें। दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करना, तीन दिन ब्रह्मचर्य का पालन करना।

इस प्रकार माह में दो बार उसी तिथि को व्रत पूजन करना। ऐसी आठ पूजा पूर्ण होने पर इसका उद्यापन करें। उद्यापन के समय श्री चन्द्रप्रभ तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करें। चतुःसंघ को चार प्रकार का आहार दें। आठ नये मिट्टी के बर्तनों में आठ प्रकार के धान्य भर कर सूत बांध कर गंधाक्षत लगाना और वह भगवान के सामने रखना। उसमें से देव गुरु शास्त्र के सामने एक-एक रखना, १ गृहस्थाचार्य को, १ पद्मावती को, १ जल देवता को, १ क्षेत्रपाल को व १ स्वयं के घर रखें। यह इसकी पूर्ण विधि है।

यह व्रत निर्दोष पालने पर पूर्व में जिन्हें सद्गतिसुख प्राप्त हुआ उनकी कथा इस प्रकार है—

कथा

जम्बूद्वीप में पूर्व विदेह क्षेत्र में पुष्कलावती नामक विशाल देश है। पुंडरीक नामक राज्य में मेघरथ राजा राज्य करता था। उसकी मनोहरा पटरानी थी। तथा दृढरथ पुत्र और वसुमती भी स्त्री थी। जिससे वारिषेण पुत्र हुए ऐसी सुरदेवी नाम की सुशील स्त्री भी थी।

पुत्र-पौत्र, मन्त्री, सेनापति, राजपुरोहित, राजश्रेष्ठी आदि के साथ राजा सुख से कालक्रमण कर रहा था।

एक दिन नगर के उद्यान में सूर्यगति व चन्द्रगति नाम के दो चारण ऋद्धिधारी मुनी आए। जिसे सुनकर राजा पैदल परिवार के साथ दर्शनों को गये। उनकी तीन प्रदक्षिणा करके पूजा स्तुति की। धर्मोपदेश सुनने के बाद हाथ जोड़कर बोले हे दयासिंधु मुनिवर्य आज आप हमें व्रत बतायें। मुनिवर ने उन्हें अष्टदिक्कन्या व्रत की विधि बतायी। यह सुनकर सब को आनन्द हुआ। उस राजा ने परिवारजनों के साथ यह व्रत ग्रहण किया। पश्चात् सब नमस्कार करके नगर को लौटे। योग्य समय तक इस व्रत का पालन करके उद्यापन किया। इस व्रत के करने से मेघरथ राजा को अवधिज्ञान प्राप्त हुआ। बाद में जिनदीक्षा धारण कर घोर तपश्चरण किया जिससे शुक्लध्यान से कर्मक्षय कर मोक्ष को गये। उनको धर्मपत्नी वगैरह परिवारजन भी अपनी योग्यतानुसार सर्वार्थसिद्धि में देव हुए।

आयुकर्म निवारण व्रत कथा

आषाढ शुक्ल ५ पंचमी को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, सुमितनाथ भगवान की पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की व यक्षयक्षी व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं समति नाथाय तुंबरुयक्ष पुरुष दतायक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस यंत्र को १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकारमंत्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढे, पूर्ण अर्घ्य चढावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, सत्पात्रों को दान देवे, दूसरे दिन पूजा व दान करके स्वयं पारणा करे, ब्रम्हचर्य पूर्वक रहे, इस प्रकार शुक्ल पक्ष व कृष्ण पक्ष की पंचमी तिथि को पूर्वोक्त प्रकार पूजा करके, अंत में कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे, उस समय सुमतिनाथ तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे, पाँच सौभाग्यवती को भोजनादि व रत्नालंकार देवे।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढे।

अधिक सप्तमी व्रत कथा

नत्वा श्री वृषभं देवं । सर्व कामार्थ कारणं ।
सर्वलोक प्रमोदाय । वक्ष्येऽहं सप्तमी कथां ॥

आषाढ, कार्तिक, फाल्गुन इन महिनों की कोई भी एक सप्तमी को प्रातःकाल स्नान करके शुद्ध धूले हुवे वस्त्र पहन कर सर्व प्रकार का पूजा साहित्य हाथों लेकर जिनमंदिर को जावे, मंदिर की तीन प्रदक्षिणा देकर साक्षात भगवान का ईर्यापथ शुद्धि पूर्वक दर्शन करे, जिनेन्द्र प्रभु के सामने अखण्ड-दीप जलावे, अभिषेक पीठ पर यक्षयक्षी सहित आदिनाथ प्रभु की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृत अभिषेक करे, फिर अष्टद्रव्य से पूजा करे। यहां यक्षयक्षी सहित प्रतिमा स्थापन करे लिखा है, अगर यक्षयक्षी सहित प्रतिमा नहीं मिले तो जैसी मिले वैसी प्रतिमा स्थापन करके, जहां जैसी परम्परा हो वैसे प्रभू का अभिषेक किया करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वृषभनाथाय, गोमुखयक्ष चक्रेश्वरी यक्षी सहिताय सर्वकर्म विनाशनाय सर्वशांति कुरु २ स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ पुष्पों से जाप्य करे, णमोकार मन्त्र की भी एक माला फेरे । उसके बाद जिनवाणी और निर्ग्रन्थ गुरू की पूजा करे, यक्ष यक्षी और क्षेत्रपाल की यथायोग्य अर्घादि देकर सन्मान करे, एक पाटे पर सात पान अलग-अलग सात जगह रखकर ऊपर अर्घ्य रखे, पांच प्रकार की शुद्ध मीठाई तैयार करके प्रभु को चढावे, बाद में व्रत की कथा का वाचन करे अथवा सुने । इस प्रकार चार महिने तक सप्तमी को पूजा करना, चार महिने पूर्ण होने पर आदिप्रभू का महाभिषेक करके भक्तामर विधान करे, पांच प्रकार की मीठाई से भगवान की नैवेद्य से पूजा करे, सरस्वती क्षेत्रपालादिक को नवीन वस्त्र धारण करावे, (परम्परा हो तो करे, नहीं तो नहीं) पांच मुनियों के संघ में पुस्तक, पिच्छि, कमंडल देवे, चतुर्विध संघ को आहारादि देवे, पांच सौभाग्यवती स्त्रियों को अपने घर में भोजन करावे वस्त्रादिक देकर सन्मान करे, दीन दुःखीजनों को अन्न, वस्त्रादिक देवे, इस प्रकार इस व्रत की विधि है ।

कथा

इस जम्बुद्वीप के भरत क्षेत्र में आर्य खंड है । उसके उत्तर भाग में नेपाल नाम का एक विशाल देश है, उस देश में पंचपुर नाम का नगर है, उस नगर में एक बार योग नाम का राजा राज्य करता था, वह राजा नीतिमान, गुणवान, पराक्रमी था, राजा की रूप में सुन्दर, गुणवती महारानी थी रानी के साथ में राजा सुखों को भोग रहा था, आगे कुछ दिनों के बाद रानी को गर्भ रहा, नौ महिने पूर्ण होने के बाद रानी ने एक सुन्दर तेजस्वी पुत्ररत्न को जन्म दिया, किन्तु वह बालक सब प्रकार की बाल-क्रीड़ा दिखाकर पांच वर्ष में ही मरण को प्राप्त हुआ । पुत्रमरण के शोक से रानी बहुत ही दुःखी रहने लगी । एक बार उस नगर के उद्यान में, त्रिलोक प्रज्ञप्ति नाम के महामुनीवर पधारे, सहसा उद्यान के फल फूल खिलने लगे, मुनि आगमन का अश्चर्य देखकर वहां का वनपालक अपने हाथों में षट्ऋतुओं में फलने फूलने वाले फल फूलों को लेकर राज-सभा में गया, राजा को फल फूल भेंट किए मुनि आगमन के समाचार कह सुनाए राजा ने अपने सिंहासन से उठकर सात पांव आगे चलकर साष्टांग नमस्कार किया, वनपाल को

शरीर के समस्त वस्त्राभरण उत्तार कर सहर्ष दे दिये, समस्त प्रजाजन परिजनों को साथ में लेकर पैदल ही मुनिराज के दर्शनों को उद्यान में पहुंच गया, मुनिराज के चरणों में नमस्कार करके धर्मोपदेश सुनने के लिये मुनिराज के निकट बैठ गया, धर्मोपदेश समाप्त होने के बाद रानी ने हाथ जोड़कर विनय पूर्वक भक्ति से पुछा हे मुनिराज दयासिन्धु कृपा करके बताइये कि मुझे पुत्रदुःख क्यों हुआ हैं, तब मुनिराज ने कहा हे बेटी, संसारी जीवों को संसार में रहकर नाना प्रकार के दुःख उठाने पड़ते हैं। इसलिये जीव को दयामय धर्म ही शरण है, रानी तुम दुःख करना छोड़ दो और जैसा में उपाय बताऊं वैसा कर, तुम अधिक सप्तमी व्रत को भक्ति भाव से करो अन्त में उद्यापन करो, तब तुमको सर्व सुखों की प्राप्ति होगी। इस प्रकार मुनीश्वर के वचन सुनकर रानी को अत्यन्त आनन्द हुआ, रानी ने मुनिराज को कहा कि हे गुरुदेव, कृपा करके मुझे अधिक सप्तमी व्रत का विधान क्या है ? पूर्ण रूप से बताइये, मैं व्रत का अवश्य पालन करूंगी, मुनिराज ने व्रत की विधि विस्तार पूर्वक कह सुनायी, राजा रानी आदि व्रत की विधि को सुनकर आनन्दित हुए, रानी ने व्रत को स्वीकार किया, घर पर आकर व्रत को अच्छी तरह से पालन किया अन्त में उद्यापन किया, इस व्रत के पालन करने से, राजा रानी को अनेक प्रकार के सुखों की प्राप्ति हुई, पुत्र इच्छा भी पूर्ण हुई, इसलिये हे भव्यों तुम भी अधिक सप्तमी व्रत का पालन करो, तुम्हें भी सर्व सुखों को प्राप्ति होगी।

अनन्त व्रत विधि

अनन्त व्रते तु एकादश्यामुपवासः द्वादश्यामेकभक्तं त्रयोदश्यां काञ्जिकं चतुर्दश्यामुपवासस्तदभावे यथा शक्तिस्तथा कार्यम्। दिनहानिवृध्दौ स एव क्रमः स्मर्तव्यः।

अर्थ—अनन्त व्रत में भाद्रपद शुक्ला एकादशी को उपवास, द्वादशी को एकाशन, त्रयोदशी को कांजी–छाछ अथवा छाछ में जौ, बाजरे के आटे को मिलाकर महेरी/एक प्रकार की कढ़ी बनाकर लेना और चतुर्दशी को उपवास करना चाहिए। यदि इस विधि के अनुसार व्रत पालन करने की शक्ति न हो तो शक्ति के अनुसार व्रत करना चाहिए। तिथि हानि या तिथि वृद्धि होने पर पूर्वोक्त क्रम ही अवगत करना चाहिए अर्थात् तिथि हानि में एक दिन पहले से और तिथि वृद्धि में एक दिन अधिक व्रत करना होता है।

विवेचन :—अनन्त व्रत भादों सुदी एकादशी से आरम्भ किया जाता है। प्रथम एकादशी को उपवास कर द्वादशी को एकाशन करे अर्थात् मौन सहित स्वाद रहित प्रासुक भोजन ग्रहण करे, सात प्रकार के गृहस्थों के अन्तराय का पालन करे। त्रयोदशी को जिनाभिषेक, पूजन पाठ के पश्चात् छाछ या छाछ में जो, बाजरे के आटे से बनाई गई महेरी/एक प्रकार की कढ़ी का आहार ले। चतुर्दशी के दिन प्रोषध करे तथा सोना, चांदी या रेशम सूत का अनन्त बनाये, उसमें चौदह गांठ लगाये।

प्रथम गांठ पर ऋषभनाथ से लेकर अनन्तनाथ तक चौदह तीर्थ-करों के नामों का उच्चारण, दूसरी गांठ पर सिद्ध परमेष्ठी के चौदह [तप-सिद्धि, विनय सिद्धि, संयमसिद्धि, चारित्रसिद्धि, श्रुताभ्यास, निश्चायात्मक भाव, ज्ञान, बल, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, अव्याबाधत्व।] गुणों का चिन्तन, तीसरी पर उन चौदह मुनियों का नामोच्चरण जो मति-श्रुत-अवधिज्ञान के धारी हुए हैं, चौथी पर अर्हन्त भगवान के चौदह देवकृत अतिशयों का चिन्तन, पांचवीं पर जिनवाणी के चौदह पूर्वों का चिन्तन, छठवीं पर चौदह गुणस्थानों का चिन्तन, सातवीं पर चौदह मार्गणाओं स्वरूप, आठवीं पर चौदह जीव समासों का स्वरूप, नौवीं पर गंगादि चौदह नदियों का उच्चारण, दसवीं पर चौदह राजू प्रमाण ऊंचे लोक का स्वरूप, ग्यारहवीं पर चक्रवर्ती के चौदह रत्नों का [गृह-पति, सेनापति, शिल्पी, पुरोहित, स्त्री, हाथी, घोड़ा, चक्र, असि (तलवार), छत्र, दण्ड, खडग, मणि, कांकिणी। कांकिणी रत्न की विशेषता यह होती है कि इससे कठोर से कठोर वस्तु पर भी लिखा जा सकता है, इससे सूर्य के प्रकाश से भी तेज प्रकाश निकलता है।] बारहवीं पर चौदह स्वरों का, तेरहवीं पर चौदह तिथियों का एवं चौदहवीं गांठ पर अभ्यन्तर चौदह प्रकार के परिग्रह से रहित मुनियों का चिन्तन करना चाहिए। इस प्रकार अनन्त का निर्माण करना चाहिए।

पूजा करने की विधि यह है कि शुद्ध कोरा घड़ा लेकर उसका प्रक्षाल करना चाहिए। पश्चात् उस घड़े पर चन्दन, केशर आदि सुगन्धित वस्तुओं का लेप करना तथा उसके भीतर सोना, चांदी या तांबे के सिक्के रखकर सफेद वस्त्र से

ढक देना चाहिए। घड़े पर पुष्पमालाएं डालकर उसके ऊपर थाली प्रक्षाल करके रख देनी चाहिए। थाली में अनन्त व्रत का माड़ना और यन्त्र लिखना, पश्चात् चौबीसी एवं पूर्वोक्त विधि से गांठ दिया हुआ अनन्त विराजमान करना होता है। अनन्त का अभिषेक कर चन्दन केशर का लेप किया जाता है। पश्चात् आदिनाथ से लेकर अनन्तनाथ तक चौदह भगवानों की स्थापना यन्त्र पर की जाती है। अष्ट द्रव्य से पूजा करने के उपरान्त "ॐ ह्रीं अर्हन्नमः अनन्तकेवलिने नमः" इस मन्त्र को १०८ बार पढ़कर पुष्प चढ़ाना चाहिए अथवा पुष्पों से जाप करना चाहिए। पश्चात् **ॐ ह्रीं क्ष्वीं हं स अमृतवाहिने नमः, अनेन मन्त्रेण सुरभिमुद्रां धृत्वा उत्तमगन्धोदक-प्रोक्षणं कुर्यात्** अर्थात् 'ॐ ह्रीं क्ष्वीं हं स अमृतवाहिने नमः' इस मन्त्र को तीन बार पढ़कर सुरभि मुद्रा द्वारा सुगन्धित जल से अनन्त का सिंचन करना चाहिए। अनन्तर चौदहों भगवानों की पूजा करनी चाहिए।

ॐ ह्रीं अनन्ततीर्थंकराय ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उसाय नमः सर्व-शान्तिं तुष्टिं सौभाग्यमायुरारोग्यैश्वर्यमिष्टसिद्धिं कुरु कुरु सर्वविघ्नविनाशनं कुरु कुरु स्वाहा।

इस मन्त्र से प्रत्येक भगवान की पूजा के अनन्तर अर्घ्य चढ़ाना चाहिए।

ॐ ह्रीं हं स अनन्तकेवली भगवान् धर्म श्रीबलायुरारोग्ययैश्वर्यायभिवृद्धिं कुरु कुरु स्वाहा।

इस मन्त्र को पढ़कर अनन्त पर चढ़ाये हुए पुष्पों को आशिका एवं।

'ॐ ह्रीं अर्हन्नमः सर्वकर्मबन्धन विमुक्ताय नमः स्वाहा'

इस मन्त्र को पढ़कर शान्ति जल की आशिका लेनी चाहिए। इस व्रत में

'ॐ ह्रीं अर्हं हं अनन्तकेवलि नमः'

मन्त्र का जाप करना चाहिए। पूर्णिमा को पूजन के पश्चात् अनन्त को गले या भुजा में धारण करें।

अनन्त व्रत हिन्दुओं में भी प्रचलित है। उनके यहां कहा गया है कि अनन्त-स्य विष्णोराराधनार्थं" अर्थात् विष्णु भगवान की अराधना के लिए अनन्त चतुर्दशी व्रत किया जाता है। बताया गया है कि भादों सुदी चौदस के दिन स्नानादि के

पश्चात् अर्थात् दूर्वा, तथा शुद्ध सून से बने और हल्दी में रंग हुए चौदह गांठ के अनन्त को समाने रखकर हवन किया जाता है। तत्पश्चात् अनन्त देव का ध्यान करके शुद्ध अनन्त को दाहिनी भुजा में बांधते हैं। इस व्रत में प्रायः एक समय अलोना बिना नमक का मीठा भोजन किया जाता है।

अनन्त देव के सम्बन्ध में यह कथा प्रायः लोक में प्रचलित है कि जिस समय युधिष्ठिर अपना सब राजपाट हारकर वनवास कर रहे थे, उस समय कृष्ण उनसे मिलने आये। उनकी कष्टकथा सुनकर श्रीकृष्ण ने उन्हें अनन्त व्रत करने की राय दी। श्रीकृष्ण के आदेशानुसार युधिष्ठिर अनन्त व्रत कर अपने समस्त कष्टों से मुक्ति पा गये। इस व्रत के दिन ब्रह्मचर्य का पालन करना आवश्यक है।

जैनागम में प्रतिपादित अनन्त व्रत की हिन्दुओं के अनन्त व्रत से तुलना करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि यह व्रत हिन्दुओं में जैनों से ही लिया गया है तथा जैनों के विस्तृत विधिपूर्ण व्रत का यह संक्षिप्त और सरल अंश है।

अनंत व्रत कथा

भाद्रपद शुक्ला १३ तिथि के दिन व्रतों को पालन करने वालों को स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर सर्व प्रकार की पूजन सामग्री लेकर जिनमन्दिर में जावे वहां जाकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथशुद्धि आदि क्रियाओं को करके साष्टांग जिनेन्द्र भगवान को नमस्कार करे, जिनमन्दिर के मण्डप को खूब सजावे, अनन्त व्रत का मण्डल, रंगोली से अथवा चांवलों को रंगाकर बनावे, ऊपर चंदोवा बांधे, सिंहासन अभिषेकपीठ पर, अनन्त यंत्र अनंत तीर्थंकर की यक्ष यक्षि सहित प्रतिमा स्थापन कर, अथवा चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, कन्याकत्रीत सूत्र के शास्त्रोक्त विधि से चौदह गांठे लगावे।

(१) **गांठ पहिली** :—वृषभादि, अनन्तनाथ पर्यंत चौदह तीर्थंकरों के नाम मुख से उच्चारण करे, और पहिली गांठ लगावे।

(२) **गांठ दूसरी** :—सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, अव्याबाधत्व, अस्तित्व, वस्तुत, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अमूर्तत्व, प्रदेशत्व, इस प्रकार सिद्धपरमेष्ठी के चौदह गुण उच्चारण करके दूसरी गांठ लगावे।

(३) **गाँठ तीसरी** :–प्रतिश्रुति, क्षेमंकर, क्षेमंधर, सीमंकर, सीमंधर, विमलवाहन, चक्षुष्मान, यशस्वी, अभिचंद्र, चन्द्राभ, मरुदेव, प्रसन्नजीत, नाभिराज इन चौदह मनुओं का उच्चारण कर तीसरी गांठ लगावे।

(४) **चौथी गांठ** :–सर्वार्धमागधीभाषा, सर्वजीवों पर मैत्री, सर्वऋतु के फल पुष्पों से युक्त वृक्ष का होना, दर्पण के समान स्वच्छ भूमि, सुगन्ध युक्त वायु का बहना, सब जीवों को आनन्द होना, एक योजन भूमि निष्कंटक होना, गन्धोदक की वृष्टि होना, केवली के पांवों के नोचे कमल की स्थापना, सौ योजन तक सुभिक्ष का होना, आकाश का निर्मल दिखना, देवों का आमगन होना, धर्मचक्र का चलना, आठ मंगल द्रव्य का होना इन चौदह अतिशयों का नाम लेकर गांठ देना।

(५) **गांठ पांचवीं** :–उत्पाद पूर्व, आग्रायणी पूर्व, वीर्यानुवाद, अस्तिनास्ति प्रवाद, ज्ञान प्रवाद, कर्म प्रवाद, सत्प्रवाद, आत्मप्रवाद, प्रत्याख्यान, विघानुवाद, कल्याणवाद, प्राणानुवाद, क्रियाविशाल पूर्व, लोक बिंदुसार इस प्रकार चौदह पूर्वों का नाम लेकर गांठ देना।

(६) **छठी गांठ**–: मिथ्यात्व, सासादन, सम्यगमिथ्यात्व, अविरत, देशविरत, प्रमतविरत, अप्रमत, अपूर्वकरण, अनिवृतिकरण, सूक्ष्मसांपराय, उपशांत कषाय, क्षीण कषाय, सयोग, केवली, अयोग केवली इन चौदह गुणस्थानों के नामोच्चारण कर गांठ लगावे।

(७) **सातवीं गांठ**—: गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम, दर्शन, लेश्या, भव्यत्व, सम्यक्त्व, संज्ञित्व, आहार इन चौदह मार्गणाओं का नाम लेकर गांठ लगावे।

(८) **आठवीं गांठ**—: पृथ्वीकाय, जलकाय, तेजकाय, वायुकाय, नित्य निगोद, इतर निगोद, प्रत्येक वनस्पति, साधारण वनस्पति, द्वीद्रिंय जीव, तीन इन्द्रिय जीव, चतुरिन्द्रिय जीव, पंचेन्द्रिय जीव, संज्ञीजीव, असंज्ञीजीव इन चौदह समासों का नाम लेकर गांठ लगावे।

(९) **नौवीं गांठ**—: गंगा, सिन्धु, रोहित, रोहितास्य, हरित, हरिकान्त, सीता, सीतोदा, नारी, नरकांता, सुवर्णकुला, रूप्यकुला, रक्ता, रक्तोदा इन चौदह नदियों का नाम लेकर गांठ लगावे।

(१०) **दसवीं गांठ** :—अधोलोक, मध्यलोक, उर्ध्वलोक ये तीन लोक चौदह राजु है ऐसा बोलकर गांठ लगावे ।

(११) **ग्यारहवीं गाँठ** :—चक्र, ध्वज, खड्‌ग, दंड, मणि, काकिणी, गृहपति, सेनापति, कारागिर, हस्ती, अश्व, पट्टस्त्री, पुरोहित, असी ये चौदह रत्न चक्रवर्ती के पास रहते हैं इनका नाम लेकर एकादशवीं गांठ लगाना ।

(१२) **बारहवीं गांठ** :—अ से लेकर औ पर्यंत चौदह स्वरों का नाम लेकर बारहवीं गांठ लगाना ।

(१३) **तेरहवीं गांठ** :—प्रतिपदा से लेकर चतुर्दशी पर्यंत तिथियों के नाम लेकर तेरहवीं गांठ लगाना ।

(१४) **चौदहवीं गांठ** :—रक्त, मांस, पीव, अस्थि, चर्म, मृतक जीव का शरीर, कंद, मूल, केश, नख, तुष, बीज, बीज सहित फल, धान्य का अंकुर ये चौदह मलदोष हैं, ये वस्तुएँ आहार में आने पर मुनिराज अन्तराय करते हैं, इनका नाम लेकर चौदहवीं गांठ लगाना ।

इस विधि से धागे की अनन्तमाला तैयार करे, मंत्र से उसकी प्राण-प्रतिष्ठा करे ।

मन्त्र :—"ॐ आं क्रों ह्रीं असिआउसा, य र ल व श, ष स ह हं सः त्वगस्त्र मांसमेदोस्थि मज्जा शुक्रादि धातवः अनन्तद्वाराणां प्राणाः अनन्त द्वाराणां जीवा इह स्थित सर्वेंद्रियाणि, कायावाङ्‌मन चक्षुश्रोतृ घ्राणमुख जिव्हा स्थापय स्थापय स्वाहा"

इसके बाद अनन्त की पूजा करे (माला अनन्त सूत की अथवा सोना, चांदी, ताम्र के तार की बना सकते हैं ।)

अभिषेक के बाद, महाशांति मंत्र पढ़े, उसके बाद अनन्तनाथ की प्रतिमा, अनन्त यंत्र, और धागे की बनाई हुई अनन्त, ये सब तथा एक थाली में १४ पान, गंध अक्षत, पुष्प, फल वगैरे रखकर, एक नवीन मिट्टी के घड़े को धोकर उसके

ऊपर उस थाली को रखे, फिर नित्यपूजाक्रम करके श्री अनन्तनाथ तीर्थंकर की पूजा करे, स्तोत्र, जयमाला, पूर्वक पूजा करे। उसके बाद—**ॐ नमोऽर्हते भगवते अणंताणंतसिज्झधम्मे भगवतो महाविज्जा २ अणंताणंत केवलिए अणंतकेवलणाणे, अणंतकेवलदंसणे, अणुपुज्जवासणे अणंते अणंतागम केवली स्वाहा।**

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, और **ॐ ह्रीं असिआउसानमः अनन्त द्वारानि अत्र आगच्छत २ संवौषट्, अत्र तिष्ठत २ ठ ठ। अत्र मम् सन्निहितो भव २ वषट्।**

इस मंत्र से अनन्त की स्थापना कर अष्टद्रव्य से पूजा करे।

ॐ नमोऽनंतनाथाय सर्वशिवसौख्यार्थचिरकालं नंदंतु वर्धंतु वज्रमयं कुर्वंतु स्वाहा।

इस मन्त्र से २७ बार सफेद फूलों से जाप करे, अनन्त के ऊपर चढावे। अनन्तनाथ तीर्थंकर का चरित्र व अनन्त व्रत की कथा को पढे या सुने, उसके बाद एक महाअर्घ्य चढ़ाकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा देकर मंगल आरती उतारे, घर जाकर सत्पात्रों को दान देवे, उस दिन एकभुक्ति करे।

चतुर्दशी के दिन भी त्रयोदशी की विधि के समान पूजा करना चाहिये, विशेष विधि यह है कि वृषभनाथ से लेकर अनन्त नाथ पर्यंत चौदह तीर्थंकरों की पूजा स्तोत्र सहित जयमालापूर्वक पूजा करना चाहिये, उपरोक्त विधि से एक थाली में १४ पान वगैरे द्रव्य रखकर महाअर्घ्य, तीन प्रदक्षिणा पूर्वक चढ़ाना चाहिये। उस दिन उपवास करना चाहिये, स्वाध्याय, रात्रि जागरण करना, पूर्णिमा के दिन प्रातः काल अनन्तनाथ तीर्थंकर, अनन्त यंत्र, अनन्त जनेऊ इन सबका पंचामृताभिषेक करना, अष्टद्रव्य से पूजा करना अन्त में जिनवाणी, गुरु की पूजा करना, यक्षयक्षी व क्षेत्रपाल का यथायोग्य अर्घ्य पूर्वक सम्मान करना।

ॐ ह्रीं अनन्तनाथाय किन्नर यक्ष अनन्तमतियक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर यंत्र के ऊपर जाप्य करे, पूर्णार्घ्य चढाकर

मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, आरती उतारे, उसके बाद विसर्जन करे। जो पुरानी अनन्त हाथ में धारण कर रखी थी, उसको छोड़े। अनन्त द्वारमोचन मंत्र :—

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वबंधन विनिर्मुक्ताय अनन्तसुखप्रदाय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से पुरानी अनन्त छोड़ देवे।

ॐ नमोऽर्हते भगवते अनंत तीर्थंकराय ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं नमः सर्व शांति कुरु २ तुष्टि कुरु २ पुष्टि कुरु २ सर्व सौभाग्यमायुरारोग्यमिष्टि कुरु २ वषट् स्वाहा।

इस मंत्र से नवीन अनन्त बांधे और नवीन जनेऊ धारण करे, नवीन सूप के अन्दर १४ प्रकार के फलादिक डालकर ऊपर से सूप से बांधकर वायना तैयार करे, वायना को भगवान के सामने रखे, उसमें दो वायना गृहस्थाचार्य के हाथ से प्रसाद रूप लेकर अपने घर जावे। **वायनादान मंत्रः—ॐ निश्रेयसेऽसौदत्तादानं फलं भवेदायुष्मान् भवेन्नित्यम्।**

इस मन्त्र से गृहस्थाचार्य को व्रती को वायना देना चाहिये, सत्पात्रों को दान देकर स्वयं पारणा करे, तीन दिन तक ब्रह्मचर्य से रहे।

इस विधि से इस व्रत को चौदह वर्ष पर्यंत पालन करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय अनन्तनाथ तीर्थंकर की नवीन प्रतिमा यक्षयक्षिणी सहित बनवाकर उत्सव से पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करावे, चौदह बांस के करंडे में सुपारी, केला, बादाम, इलायची, जायफल, छुहारा, अमरूद (पेरू), अनार, सीताफल, कवीठ, नीबु, बिजोरानीबु, आंवला ये प्रत्येक के अन्दर चौदह २ रखकर और पूरी, लड्डू, खाने के पान, लौंग, यज्ञोपवीत, गंधाक्षत, पुष्प, एक नारियल और यथाशक्ति रुपया इस प्रकार द्रव्यों को रखे। चौदह मुनिवरों को आहारादि दान देवे, आवश्यक उपकरणादि देवे, उसी प्रकार आर्यिकाओं को भी साडी आदि उपकरण देवे, चौदह दंपतियों को वस्त्रादिक देकर सम्मान पूर्वक भोजन करावे,

गृहस्थाचार्य को सुवर्णादिक देवे, इस प्रकार इस व्रत की पूर्ण विधि है । इस व्रत को जो पालन करता है, उसको पूर्ण पुण्यास्रव होता है । उस पुण्यप्रभाव से ऐहिक सुख की प्राप्ति करके, देवपर्याय के सुख भोगता है, वहां से आकर मनुष्य पर्याय प्राप्त कर क्रमशः अनन्त सुख की प्राप्ति कर लेता है । स्त्रियों को व्रत के प्रभाव से स्त्रीलिंग का छेद होकर मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

कथा

इस जम्बुद्वीप के भरत क्षेत्र में कुरूजांगल नाम का एक बड़ा देश है, उस में देश हस्तिनापुर नाम की एक मनोहर नगरी है वहां शांत नामक एक बड़ा पराक्रमी विद्वान राजा राज्य करता था, उस राजा की विमलगंगा नामकी पट्टरानी थी, नगर में सुदर्शन नाम का एक बहुत बड़ा धनाढच व धार्मिक राजश्रेष्ठी रहता था, उस श्रेष्ठी की पत्नी का नाम सन्मती था, वह सेठानी सौन्दर्यवान और गुणवान थी, उसके एक गुणवती नामकी कन्या थी, सेठ के घराङ्गण में एक भगवान का चैत्यालय था, उस चैत्यालय में एक बार सुप्रभाती नाम की एक विदुषी आर्यिका माता जी आयी, आर्यिका माता जी के पास श्रेष्ठि पुत्री गुणवती जाकर विद्याभ्यास करने लगी, माता जी के पास गुणवती ने पंचाणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रतों को ग्रहण कर श्रद्धापूर्वक पालन करने लगी, एक बार आर्यिका माता जी श्रावकों को अनन्त व्रत विधान का स्वरुप उपदेश में बता रही थी, तब गुणवती ने कहा माता जी यह व्रत मुझे भी प्रदान कीजिये, मैं भी पालन करुंगी । आर्यिका माता जी ने उसको व्रत प्रदान किया, फिर गुणवती कहने लगी कि हे माता जी, आप कृपा करके यह बतलाइये की इस व्रत को किसने पालन किया, व्रत को पालन करने से क्या फल मिलता है ।

गुणवती की प्रार्थना को सुनकर माताजी ने व्रत कहना प्रारम्भ किया । एक समय इस भरतक्षेत्र में षड्खंडाधिपति श्री भरत चक्रवर्ती आदि राजा लोक आदिनाथ तीर्थंकर के समवशरण में जाकर बहुत भक्ति से तीन प्रदक्षिणा देकर भगवान की वंदना स्तुति, नमस्कार करके मनुष्य के कोठे में जाकर बैठ गये । धर्मोपदेश सुनकर बड़ी विनय से अपने दोनों हाथ जोड़कर वृषभसेन गणधर से कहने लगे कि

हे दयानिधे, आप बताइये कि मेरे चक्रभंग होने का क्या कारण है ? दूसरा प्रश्न यह है कि वृषभाद्रि पर्वत पर नाम लिखने गया था, तो मुझे नाम लिखने की जगह क्यों नहीं मिली ? इन प्रश्नों को सुनकर गणधर स्वामी कहने लगे कि हे भूमंडलाधीश भरत राजन्, असंख्यात उत्सर्पिणी व अवसर्पिणी काल समाप्त होने के बाद एक हुंडावसर्पिणी काल आता है, इस काल में आगे हुंडावसर्पिणी नामक पंचमकाल आता है, उस काल दोष से ही तुम्हारा चक्र का भंग हुआ है, और दूसरा कारण भी वही है । तब चक्रवर्ती कहने लगा कि भगवान इस हुंडावसर्पिणी कालदोष का परिहार कैसे हो, उसका उपाय बताओ, तब गणधर स्वामी कहने लगे कि हे चक्रेश भरत तुम अनन्त व्रत को विधिपूर्वक करो, आदिनाथ से आगे और भी १३ तीर्थंकर होनेवाले हैं उनके आगे और भी १० तीर्थंकर होंगे ।

इसी कौशल देश के अन्दर अयोध्या नगरी में सिंहसेन नाम का एक बड़ा गुणशाली राजा होगा, राजा की रानी का नाम लक्ष्मीमती होगा, राजमहल नगरी पर इन्द्रआज्ञा से कुबेर रत्नवृष्टि करेगा, पन्द्रह महिने तक रत्नवृष्टि होगी, नव महिने पूर्ण होने पर गर्भवती रानी के उदर से अनन्तनाथ तीर्थंकर का जन्म होगा, प्रभू के जन्म के प्रभाव से तीनों लोकों के रोग शोक दुःख दारिद्र निवारण होंगे, सभी जीव सुखी होंगे, अनन्तनाथ भगवान का शरीर सुवर्णमयी, ५० धनुष ऊंचा, ३० लाख पूर्व की आयु होगी । भगवान बहुत दिनों तक राजैश्वर्य भोगकर जिन दीक्षा धारण करेंगे । घोर तपश्चरण करके घातिकर्मों का क्षय करेंगे, इन्द्र आकर समवशरण की रचना करेंगे, समवशरण में भगवान चार अंगुल ऊपर बैठेंगे । उन प्रभू के जयसेनादि गणधर होंगे । प्रभु का लक्षण सेही होगा, इन तीर्थंकर की किन्नर यक्ष व अनन्तमती यक्षी सेवा करेंगे, तीर्थंकर के शासन काल में सुप्रभ नाम का बलदेव व पुरुषोतम नाम का वासुदेव होगा, वह नारायण, निशुंभ नामक प्रतिनारायण को युद्ध में मारकर त्रिखण्डाधिपति होगा ।

एक दिन अनन्तनाथ के दिव्य समवशरण में नारायण व बलभद्र दोनों आकर भक्ति से तीन प्रदक्षिणा देकर वंदना स्तुति पूजा नमस्कारादि करेंगे, मनुष्यों के कोठे में जाकर बैठेंगे धर्मोपदेश सुनकर नारायण बलभद्र गणधर से अनन्तव्रत को

ग्रहण करेंगे । उद्यापन भी करेंगे । अन्त में बलभद्र व्रत के प्रभाव से स्वर्ग में जायेंगे । नारायण भी परिणामों के अनुसार कहीं जाकर उत्पन्न होंगे । इसी प्रकार से वृषभसेन गणधर के मुख से भावी कथा सुनकर चक्रवर्ती व अन्य लोगों को बहुत ही आनन्द आया, तब चक्रवर्ती ने गणधर को नमस्कार करके हर्षपूर्वक अनन्त व्रत को स्वीकार किया, भक्तिभाव से नमस्कार करके वापस अयोध्या को आये । नगर में आकर कालानुसार व्रत को पालन करने लगे ।

व्रत समाप्त होने के बाद व्रत का उद्यापन किया, दान देने का समय जब आया तब चक्रवर्ती के मन में एक विचार उत्पन्न हुआ—हमने जो भरतक्षेत्र में दिग्विजय करके जो धन उपार्जन किया है उसका सदउपयोग होना चाहिए इसलिए दान लेने योग्य व्रतिकों की स्थापना करनी चाहिए । ऐसा विचारकर राजाङ्गण में अंकुरोत्पत्ति करवा दी, और देश देशान्तर से लोगों को बुलाकर राजदरबार में आने की आज्ञा की तब आये हुए लोगों में जो व्रतिक थे उन लोगों ने अन्दर आने की मनाई कर दी, और जो असंयमी थे वे लोग अंकुरों के ऊपर पांव रखकर अन्दर आ गये ।

जो लोग अंकुरों के ऊपर पांव रखकर अन्दर नहीं आये, उनसे पूछा गया कि आप अन्दर क्यों नहीं आ रहे हो, तब उन लोगों ने कहा कि हम संयमी हैं अंकुरों के ऊपर पाँव नहीं रखते हैं, सचित्त पदार्थ के ऊपर पाँव रखने से एकेन्द्रिय जीवघात होता है ऐसा आदिप्रभू ने कहा है, इसलिए हम लोग जीवघात नहीं करेंगे । यह देखकर भरत चक्रवर्ती को बहुत आनन्द हुआ । भरत चक्रवर्ती ने कहा कि आप लोग आज से ब्राह्मण संज्ञावाले कहलाएंगे, आप लोग कृषिकर्म न करते हुए, मात्र अध्ययन और अध्यापन (पढ़ना और पढ़ाना) का कार्य करेंगे, धार्मिक क्रियाकांड करवाना ही आप लोगों का कार्य रहेगा ऐसा कहकर उनको योग्य सम्मान देकर घर भेज दिया ।

आगे भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी के दिन भरत चक्रवर्ती ने अपने अनन्त व्रत के उद्यापन में स्वयं के द्वारा स्थापित ब्राह्मणों को बुलाकर उनका यज्ञोपवीत संस्कार किया, वायने देकर सुवर्ण रत्नादिक का दान दिया, पूर्णिमा के दिन जिनपूजादि

क्रिया करके सत्पात्रों को दान देकर व्रतिकों को मिष्ठान्नादि भोजन कराकर पुनः दक्षिणा देकर सम्मान किया, इस प्रकार भरतेश्वर ने अपने अनन्त व्रत को पूरा किया। इस प्रकार की व्रतकथा आर्यिका माताजी ने गुणवती को बतायी। आगे उस गुणवती ने अच्छी तरह से व्रत को पाला।

इधर काश्मीर देश में चित्रांगपुर नाम के नगर में बड़ा पराक्रमी गुणवान रूपवान भुजबल नाम का राजा राज्य करता था, वह अपनी धर्मपत्नी के साथ में सुख से कालक्रम कर रहा था।

हस्तिनापुर नगर में सुदर्शन सेठ की पुत्री गुणवती के रूपसौन्दर्य की वार्ता सारे संसार में प्रसिद्ध होने लगी। चित्रांगपुर नगर के राजा को भी यह वार्ता सुनाई दी, सुनकर राजा के मन में भी विचार आया कि मैं उस गुणवती के साथ विवाह करूंगा, तब राजा ने मन्त्री को सुदर्शन सेठ के पास भेजा। मन्त्री सेठ सुदर्शन के पास हस्तिनापुर गया उसके घर जाकर कहा कि हे श्रेष्ठिवर्य आप अपनी सुन्दर कन्या का विवाह हमारे राजा से करो, राजा की बहुत इच्छा है कि आप की कन्या के साथ विवाह हो।

तब श्रेष्ठी कहने लगा कि हे मन्त्रीवर आपका राजा मिथ्यादृष्टि व अधर्मी है, इसलिए मेरी कन्या मैं तुम्हारे राजा को नहीं दूंगा।

सेठ मन्त्री की बात सुनकर राजा के पास आया और सब समाचार कह सुनाया, राजा ने गुणवती के लोभ में स्वयं की दासियों विद्युन्माला व अनन्तमती को जैनी बनाकर श्राविकाव्रत दिलवाकर दासियों को हस्तिनापुर भेज दिया, दोनों दासियों ने माया से जैनधर्म स्वीकार किया था। और वे दोनों दासियां हस्तिनापुर गईं, चैत्यालय में जाकर ठहर गईं, दोनों दासियों को देखकर गुणवती ने कहा कि आप दोनों भोजन के लिए हमारे घर चलिये, मायावि दासियां कहने लगी कि आज हमारा उपवास है। गुणवती ने पूछा आपका आज उपवास किसलिये है, आज तो कोई पर्व नहीं है। दासियां कहने लगी कि इस नगर के बाहर नंदकर पवित्र तीर्थ है, तीर्थ का दर्शन कर पारणा करने वाली हैं। गुणवती ने कहा मैं भी आपके साथ उस तीर्थ का दर्शन करने चलूंगी, दोनों दासियां खुशी से कहने लगी कि आप हमारे साथ अवश्य

चलिये। ऐसा कहकर गुणवती को साथ ले गई और मादक पदार्थ सुंघा कर अपने राजा के पास काश्मीर देश में गई और गुणवती को राजा के आधीन किया, राजा ने आनन्दित होकर दासियों को इच्छाप्रमाण धन देकर विदा किया। पश्चात् राजा गुणवती को प्रसन्न करने लगा, किन्तु गुणवती प्रसन्न नहीं हुई, तब राजा ने हस्तिनापुर से गुणवती के पिता को बुलाया, पिता ने आकर गुणवती का विवाह राजा के साथ करा दिया और हस्तिनापुर को लौट आया।

आगे अनन्तव्रत विधि करने का समय आया तब गुणवती शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा सामग्री लेकर जिनमन्दिर में गई, अनन्तनाथ तीर्थंकर की पूजा कर हाथ में नवीन अनन्त बांधकर घर गई, राजा ने उसे देखकर पूछा कि हे देवि आज तुमने हाथ में यह क्या बांध रखा है, तब गुणवती कहने लगी कि राजन यह अनन्त व्रत विधान की अनन्त मैंने बांधी है, राजा को भ्रम हो गया और ऐसा कहता हुआ कि तुमने मुझे वश में करने के लिए कोई तंत्र किया है और उस अनन्त को तोड़ दिया, तब गुणवती को बहुत ही बुरा लगा, गुणवती शय्यागृह में जाकर द्वारों को बंद कर चिंतामग्न होकर सो गई, वहां की साध्वी स्त्रियों ने आकर गुणवती को समझाया, आगे कुछ ही दिनों के बाद राजा के किसी शत्रु ने राज्य के ऊपर आक्रमण करके राज्य को छीन लिया। राजा और गुणवती दोनों निःसहाय होकर जंगल में गए, जंगल में एक शिला पर महामुनिवर ध्यानमग्न बैठे थे, मुनिराज को देखकर गुणवती राजा को कहने लगी कि प्राणनाथ, यहां जो मुनिश्वर बैठे हैं, वो अपने सर्वदुःखों को नष्ट कर सुखी करेंगे। इसलिए चलो इनके निकट चलें।

राजा गुणवती के साथ मुनिराज के पास गया, वहां जा कर गुणवती ने तीन प्रदक्षिणा देते हुए भक्तिभाव से नमोऽस्तु किया, मुनिश्वर ने भी ध्यान विसर्जन करके ये लोग आसन्नभव्य हैं ऐसा जानकर सद्धर्मवृद्धिरस्तु ऐसा आशीर्वाद दिया। मुनिराज ने कहा कि 'भुजबल राजन' राज्य वापस कब प्राप्त होगा, मन में यह विचार कर रहे, हो यह सुनकर राजा को बहुत ही आश्चर्य हुआ, मेरे मन की बात कैसे जान ली, राजा ने श्रद्धाभक्ति से नमस्कार किया, बड़े ही विनय के साथ राजा कहने लगा कि हे स्वामिन मेरा राज्य किस कारण से नष्ट हुआ, और कौनसा

पुण्य करने से मेरा राज्य मुझे वापस मिलेगा। कृपा करके बताएं, तब मुनीश्वर कहने लगे कि हे राजन आपने गुणवती के हाथ बंधा हुआ अनन्त अविवेक से तोड़ डाला इस कारण तुम्हारे राज्य को रुष्ट हुए किन्नर यक्ष और अनन्तमती यक्षी ने नष्ट कर दिया है। अगर तुम अनन्त व्रत को विधिपूर्वक करके उसका उद्यापन करोगे तो तुम्हारा राज्य तुम्हें वापस मिल जायगा, विश्वास होने के लिए तुम्हें रात्रि को स्वप्न में छत्र, चामर, आदि शुभ वस्तुएं दिखेंगी मुनिराज के मुख से ऐसा सुनकर राजा को बहुत ही आनन्द आया, राजा ने मुनिराज से अनन्त व्रत को स्वीकार किया और अपने इष्ट स्थान को चला गया।

राजा और गुणवती दोनों ही अनन्त व्रत को विधि पूर्वक पालन करने लगे एक दिन राजा सोया हुआ था, चौथे प्रहर में राजा ने शुभ स्वप्न देखे, प्रातःकाल यक्ष और यक्षिणी ने राजा के ऊपर प्रसन्न होकर राजा के राज्य को वापस दिला दिया, राजा ने व्रत का उद्यापन उत्सव के साथ किया, और सुख से राज्य भोग करने लगा, कुछ दिनों के बाद राजा को असाध्यरोग उत्पन्न हुआ, यह देखकर राजा को विषयों से वैराग्य उत्पन्न हुआ, ज्येष्ठ पुत्र विश्वसेन को राज्य देकर एक मुनिश्वर के पास दीक्षा लेकर तपश्चरण करने लगा। अन्त में समाधिमरण कर अच्युत स्वर्ग में देव हुआ, गुणवती भी अन्त में समाधिमरण कर अच्युत स्वर्ग में स्त्री लिंग को छेद कर देव हुई। वहां दोनों देव चिरकाल तक स्वर्ग सुख भोगने लगे, ये दोनों देव नियम से मनुष्य पर्याय प्राप्त कर मोक्ष को जायेंगे।

इस व्रत विधान को पूर्वोक्त श्रेणिकादि ने सुनकर बहुत ही आनन्द मनाया, और राजा श्रेणिक, रानी चेलना ने गौतम स्वामी को नमस्कार करके व्रत को स्वीकार किया, और वापस राजगृह नगर में आ गये। व्रत का पालन किया अन्त में उद्यापन किया, उसके फल से राजा श्रेणिक को तो तीर्थंकर पद का बंध हुआ, और रानी चेलना का स्त्रीलिंग छेद हो कर स्वर्ग में जन्म हुआ।

इसलिए हे भव्य जीवो आप भी गुरु के निकट व्रत को ग्रहण कर विधि पूर्वक पालन, उद्यापन करो, आपको भी अवश्य मोक्ष प्राप्त होगा।

अष्टकर्मचूर्णव्रत विधि व कथा

चैत्रादि मास में से किसी भी महिने के शुभ दिन में प्रातःकाल स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर सर्व प्रकार का पूजासाहित्य लेकर जिन मन्दिर में जावे, वहाँ जाने के बाद मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धिपूर्वक भगवान को साक्षात नमस्कार करे, नंदादीप (अखण्डदीप) जलावे, श्री अभिषेक पीठ पर सिद्ध प्रतिमा स्थापन कर पंचामृत अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, पांच पक्वान्न का नैवेद्य बनावे, जिनवाणी, निर्ग्रंथ गुरु, यक्ष यक्षिणी, क्षेत्रपाल की भी अर्चना करे

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टकर्मरहिताय श्री सिद्धाधिपतये स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप करे, णमोकार मन्त्र की एक माला जपे, सिद्धभक्ति पढ़कर स्वाध्याय करे, व्रतकथा अवश्य पढ़े । एक थाली में आठ पान लगाकर उनके ऊपर अष्ट द्रव्य रखे, एक नारियल रखकर महार्घ्य करे, अर्घ्य हाथों में लेकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, धर्मध्यान से समय बितावे, सत्पात्रों को आहारदान देवे, उस दिन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, दूसरे दिन पारणा करना ।

इस प्रकार ज्ञानावरणीय कर्म के क्षय के लिये ८ पूजा ८ उपवास, दर्शनावरणीय कर्म के क्षय के लिये पहले के समान ८ पूजा पूर्ववत् व आठ दिन मात्र पानी लेवे । वेदनीय कर्म के क्षय के लिये पहले के समान पूजा करे, फलाहार करे । मोहनीय कर्म के क्षय के लिये ८ पूजा व मात्र एक ग्रास का ही आहार लेवे । आयु कर्म के क्षय हेतु ८ पूजा व अंबली भात का भोजन करे । नाम कर्म के क्षय के लिये ८ पूजा व पूड़ी का भोजन करे, गोत्र कर्म के क्षय के लिये पहले के समान ८ पूजा व भात का भोजन करे, और अन्तराय कर्म के क्षय के लिये, पहले के समान ८ पूजा सहित मात्र एक भात का दाना खावे । इस प्रकार ६४ पूजा ६४ उपवासादि क्रिया करते हुए, व्रत का उद्यापन करे, उस समय पंचवर्ण रंगोली से ६४ कमल दल का यंत्र निकालकर सिद्धप्रतिमा स्थापन करके सिद्ध परमेष्ठी विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को आहारदानादि देवे, मुनि आर्यिकाओं को उपकरणादि भेंट करे, मंदिर में घंटा, चामर, छत्र, धूपाना, अभिषेक पीठ इत्यादि उपकरण भेंट करे, इस

प्रकार इस व्रत की पूर्णविधि है, इस व्रत का विधान राजा श्रेणिक ने सुनकर मन में आनन्द मनाया, सब लोगों को भी बहुत आनन्द आया।

इस व्रत की कथा भी श्रेणिक पुराण में ही है चेलना ने व्रत को पालन कर सद्गति प्राप्त की।

अहिगही व्रत विधि व कथा

श्रीमन्नाभिसुतं भक्त्या, वृषभं जिननायकं।
स्थापये विधिना नत्वा, जंतूनां सुखकारकं॥

कोई भी अष्टान्हिका की अष्टमी को प्रातः स्नान कर, शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजाभिषेक का सामान लेकर जिनमन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर, ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, सिंहासन पीठ पर पंचपरमेष्ठी की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पंचपरमेष्ठी की पूजा करे, यक्षयक्षिणी, क्षेत्रपाल, की यथायोग्य पूजा करे, जिनवाणी व गुरू की पूजा करे।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रः असिआउसा नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर मंत्र का जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में महार्घ्य बनाकर हाथ में लेकर मंदिर को तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, महा अर्घ्य भगवान को चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, सत्पात्रों को दान देवे, इसी क्रम से चार महिने तक प्रत्येक शुक्ल अष्टमी को पूजा विधि करे, श्रावक के सर्व व्रतों का पालन करे, अष्ट जमीकंदों का त्याग करे, चार महिने पूर्ण होने पर आगे की अष्टान्हिका में उद्यापन करें, उस समय पंचपर-मेष्ठी विधान करे, महाभिषेक करे, भगवान के आगे उत्तम पदार्थ रखकर पूजा करें, मन्दिर में उत्तम उपकरण देवे, चतुर्विध संघ को दान देवे, फिर पारणा करे इस प्रकार व्रत की पूर्ण विधि है।

कथा

द्वारावती नगरी का राजा त्रिखंडाधिपति श्रीकृष्ण पट्ट रानी सहित राज्य

करते थे, उनके पुत्र का नाम पद्युम्न कुमार था, वह कामदेव थे, एक दिन श्रीकृष्ण ने पद्युम्न कुमार की शादी के लिये योगकन्या रति देवी है जान कर अपने साले रुक्मी को दूत के द्वारा कुन्दनपुर समाचार भेजे, दूत के द्वारा समाचार पाकर रुकमी नरेश बहुत नाराज हुआ, और दूत को कहने लगा कि हे दूत मैं अपनी पुत्री चांडाल को दे दूंगा किन्तु कामकुमार को नहीं दूंगा, दूत ने ज्यों ही समाचार श्रीकृष्ण को कह सुनाये, तब पद्युम्न कुमार रति कुमारी को बलात्हर कर अपनी द्वारिका नगरी में ले आया, और अपना रूप चाण्डाल का बनाकर रतिकुमारी से कहने लगा कि मैं चांडाल हूं कामकुमार नहीं हूं, मैंने मायाचारी से यह सब किया है, अब तुमको मेरे साथ ही शादी करनी पड़ेगी, यह सब सुन देख कर रति कुमारी रोने लगी बहुत दुःखी होने लगी, रति कुमारी को दुःखी देखकर रुक्मणी ने रति कुमारी को समझाया कि हे रतिकुमारी तुम रोओ मत दुःखी मत होओ, पद्युम्न कुमार की आदत ही है व्यर्थ की चेष्टा करना । मैं तुम्हारा विवाह उसी के साथ करूंगी तुम चिन्ता न करो, तब रुक्मणी ने पद्युम्न कुमार के साथ रति का विवाह कर दिया । और रति कुमारी को बारह वर्ष के लिये एक अलग से महल देकर छोड़ दिया, पति विरह के कारण रति देवि दुःखी होने लगी, एक दिन नगर के उद्यान में एक मुनि-राज के रति को दर्शन हुए, रति ने हाथ जोड़कर नमस्कार किया और अपने दुःखों का सब वृतांत कह सुनाया, मुनिराज अपने अवधिज्ञान से सब जानकर कहने लगे कि हे बेटी, तुमने पूर्व भव में अपनी सौत के द्वेष से भगवान को प्रतिमा सात घड़ी तक छुपाकर रखी थी, इसलिये तुम को इस प्रकार का दुःख प्राप्त हुआ है, अगर पापों से मुक्ति चाहती हो तो तुम अहिगदी व्रत का पालन करो, जिससे पतिसंयोग फिर से होकर तुम को सुख की प्राप्ति होगी । मुनिराज ने सब व्रत की विधि अच्छी तरह से बता दी, यह सब कथन सुनकर उसको बहुत आनन्द आया उसने मुनिराज के द्वारा बताये गये व्रत को धारण किया, और नगर में आकर यथायोग्य व्रत का पालन किया, उद्यापन किया, धर्म के प्रभाव से पद्युम्न कुमार रति पर प्रसन्न हो गया और दोनों संसार का सुख भोगने लगे, कुछ दिनों के बाद नेमी तीर्थंकर के समव-शरण में जाकर पद्युम्न कुमार ने दीक्षा धारण कर ली तब रति ने भी दीक्षा ग्रहण कर ली, दोनों ही घोर तपश्चरण करने लगे, पद्युम्न कुमार ने कर्मों को काटकर मोक्ष

प्राप्त किया, रति ने भी स्त्रीलिंग का छेदन करके स्वर्ग को प्राप्त किया। आगे मोक्ष को प्राप्त करेगी, इस व्रत का यही प्रभाव है।

अनन्तभव कर्महराष्टमी व्रत विधि व कथा

तीनों अष्टान्हिका की कोई एक अष्टमी को स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहने, पूजा अभिषेक का सामान लेकर जिनमन्दिर में जावे ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक वेदी पर धरणेन्द्र पद्मावती सहित पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृत अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, जिनवाणी, गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी, क्षेत्रपाल की अर्चना करे पद्मावती देवी के आगे नमक, तिल, तुवर, चांवल, गेहूं इन सब चीजों के पांच पूंज रखे, ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पार्श्वनाथ तीर्थंकराय धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय नमः स्वाहा। इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप करे, व्रत कथा पढ़े, मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती करे।

गर्भिणी स्त्री एकभुक्ति करे, एकाशन करे। वंध्या स्त्री को उपवास करना चाहिए। इसी क्रम से चार महिने की अष्टमी को उपवास करे, विधिपूर्वक पूजा करे, फिर आगे आनेवाली अष्टान्हिका की अष्टमी को पार्श्वनाथ विधान करके व्रत का उद्यापन करे, तब बारह बांस के टुकड़े मंगवा कर उनमें नाना प्रकार के मिष्टान्न भरकर गन्ना, पान, फूल, सुपारी, केला ये सब पदार्थ डालकर, तेल की पूड़ियां बनाकर ऊपर ढक देवे, उसमें से एक टुकडा पार्श्वनाथ के आगे एक पद्मावती के आगे, एक रोहिणी देवी के आगे, एक जिनवाणी के आगे एक गुरु के आगे चढ़ा देवे, कथा कहने वाले पंडित को एक देवे, सौभाग्यवती स्त्रियों को देकर स्वयं दो टुकडे लेकर घर जावे, इस प्रकार यह व्रत का पूर्ण विधान है।

कथा

राजगृह नगर में राजा श्रेणिक अपनी रानी चेलना के साथ राज्य करता था, एक दिन उस नगर के उद्यान में सहस्त्रकूट चैत्यालय के दर्शनार्थ यशोभद्र नाम के महाज्ञानी ५०० मुनियों सहित पधारे, उस समय रत्नमाला नाम की एक

भव्य श्राविका चैत्यालय में अपना अनंतभव कर्महराष्टमी व्रत का विधान करने के लिए गयी थी, विधान की समाप्ति करके मंदिर के बाहर आयी और धर्मोपदेश सुनने के लिए मुनिराज के निकट में बैठ गई, उस समय एक गीदड़ पक्षी मंदिर के शिखर से अकस्मात मंदिर के प्रांगण में गिर पड़ा और विशेष वेदनाग्रस्त होकर मरणासन्न हो गया, तब यह देख कर रत्नमाला उस पक्षी के निकट गई और कहने लगी हे पक्षीराज, आज जो मैंने व्रत किया है उसका पुण्य मैं तुमको देती हूं तुम शांति से अपने प्राण छोड़ो, उसी वक्त यशोभद्र मुनिराज भी वहां आये और मरणासन्न पक्षी को पंच नमस्कार मंत्र देने लगे, पक्षी णमोकार मंत्र सुनता हुआ मर कर पांड्य देश के पाण्ड्य राजा की पट्टरानी नंदादेवी के गर्भ से घटातिकी नाम की कन्या होकर उत्पन्न हुई, जब वह कन्या थी, तब वही यशोभद्र नाम के मुनिराज बिहार करते हुए उस पद्म नगर में आये, आहार के समय नंदादेवी ने नवधा भक्ति से आहार दिया उसके घर पर दान के प्रभाव से पंचाश्चर्य वृष्टि हुई, यह सब देखकर सब को बहुत ही आनन्द हुआ, उस समय मुनिराज को देखते ही घटातिकी कुमारी को जाति-स्मरण ज्ञान हुआ, निकट जाकर मुनिराज के चरणों में भक्तिपूर्वक नमस्कार करके बैठ गई, अपना पूर्व भव प्रपंच जानकर आदर से दोनों हाथ जोड़कर कहने लगी, हे स्वामिन इस रत्नमाला के द्वारा दिये गये व्रत के पुण्य के प्रभाव से आज मैं कन्या होकर उत्पन्न हुई हूं। इसलिए भवसिन्धुतारक अब उस व्रत का विधान मुझे बताओ मैं अब उस व्रत को यथाविधि पालन करना चाहती हूं, तब मुनिराज ने उसको सम्पूर्ण व्रत को ग्रहण कराया, मुनिराज अपने स्थान को वापस चले गये, आगे उस घटातिकी ने समयानुसार व्रत का पालन किया, उद्यापन भी किया, जब वह कन्या मासिक धर्म से होने लगी है ऐसा देखकर पांड्य राजा ने देवसेन राजा से घटातिकी का विवाह कर दिया, दोनों पति पत्नी आनन्द से अपना समय व्यतीत करने लगे, एक दिन दोनों पति पत्नी सहस्त्रकूट चैत्यालय की वंदना के लिए गए थे, भगवान को नमस्कार करके बाहर आये, मुनिराज का धर्मोपदेश सुनकर अपने नगर में वापस आये, सुख से राज्य करते हुए अंत में समाधिमरण पूर्वक मरकर स्वर्ग सुख का अनुभव करने लगे और आगे मोक्षसुख का भी अनुभव करने लगे।

अक्षयसुख संपत्ति व्रत कथा

फाल्गुन शुक्ल एकम के दिन प्रातः स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहने, पूजा अभिषेक का सामान लेकर जिनमंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे, अखण्डदीप जलावे, अभिषेक पीठ पर पंचपरमेष्ठी भगवान की मूर्ति स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, भगवान के आगे एक पाटे पर पांच पान अलग २ रखे, पानों के नीचे चंदन से स्वस्तिक बनावे, उन पानों पर अलग २ अष्ट द्रव्य रखे, फिर पंचपरमेष्ठी भगवान की पूजा करे, पंचपक्वान चढ़ावे, पांच फूलों की माला चढ़ावे, श्रुत की व गुरू की पूजा करे, यक्ष यक्षिणी की व क्षेत्रपाल की यथायोग्य अर्चना करे।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का भी १०८ बार जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े, एक थाली में पांच पान रखकर ऊपर पृथक २ अर्घ्य रखे, एक नारियल रखे, उस थाली को हाथ में लेकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे मंगल आरती उतारे, अर्घ्य भगवान को चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे, धर्मध्यान से समय बितावे, सत्पात्रों को आहारादि देकर पांच सौभाग्यवती स्त्रियों को भोजन पानादि देकर उनको गोद में सामान भर कर सम्मान करें। इस प्रकार प्रत्येक महिने की एकम को उपवास पूर्वक पूजा करे। अन्त में उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठी विधान करके, महाभिषेक करे, पांच मुनिसंघों को व आर्यिकाओं को आहारदानादि उपकरण देकर संतुष्ट करे, श्रावक श्राविकाओं को भोजन पानादि देवे, इस व्रत का फल संसारसुखों को प्राप्त कराकर अंत में मोक्षसुख की प्राप्ति है।

व्रत में चेलना रानी और राजा श्रेणिक की कथा पढ़े।

अष्टान्हिका व्रत की विधि

अष्टान्हिकाव्रतं कार्तिकफाल्गुनाषाढमासेषु अष्टमीमारभ्य पूर्णिमान्तं भवतीति। वृद्धावधिकतया भवत्येव, मध्यतिथिह्रासे सप्तमीतो व्रतं कार्यं भवतीति; तद्यथा सप्तम्यामुपवासोऽष्टम्यां पारणा नवम्यां काञ्जिकं दशम्यामवमौदार्यमित्येको

मार्गः सुगमः सूचितः जघन्यापेक्षया तदादिदिनमारभ्य पूर्णिमान्त कार्यः षष्ठोपवासः पद्मदेववाक्यसमादरैः भव्यपुण्डरीकैः अन्यथाक्रियमाणे सति व्रतविधिर्भ्रश्येत् एवं सावधिकानि व्रतानि समाप्तानि ।

अर्थः—अष्टान्हिका व्रत कार्तिक, फाल्गुन और आषाढ़ मासों के शुक्ल पक्षों में अष्टमी से पूर्णिमा तक किया जाता है । तिथिवृद्धि हो जाने पर एक दिन अधिक करना पड़ता है । व्रत के दिनों के मध्य में तिथि ह्रास होने पर एक दिन पहले से व्रत करना होता है । जैसे मध्य में तिथि-ह्रास होने से सप्तमी को उपवास, अष्टमी को पारणा, नवमी को काञ्जी-छाछ, दशमी को ऊनोदर, एकादशी को उपवास, द्वादशी को पारणा, त्रयोदशी को निरस, चतुर्दशी को उपवास एवं शक्ति होने पर पूर्णिमा को उपवास, शक्ति के अभाव में ऊनोदर तथा प्रतिपदा को पारणा करनी चाहिए । यह सरल और जघन्य विधि अष्टान्हिका व्रत की है । व्रत की उत्कृष्ट विधि यह है कि अष्टमी से षष्ठोपवास अर्थात अष्टमी, नवमी का उपवास दशमी को पारणा, एकादशी और द्वादशी को उपवास, त्रयोदशी को पारणा एवं चतुर्दशी और पूर्णिमा को उपवास और प्रतिपदा को पारणा करनी चाहिए । श्री पद्मप्रभदेव के वचनों का आदर करने वाले भव्य जीवों को उक्त विधि से व्रत करना चाहिए ।

इस प्रकार बतायी हुयी विधि से जो व्रत नहीं करते हैं, उनकी व्रत विधि दूषित हो जाती है, और व्रत का फल नहीं मिलता । इस प्रकार सावधिव्रतों का निरूपण पूरा हुआ ।

विवेचनः—कार्तिक, फाल्गुन और आषाढ मास के शुक्ल पक्ष में अष्टमी के दिन व्रत की धारणा करनी होती है । प्रथम ही श्री जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक पूजन सम्पन्न किया जाता है, तत्पश्चात् गुरु के पास, यदि गुरु न हो तो जिनबिम्ब के सम्मुख निम्न संकल्प को पढ़कर व्रत ग्रहण किया जाता है ।

व्रत ग्रहण करने का संकल्प—

ॐ अद्य भगवतो महापुरुषस्य ब्रह्मणो मते मासानां मासोत्तमे मासे आषाढमासे शुक्लपक्षे सप्तम्यां तिथौ·····वासरे·········जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्य-

खण्डे..... प्रदेशे..... नगरे एतत् अवसर्पिणीकालावसानचतुर्दशप्राभृतमानिमानितसकललोकव्यवहारे श्रीगौतमस्वामिश्रेणिकमहामण्डलेश्वरसमाचरितसन्मार्गविशेषे ..... वीरनिर्वाणसंवत्सरे अष्टमहाप्रातिहार्यादिशोभितश्रीमदर्हत्परमेश्वरप्रतिमासन्निधौ अहम् अष्टान्हिकाव्रतस्य संकल्पं करिष्ये । अस्य व्रतस्य समाप्तिपर्यन्तं मे सावद्यत्यागः गृहस्थाश्रमजन्यारम्भपरिग्रहादीनामपि त्यागः ।

सप्तमी तिथि से प्रतिपदा तक ब्रह्मचर्य व्रत धारण करना आवश्यक होता है, भूमि पर शयन, सचित्त पदार्थों का त्याग, अष्टमी को उपवास, रात्रि को जागरण आदि क्रियाएं की जाती हैं।

अष्टमी तिथि को दिन में नन्दीश्वरद्वीप का मण्डल मांडकर अष्टद्रव्यों से पूजा की जाती है। पूजा-पाठ के अनन्तर नन्दीश्वर व्रत की कथा पढ़नी चाहिए। '**ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो नमः**' इस मन्त्र का १०८ बार जाप करना चाहिए। नवमी को '**ॐ ह्रीं अष्टमहाविभूतिसंज्ञायै नमः**' इस महामन्त्र का जाप; दशमी को '**ॐ ह्रीं त्रिलोकसागर संज्ञायै नमः**' मन्त्र का जाप; एकादशी को '**ॐ ह्रीं चतुर्मुखसंज्ञायै नमः**' मन्त्र का जाप; द्वादशी को '**ॐ ह्रीं पञ्चमहालक्षण संज्ञायै नमः**' मन्त्र का जाप; त्रयोदशी को '**ॐ ह्रीं स्वर्गसोपान संज्ञायै नमः**' मन्त्र का जाप; चतुर्दशी को '**ॐ ह्रीं सिद्धचक्राय नमः**' मन्त्र का जाप एवं पूर्णिमासी को '**ॐ ह्रीं इन्द्रध्वजसंज्ञायै नमः**' मन्त्र का जाप करना चाहिए।

व्रत की धारणा और समाप्ति के दिन णमोकार मन्त्र का जाप करना चाहिए। व्रत समाप्ति के दिन निम्न संकल्प पढ़कर सुपाड़ी पैसा या नारियल-पैसा चढ़ाकर भगवान् को नमस्कार कर घर आना चाहिए—

'**ॐ आद्यानाम् आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे शुभे श्रावणमासे कृष्णपक्षे अद्य प्रतिपदायां श्रीमदर्हत्प्रतिमासन्निधौ पूर्वं यद्व्रतंगृहीतं तस्य परिसमाप्तिं करिष्येऽहम्। प्रमादाज्ञानवशात् व्रते जायमानदोषाः शान्तिमुपयान्ति–ॐ ह्रीं क्ष्वीं स्वाहा। श्रीमज्जिनेन्द्रचरणेषु आनन्दभक्तिः सदास्तु, समाधिमरणं भवतु, पापविनाशनं भवतु–ॐ ह्रीं असि आ उ सा य नमः। सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा।**

दैवसिक व्रतों का वर्णन

दैवसिकानि कानि भवन्ति ? त्रिमुखशुद्धिद्वारावलोकनजिनपूजापात्रदानव्रत-प्रतिमायोगादीनि व्रतानि भवन्ति ।

अर्थ:—दैवसिक कौन कौन व्रत हैं ? त्रिमुखशुद्धि, द्वारावलोकन, जिनपूजा, पात्रदान, प्रतिमायोग आदि दैवसिक व्रत हैं ।

नन्दीश्वर व्रत कथा

तीनों अष्टाह्निकाओं में यह व्रत किया जाता है । सप्तमी के दिन श्रावक को स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजाद्रव्यों को अपने हाथों में लेकर जिनमन्दिर को जावे, मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, भगवान का पंचामृताभिषेक करके भगवान की अष्टद्रव्यों से पूजा करे, गुरु के निकट इस व्रत को लेकर एकाशन करे, ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे, भूमिशयन करे, हरितकाय पदार्थों का त्याग करे, धर्मध्यान से समय बितावे, अष्टमी के दिन उसी प्रकार शुद्ध होकर मण्डप रचना करके मूलनायक भगवान का अभिषेक करे, नन्दीश्वर बिंब का भी अभिषेक करे, पंचमेरू आदि स्थापन कर अष्टद्रव्य से नित्यपूजा करे, उसके बाद नन्दीश्वर पूजा विधान करे ।

तिथि	जाप्य	भोजन	व्रतफल
अष्टमी	ॐ ह्रीं नंदीश्वरसंज्ञाय नमः	उपवास करें	१० लक्ष उपवास का फल
नवमी	ॐ ह्रीं अष्टमहाविभूतिसंज्ञाय नमः	पारणा वस्तु खावे	१० लक्ष उपवास का फल
दशमी	ॐ ह्रीं त्रिलोकसारसंज्ञाय नमः	पानी भात खावे कांजीआहार	६० लक्ष उपवास का फल
एकादशी	ॐ ह्रीं चतुर्मुखसंज्ञाय नमः	अवमोदर्य करे	५० लक्ष उपवास का फल
द्वादशी	ॐ ह्रीं पंचमहालक्षण संज्ञाय नमः	एकाशन करे	५० लक्ष
त्रयोदशी	ॐ ह्रीं स्वर्गसोपानसंज्ञाय नमः	इमली भातखावे	४० लक्ष
चतुर्दशी	ॐ ह्रीं सर्व संपत्तिसंज्ञाय नमः	त्रिवेली भात	१ लक्ष
पौर्णिमा	ॐ ह्रीं इंद्रध्वजसंज्ञाय नमः	उपवास करे	३ कोटी पाँच लक्ष उप.

अष्टमी के दिन मंत्र का १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मंत्र का १०८ बार जाप्य करे, नन्दीश्वर भक्ति बोलकर व्रत कथा पढ़े, एक थाली में महा अर्घ्य लेकर मंदिर को तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य भगवान को चढ़ा देवे। इसी प्रकार प्रत्येक तिथि को उपरोक्त टेबल के अनुसार ही जाप्य व भोजनसामग्री करे या लेवे, पूजा भी अष्टमी के समान ही करे, मंत्र जाप्य में १०८ सुगन्धित पुष्प लेना परम आवश्यक है, पुष्पों से ही जाप प्रत्येक दिन करे, पूर्णिमा के दिन चतुर्विध संघ को दान देकर अपना भोजन करे, इस व्रत का पालन तीन वर्ष या पांच वर्ष या सात वर्ष या आठ वर्ष तक करना चाहिये, जैसो जिसकी शक्ति हो, वैसे पालन करना चाहिए, जो इस व्रत को अच्छी तरह से पालन करता है, वह सात आठ भव में अथवा तीसरे भव अथवा इसी भव से मोक्ष जाता है। अन्त में व्रत का उद्यापन करे, नन्दीश्वर प्रतिमा की पांच कल्याणक करके जिनमंदिर में स्थापना करे। चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा की प्रतिष्ठा करावे, जीर्णोद्धार मंदिर जी का करावे, चतुर्विध संघ को आहारदानादि देवे, मंगल द्रव्य आठ २ देवे।

अष्टान्हिका व्रत कथा

इस व्रत को पहले अनन्तवीर्य, अपराजित ने पालन किया, इसलिये दोनों चक्रवर्ती हुए, और विजय कुमार सेनापति हुए, जय कुमार व सुलोचना अनुक्रम से गणधर व सुलोचना देव हुई, श्रीपाल राजा का कुष्टरोग चला गया। इसकी आगे कथा कहता हूं।

इस जम्बूद्वीप के भरत-क्षेत्र में आर्यखंड के अन्दर अयोध्या नगरी में पहले इक्ष्वाकु वंशी हरिषेण नाम का चक्रवर्ती राजा अपनी ९६ हजार रानियों के साथ राज्य करता था, एक दिन वसन्त ऋतु के समय हरिषेण अपने परिवार सहित वन-क्रीड़ा को गया, वन में एक पेड़ के नीचे एक शिला पर दो अवधिज्ञान संपन्न मुनिराज विराजे हुए थे, एक का नाम अरिंजय और दूसरे का नाम अमितंजय था, दोनों ही एक साथ में प्रायश्चित विधि जोर २ से पढ़ रहे थे, मुनिराज का शब्द सुनकर राजा मंत्री से कहने लगा कि हे मंत्री तुमने देखा, यह शब्द कहां से आ रहा है, तब मंत्री ने कहा कि राजन सुना है दो मुनिराज एक शिलापर बैठकर पाठ कर रहे हैं, तब राजा

ने अपनी गंधर्वश्री रानी को साथ में लेकर मुनिराज के पास जाकर मुनिराज को तीन प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कार किया और धर्म का स्वरूप, वस्तु तत्त्व, नौ पदार्थ, षट-द्रव्य, पंचास्तिकायादि का स्वरूप सुना, मुनिधर्म का स्वरूप, श्रावकधर्म का स्वरूप आदि सुना राजा सुनकर बहुत ही सन्तुष्ट हुआ, राजा ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की—हे गुरुदेव मैंने पूर्वभव में ऐसा कौनसा पुण्य किया था कि मैं इस भव में चक्रवर्ती हुआ हूं।

तब मुनिराज कहने लगे कि हे राजन ! पहले इस अयोध्या नगरी में कुबेरमित्र नामक एक वैश्य था, उसकी सुन्दरी नामक स्त्री थी, उसके गर्भ से एक तुम और हम दोनों उत्पन्न हुए थे। एक श्रीवर्मा, जयकीर्ति तीसरा जयचन्द था। पहला श्रीवर्मा तुम्हारा ही जीव था, श्रीवर्मा ने एक बार नन्दीश्वर पर्व में गुरु के पास आठ दिन का नन्दीश्वर व्रत ग्रहण किया, कितने ही वर्षों तक उसने इस व्रत का पालन किया अंत में समाधि से मरकर स्वर्ग में देव हुआ, वहां से चयकर तुम हरिषेण चक्रवर्ती हुए हो, तुम्हारे दोनों भाइयों ने भी इस नन्दीश्वर व्रत को पालन करते हुए श्रावक धर्म का अच्छी तरह से पालन किया था। उसके प्रभाव से इस भरत क्षेत्र के हस्तिनापुर नगर में एक क्षायिक सम्यग्दृष्टि विमलवाहन नाम का सेठ अपनी भार्या लक्ष्मीमति के साथ रहता था, उन्ही के यहां अरिंजय और अमितंजय नामक हम दोनों उत्पन्न हुए हैं। बालपने से ही धार्मिक संस्कारों के कारण बालब्रह्मचारी रहकर गुरु के निकट जिनदीक्षा ग्रहण की और घोर तपश्चरण करके चारणऋद्धि प्राप्त कर ली है, हे राजन ! तुम चक्रवर्ती हुए हो, इसी पूर्व संबंध से हम को देखकर *तुम्हें प्रीति उत्पन्न हुई है, ऐसा कहकर चक्रवर्ती को नन्दीश्वर द्वीप का वर्णन सुनाया,* और कहने लगे कि इस नन्दीश्वर द्वीप में सौधर्मादि इन्द्र और सब देवगण जाकर आनन्द उत्सवपूर्वक पूजा करते हैं, और मनुष्य पर्याय में श्रावक वर्ग अपने यहां ही नन्दीश्वर द्वीप की स्थापना कर पूजा करते हैं। इस व्रत का अवश्य ही पालन करना चाहिये, अंत में उद्यापन करना चाहिये, इस व्रत का पालन करने से एक नवीन मन्दिर की प्रतिष्ठा करने से जितना मिल पुण्य लगता है उतना पुण्य इस व्रत के पालन से मिलता है।

यह सब सुनकर राजा को बहुत आनन्द हुआ, राजा ने इस नन्दीश्वर व्रत को विनयपूर्वक ग्रहण किया, और अपने नगर में वापस आया, कालानुसार व्रत को पालन कर जिनदीक्षा ग्रहण कर मोक्ष को गया, भव्यजीवों ! तुम भी इस व्रत का पालन करो, जिससे हरिषेण चक्रवर्ती के समान सुख भोगकर मोक्ष को जाओगे ।

अनन्त सौंदर्य व्रत कथा

चैत्र कृष्ण द्वितीया के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजा अभिषेक का सामान हाथ में लेकर जिनमंदिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धिपूर्वक भगवान को नमस्कार करे, भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्ष यक्षी व क्षेत्रपाल की भी अर्चना करे, पांच प्रकार की खीर बनाकर बारह बार चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तर सहस्त्र नामसहित श्री जिनेंद्राय यक्ष यक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में महाअर्घ्य रखकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन ब्रह्मचर्य से रहे, उपवास करे, दूसरे दिन सत्पात्रों को दान देवे, स्वयं पारणा करे, इसी प्रकार प्रत्येक महिने की इसी तिथि को पूजा कर उपवास करे, व्रत करे, बारह महिने पूर्ण होने पर अंत में उद्यापन करे, उस समय चौबीस तीर्थंकर विधान करे, सत्पात्रों को दान देवे ।

इस व्रत में भी राजा श्रेणिक व रानी चेलना का जीवन चरित्र पढ़े ।

अणति पूर्णिमा व्रत कथा

आषाढ, कार्तिक, फाल्गुन इन महिनों में आने वाली पौर्णिमा को स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर, पूजा व अभिषेक का सर्व सामान लेकर मन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाते हुवे ईर्यापथ शुद्धि करता हुवा, भगवान को नमस्कार करे, चौबीस तीर्थंकर की मूर्ति यक्ष यक्षी सहित पीठ पर स्थापन कर पचामृत अभिषेक करे, उस के बाद जिनप्रभु की पूजा जयमाला सहित पढ़े ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वृषभादि वर्धमानांत वर्तमान चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्ष यक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से सुगन्धित पुष्प लेकर १०८ बार जाप्य करे, जिनवाणी व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की उनकी योग्यतानुसार पूजा सम्मान करे, जिनसहस्त्रनाम पढ़े, णमोकार मंत्र १०८ बार पढ़े, याने एक माला फेरे। और व्रतकथा पढ़े और अंत में एक थाली में २४ पान रखकर प्रत्येक पान पर गंध, अक्षत, पुष्प, फलादि रखकर महाअर्घ्य करे, महाअर्घ्य को हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, महाअर्घ्य को भगवान के आगे चढ़ा देवे, घर जाकर मुनिश्वर को आहार दान देवे, मुनिराज के आगे तीर्थंकरों का नाम लेकर फिर एकभुक्ति करे, नित्य जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक करे, नित्य भोजन करते समय, पान खाते समय, पानी पीते समय, इस व्रत का (आणलि व्रत का) नाम लेकर याने, त्रिकाल तीर्थंकरों का नाम लेकर, अगर स्वयं को नाम याद नहीं हो तो दूसरे से ५ बार सुने, बाद में भोजन करे । इस क्रम से व्रत को छह वर्ष तक पालन कर, उद्यापन करे, उस समय चौबीस तीर्थंकर की यक्षयक्षि सहित प्रतिमा बनवाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, २४ वायने तैयार करे, ४८ सूप नवीन मंगवाकर धुलावे, उसमें हल्दी का चूर्ण पानी में घोलकर लगावे २४ सूप के अन्दर पृथक्-२ भीगे हुए चने, अष्ट द्रव्य, सेन्धा नमक, करंजा, फल, पुष्प, पान इत्यादि चौबीस प्रकार की अच्छी २ वस्तुएं डालकर उन चौबीस सूपों को सामान रखे हुवे सूपों से ढंक देवे, ऊपर से धागा लपेट देवे, २४ प्रकार की मिठाई तैयार करके चढ़ावे, देव, शास्त्र, गुरु, पूजनाचार्य व सौभाग्यवती स्त्रियों को देकर अपने घर भी दो लेकर आवे, २४ मुनिराज को आहार देकर शास्त्रादि उपकरण देवे, आर्यिकाओं को भी आहारादि देकर वस्त्रादि आवश्यक उपकरण देवे । चौबीस हाथ लम्बा चौड़ा सफेद कपड़ा धोकर बिछावे, ऊपर एक टेबल रखे, उस टेबल के ऊपर चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा स्थापन करे, प्रत्येक तीर्थंकर की अलग २ पूजा करे, फिर वायना देवे ।

वायनादान मन्त्र :—ॐ नमों अर्हद्‌भ्यो चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो सौभाग्येष्ट सिद्धि कुरुत कुरुत स्वाहा ।

इस मन्त्र को पढ़कर वायना (सूपों में भरा हुआ) देवे, इस प्रकार यह पूर्ण विधि है, इस व्रत के प्रभाव से सर्व विघ्नों का नाश होता है, सौभाग्य व दीर्घायुष की प्राप्ति होती है ।

कथा

चतुर्विंशति तिर्थेशान् । चतुर्गति निवारकान् ।
निर्वाणसाधकान् वंदे । सर्वजीव दया करान् ।।

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में अवंति नाम का देश है, उस देश में चंपापुर नाम का एक बहुत बड़ा नगर है, उस नगर में भूपाल नाम का एक वीर्यशाली व गुणवान राजा राज्य करता था। उस राजा की सुप्रभा और मनोहरा दो पट्ट रानियां थीं। राजा अपनी स्त्री-युगल के साथ राज्य करता था ।

एक दिन नगर के उद्यान में एक महामुनीश्वर आये, राजा ने यह समाचार सुनते ही नगर में आनन्द भेरी बजवाकर सर्व जनपरिजन सहित पैदल चलते हुए उद्यान में गया, वहां मुनिराज को तीन प्रदक्षिणा देकर भक्ति से नमस्कार किया कुछ समय धर्मोपदेश सुनकर बड़े विनय के साथ हाथ जोड़कर कहने लगा, कि हे महातपस्वो, आज आप हम को किसी व्रत का स्वरूप बताइये, राजा के वचन सुनकर मुनिराज कहने लगे—

हे राजन, इस कर्मभूमि के उत्सर्पिणी व अवसर्पिणी काल के अन्दर त्रिकाल तीर्थंकर होते रहते हैं, तीर्थंकरों का पंचकल्याणक होता है, इसी प्रकार भरत क्षेत्र में आरम्भ में प्रथम तीर्थंकर श्री आदि तीर्थंकर हुए भगवान को जब केवलज्ञान हुआ तब भरत चक्रवर्ती आनन्द और उत्साह से भगवान के समवशरण में गया, भगवान के चरणकमलों में नमस्कार करके, मनुष्यों के कोठे में जाकर बैठ गया, दिव्य ध्वनि से होने वाला धर्मोपदेश सुनकर दोनों हाथ जोड़कर वृषभसेन गणधर को कहने लगा कि हे भवसिन्धुतारक, आज आप मुझे कोई जो सुगति का कारण हो ऐसा एक व्रत कहो, भरत राजा के विनयशब्द को सुनकर वृषभसेन गणधर कहने लगे—

हे चक्रवर्ती राजन, तुम को पालन करने योग्य ऐसा ३६० दिन करने

योग्य व्रत है, सद्गति को देने वाला है, इस व्रत के प्रभाव से तुम इसी भव से मोक्ष चले जाओगे । ऐसा सुनकर भरत को मन में बहुत आनन्द हुआ, गणधर के मुख से व्रत का विधान सुनकर व्रत को ग्रहण किया और नगर में आया, भरत चक्रवर्ती ने विधिपूर्वक व्रत का पालन किया, अन्त में बड़े वैभव के साथ उद्यापन किया, व्रत (आणति व्रत) जब भरत चक्रवर्ती ने किया तब व्रत के उद्यापन में कैलाशपर्वत पर २४ तीर्थंकर का मन्दिर बनवाकर जिनबिंब स्थापन किया । व्रत विधि कहते हुए मुनिराज ने अपना धर्मोपदेश समाप्त किया, तब मनोहरा रानी ने यह व्रत ग्रहण किया तब सभी लोग मुनिराज को नमस्कार करके नगरी में वापस आये ।

मनोहरा रानी उक्त व्रत को अपनी शक्ति नहीं छिपाते हुए पालन करने लगी, ऐसा देखकर सुप्रभा रानी को बहुत बुरा लगने लगा, एक दिन राजा ने सुप्रभा रानी को कहा कि आज भोजन तैयार करिये तब सुप्रभारानी ने विचार किया कि आज राजा को विष मिलाकर भोजन देना है । रानी ने विष मिश्रित भोजन राजा के लिए तैयार किया । जब राजा भोजन के लिए आये तब एक चौकी बिछाकर थाली में विष मिश्रित भोजन लाकर रख दिया, थाली परोसते हुए कर्म-योग से चौकी से थाली नीचे जमीन पर गिर पड़ी और विष मिश्रित अन्न जमीन पर गिर पड़ा, जब राजा ने उस अन्न को देखा तो लगा कि भोजन में कुछ मिला हुआ है तत्क्षण वैद्य से भोजन की जांच करवाई तो पता लगा कि रानी सुप्रभा ने भोजन में विष मिलाया है. राजा रानी के ऊपर बहुत रुष्ट हुआ, उस रानी का राजा ने बहुत अपमान किया, तब रानी को बहुत दुःख हुआ, रानी पश्चाताप करने लगी, अपनी ही निंदा करने लगी ।

मनोहरा रानी के व्रत विधान से राजा के ऊपर होने वाला विषप्रयोग का उप-द्रव शांत हो गया, टल गया, सब जगह रानी मनोहरा के व्रत का महात्म्य प्रकट हुआ, तब रानी सुप्रभा ने विचार किया कि इसके व्रत के विधान से ही मैं भी बच गई और राजा भी बच गया, तब उसने भक्ति से व्रत को स्वीकार किया, राजा के मन्त्रियों ने भी व्रत को स्वीकार किया, राजा सेना सहित दिग्विजय के लिए निकला और थोड़े ही दिनों में दिग्विजय करके अपनी नगरी में वापस आया, तब मनोहरा

रानी को पट्टरानी बनाकर रानी का बहुत सम्मान किया, फिर सब ने मिल कर व्रत का उद्यापन बहुत ठाट से किया, सुख से राज्यभोग करने लगे । अन्त में दोनों दंपती दीक्षा लेकर तपश्चरण करने लगे, तप के प्रभाव से स्वर्ग में उत्पन्न हुए, क्रम से मोक्ष को जाएंगे ।

आर्तध्याननिवारण व्रत कथा

व्रत विधि : —पहले के समान करें । अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृष्ण १० के दिन एकाशन करें, ११ के दिन उपवास व पूजा आराधना मंत्र जाप करें ।

अभयकुमार व्रत कथा

व्रत विधि :—किसी भी महिने की शुक्ल पक्ष की चतुर्थी को एकाशन करे, और पंचमी को अष्ट उपवास करे । उस दिन सुबह शुद्ध कपड़े पहन कर द्रव्य लेकर मन्दिर जाये, वेदी मूलनायक के पास पंचपरमेष्ठी प्रतिमा स्थापित कर पंचामृत अभिषेक करे । एक पाटे पर पांच स्वस्तिक बनाकर अष्ट द्रव्य पान रखे पंच परमेष्ठी श्रुत व गुरु की पूजा करे, स्तोत्र पढ़े । यक्ष यक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करें ।

जाप :—"ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा"

इस मन्त्र का जाप १०८ बार पुष्पों से करे । णमोकार मंत्र का १०८ बार जाप करे । मंगल आरती करे । सत् पात्र को दान दे । दूसरे दिन पूजा व दान देकर पारणा करे ।

इस क्रम से ५ तिथि पूर्ण होने पर उद्यापन करे, उस दिन पंचपरमेष्ठि विधान करके ५ दम्पती को भोजन करावे ।

कथा

यह व्रत अपने तीसरे भव में एक ब्राह्मण ने यथा विधि पालन किया था, जिससे मोक्षसुख मिला ।

अपकायनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—व्रतविधि पहले के समान ही करना । अन्तर सिर्फ इतना

है कि चैत्र शुक्ल ६ को एकाशन करे, ७ को उपवास करे और सुपार्श्वनाथ तीर्थंकर की पूजा, मन्त्र, जाप आदि करना चाहिए ।

साल पान लगाकर ऊपर अष्ट द्रव्य रखे, पंचपरमेष्ठी की मूर्ति का अभिषेक पूजा करे, उसी का जाप्य पूर्ववत् करे ।

कथा

कथा राजा श्रेणिक, रानी चेलना की पढ़ें ।

आचाम्लवर्धन व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल अष्टमी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर अभिषेक पूजा का सामान लेकर जिनमन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा देकर भगवान को नमस्कार करे, यक्षयक्षिसहित जिनप्रतिमा स्थापन कर अभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से भगवान की पूजा करे, श्रुत व गुरु की भी पूजा करे, यक्षयक्षिणि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अष्टोत्तर सहस्त्र नाम सहित यक्षयक्षि सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ पुष्प लेकर जाप्य करें । णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करें, व्रतकथा पढ़ें, एक अर्घ्य थाली में रखकर, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा व मंगल आरती उतारे अर्घ्य चढ़ा देवे उस दिन उपवास करे । दूसरे दिन पूजा करके सत्पात्रों को दान देवें । उसके बाद पारणा करे, पारणा में मठा और भात खावे, तीसरे दिन पूर्वोक्त पूजा कर उपवास करें, उसके बाद दो दिन एकाशन करके फिर तीन दिन एकाशन करे, उसके बाद फिर उपवास करे और चार दिन एकाशन करे, इस प्रकार १६ उपवास करें, १६ पारणा करे । इस प्रकार यह व्रत १४ वर्ष तक और तीन महिने २० दिन तक करें, अंत में अनंतनाथ तीर्थंकर का विधान कर महाअभिषेक करे, चौदह प्रकार का नैवेद्य चढ़ावे, चौदह मुनियों को आहारदानादिक देवे । इसका यही उद्यापन है ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में आर्य खंड है, उस खंड में महापुर नाम का सुन्दर नगर है, उस नगर में धर्मसिन नाम का राजा था उसको संसार से वैराग्य हुआ और जिनदीक्षा ग्रहण कर तपश्चरण करने लगा, आचाम्लवर्धन व्रत करने लगा, अन्त में समाधिपूर्बक मरण कर आरण स्वर्ग में देव हुआ। एक दिन मुनिराज को आहार-दान देकर मुनिराज से पूछा कि गुरुदेव ! मैं किस पुण्य से चक्रवर्ती हुआ हूं ? तब मुनिराज कहने लगे कि राजन ! तुमने पूर्व भव में मुनि बनकर आचाम्ल वर्धन तप किया था, उसी के पुण्य से आपको यह पद मिला है, तब उसको यह सुनकर बहुत खुशी हुई, उसने पुनः इस व्रत को स्वीकार किया, बाद में दीक्षा लेकर व्रत को अच्छी तरह से पालन कर घोर तपश्चरण करके मोक्ष प्राप्त किया।

अष्ट प्रतिहार्योदय व्रत कथा

फाल्गुन शुक्ला अष्टमी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर जिन मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, भगवान को नमस्कार करे नन्दीश्वर प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा यक्षयक्षी सहित का अभिषेक करे, एक पाटे पर आठ स्वस्तिक बनाकर ऊपर आठ पान रखे, प्रत्येक के ऊपर अक्षत, पुष्प, फल, नैवेद्य रखकर जिनेन्द्र की पूजा करे, जयमाला सहित श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, पंच पक्वान्न चढ़ावे।

ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा सर्व जिन बिंबेभ्यो नमः स्वाहा

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे। णमोकार मन्त्र का जाप्य करे। व्रत कथा पढ़े। पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे। उपवास करे अथवा आठ वस्तुओं से एकाशन करे। सत्पात्रों को दान देवे। दूसरे दिन पूजा करके स्वयं पारणा करे।

इसी प्रकार पूर्णिमा पर्यन्त करे। उस दिन रथोत्सव अथवा पालकी पूर्वक यात्रा निकाले। महाभिषेक करे, चैत्र कृष्णा एकम् के दिन जिन पूजा करके आठ मुनीश्वर को दान देवे, आर्यिका, श्रावक-श्राविका, पुरोहित आदि को भोजन कराकर

वस्त्रादिक दान देवे। इस व्रत को श्रद्धा से पालन करने वाले को तीर्थंकर प्रकृति का बंध होता है।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना ने इस व्रत को किया था। कथा में उन्हों का चरित्र पढ़े।

अष्टविधव्यंतरदेव कथा

व्रत विधि :—भाद्रपद मास के पहले मंगलवार को एकाशन करना। बुधवार को प्रातःकाल स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजा द्रव्य लेकर जिनालय जायें। मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करें। चंद्र प्रभु तीर्थंकर की प्रतिमा श्यामयक्ष ज्वालामालिनी यक्षी के साथ स्थापित करके पंचामृत अभिषेक करें। अष्टद्रव्य से पूजा करें। एक पाटे पर आठ पान रखकर अक्षत फूल फल नैवेद्य आदि रखना। श्रुत व गणधर को पूजा करके अष्टव्यंतर देवों की अर्चना करना। यक्ष यक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करें।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चंद्रप्रभ तीर्थंकराय श्यामयक्ष ज्वालामालिनी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प चढ़ायें। णमोकार मंत्र का १०८ बार जाप करें। इस कथा को पढ़ें। एक पात्र में आठ पान रखकर उस पर अष्टद्रव्य तथा एक नारियल रखकर महार्घ्य करें, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा करके मंगल आरती करें। उस दिन उपवास करना। सत्पात्र को आहारादि दें। दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करें, तीन दिन ब्रह्मचर्यपूर्वक धर्मध्यान करें।

इस प्रकार आठ बुधवार तक पूजा विधि करके अन्त में कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करें, तब चन्द्रप्रभविधान करके महाभिषेक करें। चतु:संघ को चतुर्विध दान दें। आठ जोड़ियों को भोजन कराकर वस्त्रादि देकर सम्मान करें। गरीबों को भोजन करायें।

कथा

जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में विजयार्ध पर्वत है। उसकी दक्षिण श्रेणी में त्रिशखरपुर नगर में इन्द्रध्वज नाम के पराक्रमी राजा अपनी इन्द्रायणी पटरानी सहित राज्य करते थे। मन्त्री पुरोहित श्रेष्ठी सेनापति आदि परिवारजन थे। इनके साथ आनन्द से काल बिताते थे। एक दिन नगर के बाहर उद्यान में गोवर्धन महामुनि आये। यह वनमाल से सुनते ही नगर में आनन्दभेरी बजाकर परिजन-पुरजन सहित दर्शन को गये। कुछ देर धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा ने अपने दोनों हाथ जोड़ विनय से एकाद व्रत देने के लिए प्रार्थना की। मुनीश्वर बोले हे भव्यराजचूड़ामरणे! तुम्हें अष्टविधव्यंतर व्रत करना अधिक उचित है। उस व्रत की विधि बतायो। यह सुन सब को आनन्द हुआ। राजा व रानी ने यह व्रत ग्रहण किया। नमस्कार करके अपने नगर को लौट गये। समयानुसार दोनों ने यह व्रत यथास्थिति पालन किया। कालांतर में राजा संसार-विषय से विरक्त हो कर पुत्र को राज्य देकर वन को गये। एक दिगम्बर साधु के पास जिनदीक्षा लेकर घोर तपस्या की। समाधिमरण करके स्वर्ग को गये। रानी भी आर्यिका दीक्षा लेकर तप करने लगी। उस व्रत तथा तप के प्रभाव से स्त्रीलिंग छेद कर स्वर्ग में देव हुई। ये दोनों आगे जाकर मोक्ष में गये।

अज्ञान निवारण व्रत कथा

किसी भी अष्टान्हिका पर्व में एक पर्व को शुद्ध होकर अष्टमी के दिन मन्दिर में जावे, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, शांतिनाथ की प्रतिमा यक्ष-यक्षिणी सहित का पंचामृताभिषेक करें, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर व यक्षयक्षी क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शांतिनाथाय गरुडयक्ष महामानसीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करें, व्रत कथा पढ़े, अखण्ड दीप जलावे, एक पूर्ण अर्घ्य विधि पूर्वक चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, सत्पात्रों को दान देवे, एकाशन करे। इस प्रकार ९ दिन पूजा कर व्रत करे। चार महिने तक प्रतिदिन दुग्धाभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, चार महिने

पूर्ण होने पर उस समय शांति विधान करे, महाभिषेक करे, चारों संघों को दान देवे ।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

अथ अरनाथ तीर्थंकर चक्रवर्ति व्रत कथा

व्रत विधि :—चैत्र आदि १२ महिने में किसी एक महीने के शुक्ल पक्ष में सप्तमी को एकाशन करना चाहिये और अष्टमी और १४ को शुद्ध कपड़े पहन कर अष्ट द्रव्य लेकर मन्दिर जाना चाहिए । पीठ पर भूतकाल के अमल प्रभु तीर्थंकर की प्रतिमा यक्ष यक्षी सहित विराजमान कर पंचामृत अभिषेक करे । फिर भगवान के सामने सात स्वस्तिक निकाल कर उसके ऊपर सात पत्ते रखकर अष्ट द्रव्य रखे । और निर्वाण से अमल प्रभ तक पूजा करे । पंच पकवान का नैवेद्य बनाये ।

जाप :—"ॐ ह्रीं अर्हं अमल प्रभ तीर्थंकराय यक्ष यक्षी सहिताय नमः स्वाहा" ।

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे । णमोकार की एक माला फेरे । कथा पढ़नी चाहिये फिर आरती करनी चाहिये । उस दिन उपवास करना चाहिए । दूसरे दिन पूजा व दान करके उपवास करना चाहिए ।

इस प्रकार चार अष्टमी व तीन चतुर्दशी ऐसी सात तिथि पूर्ण होने पर उद्यापन करे । उद्यापन के दिन अमल प्रभ तीर्थंकर का विधान करके महाभिषेक करे । चतुर्विध संघ को आहार दान दे । मंदिर में उपकरण आदि रखे । ऐसी व्रत की विधि है ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में कच्छ देश में क्षेमपुर नामक एक रमणीय नगर है । वहां नंदक नामक राजा राज्य करता था । उसके पास मंत्री, पुरोहित, राजश्रेष्ठी आदि परिवार था ।

एक दिन अपने परिवार सहित अनंतनाथ तीर्थंकर के समवशरण में गया। वन्दना कर धर्मोपदेश सुना। उसके बाद अपने दोनों हाथ जोड़कर गणधर से कहा–'हे संसार सागर तारक गणधर! आप मुझे संसार सागर से पार होने के लिये कोई व्रत कहो।' तब उन्हें अरनाथ तीर्थंकर चक्रवर्ती व्रत का पालन करने के लिये कहा। यह सुन राजा बहुत आनन्दित हुआ। फिर वह तीर्थंकर और गणधर को नमस्कार कर अपने घर गया, वहां उसने उस व्रत का पालन कर उसका यथाविधि उद्यापन किया।

फिर एक दिन वह अपने महल के ऊपर बैठा था। अचानक बादलों की विचित्रता देखकर उसे संसार से वैराग्य उत्पन्न हुआ। जिससे उसने दिगम्बरी मुनि दीक्षा धारण की और घोर तपश्चर्या करने लगा। उसका समाधिपूर्वक मरण हुआ। वह जयंत नामक अनुतर विमान में देव हुआ। वहां बहुत समय तक सुख भोगकर काश्यप गोत्रीय सुदर्शन सेठ के यहां जन्म लिया। तीर्थंकर नामकर्म के उदय से देवों ने उनके पांचों कल्याणक मनाये। उनका नाम अरनाथ रखा। वे चक्रवर्ती तीर्थंकर और कामदेव थे। बड़ा होने पर राज्य सुख भोग रहे थे। एक दिन अचानक बादलों की चंचलता देखकर उन्हें वैराग्य हो गया, लौकांतिक देवों ने आकर उन्हें सम्बोधित किया। दीक्षा लेकर घोर तपश्चर्या करने लगे, जिससे चार कर्मों का नाश हो गया और केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। धर्मोपदेश करते हुये सब जगह विहार किया। इस प्रकार वे सम्मेदशिखर पर पहुंचे। वहां पर योग धारण किया, शुक्ल ध्यान के प्रभाव से चार अघातिया कर्मों का नाश कर मोक्ष गये। ऐसा इस व्रत का माहात्म्य है।

आकाश पंचमी व्रत कथा

व्रत विधि :—भाद्रपद शुक्ला ४ को एकाशन करे। ५ के दिन उपवास करे। शुद्ध कपड़े पहन कर मन्दिर जाये। वहां दर्शन प्रदक्षिणा आदि करे। मूलनायक प्रतिमा का अभिषेक करे। पूजा करे। शाम को मन्दिर के खुले स्थान में चौबीस तीर्थंकर की आराधना करने के लिये चतुरस्त्र पांच मण्डल पांच वर्णों के निकाले। मंडप का शृंगारादि करके चौबीस तीर्थंकरों का पंचामृत अभिषेक करके यंत्र दल को एक कुम्भ पर स्थापित करे। सकलीकरण, नित्यपूजा क्रम करे। फिर

चौबीस तीर्थंकरों की आराधना करे । इस प्रकार प्रत्येक पहर में स्तवन और अर्चना करे । इस प्रकार चार बार करे । अंत में—

"ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्ष यक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा"

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे । णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे । यह कथा पढ़े । महार्घ्य दे, आरती करे । दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करे ।

इस प्रकार से ५ वर्ष यह व्रत करके उद्यापन करे । उस समय चौबीस तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे । चार प्रकार का दान दे । मन्दिर में ५ घण्टे, दर्पण, छत्र, चमर आदि दे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सोरठ नामक देश है । उसमें तिलकपुर नामक मनोहर नगर है । वहां पर महिपाल राजा राज्य करता था । उसकी रानी विचक्षणा थी । वहां पर भद्रशहा नामक व्यापारी नंदा नामक स्त्री के साथ रहता था । उसकी विशाला नामक एक कन्या थी । वह रूपवती व गुणवती थी । पर बाद में उसके ओंठ पर कोढ़ हो गया जिससे उसके साथ कोई भी शादी नहीं करता था । उसके माता-पिता को भी दुःख था ।

एक दिन उसके माता-पिता ने उससे कहा कि हे बाले ! हमने पूर्व भव में कुछ ऐसे कार्य किये होंगे जिससे हमें उसका फल भोगना पड़ रहा है इसलिए अब धर्म कार्य की ओर अपना ध्यान दो, जिससे अपना दुःख नष्ट होगा । यह सुन वह नित्यपूजा, स्तुति, वन्दना, मन्त्रजाप्य, दान आदि शुभ भावना से करने लगी । व्रत भी करती थी, जिसके पुण्य के प्रभाव से एक दिन पिंगल नामक वैद्य ने उसके पिताजी से पूछा कि तुम्हारी लड़की का रोग ठीक होने पर लड़की मुझे दोगे क्या ? तब उसके पिता ने कहा दे दूंगा ।

वैद्य ने सिद्धचक्र की पूजन करके औषधि दे दी । जिससे उसका रोग अच्छा

हो गया। फिर उसने अपनी कन्या का विवाह विधिपूर्वक उसके साथ कर दिया। बहुत समय तब वह भी वहीं रहा फिर वह अपने जाने के समय चित्तौड़गढ़ आया। वहां लुटेरों ने उसका सब धन छीन लिया और उस पिंगल को मार डाला। तब वह विशाला चित्तौड़गढ़ शहर में गई। वहां जिन मन्दिर में गई और भगवान के दर्शन किये। वहां मुनिश्वर बैठे हुए थे, उनकी वन्दना आदि करके पास में बैठकर अपनी सब बातें उन्हें बतायी और दु:खी होकर कहा कि अब मैं क्या करूं और कहां जाऊँ ? तब महाराज जी ने समझाया कि हमारे किये गये कर्म हमें भोगे बिना छूटते नहीं हैं। पूर्व जन्म में तुमने जो पाप किये हैं, उनका फल भोग रही है। उसका वर्णन करता हूं, सुनो :—

पहले एक जन्म में तुम इसी शहर में वारांगना (वेश्या) थी। तुम स्वरूप से बहुत सुन्दर होने से नृत्य करने में अतिशय कुशल थी। एक दिन सोमदत्त नामक मुनि यहां आये, जिससे श्रावकों को बहुत आनन्द हुआ। रोज उत्सव होने लगे। राजा के हाथी पर जिनवाणी रखकर जुलूस के साथ जिन मन्दिर में लाये। वे मुनिराज शास्त्र पढ़कर रोज धर्मोपदेश देते थे। लोग बड़े उत्साह से सुनते थे। यह सब देखकर ब्राह्मण लोग द्वेष करने लगे। उन्होंने मुनि से बड़ा वाद-विवाद किया, जिसमें मुनिश्वर जीत गये। यह देख श्रावकों को बहुत खुशी हुई। पर ब्राह्मणों के मन में द्वेष बढ़ने लगा।

तब मुनि के साथ छल करने का दूसरा उपाय किया। तेरा जीव उस समय वेश्या स्वरूप में था। ब्राह्मणों ने एक वेश्या बुलायी, वह तू ही थी, तुझसे उन्होंने कहा कि यदि तू उस साधु का ब्रह्मचर्य भ्रष्ट करेगी, तो तुझे बहुत धन दिया जायेगा। तब तू धन के लोभ से एक श्राविका का शृंगार करके रात को अकेली मन्दिर में जाने लगी और मुनि को मोहित करने के लिये अनेक प्रयत्न करने लगी। अन्त में मुनि का आलिंगन भी किया पर मुनि तो अपने ध्यान से नहीं डिगे। मेरुपर्वत के समान निश्चल बैठे थे। तब तू निरुपाय हो, लज्जित हुई। तुझे बहुत आश्चर्य हुआ। तू सोचने लगी कि एक दृष्टि उठा कर देख लेने पर आदमी मेरे पीछे लग जाता है पर इस मुनि ने आँख उठाकर भी नहीं देखा। यह कैसा आश्चर्य है। धन्य है यह योगी। शाबास ! उसके जितेन्द्रिय को। इस प्रकार से मन में सोचकर वह वापस ब्राह्मण के

के पास आयी और सब बात बतायी। उसने द्रव्य न लेते हुये कहा :—पुरुष को विकार उत्पन्न करने के लिये मेरे पास जितने प्रयत्न थे, उतने किये पर उस मुनि ने जरासा भी चित्त विकार नहीं लाया। यह सुन सब निराश हुये।

उसके बाद तुझे बहुत पश्चाताप हुआ तू अपने आप कहने लगी कि अरे रे ! मैंने मुनि को बिना कारण उपसर्ग किया है। दुष्ट लोगों के कहने पर मैंने यह कार्य किया है। धिक्कार है मेरे जीवन को। कैसी है यह जैनधर्म की महिमा। श्रावक के कुल में जन्म लेना कितना भाग्यशाली है। इस प्रकार तुम्हारे मन में बहुत पश्चाताप हुआ। पर बाद में तुझे कोढ़ हो गया और मर कर चौथे नरक में गई। वहां पर १० सागर की आयु बिताकर फिर अनेक भव लेकर अब तूने भद्रशाह के घर जन्म लिया है। वहाँ तुझे कोढ़ हो गया था, उसको पिंगल ने अच्छा किया और उससे विवाह कर तू इधर आ रही थी कि चोरों ने पिंगल को मार दिया। ऐसी तेरी कथा है।

जो पाप किया है उसको धर्म कार्य से दूर किया जा सकता है। अतः तू सम्यक्त्व पूर्वक धर्माचरण कर। और आकाश पंचमी व्रत कर तथा उसकी विधि बतायी।

इस प्रकार सद्गुरु के मुख से सब वृतांत सुनकर विशाल लक्ष्मी ने यह व्रत किया। जिससे वह मणिभद्र नामक चौथे स्वर्ग में देव हुआ। स्वर्गीय सुख भोगे। वहां उसने जिनकेवली के दर्शन, तीर्थंकरों के दर्शन आदि करते हुये सात सागर की आयु पूर्ण की। वहां से मर कर मालव देश में तारामति रानी के पेट से उत्पन्न हुई। उसका सदानन्द नाम रखा। सदानन्द ने बड़ा होने पर श्रावक के १२ व्रतों का पालन करते हुये राज्य सुख का भोग किया।

एक दिन नगर के बाहर उद्यान में एक मुनिमहाराज आकर विराजे। तब उनके दर्शन को सदानन्द गया, उनके मुख से धर्मोपदेश सुनने से उसे वैराग्य हो गया। राज्य को त्याग कर जिनदीक्षा ली। उसे घोर तपश्चर्या से शुक्ल ध्यान की प्राप्ति हुई, अन्त में केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गये।

अचौर्य महाव्रत व्रतकथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करें। अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ कृष्ण ६ के दिन एकाशन करें ७ के दिन उपवास करें। पूजा आदि पहले के समान करें। तीन दम्पतियों को भोजन करावें। वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले जयपुर नगरी में जयसेन राजा अपनी जयावती महारानी के साथ रहता था, उसका पुत्र जयकुमार, जयसुन्दरी और मन्त्री जयपाल, उसकी स्त्री जयश्री, सारा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने जयसागर मुनि से व्रत लिया, उसका यथाविधि पालन किया। सब सुखों को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गए।

नोट :—सत्य महाव्रत की विधि के समान ही इस व्रत की विधि है, अहिंसा व्रत या सत्यव्रत की विधि देखें।

अहिंसामहाव्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सर्व विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ कृष्ण ४ के दिन एकाशन करे, ५ के दिन उपवास करे, पूजा आदि पहले के समान करे, ८ दम्पतियों को भोजन करावे, वस्तु आदि दान करे।

कथा

पहले अनन्तपुर नगरी में अनन्तराज राजा अनन्त सुन्दरी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र अनन्त कुमार और उसकी स्त्री अनन्तमती थी।

अनन्तविजय उसकी स्त्री अनन्तलक्ष्मी, अनन्तकीर्ति पुरोहित, उसकी स्त्री अनन्तगुनी, श्रेष्ठी सारा परिवार सुख से रहता था।

एक बार उन्होंने अनन्तसेन गुरु से अहिंसा महाव्रत लिया। उसका यथाविधि पालन किया। सर्व सुखों को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गए।

अयोगकेवली गुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है

कि आषाढ़ शुक्ल ११ के दिन एकाशन करे। १२ के दिन उपवास करे। पूजा आदि पहले के समान करे। ४ दम्पतियों को भोजन कराये। वस्त्र आदि दान करे। १०८ कमल पुष्प १०८ आम चढ़ावे, १०८ चैत्यालय की वन्दना करे।

कथा

पहले रजतपुर नगरी में राजशेखर राजा राजमती महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र रजतसेन, उसकी स्त्री रजतलोचनी और मन्त्री, श्रेष्ठी पुरोहित पूरा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने रजतसागर महामुनि से अयोग-केवली व्रत लिया। उसको विधि पूर्वक पालन किया। सर्वसुखों को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गए।

अप्रमत्तगुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ शुक्ल ४ के दिन एकाशन करे, ५ के दिन उपवास करे, पूजा आदि पहले के समान करे, सात दम्पतियों को भोजन कराये, वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले कश्मीर नगरी में कामसेन राजा कामसुन्दरी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र कामदमन, उसकी पत्नी कामदेवी, कामशरहर प्रधान, उसकी स्त्री कामरूपिणी, कामसुकीर्ति पुरोहित, उसकी स्त्री कामक्रीड़ा, कामसागर पूरा परिवार सुख से रहता था। एक दिन उन्होंने कामविजय मुनि से अप्रमत्त गुणस्थान व्रत लिया, उसका यथाविधि पालन किया। सर्वसुखों को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गये।

अपूर्वकरणगुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ शुक्ला ५ के दिन एकाशन करे, ६ के दिन उपवास करे। पूजा आदि पहले के समान करे। ८ दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे। १०८ बार कमल पुष्पों से जाप करे, चैत्यालय की वंदना करे।

कथा

नित्यावलोक नगरी में नित्यानन्द राजा नित्यसुखी महारानी के साथ रहता था, उसका पुत्र नित्यनिरंजन, उसकी स्त्री नित्याचारमती, मन्त्री, उसकी स्त्री नित्यावलोकिनी, नीति कीर्ति पुरोहित, उसकी स्त्री नीतिसेना पूरा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने नीतिसागर मुनि से व्रत लिया, उसका यथाविधि पालन किया। सर्वसुखों को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गये।

अनिवृत्तिकरणगुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ शुक्ला ६ के दिन एकाशन करे। ७ के दिन उपवास करे। पूजा आदि पहले के समान करे। ६ दम्पतियों को भोजन करावे। वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले नित्यावलोक नगरी में नित्यानन्द राजा नीतिवती महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र नीतिनिपुण, उसकी स्त्री निर्मलासून और नीतिवंत मंत्री, उसकी स्त्री नीतिचतुरी/नीतिचारु, पुरोहित, उसकी स्त्री नीतिपालिनी, नीतिजय सेनापति, उसकी स्त्री नीतिसुदंरी और नीतिकीर्ति पुरोहित उसकी स्त्री नीतिसेना पूरा परिवार सुख से रहता था।

एक बार उन्होंने नीतिसागर मुनि से अनिवृत्तिकरण गुणस्थान व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया। सर्वसुखों को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गए।

अविरतगुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करें। अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ला १ के दिन एकाशन करें, २ के दिन उपवास करें। पूजा आदि पहले के समान करे, चार दम्पतियों को भोजन करावें, वस्त्र आदि दान करे, आहार दान आदि दें।

कथा

पहले सिंहपुर नगरी में सिंहसेन राजा सिंहनन्दा पटरानी के साथ रहते थे। उसका पुत्र सिंहदर, उसकी स्त्री सिंहमाला, सिंहविजय मन्त्री, उसकी स्त्री सिंहगमिनी, सिंहकीर्ति पुरोहित, उसकी स्त्री सिंहसुन्दरी, सिंहदत श्रेष्ठी, उसकी स्त्री सिंहदता, सिंहवज्रादि पूरा परिवार सुख से रहता था।

एक बार उन्होंने सिंहसागर मुनि से व्रत लिया, उसका विधिपूर्वक पालन किया। सर्वसुखों को प्राप्त करके अनुक्रम से मोक्ष गये।

अनंतदर्शन व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ल ९ को एकाशन करे, १० को उपवास करें। पूजा आदि पहले के समान करे। णमोकार मन्त्र का एक बार जाप करें। एक दम्पति को भोजन करावे।

कथा

काशी देश में पहले वज्रसेन राजा राज्य करता था। वह बड़ा पराक्रमी व गुणवान था। उसको कुसुमावती नामकी एक सुन्दर गुणवती स्त्री थी। उसको वज्रदंत नामका एक पुत्र व सुमति नामक स्त्री थी। उसके पास सुबुद्धि नामक मन्त्री था। उसी प्रकार चन्द्रशेखर नामक पुरोहित व चंद्राननी नामक स्त्री थी। और धनपाल नामक राज श्रेष्ठी व धनवति सेठानी थी। इस प्रकार अपने पूरे परिवार के साथ राजा सुख से रहता था।

एक दिन उस नगर के बाहर उद्यान में श्रीधराचार्य अपने संघ सहित आये, जब राजा ने समाचार सुने तो वे अपने परिवार सहित महाराज के दर्शन को गये। वहां पर महाराज को तीन प्रदक्षिणा दे करके, वन्दना करके सब बैठे। धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा ने विनयपूर्वक दोनों हाथ जोड़कर कहा, हे दीनोद्धारक गुरुवर्य! आज आप हमें सद्गति को देने वाला ऐसा कोई व्रत विधान बतावें। महाराज ने कहा हे भव्य शिरोमणी राजेन्द्र! तुम्हें अनंतदर्शन नामक व्रत करना चाहिये। ऐसा कह कर सब विधि बतायी, वे सब उस विधि को सुनकर खुश हुए। उन सब ने यह

व्रत लिया । वे वन्दना करके नगर में आये । बाद में यह व्रत यथा-विधि से पालन किया, जिससे वे स्वर्ग सुख को भोगते हुये मोक्ष गये ।

अनंतज्ञान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करें, अन्तर सिर्फ इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ल १० के दिन एकाशन करें व ११ के दिन उपवास करें । पूजा वगैरह पूर्ववत् करें ।

कथा

पहले हस्तिनापुर के राजा विमलसेन रानी विमलवती के साथ सुख से राज्य करते थे । उनका लड़का कमलनाथ व उसकी पत्नी कमलावती थी । उसका बुद्धिसागर नामक मन्त्री था, उसकी स्त्री मतिवंती थी । और धवल कीर्तिनामक पुरोहित था, उसकी स्त्री गुणवती थी और गंगदत्त नामक सेठ व गंगदेवी नामक स्त्री थी । ये पूरा परिवार सुख से रहता था ।

एक बार नगर के उद्यान में सूर्यमित्र नामक महान आचार्य संघ सहित आये । यह बात राजा ने सुनी तो वे दर्शन करने के लिये आये । धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा ने कहा—हे संसार-सिंधुतारक स्वामिन् ! हमें संसार-सुख का कारण हो ऐसा कोई व्रत दो, तब महाराज जी ने कहा—हे भव्योत्तम राजन् ! तुम्हें अनन्तज्ञान यह व्रत करना योग्य है । ऐसा कहकर उन्होंने सब विधि बतायी ।

यह व्रत लेकर महाराज की वन्दना कर सब लोग घर आये । फिर उन्होंने समयानुसार यह व्रत किया । व्रत के प्रभाव से वे यथाक्रम से स्वर्ग सुख भोगकर मोक्ष गये ।

अनंतवीर्य व्रत कथा

व्रत विधि :—सब विधि पहले के समान करें, अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ल ११ के दिन एकाशन करें । १२ के दिन उपवास कर पूजा वगैरह पूर्ववत् करें, णमोकार मन्त्र का जाप करें, तीन दम्पतियों को भोजन करावें, उनका वस्त्र आदि से सम्मान करें ।

कथा

रत्नसंचय नगर में मेघवाहन नामक राजा अपनी स्त्री मेघमालिनी के साथ राज्य करता था। उसके मेघश्याम नामक पुत्र था, उसकी स्त्री का नाम रत्नमालिनी था। उसका चरित्रसेन नामक प्रधान व उसकी स्त्री चारित्रमति नामक थी। उसका शारदानंद पुरोहित व कुसुमावली नामक स्त्री थी। उसी प्रकार सुरेन्द्रदत्त सेठ व उसकी स्त्री गुणमाला थी।

एक दिन बाहर उद्यान में सुधर्माचार्य अपने संघ सहित आये। यह शुभ समाचार सुनते ही राजा नगर के लोगों सहित दर्शन करने वहां गया। वहां पर तीन प्रदक्षिणा लगाकर सब बैठे गए। धर्म श्रवण कर राजा ने कहा–हे भवसिंधुतारक गुरू! हमें संसार सागर से पार उतारे ऐसा कोई व्रत विधान कहें। तब महाराज जी ने कहा–है भव्य शिरोमणी राजेन्द्र! तुम्हें अनंतवीर्य यह व्रत करना चाहिए।

सब लोगों ने यह व्रत लिया और सब लोग नगर में आये। उन सब ने यह व्रत किया। इस व्रत के प्रताप से उन्होंने स्वर्ग सुख प्राप्त किया। बाद में अनुक्रम से मोक्ष सुख प्राप्त किया।

अनंतसुख व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करें। अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ल १२ के दिन एकाशन करे, १३ को उपवास करें। पूजा आदि करें, णमोकार मन्त्र का जाप चार बार करे। चार दम्पतियों को भोजन करावें।

कथा

उज्जयनी नगरी में श्रीधर नामक राजा अपनी प्रिय प्राणवल्लभा पट्टरानी श्रीमती और उसका प्रिय पुत्र श्रेणिक, उसकी स्त्री प्रभा। उसी प्रकार राज श्रेष्ठी, मन्त्री, पुरोहित आदि के साथ राज्य करता था। उन्होंने श्रीधराचार्य से अनन्तसुख व्रत लिया, जिससे उन्हें स्वर्ग सुख और अनुक्रम से मोक्ष सुख की प्राप्ति हुई।

अमूढदृष्ट्यंग व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि

कार्तिक शुक्ला ३ के दिन एकाशन करे, ४ के दिन उपवास करे। चार दम्पतियों को भोजन करावें।

मंत्र :—ॐ ह्रीं अर्हं अमूढदृष्टि सम्यग्दर्शनांगाय नमः स्वाहा।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

अनन्तमिथ्यात्वनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृष्ण १ के दिन एकाशन करे। २ के दिन उपवास, पूजा, आराधना व मन्त्र जाप आदि करे।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े।

आहारपर्याप्तिनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृष्ण २ के दिन एकाशन करे। ३ के दिन उपवास, पूजा, आराधना व मंत्र जाप आदि करे।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े।

अरतिकर्मनिवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि चैत्र कृष्ण ६ के दिन एकाशन करे, ७ के दिन उपवास करे, कुंथुनाथ तीर्थंकर की पूजा, मन्त्र जाप करे।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े।

औदारिक शरीरनिवारण व्रत कथा

कार्तिक शुक्ल चतुर्थी को एकाशन करे, पंचमी को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, पंच पकवान चढ़ावे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्णअर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, सत्पात्रों को दान देवे, उस दिन उपवास करे, दूसरे दिन पूजा दान करके स्वयं पारणा करे, तीन दिन ब्रह्मचर्य पालन करे, प्रत्येक महिने की इसी तिथि को व्रत पूजा करें, इस प्रकार नव-पूजा पूरी करके फाल्गुन अष्टानिका पर्व में व्रत का उद्यापन करे, उस समय पंच परमेष्ठि विधान करे, महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े।

अथ अक्षयतृतीया व्रत कथा

वैशाख शुक्ल ३ से सप्तमी पर्यंत पांच दिन तक व्रत का पालन करने वाले स्नानादिक करके शुद्ध होकर, शुद्ध मन से श्री जिनमन्दिर जी में जावे, वहां जाने के बाद तीन प्रदक्षिणा डालकर ईर्यापथ शुद्धि करके फिर यक्षयक्षि सहित श्री वृषभनाथ तीर्थंकर प्रतिमा सिंहासन पर विराजमान करके पंचामृत अभिषेक करें। उसके बाद अष्टद्रव्य से जिनेन्द्र प्रभु की पूजा करना, सरस्वती (जिनवाणी) और गणधर स्वामी की पूजा करना।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदिनाथ तीर्थंकराय गोमुखयक्ष चक्रेश्वरी देवि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार सुगन्धित फूलों से जाप्य त्रिकाल करें और णमोकार मन्त्र का भी १०८ बार जाप्य करें। उसके बाद व्रत कथा सुनें या पढ़ें, फिर एक थाली में नौ पान के ऊपर गंध अक्षत, फूल, फल आदि द्रव्यों को रखकर द्रव्य की थाली हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा देवे, आरती करें, पाँच दिन एकभुक्ति करना चाहिए, चतुर्विध संघ को आहारादि देकर स्वयं पारणा करे।

इस क्रम से यह व्रत पांच वर्ष करना चाहिए, अन्त में एक नव देवता की नयी प्रतिमा मंगवाकर उस प्रतिमा की धूमधाम से प्रतिष्ठा करावे, व्रत का उद्यापन यथाशक्ति कर, इस प्रकार इस व्रत की विधि है।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में राजग्रही नाम का नगर है। उस नगर में मेघनाथ महामंडलेश्वर राजा राज्य करते थे। वह राजा कामदेव समान रूपवान और शत्रुओं के लिए मानो एक शस्त्र ही था। उस राजा को पृथ्वी देवी पट्टराणी थी, वह बहुत ही सुन्दर जिन धर्म का पालन करने वाली सम्यक्त्व चूडामणि थी, इस रानी के साथ वह राजा मेघनाथ आनन्द से राज्य करता था, एक दिन पृथ्वीदेवी अपनी सखियों (दासियों) के साथ अपने सतखडे महल पर बैठकर दिशावलोकन कर रही थी, उसी समय, नीचे देखते ही उसको दिखा कि एक उपाध्याय कुछ छोटे २ बालकों को पढ़ाने के लिए लेकर जा रहे थे, उन बालकों को जाते हुए देखकर रानी रोने लगी, दुःखी होने लगी और ऊपर से नीचे उतर कर एक कक्ष में शय्या पर दुःखित अवस्था में निमग्न होकर सो गई। उसी समय राजा मेघनाथ ने उसे देखा और चिन्तामग्न रानी को देखकर प्रेम से राजा ने कहा कि हे प्रिये, आज तुम को कौनसी चिन्ता ने घेर रखा है? तब रानी ने कहा कि हे प्राणनाथ अपने को पुत्र नहीं होने से आपका यह राज्य वैभव सब व्यर्थ है, ऐसा सुनकर उसको भी दुःख होने लगा। राजा ने मन में संतोष रखते हुए रानी को चार कथा कह सुनाई।

उसके बाद एक समय उस नगर के बाहर उद्यान में सिद्धकूट चैत्यालय की वंदना करने के लिए पूर्व विदेह से सुप्रभ नाम के चारण मुनिश्वर वंदना करने के

लिए आकाश मार्ग से नीचे उतरे, और उस चैत्यालय की वंदना के लिए मन्दिर में गये। मुनिराज को वहाँ के वनपालक ने देखा, तब वनपालक अपने हाथ में फल-फूल लेकर शीघ्र ही राजसभा में गया, फल-फूल राजा के सामने रखकर राजा को नमस्कार पूर्वक वनपालक ने जिन-चैत्यालय में मुनिराज के आगमन की शुभ वार्ता कह सुनाई, तब राजा हर्षित होकर सिंहासन से नीचे उतरा और सात पाँव चलकर साष्टांग नमस्कार किया। वनपालक को अपने शरीर पर रहने वाले वस्त्राभरण भेंट में दे दिये।

मुनिराज उद्यान में आये हैं इस समाचार को पूरे नगर में भेरी-ताडनपूर्वक कह सुनाया और प्रातः राजा प्रजाजन के साथ पैदल ही उस उद्यान में गया। वहां प्रथम जिन चैत्यालय में जाकर प्रदिक्षरणा दो, भगवान का भक्तिपूर्वक गुणस्तवन करते हुए साष्टांग नमस्कार किया। फिर उस राजा ने महान उत्सवपूर्वक जिनेन्द्र भगवान का पंचामृत अभिषेक किया, अष्ट द्रव्य से पूजन किया, उसके बाद सब लोगों के साथ सुप्रभ मुनिश्वर को नमस्कार करके उनके समीप बैठ गया। मुनिराज के मुख से सब लोगों ने धर्मोपदेश सुना।

राजा की प्रिय पत्नी पृथ्वी महादेवी मुनिराज को हाथ जोड़कर विनय से उन चारण मुनिश्वर को कहने लगी कि हे स्वामिन! इस भव में मुझ को सब सुखों की प्राप्ति हुई है परन्तु निःसंतान होने से यह सब सुख निरर्थक हैं।

रानी के वे वचन सुनकर चारण महामुनि कहने लगे, हे महादेवि! तुमको पहले भव का अन्तराय कर्म बन्ध है इस कारण तुम को संतान नहीं हुई।

तब रानी ने कहा कि हे महाराज! मेरे पूर्व भवों के कार्य क्या हैं, मुझे कृपा कर सुनाओ।

तब मुनिराज कहने लगे—इस भरतक्षेत्र में कश्मीर नामक एक विशाल देश है, उस देश में रत्नसंचय नाम का एक सुन्दर नगर है, वहां पहले वैश्य कुल में उत्पन्न होने वाला श्रीवत्स नामक एक राजश्रेष्ठि रहता था, उस सेठ की श्रीमती नाम की अत्यन्त सुन्दर गुणों में श्रेष्ठ पत्नी थी, उस पत्नी के साथ में वह श्रेष्ठी आनन्द से समय बिता रहा था। उस नगर के जिन चैत्यालय की वंदना करने के लिए मुनि-गुप्त नाम के दिव्य-ज्ञानधारी महामुनिश्वर पांच सौ मुनियों के साथ वहां आये।

मुनिसंघ को देखकर राजश्रेष्ठि को ऐसा मालूम हुआ मानो आज हमारा जन्म सफल हुआ है।

बहुत ही आनन्द से मुनिराज को नमोस्तु करके प्रतिग्रहण करके मुनिराज को आहार के लिए घर पर ले गया और अपनी पत्नी श्रीमती को कहा कि मुनिराज को आहार तैयार कर आहार दो। तब श्रीमती ने अपने पति की बात को नहीं सुना और आहार तैयार नहीं किया। तब सेठ ने स्वयं अपने हाथ से आहार तैयार कर मुनिराज को नवधाभक्तिपूर्वक आहार कराया। मुनिराज ने संतुष्ट होकर आशीर्वाद दिया कि अक्षयदानमस्तु, ऐसा कहकर मुनिराज वहां से चले गये। मुनियों का आहार देखकर श्रीमती को बहुत ही क्रोध आया और वह लोभाविष्ट हो गई इसलिए उस को अंतराय कर्म का बंध पड़ गया था। वह श्रीमती तुम ही हो, इसी कारण इस भव में तुमको संतान उत्पन्न नहीं हुई।

मुनिराज के मुख से यह सब सुनकर वह अतिशय दुःखी हुई और कहने लगी कि हे मुनिश्रेष्ठ! आप कृपा करके अन्तराय कर्म कटने का और संतान होने का उपाय कहो। उस रानी के वचन सुनकर मुनिराज ने कहा कि हे रानी! तुम सर्व अन्तराय कर्म नष्ट करने के लिए अक्षय तृतीया व्रत विधिपूर्वक करो, इस व्रत के प्रभाव से तुमको सर्व सुखों की प्राप्ति होगी, मुनिराज ने व्रत की विधि को कहा, और इस व्रत को किसने पालन किया, उसकी कथा कहने लगे।

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगध नामक विशाल देश है, उस देश के एक नदी के तट पर एक सहस्रकूट चैत्यालय है, चैत्यालय के दर्शन करने के लिए एक धनिक नामक वैश्य अपनी भार्या सुन्दरी सहित गया, वहां एक कुण्डल मंडीन नाम का विद्याधर अपनी स्त्री मनोरमा के साथ में अक्षय तृतीया व्रत का विधान कर रहे थे, उस समय सेठ की पत्नी सुन्दरीदेवी उस मनोरमा को कहने लगी, कि हे बहन तुम ये क्या कर रही हो, तब मनोरमा कहने लगी कि हे बहन कहती हूं तुम सुनो।

इस अवसर्पिणी काल में अयोध्या नगर के नाभि राजा अंतिम मनु हुए। उनके मरुदेवि नाम की पट्टरानी थी, उस रानी के गर्भ से आदिनाथ तीर्थंकर ने जन्म लिया, देवों ने गर्भकल्याणक और जन्मकल्याणक महोत्सव मनाया। आगे कुछ वर्षों तक अयोध्या पर राज्य कर नीलांजना के नृत्य को देखकर भगवान ने दीक्षा

लेली। दीक्षाकल्याणक मनाने भी देवराज देवों सहित आये थे। भगवान दीक्षा लेकर छह महिनों का योग धारण कर खड़े हो गये।

छह महिने का योग पूरा होने पर आदिप्रभु आहार के लिए ग्राम, नगर, खेड़ा आदि में घूमने लगे। लोगों को आहारचर्या मालूम नहीं होने से कन्या, वस्त्र-आभरणादि लेकर भगवान को भेंट करने लगे, भगवान आगे बढ़ते गये और कुरु जंगल देश में पहुंचे। उस देश में हस्तिनापुर नगर में कुरूवंश शिरोमणि सोमप्रभ राजा राज्य करता था।

उस राजा का श्रेयांस नामक एक भाई था, वह श्रेयांस सर्वार्थसिद्धि से आकर जन्मा था। एक दिन कुमार श्रेयांस रात्रि में सो रहे थे, पिछले पहर में कुमार श्रेयांस को शुभ स्वप्न आये, मन्दिर, कल्पवृक्ष, सिंह, वृषभ, चन्द्र, सूर्य, समुद्र, आठ मंगल द्रव्य अपने राज्य प्रासाद के आगे स्वप्न में दिखे। प्रातः उठकर उन स्वप्नों को राजकुमार श्रेयांस ने अपने बड़े भाई को कह सुनाया।

राजा ने पुरोहित को बुलाकर स्वप्नों के फलों को पूछा। पुरोहित ने कहा कि हे राजन आपके घर किसी महापुरुष का आगमन होने वाला है।

यह सुनकर सब को आनन्द हुआ।

इधर आहार के लिए आदि भगवान घूमते २ राज्य महल के सामने आते हुए दिखे। श्रेयांस को भगवान दिखते ही मूर्च्छा आ गई, और तत्क्षण जाति-स्मरण हो गया, और ज्ञान के अन्दर मालूम हुआ कि दश भव के पहले ये वज्रजंघ और मैं इनकी श्रीमती रानी थी, हम दोनों ने जंगल में चारणऋद्धि मुनिश्वर को आहार दिया था, इस निमित्त से आहारदान विधि का ज्ञान हो जाने पर आदिनाथ प्रभु को श्रेयांस ने तीन प्रदक्षिणा दी, प्रतिग्रहण करके भगवान को घर में प्रवेश कराया, नवधाभक्तिपूर्वक भगवान को इक्षुरस का आहार दिया, आहार निरन्तराय होने पर देवों ने आनन्दित हो कर राजांगण में पंचाश्चर्य वृष्टि किया, यह देखकर सब को बहुत ही आनन्द हुआ। जिस दिन भगवान आदिनाथ का आहार राजा श्रेयांस के यहाँ हुआ, उस दिन वैशाख शुक्ला तृतीया थी। इसलिए इस तिथि का नाम अक्षय तृतीया के नाम से पड़ गया।

भगवान जंगल को वापस चले गये। यह सब समाचार अयोध्या के अन्दर राजा भरत को प्राप्त हुए, राजा भरत अपने परिजन सहित हस्तिनापुर में आकर राजा श्रेयांस का आदर सहित सम्मान करके वापस अयोध्या चला गया। यह सब कथा सुप्रभ नामक चारण मुनिश्वर के मुख से सुनकर पृथ्वीदेवी अत्यन्त संतुष्ट हुई, मुनिराज को नमस्कार करके और व्रत को ग्रहण करके लोगों के साथ वापस अपने घर को आ गई।

उसने उस व्रत को विधिपूर्वक पालन करके व्रत का उद्यापन किया। उस व्रत के फल से पृथ्वीदेवी ने शुभ लक्षणयुक्त बत्तीस पुत्र व उतनी ही पुत्रियों को जन्म दिया। बहुत काल पर्यन्त सुख भोग कर अंत में वैराग्ययुक्त होकर जिनदीक्षा धारण की। फिर घोर तपस्या करके मोक्षसुख को प्राप्त किया।

इस कारण हे भव्य जीवो! तुम भी इस अक्षयतृतीया व्रत को विधिपूर्वक करो, तुमको भी क्रमशः अक्षय सुख की प्राप्ति अवश्य होगी।

नोट :— इस व्रत का स्वतंत्र उद्यापन नहीं है। या तो आदिनाथ सम्बन्धी कोई भी विधान करे, अथवा नव देवता की नवीन मूर्ति बनवाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करावे।

अथ इन्द्रियपर्याप्तिनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान करें। अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृष्ण ४ के दिन एकाशन करें। ५ के दिन उपवास, पूजा, आराधना व मन्त्र जाप आदि करें।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढे।

इन्द्रध्वज व्रत कथा व विधि

आषाढ़ शुक्ला अष्टमी के दिन स्नान करके, शुद्ध वस्त्र पहिने मन्दिर जी में जावें, वहां मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करें, भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, शेष पूर्व व्रत विधि के अनुसार करे, विशेष कुछ नहीं है। उपवास करके व्रत करे अथवा एकभुक्ति अथवा एकाशन अपनी शक्तिनुसार करे। उद्यापन

में मात्र चतुर्विध आहार दानादि श्री संघ को देवे । इस व्रत को चौदह अष्टमी को करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में भूषण नाम का एक विशाल देश है, उस देश में भूमितिलक नाम का एक सुन्दर शहर है, इस शहर में वज्रसेन नाम का राजा राज्य करता था, उसकी रानी का नाम भूषणा था ।

एक दिन नगर के उद्यान में चन्द्र व वरचन्द्र नामक दो चारण ऋद्धिधारी मुनिश्वर पधारे । ऐसा समाचार वनपाल से सुन, राजा ने मुनिराज को परोक्ष नमस्कार किया, और नगरवासियों के साथ उद्यान में गया । चारणऋद्धि मुनिश्वरों को नमस्कार करके वहां नजदीक में बैठ गया । कुछ समय धर्मोपदेश सुनकर राजा की पट्टरानी भूषणा हाथ जोड़कर नमस्कार करके मुनिराज को कहने लगी कि हे गुरुदेव, मेरे संतान नहीं है, इसका क्या कारण है ?

तब मुनिराज ने कहा कि हे बेटी ! तुमने पूर्व भव में कनकमाला की पर्याय में व्रत को धारण कर पूर्ण पालन नहीं किया । बीच में ही व्रत छोड देने से ही तुम को पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ, अगर तुम को संतान चाहिए तो तुम इन्द्रध्वज व्रत को विधिपूर्वक करो, तब तुम को इन्द्र के समान प्रभावशाली पुत्र-रत्न उत्पन्न होगा, ऐसा कहकर मुनिराज ने व्रत की विधि कह सुनाई, ऐसा सुनकर बहुत आनन्द हुआ । भूषणा देवी ने गुरु को नमस्कार करके व्रत ग्रहण किया ।

नगर में वापस आये, अच्छी तरह से व्रत को पालन करने लगी । थोड़े ही दिनों में रानी को इन्द्र के समान एक पुत्र उत्पन्न हुआ, राजा रानी बहुत काल पर्यन्त सुख का अनुभव करते रहे । कमशः स्वर्ग सुख की प्राप्ति करके मोक्ष सुख को प्राप्त किया ।

इस व्रत में मात्र नैवेद्य चढ़ाने के क्रम को छोड़कर बाकी जाप्य, पूजा आदि *सब मोक्षलक्ष्मी व्रत के समान ही हैं ।*

एकावली व्रत की विधि और फल

किनाम एकावलीव्रतम् ? कथं च विधीयते व्रतिकैः ? अस्य किं फलम् ?

उच्यते—एकावलयामुपवासा एकान्तरेण चतुरशीतिः कार्याः, न तु तिथ्यादिनियमः। इदं स्वर्गापवर्गफलप्रदं भवति। इति निरवधिव्रतानि।

अर्थ :—एकावली व्रत क्या है ? व्रती व्यक्तियों के द्वारा यह कैसे किया जाता है ? इसका फल क्या है ? आचार्य कहते हैं कि एकावली व्रत में एकान्तर रूप से उपवास और पारणाएं की जाती हैं, इसमें चौरासी उपवास तथा चौरासी पारणाएं की जाती हैं। तिथि का नियम इसमें नहीं है। इस व्रत के पालन से स्वर्ग-मोक्ष की प्राप्ति होती है। इस प्रकार निरवधि व्रतों का वर्णन समाप्त हुआ।

विवेचन :—एकावली व्रत की विधि दो प्रकार देखने को मिलती है। प्रथम प्रकार की विधि आचार्य-द्वारा प्रतिपादित है, जिसके अनुसार किसी तिथि आदि का नियम नहीं है। यह कभी भी एक दिन उपवास, अगले दिन पारणा, पुनः उपवास, पुनः पारणा, इस प्रकार चौरासी उपवास करने चाहिए। चौरासी उपवासों में चौरासी ही पारणाएं होती हैं। इस व्रत को प्रायः श्रावण मास से आरम्भ करते हैं। व्रत के दिनों में शीलव्रत और पञ्चाणुव्रतों का पालन करना आवश्यक है।

दूसरी विधि यह है कि प्रत्येक महीने में सात उपवास करने चाहिए। शेष एकाशन; इस प्रकार एक वर्ष में कुल चौरासी उपवास करने चाहिए। प्रत्येक मास की कृष्ण पक्ष की चतुर्थी, अष्टमी और चतुर्दशी एवं शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा, पञ्चमी, अष्टमी और चतुर्दशी तिथियों में उपवास करना चाहिए। उपवास के अगले और पिछले दिन एकाशन करना आवश्यक है। शेष दिनों में भोज्य वस्तुओं की संख्या परिगणित कर दोनों समय भी आहार ग्रहण किया जा सकता है। इस व्रत में णमोकार मन्त्र का जाप करना चाहिए। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े।

इष्टसिद्धिकारक निःशल्य अष्टमी व्रत

भादों सुदी अष्टमी को चारों प्रकार के आहार का त्याग कर श्री जिनालय में जाकर प्रत्येक पहर अभिषेक और पूजन करे। दिन में चार बार पूजन और चार

अभिषेक किये जाते हैं। त्रिकाल सामायिक और स्वाध्याय करने चाहिए। रात को जागरणपूर्वक स्तोत्र भजन पढ़ते हुए बिताना चाहिए। पश्चात् नवमी को अभिषेक पूजन करके अतिथि को भोजन कराके स्वयं भोजन करे। चारों प्रकार के संघ को चतुर्विध दान देना चाहिए। यह व्रत १६ वर्ष तक किया जाता है, तत्पश्चात् उद्यापन करने का विधान है। इस व्रत का विधिपूर्वक पालन करने से सभी प्रकार की सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े।

अथ एकांतनय व्रत कथा

व्रत विधि—पहले के समान सब विधि करे अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृष्ण ४ के दिन एकाशन करे, ५ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह ६ के समान करे, णमोकार मन्त्र का जाप ६ बार करे, ६ दम्पतियों को भोजन करावे। वस्त्र आदि दान करे। अन्त में उद्यापन करे, उस समय पंच परमेष्ठी विधान करे।

कथा

पहले गजपुर नगरी में गजन्दत राजा गजावती नाम की अपनी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र गजकुमार उसकी स्त्री विश्रानुलोभ प्रधानमन्त्री विश्रलोचनी उसकी स्त्री शीशकीर्ति पुरोहित मंगलावती उसकी स्त्री गुणवन्ती राजश्रेष्ठी गुणपाल पूरा परिवार सुख से रहता था। एक दिन उन्होंने विद्यासागर मुनि से यह व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया जिससे स्वर्ग-सुख को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ एकान्तमिथ्यात्वनिवारण व्रतकथा

व्रत विधि :—पहले के समान करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख शु. ११ के दिन एकाशन करे। १२ के दिन उपवास करे। नवदेवता पूजा आराधना मन्त्र जाप करे।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े।

अथ एकेन्द्रियजातिनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि :— फाल्गुन कृष्णा ३० (अमावस्या) के दिन यह व्रत करने वाले को एकाशन करना चाहिए। चैत्र शुक्ला १ के दिन स्नान करके सफेद वस्त्र पहन कर सब पूजा सामग्री लेकर मन्दिर जाये। मन्दिर के बाहर तीन प्रदक्षिणा देकर साष्टांग नमस्कार करना चाहिए। फिर पीठ के ऊपर आदिनाथ भगवान की मूर्ति के साथ गोमुखयक्ष व चक्रेश्वरी यक्षी को साथ स्थापित कर पंचामृत अभिषेक करना चाहिये। अष्टद्रव्य से पूजा करनी चाहिये। श्रुत व गणधर की पूजा करनी चाहिये। यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करनी चाहिए।

"ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदिनाथ तीर्थंकराय गोमुख यक्ष चक्रेश्वरीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।"

इस मन्त्र का १०८ बार जाप पुष्प से करना चाहिये। उसके बाद यह कथा पढ़नी चाहिए। उसके बाद एक पात्र में १ पान रखकर उस पर अष्टद्रव्य से व नारियल से महार्घ्य देना चाहिए। उस दिन उपवास करके धर्मध्यान पूर्वक समय बिताना चाहिए। सत्पात्र को आहार देना चाहिए। दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करना चाहिए। दीपक जलाना व सहस्रनाम व तत्वार्थसूत्र पढ़ना चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक मास में करना चाहिए। ऐसा सात महिने तक करना चाहिए। फिर कार्तिक मास की अष्टाह्निका में उद्यापन करना चाहिए। उसमें आदिनाथ विधान व भक्तामर विधान करना चाहिए। अन्त में महाभिषेक करना चाहिए।

कथा

श्रेणिक व चेलना की कथा पढ़नी चाहिये।

नोट :—ब्रह्मदेव अथवा क्षेत्रपाल की पूजा करनी चाहिए।

अथ एकादश रुद्र व्रतकथा

व्रत विधि :—आषाढ़ शु. १०मी के दिन एकाशन करे। ११ के दिन प्रातः समय शुद्ध कपड़े पहन कर मन्दिर में जाये। दूसरी सब विधि पहले के समान करें। पाटे पर शीतलनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा विराजमान कर पंचामृत अभिषेक करे। एक पाटे के ऊपर ११ स्वस्तिक निकाल कर उस पर पत्ते व अष्ट द्रव्य रखे और

अभिषिक्त देव की अर्चना करे। श्रुत व गणधर की पूजा करके यक्ष यक्षी व ब्रह्मदेव की पूजा करे।

जाप :—"ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शीतलनाथाय ईश्वर यक्ष वैरोतीयक्षी-सहिताय नमः स्वाहा।"

इस मन्त्र का १०८ पुष्पों से जाप करे। यह कथा पढ़नी चाहिए। एक पात्र में पत्ते व अष्टद्रव्य और नारियल रखकर महार्घ्य करके आरती करे।

सत्पात्र को दान दे। ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए धर्म-ध्यानपूर्वक समय बितावे।

कथा

इस भरतक्षेत्र में नद्यापर्वत नामक एक नगर है। उसमें नंदिषेण नामक एक धार्मिक, बड़ा पराक्रमी राजा अपनी रानी नंदादेवी के साथ रहता था। एक बार नंदीषेण नामक मुनि महाराज अपने संघ सहित आये। यह सुन राजा अपने नगरवासियों सहित दर्शन को आया।

उनके सामने यह व्रत लेकर राजा ने उसका यथाविधि पालन किया। जिसके प्रभाव से स्वर्ग गया और अनुक्रम से मोक्ष गया।

अथ उपगूहनांग व्रतकथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करें।

अन्तर केवल इतना है कि कार्तिक शु. ४ के दिन एकाशन करे, ५ के दिन उपवास पूजा आराधना करे।

जाप :—ॐ ह्रीं अर्हं उपगूहन सम्यग्दर्शनांगाय नमः स्वाहा।

पाँच दम्पतियों को भोजन करावे। सम्यग्दर्शन उपगूहनांग में पहले जिनेन्द्र भक्त ने किया था उसकी अच्छी गति हुई।

उत्तममुक्तावली व्रत की विधि

उत्तममुक्तावलीव्रतं वच्मि, तृतीयभवमोक्षदम्। भाद्रपद शुक्ल सप्तम्यां प्रोषधं कृत्वा अष्टम्यामुपवासं कुर्यात्। पश्चात्—

आश्विने मेचके पक्षे षष्ट्यां सूर्यप्रभो भवेत् ।
चन्द्रप्रभस्त्रयोदश्यामेष चन्द्रप्रभस्तथा ।।१।।
आश्विनशुक्लेकादश्यां कुर्याद् दुष्कर्महानये ।
कुमारसंभवो नामोपवासः शुभदो भवेत् ।। २ ।।
कार्तिके श्यामले पक्षे द्वादश्यां प्रोषधो भवेत् ।
नाम्नः नन्दीश्वरस्तस्य माहात्म्यं केन वर्णितम् ।
कार्त्तिके धवले पक्षे तृतीयादिवसे मतः ।
सर्वार्थसिद्धिकं नाम चतुर्वर्गप्रसाधनम् ।।
कार्त्तिके धवले पक्षे लक्ष्यश्चैकादशीदिने ।
प्रातिहार्यविधिर्नाम कथितं धर्मवृद्धये ।।
एकादश्यां तु मार्गस्य मेचकेऽतिशुभप्रदे ।
सर्वसुखप्रदं नाम प्रभावः केन वर्ण्यते ।।
आग्रहायणके शुक्ले तृतीयः प्रोषधः शुभः ।
अनन्तविधिरित्युक्तमनन्तसुख साधनम् ।।
एवं चतुर्षु मासेषु, उपवासाः प्रकीर्त्तिताः ।
प्रत्यब्दं ते विधातव्या नवाब्दमिति साधुभिः ।।

उपवास दिने जिनेन्द्रस्नपनं पूजनं कार्यम्, नवमवर्षे व्रतोद्यापनं करणीयम् । इति उत्तममुक्तावलीव्रतं भूरिसाधुभिः निगदितम् ।

अर्थ :—उत्तम मुक्तावली व्रत की विधि को कहते हैं, यह व्रत तृतीय भव में मोक्ष देने वाला है । इस व्रत का प्रारम्भ भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को होता है । सप्तमी को एकाशन कर भाद्रपद शुक्ला अष्टमी को उपवास करना चाहिए, पश्चात् आश्विन वदी षष्ठी को सूर्यप्रभ नाम का उपवास तथा आश्विन वदी त्रयोदशी को चन्द्रप्रभ नाम का उपवास करना चाहिए । आश्विन शुक्ल पक्ष में दुष्कर्मों के क्षय करने के लिए एकादशी तिथि को कुमारसंभव नाम का उपवास करना चाहिए । यह उपवास सब प्रकार से शुभ करने वाला होता है ।

कार्तिक कृष्णपक्ष में द्वादशी तिथि को प्रोषधोपवास करना चाहिए। इस उपवास की नन्दीश्वर संज्ञा है। इसकी महिमा का वर्णन कोई नहीं कर सकता है। कार्तिक शुक्लपक्ष में तृतीया को चतुर्वर्ग को देने वाला सर्वार्थसिद्धि नामक उपवास किया जाता है। इस उपवास के करने से सभी मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं। कार्तिक शुक्ल में एकादशी तिथि को प्रातिहार्य नामक उपवास किया जाता है, यह धर्मवृद्धि को करने वाला होता है। मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष में एकादशी तिथि को सर्व सुखप्रद नामक उपवास किया जाता है। इसके प्रभाव का वर्णन कौन कर सकता है। अगहन सुदी तृतीया को अनन्तविधि नाम का प्रोषधोपवास किया जाता है, यह अनन्त सुख का देने वाला होता है। इस प्रकार प्रत्येक वर्ष में भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक और मार्गशीर्ष इन चार महीनों में उपवास करने चाहिए। इस विधि से नौ वर्ष तक व्रत पालन कर उद्यापन करना चाहिए।

उपवास के दिन भगवान जिनेन्द्र का अभिषेक, पूजन करना चाहिए। इस प्रकार नौ वर्ष तक व्रत का पालन कर नौवें वर्ष उद्यापन कर देना चाहिए, ऐसा अनेक श्रेष्ठ आचार्यों ने उत्तम मुक्तावली व्रत के सम्बन्ध में कहा है।

विवेचन :—मुक्तावली व्रत की विधि पहले बतायी जा चुकी है। आचार्य ने यहां पर उत्तम मुक्तावली व्रत की विधि बतलायी है। उत्तम मुक्तावली व्रत भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक और अगहन इन चार महीनों में पूरा किया जाता है। भाद्रपद शुक्ल पक्ष में सप्तमी का एकाशन और अष्टमी का उपवास, क्वार में कृष्ण पक्ष में षष्ठी और त्रयोदशी को और शुक्ल पक्ष में एकादशी को उपवास, कार्तिक में कृष्ण पक्ष में द्वादशी को और शुक्ल पक्ष में तृतीया और एकादशी को उपवास एवं अगहन में एकादशी को और शुक्लपक्ष में तृतीया को उपवास किया जाता है। इस व्रत में कृष्णपक्ष में उपवास के दिनों में पञ्चामृत अभिषेक करने का विधान है। व्रत के दिनों में चतुर्विंशति जिनपूजा की जाती है। रात जागरण पूर्वक बितायी जाती है। शील व्रत भाद्रपद से आरम्भ कर अगहन तक पाला जाता है।

इस व्रत में "**ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः**" मन्त्र का जाप प्रतिदिन उपवास के दिन तीन बार, शेष दिन एक बार एक एक माला अर्थात् १०८ बार जाप करना

चाहिए। चारों महीनों में इसी का पालन किया जाता है तथा भोजन हरी, नमक कोई रस छोड़कर किया जाता है। उपवास के दिन गृहारम्भ का बिल्कुल त्याग करना आवश्यक होता है। पारणा के दिन भगवान के अभिषेक के अनन्तर दीन-दुःखी व्यक्तियों को आहार कराने के उपरान्त भोजन करना होता है। भोजन में प्रायः माड़-भात लेने का विधान है।

कथा

इसकी कथा मुक्तावलि कथा ही है उसको पढ़े।

अथ उपशांतकषायगुणस्थान व्रतकथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि ८ के दिन एकाशन करे। नवमी के दिन उपवास करे। पूजा आदि पहले के समान करे। मुनि को आहार दे। ११ दम्पति को भोजन करावे। वस्त्र आदि दान करे। १०८ कमल पुष्प, १०८ आम्रफल चढ़ावे। १०८ चैत्यालय की वन्दना करे।

कथा

पहले शिवमदीरपुर नगरी में शिवसेन राजा अपनी महारानी शिवमती के साथ रहता था। उसका पुत्र शिवकोन उसको स्त्री शिवगामी और शिवसंयोग मंत्री उसको स्त्री शिवशीला पुरोहित सारा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने शिवगुप्ताचार्य मुनि से व्रत लिया और उसका व्रतविधि से पालन किया। सर्वसुख को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ उपभोगांतरायनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि :–पहले के समान सब विधि करे अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृ. ११ के दिन एकाशन करे, १२ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, णमोकार मन्त्र का जाप १०८ बार करे, चार दम्पति को भोजन करावे। वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले सिंधपुर नगरी में सिंधसेन राजा सिंधुदेवी अपनी महारानी के साथ रहते थे। उसका पुत्र सिंधुसेन, उसकी स्त्री सिंधुमति मन्त्री उसकी स्त्री सिंधुमुखी और

सिंधुकेतू पुरोहित उसकी स्त्री सिंधुशीला, सिंधुदत्त श्रेष्ठी उसकी स्त्री सिंधुदत्ता पूरा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने सिंधुसागर मुनि के पास यह व्रत लिया उसका विधिपूर्वक पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ उच्छ्वासपर्याप्तिनिवारण व्रतकथा

व्रत विधि :—पहले के समान करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृष्ण ५ के दिन एकाशन करे। ६ के दिन उपवास पूजा आराधना व मन्त्र जाप आदि करे।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़ें।

उत्तरायण व्रत कथा

विधि—माघ शुक्ल १४ को एकाशन करके पूर्णिमा को प्रातःकाल स्नान कर शुद्ध हो, मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, नंदादीप जलावे, (अखण्ड), पद्मप्रभ तीर्थंकर व यक्षयक्षि की प्रतिमा सहित प्रतिमा का अभिषेक करे। अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्ष-यक्षी व क्षेत्रपाल की पूजा करे, नैवेद्य चढ़ावे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पद्मप्रभतीर्थंकराय कुसुम वरयक्ष, मनोवेगादेवी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मंत्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, दूसरे दिन सत्पात्रों को दान देवे, स्वयं पारणा करे।

इस प्रकार प्रत्येक महिने की पूर्णिमा को करे, इस प्रकार छह पूर्णिमा तक व्रत का पालन करके अन्त में उद्यापन करे, उस समय पद्मप्रभ तीर्थंकर का विधान करे, महाभिषेक करे, ६ मुनियों को व आर्यिका को दान देवे।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना ने इस व्रत को पालन किया।

उपसर्ग निवारण व्रतकथा

विधि–श्रावण शुक्ल १३ के दिन प्रातःकाल स्नानादि क्रिया कर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा सामग्री को हाथ में लेकर जिन मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा देकर, ईर्यापथ शुद्धिपूर्वक भक्ति से भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, फिर अभिपीठ पर धरणेन्द्रपद्मावति सहित पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा विराजमान करके वैभवपूर्वक पंचामृताभिषेक करे। अष्टद्रव्यों से भगवान की पूजा करे, शास्त्र व गुरु को पूजा करे, धरणेन्द्र, पद्मावति, क्षेत्रपाल को अर्घ समर्पण करे।

ॐ ह्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावति सहिताय नमः स्वाहा।

इस मंत्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, एक माला णमोकार मन्त्र की फेरे, व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ्य थाली में लेकर तीन प्रदक्षिणापूर्वक मंगल आरती उतारे, उस दिन ब्रह्मचर्यपूर्वक उपवास या एकाशन अथवा फलाहार करे, रात्रि में शुद्ध होकर मन्दिर के सभा मण्डप को शृंगारित करके भूमि पर पंचरंगों से अष्टदल कमल बनाकर उसके मध्य में मंगल कलश स्थापन करे एक थाली में केसर से या अष्टगंध से पार्श्वनाथ यंत्र लिख कर उस मंगल कलश के ऊपर रखे, उस थाली में पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा विराजमान करे। प्रारम्भ में सर्व नित्यपूजा विधिपूर्वक करके अन्त में पार्श्वनाथ विधान करे (पार्श्वनाथ पूजा अलग-अलग नौ बार होती है।)

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य जिनचैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मंत्र से १०८ पुष्प लेकर मन्त्र का जाप करे, बाद में एक महा अर्घ्य थाली में लेकर बोलते हुये मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा देकर मंगल आरती उतारते हुए अर्घ्य चढावे, शास्त्रस्वाध्यायादि करते हुए रात्रि समाप्त करे। प्रातः अभिषेकपूर्वक नित्य पूजा करके चतुसंघ को दान देकर स्वयं पारणा करे।

इस क्रम से इस व्रत को ९ वर्ष करके अन्त में व्रत का उद्यापन करे। पार्श्वनाथ प्रभु की नवीन प्रतिमा बनवाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करावे। मन्दिर में आवश्यक उपकरण प्रदान करे।

नौ मुनि संघों को पीच्छी, कमंडलु, पुस्तकादि उपकरण प्रदान करे, आर्यिका माताजी को साड़ी देवे, इस प्रकार इस व्रत की पूर्णविधि है ।

उपसर्गनिवारण व्रतकथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में आर्य खंड है, उसमें एक हस्तिनापुर नाम रमणीय नगर है । उसमें एक मेघरथ राजा अपनी पद्मावति रानी के साथ में सुख से राज्य कर रहा था, उस राजा के विष्णुकुमार और पद्मरथ नाम के दो गुणवान पुत्र थे । एक दिन नगर के बाहर सहस्रकूट चैत्यालय के दर्शन करने के लिए सुग्रीव महामुनिश्वर अपने संघ सहित पधारे ।

इस वार्ता को वनमाली ने राजा मेघरथ को सुनाया, राजा अपनी रानी व पुत्र नगरवासी सहित मुनि संघ वंदनार्थ सहस्रकूट चैत्यालय में गया और देवभक्ति करके मुनिराज को नमस्कार कर धर्मश्रवण के लिये धर्मसभा में बैठ गया । धर्मश्रवण कर राजा विनयपूर्वक हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगा कि हे संसारतारक मुनिवर ! मुझे सुख प्रदान करने वाला कोई एक व्रत विधान कहो ।

तब मुनिश्वर राजा की विनती को सुनकर कहने लगे कि हे राजन ! आपको उपसर्ग निवारण पार्श्वनाथ व्रत करना चाहिए, ऐसा कहकर व्रत की विधि और विधान कह सुनाया, व्रत का स्वरूप सुनकर राजा मेघरथ ने और उनके छोटे पुत्र विष्णु कुमार ने उस व्रत को ग्रहण कर लिया और सब वापस अपने नगर में आ गये । आगे उन दोनों ने यथाविधि व्रत को पालन करके यथाविधि उद्यापन किया । एक दिन निमित्त पाकर दोनों को वैराग्य उत्पन्न हो गया और श्रुतसागर मुनिश्वर के पास जाकर निर्ग्रन्थ दीक्षा ले ली और घोर तपश्चरण करने लगे । तप के प्रभाव से विष्णुकुमार मुनि को विक्रिया ऋद्धि प्रकट हो गई ।

अवन्ति देश की उज्जयिनी नगरी में श्रीवर्मा नाम का राजा राज्य करता था, राजा के चार मन्त्री थे, बली, बृहस्पति, प्रहलाद, नमुची, ये चारों ही मन्त्री मिथ्यादृष्टि और दुष्ट प्रकृति के थे । एक दिन उस नगरी के उद्यान में अकंपनाचार्य अपने ७०० मुनियों का संघ लेकर पधारे । नगर निवासी धर्मात्मा लोग दर्शनार्थ जाने लगे । अकंपनाचार्य जी ने यह जानकर कि नगर का राजा और चारों ही मंत्री मिथ्या-

दृष्टि हैं संघ को बुलाकर आदेश दिया कि कोई भी नगर से दर्शनार्थ आवे कोई भी मुनि उनको आशीर्वाद न देवे न वार्तालाप ही करे, यह सुनकर सभी मुनि ध्यानस्थ हो गये।

नगरवासी लोग दर्शन करके जाने लगे, राजा ने नगर में, नगरवासियों की हलचल देखकर चारों मन्त्रियों से पूछा कि आज कौनसा त्यौहार है, नगरवासियों में बहुत हलचल है, लोग कहां आ रहे जा रहे हैं।

तब मन्त्री लोग कहने लगे कि नगर के उद्यान में दिगम्बर नंगे साधु आये हैं, तब राजा कहने लगा कि चलो मैं भी दर्शन करने जाऊंगा, सुनते हैं दिगम्बर साधु बहुत ज्ञानी ध्यानी तपस्वी होते हैं, तब मन्त्री लोग कहने लगे कि राजन, ये नंगे लोग दर्शन के लायक नहीं होते, निर्लज्ज होते हैं, कभी स्नान नहीं करते, उनके शरीर में दुर्गन्ध आती रहती है।

तब राजा कहने लगा कि कुछ भी हो मैं तो दर्शन के लिए अवश्य जाऊंगा तब मन्त्री चुप हो गये और राजा के साथ मन्त्री लोग भी गये, उद्यान में जाकर राजा ने प्रत्येक मुनि को पृथक् २ नमस्कार किया, लेकिन किसी मुनिराज ने राजा को आशीर्वाद नहीं दिया, राजा ने देखा कि सभी मुनिराज ध्यानस्थ हैं, दर्शन कर प्रभावित होकर वापस नगर को लौट रहा था। तब मन्त्रियों ने राजा को भड़काने की कोशिश करते हुए कहा—आप राजा हो, राजा होकर भी इन मुनियों को आपने नमस्कार किया तो भी इन लोगों ने आपको आशीर्वाद भी नहीं दिया। हमने कहा था न ये लोग व्यवहारशून्य रहते हैं, 'मुर्खजती मौनगहे' वाली कहावत के अनुसार ये लोग कुछ बोलना ही नहीं जानते, ज्ञानशून्य रहते हैं आदि-आदि।

इतने में एक श्रुतसागर मुनिराज जिन्होंने गुरु की आज्ञा नहीं सुन पाई थी, पहले ही आहारचर्या के लिए निकल जा चुके थे। आहार करके वापस लौट रहे थे, देखकर मन्त्री लोग राजा को कहने लगे कि हे राजन देखो यह एक तरुण बैल मठा पोकर आ रहा है। इस प्रकार के वचन सुनकर और यह जानकर कि ये लोग मिथ्यादृष्टि हैं, तब मुनिराज भी चुप नहीं रहे और वादकर चारों ही मन्त्रियों को वाद में जीत लिया। राजा को बड़ी प्रसन्नता

हुई। चारों मन्त्री लज्जित हो नगर लौट गये। मुनिराज वहां से संघ में पहुचे, गुरु को रास्ते की बात कह सुनाई। गुरु कहने लगे वत्स तुमने अच्छा नहीं किया मिथ्यादृष्टि मन्त्रियों से वार्तालाप करने से अब पूरे संघ पर उपसर्ग होगा। तुम जाओ और जहां मंत्रियों के साथ वाद हुआ था वहां जाकर ध्यानस्थ हो जाओ। श्रुतसागर मुनिराज गुरु का आदेश सुनते ही वहां जाकर ध्यानस्थ खड़े हो गये।

रात्रि होने पर चारों ही मंत्री हाथ में तलवार लेकर संघ पर उपसर्ग करने चले। रास्ते में श्रुतसागरजी को वाद की जगह पर ध्यान करते पाकर हमारा शत्रु तो यहां पर ही है इसको मारकर आगे चलें ऐसा विचार कर चारों ही एक साथ ऊपर तलवार उठाये, उसी समय वनरक्षक देव ने आकर उन चारों को ही वहीं कील दिया, चारों मंत्री जैसे के तैसे उपसर्ग करने की मुद्रा में वहां कीलित हो गये। प्रातःकाल हुआ, दर्शनार्थी लोग आने लगे, यह मंत्रियों का चरित्र देखकर आश्चर्य करने लगे सब लोग धिक् २ करने लगे कुछ लोगों ने जाकर राजा को समाचार कह सुनाये राजा शीघ्र ही वहां पर दौड़ा आया, देखकर मन्त्रियों के ऊपर बड़ा क्रोधित हुआ। इतने में मुनिश्वर का ध्यान खुला यह सब देखकर, किसने धर्म की रक्षा के लिए इन मन्त्रियों को कीला है? ऐसा कहते ही शीघ्र ही यक्षेन्द्र प्रकट हुआ। मुनिराज के कहने पर मन्त्रियों को छोड़ दिया। मुनिश्री की क्षमा भावना देखकर धर्म की सब जगह जय जयकार होने लगी।

राजा ने उन चारों मंत्रियों को नगर में लाकर काला मुंह करके गधे पर बिठा कर नगर से बाहर निकलवा दिया, वो चारों ही मन्त्री निष्कासित होकर घूमते-घूमते हस्तिनापुर पहुचे। वहाँ का राजा पद्मरथ बड़ा ही धर्मात्मा था, लेकिन समीपवर्ती राजा के कारण मन में बहुत दुःखी हो रहा था। ये चारों ही वहां पहुंचे। राजसभा में जाकर राजा को आशीर्वाद देने लगे। मन्त्रियों ने देखा कि पद्मरथ का मन उदासीन दिख रहा है। वो चारों ही मंत्री दुःखी होने के कारण को जानकर कहने लगे, इसमें क्या बड़ी बात है, हम लोग आपके शत्रु राजा को शीघ्र ही युद्ध में जीत कर बांध के आपके चरणों में लाकर डाल देते हैं, पहले हम आपका कार्य करते हैं, ऐसा कह वो चारों ही राजसभा से निकलकर समीपवर्ती राज्य के राजा को छल से बांधकर पद्मरथ राजा के चरणों में लाकर डाल देते हैं, पद्मरथ राजा उन चारों ही मन्त्रियों से बड़ा प्रभावित हुआ और कहने लगा कि मांगो क्या मांगते हो? जो मांगोगे सो ही दूंगा।

तब वे चारों ही कहने लगे, हमारा वचन भण्डार में रहे जब आवश्यकता होगी तब मांग लेंगे, इस प्रकार राजा को प्रभावित कर स्थान पा लिया और हस्तिनापुर में रहने लगे। कुछ दिनों बाद आचार्य अकम्पन का संघ भी विहार करता हुआ हस्तिनापुर के उद्यान मे आ पहुंचा। नगरवासियों को समाचार प्राप्त होते ही नगरवासी दर्शनार्थ उमड़ पड़े, चारों मन्त्रियों को भी यह समाचार प्राप्त हुआ कि वही संघ यहां भी आ गया है। तब विचार करने लगे कि अब क्या करना चाहिए, राजा यहां का जैन है। हमारा रहस्य राजा के सामने खुल जायेगा तो राजा हम को प्राण-दण्ड दिये बिना नहीं रहेगा, संघ के आगमन का समाचार पाने के पहले ही सात दिन का राज्य प्राप्त कर मुनियों को मारने का उपाय करना चाहिए।

ऐसा विचार कर शीघ्र ही राजा के पास गये और कहने लगे—हे राजन हमारा वचन भण्डार में है, उसकी पूर्ति कीजिए। राजा ने कहा मांगो क्या मांगते हो? उन चारों ने ही राजा से कहा हम को सात दिन के लिए राज्य दीजिए। राजा तथास्तु कह-कर सिंहासन छोड़ अंतपुर में जाकर रहने लगा। इधर दुष्ट मंत्री राज्य पाकर मुनि-संघ के ऊपर उपसर्ग करने का उपक्रम करने लगे, उद्यान में जाकर सब मुनियों को घेरकर बाड़ा करवा दिया, चारों ओर दुर्गन्धित पदार्थ डलवाकर आग लगा दी। संघ के ऊपर उपसर्ग आया जान सर्व मुनिराज समाधि धारण कर ध्यानस्थ हो गये। मुनिसंघ के ऊपर घोर उपसर्ग प्रारम्भ हो गया।

मिथिलापुरी के उद्यान में श्रुतसागर नामक मुनि रात्रि में ध्यान कर रहे थे। रात्रि आकाश में श्रवण नक्षत्र कांपते हुए देखकर अवधिज्ञान से हस्तिनापुर में होने वाली घटना को जान लिया उसी समय हाय-हाय करने लगे, समीप में बैठे हुए क्षुल्लक पुष्पदंत सागर ने आकर पूछा भगवान यह क्या, आप दुःखपूर्ण वचन क्यों उच्चारण कर रहे हो, क्या कारण है? तब श्रुतसागर मुनिश्वर ने सब हाल कह सुनाया और कहा तुम शीघ्र ही धरणीधर पर्वत पर जहां विष्णुकुमार मुनि ध्यान कर रहे हैं, वहां जाओ, वो बिक्रिया ऋद्धि से सम्पन्न हैं इस उपसर्ग को वो ही दूर कर सकते हैं।

क्षुल्लक रात्रि में उसी समय धरणीधर पर्वत पर आकाश गामिनी विद्या की सहायता से पहुंचा और विष्णुकुमार मुनिश्वर को हस्तिनापुर में

होने वाले मुनि उपसर्ग का हाल कह सुनाया। सुनकर विक्रिय ऋद्धि का परीक्षण करके विष्णुकुमार मुनि हस्तिनापुर आये और अपना बावना रूप बनाकर चारों मन्त्रियों से तीन पांव भूमि से कल्पित करवाकर विक्रियाऋद्धि से अपना बहुत बड़ा शरीर बनाया और एक पांव मेरू पर्वत पर, दूसरा पांव मानुषोतर पर्वत पर रखा, अब कहने लगे तीसरे पाँव के लिए जगह दो। उसी समय देवों के आसन कम्पित हुए सर्व देवों ने आकर मुनिसंघ का उपसर्ग दूर किया और विष्णुकुमार मुनि से क्षमा मांगी और अपना रूप छोटा करने की प्रार्थना की। मुनि उपसर्ग दूर हुआ, चारों मन्त्री भी मिथ्यात्व छोड़कर जिनधर्मी बने। विष्णुकुमार मुनि उपसर्ग दूर कर अपने यथास्थान पहुंचकर घोर तपस्या करने लगे। कुछ ही दिनों में कर्म काटकर मोक्ष चले गये। इस प्रकार धर्म प्रभावना हुई।

ऋषिपंचमी व्रत

मास आषाढ़ शुक्ल की सोय, जबहिं पंचमी को दिन होय।
व्रत के दिन छांडो आरम्भ, जिनवर भजो तजो सब दंभ॥
पांच वर्ष अरु मासहि पंच, ये सब व्रत पैंसठ सुन संच।
जब यह व्रत पूरो ह्वै लोय, यथाशक्ति उद्यापन होय॥

भावार्थ :—यह व्रत ५ वर्ष और ५ महीने में समाप्त होता है। प्रति मास शुक्लपक्ष की पंचमी के दिन उपवास करे। नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे। आषाढ़ शुक्ला पंचमी से यह व्रत शुरू करे। ६५ उपवास पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

यह व्रत हस्तिनापुर में धनपति सेठ की पुत्री कमलश्री ने किया था जिसके प्रभाव से उसका बिछुड़ा हुआ पुत्र पुन: मिल गया था और अन्त में स्वर्ग-सुख प्राप्त हुए थे।

एसोनव व्रत

एसो नव व्रत दिन चार से, ऊपर तहां पचासो लखे।
चौशत पण प्रोषध जेवा उसी, इकतें नवलों चढ़ फिर घटी॥

—वर्धमान पुराण

भावार्थ :—यह व्रत चार सौ पचासी दिन में पूरा होता है, जिसमें ४०५ उपवास और ८० पारणे होते हैं । यथा—

एक उपवास, एक पारणा, दो उपवास, एक पारणा, इस प्रकार ६ उपवास तक बढ़े फिर एक-एक उपवास कम करता हुआ १ तक आवे । इस प्रकार ६ बार बढ़ावे व घटावे । एक बार में ४५ उपवास और ६ पारणा होते हैं। कुल नौ आवृत्ति के ४०५ उपवास और ८० पारणा में व्रत पूर्ण होता है । नमस्कार मंत्र का त्रिकाल जाप्य करे । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे ।

एशोदश व्रत

एशोदश व्रत छह सौ पचास, सौ जेवा साढ़े पांच सौ वास ।
दशलों चढ़े अनुक्रम सोय, जो लों व्रत पूरण नहि होय ।।

—वर्धमान पु०

भावार्थ :—यह व्रत ६५० दिन में पूरा होता है जिसमें ५५० उपवास और १०० पारणायें होती हैं । यथा—

जिस किसी मास में प्रारम्भ करे । प्रथम दिन एक उपवास, एक पारणा, फिर दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, इस प्रकार एक-एक उपवास बढ़ाकर १० उपवास तक बढ़ावे, फिर ६ उपवास, एक पारणा, ८ उपवास एक पारणा, इस प्रकार १-१ घटाकर एक तक आवे । इस प्रकार दश आवृत्ति में ५५० उपवास और १०० पारणा होकर व्रत पूर्ण हो जाता है । नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे ।

कंजिक व्रत

कंजिक व्रत जल भात आहार, चौंसठ दिन पाले निरधार ।
यथा शक्ति कछु और व्रतन्त, तितने मास बरष परयंत ।।

—व० पु०

भावार्थ :—यह व्रत एक वर्ष के भीतर ६४ दिन में समाप्त होता है । किसी भी मास के प्रथम दिन से यह व्रत आरम्भ करे । चौंसठ दिन तक सिर्फ

कांजिक आहार अर्थात् पानी और भात लेवे। यदि शक्ति हो तो दुगुना-तिगुना भी बढ़ा सकते हैं। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे। नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे।

कृष्णपंचमी व्रत

कृष्ण पंचमी व्रत विधि तास, जेठ कृष्ण पंचिम उपवास।

—वर्ध. पु.

भावार्थ :—यह व्रत ज्येष्ठ कृष्ण पंचमी के दिन किया जाता है। इस दिन उपवास करे। त्रिकाल नमस्कार मन्त्र का जाप्य करे। ५ वर्ष बाद उद्यापन करे।

कांजीबारस व्रत

भादों सुदी द्वादश के दिना, प्रोषध करे श्री जिनमना।

भावार्थ:—भादों सुदी १२ के दिन उपवास करे। नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे। बारह वर्ष पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

कलौ चतुर्दशी व्रत

आषाढ़ी सित चौदस होय, तब तैं यह व्रत लीजो सोय।

दोहा—चार मास की चौदसीं, शुक्ल पक्ष जब होय।
व्रत कीजे शुभ भाव सों, मुक्ति वधू को लोय॥

—कथाकोष

भावार्थ :—यह व्रत आषाढ़ शुक्ल १४ से प्रारम्भ होता है एवं आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, इन चार मास की शुक्ला चतुर्दशियों को उपवास करे। नमस्कार मन्त्र का जाप्य करे। ४ वर्ष पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

कर्मचूर व्रत

कर्मचूर या कर्मक्षय व्रत २९६ दिनों में पूरा किया जाता है। इस व्रत में

१४८ कर्मप्रकृतियों को नष्ट करने के निमित्त १४८ उपवास किये जाते हैं। प्रत्येक उपवास के अनन्तर पारणा की जाती है। यह व्रत लगातार १९६ दिन तक एकान्तर रूप से उपवास और पारणा का क्रम लगाकर किया जाता है। व्रत के दिन में **ॐ सर्वकर्मरहिताय सिद्धाय नमः** अथवा णमोकार मन्त्र का जाप करने का नियम है। व्रत के दिनों में पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षा व्रत एवं सम्यक् तप का आचरण तथा पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने का विधान है।

व्रत के पूरा होने पर उद्यापन करे, उस समय सिद्धाराधना करे सिद्ध प्रतिमा की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, दानादिक देवे।

कथा

रानी चेलना की कथा पढ़े।

कोकिलापञ्चमी व्रत

आषाढ़ वदी पञ्चमी से पांच मास तक प्रत्येक कृष्ण पक्ष पञ्चमी को पांच वर्ष तक यह किया जाता है। इस व्रत में उपवास के दिन चारों प्रकार के आहार का त्याग कर पूजन, अभिषेक, शास्त्र–स्वाध्याय एवं धर्मध्यान करने चाहिए। **ॐ ह्रीं पञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः** मन्त्र का जाप इस व्रत में करना चाहिए।

व्रत पूर्ण होने पर अन्त में उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि विधान करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

कनकावली व्रत की विशेष विधि

कनकावल्यां तु आश्विन शुक्ले प्रतिपत्, पञ्चमी, दशमी; कार्तिक कृष्णपक्षे द्वितीया, षष्ठी, द्वादशी चेति, एवं एतद्दिवसेषु सर्वेषु मासेषु चोपवासाः द्विसप्ततिः कार्याः, इयं द्वादशमासभवा कनकावली। कस्यापि मासस्य शुक्लकृष्णपक्षयोः षडुपवासाः कार्याः, एषा सावधिका मासिका कनकावली।

अर्थ :—कनकावली में आश्विन शुक्ला प्रतिपदा, पंचमी और दशमी तथा कार्त्तिक कृष्ण पक्ष में द्वितीया, षष्ठी और द्वादशी इस प्रकार छः उपवास करने चाहिए। इसी प्रकार सभो महीनों में कुल ७२ उपवास किये जाते हैं। यह बारह महीनों में किये जाने वाला कनकावली व्रत है। किसी भी महीने में कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष की उपर्युक्त तिथियों में छः उपवास करना सावधिक मासिक कनकावली व्रत है।

विवेचन :—यद्यपि कनकावली व्रत की विधि पहले बतायी जा चुकी है, परन्तु यहां पर इतनी विशेषता समझनी चाहिए कि आचार्य सिंहनन्दी ने श्रावण से आरम्भ न कर आश्विन मास से व्रतारम्भ करने का विधान किया है। आश्विन मास में शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा, पंचमी और दशमी तथा कार्तिक मास में कृष्ण पक्ष की द्वितीया, षष्ठी और द्वादशी इस प्रकार छः उपवास किये जाते हैं। आचार्य के मतानुसार प्रत्येक मास के शुक्ल पक्ष की तीन तिथियां तथा प्रत्येक मास के कृष्ण पक्ष की तीन तिथियां लेनी चाहिए। मास गणना अमावस्या से लेकर अमावस्या तक की जाती है। एक वर्ष में कुल ७२ उपवास करने पड़ते हैं। मासिक कनकावली में केवल छः उपवास किये जाते हैं। मास गणना अमान्त ली जाती है।

व्रत के पूर्ण होने पर अन्त में उद्यापन करे।

अथ करकुच व्रत कथा

व्रत विधि :—कार्तिक शुक्ला नवमी के दिन एकाशन करे, १० के दिन उपवास करे। पहले के समान सब विधि करे, पीठ के ऊपर पंचपरमेष्ठी मूर्ति स्थापित करे, पंचामृत अभिषेक करे।

जाप :—"ॐ ह्रां ह्रिं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।"

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्पों का जाप करे। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे। दूसरे दिन आहार आदि देकर पारणा करे।

कथा

पहले उज्जयिनी नगरी में वीरसेन राजा अपनी विजया पटरानी के साथ

सुख से रहता था । उसको असुरकुमार नामक एक लड़का था, उसकी स्त्री सुरदेवी थी । इसके अलावा मन्त्री, पुरोहित, श्रेष्ठी, सेनापति आदि थे । वे सब सुख से अपना काल बिता रहे थे ।

एक दिन विद्यासागर नामक मुनिमहाराज आहार के निमित्त से आये । विधिपूर्वक पड़गाहन आदि करके उन्हें निरन्तराय आहार कराया । आहार के बाद राजा ने उन्हें एक आसन पर बिठाया और मुझे कोई व्रत दीजिये, इस प्रकार कहा । तब मुनि महाराजजी ने करकुच व्रत दिया और उसकी सब विधि बतायी । पश्चात् मुनि महाराज सबको आशीर्वाद देकर वन में चले गये । तब राजा ने अपने परिवार सहित यह व्रत किया जिससे उन्हे अनुक्रम से मोक्ष सुख की प्राप्ति हुई ।

कन्यासंक्रमण व्रतकथा

पूर्ववत् संक्रमण के समान सब करे, मात्र इस व्रत को भाद्रपद में आने वाले कन्यासंक्रमण के अन्दर करे, व्रत, पूजन करे, पद्मप्रभ तीर्थंकर की पूजा जाप्य करे, कथा वगैरह पूर्ववत् करे ।

सिंहसंक्रमण व्रत कथा

मकर की तरह इस व्रत की पूजा विधि करे, मात्र इसको श्रावण महिने में सिंहसंक्रमण आता है तब इस व्रत को करे, पूजा भी उसी प्रकार, जाप्य भी उसी प्रकार, सर्वविधि भी उसी प्रकार करे. आराधना सुमतिनाथ की करे, कथा पूर्ववत् समझे ।

कर्कसंक्रमण व्रत कथा

मकर संक्रमण व्रत के समान ही इस व्रत की विधि करे, मात्र फरक इतना ही है कि आषाढ़ महिने में कर्कसंक्रमण आने पर इस व्रत को करे, बाकी सब विधि पूर्ववत् समझना, आराधना, अभिनंदन तीर्थंकर की करे, जाप्य भी उसी तरह करे, कथा भी वही पढ़े ।

मिथुनसंक्रमण व्रत कथा

उसी प्रकार इस व्रत को भी करे, इस व्रत को ज्येष्ठ महिने के मिथुनसंक्रमण

में करे, उसी दिन व्रत पूजा करे, संभवनाथ भगवान की आराधना करे, मन्त्र जाप्य भी उसी प्रकार करे, कथा पूर्ववत् समझे ।

वृषभसंक्रमण व्रत कथा

इस व्रत को भी तूर्ववत् करे, विधि भी उसी प्रकार करे, वैशाख महिने में वृषभसंक्रमण आता है तब इस व्रत को करे, अजितनाथ तीर्थंकर की आराधना करे, जाप्य भी उसी प्रकार करे, कथा पूर्ववत् समझे ।

मेषसंक्रमण व्रत कथा

मकरसंक्रमण के समान इस व्रत की भी पूजा विधि करे, मात्र इस व्रत को चैत्र महिने में मेषसंक्रमण आता है तब करे, आदिनाथ तीर्थंकर की आराधना करे, मंत्र जाप्य उसी प्रकार करे, कथा भी पूर्ववत् पढ़े ।

सूचना :—ऊपर कही हुई कथा मकरसंक्रमण व्रत से लेकर मेषसंक्रमण तक बारह व्रत कथा की विधि एक समान है, आदिनाथ से लेकर वासुपूज्य तक आराधना करनी चाहिये, मेषसंक्रमण में आदिनाथ, वृषभसंक्रमण में अजितनाथ आदि क्रमशः ग्रहण करना ।

कवलचंद्रायण व्रत कथा

चैत्रादि बारह महिने के अन्दर किसी भी महिने की अमावश्या से इस व्रत को प्रारम्भ करे, उस दिन शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, चंद्रप्रभ भगवान की मूर्ति यक्षयक्षिणी सहित स्थापन कर पंचामृत अभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणि व क्षेत्रपाल की भी पूजा करे ।

ॐ ह्रीं अर्हं चंद्रप्रभ तीर्थंकराय श्यामयक्ष ज्वालामालिनी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

तीसों दिन ही यही जाप्य करे, इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े, स्वाध्याय करे, व्रत कथा पढ़े,

पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, धर्मध्यान से समय बितावे, सत्पात्रों को दान देवे, एकम को पूजा करके एक ग्रास भोजन का लेवे।

२	तिथि	२	ग्रास
३	,,	३	,,
४	,,	४	,,
५	,,	५	,,
६	,,	६	,,
७	,,	७	,,
८	,,	८	,,
९	,,	९	,,
१०	,,	१०	,,
११	,,	११	,,
१२	,,	१२	,,
१३	,,	१३	,,
१४	,,	१४	,,

१५ पूर्णिमा को उपवास करके पूर्ववत् पूजाविधि करे।

१	तिथि	१४	ग्रास
२	,,	१३	,,
३	,,	१२	,,
४	,,	११	,,
५	,,	१०	,,
६	,,	९	,,
७	,,	८	,,
८	,,	७	,,
९	,,	६	,,
१०	,,	५	,,

११	तिथि	४	ग्रास
१२	,,	३	,,
१३	,,	२	,,
१४	,,	१	,,

१५ अमावश्या को उपवास करके पूर्ववत् पूजा करे। दूसरे दिन पूजा कर दान देकर स्वयं पारणा करे, तीस दिन ब्रह्मचर्य पूर्वक व्रत करे, प्रत्येक दिन पूर्ववत् अभिषेक पूजा करे।

इस प्रकार इस व्रत को बारह वर्ष तक करे, अन्त में उद्यापन करे, चंद्रप्रभ विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

इस व्रत को यशोभद्रा नाम की सेठानी ने विधिपूर्वक पालन किया था, उसके फलस्वरूप सुकुमाल सा पुत्र उत्पन्न हुआ।

कथा में राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

कल्याणतिलक व्रत विधि और कथा

फाल्गुन शुक्ला अष्टमी से पूर्णिमा तक व्रत को करने वाले व्रतिक को प्रातः काल में स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनना चाहिए, मन्दिर में जाकर तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, अखंड दीपक जलावे, अभिषेक पीठ पर जिनेन्द्र प्रभु को स्थापन कर याने नन्दीश्वर बिंब को स्थापन कर चौबीस तीर्थंकर की मूर्ति यक्षयक्षि सहित स्थापन कर, पंचामृताभिषेक करे, पंच मंदरवर स्थापन करे, आगे एक पाटा के ऊपर आठ स्वस्तिक निकालकर उनके ऊपर पान रखे, फिर उनके ऊपर अष्टद्रव्य रखे फिर अष्टद्रव्य से पूजा करे, पंच पकवान चढ़ावे, जिनवाणी व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपालादिक की योग्यतानुसार पूजा करे।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से पुष्प लेकर १०८ बार जाप्य करे। जिन सहस्र नाम पढ़े,

शास्त्र स्वाध्याय करे, यह व्रत कथा पढ़े, एक थाली में आठ पान रखकर ऊपर अष्ट द्रव्य रखे, एक श्रीफल रखे, उस महाअर्घ्य को हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगल आरती उतारे, आठ दिन तक यथाशक्ति उपवास अथवा धारणा पारणा भी कर सकते हैं। एकभुक्ति किंवा कोजिहार व आठ वस्तुओं का नियम करना, पूर्णिमा के दिन चतुर्विंशति तीर्थंकराधना करके महाभिषेक करे, पंच पकवान चढ़ावे, पाँच कलशों में पांच सेर घी भरकर भगवान को अर्पण करे, चार प्रकार के संघ को दान करे, इस व्रत की विधि यही है।

इस व्रत को पालन करने से तीर्थंकर, बलदेव, नारायण आदि पदों की प्राप्ति होकर क्रमशः मोक्ष सुख की भी प्राप्ति होती है।

अथ कुन्थुनाथ तीर्थंकर चक्रवर्ती व्रत कथा

व्रत विधि :—माघ शुक्ला में पहले गुरुवार को एकाशन करे और शुक्रवार को सुबह शुद्ध कपड़े पहन कर अष्ट द्रव्य लेकर मन्दिर जायें, वन्दना आदि करके पीठ पर सुदत (भूतकाल) जिनेश्वर की यक्षयक्षी सहित स्थापना करे, पंचामृत से अभिषेक करे। भगवान के सामने एक पाटे पर ६ स्वस्तिक निकाल कर उसके ऊपर ६ पत्ते लगाकर उस पर अष्टद्रव्य रखकर निर्वाण से सुदत तीर्थंकर तक ६ तीर्थंकरों की पूजा करे। श्रुत व गुरु की पूजा करे।

जाप :—ॐ **ह्रीं अर्हं सुदत तीर्थंकराय यक्षयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।**

इस मंत्र का १०८ बार पुष्पों से जाप करे। णमोकार मन्त्र का जाप करे सत्पात्र को आहार आदि दे। दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करे।

इस प्रकार ६ शुक्रवार तक पूजा करके पारणा करके उद्यापन करे। श्री सुदत तीर्थंकर का विधान करके महाभिषेक करे। चार प्रकार का दान दे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के पूर्वविदेह में सीता नदी है। उसके दक्षिण भाग में वत्स नामक देश है, उसमें सुसीमा नामक नगर है। वहाँ सिंहरथ नामक राजा राज्य करता था। उसकी स्त्री गुणमाला थी। मन्त्री, पुरोहित, राजश्रेष्ठी, सेनापति वगैरह परिवार रहता था।

एक दिन राज घराने में चर्या के निमित्त से तपोनिधि मुनिराज आये, राजा ने नवधाभक्तिपूर्वक निरंतराय आहार कराया । आहार होने के बाद राजा ने कोई भी एक व्रत दो ऐसी प्रार्थना की । महाराज ने इस व्रत को करने के लिए कहा तथा उसकी विधि बतायी, महाराज तो वापस चले गये । राजा ने यथाविधि व्रत का पालन किया और राज्य सुख को भोगा ।

एक दिन राजा महल के ऊपर बैठा था तब उल्कापात हुआ जिसे देखकर राजा को वैराग्य हो गया । तब अपने पुत्र को राज्य देकर श्री वृषसेन मुनि के पास दीक्षा ली । एक दशांगधारी हुये । षोडशकारण की भावना भाई जिससे तीर्थंकर प्रकृति का बंध हुआ । वहां से समाधिपूर्वक मरण हुआ तो सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हुये । वहां की आयु पूर्ण कर के हस्तिनापुर में जन्म लिया । अनेक देवों ने पांच कल्याणक मनाये ।

कामदेव चक्रवर्ती व तीर्थंकर पदवी के धारी हुए । ऐसे कुन्थुनाथ ने सुख से राज्य सुख को भोगा । एक दिन उनके मन में संसार से वैराग्य हो गया जिससे जंगल में जाकर दीक्षा लेकर घोर तपश्चरण किया जिससे केवलज्ञान को प्राप्ति हुई । पश्चात् देश विदेश में विहार कर धर्मोपदेश दिया, फिर सम्मेदशिखरजी जाकर योग निरोध किया और शुक्लध्यान के प्रभाव से सब कर्मों को नष्ट कर मोक्ष गये । यह इस व्रत का प्रभाव है ।

अथ कुबेरकांत अथवा कुमारकांत व्रत कथा

व्रत विधि :—१२ महिनों में से किसी भी महिने के शुक्ल पक्ष में १०मी के दिन एकाशन करे व ११ के दिन उपवास करे । प्रातःकाल स्वच्छ कपड़े पहन कर अष्टद्रव्य लेकर मन्दिर में जावे । पीठ पर पंचपरमेष्ठी प्रतिमा स्थापित करे । पंचामृत अभिषेक करे । भगवान के सामने एक पाटे पर स्वस्तिक निकाल कर उस पर पान व अष्टद्रव्य रखे । पंचपरमेष्ठी की पूजा अर्चना करे, श्रुत व गुरु की अर्चना करे, यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करे ।

जाप :—**ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा ।**

इस मन्त्र का जाप करें । सहस्रनाम पढ़े यह कथा पढ़ें । आरती करे ।

उपवास करे। सत्पात्र को दान दे। दूसरे दिन पूजा व दान देकर पारणा करे।

इस प्रकार ५ तिथि पूर्ण होने पर उद्यापन करे। पंचपरमेष्ठी विधान करे। चतुःविध संघ को दान दे। करुणा दान दे। मन्दिर में आवश्यक उपकरण दे।

कथा

इस जम्बूद्वीप में पूर्व विदेह क्षेत्र के पुष्कलावती में पुंडरिकिणी नामक एक अत्यन्त रमणीय नगर है। वहां प्रजापाल नामक राजा राज्य करता था उसकी पत्नी गुणवती थी, उसके राज्य में कुबेरमित्र श्रेष्ठी था, उसके धनवती आदि ३० स्त्रियां थीं पर उसकी कोई सन्तान नहीं थी। इसलिए वह चिन्ताग्रस्त रहता था।

एक दिन सर्वऋद्धिसंपन्न चारणमुनि चर्या के लिए आये तब कुबेर श्रेष्ठी ने नवधाभक्तिपूर्वक आहार–दान दिया। आहार होने के बाद बाहर बैठे थे। तब धर्मोपदेश सुनने के बाद उन्होंने कहा मुझे पुत्ररत्न होगा कि नहीं ? मुनिराज बोले—अब तुम को बड़ा गुणशाली पुत्र उत्पन्न होने वाला है। तुम कुबेरकांत व्रत करो जिससे तुम्हारी सर्व इच्छा पूर्ण होगी। तब उसने यह व्रत लिया और यथाविधि पालन किया।

इससे कुबेरमित्र श्रेष्ठी के बड़ा वैभवशाली पुत्र उत्पन्न हुआ। बहुत समय जाने के बाद संसार से वैराग्य हो गया जिससे जंगल में जाकर जिनेश्वरी दीक्षा धारण की। घोर तपश्चरण किया और समाधिपूर्वक शरीर छोड़ा जिससे स्वर्ग में महर्द्धिक देव हुआ। वहां वह बहुत सुख भोगकर मनुष्य पर्याय लेकर मोक्ष जायेगा।

केवलबोध व्रत कथा

भाद्रपद शुक्ला ११ के दिन प्रातःकाल इस व्रत को पालन करने वाला स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहिन कर पूजा सामग्री को लेकर जिन मंदिर में जावे, ईर्यापथ शुद्धि पूर्वक तीन प्रदक्षिणा देता हुआ नमस्कार करे, श्री अभिषेक पीठ पर पंचपरमेष्ठि की मूर्ति की स्थापना कर पंचामृत अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, जिनवाणी व गुरु की पूजा कर यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल को अर्घ समर्पण करे। पांच पकवान का नैवेद्य चढ़ावे, केला, साकर, घी, दूध चढ़ावे।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अनाहतविद्यायै नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप करे, सहस्र नाम स्तोत्र पढ़े, एक माला णमोकार मन्त्र की फेरे, शास्त्र स्वाध्याय करे, एक थाली में पांच पान के पत्ते लगाकर उन पत्तों के ऊपर अष्टद्रव्य रखे, एक नारियल रखे, अर्घ्य की थाली हाथ में लेकर तीन प्रदक्षिणा मन्दिर की लगावे, मंगल आरती करके अर्घ्य भगवान को चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य पालन करे, धर्मध्यान से समय बितावे, दूसरे दिन सत्पात्र को दान करके, स्वयं पारणा करे ।

इस प्रकार प्रत्येक महिने की एकादशी के दिन उपरोक्त विधि करके, व्रत का पालन करे, ऐसे नौ महिने तक करे, अन्त में उद्यापन करे, उद्यापन के समय, जलाधिवास, महाभिषेक, जलहोम, पूजा करनी चाहिये, महाशांति मन्त्र से गंधोदक करे, नौ मुनिसंघों को आहारदान व उपकरणों की भेंट करे, आर्यिका माताजी को साड़ी आदि देकर संतुष्ट करे, श्रावक श्राविकाओं को भी भोजन देकर संतुष्ट करे, गृहस्थाचार्य को वस्त्रादिक देवे, दान दक्षिणा देवे । इस प्रकार इस व्रत की विधि है, इस व्रत के प्रभाव से बहुत जीव मोक्ष गये हैं, महान पुण्य के भागी बने हैं ।

कायगुप्ति व्रत कथा

आषाढ शुक्ल एकम को सर्व क्रिया पूर्ववत् करके जिनमन्दिर में आदिनाथ तीर्थंकर का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, यक्षादि व गुरु श्रुत की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदिनाथ तीर्थंकराय गोमुखयक्ष चक्रेश्वरीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करें, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, सत्पात्रों को दान देवे ।

इस प्रकार प्रत्येक दिन पूजा करके एक वस्तु का त्याग करके भोजन करे, चार महिने तक ऐसा करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, अन्त में कार्तिक अष्टाह्निका में

उद्यापन करे, उस समय आदिनाथ विधान (भक्तामर) करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

मणिमाली सेठ ने मुनिराज के जले हुये सिर में लक्षमूल तैल लगाकर अभय-दान किया था, उसके फल से स्वर्ग मोक्ष को प्राप्त किया ।

कथा में राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े ।

अथ कापोतलेश्यानिवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करे । अन्तर केवल इतना है कि चैत्र कृष्णा १३ के दिन एकाशन करे । १४ के दिन उपवास करे, पार्श्वनाथ भगवान तीर्थंकर की पूजा, जाप, मांडला आदि करे ।

अथ कृष्णलेश्यानिवारण व्रत कथा ।

विधि :—पहले के समान सब विधि करे । अन्तर केवल इतना है कि चैत्र कृष्णा ११ के दिन एकाशन करे, १२ के दिन उपवास करे । नमिनाथ भगवान की पूजा, मन्त्र, जाप, मांडला आदि करे ।

कर्मनिर्जरा व्रत की विधि

कर्मनिर्जरस्तु भाद्रपदशुक्लामेकादशीमारभ्य चतुर्दशीपर्यन्तं भवति । हानिवृद्धौ च स एव क्रमः ज्ञातव्यः ।

अर्थ :—कर्मनिर्जराव्रत भादों सुदी एकादशी से लेकर भादों सुदी चतुर्दशी तक चार दिन किया जाता है । तिथिहानि और तिथिवृद्धि होने पर पूर्वोक्त क्रम ही व्रत की व्यवस्था के लिए ग्रहण किया गया है ।

विवेचन :—कर्मनिर्जरा व्रत के सम्बन्ध में दो मान्यताएं प्रचलित हैं—प्रथम मान्यता भादों सुदी एकादशी से लेकर चतुर्दशी तक व्रत करने की है । दूसरी मान्यता के अनुसार आषाढ़ सुदी चतुर्दशी, श्रावण सुदी चतुर्दशी, भादों सुदी चतुर्दशी एवं आश्विन सुदी चतुर्दशी इन चार तिथियों को व्रत करने की है । ये चारों उपवास क्रमशः सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यग्चारित्र और सम्यक् तप के हेतु एक वर्ष

के भीतर किये जाते हैं। व्रत के दिनों में सिद्ध भगवान की पूजा की जाती है तथा '**ॐ ह्रीं समस्तकर्मरहिताय सिद्धाय नमः**" अथवा "**ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्र-तपसे नमः**" मन्त्र का जाप व्रत के दिनों में तीन बार करना होता है। नित्यपूजा, चतुर्विंशतिजिनपूजा, विशेषतः सिद्धपूजा के अनन्तर—

"**ॐ ह्रीं सामग्री विशेषविश्लेषिताशेष कर्ममल कलंकतयासांसिद्धि कात्यन्तिक विशुद्ध विशेषाविर्भावादभिव्यक्त परमोत्कृष्ट सम्यक्त्वादि गुणाष्टक विशिष्टाम् उदितोदितस्वपरप्रकाशात्मकचिच्चमत्कार मात्र पर मन्त्र परमानन्दैकमयीं निष्पीतानन्तपर्यायतयैक किञ्चिदनवरतास्वाह्यमा नलोकोत्तरपरममधुरस्वरसभरनिर्भरं कौटस्थमधिष्ठितां परमात्मनामासंसारमनासादितपूर्वामपुनरावृत्त्याधितिष्ठतां मङ्गल-लोकोत्तमशरणभूतानां सिद्धपरमेष्ठिनां स्तवनं करोमि।**"

मन्त्र को पढ़ दोनों हाथों से पुष्पों की वर्षा करते हुए सिद्ध परमेष्ठी की स्तुति करनी चाहिए।

केवलज्ञान व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी के दिन स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहन कर हाथ में पूजाभिषेक का सामान लेकर मन्दिर में जावे, वहां मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे ईर्यापथ शुद्धि क्रिया करके, जिनेन्द्र भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापना करके पंचामृताभिषेक करे। अष्टद्रव्य से पूजा करे, जिनवाणी, गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की यथायोग्य पूजा सम्मान करे। जिनेन्द्र भगवान के सामने नौ अक्षत के पुञ्ज रखकर नौ प्रकार का उन पुञ्जों पर नैवेद्य रखे, सुगंधित फूलों को माला भगवान के चरणों में चढ़ावे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ सुगन्धित फूलों से जाप्य करे, जिनसहस्रनाम पढ़कर णमोकार मन्त्र की एक माला फेरे, यह व्रत कथा पढ़कर चौबीस तीर्थंकर का चरित्र अवश्य पढ़े।

इसी विधिक्रम से कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी के दिन भी पूजा करे, इस प्रकार नौ चतुर्दशी तक यह व्रत की विधि करना है, अन्त में कार्तिक मास की शुक्ला चतुर्दशी के दिन व्रत का उद्यापन करना है, भगवान का नौ कलशों से महाभिषेक पूजा करके पहले के समान ही अष्ट द्रव्य से पूजा करे, अन्त में एक महाअर्घ्य की थाली में रखे। उस अर्घ्य के साथ एक सोने का पुष्प बनवा कर रखे, अर्घ्य को थाली हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य भगवान को चढ़ा कर पूजा विसर्जन करे, चार महिने तक भगवान का क्षीर (दूध) से अभिषेक नित्य करे, प्रत्येक चतुर्दशी को उपवास करे, चतुर्विध संघ को आहारदान देकर स्वयं पारणा करना। इस प्रकार व्रत की पूर्ण विधि है।

कथा

इस जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में पुष्कलावती नाम का एक बहुत बड़ा देश है। उसके अन्दर पुष्करण नाम का एक अत्यन्त रमणीय नगर है, वहां पहले यशोधर नाम का एक बलवान राजा अपनी यशोमती रानी तथा वज्रदंत पुत्रादिक के साथ में अत्यन्त सुख से राज्य करता था। जब राजपुत्र यौवनावस्था को प्राप्त हुआ तब चौंसठ कलाओं में अत्यन्त निपुण हो गया।

एक दिन वनपालक ने राजा को एक कमल पुष्प लाकर दिया। राजा ने कमल को देखा, उस कमल में एक काला भ्रमर मरा हुआ था, मरे हुए भ्रमर को देखकर राजा को वैराग्य उत्पन्न हो गया। अपने पुत्र वज्रदंत को राज्य सिंहासन पर बैठाकर, वन में गया और वहां एक निर्ग्रन्थ मुनिश्वर के पास जिनदीक्षा को ग्रहण कर लिया और घोर तपश्चरण करके घातिया कर्मों का नाश कर केवलज्ञान को प्राप्त कर लिया। इन्द्र ने गंधकुटी की रचना की, देव लोगों ने आकर भक्ति उत्साह से ज्ञानोत्सव मनाया।

इधर वज्रदंत की आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ, पिता को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। यह दोनों ही समाचार एक साथ सुनकर राजा को बहुत आनन्द हुआ। सिंहासन से नीचे उतर कर सात पेंड जा भगवान को नमस्कार किया, पुरजन-परिजन साथ में लेकर पैदल ही भगवान के दर्शन के लिए गया। वहां जाकर गंध

कुटी की तीन प्रदक्षिणा देकर मनुष्यों के कोठे में जाकर बैठ गये । कुछ समय भगवान का उपदेश सुनकर हाथ जोड़ नमस्कार करते हुए कहने लगा कि हे भगवन हमारी आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ है सो क्या कारण है ?

तब भगवान कहने लगे कि हे राजन ! आपने पूर्व भव में केवलज्ञान व्रत यथाविधि पाला था, उसके पुण्य से आज आपको चक्ररत्न की प्राप्ति हुई है । ऐसा सुनते ही राजा को बहुत आनन्द हुआ और केवलज्ञान व्रत की विधि क्या है, पुनः विचार करने लगा । भगवान ने राजा को सब विधि कह सुनाई, राजा ने अत्यन्त हर्षपूर्वक पुनः उस व्रत को स्वीकार किया और नगर को वापस चला आया । आगे कालानुसार व्रत को पूर्ण करके व्रत का उद्यापन किया । इस व्रत के प्रभाव से बहुत दिनों तक चक्रवर्ती की विभूति का सुख भोगकर अन्त में जिनदीक्षा ग्रहण की और घोर तपश्चरण करके मोक्ष गये । इस प्रकार इस व्रत की विधि है ।

कृष्णदेवकी व्रत अथवा संतानरक्षा व्रतकथा

श्रावण शुक्ल एकादशी को स्नान कर शुद्ध हो शुद्ध वस्त्र पहन कर जिनमन्दिर में जाकर वासुपूज्य भगवान की यक्षयक्षि सहित प्रतिमा स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे, आदिनाथ से वासुपूज्य तक प्रत्येक तीर्थंकर की अलग-अलग पूजा करे । इसमें बारह प्रकार का नैवेद्य चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वासुपूज्य तीर्थंकराय यक्षयक्षि सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, जाप्य में सुवर्ण पुष्प चढ़ावे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, एक महाअर्घ्य थाली में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य से रहे, दूसरे दिन चतुर्विध संघ को दान देवे, फिर स्वयं पारणा करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय वासुपूज्य भगवान का विधान करे, बारह प्रकार का नैवेद्य चढ़ावे, मन्दिर में उपकरण देवे, चतुर्विधसंघ को आहारादि तथा उपकरण दान करे ।

कथा

इस व्रत की कथा में कृष्ण के जन्म से लेकर गोकुल में बाल-लीला तक

पढ़े । पूर्वोक्त कथा से मिलती-जुलती इसकी कथा है, इसलिये यहां नहीं दिया ।

कुम्भसंक्रमण व्रत कथा

माघ महिने में कुम्भसंक्रमण आता है, उसी दिन इस व्रत को और पूजा विधान को करे, श्रेयांसनाथ की अभिषेक पूजा करे, मंत्रादिक सब पूर्ववत् जाप्य करे, कथा भी उसी प्रकार पढ़े ।

अथ कुनय व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ला १३ को एकाशन व १४ के दिन उपवास करे, जाप णमोकार मन्त्र का करे, एक दम्पति को भोजन करावें, वस्त्र आदि दान दे ।

कथा

पहले भोगपुर नगर में अरिदमन नामक राजा गुणमति नामक पट्टराणी के साथ राज्य कर रहा था । उसको सिंहघट नामक पुत्र था । उसकी मनोरमा नामक स्त्री थी । वसुदत राजश्रेष्ठी था । उसकी पत्नी वसुमति थी, इत्यादि उनका परिवार था । उन सबने अमलबुद्धि व विमलबुद्धि चारण ऋद्धि मुनिश्वर के पास यह व्रत लिया । इससे उनको स्वर्ग सुख मिला व अनुक्रम से मोक्ष सुख भी मिला । ऐसा यह दृष्टांत है ।

कल्याणमाला व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन, इन तीनों अष्टान्हिका पर्वों में १० दिन व्रतीक प्रातः स्नान करके अभिषेक पूजा का सामान लेकर जिन मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर धरणेन्द्र पद्मावति सहित पार्श्वप्रभु की मूर्ति स्थापित करके पंचामृताभिषेक करे, जिनवाणी और गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की अर्चना करे, भगवान के आगे एक पाटे पर अष्ट स्वस्तिक निकाल कर उनके ऊपर पान रखे । फल, पुष्प, सुपारी, केला, भिगोये हुये चने के पृथक २ पुंज रख कर, पांच प्रकार का नैवेद्य चढ़ावे, भगवान को पुष्पों की माला चरणों में चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकराय धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे और व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ्य हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य चढ़ा देवे, शक्ति प्रमाण उपवास या एकभुक्ती करके ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, सत्पात्रों को आहार दान देवे, इसी प्रकार उसी तिथि को प्रत्येक महिने में पूजा करे, इस तरह चार महिने पूर्ण होने पर आगे के नन्दीश्वर पर्व की पूर्णिमा को उद्यापन करे, उस समय नवीन पार्श्वनाथ प्रभु की प्रतिमा को लाकर पंच कल्याणक प्रतिष्ठा करे, अथवा पार्श्वनाथ विधान करके महाअभिषेक करे, नाना प्रकार की मिठाइयों को पचास जगह रखकर चौबीस बार नैवेद्य से पूजा करे, एक थाली में ५४ पान लगाकर गंध, अक्षत, पुष्प, फल, सुपारी, नैवेद्य, एक सोने का पुष्प, एक सोने की सुपारी, नारियल रखकर महाअर्घ्य बनाकर—

ॐ ह्रीं परम कल्याण परंपरा धारणाय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र को बोलते हुये, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, पांच वायना अच्छे-अच्छे पदार्थ डालकर तैयार करे, उसमें से एक पार्श्वनाथ, एक जिनवाणी, एक गुरु, एक पद्मावती को चढ़ाकर नमस्कार करके एक स्वयं लेवे, घर पर जाकर सद्पात्रों को दान देवे, स्वयं पारणा करे, दीन दुःखी लोगों को आवश्यक वस्तु प्रदान करके संतुष्ट करे, इस प्रकार व्रत का विधान है ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में आर्यखंड है, उस आर्यखंड में क्षोणीभूषण नाम का एक देश है, उस देश में भूतिलक नाम का एक गांव है, उस गांव में धर्मपाल नाम का राजा राज्य करता था, राजा की धर्मपालिनी रानी थी, दोनों ही सुख से राज्य का उपभोग कर रहे थे उस नगर के उद्यान में एक दिन दिव्यज्ञानी भद्रसागर नाम के महामुनिश्वर आये, राजा को समाचार मिलते ही परिवार सहित दर्शन के लिये गया, तीन प्रदक्षिणा लगाकर नमस्कार करता हुआ धर्मोपदेश सुनने के लिये निकट में बैठ गया ।

कुछ समय के बाद रानी हाथ जोड़कर नमस्कार करती हुई मुनिराज को कहने लगी कि हे गुरो ! मुझे परम सुख का कारण कोई एक व्रत दो जिससे मेरा भव निवारण हो, तब मुनिराज कहने लगे कि हे रानी ! तुम कल्याणमाला व्रत करो, तुम्हारे लिये यही योग्य है और व्रत की विधि कह सुनाई, रानी ने श्रद्धा भक्ति से व्रत को ग्रहण किया और वापस घर को आ गई । नगर में आकर यथाविधि व्रत को पालन किया, व्रत का उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से दोनों स्वर्ग में गये, पुनः मनुष्य जन्म पाकर जिनदीक्षा ग्रहण की और मोक्ष में गये, यह इस व्रत का फल है ।

अथ कल्पकुज व्रत कथा

तीनों अष्टाह्निका के अन्दर कोई भी अष्टाह्निका के ८ अष्टमी को व्रत धारण करने वाला स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजा सामग्री लेकर जिन मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, अभेषक पीठ पर भगवान को स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत, गुरु को पूजा करे, यक्षयक्षिणी और क्षेत्रपाल को अर्घ्य चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अष्टोत्तर सहस्रनाम सहित जिनेन्द्राय यक्षयक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से पुष्प लेकर १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, पुष्प माला भगवान के चरणों में अर्पण करे, एक थाली में अर्घ्य लेकर नारियल रखे, अर्घ्य हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारता हुआ, अर्घ्य भगवान को चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करता हुआ ब्रह्मचर्य का पालन करे, सायंकाल में घी के दीपक से भगवान की आरती उतारे । इसी प्रकार चतुर्दशी पर्यन्त प्रतिदिन पूजा करे, पूर्णिमा को व्रत का उद्यापन करे, उद्यापन के समय जिनेन्द्र प्रभु का महाभिषेक करे, २४ पूरनपुडी बनाकर २४ तीर्थंकर प्रभु को चढ़ावे, बारह जिनवाणी को चढ़ावे, मुनिश्वर को आहार दानादि देवे, फिर स्वयं पारणा करे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में आर्यखंड है, उसमें भूमिभूषण नाम का एक देश है, उस देश में भूमितिलक नाम का नगर है । उस नगर के उद्यान में मतिसागर

नाम के मुनिराज आये, राजा रानी, नगरवासी सब लोग मुनिराज के दर्शन को गये, वहां दर्शन कर मुनिराज का धर्मोपदेश सुना। कुछ समय बाद रानी लक्ष्मीमती कहने लगी कि हे देव ! मुझे कुछ व्रत प्रदान कीजिये, जिससे मेरा भव-भ्रमण समाप्त हो, तब मुनिराज ने कल्पकुज व्रत की विधि कह सुनाई। संतुष्ट होकर रानी ने उस व्रत को ग्रहण किया, और नगर में वापस लौट आये, यथाविधि व्रत का पालन किया, अंत में उद्यापन किया, फलस्वरूप क्रमशः मोक्ष को गई।

अथ कल्पांबर (कल्पामर) व्रत कथा

श्रावण शुक्ला चतुर्दशी को स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर, हाथों में पूजा अभिषेक की सामग्री लेकर जिन मंदिर में जावे, मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, जिनेन्द्र भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर जिनेन्द्र प्रतिमा यक्षयक्षिणी सहित स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की अर्चना करे,

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हत्परमेष्ठिने यक्षयक्षि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, जिन सहस्रनाम पढ़े, णमोकार मंत्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में महाअर्घ्य रखकर हाथ में लेवे, मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मगल आरती उतारे, महाअर्घ्य को चढ़ा देवे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, उपवास करे, दूसरे दिन चतुर्विध संघ को आहारादि देकर स्वयं पारणा करे। इस प्रकार १७ महिने तक इसी तिथि को पूजा कर उपवास करे, व्रत करे, अन्त में उद्यापन करे, उस समय विमानशुद्धि विधान करे, सत्पात्रों को दान देवे, पुरोहित विद्वानों को पंचरत्न का दान देवे।

व्रत कथा में राजा श्रेणिक व रानी चेलना का चरित्र पढ़े।

काम्यव्रतों का फल

एवं पूर्वोक्तमनन्त चतुर्दशी व्रतमपि काम्यमस्ति। काम्यव्रताचरणेन दुःखदारिद्र्यादिकं विलीयते, धनधान्यादिकं वर्धते। चन्दनषष्ठी लब्धिविधान व्रतयोरपि काम्यत्वात् पुत्रपौत्र धनधान्यैश्वर्यविभूतीनां वृद्धिः जायते। विधिपूर्वककाम्यव्रताचरणेन इष्टसिद्धिर्भवति रोगशोकादयः पलायन्ते, अमराः किंकराः भवन्ति, किं बहुना ।। काम्यानि समाप्तानि ।।

अर्थ—इस प्रकार पूर्वोक्त अनन्त चतुर्दशी व्रत भी काम्यव्रत हैं। काम्यव्रतों के पालन करने से दुःख-दरिद्रता, शोक-व्याधि आदि दूर हो जाती हैं और धन, धान्य, ऐश्वर्य आदि की वृद्धि होती है। चन्दनषष्टी और लब्धिविधान व्रतों को भी काम्यव्रत होने से इनका पालन करने पर पुत्र, पौत्र, धन, धान्य, ऐश्वर्य, विभूति आदि की वृद्धि होती है। विधिपूर्वक काम्यव्रतों के आचरण से इष्टसिद्धि होती है। रोग, शोक, व्याधि, आपत्ति आदि दूर हो जाती हैं। अधिक क्या, काम्यव्रतों के आचरण से देव दास बन जाते हैं, सभी प्रकार की कामनाएं सफल हो जाती हैं।

तात्पर्य यह है कि काम्यव्रत शब्द का अर्थ ही है कि जो व्रत किसी कामना से किया जाता है तथा किसी प्रकार की अभिलाषा को पूर्ण करता है, वह काम्य है। इस प्रकार काम्यव्रतों का वर्णन पूर्ण हुआ।

अकाम्यव्रतों का वर्णन

अथाकाम्यं लक्षणपंक्तिसंज्ञकं मेरुपंक्तिसंज्ञकं नन्दीश्वरपंक्तिसंज्ञकं पल्यव्रत विधानमित्यादिकं ज्ञेयम्। आर्षग्रन्थेषु कथाकोषादिषु स्वरूपं ज्ञातव्यम्। अत्र तु विस्तारभयान्न प्रतन्यते, इति अकाम्यानि समाप्तानि ।।

अर्थ :—लक्षणपंक्ति, विमानपंक्ति, मेरुपंक्ति, नन्दीश्वरपंक्ति, पल्यव्रत विधान आदि अकाम्यव्रत हैं। आर्ष ग्रन्थ कथा कोष आदि में इनका स्वरूप बताया गया है, वहीं से अवगत करना चाहिए। यहां विस्तार-भय से नहीं लिखा गया है। इस प्रकार अकाम्य व्रतों का निरूपण समाप्त हुआ।

विवेचन :—स्वर्ग के विमानों में ६३ पटल है। एक-एक पटल की अपेक्षा चार-चार उपवास और एक-एक बेला करना चाहिए। इस प्रकार ६३ पटलों की अपेक्षा कुल २५२ उपवास और ६३ बेला तथा अन्त में एक बेला करके व्रत की समाप्ति कर दी जाती है। इस व्रत को समाप्त करने में ६९७ दिन लगते है। यह लगातार किया जाता है। यों तो इसका प्रारम्भ किसी भी महीने में किया जा सकता है, पर श्रावण से इसे प्रारम्भ करना अच्छा होता है। यदि श्रावण कृष्ण प्रतिपदा को आरम्भ किया तो प्रथम उपवास, अनन्तर पारणा, द्वितीय उपवास, अनन्तर पारणा, तृतीय उपवास, अनन्तर पारणा, चतुर्थ उपवास, अनन्तर पारणा, इसके पश्चात् एक बेला उपवास किया जायेगा। इस प्रकार चार उपवास चार पारणाएं और एक बेला

उपवास किया जायेगा। इस प्रकार चार उपवास चार पारणाएं और एक बेला प्रथम पटल सम्बन्धी किये जायेंगे। इसी तरह ६३ पटलों के उपवास और पारणाएं होंगी, अन्त में एक तेला कर व्रत की समाप्ति कर दी जाती है। अतः कुल उपवास ६३×४= २५२ दिन, ६३ बेला= ६३×२=१२६ दिन, एक तेला=३ दिन। २६२+१२६+३ =३८१ उपवास के दिन। पारणाएं २५२+६३ बेला के अनन्तर +१ तेला के अनन्तर = ३१६ पारणा के दिन ३८१+३१६=६६७ दिन इस व्रत को पूर्ण करने में लगते हैं। इस व्रत के लिए किसी तिथि का विधान नहीं है।

पल्य विधान व्रत में एक वर्ष में ७२ उपवास किये जाते हैं। प्रथम उपवास आश्विन वदी षष्ठी को किया जाता है। द्वितीय आश्विन वदी त्रयोदशी को, तृतीय बेला आश्विन सुदी एकादशी और द्वादशी को की जाती है। इस प्रकार आगे-आगे भी उपवास और बेला की जाती है। क्रम निम्न प्रकार है–

आश्विन वदी	६ तिथि	उपवास	चैत्र वदी	४	उपवास
,, ,,	१३	उपवास	,,	६	उपवास
,, सुदी	११,१२	बेला	,,	८	उपवास
	दो दिन का उपवास		,,	११	उपवास
,, सुदी	१४	उपवास	,, सुदी	७	उपवास
कार्तिकवदी	१२	उपवास	,, ,,	१०	उपवास
,, सुदी	३	उपवास	वैशाख वदी	४	उपवास
,, सुदी	१२	उपवास	,, ,,	१०	उपवास
मार्गशीर्षवदी	११	उपवास	,, सुदी	२–३	बेला-दो दिन का उपवास
,, सुदी	३	उपवास			
,, सुदी	१२	उपवास	,, ,,	६	उपवास
पौष वदी	२	उपवास	,, ,,	१३	उपवास
पौष वदी	अमावस्या	उपवास	ज्येष्ठ वदी	१०	उपवास
,, सुदी	५	उपवास	,, ,,	१३-१४-३०	तेला-तीन दिन का उपवास
,, सुदी	७	उपवास			

पौष पूर्णिमा उपवास
माघ वदी ४ उपवास
,, १४ उपवास
,, सुदी ७-८ बेला-दो दिन का उपवास
,, १० उपवास
फाल्गुन वदी ५-६ बेला-दो दिन का उपवास
फाल्गुन सुदी १ उपवास
फाल्गुन सुदी ११ उपवास
चैत्र वदी १-२ बेला-दो दिन का उपवास
श्रावण वदी १४ उपवास
श्रावण सुदी ३ उपवास
,, ,, १५ उपवास
भादों वदी २ उपवास
भादों वदी ६-७ बेला-दो दिन का उपवास
,, १२ उपवास
भादों सुदी ५ ६ ७ तेला-तीन दिन का उपवास

ज्येष्ठ सुदी ८ उपवास
,, ,, १० उपवास
,, ,, १५ उपवास
आषाढ़ वदी १० उपवास
,, ,, १३-१४-३० तेला-तीन दिन का उपवास
,, सुदी ८ उपवास
,, ,, १० उपवास
,, ,, १५ उपवास
श्रावण वदी ४ उपवास
,, ,, ६ उपवास
,, ,, ८ उपवास
भादों सुदी ९ उपवास
,, ,, ११-१२-१३ तेला-तीन दिन का उपवास
,, ,, १५ उपवास

इस प्रकार कुल ४८ उपवास, ४ तेला और ६ बेला किये जाते हैं। अतएव ४८+१२+१२=७२ उपवास होते हैं। व्रत के दिन गृहारम्भ त्याग कर धर्मध्यानपूर्वक समय को बिताया जाता है। शेष अकाम्य व्रतों का निर्णय पहले किया जा चुका है।

उत्तम फलदायक व्रतों का निर्देश

अथोत्तमार्थानि रत्नत्रयषोडशकारणाष्टाह्निकदशलाक्षणिक पञ्चकल्याणक महापञ्चकल्याणक सिंहनिष्क्रीडितश्रुतज्ञानसूत्र जिनेन्द्र माहात्म्यत्रिलोकसारघाति-

क्षयध्यानपंक्तिचारित्रशुद्धिगुणपंक्तिप्रमादपरिहारसंयमपंक्ति प्रतिष्ठाकारण महोत्साव-दिकानि व्रतानि उत्तमार्थानि ज्ञेयानि । एतेषां विशेषस्तु आर्षग्रन्थेभ्यो ज्ञेयः ।

अर्थ :—रत्नत्रय, षोड़शकारण, अष्टान्हिका, दशलक्षण, पञ्चकल्याणक, महापञ्चकल्याणक, सिंहनिष्क्रीड़ीत, श्रुतज्ञानसूत्र, जिनेन्द्रमाहात्म्य, त्रिलोकसार घातिक्षय, ध्यानपंक्ति, चारित्रशुद्धि, गुणपक्ति, प्रमादपरिहार संयमपक्ति, प्रतिष्ठाकारण महोत्सव और संन्यासमहोत्सव आदि व्रत उत्तमार्थसंज्ञक होते हैं । इनका विशेष वर्णन आर्षग्रन्थों से अवगत करना चाहिए ।

विवेचन :—श्रुतज्ञान व्रत में सोलह प्रतिपदाओं के सोलह उपवास, तीन तृतीयाओं के तीन उपवास, चार चतुर्थियों के चार उपवास, पांच पंचमियों के पांच उपवास, छः षष्ठियों के छः उपवास, सात सप्तमियों के सात उपवास, आठ अष्टमियों के आठ उपवास, नव नौमियों के नौ उपवास, बीस दशमियों के बीस उपवास, ग्यारह एकादशियों के ग्यारह उपवास, बारह द्वादशियों के बारह उपवास, तेरह त्रयोदशियों के तेरह उपवास, चौदह चतुर्दशियों के चौदह उपवास, पन्द्रह पूर्णमासियों के पन्द्रह उपवास एवं पन्द्रह अमावस्याओं के पन्द्रह उपवास किये जाते हैं ।

पंचकल्याणक व्रत में जब-जब चौबीस तीर्थंकरों के पंचकल्याणक हों, उन-उन तिथियों को उपवास करने चाहिए ।

अथ कंदर्पसागर व्रत कथा

मार्गशीर्ष शुक्ल अष्टमी के दिन प्रातःकाल स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजा सामग्री हाथ में लेकर जिनमन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करके, भगवान को नमस्कार करे ।

पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा धरणेन्द्र पद्मावति सहित स्थापित कर एक कलश में, दूध, घी, शक्कर का मिश्रण कर प्रथम उसका अभिषक करे, उसके बाद पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की भी अर्चना करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीपार्श्वनाथ तीर्थंकराय धरणेन्द्र पद्मावति सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, १०८ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, पार्श्वनाथ चरित्र पढ़े, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में नौ पान रखकर उन पानों के ऊपर अर्घ्य रखे, अर्घ्य थाली में रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, धर्मध्यान से समय व्यतीत करे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, दूसरे दिन पारणा करे।

इसी क्रम से १६ अष्टमी को पूजा कर उपवास करे, व्रत का उद्यापन करे, उस समय पार्श्वनाथ विधान कर महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

श्रेणिक राजा की कथा पढ़े।

श्रुति कल्याणक

लाइन से पांच दिन के पांच उपवास, फिर ५ दिन तक कांजिहार, फिर ५ दिन एकस्थान (एकाशन), फिर ५ दिन रूक्षाहार, फिर ५ दिन मुनीव्रत को पालन समान अन्तराय पालन करके मौन से आहार ग्रहण करे। इस प्रकार लाइन से २५ दिन होते हैं। व्रत में त्रिकाल पंचनमस्कार मन्त्र का जाप करना।

केवल्यसुखदाष्टमी व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल सप्तमी के दिन एकाशन करके अष्टमी के दिन स्नानकर शुद्ध वस्त्र पहिन कर अभिषेक-पूजा का सामान लेकर जिनमन्दिरजी में जावे। मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे। जिनेश्वर की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापित कर पंचामृत अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे। श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी की व क्षेत्रपाल की पूजा करे, २४ पुरन पुड़ी (मीठी रोटी) करके चढ़ावे, श्रुत व गणधर की पूजा करे यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की भी अर्चना करे।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्परमेष्ठिने नमः स्वाहा।

इस मन्त्र को १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे। णमोकार मन्त्र का भी १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े। बाद में अर्घ्य थाली में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे, उपवास करे, दूसरे दिन सत्पात्रों को दान देवे, स्वयं पारणा करे, प्रत्येक अष्टमी व चतुर्दशी के

दिन उपरोक्त उपवास करे, पूजा करे, अन्त में कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा के दिन उद्यापन करे, उस समय जिनेन्द्र प्रभु का महाभिषेक पूजा करके भावागन के आगे सप्तधान्य का ढेर अलग-अलग लगाकर २४ प्रकार का नैवेद्य बनाकर चढ़ावे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में नेपाल देश है, उस देश में श्रीपुर नाम का नगर है। उस नगर का राजा भूपाल अपनी रानी रूपवती सहित राज्य करता था। उस नगरी में श्रीवर्म नाम का राजश्रेष्ठी अपनी श्रीमती सेठानी के साथ रहता था। उसके नयसेन, धरसेन, कृतीसेन, कालसेन, रूद्रसेन, वरसेन, देवसेन, महासेन, अमरसेन और धान्यसेन, ऐसे दस पुत्रों सहित व एक कन्या बन्धुश्री सहित रहता था। जब कन्या यौवनवती हुई तब काश्मीर देश के चित्रांगत नगर में धनमित्र सेठ के पुत्र धनपाल का उस बन्धुश्री से विवाह कर दिया। एक दिन उस नगर के उद्यान में पांच सौ साधुओं के संघ सहित भूतानान्द नाम के महामुनिश्वर पधारे।

धनपान श्रेष्ठी को समाचार मिलते ही वह अपने परिवार सहति उद्यान में मुनि दर्शन को गया। मुनिराज की तीन प्रदक्षिणा लगाकर दर्शन करता हुआ धर्मोपदेश सुनने के लिए सभा में जाकर बैठा। कुछ समय उपदेश सुनकर बन्धुश्री कहने लगी—हे स्वामिन ! हमको इतना धन-सम्पत्ति का वैभव प्राप्त हुआ है वह कौनसे पुण्य से प्राप्त हुआ है ? मुनिराज उसके वचन सुनकर अवधिज्ञान के बल से पूर्व भव का वृतान्त कहने लगे।

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगध नाम का देश है। उस देश में राजगृह नाम का नगर है, वहां प्रतापधर राजा अपनी विजयादेवी रानी के साथ राज्य करता था। उस नगर में एक अत्यन्त दीन-दरिद्री कनकप्रभ नाम का मनुष्य रहता था, उसकी कनकमाला नाम की स्त्री थी, वे दोनों बहुत दुःख से समय निकालते थे, एक दिन देवपाल नामक निर्ग्रन्थ मुनि आहार के लिये उस नगर में आये तथा उन दोनों पति-पत्नी ने मुनिराज को नवधाभक्तिपूर्वक आहार दान दिया। निरन्तराय आहार होने के बाद मुनिराज को एक पाटे पर बिठाकर अपने दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना

करने लगे कि हे देव ! हमको इस मनुष्य पर्याय में दरिद्रता का दुःख क्यों भोगना पड़ रहा है दुःख-निवारण के लिए उपाय बताओ । तब मुनिराज ने उनको कहा हे भव्य-जीवो ! तुम सुखी होने के लिए केवल सुखदा अष्टमी व्रत का पालन करो। ऐसा कहकर व्रत की सर्व विधि कह सुनाई। तब उन दोनों ने आनन्दित होकर व्रत ग्रहण किया और नगर में वापस लौट आये ।

कुछ समय व्रत का पालन कर उद्यापन किया। व्रत के प्रभाव से धनधान्य से खूब सम्पन्न हुए । कुछ काल सुख भोगकर अन्त में दीक्षा धारण कर समाधि-मरण को प्राप्त किया और स्वर्ग में देव हुए। वहाँ से चल कर तुम धनपाल व बन्धुश्री होकर जनमे हो। ऐसा सुनकर उन दोनों ने पुनः व्रत ग्रहण किया, यथाविधि व्रत को पालन कर समाधिपूर्वक मरे और अच्युत स्वर्ग में देव हुए। क्रम से मोक्ष गये ।

कुजपंचमी व्रत कथा

चैत्रादि बारह महिने में कोई भी एक महिने की मंगलवार पंचमी के दिन व्रतीक स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर जिनमन्दिर में जावे, ईर्यापथ शुद्धिपूर्वक भगवान को नमस्कार करे, नंदादीप लगावे, सुपार्श्वनाथ भगवान की मूर्ति यक्षयक्षि सहित स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे, एक पाटे पर चंदन से सात स्वस्तिक बनाकर ऊपर सात पान रखे, उनके ऊपर क्रमशः अष्टद्रव्य रखे, फिर प्रत्येक तीर्थंकर की जयमाला सहित, आदिनाथ से सुपार्श्वनाथ तक पूजा करे, पंच पकवान चढ़ावे, श्रुत, गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि की व क्षेत्रपाल की भी अर्चना करे ।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथ यक्षयक्षि सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, सहस्रनाम पढ़े, व्रत कथा पढ़े, सुपार्श्वनाथ चरित्र पढ़े। एक थाली में नारियल सहित महाअर्घ्य रखकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, महाअर्घ्य को चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, धर्मध्यान से समय व्यतीत करे, दूसरे दिन आहारदानादि देकर स्वयं पारणा करे ।

इसी प्रकार पांच पूजा उपवास करके व्रत का उद्यापन करे, उस समय सुपार्श्वनाथ भगवान का विधान करे, महाभिषेक करे, ४९ नैवेद्य के टुकड़े चढ़ावे,

सात प्रकार के धान्यों के अलग-अलग ढेर लगाकर ऊपर सात सुवर्णपुष्प रखे, सात वायना तैयार कर भगवान के आगे मात्र रखे, चढ़ावे नहीं, उन वायना के अन्दर एक देव को, एक शास्त्र को, एक गुरु को, एक यक्ष को, एक यक्षिणी को रखे, दो वायना अपने घर ले जावे, चारों प्रकार का दान देवे। इस व्रत को यथाविधि पालन करना चाहिये। इस व्रत का प्रभाव अचित्य है, सब प्रकार का सुख प्रदान करने वाला है।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में अवंति नामक विस्तीर्ण देश है, उसमें उज्जैनी नाम का नगर है, उस नगर में देवपाल राजा अपनी धर्मात्मा रानी लक्ष्मीमति के साथ राजैश्वर्य भोग रहे थे।

एक दिन नगर के उद्यान में श्री पार्श्वसेनजी महामुनि पधारे, राजा को समाचार प्राप्त होते ही, अपने पुरजन-परिजन सहित दर्शन के लिये उद्यान में गया, वहां मुनिराज के दर्शन कर उपदेश सुनने के लिये धर्मसभा में बैठ गया। कुछ समय धर्मोपदेश सुनने के बाद लक्ष्मीमति रानी ने मुनिराज को हाथजोड़ कर प्रार्थना की कि हे गुरुदेव, मेरा आत्मकल्याण हो उसके लिये कोई व्रत प्रदान करो। तब मुनि-राज ने उसको कुजपंचमी व्रत दिया और व्रतविधि कह सुनायी, सब लोग नगर में वापस लौट आये। आगे लक्ष्मीमति रानी ने व्रत को यथाविधि पालन किया, अंत में उद्यापन किया, कुछ वर्ष राज्य सुख भोगकर संन्यासविधि से मरण को प्राप्त किया और स्वर्ग में जाकर देव हुई। आगे मोक्ष को जायेगी।

अथ कर्मदहन व्रत कथा

बारह मासों में से कोई भी महिने में व्रत प्रारम्भ करना, उस दिन स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजाभिषेक का सामान लेकर जिन मन्दिर जो जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे, घी का दीपक जलावे, अभिषेक पीठ पर सिद्ध प्रतिमा और पंचपरमेष्ठि की प्रतिमा स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे, फिर अष्टद्रव्य से अलग-अलग पूजा करे, पंच पकवान चढ़ावे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी की व क्षेत्रपाल की भी पूजा करे।

ॐ ह्रीं अर्हं असि आउसा अनाहत विद्यायै नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, मूलोत्तर कर्मप्रकृति मन्त्रों की अष्टद्रव्य से पूजा करे, प्रत्येक मंत्र पर पुष्प चढ़ावे ।

मूलकर्मप्रकृति मन्त्र—१ ॐ ह्रीं अर्हं पंचविध ज्ञानावरणीय कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २ ॐ ह्रीं अर्हं नवविधदर्शनावरणीयकर्मरहिताय श्री सिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३ ॐ ह्रीं अर्हं द्विविधवेदनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ४ अष्टाविंशतिविधमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५ ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विधायुःकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६ ॐ ह्रीं अर्हं त्रिनवतिविधनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७ ॐ ह्रीं अर्हं द्विविध-गोत्रकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ८ ॐ ह्रीं अर्हं पंचविधांतरायकर्मरहि-ताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ९ ॐ ह्रीं अर्हं अष्टविधमूलकर्मप्रकृतिरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा ।

उत्तरकर्म प्रकृतिमंत्र—१ ॐ ह्रीं अर्हं मतिज्ञानावरणीय कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २ ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतज्ञानावरणीयकर्मरहिताय श्रीसि-द्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३ ॐ ह्रीं अर्हं अवधिज्ञानावरणीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धा-धिपतये नमः स्वाहा । ४ ॐ ह्रीं अर्हं मनःपर्ययज्ञानावरणीयकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५ ॐ ह्रीं अर्हं केवलज्ञानावरणीय कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६ ॐ ह्रीं अर्हं चक्षुर्दर्शनावरणीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७ ॐ ह्रीं अर्हं अचक्षुर्दर्शनावरणीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ८ ॐ ह्रीं अर्हं अवधिदर्शनावरणीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ९ ॐ ह्रीं अर्हं केवलदर्शनावरणीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १० ॐ ह्रीं अर्हं निद्रादर्शनावरणीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ११ ॐ ह्रीं अर्हं निद्रानिद्रादर्शनावरणीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १२ ॐ ह्रीं अर्हं प्रचलादर्शनावरणीय कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १३ ॐ ह्रीं अर्हं प्रचला प्रचलादर्शनावरणीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १४ ॐ ह्रीं अर्हं स्त्यानगृद्धिदर्शनावरणीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये

नमः स्वाहा । १५ ॐ ह्रीं अर्हं सातावेदनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १६ ॐ ह्रीं अर्हं असातावेदनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १७ ॐ ह्रीं अर्हं सम्यक्त्वदर्शनमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १८ ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्यात्वदर्शनमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १९ ॐ ह्रीं अर्हं सम्यग्मिथ्यात्वदर्शनमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २० ॐ ह्रीं अर्हं हास्यनोकषाय चारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २१ ॐ ह्रीं अर्हं रतिनोकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २२ ॐ ह्रीं अर्हं अरतिनोकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २३ ॐ ह्रीं अर्हं शोकनोकषायचारित्र मोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २४ ॐ ह्रीं अर्हं भयनोकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २५ ॐ ह्रीं अर्हं जुगुप्सानोकषाय चारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २६ ॐ ह्रीं अर्हं स्त्रीवेदनोकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २७ ॐ ह्रीं अर्हं पुंवेदनोकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २८ ॐ ह्रीं अर्हं नपुंसकवेदनोकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । २९ ॐ ह्रीं अर्हं अनंतानुबंधिक्रोधकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३० ॐ ह्रीं अर्हं अनंतानुबंधिमानकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३१ ॐ ह्रीं अर्हं अनंतानुबंधिमायाकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३२ ॐ ह्रीं अर्हं अनंतानुबंधि लोभकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३३ ॐ ह्रीं अर्हं अप्रत्याख्यानक्रोधकषायचारित्रमोहनीय कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३४ ॐ ह्रीं अर्हं अप्रत्याख्यानमानकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३५ ॐ ह्रीं अर्हं अप्रत्याख्यानमायाकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३६ ॐ ह्रीं अर्हं अप्रत्याख्यान लोभकषाय चारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३७ ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्याख्यानक्रोधकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३८ ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्याख्यानमानकषायचारित्रमोह-

नीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ३६ ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्याख्यानमाया-कषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ४० ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्याख्यानलोभकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ४१ ॐ ह्रीं अर्हं संज्वलन क्रोधकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ४२ ॐ ह्रीं अर्हं संज्वलनमानकषायचारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ४३ ॐ ह्रीं अर्हं संज्वलनमायाकषायचारित्रमोहनीयकर्म रहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ४४ ॐ ह्रीं अर्हं संज्वलनलोभकषाय-चारित्रमोहनीयकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ४५ ॐ ह्रीं अर्हं नरकायुःकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ४६ ॐ ह्रीं अर्हं तिर्यगायुः कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ४७ ॐ ह्रीं अर्हं मनुष्यायुः कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ४८ ॐ ह्रीं अर्हं देवायुःकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ४६ ॐ ह्रीं अर्हं नरकगति नामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५० ॐ ह्रीं अर्हं तिर्यग्गतिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५१ ॐ ह्रीं अर्हं मनुष्यगतिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५२ ॐ ह्रीं अर्हं देवगतिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५३ ॐ ह्रीं अर्हं एकेंद्रियजातिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५४ ॐ ह्रीं अर्हं द्वींद्रियजातिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५५ ॐ ह्रीं अर्हं त्रींद्रियजातिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५६ ॐ ह्रीं अर्हं चतुरिंद्रियजातिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५७ ॐ ह्रीं अर्हं पंचेंद्रियजातिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५८ ॐ ह्रीं अर्हं औदारिकशरीरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ५६ ॐ ह्रीं अर्हं वैक्रियिक शरीरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६० ॐ ह्रीं अर्हं आहारकशरीरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६१ ॐ ह्रीं अर्हं तैजसशरीरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६२ ॐ ह्रीं अर्हं कार्मणशरीरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६३ ॐ ह्रीं अर्हं औदारिकांगोपांगनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६४ ॐ ह्रीं अर्हं वैक्रियिकांगोपांगनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६५ ॐ ह्रीं अर्हं

आहारकांगोपांगनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६६ ॐ ह्रीं अर्हं निर्माणनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६७ ॐ ह्रीं अर्हं औदारिकबंधननामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६८ ॐ ह्रीं अर्हं वैक्रियिकबंधननामकर्मरहिताय श्री सिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६९ ॐ ह्रीं अर्हं आहारकबंधन नामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७० ॐ ह्रीं अर्हं तैजसबंधननामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७१ ॐ ह्रीं अर्हं कार्मणबंधननामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७२ ॐ ह्रीं अर्हं औदारिकसंघातनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७३ ॐ ह्रीं अर्हं वैक्रयिकसंघातनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७४ ॐ ह्रीं अर्हं आहारकसंघातनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७५ ॐ ह्रीं अर्हं तैजससंघातनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७६ ॐ ह्रीं अर्हं कार्मणसंघातनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७७ ॐ ह्रीं अर्हं समचतुरस्रसंस्थाननामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७८ ॐ ह्रीं अर्हं न्यग्रोधपरिमंडलसंस्थाननामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ७९ ॐ ह्रीं अर्हं स्वातिसंस्थाननामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ८० ॐ ह्रीं अर्हं वामनसंस्थाननामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ८१ ॐ ह्रीं अर्हं कुब्जकसंस्थाननामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ८२ ॐ ह्रीं अर्हं हुण्डकसंस्थाननामकर्मरहिताय नमः स्वाहा । ८३ ॐ ह्रीं अर्हं वज्रवृषभनाराचसंहनननामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ८४ ॐ ह्रीं अर्हं वज्रनाराचसंहनन नामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ८५ ॐ ह्रीं अर्हं नाराचसंहनन नामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ८६ ॐ ह्रीं अर्हं अर्धनाराच संहनननामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ८७ ॐ ह्रीं अर्हं कीलकसंहनन नामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ८८ ॐ ह्रीं अर्हं असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन नामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ८९ ॐ ह्रीं अर्हं स्निग्धस्पर्शनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ९० ॐ ह्रीं अर्हं रूक्षस्पर्शनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ९१ ॐ ह्रीं अर्हं शीतस्पर्शनामकर्मरहिताय सिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ९२ ॐ ह्रीं अर्हं उष्णस्पर्शनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ९३

ॐ ह्रीं अर्हं गुरुस्पर्शनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६४ ॐ ह्रीं अर्हं लघुस्पर्शनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६५ ॐ ह्रीं अर्हं मृदुस्पर्शनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६६ ॐ ह्रीं अर्हं कर्कशस्पर्शनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६७ ॐ ह्रीं अर्हं तिक्तरसनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६८ ॐ ह्रीं अर्हं कटुरसनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ६९ ॐ ह्रीं अर्हं कषायरसनाम कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १०० ॐ ह्रीं अर्हं आम्लरसनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १०१ ॐ ह्रीं अर्हं मधुररसनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १०२ ॐ ह्रीं अर्हं सुगंधनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १०३ ॐ ह्रीं अर्हं दुर्गंधनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १०४ ॐ ह्रीं अर्हं श्वेतवर्णनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १०५ ॐ ह्रीं अर्हं पीतवर्णनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १०६ ॐ ह्रीं अर्हं हरितवर्णनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १०७ ॐ ह्रीं अर्हं अरुण नाम कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १०८ ॐ ह्रीं अर्हं कृष्णवर्णनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १०९ ॐ ह्रीं अर्हं नरकगत्यानुपूर्वी नाम कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ११० ॐ ह्रीं अर्हं तिर्यग्गत्यानुपूर्वीनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १११ ॐ ह्रीं अर्हं मनुष्यगत्यानुपूर्वीनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ११२ ॐ ह्रीं अर्हं देवगत्यानुपूर्वीनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ११३ ॐ ह्रीं अर्हं अगुरुलघुनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ११४ ॐ ह्रीं अर्हं उपघातनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ११५ ॐ ह्रीं अर्हं परघातनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ११६ ॐ ह्रीं अर्हं आतपनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ११७ ॐ ह्रीं अर्हं उद्योतनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ११८ ॐ ह्रीं अर्हं उच्छ्वास निवास नामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । ११९ ॐ ह्रीं अर्हं प्रशस्तविहायोगतिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १२० ॐ ह्रीं अर्हं अप्रशस्तविहायोगतिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १२१ ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्येक शरीरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा ।

१२२ ॐ ह्रीं अर्हं साधारणशरीरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १२३ ॐ ह्रीं अर्हं त्रसनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १२४ ॐ ह्रीं अर्हं स्थावरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १२५ ॐ ह्रीं अर्हं सुभगनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १२६ ॐ ह्रीं अर्हं दुर्भगनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १२७ ॐ ह्रीं अर्हं सुस्वरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १२८ ॐ ह्रीं अर्हं दुःस्वरनामकर्मरहिताय नमः स्वाहा । १२९ ॐ ह्रीं अर्हं शुभनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १३० ॐ ह्रीं अर्हं अशुभनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १३१ ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १३२ ॐ ह्रीं अर्हं बादरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १३३ ॐ ह्रीं अर्हं पर्याप्तिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १३४ ॐ ह्रीं अर्हं अपर्याप्तिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १३५ ॐ ह्रीं अर्हं स्थिरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १३६ ॐ ह्रीं अर्हं अस्थिरनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १३७ ॐ ह्रीं अर्हं आदेयनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १३८ ॐ ह्रीं अर्हं अनादेयनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १३९ ॐ ह्रीं अर्हं यशःकीतिनाम कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १४० ॐ ह्रीं अर्हं अयशःकीर्तिनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १४१ ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थंकरत्वनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १४२ ॐ ह्रीं अर्हं उच्चैर्गोत्रनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १४३ ॐ ह्रीं अर्हं नीचैर्गोत्रनामकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १४४ ॐ ह्रीं अर्हं दानांतरायकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १४५ ॐ ह्रीं अर्हं लाभांतराय कर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १४६ ॐ ह्रीं अर्हं भोगांतरायकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १४७ ॐ ह्रीं अर्हं उपभोगांतरायकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १४८ ॐ ह्रीं अर्हं वीर्यान्तरायकर्मरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा । १४९ ॐ ह्रीं अर्हं उत्तरकर्मप्रकृतिरहिताय श्रीसिद्धाधिपतये नमः स्वाहा ।

ऊपर लिखे हुये मन्त्रों का अलग अलग जाप्य करना चाहिये और अर्घ भी अलग-अलग चढ़ाना चाहिये, प्रत्येक मन्त्रों को अलग-अलग पुष्प लेकर जाप्य १०८ बार करना चाहिये, १०८ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य करना चाहिये, सहस्र नाम पढ़े, तत्त्वार्थसूत्र पढ़े, व्रत कथा पढ़े।

एक थाली में अर्घ्य लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, व्रत के समय ब्रह्मचर्य पालन करे, सत्पात्रों को दान देवे।

इस प्रकार शक्ति अनुसार प्रत्येक महिने के ४ से १० पर्यन्त पूजा व उपवास करे, मन्त्रानुसार पूजा व उपवास पूर्ण होने पर व्रत का उद्यापन करे, उस समय उद्यापन करे, उस समय कर्मदहन विधान करे, महाभिषेक भगवान का करे, चतुर्विध संघ को दान देवे, मन्दिर में आवश्यक उपकरण देवे, एक प्रतिमा सिद्ध भगवान की लाकर प्रतिष्ठा करावे।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

कर्मनिर्जरा व्रत

आश्विन शुक्ल ५ के दिन व्रत ग्रहण जिसने किया है ऐसा व्रतीक प्रासुक पानी से स्नान करके, शुद्ध वस्त्र पहनकर मन्दिर जावे। मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा देकर ईर्या पथ शुद्धि क्रिया करता हुआ भगवान को भक्ति से नमस्कार करे। व्रत-मण्डप को शृंगारित करके ऊपर चंदोवा बांधे, मण्डप वेदी के ऊपर पांच वर्णों से अष्टदल कमल यन्त्र बनावे, उसके सामने चतुरस्त्र पंचमण्डल निकाले, मण्डल वेदिका के ऊपर आठ मंगल कलशों को सजाकर रखे। अष्टमंगल द्रव्य रखे। मण्डल के मध्य में एक सुशोभित कुम्भ रखें। एक थाली में पांच पान पृथक् २ रखकर उन पानों पर गन्ध, अक्षत, पुष्प, फलों को रखकर उस थाली को उस कुम्भ पर रखे। उसके बाद अभिषेक पीठ पर पंचपरमेष्ठि की प्रतिमा यक्षयक्षिणि सहित स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे। भगवान के आगे एक पाटा पर पांच स्वस्तिक निकाल कर इन स्वस्तिकों पर पान पृथक्-पृथक् रखे। उसके ऊपर गन्ध, अक्षत, पुष्प, फलादि

रखकर पंचपरमेष्ठि की मूर्ति को मण्डल वेदिका के ऊपर कुम्भ के ऊपर स्थापित करे। अष्टद्रव्य से पूजा करे। जिनवाणी, गुरु की पूजा करे। यक्षयक्षिणी, क्षेत्र-पाल का यथायोग्य पूजा विधि सत्कार करे। पंच पकवान का नैवेद्य करे।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्त चतुष्टकात्मकेभ्यो नव केवललब्धिसमन्वितेभ्यो अर्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा।

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टकर्मविनिर्मुक्तेभ्यो अष्टगुण संयुक्तेभ्यः सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा।

ॐ ह्रीं अर्हं पंचेद्रिविषयरहितेभ्यः पंचाचार निरतेभ्यः सूरिपरमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा।

ॐ ह्रीं अर्हं व्रतसमितिगुप्तिसहितेभ्यः कषाय दुरित रहितेभ्यः पाठक परमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलोत्तर गुणाढ्येभ्यः सर्वसाधु परमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा।

इन पांच मन्त्रों से पृथक् २ अर्घ्य चढ़ावे, प्रत्येक मन्त्र को १०८-१०८ बार पुष्प लेकर जाप करे। इस प्रकार दिन के चारों ही वेला में पूजा करे। भगवान को एक नारियल सहित अर्घ्य—

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसापञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा।

यह मन्त्र बोलकर चढ़ा देवे। जिन सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करे। व्रत कथा को पढ़े या सुने, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे।

फिर पहले के समान एक महाअर्घ्य करके मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगल आरती उतारे। उस दिन उपवास करे, सारा दिन धर्मध्यान से बितावे। ब्रह्मचर्य का पालन करे। प्रातःकाल में जिनपूजा करके नौ बांस की टोकरी में नारियल, फल, पुष्प, गंध, अक्षत, मीठा समोसा (करंज्या) वगैरह डालकर वायने तैयार करे। इसके अन्दर एक देव के आगे, एक पञ्चपरमेष्ठि के आगे, एक जिन-वाणी के आगे, एक गुरु के आगे चढ़ावे, एक यक्षयक्षिणी के आगे रखे, एक स्वयं लेवे।

बाकी बची उत्तम श्रावक-श्राविकाओं को देवे। नौ प्रकार का पकवान करके भगवान को चढ़ावे, मुनि आर्यिकाओं को आहारदान व यथायोग्य उपकरण देवे, श्रावक-श्राविका (उपाध्याय) गृहस्थाचार्य को भोजन करावे, फिर स्वयं भोजन करे।

इस प्रकार यह व्रत पांच वर्ष करके उद्यापन के समय पंचपरमेष्ठि की नवीन प्रतिमा बनवाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, नौ पात्र में मिष्टान्न भरकर वायना तैयार करे। वायना भगवान के आगे रखते समय **ॐ ह्रीं अर्हं नमोर्हते पञ्चकल्याणक संपूर्णाय नवकेवललब्धिसमन्विताय स्वाहा**—यह मन्त्र पढ़े।

ॐ नमोर्हते भगवते सर्व कर्म निर्जरां कुरु कुरु स्वाहा।

इस मन्त्र को पढ़कर वायना देवे। चतुर्विध संघ को आहारदान देवे, इस प्रकार व्रत की पूर्ण विधि है।

कथा

उज्जयिनी नगरी के समीप में एक छोटासा गांव था। वहां बलभद्र नाम का एक जागीरदार (पाटील) रहता था। उसके सात पुत्र थे और उन पुत्रों की सात स्त्रियां थीं। इनके साथ वह आनन्द से समय निकाल रहा था।

एक दिन एक महामुनिश्वर उस गांव के नगरकोट के समीप में ध्यान करने को खड़े हो गये। उस पाटील (जागीरदार) की यशोमति नाम की छोटी बहु ने अंधेरे में ही गोबर उठाकर कोट के बाहर डाल दिया। वह गोबर मुनिराज के ऊपर गिर पड़ा। उजाला होने पर जागीरदार सौच के लिए बाहर गया, देखा कि हमारी बहु ने मुनिराज के ऊपर भूल से गोबर डाल दिया है। तब उसने गरम पानी लेकर मुनिराज के शरीर को धोया और हाथ जोड़कर क्षमा-याचना करने लगा। मुनिराज का ध्यान छूटने पर हाथ जोड़ नमस्कार करता हुआ कहने लगा कि हे मुने! मेरी छोटी बहु ने आपके ऊपर अज्ञानपने से गोबर डाल दिया है। उसके लिए मुझे क्षमा करें। तब मुनिराज कहने लगे कि हे भव्य तुमारा कोई दोष नहीं है। हमारे ही पूर्व कर्मों का उदय है। ऐसा कहते हुए आशीर्वाद देकर जंगल को चले गये।

इधर यशोमति पाप कर्म के उदय से तीव्र रोग से ग्रसित होकर मर गई

और उज्जयनी नगर में वैश्य की लड़की के घर में उत्पन्न हुई। उसके जन्म लेते ही मां-बाप दोनों ही मर गये। तब एक गृहस्थ ने उसका पालन-पोषण किया। जब वह पांच वर्ष की हुई तब वह पालन करने वाला भी मर गया। फिर श्रीमती एक आर्यिका के निकट उसका पालन होने लगा, लोग उसको कर्मी नाम से पुकारते थे।

आगे एक दिन उस गांव के मन्दिर में श्रुतसागर नामक महाऋद्धिधारी चारण मुनिश्वर आये, नगर के लोग उन मुनिराज के दर्शन के लिए गये। तब वह कर्मी भी वहां गई। सब लोग मुनिराज की प्रदक्षिणा देकर धर्मोपदेश सुनने के लिए वहाँ बैठ गये, तब वहीं कर्मी मुनिराज के चरणों में पड़कर रोने लगी, मुनिराज अपने अवधिज्ञान से उसका भवान्तर जानकर कहने लगे कि हे कन्ये ! तुमने पूर्व भव में एक मुनिराज के ऊपर गोबर डाला था न, उस पाप से ही तुमको ये दुःख भोगने पड़ रहे हैं, इसके कारण ही तुम्हारे माता-पिता व पालन करनेवाले मर गये हैं। अब तुम इस कर्मनिर्जरा के लिए, कर्मनिर्जरा व्रत यथाविधि पालन करो और व्रत का उद्यापन करो, तब तुम को ऐहिक सुख के साथ परमार्थिक सुख की भी प्राप्ति होगी। ऐसा कहकर मुनिराज ने व्रत की विधि भी कह सुनाई।

लड़की ने व्रत को भक्तिपूर्वक ग्रहण किया। मुनिराज वहां से चले गये। कर्मी कुमारी ने श्रावक-श्राविकाओं के सहारे से व्रत को पालन करना प्रारम्भ किया। एक दिन उज्जयनी नगरी के राजा का राजकुमार अकस्मात मर गया, उस समय तक उसका विवाह नहीं हुआ था और सर्प के काटने से मरा था इसलिए राजकुमार की माता को बहुत दुःख हुआ। रानी अपने पति को कहने लगी कि हे राजन ! आप अपने पुत्र का विवाह संस्कार हुये बिना दहन-क्रिया नहीं करना, तब राजा ने मन्त्री को बुलाकर कहा कि हमारे लड़के का विवाह हुए बिना दाह-संस्कार नहीं होगा, इसलिए किसी कन्या की खोज करके लाना चाहिए।

तब मरे हुए राजकुमार को कन्या कौन देगा विचार करते हुए, सब लोग चिन्तामग्न हुए, तब मन्त्रियों ने एक गाड़ी में सुवर्ण-रत्नादि भरकर नगर में सूचना करवाई कि राजा के मरे हुए पुत्र को जो कोई अपनी कन्या देगा, उसको यह सारा धन दिया जायेगा। ऐसी सूचना करते-करते सेवक लोग मन्दिर के निकट में आये।

यह सूचना कर्मी ने भी सुनी और आर्यिका माताजी के पास जाकर कहने

लगी कि हे माताजी ! मैं उस मृतक राजकुमार के साथ विवाह करूंगी, इस धन से भगवान की पूजा वगैरह करूंगी। तब आर्यिका माताजी ने उसको कहा कि जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो, उस समय कर्मी सेवकों के पास जाकर कहने लगी कि मैं राजपुत्र के साथ विवाह करूंगी यह धन मेरी मां को दे दो। सेवकों ने सब धन आर्यिका माताजी को सौंप दिया तथा उस कर्मी को साथ में लेकर राज दरबार में चल दिये।

राजा को बहुत आश्चर्य हुआ, उसी समय विवाह-मण्डप तैयार कर कर्मी के साथ अपने मृतक राजकुमार का विवाह कर दिया। बाद में राजपुत्र की शवयात्रा निकाली गई। उसी समय भयंकर बारिश होने लगी, रास्ते में खूब पानी भरने लगा, रास्ता पानी से बन्द हो गया। तब सब लोग उस राजकुमार के शव को रास्ते में ही छोड़कर अपने रजवाड़े में वापस आ गये। शव के पास किंकर लोगों की स्थापना कर दी थी। मात्र कर्मी अपने मृतक पति के साथ वहां ही रही।

उस दिन कर्मी के व्रत का दिन था, उसको याद आया उसने भक्ति से भावपूजा वहीं बैठकर की। तब उसकी दृढ़भक्ति को देखकर पद्मावतीदेवी का आसन कम्पायमान हुआ। तब अवधिज्ञान से उस कन्या की सर्वपरस्थिति जानकर पद्मावती उसी क्षण वहां आई और अपना दिव्य रूप प्रकट कर कहने लगी कि हे बालिके ! तुम्हारे पास कोई द्रव्य नहीं है तो भी तुमने यह झूठी पूजा क्यों आरम्भ कर रखी है ? द्रव्य के अभाव में तुमको कुछ भी फल नहीं मिलने वाला है।

तब उस कन्या ने पूछा कि हे भगवती ! आप कौन हैं ? आप का परिचय क्या है ? तब पद्मावती देवी कहने लगी कि हे कन्या ! तुम डरो मत मैं पद्मावती देवी हूं तुम्हारी पंच परमेष्ठी भगवान के ऊपर दृढ़भक्ति देखकर मैं यहाँ आई हूं तुम्हारे पर मै प्रसन्न हुई हूं, तुझे जो वर माँगना हो वह मांगले।

तब वह कर्मी कहने लगी कि हे देवि ! मेरी द्रव्यलोभ से मृत राजपुत्र के साथ शादी हुई। राजपुत्र को आज ही प्रातःकाल में सर्प ने काट खाया है और वह मर गया है सो अब आपको जो अच्छा लगे वैसा कर दो, मेरा भविष्य आपके हाथ में है। तब पद्मावती देवी ने राजकुमार को जिंदा कर दिया और अपने स्थान पर वापस चली

गई। राजकुमार ने जिन्दा होते ही पूछा कि यह सब क्या है, मुझे यहां कौन लाया ? तब कर्मी ने सब वृतांत आद्योपांत कह सुनाया। रक्षक लोगों ने यह सब चमत्कार देखकर राजा को सब समाचार कह सुनाये।

ऐसा सुनकर उन सब को बहुत आश्चर्य हुआ। तत्काल वृषभसेन राजा, गुण-सेना राणी, मन्त्री आदि बहुत लोग राजपुत्र के निकट आये। राजा को अपने प्रिय पुत्र को देखते ही बहुत आनन्द आया तब अपनी बहु को पूछा कि यह कैसे हुआ। तब कर्मी ने सब हकीकत जों की त्यों कह सुनाई और कहा कि यह सब कर्मनिर्जिरा व्रत का प्रभाव है। व्रत का प्रभाव देखकर जैनधर्म के ऊपर दृढ़ विश्वास सब लोगों को हुआ। यह महासती है, ऐसा कहते हुए सब लोगों ने कर्मी की बहुत-बहुत प्रशंसा की और राजा अपने राजकुमार और उसकी रानी कर्मी को हाथी पर बैठाकर राजशाही ठाठ से अपने राजमन्दिर में लेकर गया।

वह वृषभसेन राजा परिवार के साथ में सुख से राज्य करने लगा। थोड़े दिन राज्य करके सब लोग जिनदीक्षा लेकर अन्त में समाधिमरण करके अच्युत स्वर्ग में देव हुए. वहां वे चिरकार तक सुख भोगने लगे।

कलधौतार्णव व्रत कथा

कार्तिक शुक्ला अष्टमी से पूर्णिमा तक आठ दिन मन्दिर में जाकर भगवान को नमस्कार करे, पूर्वोक्त विधि से शुद्ध होकर नवदेवता, चौबीस तीर्थंकर मूर्ति का पंचामृताभिषेक करे, नन्दीश्वर आकार प्रतिमा स्थापन कर प्रथम चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा व नवदेवता की पूजा करे, फिर नन्दीश्वर द्वीप की समुदाय पूजा करे, फिर पंचमेरु पूजा करे, नैवेद्य चढ़ावे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि की पूजा करे, क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिना-गम जिनचैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मंत्र का जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े, नंदीश्वर भक्ति पढ़े, एक थाली में नारियल सहित अर्घ्य रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मगल आरती उतारे, शांतिपाठ बोलता हुआ विसर्जन करे, सत्पात्रों को दान देवे, यथाशक्ति उपवास करे, ब्रह्मचर्य पालन करे।

इस प्रकार आठ दिन पूजा करे, मार्गशीर्ष कृष्णा एकम को (महाराष्ट्र का कार्तिक कृष्णा एकम) विसर्जन करे, आठ दिन बारह व्रत का पालन करे।

कथा

इस व्रत को पहले राजा दशरथ ने पाला था, उसके प्रभाव से रामादि पुत्र उत्पन्न हुये और अंत में दीक्षा ग्रहण कर स्वर्ग में देव हुये।

अथ कल्याणमंगल व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल त्रयोदशी के दिन शुद्ध होकर जिनमन्दिरजी में जाकर नमस्कार करे, फिर विमलनाथ तीर्थंकर का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विमलनाथाय पातालयक्ष वैरोटोदेवि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, यथाशक्ति उपवास करे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, आहार दानादि देवे।

इस प्रकार तेरह त्रयोदशी को व्रत पूजा करके उद्यापन करे, उस समय विमलनाथ तीर्थंकर का विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दानादि देवे।

कथा

इस व्रत की कथा में राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

कीर्तिधर व्रत कथा

बैशाख शुक्ल अष्टमी के दिन शुद्ध होकर जिनमन्दिरजी में जावे, प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कार करे, सुपार्श्वनाथ प्रभू की मूर्ति यक्षयक्षि सहित स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि की व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुपार्श्वनाथ तीर्थंकराय नंदिविजययक्ष कालियक्षि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे, व्रत कथा पढ़े, नारियल सहित एक पूर्णअर्घ्य चढ़ावे, प्रदक्षिणा पूर्वक मंगल आरति उतारे, सत्पात्रों को दान देवे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, उपवास करे, दूसरे दिन स्वयं पूजा दानादि देकर पारणा करे ।

इस प्रकार छह महिने समाप्त होने पर कार्तिक अष्टाह्निका में उद्यापन करे, उस समय सुपार्श्वनाथ विधान करे, महाभिषेक करे; चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

इस व्रत को कीर्तिधर राजा ने पालन किया था, व्रत को पूर्ण कर जिन दीक्षा को ग्रहण कर मोक्ष को गये ।

व्रत कथा में राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

कामदेव व्रत कथा

मार्गशीर्ष शुक्ला पंचमी को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि की पूजा करे, श्रुत व गणधर व क्षेत्रपाल यक्षयक्षि की पूजा करे, पंचपकवान चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मंत्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, उस दिन उपवास करे, पांच वस्तुओं से पारणा करे, सत्पात्रों को दान देवे, दूसरे दिन पूजा दान करके पारणा करे, तीन दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे ।

इस प्रकार प्रत्येक महिने की उसी तिथि को व्रत पूजन करे । नवीं पूजा व्रत समाप्त करके, श्रावण शुक्ल पंचमी के दिन उद्यापन करे, पंचपरमेष्ठि विधान करे, महाभिषेक करे, चतुर्विधसंघ को दान देवे, पांच मुनि, पांच आर्यिका, पांच श्रावक, पांच श्राविका इन सबको यथायोग्य उपकरण देवे ।

कथा

इस व्रत को कृष्ण नारायण की पट्टरानी रुकमणी ने किया था, व्रत के प्रभाव से पद्मनु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, वो पद्मनु दीक्षा लेकर कर्म काट कर मोक्ष को गये ।

कारुण्य व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल त्रयोदशी को एकाशन करके चतुर्दशी को स्नान करके शुद्ध होकर मन्दिर जी में जावे, प्रदक्षिणा देकर भगवान को नमस्कार करे, आदिनाथ भगवान का पंचामृताभिषेक करे, एक पाटे पर छह पान लगाकर ऊपर अष्टद्रव्य रखे, उसके बाद अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे। आदिनाथ भगवान ने राज्य अवस्था में षट्कर्म उपदेश किया था, इसीलिये इस व्रत का नाम कारुण्य व्रत पड़ा ।

ॐ ह्रीं षट्कर्म क्रिया चारण लोकोपदेशक श्री वृषभदेवाय जलादि अर्घ्यं नि० मन्त्र से छह बार अष्टद्रव्य से पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं षट्कर्माचारण लोकोपदेशक श्री वृषभनाथ तीर्थंकराय गोमुखयक्ष चक्रेश्वरी यक्षीसहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, दूसरे दिन पूजा दान करके स्वयं पारणा करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, प्रतिपदा से लेकर षष्ठिपर्यंत पूर्ववत् पूजा करे, सत्पात्रों को दान देवे, छह वस्तुओं से एकाशन करे ।

इस प्रकार छह वर्ष पूजा करके अंत में उद्यापन करे, उस समय आदिनाथ तीर्थंकर की नवीन प्रतिमा लाकर पंच कल्याणक प्रतिष्ठा करे, भक्तामर विधान करे, महाभिषेक करे, ६ मुनियों को आहारादि देवे, आर्यिका व श्रावक-श्राविकाओं को भोजनादि देवे ।

कथा

आदिनाथ तीर्थंकर का चरित्र पढ़े, भरत का चरित्र पढ़े ।

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े ।

—पञ्चकल्याणक व्रत-तिथि-बोधक चक्र—

तीर्थंकर	गर्भकल्याणक	जन्मकल्याणक	तपकल्याणक	ज्ञानकल्याणक	निर्वाणकल्याणक
१ ऋषभनाथ	आषाढ़ वदी २	चैत्र वदी ९	चैत्र वदी ९	फाल्गुन वदी ११	माघ वदी १४
२ अजितनाथ	ज्येष्ठ वदी ३०	पौष सुदी १०	पौष सुदी ९	पौष सुदी ११	चैत्र सुदी ५
३ संभवनाथ	फाल्गुन वदी ८	मार्गशीर्ष सुदी १५	मार्गशीर्ष सुदी १५	कार्तिक वदी ४	चैत्र सुदी ६
४ अभिनन्दन	वैशाख सुदी ६	पौष सुदी १२	पौष सुदी १२	पौष सुदी १४	वैशाख सुदी ६
५ सुमतिनाथ	श्रावण सुदी २	वैशाख वदी १०	वैशाख सुदी ९	चैत्र सुदी ११	चैत्र सुदी ११
६ पद्मप्रभ	माघ वदी ६	कार्तिक वदी १३	मार्गशीर्ष वदी १०	चैत्र सुदी १५	फाल्गुन वदी ४
७ सुपार्श्वनाथ	भादों सुदी ६	ज्येष्ट सुदी १२	ज्येष्ठ सुदी १२	फाल्गुन वदी ६	फाल्गुन वदी ७
८ चन्द्रप्रभ	चैत्र वदी ५	पौष वदी ११	पौष वदी १२	फाल्गुन वदी ७	फाल्गुन वदी ७
९ पुष्पदन्त	फाल्गुन वदी ९	मार्गशीर्ष सुदी ९	मार्गशीर्ष सुदी ९	कार्त्तिक सुदी २	भादों सुदी ८
१० शीतलनाथ	चैत्र वदी ८	पौष वदी १२	पौष वदी १२	पौष वदी १४	आश्विन सुदी ८
११ श्रेयान्सनाथ	ज्येष्ठ वदी ६	फाल्गुन वदी ११	फाल्गुन वदी ११	माघ वदी ३०	श्रावण सुदी १५
१२ वासुपूज्य	आषाढ़ सुदी ६	फाल्गुन वदी १४	फाल्गुन वदी १४	माघ सुदी २	भादों सुदी १४

तीर्थंकर	गर्भकल्याणक	जन्मकल्याणक	तपकल्याणक	ज्ञानकल्याणक	निर्वाणकल्याणक
१३ विमलनाथ	ज्येष्ठ वदी १०	पौष सुदी ४	पौष सुदी ४	माघ सुदी ६	आषाढ़ वदी ८
१४ अनन्तनाथ	कार्तिक वदी १	ज्येष्ठ वदी १२	ज्येष्ठ वदी १२	चैत्र वदी ३०	चैत्र वदी ३०
१५ धर्मनाथ	वैशाख वदी १३	पौष सुदी १३	पौष सुदी १३	पौष सुदी १५	ज्येष्ठ सुदी ४
१६ शान्तिनाथ	भादों वदी ७	ज्येष्ठ वदी १४	ज्येष्ठ वदी ४	पौष सुदी ११	ज्येष्ठ वदी १४
१७ कुन्थुनाथ	श्रावण वदी १०	वैशाख सुदी १	वैशाख सुदी १	चैत्र सुदी ३	वैशाख सुदी १
१८ अरहनाथ	फाल्गुन सुदी ३	मार्गशीर्ष सुदी १४	मार्गशीर्ष सुदी १०	कार्तिक सुदी १२	चैत्र वदी ३०
१९ मल्लिनाथ	चैत्र सुदी १	मार्गशीर्ष सुदी १४	मार्गशीर्ष सुदी ११	मार्गशीर्ष सुदी ११	फाल्गुन सुदी ५
२० मुनिसुव्रतनाथ	श्रावण वदी २	चैत्र वदी १०	वैशाख वदी १०	वैशाख वदी ९	फाल्गुन वदी १२
२१ नमिनाथ	आश्विन वदी २	आषाढ़ वदी १०	आषाढ़ वदी १०	मार्गशीर्ष सुदी ११	वैशाख वदी १४
२२ नेमिनाथ	कार्त्तिक सुदी ६	श्रावण वदी ६	श्रावण सुदी ६	आश्विन सुदी १	आषाढ़ सुदी ७
२३ पार्श्वनाथ	वैशाख वदी ३	पौष वदी ११	पौष वदी ११	चैत्र वदी ४	श्रावण सुदी ७
२४ महावीर	आषाढ़ सुदी ६	चैत्र सुदी १३	कार्त्तिक वदी १३	वैशाख सुदी १०	कार्तिक वदी ३०

गणधरवलय व्रत कथा

तीनों अष्टाह्निका में से किसी भी अष्टाह्निका की अष्टमी के दिन प्रातः स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर अभिषेक पूजा का सामान लेकर मन्दिर जी में जावे। मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि कर भगवान को नमस्कार करे। अभिषेक पीठ पर भगवान को स्थापन कर, पंचामृताभिषेक करे। मण्डप वेदिका पर गणधरवलय मांडला बनावे, मण्डल को खूब सजावे, आगे दिशाओं में मंगलकलश रखकर मध्य के मंगल कलश पर गणधरवलय यत्र स्थापन करे, भगवान को स्थापन करे। उसके बाद नित्य-पूजा करके गणधरवलय विधान करे, मन्त्र जाप्य विधान में कहे अनुसार करे।

एक थाली में जयमाला अर्घ्य लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य चढ़ा देवे। इस प्रकार अष्टमी से लगाकर पूर्णिमा पर्यंत आठ दिन पूजा क्रम करे अर्थात् गणधरवलय आराधना करे, चतुर्विध संघ को आहारादि देवे। इस व्रत को ४८ वर्ष तक उत्कृष्ट २४ वर्ष तक अथवा १२ वर्ष तक अथवा ६ वर्ष तक अथवा ३ वर्ष तक भी करने का नियम है। कोई भी एक नियम से करने पर उद्यापन करे। उस समय यथाशक्ति एक नवीन मन्दिर बनवाकर प्रतिष्ठा करे और सब व्यवस्था करे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मंगलावती नामक देश है। उस देश में रत्नसंचय नाम का एक सुन्दर नगर है। उस नगर में पहले सोमवाहन नामक राजा अपनी पत्नी विनयावती के साथ सुख से राज्य करता था। उस राजा के चंद्राभ नाम का राजकुमार अपनी भार्या चन्द्रमुखी के साथ रहता था।

एक समय में वनमाली ने एक कमलपुष्प राजा को भेंट में चढ़ाया। राजा ने उस पुष्प को हाथ में उठाकर देखा तो उस कमल में एक मरा हुआ भ्रमर था, मरे हुए भ्रमर को देखकर राजा सांसारिक शरीर-भोगों से विरक्त हो गया और अपना राज्य अपने पुत्र को देकर एक मुनिराज के पास जाकर दीक्षा ग्रहण करली और तपश्चरण कर के मोक्ष को गया।

इधर चंद्राभ कुमार को राज्य प्राप्त होते ही अहंकारवश सप्त-व्यसन में

आसक्त हो गया और पाप करने लगा एक दिन कुछ दुर्जनों के साथ शिकार खेलने को जंगल में गया, वहां एक पेड़ के नीचे अभयघोस नामक मुनिराज को उसने देखा, देखते ही द्वेष से उन मुनिराज के ऊपर उपसर्ग करने लगा। उसने समझा कि यह मुनि मेरे शिकार में बाधक बनेगा, इसलिए उन मुनिराज को वहां से जबरदस्ती उठाकर अन्यत्र भेज दिया।

उस पाप के उदय से कलिंग देश के राजा कालयवन ने आकर चन्द्राभ के ऊपर आक्रमण कर दिया और राज्य को अपने हाथ में लेकर चन्द्राभ को उस राज्य से उसकी पत्नी सहित भगा दिया। चन्द्राभ वहां से निकलकर मलयाचल पर्वत की एक गुफा में छुप कर बैठ गया। उस गुफा में युगंधर नामक मुनिराज ध्यानस्थ बैठे थे, चन्द्राभकुमार ने और उसकी पत्नी ने मुनिराज को देखा, दोनों ही मुनिराज के पास जाकर विनय से बैठ गये और हाथ जोड़कर विनय करने लगे। जब मुनिराज ने ध्यान छोड़ा तब राजा कहने लगा हे मुनिराज! मेरी प्रार्थना यह है कि मेरा राज्य मेरे हाथ से निकल गया, सो कौनसे पाप के कारण राज्य गया ?

तब मुनिराज ने देखा कि राजा अत्यन्त विनय से प्रश्न कर रहा है। तब मुनिराज कहने लगे कि हे राजन तुमने अभयघोस मुनिराज को जबरदस्ती तिरस्कार करके निकाल दिया था। उसी पाप के कारण तुम भी राज्य-च्युत हुए हो और यह विकट स्थिति तुम्हारे सामने आई है। तब चन्द्राभ राजा को अपने किये पर बहुत पश्चाताप हुआ और वह मुनिराज के चरणों में पड़कर अपने पापों के उद्धार का कारण पूछने लगा।

तब मुनिराज करुणाबुद्धि से उसको संबोधित करते हुए कहने लगे कि राजन! तुम पापों को दूर करने के लिए गणधरवलय व्रत करो और उसकी विधि भी कह सुनाई, तब राजा ने संतुष्ट होकर उस व्रत को स्वीकार किया। अन्त में वह राजा अपनी पत्नी सहित अपने ससुराल में वापस आ गया। व्रत का अच्छी तरह से पालन करने लगा। इतने में मलयाचल प्रदेश का राजा स्वर्गस्थ हो गया, उसको कोई संतान नहीं थी। मन्त्रिमण्डल ने विचारकर अपने राजा का पट्ट हाथी छोड़ा। वह हाथी घूमता हुआ चंद्राभ के पास आया और उसका अभिषेक करके अपने ऊपर बैठा कर नगर में ले आया। नगरवासी नवीन राजा की प्राप्ति से बहुत खुश

हुए और चन्द्राभ को राज-सिंहासन पर बैठाकर राज्याभिषेक कर दिया। राजा चन्द्राभ भी राज्य प्राप्त होने के बाद न्यायनीति से राज्य करने लगा।

कुछ काल के बाद अपने पूर्व राज्य के ऊपर चढ़ाई करके कालयवन को हराकर अपना राज्य प्राप्त किया और सुख से रहने लगा, गणधरवलय व्रत को और भी अच्छी तरह से पालन करने लगा, व्रत के पूर्ण होने पर उद्यापन किया। अन्त में समाधिमरण कर स्वर्ग में देव हुआ और सुख से वहां पर रहने लगा। वहां की आयु पूर्ण कर वह देव, जम्बूद्वीप के अपर विदेह में सीता नदी के किनारे दक्षिण तट पर पद्म देश में सिंहपुरी नामक सुन्दर नगर है, उस नगर में पुरुषदत्त राजा की रानी विमलमति के गर्भ में आया।

जन्मते ही उसका नाम अपराजित रखा, पुत्र के बड़े होने पर राज्य भार पुत्र के शिर पर रखकर राजा ने दीक्षा ले ली। कर्म काटर मोक्ष को गया। इधर अपराजित राजा ने भी बहुत काल तक राजसुख भोगकर अन्त में राज्य का त्यागकर विमलवाहन केवली के पास जाकर दीक्षा ले ली और घोर तपश्चरण कर केवली का गणधर बना, अन्त में मोक्ष को गया।

गुरुद्वादशी व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल ११ के दिन शुद्ध हो मन्दिर में जाकर जिनेन्द्र श्री वासुपूज्य की यक्षयक्षि सहित मूर्ति लेकर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वासुपुज्य तीर्थंकराय षणमुखयक्ष गांधारी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र को १०८ पुष्प से जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ्य हाथ में लेकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे, उपवास करे, दूसरे दिन पूजा स्नान करके पारणा करे। इस प्रकार बारह द्वादशी पूजा करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय वासुपूज्य भगवान का महाभिषेक करके विधान करे, पहले तीर्थंकर

से वासुपूज्य तीर्थंकर तक अलग २ अष्टद्रव्य से पूजा करे, बारह प्रकार का नैवेद्य चढ़ावे, बारह मुनिश्वर को आहारदान देवे, चतुर्विध संघ को दान देवे, स्वयं पारणा करे ।

कथा

इस भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत पर रत्नसंचय नगर का राजा सिंहसेन अपनी रानी सुन्दरादेवी के साथ सिद्धकूट पर सहस्रकूट चैत्यालय का दर्शन करने गया था। दर्शन कर वापस लौटते समय रास्ते में अजितञ्जय व अरिंजय नामक मुनिराज मिले। राजा मुनिराज के दर्शन कर हाथ जोड़कर कहने लगा कि गुरुदेव ! मुझे कोई व्रत प्रदान करिये। तब मुनिराज ने उसको गुरुद्वादशी व्रत की विधि बतलायी, उसने व्रत को प्रसन्नता से स्वीकार किया, और नगर में वापस लौट आया। व्रत को अच्छी तरह से पालन किया और अंत में व्रत का उद्यापन किया, फिर संन्यास विधि से मरकर स्वर्ग में देव हुये ।

गौरी व्रत कथा

श्रेयोजिनेन्द्र चंद्रस्य, चरणांभोरूह द्वयं ।
नत्वा गौरीकथां वक्ष्ये, शुभ सौभाग्यदायिनीं ।।

भाद्रपद शुक्ल तृतीया के दिन व्रतीक प्रातःकाल में स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर अपने हाथ में पूजा सामग्री लेकर जिन मंदिर में जावे, ईर्यापथ शुद्धि पूर्वक मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा देते हुये भगवान का भक्ति पूर्वक दर्शन करे, सिंहासन पीठ पर श्रेयांस भगवान की मूर्ति कुमार यक्ष गौरी यक्षी सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, एक पाटे पर सोलह पान रखकर क्रमशः अष्टद्रव्य प्रत्येक पान पर रखे, केले रखे, तिल के लड्डू, चावल के आटे का लड्डू, भिगो कर फुलाए हुये चने, नारियल आदि रखकर, आदिनाथ तीर्थंकर से लेकर सोलहवें शांतिनाथ तक प्रत्येक तीर्थंकर की अलग-अलग पूजा करे (प्रत्येक की अलग-अलग अष्टद्रव्य से पूजा, जयमाला, प्रत्येक के स्तोत्र पढ़े) अनन्तर जिनवाणी पूजा, गुरुपूजा करना, कुमार यक्ष, गौरी यक्षी की व क्षेत्रपाल को योग्यतानुसार अर्घ्य देवे—

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय कुमार यक्ष गौरी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्पों से जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े, श्रेयांसनाथ तीर्थंकर का चरित्र पढ़े, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करें, व्रत कथा का वाचन करे अथवा सुने, १६ पान पर अलग २ अष्टद्रव्य रखकर थाली में रखे, उस थाली को हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे।

दक्षिणात विशेष विधि :—पांच सूप में गंध, अक्षत, पुष्प, फल, नारियल, नैवेद्य आदि रखकर, ऊपर से सूप ढांक देवे और सफेद सूत के धागे से लपेट कर, वह बंधा हुआ सूप १ देव के आगे, गुरु के आगे १, जिनवाणी के आगे एक, यक्ष के आगे एक, यक्षिणी के आगे एक, एक सौभाग्यवती स्त्री को देवे, एक स्वयं लेवे, इसको वायना कहते हैं। वायना के अन्दर अच्छी २ चीज रखना चाहिये। दक्षिण प्रदेश में इस प्रकार की प्रथा है, जिस प्रकार की प्रथा जिस प्रदेश में हो वैसा करे। किसी भी प्रथा को गलत नहीं समझे, विधि की निंदा कभी नहीं करे।

फिर घर जाकर सत्पात्रों को आहारादि देकर अपने एकभुक्ति करे। इस प्रकार यह व्रत सोलह वर्ष करना चाहिये। व्रत समाप्त होने के बाद उद्यापन करना चाहिये। उस समय श्रेयोजिनेन्द्र विधान करके, चतुर्विध संघ को आहारादिक देवे, सोलह सौभाग्यवती स्त्रियों को भोजन कराकर उनको वस्त्रादि देकर सम्मान करे, इस रीति से व्रत का पूर्ण विधान है।

नोट :—यह व्रत श्रेयांसनाथ तीर्थंकर की यक्षणी गौरीदेवी के नाम से है। उत्तर प्रदेश के व्रत कथाकोषों में इस व्रत का नाम भी नहीं मिलता है। दक्षिणात्य व्रत कथाकोषों में इस व्रत का विधान लिखा है। मुझे तो समस्त व्रत कथा कोष का संकलन करना है इसलिये मैंने लिखा है, इच्छा हो तो व्रत करे नहीं तो नहीं। आपकी जैसी मान्यता।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सिंहपुर नाम का एक अति मनोहर नगर है। उस नगर में पहले धर्मसेन नामका राजा राज्य करता था, उस राजा की नंदावती नाम की पट्टरानी थी, पट्टरानी को छोड़कर और भी अनेक स्त्रियां थीं, उस रानी के जयकुमार नाम का गुणवान पुत्र था, इन सबके साथ में राजा बहुत ही आनन्द से राज्य करता था।

एक समय वह जयकुमार श्रेयांस तीर्थंकर के समवशरण में गया था। वहां भगवान का धर्मोपदेश सुनकर, गणधर स्वामी को हाथ जोड़ नमस्कार करता हुआ कहने लगा कि हे भगवान ! गौरीव्रत को पहले किसने किया ? व्रत के फल से उसको क्या प्राप्त हुआ ? इस विषय में मुझे कहो । उस कुमार के नम्र वचन सुन कर गणधर स्वामी कहने लगे कि इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में काम्भोज नामक एक विस्तीर्ण देश है । उस देश में उज्जयनी नामकी एक सुन्दर नगरी में श्रेयांस नाम का राजा राज्य करता था । उस राजा की श्रीमति रानी बहुत ही गुणवान और सुन्दर थी, रानी के साथ में राजा आनन्द से अपना समय व्यतीत कर रहा था, एक दिन उस नगर के उद्यान में कंडु नामादिक को धारण करने वाले बहुत ही साधुओं के साथ, श्रेयो मुनिश्वर आये । वनपाल से राजा को समाचार प्राप्त होते ही, राजा अपने परिवार सहित पैदल ही मुनिदर्शन को गया । मुनिश्वर को प्रदक्षिणा देकर नमस्कार किया और अष्टद्रव्य से मुनिराज की पूजा की और मुनिराज का धर्मोपदेश सुनकर श्रीमती रानो कहने लगी कि हे, दयानिधान ! आप आज मुझे सकल सौभाग्यकारक कोई व्रतविधान बताओ । रानी के वचन सुनकर मुनिश्वर कहने लगे, हे बेटी ! तुमको इस समय गौरी व्रत करना चाहिये, इस व्रत का जो कोई पालन करता है उस भव्यजीव को इस लोक सम्बन्धी सर्वसुख प्राप्त होकर परमार्थ सुख की सिद्धि भी क्रमशः हो जाती है । ऐसा इस व्रत का माहात्म्य है, पहले इस व्रत को रुकमणी, श्रीमती, पद्मावती, लक्ष्मीमती, शिवदेवी आदि स्त्रियों ने पालन कर सकल सौभाग्य को प्राप्त किया है, ऐसा कहते हुये उपरोक्त व्रत की विधि मुनिराज ने कह सुनाई । इस प्रकार व्रत की विधि को सुनकर श्रीमती आदि ने राजा के साथ में मुनिराज को नमस्कार करते हुये व्रत को स्वीकार किया, और अपनी नगरी में वापस आगये । कालानुसार श्रीमती रानी ने व्रत को अच्छी तरह से पालन कर अंत में व्रत का उद्यापन किया । व्रत के पुण्योदय से उसको ऐहिक सर्वसुखों की प्राप्ति हुई । क्रमशः स्त्रीलिंग का छेदन करके शाश्वत सुख को प्राप्त किया ।

इसलिये हे भव्यजीवो! तुम भी इस व्रत को यथाविधि पालन करके उद्यापन करो, तुमको भी अखंड सौभाग्य सुख की प्राप्ति होगी ।

अथ गुललवन व्रत कथा

व्रत विधि :—आषाढ़ या श्रावण महिने में प्रथम जो सोमवार आये उस दिन एकाशन करे। दूसरे दिन उपवास करे। अष्टद्रव्य लेकर मन्दिर में जाये। पहले के समान सब विधि करके पीठ पर पंचपरमेष्ठी की मूर्ति स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे। पंचपरमेष्ठी की अर्चना करे। श्रुत व गणधर आदि की पूजा करे। यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव को पूजा करे।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प से जाप करे। पंचपकवान का नैवेद्य बनाये। एक पात्र में पांच पान रखकर उस पर अष्टद्रव्य व नारियल रखकर महार्घ्य दे। सत्पात्र को आहारदान दे। उस दिन उपवास करना चाहिये। दूसरे दिन पारणा करे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में आर्यखण्ड है। उसमें उत्तर मथुरा नामक सुन्दर देश है। उसमें साकार नामक राजा व उसकी पट्टरानी श्रियालदेवी राज्य करते थे। उसका जिनदत्त नामक पुत्र व मन्त्री, पुरोहित, श्रेष्ठी, सेनापति वगैरह थे।

एक दिन वहां पर सिद्धांतकीर्ति नामक महामुनि पधारे। यह शुभ समाचार सुनते ही राजा नगरवासियों सहित दर्शन करने को आया। मुनिमहाराज की तीन प्रदक्षिणा देकर साष्टांग नमस्कार किया। धर्म श्रवण कर रानी ने महाराज से सुख का कारण ऐसा कोई व्रत कहने को कहा, तब महाराज ने कहा गुलल व्रत करो।

तब रानी ने कहा महाराज यह व्रत किसने किया था? इसकी विधि क्या है? यह हमें बताइये। महाराज ने कथा कहना शुरू किया।

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में आर्यखण्ड है, उसमें कर्नाटक नामक देश है, उसमें चामर राजनगर है। उसमें चामुण्डराय नामक एक बड़ा राजा राज्य करता था, उसकी स्त्री चन्द्रमती थी।

एक दिन राजमाता ने कहा कि मैं बाहुबली जिनदेव के दर्शन किये बिना दूध का सेवन नहीं करूंगी, ऐसा नियम मैंने लिया है। तब राजा अपने परिवार व सेना सहित दर्शन करने को निकला। पादनपुर के राज्य मार्ग से निकला। उस दिन रात्रि में राजा को एक स्वप्न आया। उस स्वप्न में पद्मावती देवी ने उनसे कहा हे चामुण्डराजन् ! तुम अभी दूर देश को मत जाओ क्योंकि रास्ते में अनेक भयंकर संकट उपस्थित होंगे। इससे तुम इस टेकरी पर ही निवास करो। इसी टेकरी पर तुझे और तेरी मां को श्री बाहुबली अर्थात भुजबली के दर्शन होंगे। पर्वत पर रहकर बड़े पर्वत पर तू बाण छोड़ जिससे बाण लगने से एक शिला फट जायेगी जिससे तुझे बाहुबली के दर्शन होंगे ऐसा बोलकर देवी लुप्त हो गई। राजा की नींद खुली तब प्रातःकाल की क्रिया करके राजदरबार भरा जिसमें उसने रात को देखा हुआ स्वप्न कहा। सबने उस पर बहुत चर्चा की और निश्चय किया कि आज रात को हमको भी ऐसा ही स्वप्न आये। उस दिन रात को सबको ही वैसा ही स्वप्न आया। जिससे उन्होंने यह बात सत्य है ऐसा सोचा।

फिर राजा ने छोटे पर्वत पर रहकर बड़े पर्वत पर बाण छोड़ा, जिससे बाण लगते ही एक शिला निकल पड़ी और वहां पर एक दरवाजा बन गया अर्थात् एक छेद समान बन गया। वहां जाकर देखने पर उन्हें बाहुबली की विशाल मूर्ति दिखाई दी। वह १८ धनुष लम्बी थी। उसे देखते ही सब को बहुत ही खुशी हुई। वह प्रतिमा अखंड और उत्तराभिमुख थी। राजा अपनी माता व परिवार के साथ अन्दर गये और तीन प्रदक्षिणा देकर नमस्कार किया।

उसके बाद चामुण्डराय ने नवीन मन्दिर बनवाये और कितने ही पुराने मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराया। तब उन्होंने पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव रखा। प्रतिष्ठा करवाते हुये राजा के मन में आया कि मेरे जैसी कोई पूजा नहीं करवा सकता है। ऐसा अभिमान उसे जागृत हो गया। जब उसने पंचामृत किया तो सिर्फ नाभि तक ही अभिषेक का पानी आया आगे नहीं। तब उसे चिन्ता होने लगी। उसे अपमान का अनुभव होने लगा।

तब अतिवृद्ध बाई अपने हाथ में एक छोटा सा कलश लेकर व अष्टद्रव्य अर्थात् गुललकाईत लेकर पंचामृत अभिषेक करने गयी तब सब लोग हँसने लगे।

पर वह इसकी चिन्ता किये बिना ही ऊपर गयी और अभिषेक किया । जैसे ही उसने गुललकाईत (छोटा कलश) से अभिषेक किया वैसे ही गन्धोदक नदी के समान नीचे बहने लगा । यह देखकर सब लोग आश्चर्य से देखने लगे । तब राजा के अन्तःकरण से अहंकार एकदम (भ र् र् र् र् र् र्) से निकल गया और वह वृद्धा भी लुप्त हो गयी । तब सबके मन में आया कि यह इसी देवी का कारण है अतः लोगों ने उसी बाहुबली के सामने उस गुललका की स्थापना की और उसकी पूजा की । राजा सुखपूर्वक अपने नगर वापस गया ।

एक दिन उस नगर में चर्यानिमित्त पद्मानंदी नामक आचार्य महाराज पधारे । वे उसी राजमार्ग में से निकले तो राजा ने नवधाभक्तिपूर्वक पड़गाहन किया और पूजा आदि करके उन्हें निरन्तराय आहार कराया ।

महाराज आहार करके बैठे तब राजा ने कहा महाराज श्रवणबेलगुल में पहाड़ पर बाहुबली की उस मूर्ति का किसने निर्माण कराया था । यह सुन निमित्त-ज्ञान के आधार से महाराज ने कहा मैं उसे बताता हूं, सुनो ।

इस जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र है उसमें आर्यखंड है, उसमें अयोध्या नगरी में दशरथ नामक राजा था । उसके चार रानियां थीं । उसमें अपराजित नामक पट्टरानी थी, उसके गर्भ से रामचन्द्रजी, सुमित्रा से लक्ष्मण, सुप्रभा से शत्रुघ्न और कैकेयी से भरत इस प्रकार चार पुत्र उत्पन्न हुये । रामचन्द्र की स्त्री सीता, लक्ष्मण की कनकादेवी, शत्रुघ्न की सुन्दरादेवी और भरत की कमलादेवी इस प्रकार चारों की चार स्त्रियां थीं ।

एक बार दशरथ युद्ध करने गये थे वहां पर उनके रथ से कीली निकल गयी थी तब कैकेयी ने अपने हाथ की अंगुली डालकर रथ को आगे बढ़ाया था उसे मुसीबत से निकाला था । उस समय उसे वरदान दिया । जब दशरथ राम को राज्य दे रहे थे तब कैकयी ने वह वरदान मांगा । जिससे भरत को राज्य दिया । रामचन्द्र अपना दूसरा राज्य बसाने के लिये जंगल में चले गये । वे तीनों जंगल में तीर्थयात्रा करते-करते दक्षिण भाग में आये । वे श्रवणबेलगुल आये । वहाँ पर उन्होंने एक अतिशय ऊंची अखंड शिलालय व सुन्दर पर्वत देखा । अनेक कलाओं में कुशल राम-

चन्द्र के मन में एक बुद्धि उत्पन्न हुई कि इसमें से सुन्दर ऊंची मनोहर एक मूर्ति का निर्माण किया जाय। और उसकी पूजा की जाय। ऐसा सोचकर राम और लक्ष्मण ने अपने बाण के अग्रभाग से पर्वत पर १८ धनुष ऊंची ऐसी मूर्ति को निकाला (बनाया) और बहुत दिन तक उसकी पूजा अर्चना अभिषेक आदि किया।

थोड़े दिन के बाद रावण ने सीता का हरण कर लिया जिससे दोनों भाई दुःखी होकर जंगल में उसे ढूंढने के लिये निकल पड़े।

एक दिन रामचन्द्रजी से सुग्रीव राजा मिले। रामचन्द्रजी ने नकली सुग्रीव को युक्ति से जीतकर सच्चे सुग्रीव को राज्य दिलाया। इसलिये सुग्रीव जामुवंत, नल, नील, अंगद, प्रभास व हनुमान की सहायता से रामचन्द्रजी व लक्ष्मण लंका गये। वहां पर अर्ध चक्रवर्ति रावण को परास्त किया। और राज्य को विभीषण को देकर वे वापस अपनी अयोध्या नगरी मे आये।

एक दिन रामचन्द्रजी को उन बाहुबली भगवान की मूर्ति की याद आ गयी। उन्होंने पवनकुमार को ऐसी आज्ञा की कि तू बाहुबली भगवान के पास दण्डक वन में जा, वहां बहुबली की रक्षा के लिये कुछ करके आ। तब वे गये और तीनों ओर तीन बड़े शिलास्तंभ खड़े करके आ गये।

फिर तो रामचन्द्र हनुमान आदि को वैराग्य हो गया। उन्होंने जंगल में जाकर दीक्षा ली और घोर तपश्चर्या की, जिससे वे माँगीतुंगी पर से मोक्ष गये।

उस समय से तैयार की हुई यह प्रतिमा आज भी है जिसकी आप पूजा करते हो। आप कितने पुण्यशाली हो।

यह कथा पद्मनन्दाचार्य मुनिश्वर के मुख से सुनकर सबको बहुत खुशी हुई। सबने यह व्रत लिया मुनिश्वर ने यह व्रत विधि बतायी। श्रियादेवी ने भी यह व्रत लिया फिर वे मुनिश्वर वहां से निकल गये, अपने स्थान को चले गये। समयानुकूल इस व्रत का सबने पालन किया जिससे वे १६वें स्वर्ग में जाकर देव हुए और वहां पर वह बहुत सुख भोगने लगे।

गंधअष्टमी व्रत

दोहा—*अष्टमिगंध त्रिशत बावन्न, द्वय सौ अट्ठासी प्रोषध मन्न ।*
समकित सहित धरे व्रत जास, करे पारने चौंसट तास ।।

(वर्धमान पुराण)

भावार्थ :—यह व्रत ३५२ दिन में पूरा होता है, जिसमें दो सौ अट्ठासी उपवास और ६४ पारणे होते हैं । व्रत पूर्ण करने पर उद्यापन करे और नमस्कार मंत्र का त्रिकाल जाप्य करे ।

गोत्रकर्म निवारण व्रत कथा

इसकी विधि भी उपरोक्त कर्मानुसार है, अषाढ़ शुक्ल ६ को एकाशन करे, सप्तमी को उपवास करे, सुपार्श्व तीर्थंकर की पूजा करे, मंत्र जाप्य भी उसी प्रकार करे, कथा वगैरह पूर्ववत् पढ़े ।

चौंतीस अतिशय व्रत

दोहा—अतिशय लख चौंतीस व्रत, तासु तनो कछु भेद ।
कथा मांहि सुनियों जिसो, किये होय दुखछेद ।।

अडिल्ल—दश दशमी जनमत के अतिशय दश तनी ।
फिर दश केवल ज्ञान ऊपजे दश भनी ।
चौदशि चौदा अतिशय देवाकृत कही ,
चार चतुष्टय चौथ चार ये विध गही ।
षोड़श आठें प्रातिहार्य वसुकी भनो ,
जाण पांच की पांचे पांच कही गनी ।
अरू षष्टी छह लही सवे प्रोषध सुनो ,
पाँच अधिक गन साठ कियें फल बहु मुनो ।

–कि० सि० क्रि०

भावार्थ :—*यह व्रत २ वर्ष ८ महीना और १५ दिन में समाप्त होता है,* जिसमें ६५ उपवास होते हैं । यथा–

(१) जन्म के दश अतिशयों के दश दशमियों के १० उपवास करे।

(२) केवलज्ञान के दश अतिशयों के दश दशमियों के १० उपवास करे।

(३) देवनकृत चौदह अतिशयों के चौदह चौदशियों के १४ उपवास करे।

(४) चार अनन्तचतुष्टय के चार चौथों के चार उपवास करे।

(५) आठ प्रातिहार्यों के १६ अष्टमियों के १६ उपवास करे।

(६) पांच ज्ञान के पंचमियों के पांच उपवास करे।

(७) छह षष्ठियों के छह उपवास करे।

इस प्रकार व्रत पूर्ण कर उद्यापन करे। **ओं ह्रीं णमो अरिहन्ताणं** मन्त्र का जाप्य करे।

चन्द्रकल्याणक व्रत

चन्द्रकल्याणक दिवस पच्चीस, पांच-पांच दिन ब्योरे दीस।
प्रोषध कांजिक एक लठान, रूक्ष जु अनागार पहिचान।
चन्द्रकल्याणक व्रत विधि येह, मन वच तन करिये भविलोय।

—वर्धमान पु०

भावार्थ :—यह व्रत २५ दिन में पूरा होता है। जिसमें प्रथम पांच दिन उपवास, दूसरे पाँच दिन कांजिक भोजन, तीसरे पांच दिन एकलठाना, चौथे पांच दिन रूक्ष भोजन, पांचवें पांच दिन मुनिवृति से भोजन करे। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे। नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे।

चौबीस तीर्थंकर व्रत

तीर्थंकर चौबीसी सार, करै वास चौबीस विचार।

—वर्धमान पुराण

भावार्थ :—यह व्रत २४ दिन में ही समाप्त हो जाता है, २४ तीर्थंकरों के २४ उपवास करे। **'ओं ह्रीं वृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः'** इस मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे।

तीन चौबीसी व्रत

दोहा—व्रत चौबीसी तीन को, सुकल भाद्रपद तीज।
प्रोषध कीजे शीलयुत, सुर शिव सुख को दीज।

कि० सिं० क्रि०

भावार्थ :—यह व्रत भाद्रपद कृष्ण तृतीया के दिन किया जाता है। प्रति वर्ष इस दिन उपवास करे। नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे। तीन वर्ष पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

तीर्थंकरबेला व्रत

दोहा—ऋषभ आदि तीर्थेश के, बेला बीस रु चार।
आठें चौदशि कीजिये, अंतर मूर न पार॥

चौपाई—सातें आठें बेला ठान, नोमी दिवस पारणो जान।
तेरस चौदस द्वय उपवास, मावस पून्यो भोजन तास।
अबे पारणे की विधि जिसो, सुनी बखानत हों मैं तिसो।
बेला प्रथम पारणो येह, तीन अंजुली शर्बत लेय।
अरु तेबीस पारणे जान, तीन अंजुली दूध बखान।
इम बेला कीजे चौबीस, तिनतैं फल अति लेहु गिरीश।

—कि० सिं० क्रि०

भावार्थ :—यह व्रत ६ महिने में पूर्ण होता है जिसमें २४ बेला और २४ पारणा होते हैं—

(१) **ऋषभनाथ का बेला** :—सप्तमी, अष्टमी का उपवास और नोमी को तीन अंजुली शर्बत का पारणा।

(२) **अजितनाथ का बेला** :—त्रयोदशी और चतुर्दशी का उपवास और पूर्णिमा को ३ अंजुली दूध का पारणा।

(३) **संभवनाथ का बेला :**—सप्तमी अष्टमी का उपवास और नवमी को तीन अंजुली दूध का पारणा ।

इसी प्रकार प्रत्येक सप्तमी, अष्टमी और त्रयोदशी-चतुर्दशी का बेला तथा नवमी और पून्यो को दूध का पारणा कर २४ बेला करे । **'ओं ह्रीं वृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकराय नमः'** इस मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे ।

अथ चतुर्दशमनु व्रत कथा

व्रत विधिः—चैत्र शुक्ला १३ के दिन एकाशन करे । १४ के दिन सुबह अष्टद्रव्य लेकर मंदिर में जाये, वेदी पर अनन्तनाथ भगवान की प्रतिमा विराजमान कर पंचामृत अभिषेक करे । भगवान के सामने १० स्वस्तिक निकाल कर अष्टद्रव्य रखे और अपने इष्टदेव की आराधना करनी चाहिए । श्रुत व गणधर की पूजा करे । यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतनाथ तीर्थंकराय किन्नरयक्ष अनंतमति यक्षि सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्पों से जाप्य करे । णमोकार मन्त्र का जाप करे । यह कथा पढ़नी चाहिये । फिर १४ पत्ते एक पान में रखकर महार्घ्य बनाकर चढ़ावे । सत्पात्र को आहारदान दे । दूसरे दिन पूजा करके पारणा करे । तीन दिन ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे ।

चतुर्विध संघ को आहारदान दे । १४ दम्पतियों को भोजन कराकर यथाविधि उनका सम्मान करे ।

इस प्रकार १४-चतुर्दशी तक यह व्रत करे फिर उद्यापन करे । उस समय अनंतनाथ तीर्थंकर का विधान कर महाभिषेक करे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप में पूर्वविदेह क्षेत्र में पुष्कलावती नामक एक विस्तीर्ण देश है ।

उसमें पुण्डरीकिणी नामक नगर है, उसमें वज्रसेन नामक तीर्थंकर होने वाले राज्य करते थे। उनकी श्रीकान्ता नामक महारानी थी। उनके उदर से वज्रनाभि नामक एक प्रथम पुत्र उत्पन्न हुआ था। उसको अपना सारा राज्य देकर दीक्षा लेकर तपस्या की जिसके प्रभाव से उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हुई और समवशरण की रचना हुई। वज्रनाभि ने षटखण्ड को जीतकर चक्रवर्ती पद प्राप्त किया।

उन्होंने तीर्थंकर की पूजा की तथा मनुष्य के कोठे में जाकर बैठ गये। दिव्यध्वनि द्वारा धर्मोपदेश सुना और श्रावक के व्रत के बारे में पूछा। तब उन्हें चतुर्दशमनु व्रत दिया, राजा ने उसका अच्छी तरह पालन किया, षोडश भावना भायी जिससे उन्होंने तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया और अहमिंद्र स्वर्ग में देव हुये। वहां की आयु पूर्ण कर जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र है उसमें आर्यखण्ड में साकेता (अयोध्या) नगरी है, उसमें १४ वें मनु नाभि राजा व उनकी पत्नी मरुदेवी थी उनके पेट से प्रथम पुत्र आदिनाथ हुये। इस प्रकार इसकी कथा है।

बाहरसौ चौंतीस व्रत या चारित्रशुद्धि व्रत

यह व्रत भादों सुदी प्रतिपदा से आरम्भ होता है, इसमें १२३४ उपवास तथा एकाशन करने पड़ते हैं। दस वर्ष और साढ़े तीन माह में पूर्ण किया जाता है। यदि एकान्तर व्रत किया जाय तो पांच वर्ष पौने दो माह में पूर्ण होता है। उपवास के अनन्तर पारणा के दिन रस त्याग कर या नीरस भोजन करे, आरम्भ परिग्रह का त्याग कर भक्ति पूजा में निमग्न रहे।

'ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा चारित्रशुद्धि व्रतेभ्यो नमः'

मन्त्र का जाप प्रतिदिन १०८ बार दिनमें तीन बार करे और व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करने का विधान है। उद्यापन के समय बारह सौ चौंतीस विधान करना चाहिये, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करना चाहिये, चतुर्विधसंघ को आहारादि उपकरण देवे।

कथा

इस व्रत को उज्जैन नगरी के राजा हेमप्रभ ने किया था, जिसके प्रभाव

से तीसरे भव में विदेह क्षेत्र की विजयापुरी नगरी में धनंजय राजा के चंद्रभानु नाम का तीर्थंकर पुत्र हुआ और पंचकल्याणक प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त किया।

चारित्र्यशुद्धि व्रत की व्यवस्था

चारित्र्यशुद्धौ दशशतचत्वारिंशदुपवासाः सूत्रक्रमेण हिंसादि पापानां त्यागश्च कार्यः। इदं षडवर्षकाले परिपूर्णं भवति।

अर्थ :—चारित्र्यशुद्धि व्रत १०४२ उपवास का होता है। इस व्रत में उपवास के दिन हिंसादि पापों का अतीचार सहित त्याग करना चाहिए। ६ वर्ष में यह व्रत पूरा होता है। इसमें एक उपवास पश्चात् एक पारणा, पुनः एक उपवास, पश्चात् पारणा इस प्रकार उपवास और पारणा के क्रम से २०८४ दिनों में परिपूर्ण होता है।

चारित्रमाला व्रत कथा

आश्विन शुक्ल पूर्णिमा के दिन प्रातःकाल प्रतिक स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा सामग्री लेकर जिनमन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर पंचपरमेष्ठि भगवान की मूर्ति स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, वेदीमण्डप को सजाकर वेदी के ऊपर अष्टदल कमल पचरंग के चूड़ों से निकाले, मण्डल पर आठों दिशाओं में कुम्भ कलश रखे, पंचवर्णसूत्र को मण्डल पर लपेटे, मध्य में एक कुम्भ कलश सजाकर रखे, उसके ऊपर एक थाली रखे, उस थाली में पांच पान रखे, ऊपर अष्ट-द्रव्य रखे, बीच थाली में पंचपरमेष्ठि भगवान की मूर्ति स्थापित करे, नित्यपूजा करके पंचपरमेष्ठि विधान करे, इस प्रकार चार बार अभिषेक पूजा विधि करे।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में महाअर्घ्य रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य चढ़ा देवे, उस दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे, उपवास करे, दूसरे दिन मुनिराजों को दान देकर स्वयं पारणा करे।

इस प्रकार इस व्रत को सताईस बार उपरोक्त तिथि को पूजा कर उपवास करे, अंत में उद्यापन करे, उद्यापन के समय, महाभिषेक करके एक नवीन पंचपरमेष्ठि भगवान की मूर्ति की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा में राजा श्रेणिक और चेलना का चारित्र पढ़े।

चंदनादेवी व्रत कथा

चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को एकाशन करके चतुर्दशी को शुद्ध होकर मन्दिर जी में जावे, तीन प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, वर्द्धमान तीर्थंकर का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर व यक्षयक्षि क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वर्धमान तीर्थंकराय मातंगयक्ष सिद्धायिनीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, एक पूर्ण अर्घ्य आरती पूर्वक चढ़ावे, सत्पात्रों को दान देवे, उस दिन उपवास करे, दूसरे दिन पूजा व दान देकर स्वयं पारणा करे, तीन दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे, दीप जलावे, एक पाटे पर सात पान लगाकर ऊपर अष्टद्रव्य व भीगे हुये चने व नैवेद्य चढ़ावे, इस प्रकार महिने की उसी तिथि को व्रत पूजा करे, इस प्रकार १४ व्रत पूजा पूर्ण होने पर कार्तिक अष्टान्हिका में इस व्रत का उद्यापन करे, उस समय वर्द्धमान तीर्थंकर का विधान करके महाभिषेक कर, चतुर्विध संघ को आहार-दान देवे।

कथा

राजा श्रेणिक रानी चेलना की कथा पढ़े।

इस व्रत को चंदना ने किया था। उसके प्रभाव से समवशरण में गणिनी बनकर, व्रत तप के प्रभाव से स्त्रीलिंग का छेदकर स्वर्ग में इन्द्र हुई।

कर्नाटक प्रदेश के कल्याण नगर में बिज्जल नाम का राजा शीलादेवी सहित राज्य करता था, नगरी के उद्यान में ज्ञानसागर मुनिराज से रानी ने चंदना देवी व्रत को लेकर अच्छी तरह से पालन किया, उद्यापन के समय मुनिसंघ को सर्वतीर्थ क्षेत्रों की यात्रा के लिये लेकर गई और यात्रा करवाई। अंत में रानी ने दीक्षा ग्रहण की और घोर तपश्चरण कर स्वर्ग में मरकर देव हुई।

अथ चतुरिन्द्रिय जातिनिवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब करे अन्तर सिर्फ इतना है कि चैत्र शुक्ला ४ को उपवास करना चाहिये।

अभिनन्दन भगवान की पूजा व मन्त्र जाप करना चाहिये। यहां पर ४ पत्ते लेना चाहिए।

अथ चारुदत व्रत कथा अथवा चारुमुख व्रत कथा

व्रत विधि :—चैत्र आदि १२ महिने में किसी भी महिने के शुक्ल पक्ष की पंचमी के दिन एकाशन करे और ६ के दिन उपवास करे। उस दिन सुबह शुद्ध कपड़े पहनकर व अष्टद्रव्य लेकर मन्दिर जाये, दर्शन आदि क्रिया करने के बाद वेदी पर पद्मप्रभ तीर्थंकर व कुसुमवर यक्ष व मनोवेगा यक्षी सहित प्रतिमा स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे। भगवान के सामने एक पाटे पर ६ स्वस्तिक निकाले, उस पर अष्टद्रव्य रखे। फिर वृषभनाथ तीर्थंकर से पद्मप्रभु तीर्थंकर तक पूजा करे। पंच पकवान का नैवेद्य बनावे। श्रुत व गुरु की अर्चना करे। फिर यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करे।

जाप :—"ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पद्मप्रभु तीर्थंकराय कुसुमवर मनोवेगा यक्षयक्षी सहिताय नमः स्वाहा"

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्पों से जाप करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे। श्री जिन सहस्रनाम व श्री पद्मप्रभ तीर्थंकर चरित्र पढ़े। यह कथा पढ़े आरती करे। सत्पात्र को दान दे, दूसरे दिन पूजा व दान देकर पारणा करे।

इस प्रकार ६ तिथि पूर्ण होने पर उद्यापन करे। उस समय पद्मप्रभु तीर्थंकर विधान करके उद्यापन करे। चतुर्विध संघ को दान दे। शक्ति हो तो मन्दिर बनवाये नहीं तो जीर्णोद्धार करावे।

कथा

यह व्रत पूर्वभव में चारुदत्त ने किया था जिसके निमित्त से ३३ कोटि धन का मालिक बना पर कर्म के योग से वेश्या की संगति से सब नष्ट हो गया। फिर कुछ निमित्त से जिनदीक्षा ली, घोर तपश्चर्या की जिससे सद्गति प्राप्त हुई।

अथ चक्रवाल व्रत कथा

फाल्गुन महिने के उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र जिस दिन पूर्ण हो, उस दिन व्रत पालन करने वाला शुद्ध होकर सब प्रकार की पूजा सामग्री हाथ में लेकर जिन-मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, अखण्डदीप जलावे, अभिषेक पीठ पर आदिनाथ प्रभु की प्रतिमा गोमुख यक्ष चक्रेश्वरीदेवी सहित स्थापन कर भगवान का अभिषेक करे, उनके अर्घ्य, जयमाला, पूजा, स्तोत्र-पूर्वक बोलकर पूजा करें, यक्षयक्षि की व क्षेत्रपाल की भी पूजा करे।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीआदिनाथाय गोमुख चक्रेश्वरी यक्षयक्षि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे, सहस्रनाम पढ़े, आदिप्रभु का जीवन चरित्र पढ़े, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में अष्टद्रव्य रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, सत्पात्रों को दानादिक देवे, धर्मध्यान से समय व्यतीत करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे।

इसी प्रकार फाल्गुन महिने के उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र पर पूजा करके उपवास करे, इसका नाम पंचकल्याण है, इस नक्षत्र के दिन उपवास करने से १००००० लक्ष उपवास का फल मिलता है।

उसी प्रकार उपरोक्त विधि से, चैत्र मास के चित्रा नक्षत्र में उपवास करके पूजा करने से २ लक्ष उपवास का फल प्राप्त होता है, इस दिन व्रत का नाम अष्ट महाविभूति है।

वैशाख महीने के विशाखा नक्षत्र पर उपवास करके पूजा करने से चार लक्ष उपवास का फल प्राप्त है, व्रत का नाम जिनदर्शन है।

ज्येष्ठा महीने के ज्येष्ठा नक्षत्र में उपवास करके पूजा करने से आठ लक्ष उपवास का फल मिलता है। उस दिन के व्रत का नाम चतुर्विंशति तीर्थंकर है।

आषाढ़ महीने के पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र पर पूजा करने से और उपवास करने से, सोलह लक्ष उपवास का फल प्राप्त होता है। व्रत का नाम अनन्त वर्धन है।

श्रावण महिने के श्रवण नक्षत्र को उपवास कर पूजा करने से बत्तीस लक्ष उपवास का फल प्राप्त होता है। व्रत का नाम धर्मानन्द है।

भाद्रपद महीने में उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र को उपवास करके पूजा करे, तो चौसठ लक्ष उपवास का फल प्राप्त होता है। उस दिन के व्रत का नाम आयु-वर्धन है।

आश्विन महीने के अश्विनी नक्षत्र में उपवास करके पूजा करने से १२८ लक्ष उपवास का फल प्राप्त होता है। व्रत का नाम श्रीवर्धन है।

कार्तिक महीने के कृतिका नक्षत्र को उपवास कर पूजा करने से २५६ लक्ष उपवास का फल प्राप्त होता है। व्रत का नाम आरोग्य ज्ञानवर्धन है।

मार्गशीर्ष महीने के मृगशिर नक्षत्र कर पूजा करने से ५१२ लक्ष उपवास का फल प्राप्त होता है। व्रत का नाम परमैश्वर्य वर्धन है।

पौष महीने के पुष्य नक्षत्र में उपवास कर पूजा करने से १२४ लक्ष उपवास का फल प्राप्त होता है। व्रत का नाम पञ्चालंकार है।

माघ महीने के मघा नक्षत्र में उपवास कर पूर्वोक्त प्रमाण पूजा करने से २०४८ लक्ष उपवास का फल प्राप्त होता है। व्रत का नाम धनवर्धन है।

इस प्रकार तीन वर्ष तीन महीने तक व्रत को करे। इस को विधिवत् ३९ उपवास करने व पूजा करने से ४०९५००००० लक्ष उपवास का फल प्राप्त होता है,

इस व्रत को पूर्ण होने पर उद्यापन करे। उस समय आदिनाथ तीर्थंकर भगवान की यक्षयक्षि सहित नवीन मूर्ति बनवा कर पंच कल्याणक प्रतिष्ठा करे, चारों प्रकार के संघ को चारों प्रकार का दान देवे। इस व्रत की ऐसी विधि है कि जो भव्य जीव गुरु के सानिध्य में जाकर विधिपूर्वक व्रत को ग्रहण करता है उसको अपार पुण्यबन्ध होता है, परम्परा से मोक्ष सुख को प्राप्ति होती है।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में आर्य खण्ड है। उस खण्ड में मगध देश है, उस देश में राजग्रही नाम की नगरी है। उस नगर का राजा बुद्धापन अपनी रानी इन्द्रानी के साथ भगवान महावीर के समवशरण में जाकर आदरपूर्वक हाथ जोड़कर नमस्कार करता हुआ बारह सभा में जाकर उपदेश सुनने बैठ गया। कुछ समय उपदेश सुनने के बाद, इन्द्रायिणी रानी हाथ जोड़कर नमस्कार करती हुई प्रार्थना करने लगी कि हे प्रभु! मुझे संसार से पार होने के लिए कोई व्रत कहो, तब भगवान कहने लगे, हे देवि! तुम चक्रवाल व्रत का पालन करो, ऐसा कहकर उपरोक्त व्रत विधान भगवान ने कहा, रानी ने भक्ति से नमस्कार कर व्रत को स्वीकार किया और सब नगरी में वापस लौट आये। रानी इन्द्रायिणी ने यथाविधि व्रत का पालन किया और अन्त में उसका उद्यापन किया, मरण समय समाधिपूर्वक मरकर स्वर्ग में देव हुई और भवांतर से मोक्ष गई।

अथ चतुर्विंशतिगणिनी व्रतकथा

व्रत विधि :—फाल्गुन कृ. ३० को एकाशन करना। चैत्र शु. १ को प्रातः काल स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहनकर सामग्री लेकर जिनालय जाये। मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा करके नन्दादीप उतारे। २४ तीर्थंकर की प्रतिमा यक्षयक्षी के साथ स्थापित करके पंचामृत अभिषेक करे। अष्टद्रव्य से पूजा करे। श्रुत गणधर की पूजा करके यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करे। एक पाटे पर २४ पान रखकर उस पर अक्षत फल फूल रखे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वृषभादिवर्धमांत्यवर्तमान तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प चढ़ाये । णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे तथा कथा पढ़े । महार्घ्य करके आरती उतारे । उस दिन उपवास करे । आहारादि दान दे । दूसरे दिन पूजा करके पारणा करे । इस प्रकार पक्ष में एक दिन उसी तिथि को पूजा करना । ऐसे २४ पूजा पूर्ण होने पर उद्यापन करना उस समय २४ तीर्थ-कराधना करके महाभिषेक करना चतु:संघ को चतुर्विध दान देना ।

कथा

जम्बूद्वीप में मेरूपर्वत के पूर्वविदेह क्षेत्र में पुष्कलावती नाम का विशाल देश है । वहां पुंडरीकिणी नगरी में प्रजापाल नाम के राजा राज्य करते थे जो पराक्रमी, धर्मवान् व नीतिवान थे । उनको कनकमाला नाम की पटरानी थी जिसके लोकपाल नाम के पुत्र और रत्नमाला धर्मपत्नी थी । कुबेरकांत श्रेष्ठी व उसकी कुबेरदत्ता स्त्री थी । मन्त्री, पुरोहित, सेना इनके साथ समय बीत रहा था ।

एक दिन महल में चारण मुनी चर्यानिमित्त आये । उनको पडगाह कर प्रासुक आहार दिया । पुनः थोड़ी देर उपदेश सुना । कुबेरदत्ता मुनिवर से विनय से बोली—हे स्वामिन ! मुझे उत्तम सुख को प्राप्ति हेतु व्रत बतायें । मुनि बोले—हे कन्या ! तू चतुर्विंशतिगणिनी व्रत का पालन कर, जिससे तुझे स्वर्ग ही नहीं मोक्ष सुख की प्राप्ति होगी । सुनकर उसने यह व्रत स्वीकार किया । यह देख सब ने यह व्रत ग्रहण किया तथा विधिपूर्वक पालन किया । जिसके फलस्वरूप उन्हें स्वर्ग सुख तथा क्रम से मोक्ष सुख की प्राप्ति हुई ।

चतुरशीति गणधर व्रत कथा

व्रत विधि :—मार्गशीर्ष कृ. ९ के दिन एकाशन करे, १० के दिन शुद्ध कपड़े पहन कर मन्दिर जाये, अष्ट द्रव्य भी ले जाय । पीठ पर (पाटे पर) चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा रखकर पंचामृत अभिषेक करे । २४ स्वस्तिक निकाल कर उस पर २४ पान रखकर उस पर अष्ट द्रव्य रखे । अष्ट द्रव्य से पूजा अर्चना करे ।

जाप :—ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे । णमोकार मन्त्र का भी जाप करे ।

श्री जिन सहस्र नाम का पाठ करे । एक पात्र में २४ पान रखकर उस पर अष्ट द्रव्य रखे । उस पर नारियल रखे । इस प्रकार महार्घ्य तैयार करे । आरती करे । उस दिन उपवास करे । सत्पात्र को आहार आदि दे । दूसरे दिन पूजा दान आदि करके पारणा करे, तीन दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे ।

इस प्रकार पौष व माघ तक पूजा करे । इस प्रकार तीन पूजा पूर्ण होने पर अष्टान्हिका में इस व्रत का उद्यापन करे । उस समय श्री सम्मेदशिखरजी व्रत-विधान व गणधरवलय विधान करके महाभिषेक करे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के विदेह क्षेत्र में पुष्कलावती नामक एक विशाल नगर है । उसमें पुण्डरीकिणी नामक एक सुन्दर नगर है । वहां पर वज्रसेन नामक एक बड़ा पराक्रमी राजा राज्य करता था । उसके श्रीकान्ता नामक एक सुशील स्त्री थी । उसको वज्रनाभि नामक पुत्र था । इस प्रकार अपने पूरे परिवार सहित राजा छः खण्ड के राज्य को भोग रहा था ।

एक दिन उस नगर के उद्यान में श्रुतसागर महामुनि महाराज अपने संघ सहित आये थे । यह सुन राजा अपनी प्रजा सहित दर्शन करने गये । वन्दना कर राजा ने धर्मोपदेश सुना । राजा ने अपने दोनों हाथ जोड़कर मुनिश्वर से कहा कि हे दयासिंधो स्वामिन ! सुगति साधक ऐसा कोई व्रत कहो । तब महाराज ने यह गणधर व्रत विधान कहा । तब राजा ने अपने पूरे परिवार सहित यह व्रत लिया, फिर वंदना कर सब अपने नगर में वापस आये । और यह व्रत विधिपूर्वक किया । इस व्रत के प्रभाव से वज्रनाभि राजा इस भरतक्षेत्र के पहले तीर्थंकर आदिनाथ हुये । बाकी के सब गणधर हुये ।

अथ चतुर्विंशतिदातृ व्रत कथा

व्रत विधि :—इसकी पहले के समान सब विधि करना । वैशाख शु० २ को एकाशन व ३ को उपवास, पूजा वगैरह करके स्वयंभूस्तोत्र पढ़ना ।

कथा

जम्बूद्वीप में पूर्वविदेह क्षेत्र में पुण्डरीकिणी देश है । वहां कुबेरकांत राज-

श्रेष्ठी थे। प्रियदत्ता उनकी धर्मपत्नी थी । जो षट्कर्म का नियम से पालन किया करती थी ।

एक दिन विपुलमति नाम के चारण महामुनिराज चर्या के निमित्त से श्रेष्ठी के घर के सामने आये । तब श्रेष्ठी ने मुनि को पडगाहनकर निरन्तराय आहार दिया। कुछ देर उपदेश सुनने के बाद प्रियदत्ता सेठानी बोली–हे गुरुराज ! हमारे वंश में संतान की अभिवृद्धि कब होगी ? तब अवधिज्ञान से जानकर मौनवृत्ति से अपने दाहिने हाथ की पांच अंगुलियां व बायें हाथ की एक अंगुली उठाकर दिखाकर घर में सब को आशीर्वाद दिया और चले गये ।

बाद में कितने दिनों में दम्पति को क्रम से कुबेरदत्त, कुबेरप्रिय, कुबेर मित्र, कुबेर ऐसे पुत्र तथा कुबेरश्री नाम की कन्या हुई। इन सबके साथ सुकृतफल से सांसारिक सुख भोगकर क्रम से स्वर्ग व मोक्ष सुख की प्राप्ति की ।

अथ चतुर्विंशति श्रोतृ व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले व्रत के अनुसार सर्व विधि करना। चैत्र शु. ४ को एकाशन तथा ५ को उपवास पूजा आदि करना ।

कथा

धातकी खण्ड में पूर्व मन्दर के अपरविदेह क्षेत्र में सीता नदी के किनारे गंधिल नाम का देश है । उसमें अयोध्या नामक राज्य है । उसमें अर्हद्दास राजा राज्य करता था । सुप्रति व जिनदत्ता नाम की दो रानियां थीं । सुप्रति के वीतमय तथा जिनदत्ता के विभीषण नाम के पुत्र हुए । इसके अतिरिक्त मनोहर मन्त्री, उसकी स्त्री मनोरमा, श्रुतकीर्ति पुरोहित, मनोदत्ता भार्या, शूरसेन सेनापति, सुरदत्ता गृहिणी इस प्रकार पूर्ण परिवार था ।

एक दिन संजयंत नामक मुनिराज चर्या के निमित्त आये । राजा ने पड-गाहन कर निरन्तराय आहार दिया । कुछ समय तक उनके मुख से उपदेश सुनकर राजा ने मुनि को नमस्कार कर व्रत देने के लिए प्रार्थना की । तब मुनिवर ने उन्हें यह व्रत पालन करने को कहा तथा सब विधि बताई । राजा ने सबके साथ इस व्रत

का पालन कर समयानुसार उद्यापन किया । जिसके योग से उनको स्वर्ग तथा क्रम से मोक्ष की प्राप्ति हुई।

चन्दन षष्ठीव्रत की विधि

चन्दनषष्ठ्यां तु भाद्रपदकृष्णा षष्ठी ग्राह्या, षड्वर्षाणां यावत् व्रतं भवति, अत्र चन्द्रप्रभस्य पूजाभिषेकं कार्यम् ।

अर्थ :—चन्दनषष्ठी व्रत भादों वदी षष्ठी को होता है, छः वर्ष तक व्रत किया जाता है । इस व्रत में चन्द्रप्रभ भगवान् का पूजन, अभिषक करना चाहिए ।

विवेचन :—भादों वदी षष्ठी को उपवास धारण करें । चारों प्रकार के आहार का त्याग कर जिनालय में भगवान् चन्द्रप्रभ का पूजन, अभिषेक करे । छः प्रकार के उत्तम प्रासुक फलों से छः अष्टक चढ़ावे । णमोकार मन्त्र का १०८ बार फूलों से जाप करना चाहिए । चारों प्रकार के संघ को आहार, औषध, अभय और ज्ञान इन चारों दानों को देना चाहिए । तीनों काल सामायिक, अभिषेक पूजन और रात्रि-जागरण करना चाहिए । रात को स्तोत्र, भजन, आलोचना एवं प्रार्थनाएं पढ़ते हुए धर्मध्यान पूर्वक बिताना चाहिए । उपवास के दिन गृहारम्भ, विषय-कषाय और विकथाओं का त्याग करना चाहिए । यह छः वर्ष तक किया जाता है ।

चंद्रषष्ठो व्रत कथा

भाद्रपद कृष्णा ६ के दिन शुद्ध होकर पूजा सामग्री लेकर मंदिर में जावे, ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, मंडप शृंगारित करके शुद्ध भूमि पर या मंडपवेदी पर पांच वर्ण से षष्टदल कमल बनावे, अष्टमंगल कुम्भ, मंगलद्रव्य रखे, उसके बाद अभिषेक पीठ पर चंदप्रभु भगवान की मूर्ति यक्षयक्षिणी सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, भगवान को मंडल पर स्थापन कर नित्यपूजा विधिक्रम करके चंदनषष्टी व्रत विधान करे, इसी प्रकार चार बार व्रत विधान करे, ३६ नैवेद्य चढ़ावे, श्रुत गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री चंद्रप्रभ तीर्थंकराय श्यामयक्ष ज्वालामालिनी देवि सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में छः पान रखकर उन पानों के ऊपर अष्टद्रव्य रखे, उसके अन्दर एक सुवर्ण पुष्प रखे, अर्घ्य हाथ में लेकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ चढ़ा देवे, छः नवीन सूपों में प्रत्येक में गंध अक्षत, पुष्प, फल, मिठाई, सुपारी, श्रीफल आदि सामग्री रखकर ऊपर से सूपों से ढक देना, एक सफेद धागे से बांध देना और सब को भगवान के सामने रख देना, उन छहों में से दो भगवान के सामने चढ़ा देवे, दो सौभाग्यवती स्त्रियों को देवे, एक अपने घर ले जावे, एक शासन देवता को चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, दूसरे दिन सत्पात्रों को आहार देकर स्वयं पारणा करे, इस प्रकार इस व्रत को छह वर्ष पालन करे, अन्त में उद्यापन करे, उस समय एक नवीन यक्षयक्षि सहित चंद्रप्रभ प्रतिमा तैयार कर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, उद्यापन विधानानुसार पूजा विधि करे, चतुर्विध संघ को चारों प्रकार का दान देवे, उपकरण दान करे, छः संघों को मुनिश्वरों को आहार देवे, छह दंपतिवर्ग को भोजन देवे, उनको वस्त्रादि देकर संतुष्ट करे, नवीन जिनमंदिर बनवाये, पुराने मन्दिर का जीर्णोद्धार करे, तीर्थ-यात्रा करना, इस प्रकार व्रत की विधि हुई।

कथा

इस भरत क्षेत्र के अवन्ति देश में उज्जयनी नाम का नगर है। उस नगर में सिंहसेन नामका राजा अपनी प्रियतमा लक्ष्मीमति के साथ सुख से राज्य भोग कर रहा था, उस नगर में जिनदत्त नामका राजश्रेष्ठी अपनी सेठानी जिनमति के साथ रहता था। एक दिन अतिमुक्त नामके मुनिश्वर आहार के लिये सेठ के घर पधारे। सेठ ने नवधाभक्तिपूर्वक आहार दिया, मुनिश्वर ने सेठ को आशीर्वाद दिया और जंगल को वापस चले गये, पूर्वकृत कर्मोदय से सेठ को तीन दिन के बाद कुष्ट रोग हो गया, ऐसा देखकर सेठ की सेठानी जिनमति बहुत खिन्न होने लगी, मन में बहुत दुःखी रहने लगी, लेकिन जिनेन्द्र भगवान की दृढ भक्त रहने के कारण पति का कुष्ट रोग निवारणार्थ भगवान की भक्ति करने लगी, नित्य जिनेन्द्राभिषेक करके पति को देने लगी, सेठानी की जिनेन्द्रभक्ति दृढ़ है, ऐसा देखकर ज्वालामालिनी देवी का आसन कम्पायमान हुआ, अवधिज्ञान के द्वारा जिनमति का संकट जानकर सेठानी के

पास आई, और कहने लगी की हे सौभाग्यशालिनी जिनमती, तू चिन्तातुर क्यों दिख रही है ? तब सेठानी ने कहा कि हे देवी, मेरे पति कुष्ट रोग से ग्रसित हो गये हैं अब मैं क्या करू कुछ उपाय समझ में नहीं आ रहा है, कौनसे पापकर्म के कारण मेरे पतिदेव रोगाक्रांत हुये ? तब देवी कहने लगी हे जिनभक्ते, तुम मासिक धर्म में थी (रजस्वला) उसी अवस्था में तुमसे आहार बनवा कर तुम्हारे पति ने अतिमुक्तक मुनिराज को आहार दे दिया, तुम्हारी इच्छा न होते हुये भी ऐसा कार्य हुआ है इस पाप के कारण ही तुम्हारे पति को कुष्ट रोग हुआ है, उस रोग को ठीक होने के लिये, तुम नित्य भगवान का अभिषेक करो और उस गंधोदक को तुम्हारे पति के शरीर में लगाओ और चंदन षष्टि व्रत को पालन करो, उसका उद्यापन करो, यही रोग के परिहार का उपाय है, तब देवी ने पूर्ण व्रत की विधि कही। सेठानी ने देवी से पूछा कि आप कौन हैं, आप का स्थान कहां है, आपको इस व्रत की विधि किसने कही, तब देवी कहने लगी मेरा नाम ज्वालामालिनी देवी है, पूर्व विदेहक्षेत्र में पुंडरीकिणी नगरी है, वहां सीमंकर उद्यान में मेरा निवास स्थान है, वहां एक चैत्यालय है, एक बार चैत्यालय में सुमति नाम की आर्यिका आयी, भक्त लोग माता जी से चंदन षष्टि व्रत का स्वरूप पूछ रहे थे, वहां माता जी के मुख से मैंने इस व्रत की विधि सुनी थी सो ज्यों की त्यों तुमको मैने कही, ऐसा कहकर देवी अदृश्य हो गई।

देवी के मुख से यह सब सुनकर सेठानी को बहुत आनन्द हुआ, जिनमति ने यथाविधि व्रत का पालन किया, व्रत का उद्यापन किया, जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक करके सेठ के शरीर में लगाया लगाते ही सेठ का कुष्ट रोग नष्ट हो गया, दोनों ही पति पत्नि कामदेव और रति के समान शोभा पाने लगे और सुख को भोगने लगे। एक समय जिनमति को सूर्य मंडल छिन्न-भिन्न दिखा, तब जिनमति ने समझ लिया कि मेरी आयु मात्र दस दिन की रह गई है, उसने परिवार से मोह छोड़कर आर्यिका माताजी से आर्यिका दीक्षा ग्रहणकर ली और समाधिमरण कर स्वर्ग में स्त्रीलिंग छेद कर देव हो गई। तब सेठ ने भी अपने पुत्र को नगर श्रेष्ठीपद देकर जिनदीक्षा ग्रहण करली और समाधिमरण कर उसी स्वर्ग में वह भी देव हो गया, कालान्तर में दोनों ही मोक्ष गये।

अथ चतुर्विंशतियक्ष व्रत कथा

व्रत विधि :—ज्येष्ठ शुक्ला ७ को एकाशन करे। अष्टमी के दिन शुद्ध कपड़े पहन कर पूजा द्रव्य हाथ में लेकर मंदिर जाये। तीन प्रदक्षिणा पूर्वक जिनेन्द्र को साष्टांग नमस्कार करे। पीठ पर २४ तीर्थंकर प्रतिमा यक्षयक्षी के साथ स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से चौबीस तीर्थंकर, नवदेवता, श्रुत व गणधर तथा २४ यक्षयक्षी की अर्चना करे। क्षेत्रपाल की अर्चना करे।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से पुष्प से १०८ बार जाप करे। फिर ॐ **आं क्रों ह्रीं ह्रूं फट चतुर्विंशतियक्षेभ्यो नमः स्वाहा**॥ १०८ पुष्प से जाप करे। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे। यह व्रत कथा पढ़कर एक पात्र में पान रखकर उस पर अष्ट-द्रव्य तथा एक नारियल रखकर महार्घ्य करे और मंगल आरती उतारे। उस दिन उपवास करे। दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करे। तीन दिन ब्रह्मचर्यपूर्वक धर्मध्यान से समय बितावे।

इस प्रकार अष्टमी व चतुर्दशी को पूजाक्रम करे। इस प्रकार २४ पूजा पूर्ण होने पर इसका उद्यापन करे। उस समय २४ तीर्थंकरों की आराधना यक्षयक्षी सहित करके महाभिषेक करे। चतुःसंघ को चतुर्विधि से दान दे। इस प्रकार यह इसकी पूर्ण विधि है।

कथा

धातकी खंड में सीतोदा नामकी बड़ी नदी है। उसके उत्तरी किनारे कच्छ नामका विशाल देश है जिसमें वीतशोक नामक अत्यंत मनोहर नगर है। वहां पहले प्रभवतेज नाम के पराक्रमी राजा राज्य करते थे। उनकी प्रभावती पटराणी थी जो अतिशय गुणवती थी। उनके प्रहसित नाम के पुत्र थे। उनकी स्त्री का नाम प्रियमित्रा था। प्रताप नामक मंत्री, उसकी भार्या प्रियकारिणी, वैसे ही पुरोहित श्रेष्ठी, सेनापति आदि परिवारजन थे। उनके साथ एक बार राजा नगर के उद्यान में प्रहसित वाक्य मुनिवर के आने के समाचार मिलते ही दर्शन को गये, वहां जाकर

कुछ समय धर्मोपदेश सुनकर व्रत ग्रहण करने की इच्छा से राजा ने प्रार्थना की। उस समय मुनिवर ने उन्हें यह व्रत पालन करने को कहकर व्रत विधि बताई। सबने मुनिराज के पास यह व्रत ग्रहण किया। मुनिराज को नमस्कार करके राजा परिवार सहित नगर लौटे। नियमानुसार व्रत का पालन करने से वे सब स्वर्ग को तथा क्रम से मोक्ष गये। इस प्रकार यह व्रत है।

अथ चतुर्विंशतियक्षी व्रत कथा

व्रत विधि :—इस व्रत की पहले की कथा के अनुसार सब विधि करना। आश्विन शुक्ला ६ को एकाशन तथा ८ के दिन उपवास, पूजा आदि करना। यक्ष की जगह यक्षी के मन्त्र का जाप करना। अष्टमी १२ व चतुर्दशी १२ मिलकर २४ पूजा पूर्ण करे।

कथा

श्रेणिक महाराज व चेलना महारानी इन्हीं की कथा यहां लेना।

अथ चतुर्विंशतिगणिनी व्रत कथा

व्रत विधि :—फाल्गुन कृष्णा ३० के दिन एकाशन करना। चैत्र शुक्ला १ के दिन प्रातः स्नान करके नूतन धुले वस्त्र पहनकर पूजा की सामग्री लेकर जिन-मन्दिर जाये। मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर भक्ति से साष्टांग नमस्कार करे। आरती करना। पीठ पर २४ तीर्थंकर प्रतिमा यक्षयक्षी के साथ स्थापित करके पंचामृत अभिषेक करना। उनकी अष्टद्रव्य के पूजा करना। श्रुत व गणधर की पूजा करके यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करना। एक पाटे पर २४ पान रखकर उस पर चावल, फल-फूल, नैवेद्य वगैरह रखना।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वृषभादिवर्धमानांत्यवर्तमानतीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प चढ़ाना। एक महार्घ्य लेकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा करके मंगल आरती करना। उस दिन उपवास करना, सत्पात्र को आहारादि दान देना, दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करना।

कथा

जम्बूद्वीप में मेरुपर्वत के पूर्वविदेह क्षेत्र में पुष्कलावती नामक विशाल देश है। वहां पुण्डरीकिणी नगर में प्रजापाल राजा राज्य करते थे जो पराक्रमी, धर्मवान व नीतिवान् थे। कनकमाला नाम की रूपवती, गुणवती पटराणी थी। लोकपाल नामका पुत्र था जिसके रत्नमाला धर्मपत्नी थी। कुबेरकांत श्रेष्ठी, धर्मपत्नी कुबेरदत्ता, मन्त्री, पुरोहित, सेनापति इनके साथ समय बिता रहे थे।

एक दिन उनके महल में चारणमुनी चर्या के लिए आये। उनका प्रतिग्रहण कर राजा ने प्रासुक आहार दिया। पश्चात् मुनिवर ने उपदेश दिया जिसे सुनकर श्रेष्ठी की पत्नी कुबेरदत्ता बोली—हे स्वामिन् हमें उत्तम सुख की प्राप्ति हेतु व्रत बतायें। तब मुनिराज बोले—हे कन्या तू चतुर्विंशतिगणिनी व्रत का पालन कर जिससे तुम्हें स्वर्ग ही नहीं मोक्ष सुख भी मिलेगा। ऐसा कहकर उसे व्रत विधि बतायी। श्रेष्ठी की पत्नी ने वह व्रत स्वीकार किया, यह देख सभी ने व्रत लिया तथा विधिपूर्वक पालन किया, जिससे उन्हें स्वर्ग सुख तथा क्रम से मोक्षसुख की प्राप्ति हुई।

चारित्राचार व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला त्रयोदशी के दिन शुद्ध होकर मन्दिरजी में जाये, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे। विमलनाथ भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, नैवेद्य चढ़ावे, श्रुत, गणधर वयक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विमलनाथ तीर्थंकराय पाताल यक्ष वैरोटीयक्षि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे। व्रत कथा पढ़े, पूर्ण अर्घ्य चढ़ाये, मंगल आरती उतारे, सत्पात्रों को दान देवे, ब्रह्मचर्य का पालन करे।

इस प्रकार तेरह त्रयोदशी पूजापूर्वक व्रत कर अन्त में उद्यापन करे। उस समय विमलनाथ विधान कर, महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को चारों प्रकार का दान देवे।

कथा

इस व्रत को पहले धनराय नामक राजा ने किया था। अन्त में स्वर्ग सुख प्राप्त करके मोक्ष को गये।

इस व्रत की कथा राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा ही है।

अथ चतुष्पर्व व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला अष्टमी के दिन शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे। यक्षि सहित अभिनन्दन प्रभु का पंचामृताभिषेक करे। अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की तथा यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अभिनन्दन तीर्थंकराय यक्षेश्वर यक्ष वज्रश्रृंखला यक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र को १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे। व्रत कथा पढ़े, चार प्रकार का नैवेद्य चढ़ावे, एक पूर्ण अर्घ्य मंगलआरती पूर्वक चढ़ावे, अष्टमी से लेकर चार दिन तक पूर्व व्रत पूजा करके एक वस्तु से एकाशन करे, फिर चार दिन उसी प्रकार पूजा करके कांजी आहार करे, फिर चार दिन फलाहार, फिर चार दिन उपवास करे। इस प्रकार सोलह दिन में व्रत को पूरा करे, अन्त में उद्यापन करे, उस समय अभिनन्दननाथ विधान करके महाभिषेक करे। चतुर्विध संघ को दान देवे, यथायोग्य शास्त्रादि उपकरण दान करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, धर्मध्यान से पूर्ण समय बितावे।

कथा

पहले इस व्रत को जिनदत्त श्रेष्ठी ने किया था, क्रमशः स्वर्ग सुख का उपभोग किया था।

व्रत कथा में रानी चेलना व राजा श्रेणिक की कथा पढ़ें।

चूडामणि व्रत कथा

कार्तिक शुक्ला एकादशी के दिन जिन मन्दिर जाकर भगवान को नमस्कार करे, नवदेवता प्रतिमा और चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे,

अष्टद्रव्य से पूजा करे, नैवेद्य चढ़ावे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, क्षेत्रपाल को अर्घ्य चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य मंगल आरती पूर्वक चढ़ावे । उसी दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, सत्पात्रों को दान देवे, दूसरे दिन पूजा व दान करके स्वयं पारणा करे । इस प्रकार महिने में एक दिन उसी दिन व्रत करे । एकादश पूजा पूर्ण होने पर अन्त में व्रत का उद्यापन करे । उस समय नवदेवता प्रतिमा नवीन लगाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

इस व्रत को जीवंधर, सुकुमाल, धन्यकुमार, श्रीपाल ने पालन किया था, उनको इस व्रत का फल भी प्राप्त हुआ था ।

इन महापुरुषों का जीवन चरित्र पढ़े ।

चक्रोदय व्रत कथा

आश्विन शुक्ल १३ से पूर्णिमा पर्यन्त तीन दिन तक शुद्ध होकर जिन मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, रत्नत्रय प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, पंच पकवान चढ़ावे, श्रुत व गुरु की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं क्लीं ऐं अर्हं रत्नत्रय जिनदेवेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्पों से जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का भी १०८ बार जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य नारियल सहित चढ़ावे, यथाशक्ति उपवासादि करके ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे ।

इस प्रकार इस व्रत को पांच वर्ष करके अन्त में उद्यापन करे, उस समय

रत्नत्रय प्रतिमा का अभिषेक करके विधान करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

इस व्रत को राजा श्रीषेण (हरीषेण) ने किया था, उसके प्रभाव से चक्रवर्ती होकर सुखों को भोगा। श्रेणिक राजा व रानी चेलना ने इस व्रत को पालन किया था।

अथ छेदोपस्थापना चारित्र व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ शु० १३ के दिन एकाशन करे, १४ के दिन उपवास करे। पूजा, आहारदान पहले के समान करे, १४ दम्पतियों को भोजन करावे। वस्त्र आदि दान करे। १०८ फल व पुष्प चढ़ावे, १०८ चैत्यालय की वन्दना करे।

कथा

पहले सिंधुदेश में सैंधव राजा सिंधुदेवी अपनी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र सिंधुकुमार, उसकी स्त्री सिंधुविजय और सिंधुमती और सिंधुकीर्ति पुरोहित उसकी स्त्री सुन्दर वदनी और सिंधुदत्त श्रेष्ठी उसकी स्त्री सिंधुदत्ता और जयसिंधु सेनापति उसकी स्त्री जयसिंधु सारा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने सिंधुसागर मुनि से व्रत लिया। इसका विधिपूर्वक पालन किया। सर्वसुख को प्राप्त कर अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ श्री जिनेन्द्र पंचकल्याण व्रत कथा

व्रत विधि—चैत्र आदि १२ महीनों में शुक्ल व कृष्ण पक्ष में चौबीस तीर्थंकरों के गर्भ, जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान और मोक्ष की जो जो तिथि हो उस दिन उपवास करना। उपवास के पहले दिन एकाशन करना चाहिए। उस दिन शुद्ध कपड़े पहनकर अष्टद्रव्य लेकर मन्दिर जाना चाहिए। पीठ (वेदी) पर जिस भगवान का कल्याणक होगा उस प्रतिमा को रखकर अभिषेक करे। जिस समय प्रत्यक्ष पंचकल्याणक हुए थे उस समय सौधर्म इन्द्र खुद अपने चतुर्निकाय के साथ

आकर पूजा महोत्सव करके गया था, वह तिथि माननी अत्यन्त सुखकर है। उसी प्रकार अरिहन्त यह मंगल लोगोत्तम व शरण में जाना उचित है। श्रेयकर है। उसी प्रकार से उनके कल्याणक भी मंगल है। इसलिए उस दिन भव्य जीवों को पूजा व सत्पात्र को दान देकर पुण्य सम्पादन करना चाहिए। अष्ट द्रव्य से उनकी पूजा अर्चना करनी चाहिए, श्रुत व गणधर की पूजा करके यक्षयक्षी की अर्चना करनी चाहिए।

जाप ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं (यहां आगे जिस तीर्थंकर का कल्याणक होगा वहीं नाम देना) तीर्थंकराय गोमुखयक्ष चक्रेश्वरी यक्षी सहिताय (यहाँ जिस तीर्थंकर के यक्ष यक्षी होगी वही नाम) नमः स्वाहा इस का १०८ बार जाप करे। णमोकार मंत्र का जाप कर यह कथा पढ़नी चाहिये। जो तीर्थंकर होंगे उनका चितवन मनन करना। महार्घ्य दे आरती करनी चाहिये। उस दिन उपवास करके धर्मध्यानपूर्वक दिन बितावे।

इस प्रकार से प्रत्येक मास में जितने कल्याणक आयें उतने ही पूजा उपवास करे। इस प्रकार १२० कल्याणक के १२० उपवास करे। फिर उसका उद्यापन करे। फिर नया मन्दिर बनाये या नवीन मूर्ति लाकर विराजमान करे। चतुर्विंशति तीर्थंकर प्रतिमा विराजमान कर महाभिषेक करे। विधान करे। चतु:विध संघ को दान दे। ऐसी इस व्रत की विधि है।

अथवा

प्रथम वर्ष :—जिस साल गर्भ कल्याणक की तिथि आयेगी उस दिन उपवास करे।

द्वितीय वर्ष :—जिस महिने में जन्म कल्याणक की तिथि आयेगी उस दिन उपवास करना।

तृतीय वर्ष :—जिस-जिस महिने में दीक्षा कल्याणक की तिथि आयेगी उस दिन उपवास पूजा आदि करे।

चतुर्थ वर्ष :—जिस-जिस महिने में केवल ज्ञान कल्याणक की तिथि होगी उस दिन उपवास करे।

पंचम वर्ष :—जिस जिस महीने में निर्वाण कल्याण होगा उस दिन उपवास करे।

इस प्रकार से यह व्रत ५ वर्ष यथाविधि करे फिर पूर्ववत उद्यापन करे।

कथा

श्रेणिक राजा ने यह व्रत किया था।

ज्येष्ठजिनवर व्रत की विधि

ज्येष्ठकृष्णपक्षे प्रतिपदि ज्येष्ठशुक्ले प्रतिपदि चोपवासः, श्राषाढ़कृष्णस्य प्रतिपदि चोपवासः, एवमुपवासत्रयं करणीयम्, ज्येष्ठमासस्यावशेषदिवसेष्वेकाशनं करणीयम्, एतद्व्रतं ज्येष्ठजिनवरव्रतं भवति। ज्येष्ठप्रतिपदामारभ्याषाढकृष्णाप्रतिपत् पर्यन्तं भवति।

श्रर्थ :—ज्येष्ठकृष्णा प्रतिपदा, ज्येष्ठशुक्ला प्रतिपदा और श्राषाढकृष्णा प्रतिपदा, इन तीनों तिथियों में तीन उपवास करने चाहिए। ज्येष्ठ मास के शेष दिनों में एकाशन करना होता है। इस व्रत का नाम ज्येष्ठ जिनवर व्रत है। यह ज्येष्ठ कृष्णा प्रतिपदा से आरम्भ होता है और श्राषाढ़ कृष्णा प्रतिपदा को समाप्त होता है।

विवेचन :—ज्येष्ठजिनवर व्रत ज्येष्ठ के महीने में किया जाता है। यह व्रत ज्येष्ठ कृष्णा प्रतिपदा से आरम्भ होकर आषाढ़ कृष्णा प्रतिपदा को समाप्त होता है। इसमें प्रथम ज्येष्ठवदी प्रतिपदा को प्रोषध किया जाता है, पश्चात् कृष्ण पक्ष के शेष १४ दिन एकाशन करते हैं। पुनः ज्येष्ठ सुदी प्रतिपदा को उपवास और शेष १४ दिन एकाशन तथा श्राषाढ़ वदी प्रतिपदा को उपवास कर व्रत की समाप्ति कर दी जाती है।

ज्येष्ठजिनवर व्रत में मिट्टी के पांच कलशों से प्रतिदिन भगवान् आदिनाथ का अभिषेक करना चाहिए। **'ओं ह्रीं श्रीज्येष्ठजिनाधिपतये नमः कलशस्थापनं करोमि'** इस मन्त्र को पढ़कर कलशों की स्थापना की जाती है। पांच कलशों द्वारा अभिषेक स्थापन के समय ही किया जाता है और एक कलश से जयमाला पढ़ने के अनन्तर अभिषेक होता है। इस व्रत में ज्येष्ठजिनवर की पूजा की जाती है। 'ओं ह्रीं

श्रीऋषभजिनेन्द्राय नमः । इस मन्त्र का जाप करना होता है । ज्येष्ठ मास भर तीनों समय सामायिक करना, ब्रह्मचर्य का पालन एवं शुद्ध और अल्प भोजन करना आवश्यक है ।

कथा

इस व्रत को गुजरात देश के खम्भपुरी नगरी में सोमशर्मा ब्राह्मण के यहां यज्ञदत्त की स्त्री सोमश्री ने किया था, व्रत के प्रभाव से श्रीधर राजा की पुत्री कुम्भश्री हुई । मुनिराज के उपदेश से इस भव में भी व्रत को पालन किया । प्रतिदिन अभिषेक करके गंधोदक लाकर अपनी पूर्व पर्याय की सास के शरीर में लगाया, जिससे उसके शरीर का कुष्टरोग दूर हुआ । व्रत के प्रभाव से स्त्रीलिंग छेदकर दूसरे स्वर्ग में देव हुई और भवान्तर में मोक्ष प्राप्त करेगी ।

जिनमुखावलोकन व्रत की विधि

किं नाम जिनमुखावलोकनं व्रतम् ? को विधि : ? जिनमुखदर्शनान्तरमाहरो यस्मिन् तज्जिनमुखावलोकनं नामैतत् निरवधि व्रतम् । इदं व्रतं भाद्रपदमासे करणीयम्, प्रोषधोपवासानन्तरं पारणा पुनः प्रोषधोपवासः एवमेव प्रकारेण मासान्तपर्यन्तमिति ।

अर्थ :—जिनमुखावलोकन व्रत किसे कहते हैं ? उसकी विधि क्या है ? आचार्य उत्तर देते हैं कि प्रातःकाल जिनेन्द्रमुख देखने के अनन्तर आहार ग्रहण करना जिनमुखावलोकन व्रत है । यह निरवधि व्रत होता है । यह व्रत भाद्रपद मास में किया जाता है । प्रथम प्रोषधोपवास, अनन्तर पारणा, पुनः प्रोषधोपवास, पश्चात् पारणा, इसी प्रकार मासान्त तक उपवास और पारणा करते रहना चाहिए ।

विवेचनः—जिनमुखावलोकन व्रत के सम्बन्ध में दो मान्यताएं प्रचलित हैं । प्रथम मान्यता इसे एक वर्ष पर्यन्त करने की है और दूसरी मान्यता एक मास तक करने की । प्रथम मान्यता के अनुसार यह व्रत भाद्रपद मास से आरम्भ होकर श्रावण मास में पूरा होता है और द्वितीय मान्यता अनुसार भाद्रपद मास की कृष्ण प्रतिपदा से आरम्भ होकर उस मास की पूर्णिमा को समाप्त हो जाता है । एक वर्ष तक करने का विधान करने वालों के मत से वर्ष में ३६ उपवास और एक मास का विधान मानने वालों के मत से एक मास में १५ उपवास करने चाहिए ।

प्रथम मान्यता बतलाती है कि भाद्रपद मास की प्रतिपदा को पहला उपवास करना चाहिए । पश्चात् इस मास में किन्हीं भी दो तिथियों को दो उपवास करने चाहिए । परन्तु इस बात का ध्यान सदा रखना होगा कि प्रत्येक मास में कृष्णपक्ष में दो उपवास और शुक्लपक्ष में एक उपवास करना पड़ता है । इस व्रत के लिए कोई तिथि निर्धारित नहीं की गयी है । यह किसी भी तिथि को सम्पन्न किया जा सकता है । प्रथम मान्यता के अनुसार उपवास के दिन रात भर जागरण करते हुए प्रातःकाल श्री जिनेन्द्र प्रभु के मुख का अवलोकन करना चाहिए । रात को **ॐ अर्हद्भ्यो नमः** मन्त्र का जाप करना चाहिए । जिन दिनों उपवास नहीं करना है, उन दिनों भी उपर्युक्त मन्त्र का एक जाप अवश्य करना चाहिए । उपवास के दिन पञ्चाणु व्रतों का पालन करना, विशेष रूप से ब्रह्मचर्य धारण करना तथा पूजन-सामायिक करना आवश्यक है । जिस समय जिनमुखावलोकन किया जाता है, उस समय व्रत करने वाला भगवान् के समक्ष दोनों घुटने पृथ्वी पर टेककर घुटनों के बल बैठ जाता है अथवा सुखासन लगाकर बैठता है । व्रती को भगवान के समक्ष बैठते हुए निम्न मन्त्रों का उच्चारण करना चाहिए ।

"त्रैलोक्यवशंकराय केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने नमः"; 'संसार-परिभ्रमणविनाशनाय अभीष्टफलप्रदानाय धरणेन्द्रफणमण्डलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथ-स्वामिने नमः'; 'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं, ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः सर्वसिद्धि कुरु कुरु स्वाहा ।'

इन तीनों मन्त्रों का उच्चारण करते हुए अन्तिम मन्त्र का १०८ बार जाप करना चाहिए । प्रोषधोपवास के दिन भी अन्तिम मन्त्र का तीनों सन्ध्याओं में जाप करना आवश्यक है । उपवास के दूसरे दिन पारणा करते समय भोज्य वस्तुओं की संख्या निर्धारित कर लेनी चाहिए ।

दूसरी मान्यता के अनुसार भी उपवास के दिन **'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः सर्वसिद्धि कुरु कुरु स्वाहा'** इस मन्त्र का तीनों सन्ध्याओं में जाप करना चाहिए । अन्य दिनों में दिन में एक बार इस मन्त्र का जाप किया जाता है । जिनेन्द्रभगवान् के दर्शन के अनन्तर अन्य कार्यों का प्रारम्भ करना चाहिए । जिन-

मुखावलोकन व्रत निरवधि कहलाता है, क्योंकि दोनों ही मान्यताओं में इस व्रत के लिए कोई तिथि निश्चित नहीं की गयी है। आचार्य ने यहां पर दूसरी मान्यता को प्रधानता दी है।

अंत में व्रत का उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि विधान करे, चतुर्विध संघ को आहारादि देवे, शास्त्र दान करे।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

जिनपूजाव्रत, गुरुभक्ति एवं शास्त्रभक्ति व्रतों का स्वरूप

जिनपूजाप्यष्टद्रव्यैः यदा विधानेन परिपूर्णा भवेत् तदाहारं ग्रहीष्यामि, इति संकल्पः। जिनपूजाविधानाख्यव्रतम्। एवमेव जिनदर्शननियमस्तथा गुरुभक्ति-नियमस्तथा शास्त्रभक्तिनियमश्च कार्यः।

अर्थ :—इस प्रकार का नियम करना कि विधिपूर्वक अष्टद्रव्यों से जिन-पूजा पूर्ण करने पर आहार ग्रहण करूंगा, जिनपूजा विधान व्रत है। इसी प्रकार जिदनर्शन करने का नियम करना, गुरुभक्ति करने का नियम करना एवं शास्त्रभक्ति स्वाध्याय करने का नियम करना, जिनदर्शन, गुरुभक्ति एवं शास्त्रभक्ति व्रत है।

विवेचन :—अच्छे कार्य करने के नियम को व्रत कहते हैं, व्रत की इस परिभाषा के अनुसार जिनपूजा, जिनदर्शन, गुरुभक्ति, शास्त्रस्वाध्याय आदि के नियमों को भी व्रत कहा गया है। इन व्रतों में इतना ही संकल्प करना पड़ता है कि पूजा, दर्शन, गुरुभक्ति या शास्त्र स्वाध्याय को सम्पन्न करके भोजन ग्रहण करूंगा। अपने संकल्प के अनुसार उपर्युक्त धार्मिक कृत्यों को सम्पन्न करने पर आहार ग्रहण किया जाता है। इन व्रतों के लिए कोई तिथि या मास निश्चित नहीं है, बल्कि सदा ही देवपूजा, देवदर्शन, गुरुभक्ति और स्वाध्याय जैसे धार्मिक कार्यों को करना चाहिए।

आगम में जीवन भर के लिए ग्रहण किये गये व्रत की यम संज्ञा और अल्पकालिक व्रत की नियम संज्ञा बतायी गयी है। जो जीवन भर के लिए उक्त धार्मिक कृत्यों का नियम करने में असमर्थ हो, उन्हें कुछ समय के लिए अवश्य नियम

लेना चाहिए। यों तो श्रावकमात्र का कर्त्तव्य है कि वह अपने दैनिक षटकर्मों का पालन करे। देवपूजा, गुरुभक्ति, स्वाध्याय, संयम, तप और दान के कार्य प्रत्येक गृहस्थ के लिए करणीय है, अतः इनका नियम जीवन भर के लिए कर लेना आवश्यक है। इन करणोय कार्यों के किये बिना कोई श्रावक नहीं कहा जा सकता है। आचार्य ने इन आवश्यक कर्त्तव्यों की व्रत संज्ञा इसीलिए बतलायी है कि जो सर्वदा के लिए इनका पालन करने में अपने को असमर्थ समझते हैं वे भी इनके पालन करने की ओर झुकें। जब एक बार इन कृत्यों को ओर प्रवृत्ति हो जाय तथा आत्मा अन्तर्मुखी हो जाय तो फिर इन व्रतों के पालने में कोई भी कठिनाई नहीं है।

दैनिक षटकर्म करने से आत्मा में अद्भुत शक्ति उत्पन्न होती है तथा आत्मा शुभोपयोग रूप परिणति को प्राप्त होता है। बात यह है कि आत्मा की तीन प्रकार की परिणतियां होती है, शुद्धोपयोग, शुभोपयोग और अशुभोपयोग रूप। चैतन्य, आनन्द रूप आत्मा का अनुभव करना, इसे स्वतन्त्र अखण्ड द्रव्य समझना और पर-पदार्थों से इसे सर्वथा पृथक् अनुभव करना शुद्धोपयोग है। कषायों को मन्द करके अर्थात् भक्ति, दान, पूजा, वैयावृत्य, परोपकार आदि कार्य करना शुभोपयोग है। पूजा, दर्शन, स्वाध्याय आदि से उपयोग-जीवकी प्रवृत्ति विशेष शुद्ध नहीं होती है, शुभरूप हो जाती हैं। तीव्र कषायोदय परिणाम, विषयों में प्रवृत्ति, तीव्र विषयानुराग, आर्तपरिणाम, असत्य भाषण, हिंसा, अपकार आदि कार्य अशुभोपयोग हैं। जिनपूजाव्रत, जिनदर्शनव्रत, गुरुभक्ति व्रत एवं स्वाध्याय व्रत करने से जीव को शुभोपयोग की प्राप्ति होती है तथा कालान्तर में शुद्धोपयोग भी प्राप्त किया जा सकता है और आत्मबोध भी प्राप्त होता है, जिससे राग-द्वेष, मोह आदि दूर किये जा सकते हैं। अहंकार और ममकार जिनके कारण इस जीव को संसार में अनादिकाल से भ्रमण करना पड़ रहा है, दूर किये जा सकते हैं। अतः उपर्युक्त व्रतों का अवश्य पालन करना चाहिए।

कथा

पूजा के अन्दर प्रसिद्ध मेंढक की कथा पढ़ें, जो भगवान के समवशरण में मात्र एक फूल की पंखुड़ी लेकर जा रहा था और रास्ते में ही हाथी के पैर के नीचे आने से उसका मरण हो गया था, फिर भी उसकी पूजा की भावना मात्र से उसे स्वर्ग सुख की प्राप्ति हुई।

जिनरात्रिव्रत का स्वरूप

जिनरात्रिव्रतं फाल्गुनकृष्णप्रतिपदामारभ्य कृष्णपक्षचतुर्दश्यामुपवासाः वा केवलं तस्यामेवोपवास एवं नववर्षाणि यावत् वा चतुर्दशवर्षाणि ।

अर्थ :— जिनरात्रि व्रत में फाल्गुन कृष्णा प्रतिपदा से आरम्भ कर चतुर्दशी-पर्यन्त उपवास करने चाहिए । प्रत्येक उपवास के बीच में एक दिन पारणा करनी चाहिए । इस व्रत की अवधि नौ वर्ष या चौदह वर्ष प्रमाण है । अर्थात् प्रथम विधि करने पर ९ वर्ष के अनन्तर उद्यापन करना चाहिए और द्वितीय विधि करने पर चौदह वर्ष के पश्चात् उद्यापन करना चाहिए ।

विवेचन:—जिनरात्रि के व्रत के सम्बन्ध में दो मान्यताएं प्रचलित हैं—प्रथम मान्यता के अनुसार यह व्रत फाल्गुन कृष्ण प्रतिपदा से आरम्भ किया जाता है । प्रथम उपवास प्रतिपदा का करने के उपरान्त द्वितीया का पारणा, तृतीया का उपवास, चतुर्थी को पारणा, पंचमी को उपवास, षष्ठि को पारणा, सप्तमी को उपवास, अष्टमी को पारणा; नवमी को उपवास, दशमी को पारणा; एकादशमी को उपवास द्वादशी को पारणा; एवं त्रयोदशी को और चतुर्दशी को उपवास करना चाहिए । इस प्रकार नौ वर्ष तक पालन कर व्रत का उद्यापन कर देना चाहिए । व्रत की कथा में महावीर तीर्थंकर की कथा पढ़ें ।

दूसरी मान्यता यह है कि केवल फाल्गुन वदी चतुर्दशी को उपवास करे, मन्दिर में जाकर भगवान का पंचामृत अभिषेक करे तथा अष्टद्रव्य से त्रिकाल पूजन करे, तीनों समय नियमित सामायिक और स्वाध्याय करे, रात्रि को धर्मध्यानपूर्वक जागरण सहित व्यतीत करे ।

"ॐ ह्रीं त्रिकाल चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः स्वाहा ।"

इस मन्त्र का जाप रात्रि को करना चाहिए । तथा बृहद स्वयंभू स्तोत्र का पाठ भी करना चाहिए । रात्रि के पूर्वार्ध में आलोचना पाठ पढ़ना, मध्यभाग में मन्त्र का जाप करना और अन्तिम भाग में सहस्र नाम का स्मरण करना चाहिए । यह विधि विशेष रूप से ग्राह्य है, सामान्य विधि सभी व्रतों में समान की जाती है ।

जिससे कषाय और विथाएं घटती हैं। उपवास के अगले दिन अतिथि को आहार कराने के उपरान्त स्वयं आहार ग्रहण करना तथा सुपात्रों को चारों प्रकार का दान देना चाहिए। इस प्रकार १४ वर्ष तक व्रत करने के उपरान्त उद्यापन करना चाहिए। इस दूसरी विधि के अनुसार व्रत वर्ष में एक बार ही किया जाता है।

जिनेन्द्रगुणसम्पत्ति व्रत

अरिहन्त भगवान के गुणों का चिंतन करते हुए दस जन्म, दश केवल के अतिशय के कारण बीस दशमियों को बीस उपवास; देवकृत चौदह अतिशय के कारण चौदह चतुर्दशियों के चौदह उपवास, आठ प्रातिहार्य के कारण आठ अष्टमियों के आठ उपवास, सोलह कारण भावना की प्राप्ति के लिये सोलह प्रतिपदाओं के सोलह उपवास, पंचकल्याण की प्राप्ति के निमित्त पञ्चमियों के पांच उपवास; इस प्रकार कुल २० दशमी + १४ चतुर्दशी + ८ अष्टमी + १६ प्रतिपदा + ५ पञ्चमी = ६३ प्रोषधोपवास किये जाते हैं।

जिनगुणसम्पत्ति व्रत की विधि

जिनगुणसम्पत्तौ तु प्रतिपदः षोडशोपवासाः पञ्चम्याः पञ्चोपवासाः अष्टम्याः अष्टौ उपवासाः दशम्याः दशोपवासाः चतुर्दश्याः चतुर्दशोपवासाः, षष्ठयाः षडुपवासाः चतुर्थ्याश्चत्वारः उपवासाः, एवं त्रिषष्टिः उपवासाः भवन्ति। ज्येष्ठमास-कृष्ण पक्षीयप्रतिपदामारभ्य व्रतं क्रियते यावत्त्रिषष्टिः स्यादेष नियमो नैव ज्ञायते पूर्वोपवासस्यैव श्रुतेऽप्युपदेशदर्शनात्। अन्येषां पृथक् भूतता स्वरूचिसम्मता।

अर्थ :—जिनगुणसम्पत्ति व्रत में प्रतिपदा के सोलह उपवास, पञ्चमी के पांच उपवास, अष्टमी के आठ उपवास, दशमी के दश उपवास, चतुर्दशी के चौदह उपवास, षष्ठी के छः उपवास और चतुर्थी के चार उपवास, इस प्रकार कुल ६३ उपवास किये जाते हैं। यह व्रत ज्येष्ठ मास के कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होता है। ६३ उपवास लगातार किये जायें, ऐसा नियम नहीं है। जिस तिथि के उपवास किये जायें उनको पूर्ण करना आवश्यक है, एक तिथि के उपवास पूर्ण हो जाने पर दूसरी तिथि के उपवास स्वेच्छा से किये जा सकते हैं।

विवेचन :—जिनगुणसम्पत्ति व्रत में ६३ उपवास करने का विधान है। इसमें षोड़शकारण के सोलह उपवास, पञ्च परमेष्ठी के पांच, अष्ट प्रातिहार्य के आठ और चौंतीस अतिशयों—दस जन्म, दस केवल ज्ञान और चौदह देवकृत अतिशयों के चौंतीस उपवास किये जाते हैं। यह व्रत ज्येष्ठवदी प्रतिपदा से आरम्भ किया जाता है। ६३ उपवास एक साथ लगातार करने की शक्ति न हो तो सोलह प्रतिपदाओं के सोलह उपवास; जो कि षोड़शकारण के व्रत कहे जाते हैं, के करने के पश्चात् पाँच पञ्चमियों के पांच उपवास जो कि पञ्च परमेष्ठी के गुणों की स्मृति के लिए किये जाते हैं, करने चाहिए। इन उपवासों के पश्चात् आठ प्रातिहार्यों की स्मृति के लिए आठ अष्टमियों के आठ उपवास एक साथ तथा चौंतीस अतिशयों के, स्मृति-कारक दस दशमियों के दस उपवास, चौदह चतुर्दशियों के चौदह उपवास, छः षष्ठियों के छः उपवास और चार चतुर्थियों के चार उपवास इस प्रकार कुल (१४+१०+६+४=३४) उपवास एक साथ करने चाहिए।

जिनगुणसम्पत्ति व्रत में उपवास के दिन गृहारम्भ का त्याग कर पूजन, अभिषेक करना चाहिए तथा प्रारम्भ के सोलह उपवासों में **ॐ ह्रीं तीर्थंकर पद प्राप्तये दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो नमः** पञ्च परमेष्ठी उपवासों में "**ॐ ह्रीं परमपदस्थितेभ्यो पञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः**" आठ प्रातिहार्यों के उपवासों में "**ॐ ह्रीं अष्टप्रातिहार्यमण्डिताय तीर्थंकराय नमः**" और चौंतीस अतिशयों के उपवासों के लिए "**ॐ ह्रीं चतुस्त्रिंशदतिशयसहितेभ्यः अर्हद्भ्यः नमः**" मन्त्रों का जाप किया जाता है। व्रत पूरा हो जाने पर उद्यापन करा दिया जाता है।

श्रीजिनगुणसम्पत्ति व्रत कथा

चैत्र शुक्ल सप्तमी के दिन एकभुक्ति करके गुरु के निकट जाकर यह व्रत ग्रहण करे, अष्टमी को प्रातः स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहनकर सर्वप्रकार का पूजा साहित्य हाथ में लेकर जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धि क्रिया करे, भगवान का साष्टांग नमस्कार करे, अखण्ड दीप जलावे, चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा यक्षयक्षि सहित अभिषेक पीठ पर स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे और अष्टद्रव्य से पूजा करना, पंचपकवान का नैवेद्य बनाकर चढ़ाना, शास्त्र गुरु की पूजा करना, यक्षयक्षिणी क्षेत्रपाल की पूजा करना और व्रत कथा पढ़ना।

उसके बाद, जिनगुण सम्पत्ति मन्त्रों को पढ़ते हुए—अष्टद्रव्य से पूजा करे, मन्त्र इस प्रकार है।

षोडश भावना मन्त्र

ॐ ह्रीं अर्हं दर्शनविशुद्धि भावना जिनगुण संपदे नमः स्वाहा। १
ॐ ह्रीं अर्हं विनय सम्पन्नता भावना जिनगुण संपदे नमः स्वाहा। २
ॐ ह्रीं अर्हं शीलव्रतेष्वनतिचार भावना जिनगुण संपदे नमः स्वाहा॥ ३
ॐ ह्रीं अर्हं अभिक्षण ज्ञानोपयोग भावना जिनगुण संपदे नमः स्वाहा॥ ४

"	"	संवेग भावना	"	"	"	"		५
"	"	शक्ति तपस्त्याग भावना	"	"	"	"	"	६
"	"	साधुसमाधि भावना	"	"	"	"	"	७
"	"	वैयावृत्यकरण भावना	"	"	"	"	"	८
"	"	अर्हद्भक्ति भावना	"	"	"	"	"	९
"	"	आचार्य भक्ति भावना	"	"	"	"	"	१०
"	"	बहुश्रुत भक्ति भावना	"	"	"	"	"	११
"	"	प्रवचन भक्ति भावना	"	"	"	"	"	१२
"	"	आवश्यपरिहाणि भावना	"	"	"	"	"	१३
"	"	मार्गप्रभावना भावना	"	"	"	"	"	१४
"	"	प्रवचन वात्सलत्य भावना	"	"	"	"	"	१५

पंचकल्याण मंत्र

ॐ ह्रीं अर्हं गर्भावतरण कल्याण जिनगुण संपदे नमः स्वाहा १

"	"	जन्माभिषेक	"	"	"	"	"	"	"	२
"	"	दीक्षा	"	"	"	"	"	"	"	३
"	"	केवलज्ञान	"	"	"	"	"	"	"	४
"	"	निर्वाण	"	"	"	"	"	"	"	५

अष्टप्रातिहार्य मन्त्र

ॐ ह्रीं अर्हं अशोक वृक्ष महाप्रातिहार्य जिनगुण संपदे नमः स्वाहा

,,	,,	सुरपुष्पवृष्टि	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	दिव्यध्वनि	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	
,,	,,	चतुष्षष्टि चामर	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	सिंहासन	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	भामण्डल	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	देवदुंदुभि	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	छत्रत्रय	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,

दशजन्मातिशय मंत्र

ॐ ह्रीं अर्हं निस्वेदत्व, सहजातिशय जिनगुण संपदे नमः स्वाहा

,,	,,	निर्मलत्व	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	क्षीर गौरत्व	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	समचतुरस्त्र संस्थान	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	वज्रवृषभ नाराच संहनन	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	सौरूप्य	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	सौरभ	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	सौलण्य	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	अप्रमित वीर्यत्व	,,	,,	,,	,,	,,
,,	,,	प्रियहितवादित्व	,,	,,	,,	,,	

केवलज्ञानातिशय मंत्र:

ॐ ह्रीं अर्हं गव्युति शतचतुष्टय, सुभिक्षत्व घातिक्षय जातिशय जिनगुणसंपदे नमः स्वाहा

ॐ ह्रीं अर्हं गगनगमनत्व, घातिक्षय, जातिशय, जिनगुणसंपदे, नमः स्वाहा

,,	अप्राणिवधत्व	,,	,,	,,	,,	,,	,,
,,	भुक्त्य भावत्व	,,	,,	,,	,,	,,	,,
,,	उपसर्गा भावत्व	,,	,,	,,	,,	,,	,,

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्मुखत्व घातिक्षय जातिशय जिनगुण संपदे नमः स्वाहा
" " " सर्वविद्येश्वरत्व " " " " "
" " " अच्छायत्व " " " " "
" " " अपक्ष्मस्पंदत्व " " " " "
" " " समान नखकेशत्व " " " " "

देवकृत चौदह अतिशय मंत्र

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वार्धमागधीय, भाषा, देवोपनीतातिशय, जिनगुणसंपदे, नमः स्वाहा
" " " सर्वजनमैत्री भाव देवोपनीतातिशय, जिनगुणसंपदे, नमः स्वाहा
" " " सर्वकलादिशोभित तरू " " " "
" " " आदर्शतल प्रतिमा रत्नमयी मही " " " "
" " " विरहणानुगतवायु " " " "
" " " सर्वजनपरमानन्द " " " "
" " " सुरभिगंधयुक्त वायुकुमारोपशमित धूलि कंटकादि, देवोपनीतातिशय, जिनगुण संपदे नमः स्वाहा
" " " मेघकुमारकृत सुरभिगंधि गंधोदक वृष्टि " " "
" " " पादन्यासकृत हेममय दल कमल समूह" " " "
" " " फल भार नम्रशाल्यादि समस्त सस्य युक्तभूमि " "
" " " शरतकालवन्निर्मल गगन " " " "
" " " शरन्मेघवन्निर्मलदिग्विभाग " " " "
" " " एतैतेति त्वरितं चतुर्णिकायामर परस्पराह्वान " " "
" " " निर्मलद्युति मण्डलयुक्त धर्मचक्र " " " "
" " " दर्शनविशुद्धयादि सकल जिनगुण संपदेभ्यो नमः स्वाहा ।

इन मन्त्रों से अर्घ्य चढ़ाकर ६४ पुष्प लेकर मन्त्र बोलता जाय और पुष्प चढ़ाता जाये, क्रमशः प्रत्येक मन्त्रों का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, अन्त में १०८ बार णमोकार मन्त्र का जाप करे, उसी प्रकार उपवास करे, जिन सहस्र नाम पढ़े, शास्त्र स्वाध्याय करे, इस प्रकार ६४ उपवास व पूजा समाप्त होने के बाद व्रत का उद्यापन करे, उस समय एक नवीन प्रतिमा अर्हंत

भगवान की मंगवाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा कराये चतुर्विध संघ को चार प्रकार का दान देवे, जिन मंदिर में छत्र, चामर आदि उपकरण देवे, इस प्रकार व्रत का विधान है।

कथा

धातकी खण्ड के पूर्व मेरू पश्चिम भाग में गंधिल नाम का एक बहुत बड़ा देश है। उस देश में पाटली नाम का एक मनोहर नगर है। वहां पहले नागदत्त नाम का एक सद्गुणी धर्मनिष्ठ सेठ रहता था। उस सेठ की धर्मपत्नी का नाम सुदत्ता था। उस सेठ के नंदी, नंदीमित्र, नंदीषेण, वरसेन, जयसेन, ये पांच पुत्र थे और मदनश्री, पद्मश्री व निर्नामिका, ऐसी तीन कन्या थी। अन्त की निर्नामिका का अशुभ योग में जन्म होने से पैदा होते ही माता पिता मर गये। इसलिए भाई बहिन सब लोग उसका अनादर करने लगे। अनाथ रूप में दुःखी होकर इधर उधर फिरने लगी।

एक दिन अंबर तिलक पर्वत पर महाअवधिज्ञानी पिहिताश्रव नाम के एक दिगम्बर मुनि पधारे। ऐसा सुनते ही नगरवासी लोग दर्शनों के लिये उमड़ पड़े, तब वह दुःखी निर्नामिका भी गई, वहाँ जाने के बाद मुनीश्वर के सब लोगों ने दर्शन पूजा किया, और पास में बैठ गये। मुनिराज के मुख से दयाधर्म का उपदेश सुनकर यह निर्नामिका अपने दोनों हाथ जोड़कर कहने लगी की हे दयासिन्धो, मेरे को यह दुःख प्राप्त हो रहा है उसका कारण क्या है? इस दुःख का निवारण कैसे हो, मुझे कहो। तब कन्या की विनयपूर्वक दुःख की कहानी सुनकर मुनिराज अपने अवधि ज्ञान के बल से जानकर सर्ववृताँत कहने लगे, हे कन्ये तुमने पूर्वभव में, स्वाध्याय में रत एक समाधिगुप्त मुनिराज को स्वाध्याय में कुत्ता लाकर छोड़ा और विघ्न उपस्थित किया, उस पाप कर्म के कारण तुम्हारी यह दुःखरूपी स्थिति हुई। अब तुम अपने पाप कर्म की शांति के लिए, जिनगुण संपति व्रत का पालन करो, तब तुम को सर्व सुख संपति प्राप्त होगी। ऐसा कहकर व्रत की विधि कह सुनाई।

यह सब सुनकर उसको पश्चाताप पूर्वक समाधान हुआ। तब निर्नामिका मुनिश्वर को कहने लगी कि हे मुनिश्वर यह व्रत मुझे प्रदान करो, उसने व्रतको ग्रहण किया और सब लोगों के साथ वापस घर को लौट आई, उस निर्नामिका ने गांव के

सब लोगों की सहायता से अच्छी तरह से व्रत का पालन किया, और व्रत का उद्यापन किया, महान पुण्य संचय करने वाली निर्नामिका अंत में समाधि करके स्त्रीलिंग का छेदन करती हुई, स्वर्ग में जाकर देव हुई, और वहां से चयकर वही श्रेयांस राजकुमार हुआ, और आदिनाथ तीर्थंकर को प्रथम आहार दान दिया। फिर उसने बहुत समय तक राजऐश्वर्य भोगकर आदिनाथ तीर्थंकर के समवशरण में जाकर दीक्षा ग्रहण किया और कर्म काटकर मोक्ष को गये, इस प्रकार इस व्रत का फल है।

जीवदया अष्टमी व्रत कथा

आश्विन शुक्ला सप्तमी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहिन कर अभिषेक पूजा का सामान हाथ में लेकर जिनमन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को अष्टांग नमस्कार करे, अभिषेक थाली में मुनिसुव्रत तीर्थंकर वरुणयक्ष बहुरुपिणि यक्षि सहित प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, मंडपवेदी को शृंगारित करके वेदि पर पांचवर्णों से मांडला मांडे, अष्ट दलाकार, आठो दिशाओं में आठ मंगलकलश रखे, मध्य में भी एक मंगलकलश सजाकर रखे, उस कलश पर एक थाली में आठ पान लगाकर ऊपर अर्घ्य रखे, नित्य पूजा करे, जीवदया अष्टमी व्रत विधान करे।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मुनिसुव्रत तीर्थंकराय, वरूणयक्ष, बहुरूपिणि यक्षि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की भी अर्चना करे। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे। व्रत कथा पढ़े। एक महाअर्घ्य थाली में रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे। मंगल आरती उतारे। उस दिन ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे। उपवास करे। रात्रि जागरण करे। दूसरे दिन जिनपूजा पंचपकवानों से करे। चतुर्विध संघ को आहार दानादिक देकर स्वयं पारणा करे। इस प्रकार इस व्रत को आठ वर्ष तक करे। अंत में उद्यापन करे, एक नवीन मुनिसुव्रत तीर्थंकर भगवान की प्रतिमा यक्षयक्षिणी सहित लाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे। आठ मुनिजनों को आहारादि देवे। उसी

प्रकार आर्यिका माताजी को भी दान देवे । आठ दंपति जोड़ों को भोजन कराकर वस्त्र अलंकारादि से शोभित करे याने दान देवे, गृहस्थाचार्य को भी खूब दान देवे ।

कथा

इसकी कथा में यशोधर चरित्र पढ़े । मारिदत्त राजा ने इस व्रत को पालन किया था, अंत में दीक्षा लेकर स्वर्ग में गया ।

अथ जियदत्तराय अथवा सर्वकामितप्रद व्रत कथा

इस जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र है उसमें आर्यखण्ड है उसमें कुंभल कर्नाटक नामक देश है, उसमें करवीर नामक एक बड़ा रमणीय नगर है, वहां पर राजदित्य नामक एक राजा राज्य करता था । उसके शीलवती गुणवती व सुशील ऐसी पट्ट स्त्री थी । उसको गुणवंत नामक एक बड़ा भाग्यशाली पुत्र था, इसके अलावा पुरोहित राज्य श्रेष्ठी, सेनापति आदि थे ।

एक दिन उनके उद्यान के बाहर श्री माणिक्यनन्दि नामक महामुनि बिहार करते हुये आये । यह शुभ समाचार सुनते ही राजा वंदना के लिये आया । वंदना प्रदक्षिणा आदि करके वह राजा धर्मोपदेश सुनने के लिये बैठा । धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा ने नम्र प्रार्थना करी, कि हे मुनिश्वर, हे दीनदयाल, आप जिनदत्तराय की कथा कहें । तब महाराज ने वह कथा सुनाना आरम्भ किया ।

उत्तर में मधुर एक सुन्दर पट्ट है वहां साकार नाम से बड़ा शूर व नीतिमान् राजा राज्य करता है । उसकी श्रीयालदेवी नामक पट्टरानी है । उसको ३० कन्याएं थीं । परन्तु उसको लड़का नहीं था । इसके आलावा पुरोहित, मन्त्री, राज श्रेष्ठि, सेनापति आदि सब थे ।

एक दिन उस नगर के मन्दिर में सिद्धान्तकीर्ति नामक दिगंबर महामुनि आये थे । यह बात राजा को मालुम होते ही परिवार सहित उनके दर्शन को गया । प्रदक्षिणा, बंदना आदि करने के बाद सिद्धान्तकीर्ति महाराज के पास आकर उनकी पूजा वन्दना आदि किया । फिर महाराज के मुख से तत्त्वोपदेश सुनकर श्रीयाल रानी अपने दोनों जोड़कर बड़े विनय से महाराज से बोली हे ज्ञानसागर भवसिंधुतारक मुनिवर्य मुझे अब पुत्र रत्न होगा कि नहीं यह आप कृपा करके कहो ।

तब महाराज ने कहा अब तुम्हें सम्यक्त्व चूडामरिग व भाग्यशाली पुत्र होगा। वह स्वतंत्र राज्य करेगा। इसलिये अब तुम जिनदत्तराय व्रत का पालन करो। उसकी विधि इस प्रकार है वह तुम सुनो।

व्रत विधि :—किसी भी महिने के शुक्ल पक्ष के प्रथम गुरुवार को एकाशन करे। शुक्रवार को शुद्ध कपड़े पहनकर अष्टद्रव्य लेकर मन्दिर जाये। दर्शन आदि करने के बाद वेदी पर श्री सुपार्श्वनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा, नंदिविजय काली यक्षयक्षी सहित स्थापित करे। उस पर पंचामृत अभिषेक करे। पाटे पर सात स्वस्तिक निकालकर उस पर पान रखे व अष्टद्रव्य भी रखे। वृषभनाथ से सुपार्श्वनाथ तक अष्टक स्तोत्र जयमाला आदि बोलते हुये अष्टद्रव्य से पूजा करे। श्रुत व गुरु की पूजा करे। यक्षयक्षी ब्रह्मदेव की अर्चना करे।

जाप:— **ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथाय नंदिविजयकाली यक्षयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।**

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे। जिन सहस्रनाम स्तोत्र बोलकर सुपार्श्वनाथ चरित्र व यह कथा पढ़े। आरती करे। उस दिन उपवास करके धर्मध्यान पूर्वक काल बितावे। दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करे।

इस प्रकार सात शुक्रवार पूर्ण होने पर उद्यापन करे। उस समय सुपार्श्व नाथ विधान करके महाभिषेक करे। चार प्रकार का दान देवे। जो भव्यजन इस प्रकार व्रत करके उद्यापन करेंगे उनको इहलोक और परलोक दोनों में सुख मिलेगा, अंत में मोक्ष भी मिलेगा यह इस कथा का प्रभाव है।

यह सब महाराज के मुख से श्रियादेवी व समस्त लोगों ने सुना उन सब को खुशी हुई सब ने यह व्रत ग्रहण किया फिर वह भक्ति से वन्दना कर घर आये।

घर आकर राजा व रानी ने यह व्रत विधिपूर्वक किया। श्रियादेवी को गर्भ रहा और उसको पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई उसका नाम जिनदत्तराय रखा।

वह बालक शुक्ल पक्ष के समान बड़ा होने लगा और सब विद्याओं में निपुण हो गया ।

एक दिन साकार राजा वन में एक मुनि के पास गया वंदना कर उनके पास बैठ गया । धर्मोपदेश सुनने के बाद उन्होंने (राजा ने) पूछा महाराज देशान्तर में जाने वाला हूं वहां पर मुझे यश मिलेगा कि नहीं । तब महाराज ने कहा हे भव्य नरोत्तम तुझे यश मिलेगा । पर वापिस आने पर तेरे निमित्त से कुल पर कलंक लगने की एक कृति तुझ से होगी । यह सुन उसे बहुत ही आश्चर्य हुआ ।

फिर वह नमोस्तु कर घर आया । फिर वह शत्रु को जीतने के लिए देशान्तर में गया । वीरता से लड़ने से उसे यश मिला वह उसे जीतकर घर आरहा था कि रास्ते में एक पर्वत के नीचे एक गांव मिला वहां से आरहा था तब रास्ते में एक जगह भ्रमरों का समूह मिला यह देख राजा को आश्चर्य हुआ इसलिए उसने प्रधान को पूछा, तब वह पास में जाकर देखने लगा उसकी थूक देखकर वह बोला कि यहीं पास में कहीं पद्म रानी होनी चाहिए इसलिए यहां भ्रमर एकत्रित हुए है ।

यह सुन राजा को उसकी अभिलाषा बढ़ने लगी और उसने मन्त्रि से कहा कि तुम जाकर इसकी खबर लाओ कि वह कहां है और कैसे प्राप्त होगी । यह सुन वह मन्त्री बेराड गांव की ओर जाने लगा । उसने पद्मनी को ढूंढ निकाला और उसके पिता को सब बात बताकर वह उसको राजा के पास ले आया । और सब बात बता दी । तब उस साकार राजा ने उस भील राजा से कहा कि मैं तुम्हारी कन्या से शादी करना चाहता हूं । तब उस राजा ने कहा स्वामिन आप उच्च कुलीन हैं मैं तो भीलों का राजा नीच कुलीन हूं ।

श्रेष्ठ कुल के राजा को ऐसा कार्य करना उचित नहीं है । इस प्रकार बहुत समझाया पर वह राजा नहीं माना । वह उससे जिद करने लगा तब साकार राजा को उसने कहा यदि आप जिद करते हो तो एक बात आपको माननी होगी वह यह है कि इसके पेट से जो पुत्र होगा, वही आपके बाद उत्तराधिकारी होगा । साकार राजा ने वह कबूल किया ।

फिर वह साकार राजा को अपने राज्य में लाया और बड़े समारम्भ के साथ पद्मनी की शादी कर दी।

बहुत दिनों के बाद राजा अपने घर वापस आया। पर उसने अपने नगर के बाहर पद्मनी को एक महल बनाकर उसमें रख दिया और खुद अपने घर आ गया।

जब श्रियादेवी को यह बात मालूम हुई तो वह चिन्ताग्रस्त होकर रहने लगी, तब साकार ने उससे कहा कि मैं तेरे पुत्र को राज्य दूंगा तू चिन्ता मत कर।

फिर बहुत समय के बाद पद्मनी गर्भवती हुई और उसको भी पुत्र रत्न की उत्पत्ति हुई। उसका नाम मारोदत्त रखा। उससे प्रेम कर राजा वहीं रहने लगा और साकार व पद्मनी ने जिनदत्तराय को मारने का विचार किया।

एक दिन अपने रसोई घर में रहने वाले रसोइये से कहा कि यहां पर जो नींबू देने के लिए आयेगा उसे तू मार डालना। ऐसा कहकर उसने जिनदत्तराय के हाथ में नींबू दिया और रसोई घर में जाकर देने के लिए कहा। वह जिनदत्तराय नींबू देने जा रहा था कि रास्ते में उसे मारीदत्त मिला उसने पूछा भैया आप कहां जा रहे हैं तब उसने बताया मैं नींबू देने रसोई घर में जा रहा हूं। तब मारीदत्त ने कहा ला मुझे दे दे मैं ही नींबू दे आता हूं। तब मारीदत्त नींबू लेकर रसोईघर में गया। वहाँ तो पहले से बात निश्चित हो ही गई थी अतः रसोइये ने उसको मार डाला।

इतने में साकार राजा व उसकी प्रिय पत्नि स्नान करके रसोई घर में आये और गुप्त रीति से उस रसोइये को पूछा। तब उसने सर्व हकीकत बराबर कह दी। तब राजा ने मारीदत्त को भोजन के लिए सैनिकों से बुलाया पर वह नहीं मिला। इधर राजा जब रसोई घर के अन्दर जाता है तो वहां उसे मारीदत्त मरा हुआ मिलता है यह देख दोनों को आश्चर्य होता है। उन्हें अपने दुष्ट कार्य के लिए पश्चाताप होता है। परन्तु दुष्ट वृत्ति अभी भी नहीं गई थी।

थोड़े ही दिन में जिनदत्त राय को अपने पिता के कपट का ज्ञान हो गया। तब वह श्रीयादेवी अपने जिनदत्त राय पुत्र के साथ सिद्धान्तकीर्ति मुनि महाराज के पास गई। वहां वह भक्ति से वन्दना आदि कर उनके

समीप बैठ गयी। फिर अपने दोनों हाथ जोड़कर बोली हे दीनदयाल (स्वामिन) अब आप मेरे पुत्र की भावी स्थिति पूर्ण रूप से कहो। तब महाराज ने कहा हे भव्य कन्ये! अभी तुम पुत्र को अपने पास मत रखो क्योंकि उनके पिता व सौतेली मां ने उसको किसी भी तरह से मारने का दुष्ट विचार मन में किया है। अतः उसे अभी दक्षिण देश में भेज दो। यह सुनकर रानी को बहुत ही आनन्द आया। दोनों नमोस्तु कर घर आये। फिर पुत्र अपनी माता की आज्ञा लेकर राजमहल से जिनमन्दिर में आया। फिर जिन भगवान को बड़ी भक्ति से नमस्कार कर पद्मावती की मूर्ति को अपनी पीठ पर रखकर एक वायुवेगी घोड़े पर बैठकर नगर के बाहर निकला। इधर उसके पिता ने उसके पीछे सेना भेजी पर पद्मावती देवी का मुख देखकर पीछे हो गई इसलिए थककर जिनदत्त नहीं मिला ऐसा सोचकर वे वापस आये। जिनदत्त तो बड़े वेग से दक्षिण दिशा में भाग गया। वहां एक जंगल में शाम को पेड़ के नीचे पद्मावति देवी को रखकर वहीं जमीन पर सो गया। तब पद्मावति ने स्वप्न में यह कहा कि तुम यहीं पर एक गाँव बसाकर यहीं मेरा मन्दिर बनाकर यहीं मेरी स्थापना कर इस गांव का नाम हुमच रखो। यह स्वप्न देख कर जिनदत्त जग गया। उसने देवी की आज्ञा प्रमाण वैसा ही किया और अपनी माता श्रियाल देवी को वहीं बुलाया। फिर उसने वीर पांडेय राजा की लड़की से विवाह किया और सुख से अपने परिवार सहित रहने लगा।

बाद में एक दिन उस जिनदत्तराय को संसार से वैराग्य उत्पन्न हुआ जिससे अपने पुत्र को राज्य देकर वे तपोवन में गये। वहां पर एक दिन निर्ग्रन्थ मुनि के पास जिनदीक्षा ली। कठिन तपश्चर्या की। अन्त समय में समाधिपूर्वक मरण हुआ जिससे स्वर्ग में देव हुए।

यह कथा माणिक्यनन्दि मुनि महाराज के मुख से सुनकर गंडादित्य आदि सब को बहुत खुशी हुई। फिर राजा ने उनसे पूछा कि हे ज्ञानसिंधु मुनिराज! इस नगर के बाहर ७७० मुनि अग्नि से दग्ध होकर मरे इसका कारण क्या है? यह प्रश्न सुन मुनिश्वर ने कहा इस हुंडावसर्पिणी पंचमकाल के दोष से जिनधर्म का नाश होगा। जिनमुनि जिनप्रतिमा जिनमन्दिर इनका लोप हो जायेगा।

इस दोष को दूर करने के लिए तुम सातसौ सतर (७७०) जिन मन्दिर बनाकर उनमें जिन प्रतिमा विराजमान करो। उसी प्रकार ७७० मुनि बनाये। और आप लोग सब (कामितपद व्रत) जिनदत्तराय व्रत का यथाविधि पालन करो और उद्यापन करो। उसकी विधि सब बतायी। फिर गंडादित्य राजा निवसावंत मन्त्रि, पुरोहित, राजश्रेष्ठि, सेनापति वगैरह लोगों ने उस माणिक्यनंदि मुनिश्वर को नमस्कार करके व्रत लिया। फिर सब ने भक्ति से नमस्कार किया और अपने नगर में वापस आये।

फिर गंडादित्य आदि ने यह व्रत यथाविधि पालन किया व उद्यापन किया। इस व्रत के पुण्य से वे सब अपने पुण्य से सद्गति गये। ऐसा इस व्रत का प्रभाव है।

अथ जुगुप्साकर्मनिवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करे।

अन्तर केवल इतना है कि चैत कृष्ण ६ के दिन एकाशन करे मुनिसुव्रत भगवान की पूजा, जाप मन्त्र, पत्ति, मांडला आदि करे।

जिनचंद्र व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को शुद्ध होकर मन्दिर जी में जावे, ईर्यापथ शुद्धि पूर्वक प्रदक्षिणा करता हुआ, भगवान को प्रदक्षिणा पूर्वक नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि की प्रतिमा स्थापन कर पंचमृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं ह्रां ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा स्वाहा, इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे। व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे दूसरे दिन दान देकर पारणा करे, उपवास करने की शक्ति न हो तो तीन दिन एकाशन करे। इस प्रकार चार महिने अष्टमी के दिन व्रत पूजा करे, कार्तिक अष्टान्हिका में व्रत का उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि का विधान करे, महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

अथ जम्बूस्वामी व्रत कथा

व्रत विधि :—आश्विन कृष्ण १३ के दिन एकाशन करे। और १४ के दिन शुद्ध कपड़े पहनकर अष्ट द्रव्य लेकर मन्दिर जाये। वहां दर्शन आदि करके वेदी पर मण्डप आदि करे उस पर आठ कुम्भ रखकर उस पर वस्त्र व पंचवर्णी सूत लपेटे अष्ट मंगल द्रव्य रखे बीच में कलश रखे। ऊपर एक थाली रखकर उसमें यंत्र निकाल उस पर २४ पान रखे उस पर अष्ट द्रव्य रखे वेदी पर चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा विराजमान करे। यक्ष यक्षी भी रखे और पंचामृत अभिषेक करे। फिर वह प्रतिमा यंत्र पर रखे और नित्य नियम की पूजा पढ़ने के बाद २४ तीर्थंकर की पूजा पढ़े। २४ नैवेद्य चढ़ावे।

ॐ ह्रीं अर्हं वृषभादि वर्धमानांत चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्ष-यक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प से जाप करे। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे। सहस्र नाम पढ़कर यह कथा पढ़े। श्रुत व गुरु की पूजा करे। फिर एक थाली में २४ पत्ते रखकर उसमें अष्ट द्रव्य और नारियल रखकर आरती करे। उस दिन उपवास करे। सत्पात्र को दान दे। दूसरे दिन दान व पूजा कर पारणा करे।

इस प्रकार यह व्रत २४ महिने इसी तिथि को करे। और कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे। उस समय श्री सम्मेदशिखरजी विधान करे। महाभिषेक करे। चतुर्विध संघ को दान दे, २४ मन्दिर के दर्शन करे।

कथा

इस राजगृह नगर में अर्हदास नामक एक राजश्रेष्ठी रहता था, उसको जम्बू कुमार नामक पुत्र था वह कामदेव पदवी का धारी था। अन्त समय दीक्षा ली, तपश्चर्या करके कर्मों की निर्जरा कर मोक्ष गये।

अथ जीवंधर स्वामी व्रत कथा अथवा बुधवार व्रत कथा

व्रत विधि :—कार्तिक के शुक्ल पक्ष में पहिले मंगलवार को एकाशन करे

और बुधवार को शुद्ध कपड़े पहन कर अष्ट द्रव्य लेकर मन्दिर में जाये दर्शन आदि कर वेदि पर पंच परमेष्ठी की मूर्ति स्थापित करे। उस पर पंचामृत अभिषेक करे। एक पाटे के ऊपर ५ पान रख कर स्वस्तिक निकाले, अष्ट द्रव्य रखे। पंचपरमेष्ठी की पूजा करे। श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षी की अर्चना करे।

जाप :—ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मंत्र का १०८ बार पुष्पों से जाप करे, णमोकार मन्त्र का जाप करे, जीवन्धर चरित्र पढ़े। आरती करे। उस दिन उपवास करे। सत्पात्र को दान देकर पारणा करे, तीन दिन ब्रह्मचर्य पाले।

इस प्रकार ५ बुधवार करे और अन्त में उद्यापन करे। उस समय पंच-परमेष्ठी विधान करे। महाभिषेक करे। चतुर्विध संघ को दान दे। ५ दम्पतियों को भोजन करावे। उनका सम्मान करे, २५ चैत्यालयों के दर्शन करे।

यह व्रत पूर्ण रूप से जिसने पालन किया उसको उत्तम गति प्राप्त हुई। उसकी कथा कहते हैं।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में हेमांग नामक एक विस्तीर्ण देश है। उसमें राजपुर नामक नगर है। वहां सत्यन्धर नामक एक बड़ा पराक्रमी सदाचारी गुणवान ऐसा एक राजा राज्य करता था, उसकी रानी का नाम विजयादेवी था, उसका मन्त्री काष्ठांगार और पुरोहित रुद्रदत्त ये सुख से रहते थे।

सत्यंधर राजा को जीवंधर नामक एक लड़का था। उसने अपने छः भव पहले यह व्रत किया था परन्तु व्रत पर उसका विश्वास नहीं था और एक मुनि महाराज को अपने नगर से निकालने के कारण इस भव में उसके जन्म के पहले ही पिता का वध हो गया और १६ वर्ष के बाद देश व राज्य मिला। फिर बहुत समय तक राज्य-सुख भोगकर जिन दीक्षा ली, घोर तपस्या करके व कर्मों का क्षय कर मोक्ष गये।

अथ जयसेन चक्रवर्ती व्रत कथा

व्रतविधिः—पहले के समान ही सब करे अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ला १०मी के दिन एकाशन करे और ११ के दिन उपवास करे। पाटे पर ११ पत्ते रखे। ११ तिथि पूर्ण होने पर उद्यापन करे। ११ मनुष्यों को भोजन करावे।

कथा

इस जम्बूद्वीप में श्रीपुर नामक नगर है, वहां पर सुन्दर नामक राजा राज्य करता था, उसकी पट्टरानी पद्मावती थी। उसका विनयधर नामक पुत्र था। मन्त्री आदि सब थे। एक दिन उसके उद्यान में धर्मकेवली मुनिश्वर आये। जब राजा ने अपने माली से यह समाचार सुने तो वह अपने परिवार सहित उनकी वंदना करने गया। वहां जाकर धर्मोपदेश सुनकर राजा ने यह व्रत स्वीकार किया। समयानुसार उसका पालन किया जिसके उसको पुण्यबंध हुआ और वह सुख भोगने लगा।

एक दिन वह अपने महल के ऊपर बैठा था कि उसे मेघों का विच्छेद दिखाई दिया, यह देख उसे वैराग्य उत्पन्न हुआ। तब उसने अपने पुत्र विनयधर को राज्य देकर आप जंगल में जाकर दीक्षा ली और उत्तम रीति से तपश्चर्या करने लगा। जिसके प्रभाव से वह महाशुक्र स्वर्ग में देव हुआ, वहां का सुख भोगकर वहां से चयकर वह प्रभंकर चक्रवर्ति हुआ और छः खण्ड का अधिपति बना।

एक दिन आकाश में हुये उल्कापात को देखकर मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ जिससे अपने पुत्र को राज्य देकर वरदत्त मुनि के पास निर्ग्रन्थ दीक्षा ली। तीव्र तपश्चरण करके समाधिपूर्वक मृत्यु हुई जिससे वह अनुत्तर स्वर्ग में देव हुआ। वहां से वह मनुष्य जन्म लेकर मोक्ष सुख भोगेगा।

तपोऽञ्जलि व्रत का लक्षण

किंनाम तपोऽञ्जलिर्व्रतम् ? द्वादशमासेषु निशिजलपानं न कर्त्तव्यमुपवासाश्चतुर्विंशतयः कार्याः, अष्टम्यां चतुर्दश्यां नैव नियमः अष्टम्यामेव चतुर्दश्यामेवेति ।।

अर्थ :—तपोऽञ्जलि व्रत की क्या विधि है ? कैसे किया जाता है ? आचार्य कहते हैं कि बारह महीनों तक अर्थात् एक वर्ष पर्यन्त रात को पानी नहीं पीना और

एक वर्ष में चौबीस उपवास करना तपोऽञ्जलि व्रत है। उपवास करने का नियम अष्टमी और चतुर्दशी को ही नहीं है, प्रत्येक महिने में दो उपवास कभी भी किये जा सकते हैं।

विवेचन :—आचार्य ने तपोऽञ्जलि व्रत का अर्थ यह किया है कि रात को जल नहीं पीना, ब्रह्मचर्य पूर्वक रहना, धर्मध्यान पूर्वक वर्ष को बिताना, यह व्रत श्रावण मास की कृष्णा प्रतिपदा से किया जाता है। इसका प्रमाण एक वर्ष है। व्रत को करने वाला दि. जैन मुनि या दि. जैन प्रतिमा के समक्ष बैठकर व्रत को विधिपूर्वक ग्रहण करता है। दो घड़ी सूर्य अस्त होने के पूर्व से लेकर दो घटी सूर्योदय के बाद तक जलपान का त्याग करता है। जलपान का अर्थ यहां हलका भोजन नहीं है बल्कि जल पीने का त्याग करना अभिप्रेत है। इस व्रत का धारी श्रावक रात को जल तो पीता ही नहीं, किन्तु ब्रह्मचर्य का भी पालन करता है। यद्यपि कहीं-कहीं स्वदार सन्तोष व्रत रखने का विधान किया है, पर उचित तो यही प्रतीत होता है कि एक वर्ष ब्रह्मचर्य पूर्वक रहकर आत्मिक शक्ति का विकास किया जाय। ब्रह्मचर्य से रहने पर शरीर और मन दोनों स्वस्थ होते हैं।

वर्षा ऋतु से वृतारम्भ करने का अभिप्राय भी यही है कि इस ऋतु में पेट की अग्नि मन्द हो जाती है, अतः ब्रह्मचर्य से रहने पर शक्ति का विकास होता है। ब्रह्मचर्य के अभाव में वर्षा ऋतु में नाना प्रकार के रोग हो जाते हैं, जिससे मनुष्य आत्मकल्याण से वंचित हो जाता है। इस ऋतु में रात को जल न पीना भी बहुत लाभप्रद है। नाना प्रकार से सूक्ष्म और बादर जीव-जन्तुओं की उत्पत्ति इसी ऋतु में होती है, जिससे रात में पीने वाले जल के साथ वे पेट में चले जाते हैं। भयंकर व्याधियां भी वर्षा ऋतु की रात में जल पीने से हो जाती हैं। तपोऽञ्जलि व्रत में प्रत्येक मास में दो उपवास स्वेच्छा से किसी भी तिथि को करने चाहिए।

प्रत्येक महिने की शुक्लपक्ष की अष्टमी और कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी का नियम इस व्रत के लिए बताया गया है, परन्तु यह कोई आवश्यक नहीं कि यह व्रत इन दोनों दिनों में होना ही चाहिए। प्रत्येक पक्ष में एक उपवास करना आवश्यक है, एक ही पक्ष में दो उपवास नहीं करने चाहिए। जो लोग अष्टमी और चतुर्दशी का

उपवास करना चाहते हैं, उनको भी इस व्रत के लिए कृष्णपक्ष में अष्टमी का और शुक्लपक्ष में चतुर्दशी का अथवा शुक्लपक्ष में अष्टमी का और कृष्ण पक्ष में चतुर्दशी का उपवास करना चाहिए। लगातार एक ही पक्ष में दो उपवास करने का निषेध है। कोई भी व्यक्ति एक ही पक्ष की अष्टमी और चतुर्दशी को उपवास नहीं कर सकता है। उपवास के लिए जिस प्रकार पक्ष का पृथक् होना आवश्यक है, उसी प्रकार तिथि का भी। एक महिने में उपवास की तिथियां एक नहीं हो सकती। जैसे कोई व्यक्ति कृष्ण पञ्चमी का उपवास करे, तो पुनः शुक्लपक्ष में वह पञ्चमी का उपवास नहीं कर सकता है। कृष्णपक्ष में पञ्चमी के उपवास के पश्चात् शुक्लपक्ष में उसे तिथि परिवर्तन करना ही पड़ेगा। अतः शुक्लपक्ष में पञ्चमी को छोड़ किसी अन्य तिथि को उपवास कर सकता है। इस व्रत में प्रतिदिन 'ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः' मन्त्र का १०८ बार जाप करना चाहिए।

तूलसंक्रमण व्रत कथा

उसी प्रकार इस व्रत को भी करे, आश्विन महिने के अंदर तूलसंक्रमण आता है तब इस व्रत को करे, सुपार्श्वनाथ की पूजा आराधना करे, मन्त्र जाप्य पूजा वगैरह पूर्ववत् करे, कथा भी वही पढ़े।

तिर्यंचगति निवारण व्रत कथा

नरकगति निवारण व्रत विधि के समान यह व्रत भी समझना चाहिए उसी प्रकार इसे करे। बैशाख शुक्ल २ को एकाशन करे तृतीया को उपवास करे। चौबीस तीर्थंकरों की आराधना करें, पूजा करे, मन्त्र जाप्य भी उसी प्रकार करे। प्रत्येक महिने की उसी तिथि को व्रत पूजा करे। सात महिने पूरे होने पर कार्तिक में उद्यापन करे, शिखरजी विधान करके उद्यापन करे। कथा राजा श्रेणिक रानी चेलना की पढ़े।

मनुष्यगति निवारण व्रत कथा

उपरोक्त विधि प्रमाण इस व्रत को करे। मात्र इस व्रत में अन्तर इतना ही है कि आषाढ़ शुक्ल तृतीया को एकासन, चतुर्थी को उपवास कर चौबीस तीर्थंकरों की आराधना, मन्त्र जाप्य भी उनका ही, कृष्णपक्ष व शुक्लपक्ष में उसी तिथि को

व्रत करे, पूजा करे, चार महिने पूर्ण होने पर कार्तिक अष्टान्हिका में व्रत-का उद्यापन करे, शिखरजी विधान करे, उद्यापन करे, कथा पूर्ववत् पढ़े ।

देवगति निवारण व्रत कथा

उसी प्रकार इस व्रत को भी करे, मात्र आषाढ़ शुक्ला सप्तमी को एकासन, अष्टमी को उपवास, चौबीस तीर्थंकरों की आराधना करे, मंत्र जाप्य भी इन्हीं का करे, इस प्रकार प्रत्येक महीने की अष्टमी को पूजा व्रत करे, नव पूजा पूर्ण होने पर कार्तिक में उद्यापन करे, शिखरजी विधान करे, बाकी सब पूर्ववत् समझे, कथा भी वही पढ़े ।

अथ तेज कायनिवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान विधि करे । अन्तर इतना है कि चैत्र शुक्ला ७ को एकाशन करे और अष्टमी के दिन उपवास करे । चन्द्रप्रभु तीर्थंकर की पूजा मन्त्र जाप आदि करे । ७ पत्ते रखे ।

तपाचार व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला एकम को शुद्ध होकर मन्दिरजी में जावे, प्रदक्षिणा करके भगवान को नमस्कार करे, वासुपूज्य भगवान की यक्षयक्षि सहित प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, नैवेद्य चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वासुपूज्य तीर्थंकराय षण्मुखयक्ष गांधारीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, सत्पात्रों को दान देवे, ब्रह्म-चर्यपूर्वक रहे ।

इस प्रकार प्रतिदिन पूजा कर बारह धारणा पारणा करे, बारह एकभुक्ति करे, १२ उनोदर करे, १२ फलाहार, १२ कांजी आहार, १२ रस परित्याग, १२ दिन मात्र एक वस्तु परिसंख्यान करे, १२ दिन एक वस्तु खावे, १२ दिन दो वस्तु खावे और बारह दिन चार वस्तु खावे ।

इस प्रकार १४४ दिन पूर्ण होने पर अन्त में उद्यापन करे, वासुपूज्य तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

इस व्रत को सीतादेवी आदि महासतियों ने किया था, इसलिये स्त्रीलिंग छेदकर स्वर्ग में देव हुई ।

कथा में राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

दुग्धरसी व्रत

दुग्धरसी व्रत भादों सुदि धरे, बारसि को पय भोजन करे । —वर्धमान पु०

भावार्थ :—यह व्रत भादों शुक्ला द्वादशी के दिन किया जाता है । इस दिन सिर्फ दूध का आहार लेवे । सारा समय धर्मध्यान में व्यतीत करे । नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे । १२ वर्ष पूर्ण होने पर उद्यापन करे ।

दुःखहरण व्रत

व्रत दुखहरण एक सौ बीस, तितने हो एकान्तर दीस । —वर्धमान पु०

भावार्थ :—यह व्रत २४० दिन में पूरा होता है जिसमें १२० उपवास और १२० पारणे होते हैं, अर्थात् एक उपवास, एक पारणा, इस क्रम से करे । नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे ।

द्वादशी व्रत

भादों शुक्ल द्वादशी होय, व्रत द्वादशी कर भवि सोय । —जैन व्रत कथा

भावार्थ :—यह व्रत १२ वर्ष में पूर्ण होता है । प्रति वर्ष भाद्रपद शुक्ला द्वादशी के दिन उपवास करे । 'ओं ह्रीं अर्हद्भ्यो नमः' इस मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे ।

लघुद्विकावली व्रत

यह व्रत १२० दिन में समाप्त होता है, इसमें २४ वेला, ४८ एकाशन और २४ पारणा इस प्रकार १२० दिन लगते हैं । प्रथम वेला, पुनः पारणा, तत्पश्चात्

दो एकाशन करे इस प्रकार इस व्रत को पूर्ण करना चाहिए। इस व्रत में णमोकार मन्त्र का जाप या पूर्वोक्त बृहद् द्विकावली मन्त्र का जाप करना चाहिए।

द्विकावली व्रत विधि

द्विकावल्यां द्विकान्तरेणैकाशनोपवासाः, चतुःपञ्चाशत् कार्याः, न तिथ्यादि-नियमः। मतान्तरेण द्विकावल्यां प्रत्येक कृष्णपक्षे चतुर्थी-पञ्चम्योः, अष्टमी-नवम्योः। चतुर्दश्यमावस्ययोः उपवासाः कार्याः। शुक्लपक्षे तु प्रतिपदा-द्वितीययोः, पञ्चमी-षष्ठयोः अष्टमी-नवम्योः, चतुर्दशी-पूर्णिमयोः उपवासाः कार्याः। एवं प्रकारेण चतुरशीतिः पारणादिवसानि भवन्ति।१

१ [विधि दुकावली बरतकी श्री जिन भाषी ताम।
वेला सात जु मास में करिए सुणि तिय नाम॥
पषि श्वेत थकी व्रत लीजे, पडिवा दोयज वृद्धि कीजे।
फुनि पांचै षष्ठी जाणों, आठै नवमी छट्ठि ठाणी॥
चौदसि पून्यु गिण लेह, बेला चहु परिवसि तइएह।
तिथि चौथी पांचमी कारी, आठै नौमी सुविचारी॥
चौदसि मावसि परवीन, पषि किसन करै छठ तीन।
इम सात मास एक माहीं, बारामासहि इक ठांही।
चौरासी वेला कीजे, उद्यापन करि छांडीजे।
इस व्रत तै सुरसिव पावै, सुख को तहां वार न आवै॥
क्रियाकोश किसनसिंघ]

अर्थ :—द्विकावली व्रत में दो उपवास के अनन्तर पारणा की जाती है। इसमें कुल ५४ उपवास होते हैं और ५४ दिन ही पारणा करनी पड़ती है। इसमें तिथि आदि का कोई नियम नहीं है। मतान्तर से द्विकावली व्रत के प्रत्येक महीने के कृष्णपक्ष में चतुर्थी-पञ्चमी, अष्टमी-नवमी, चतुर्दशी-अमावस्या और शुक्लपक्ष में प्रतिपदा-द्वितीया, पञ्चमी-षष्ठी, अष्टमी-नवमी और चतुर्दशी-पूर्णिमा का उपवास करना चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक महीने में ७ उपवास तथा ७ एकाशन करना चाहिए। वर्ष में इस प्रकार ८४ उपवास और ८४ पारणाएं होती हैं।

विवेचन :—द्विकावली व्रत की विधि के सम्बन्ध में दो मत प्रचलित हैं। पहला मत इस व्रत के लिए तिथि का कोई बन्धन नहीं मानता है। इसमें कभी भी दो दिन उपवास कर पारणा करनी चाहिये। इस प्रकार ५४ उपवास और ५४ पारणाएं करके व्रत को समाप्त करना चाहिए। ५४ उपवास १६२ दिन में सम्पन्न किये जाते हैं। उपवास करने वाला प्रथम दो दिन उपवास, एक दिन पारणा, पुनः दो दिन उपवास, एक दिन पारणा, इसी प्रकार आगे भी करता जाता है। इस प्रकार एक उपवास के सम्पन्न करने में तीन दिन लगते हैं। अतः ५४ उपवास के ५४×३= १६२ दिन हुए। उपवास के दिनों में शील व्रत का पालन करते हुए तीनों समय प्रतिदिन—प्रातः, मध्यान्ह और सायंकाल "ॐ **ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय सर्वशान्तिकराय सर्वक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय श्रीं क्लीं नमः स्वाहा**" मन्त्र का जाप करना चाहिए। यह मन्त्र तीनों सन्ध्याकालों में कम से कम १०८ बार जपा जाता है।

उपवास और पारणा के लिये किसी तिथि का नियम नहीं है। फिर भी यह व्रत श्रावण मास से आरम्भ किया जाता है। यह माघ मास की द्वादशी तक किया जाता है। कुछ लोग इसे वर्ष भर करने की सम्मति देते हैं, उनका कहना है कि श्रावण मास से आरम्भ कर दो दिन उपवास, एक दिन पारणा इस क्रम से वर्षान्त तक व्रत करते रहना चाहिये।

द्विकावली व्रत की विधि के सम्बन्ध में दूसरी मान्यता यह है कि इस व्रत में प्रत्येक मास में सात उपवास किये जाते हैं, ये सात उपवास २१ दिन में सम्पन्न होते हैं। दो दिन व्रत रखने के उपरान्त पारणा करनी पड़ती है, इस प्रकार २१ दिन में सात उपवास करने के पश्चात् महीने के शेष दिनों में एकाशन करना चाहिए। प्रथम उपवास कृष्ण-पक्ष में चतुर्थी पञ्चमीका किया जायगा। षष्ठी को पारणा की जायगी, सप्तमी को एकाशन करने के उपरान्त अष्टमी और नवमी को व्रत किया जायगा। इस व्रत की दशमी को पारणा होगी, पुनः एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी को एकाशन करना होगा। चतुर्दशी और अमावस्या को उपवास करना होगा। पुनः शुक्लपक्ष में प्रतिपदा और द्वितीया का उपवास करना होगा। इस

प्रकार व्रत में एक बार चार दिन का उपवास पड़ेगा । एक पारणा बीच की लुप्त हो जायगी । चार दिनों के व्रत के उपरान्त तृतीया और चतुर्थी को एकाशन करना होगा । पंचमी और षष्ठी के उपवास के अनन्तर, सप्तमी को पारणा, पश्चात् अष्टमी और नवमी को उपवास करने पर दशमी, एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी को एकाशन करना चाहिए । प्रत्येक महिने का अन्तिम उपवास शुक्ल पक्ष में चतुर्दशी और पूर्णिमा का करना होगा ।

कुछ लोग इस व्रत को शुक्ल पक्ष से आरम्भ करने के पक्ष में हैं । शुक्लपक्ष से आरम्भ करने पर प्रथम बार चार दिन तक लगातार उपवास नहीं पड़ता है, क्योंकि चतुर्दशी और पूर्णिमा के उपवास के पश्चात् कृष्णपक्ष में चतुर्थी-पञ्चमी को उपवास करने का विधान है । परन्तु इस क्रम में भी दूसरी आवृत्ति में चार उपवास करना पड़ेगा ।

द्वितीय मान्यता में द्विकावली व्रत के लिए तिथियां निर्धारित की गयी हैं । अतः इसमें भी छः घटी प्रमाण तिथि के होने पर ही व्रत करना होगा । इस व्रत को जाप-विधि सर्वत्र एक-सी ही है । कषाय और विकथाओं के त्याग पर विशेष ध्यान रखना चाहिये । द्विकावली व्रत का फल स्वर्ग-मोक्ष की प्राप्ति होना है । जो श्रावक इस व्रत का अनुष्ठान ध्यानपूर्वक करता है तथा प्रमाद का त्याग कर देता है, वह शीघ्र ही अपना आत्म-कल्याण कर लेता है ।

यों तो सभी व्रतों-द्वारा आत्म-कल्याण करने में व्यक्ति समर्थ है, पर इस व्रत के पालन करने से समस्त मनोवाञ्छाएं पूरी हो जाती हैं । किसी संकट या विपत्ति को दूर करने के लिये भी यह व्रत किया जाता है । कुछ लोग इसे संकटहरण व्रत भी कहते हैं ।

दर्शनावरणीय कर्म निवारण व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल अष्टमी को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, अजितनाथ तीर्थंकर व यक्षयक्षि की प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

'ॐ ह्रीं क्लीं ऐं अर्हं अजितनाथाय महायक्ष रोहिणीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।'

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मंत्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक जयमाला पूर्ण कर अर्घ चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, दूसरे दिन पूजादान करके स्वयं पारणा करे, इस प्रकार प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशी को व्रतपूर्वक पूजा करे, चार महीने पूर्ण होने पर अन्त में कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे, उस समय अजितनाथ तीर्थंकर विधान करे, महाभिषेक करे, नव प्रकार धान्यों से नौ पुञ्ज भगवान के आगे रखे, चतुर्विध संघ को चार प्रकार का दान देवे ।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

द्विपंच व्रत (ईरैदुगोलन व्रत)

श्रावण मास में पड़ने वाले उतरा नक्षत्र को स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा द्रव्य की सर्व सामग्री लेकर जिन मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि क्रिया करते हुए भगवान को नमस्कार करे, श्री अभिषेक पात्र में श्री शीतलनाथ की ईश्वरयक्ष, मानवीयक्षि प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, भगवान के आगे दश प्रकार का धान्य बिछा कर, उसके ऊपर एक नवीन कपड़ा बिछावे, उसके चारों ही दिशाओं में जीरा, नमक, गेहूं, चांवल के पुञ्ज रखे, फूले हुए (भीगे हुए) चने का भी पांच पुञ्ज रखे, उसके मध्य भाग में एक सजाया हुआ कुंभ रखे, कुंभ पर एक थाली, थाली में यक्षयक्षि सहित शीतलनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा रखे, दश डोरे का उपवीत (होंग नूल) करके, उसको हल्दी लगाकर भगवान के आगे रखे, अष्ट द्रव्य से भगवान की पूजा करे, जिनवाणी व गुरु की पूजा करके, ज्वालामालिनी, पद्मावती, रोहणी, इन की पूजा करे। मन्दिर में स्थित यक्षयक्षि, क्षेत्रपाल की भी अर्चना करे, दश प्रकार की मिठाई से पूजा करे ।

ॐ ह्रीं क्लीं ऐं अर्हं शीतलनाथ तीर्थंकराय ईश्वरयक्ष मानवीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पीले पुष्प लेकर जाप्य करे । १०८ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े एक महाअर्घ करके हाथ में लेते हुये मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतार कर अर्घ्य चढ़ा देवे, फिर उपवीत अपने गले में पहन लेवे, ब्रह्मचर्य पूर्वक उपवास करे, धर्मध्यान से समय बितावे । इसी क्रम से १० दिन पूजा करे, यह व्रत पांच वर्ष करे, उद्यापन करे, उस समय शीतलनाथ विधान करके महाअभिषेक करना, चतुर्विध संघ को दान देकर आवश्यक उपकरण भी देवे, दस सौभाग्यवती स्त्रियों को भोजन कराकर वायना देवे । फिर पारणा करे, इसी प्रकार इस व्रत की विधि है ।

कथा में श्रेणिक पुराण पढ़े, यह व्रत उन्होंने किया था ।

अथ देशविरतगुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ शु० २ के दिन एकाशन करे, ३ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, ५ दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे ।

कथा

पहले मनोहरपुर नगरी में मनोहर राजा अपनी महारानी मनोरमा के साथ रहता था । उसका पुत्र मनोज्ञात, उसकी स्त्री मनोधरा, विजय मन्त्रि, उसकी स्त्री शांता, मनकीर्ति पुरोहित, उसकी स्त्री मनोभिलाषा, मनासागर, उसकी स्त्री मनोगामिनी, मनकुमार सेनापति, उसकी स्त्री मनोवेगा पूरा परिवार सुख से रहता था । एक दिन उन्होंने मनोविजय गुरु से यह व्रत लिया और इसका यथाविधि पालन किया । सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गये ।

अथ दीपावली व्रत अथवा लक्षावली व्रत कथा

कार्तिक कृष्णा १३ (तेरस) के दिन व्रतिक शुद्ध होकर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा अभिषेक की सामग्री लेकर जिन मन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा

लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे। जिनेन्द्रदेव का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, गणधर स्वामी की पूजा कर यक्षयक्षिणी की पूजा करे व क्षेत्रपाल की पूजा यथाविधि करे, वस्त्राभूषण से सजावे, पकवान चढ़ावे, नारियल फोड़े।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीजिनेन्द्राय यक्षयक्षि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, एक थाली में नारियल सहित अर्घ्य रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन एकाशन करे, चतुर्दशी के दिन उपरोक्त प्रमाण से पूजा अभिषेक करके, मात्र अभिषेक, चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा महावीर स्वामी प्रतिमा, यक्षयक्षि सहित स्थापन कर अभिषेक करें, उस दिन एक लाख दीपक जलावे।

पूजा वेदिका पर पंचवर्ण से चौबीस कोष्ठक वाला मण्डल मांडकर आठों दिशाओं में आठ मंगल कलश रखकर वेदी को खूब सजावे, अष्ट प्रातिहार्य रखे, मध्य में एक कुम्भ सजाकर रखे, उसके ऊपर एक थाली में चतुर्विंशति तीर्थंकर यन्त्र निकाले गन्ध से, उसके ऊपर चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा और महावीर प्रतिमा स्थापन कर अष्ट द्रव्य से पूजा करे, महावीर भगवान की पूजा करे। एक लक्ष बार जल चढ़ावे, एक लक्ष बार चन्दन आदि इसी प्रकार एक-एक लक्ष बार प्रत्येक द्रव्य चढ़ावे। जब एक लक्ष दीपक जलाये जाते हैं तब ऐसा लगता है कि दीपावली आ गई। इसी प्रकार रात्रि जागरण पूर्वक बितावे, रात्रि के अन्तिम पहर में भगवान महावीर का महाभिषेक करके पूजा करना, फिर निर्वाण लड्डू चढ़ाना, लड्डू के अन्दर स्वर्ण, चांदी, मोती आदि रत्न भरे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री महावीर तीर्थंकराय मातंगयक्षाय सिद्धायनीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार स्वर्ण पुष्प और सुगन्धित पुष्प लेकर जाप्य करे, १०८ बार णमोकार मन्त्र का जाप करे।

एक थाली में २४ पान अलग-अलग रखकर प्रत्येक पर अर्घ्य रखे। एक बड़ा फल रखकर ऊपर २४ बाती का दीपक जलावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगल आरती उतारे, अर्घ्य भगवान को चढ़ा देवे, महावीर चरित्र पढ़े, व्रत कथा पढ़े, उस दिन उपवास रखे, निर्वाण क्षेत्र विधान करे अथवा सम्मेद शिखर विधान करे, लघु सिद्धचक्र विधान करे, रात्रि में दीपोत्सव करे, सत्पात्रों को आहार-दान देकर स्वयं पारणा करे।

इस प्रकार इस व्रत को २४ वर्ष करना चाहिये, अन्त में उद्यापन करे, उस समय महावीर जिनेन्द्र की नवीन प्रतिमा लाकर पंच कल्याणक प्रतिष्ठा करे, चतुर्विध संघ को आहारदानादि देवे, २४ लड्डू जिसमें नाना प्रकार के रत्नादि भरकर भगवान के आगे रखे, एक देव को, एक गुरु को, एक शास्त्र को, एक यक्ष, एक क्षेत्रपाल को चढ़ावे, एक पुरोहित को देवे, बाकी सौभाग्यवती स्त्रियों को देवे, दो स्वयं रख लेवे। इस व्रत में त्रयोदशी को एकाशन, चतुर्दशी को उपवास, अमावस्या को एकाशन करे, इस दिन निर्वाण के समय गौतम स्वामी की भी पूजा करे।

कथा

इस व्रत को कुणिक राजा ने किया था और सुधर्माचार्यजी से कथा कहने को कहा था, तब आचार्य श्री ने महावीर का चरित्र कह सुनाया। इस व्रत में महावीर तीर्थंकर का चरित्र पढ़ना चाहिये।

अथ दानान्तराय कर्म निवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृ. ८ के दिन एकाशन करे, ९ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, णमोकार मन्त्र का जाप १०८ बार करे, १० दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले काशीर नगरी में कामसेन राजा कांतामती अपनी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र कामभूती, उसकी स्त्री कामरूपिनी, प्रधान गुणनिधी, उसकी

स्त्री विजयावती, विजयसागर पुरोहित उसकी पत्नी विमलमति व उसकी स्त्री विमलगंगा पूरा परिवार सुख से रहता था। एक दिन उन्होंने विमलसागर मुनि के पास यह व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया, सर्वसुख की प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ द्विंद्रिय जाति निवारण व्रत कथा

विधि :—पहले बताये अनुसार, अन्तर केवल इतना है कि चै० शु० १ के दिन एकाशन, चै० शु० दूज को उपवास। अजितनाथ तीर्थंकर की पूजा, मन्त्र व जाप अजितनाथ भगवान का करना चाहिए।

दशपर्व व्रत कथा

आषाढ़ की अष्टान्हिका में शुद्ध होकर जिन मन्दिरजी में जावे, प्रदक्षिणा-पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करके अष्टद्रव्य से पूजा कर, श्रुत व गणधर, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ **ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा।**

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, सत्पात्रों को दान देवे, ब्रह्मचर्य का पालन करे।

इस प्रकार आषाढ़ शुक्ल अष्टमी से दस दिन तक पूजा करके एकभुक्ति करे, आगे दस दिन व्रत करके पूजा करे, एक ही वस्तु से एकासन करे, फिर १० दिन पर्यन्त व्रत कर पूजा करे, रस परित्याग करे, फिर दस दिन व्रत पूजा कर व्रत परिसंख्यान करे, आगे दस दिन फिर पूजा व्रत करके फलाहार करे, फिर दस दिन पूजा करके कांजी भोजन करे, फिर १० दिन पूजा करके व्रत कर अर्धपेट भोजन करे, फिर दस दिन पूजा करके व्रत के समय मात्र दस ग्रास भोजन का खावे, फिर १० दिन धारणा पारणा करे, आगे दस दिन उपवास करे, इस विधि से १०० दिन के अन्दर इस व्रत को पूरा करे, अन्त में व्रत का उद्यापन करे, उस समय चतुर्विंशति तीर्थंकर की पूजाराधना करे, महाभिषेक करे, दस मुनियों को दान देवे, १० पुस्तक १० वेष्टन (कपड़ा), पिच्छी, कमण्डल, आवश्यक वस्तु देवे।

कथा

इस व्रत को पहले वज्रनाभि चक्रवर्ती ने पाला था, इसी के फल से आदि तीर्थंकर होकर मोक्ष को गये ।

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कहानी (कथा) पढ़े ।

दक्षिणायण व्रत कथा

श्रावण शुक्ला १४ के दिन एकाशन करे, पौर्णिमा को प्रातः शुद्ध होकर मन्दिर जावे, तीन प्रदक्षिणापूर्वक भगवान को नमस्कार करे, चन्द्रप्रभु भगवान की यक्षयक्षिणी सहित मूर्ति स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चंद्रप्रभ तीर्थंकराय श्यामयक्ष ज्वालामालिनी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य कर, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, एक पूर्ण अर्घ चढ़ावे, व्रत कथा पढ़े, नैवेद्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, छह वस्तुओं से एकभुक्ति करे । आहारदान देवे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे ।

इस प्रकार यह व्रत छह वर्ष तक प्रत्येक पौर्णिमा को करे, अन्त में उद्यापन करे, उस समय चन्द्रप्रभ तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

इस व्रत को चन्द्रशेखर राजा ने पालन किया था, उसके प्रभाव से मोक्ष में गये ।

व्रत की कथा में राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

दर्शनाचार व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला २ को शुद्ध होकर मन्दिरजी में जावे, तीन प्रदक्षिणा लगा

कर भगवान को नमस्कार करे, यक्षयक्षणी सहित अजितनाथ प्रतिमा का पञ्चामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत, गणधर, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अजितनाथाय महायक्ष रोहिणी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, एक पुष्पहार भगवान के चरणों में चढ़ावे, अखण्डदीप जलावे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, दूसरे दिन सत्पात्रों को दान देकर स्वयं पारणा करे ।

इस प्रकार प्रतिदिन चार महिने तक भगवान की पूजा करके एक पुष्पहार नित्य भगवान को चढ़ावे, अन्त में कार्तिक अष्टान्हिका में व्रत का उद्यापन करे, उस समय अजितनाथ विधान करें, महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

इस व्रत को पूर्णभद्र ने पालन किया था । दीक्षा लेकर स्वर्ग में देव हुआ, क्रमशः मोक्ष को गया ।

कथा में राजा श्रेणिक व रानी चेलना को कथा पढ़े ।

सर्वदोष परिहार व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि की प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करके अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की, क्षेत्रपाल व यक्षयक्षि की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, इस प्रकार इस व्रत की नव पूजा करे, एक ही वस्तु से एकाशन करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, अणुव्रतों का पालन करे, सर्व कषाय छोड़ते हुए धर्मध्यान से समय बितावे, आहारदान देवे ।

इस प्रकार इस व्रत को पांच अष्टान्हिका में करके अन्त में उद्यापन करे। उस समय पंचपरमेष्ठि विधान कर महाभिषेक करे, एक नयी प्रतिमा लाकर पंच-कल्याण प्रतिष्ठा करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े।

अथ दुर्गतिनिवारण व्रत कथा

माघ कृष्णा एकम के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन पूजा सामग्री हाथ में लेकर मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, मन्दिर में दीप जलावे, अभिषेक पीठ पर शांतिनाथ तीर्थंकर की यक्षयक्षि सहित प्रतिमा स्थापन कर भगवान का महाभिषेक करे। आदिनाथ से लगाकर शांतिनाथ तीर्थंकर तक प्रत्येक तीर्थंकर की पंचकल्याणकपूर्वक पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि के प्रत्येक के अर्घ्य चढ़ावे, क्षेत्रपाल को अर्घ चढ़ावे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शांतिनाथाय यक्षयक्षि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, श्री सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करे, शांतिनाथ चरित्र पढ़े, एक महा-अर्घ्य थाली में लेकर मंगल आरती उतारे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, अर्घ्य चढ़ा देवे। उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, धर्मध्यान से समय निकाले, दूसरे दिन पारणा करे।

इस प्रकार प्रत्येक महिने की उसी तिथि को पूजा करे। इस प्रकार पच्चीस पूजा उपवास पूर्ण होने पर व्रत का उद्यापन करे, उस समय शांतिनाथ पूजा, मंडल आराधना करे, महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को आहारदान देवे, मन्दिर में चार घंटा, चार कलश, धूपदान वगैरह उपकरण चढ़ावे, इस व्रत को अनेक लोगों ने पालन कर मोक्ष सुख की प्राप्ति की है।

हे भव्य जीवो आप भी इस व्रत को श्री गुरु के पास ग्रहण करो और यथा-विधि पालन करो, अन्त में उद्यापन करो, जिससे मोक्ष सुख की प्राप्ति होवे।

अथ दशदिक्पालक व्रत कथा

व्रत विधि :—पौष के शुक्ल पक्ष में पहिले शनिवार को एकाशन करे और रविवार को उपवास करे। और सब विधि पहले के समान करे। दश दिक्पालों की पृथक्-पृथक् अर्चा करे व नारियल चढ़ावे।

जाप—ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा ।।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प से जाप करे। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप कर यह कथा पढ़नी चाहिए। एक पात्र में १० पत्ते (पान) रख करके अष्टद्रव्य व नारियल रखकर महार्घ्य चढ़ाये। उपवास की शक्ति न हो तो १० वस्तु का नियम कर आहार करे। दूसरे दिन शक्ति के अनुसार सत्पात्र को आहार देकर पारणा करे। इस प्रकार १० रविवार करके उद्यापन करे। तीन दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे। पंचपरमेष्ठी का विधान अभिषेक करे। शांतिहोम व जलहोम करके १० दिक्पालों को नारियल चढ़ाये। चतुर्विध संघ को आहारदान दे। १० दम्पत्ति को भोजन कराये, वस्त्रादि दान दे और गोद भरे जिसमें पान, सुपारी, चावल, फल, पुष्प आदि रखे।

कथा

दशपुर नगर में दशचन्द्र नामक राजा राज्य करता था। उसकी विलासवती नामक सुशील रूपवती गुणवती ऐसी रानी थी। उसके दशसिंह नामक गुणवान सुन्दर पुत्र था। जिसकी सिंहसेना नामक स्त्री थी। मन्त्री पुरोहित राजश्रेष्ठी सेनापति ऐसे परिवारजन थे। एक दिन उस राज्य के बगीचे में देशभूषण नाम के महामुनि पधारे। यह शुभ समाचार मिलते ही वह अपने परिवार के साथ उनके दर्शन के लिए पैदल गये। तीन प्रदक्षिणा देकर बैठे। धर्मोपदेश सुनकर वे विनय से हाथ जोड़कर बोले हे दयासिंधो! स्वामिन्! अब आप हमें सर्वसुखों के कारणभूत व्रत बतायें। यह सुनकर मुनिराज बोले—हे भव्योत्तम राजन्! तुम दशदिक्पाल व्रत का पालन करो, जिससे तुम्हें सर्वसुख की प्राप्ति होगी। ऐसा कहकर व्रत की विधि बताई जिसे सुनकर सबको परम सन्तोष हुआ और राजा ने वह व्रत ग्रहण

किया । तत्पश्चात् मुनिराज को नमस्कार कर अपने पुरजनों के साथ नगर को वापस आये । योग्य काल तक यह व्रत करके उसका उद्यापन किया जिससे उन्हें संसार सुख प्राप्त हुआ और क्रम से मोक्ष सुख की भी प्राप्ति हुई । इस प्रकार यह इस व्रत का माहात्म्य है ।

अथ दुरितानिवारण व्रत

आषाढ़, कार्तिक व फाल्गुन, इन महीनों की शुक्ल अष्टमी के दिन प्रातःकाल व्रतिक स्नानादिक से शुद्ध होकर शुद्ध वस्त्र पहनकर अपने हाथ में पूजाद्रव्य का सामान लेकर जिन मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा मन्दिर की लगाकर ईर्यापथ शुद्धि वगैरह क्रिया करके भगवान को नमस्कार करे । अखण्डदीप जलावे, अभिषेक पीठ पर चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापन कर पंचामृत अभिषेक करे, चौबीस तीर्थंकर की जयमाला सहित अलग-अलग पूजा करना, जिनवाणी व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणियों को अर्घ समर्पण करे क्षेत्रपाल की अर्चना करे ।

ॐ ह्रीं अर्हं वृषभादिचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, १०८ बार णमोकार मन्त्रों का जाप करे, सहस्र नाम का पाठ करे, चौबीस तीर्थंकरों के चारित्र पढ़े, एक थाली में महाअर्घ को हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, महाअर्घ्य को भगवान को चढ़ा देवे, फिर सद्पात्रों को दान देवे, उस दिन उपवास रखे, धर्मध्यान से समय निकाले, ब्रह्मचर्य का पालन करे । दूसरे दिन पूजा करके स्वयं पारणा करे । इस प्रकार इस व्रत को प्रत्येक महिने की चार अष्टमी चतुर्दशी को करे, ऐसे चार महीने में सोलह पूजा करके समाप्त करे, चारों ही महीने की अष्टमी चतुर्दशी की पूजा व्रत उपरोक्त प्रकार ही करे ।

व्रत समाप्त होने के बाद उद्यापन करे, एक चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा यक्ष-यक्षि सहित नवीन बनवाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करावे, पाँच पकवानों से अर्चा करे, दश वायना तैयार करके, उसके अन्दर पान, सुपारी, गंधाक्षत, पुष्प, फल, नारियल, करन्ज्या, हलद, कुंकुम, कर्णभूषण, पादभूषण आदि यथाशक्ति आभूषण रखे,

यज्ञोपवीत, फूले हुए चने डालकर प्रत्येक वायना तैयार करे और बांधकर ऊपर से सूत्र लगाकर वेष्टित करदे, उन दश वायना करंड को, एक देव, एक शास्त्र, एक गुरु, एकेक पद्मावती, रोहणी, प्रज्ञप्ति, जलदेवता व श्रुतदेवी, एक पुरोहित को देवे, पांच सौभाग्यवती स्त्रियों को भी देवे, एक अपने घर ले जावे, चतुर्विध संघ को आहार दानादि देवे, इस प्रकार इस व्रत की विधि कही है ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में अवन्ति देश के अन्दर चम्पापुर नामक नगर है, उस नगर में एक श्रीपाल राजा अपनी रानी लक्ष्मीमती सहित राज्य करता था । एक दिन उस नगरी के उद्यान में श्रुतसागर नाम के मुनि अपने संघ सहित आकर विराजमान हुए । उद्यान में मुनि संघ आया है, इस प्रकार के समाचार बनमाली से राजा को प्राप्त होते ही, पुरजन परिजन सहित दर्शनार्थ वन को गया, नमस्कारादि करके धर्मश्रवण को सभा में बैठ गया । धर्मश्रवण के बाद लक्ष्मीमति रानी मुनिराज को हाथ जोड़ विनयपूर्वक प्रार्थना करने लगी की हे गुरुदेव ! आप मेरे लिए कोई व्रत विधान कहो, जिससे मुझे इस भव में भी सुख मिले और परभव में भी, तब मुनिराज उसकी प्रार्थना पर ध्यान देकर कहने लगे कि हे बेटी ! तुम दुरित निवारण व्रत का पालन करो, इस व्रत के प्रभाव से जीव को अतिशय पुण्य की प्राप्ति होती है । परम्परा से मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है ।

मुनिराज ने व्रत की विधि बताई, मुनिराज के मुख से व्रत की विधि सुनकर लक्ष्मीमती ने व्रत को स्वीकार किया, तब एक मनोहरी नाम की श्राविका हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगी कि स्वामि मेरे निःसन्तान होने का क्या कारण है, और मेरे घर में दरिद्रता का निवास है, सो कैसे क्या करूं ? मेरा कैसे कष्ट निवारण हो ? मैंने पूर्व भव में कौनसा पाप किया ? सब आप कृपा करके कहें ।

तब मुनिराज कहने लगे कि हे मनोहरी तुम्हारे पूर्व के तीसरे भव में द्वारिका नगरी में धनपाल की पत्नी वसुमति थी, वह वसुमति तेरी सौत थी, तू वहां पर निःसन्तान थी, तेरी सौत के चार पुत्र थे, तूने डाह से उन चारों पुत्रों के ऊपर विष प्रयोग किया और मार डाला, पुत्र-वियोग से तुम्हारी सौत आर्तध्यान से मरकर

व्यंतरी हो गई, सब विभंगावधि से जानकर वो तुमको अब कष्ट दे रही है, इसलिए तुम भी इस दुरितानिवारण व्रत को करो जिससे तुम्हारा सर्वसंकट टल जायेगा। तब मनोहरी ने अपने किये हुये पूर्व भव के पाप को नष्ट करने के लिए, दुरितनिवारण व्रत को स्वीकार किया और सब लोग नगर को वापस लौट आये।

रानी और श्राविका मनोहरी ने यथाविधि व्रत का पालन किया, अन्त में उद्यापन किया जिसके प्रभाव से रानी मरकर स्वर्ग में देव हुई, और मनोहरी को सम्पत्ति सुख दोनों ही प्राप्त हुए, अन्त में वो भी समाधिमरण के बल से स्वर्ग में देव हुई। आगे नियम से दोनों ही देव मनुष्य भव धारणकर मोक्ष को जायेंगे। इस व्रत का यही प्रभाव है। भव्यजीवो ! तुम भी इस व्रत को पालो।

दशलक्षण व्रत की विधि

दशलक्षणिकव्रते भाद्रपदमासे शुक्ले श्री पञ्चमीदिने प्रोषधः कार्यः, सर्वगृहारम्भं परित्यज्य जिनालये गत्वा पूजार्चनादिकञ्च कार्यम्। चतुर्विंशतिकां प्रतिमां समारोप्य जिनास्पदे दशलक्षणिकं यन्त्रं तदग्रे ध्रियते, ततश्च स्नपनं कुर्यात्, भव्यः मोक्षाभिलाषी अष्टधापूजनद्रव्यैः जिनं पूजयेत्। पञ्चमीदिनमारभ्य चतुर्दशीपर्यन्तं व्रतं कार्यम्, ब्रह्मचर्यविधिना स्थातव्यम्। इदं व्रतं दशवर्ष पर्यन्तं करणीयम्, ततश्चोद्यापनं कुर्यात्। अथवा दशोपवासाः कार्याः। अथवा पञ्चमीचतुर्दश्योरुपवासद्वयं शेषमेकाशनमिति केषाञ्चिन्मतम्, तत्तु शक्तिहीनतयाऽङ्गीकृतं न तु परमो मार्गः।

अर्थ—दशलक्षण व्रत भाद्रपद मास में शुक्लपक्ष की पञ्चमी से आरम्भ किया जाता है। पञ्चमी तिथि को प्रोषध करना चाहिए तथा समस्त गृहारम्भ का त्यागकर जिन-मन्दिर में जाकर पूजन, अर्चन, अभिषेक आदि धार्मिक क्रियाएं सम्पन्न करनी चाहिए। अभिषेक के लिए चौबीस भगवान की प्रतिमाओं को स्थापन कर उनके आगे दशलक्षण यन्त्र स्थापित करना चाहिए। पश्चात् अभिषेक क्रिया सम्पन्न करनी चाहिए। मोक्षाभिलाषी भव्य अष्ट द्रव्यों से भगवान् जिनेन्द्र का पूजन करता है। यह व्रत भादों सुदी पञ्चमी से भादों सुदी दशमी तक किया जाता है। दसों दिन ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता है।

इस व्रत का दस वर्ष तक पालन किया जाता है, पश्चात् उद्यापन कर दिया जाता है। इस व्रत की उत्कृष्ट विधि तो यही है कि दस उपवास लगातार अर्थात् पञ्चमी से लेकर चतुर्दशी तक दस उपवास करने चाहिए। अथवा पञ्चमी और चतुर्दशी का उपवास तथा शेष दिनों में एकाशन करना चाहिए, परन्तु यह व्रत विधि शक्तिहीनों के लिए बतायी गयी है, यह परममार्ग नहीं है।

विवेचन :—दशलक्षण व्रत भादों, माघ और चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में पञ्चमी से चतुर्दशी तक किया जाता है। परन्तु प्रचलित रूप में केवल भाद्रपदमास ही ग्रहण किया गया है। दशलक्षण व्रत के दस दिनों में त्रिकाल सामायिक, वन्दना और प्रतिक्रमण आदि क्रियाओं को सम्पन्न करना चाहिए। व्रतारम्भ के दिन से लेकर व्रत समाप्ति तक जिनेन्द्र भगवान् के अभिषेक के साथ दशलक्षण यन्त्र का भी अभिषेक किया जाता है। नित्य नैमित्तिक पूजाओं के अनन्तर दशलक्षण पूजा की जाती है। पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी आदि तिथियों में क्रम से प्रत्येक तिथि को—

'ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय नमः।

'ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमार्दवधर्माङ्गाय नमः।

'ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमार्जवधर्माङ्गाय नमः।

'ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमसत्यधर्माङ्गाय नमः।

'ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमशौचधर्माङ्गाय नमः।

'ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमसंयमधर्माङ्गाय नमः।

'ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तम तपधर्माङ्गाय नमः।

'ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तम त्यागधर्माङ्गायनमः।

'ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमाकिञ्चनधर्माङ्गायनमः।

'ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तम ब्रह्मचर्यधर्माङ्गायनमः।

मन्त्र का जाप करना चाहिए। समस्त दिन स्वाध्याय, पूजन, सामायिक आदि कार्यों में व्यतीत करे, रात्रि जागरण करे और समस्त विकथाओं का त्याग कर आत्मचिन्तन में लीन रहे। दसों दिन यथाशक्ति प्रोषध, बेला, तेला, एकाशन, ऊनोदर

एवं रसपरित्याग करना चाहिए। स्वादिष्ट भोजन का त्याग करे तथा स्वच्छ और सादे वस्त्र धारण करने चाहिये। इस व्रत का पालन दस वर्ष तक किया जाता है।

तिथिक्षय होने पर दशलक्षण व्रत की व्यवस्था और व्रत का फल

आदितिथिक्षये चतुर्थीतः, मध्यतिथिक्षये चतुर्थीतः अष्टम्यादि तिथिह्रासेऽपि चतुर्थीतः व्रतं कार्यम्। नन्वेकान्तरेण व्रते कृते सति अष्टम्यामपि पारणा भवतीति दूषणम्, नैवं वाच्यम्, एकान्तरस्यागमोक्तत्वात्। तिथिक्षयेऽपि पञ्चम्यां पारणादोष आगच्छति, इति न वाच्यं प्रोषधोपवास कथितपञ्चम्याः चतुर्थ्यामेवाध्यारोपात्। एवं दश वर्षपर्यन्तं व्रतं पालनीयम्, ततश्चोद्यापनं भवेत्। एतस्य फलं तु मुक्तिरिति निर्णयः।

अर्थ :—दशलक्षण व्रत में आदितिथि पञ्चमीका अभाव होने पर चतुर्थी तिथि से व्रतारम्भ, मध्यतिथि का अभाव होने पर चतुर्थी से व्रतारम्भ और अष्टमी तिथि के अनन्तर चतुर्दशी तक किसी भी तिथि का ह्रास होने पर चतुर्थी से ही व्रत का आरम्भ किया जाता है।

यहां शंका की गयी है कि जो एकान्तर उपवास और पारणा करेगा, उसे अष्टमी की पारणा करनी होगी अर्थात् पञ्चमी का उपवास षष्ठी की पारणा, सप्तमी का उपवास अष्टमी की पारणा, नवमी का उपवास दशमी की पारणा आदि एकान्तर उपवास के क्रम से अष्टमी को पारणा आती है, यह दोष है। क्योंकि अष्टमी पर्वतिथि है, इसका उपवास अवश्य करना चाहिए। आचार्य उत्तर देते हैं कि यहाँ पर्वतिथि का विचार नहीं किया जाता है, आगम में एकान्तर उपवास करने का क्रम बताया गया है, अतः यहां पर एकान्तर उपवास क्रम ही ग्राह्य है। इसलिए अष्टमी को पारणा करने में दोष नहीं है।

मध्य में तिथिक्षय होने पर चतुर्थी को उपवास करने का क्रम बताया गया है, अतः यहां पर एकान्तर उपवासक्रम ही ग्राह्य है। इसलिए अष्टमी को पारणा करने में दोष नहीं है।

मध्य में तिथिक्षय होने पर चतुर्थी को उपवास किया जाएगा, जिससे एकान्तर उपवास करने वाला पञ्चमी को पारणा करेगा यह भी दोष है। क्योंकि दश-

लक्षण व्रत का प्रोषध पञ्चमीं को होना चाहिए। किन्तु पञ्चमी की पारणा आती है। आचार्य इस शंका का समाधन करते हुए कहते हैं कि मध्य में तिथिक्षय होने पर चतुर्थी को उपवास किया जाता है। किन्तु इस चतुर्थी में ही पञ्चमी का अध्यारोप कर लिया जाता है। उत्तम क्षमाधर्म की भावना तथा जाप, जो कि पञ्चमी को किया जाता है, इसी चतुर्थी को कर लिए जाते हैं, अतः चतुर्थी को ही पंचमी मान लिया जाता है। अतएव पंचमी की पारणा मे कोई दोष नहीं है। इस प्रकार इस दशलक्षण व्रत का पालन दश वर्ष तक करना चाहिए।

इस व्रत का फल मोक्षलक्ष्मी की प्राप्ति है, यों तो इस व्रत से लौकिक ऐश्वर्य और अभ्युदय की प्राप्ति होती है, पर वास्तव में यह व्रत मोक्षलक्ष्मी कालान्तर में देता है।

विवेचन :—तिथिक्षय होने पर दशलक्षण व्रत को प्रारम्भ किया जाता है और तिथिवृद्धि होने पर व्रत एक दिन अधिक किया जाता है। अन्तिम तिथि की वृद्धि होने पर अर्थात् दो दिन चतुर्दशी होने पर प्रथम दिन व्रत किया जाता है। यदि दूसरी चतुर्दशी भी छः घटी से अधिक हो तो उस दिन भी व्रत करना होता है। तथा छः घटी प्रमाण से अल्प होने पर पारणा की जाती है। इस व्रत का फल अनुपम होता है। दश धर्म आत्मा के वास्तविक स्वरूप हैं, इनके चिन्तन, मनन और जीवन में उतारने से जीव शीघ्र ही अपने कर्मों को तोड़कर निर्वाण प्राप्त करता है। उत्तम क्षमादि धर्म आत्मा की कर्मकालिमाको नष्ट करने में समर्थ है। व्रतोपवास से विषयों की ओर ले जाने वाली इन्द्रियों की शक्ति क्षीण हो जाती है तथा जीव अपने उत्थान का मार्ग प्राप्त कर लेता है।

दशलाक्षणिक व्रत कथा

भाद्रपद शुक्ल मास की पंचमी के दिन व्रतिक स्नानकर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा अभिषेक का सामान लेकर जिन मंदिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे, मण्डप वेदी को सजाकर वेदी के ऊपर पांच रंग के रंगोली से मांडना माण्डे, मण्डल के मध्य में एक मंगलकलश सजा कर रखे, आठों दिशाओं में भी आठ मंगल कलश रखे, मंगल द्रव्य रखे, वेदी को पांच,

रंगों के धागे से वेष्टित करे, अभिषेक की थाली में दशलक्षण यंत्र व चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, एक थाली में दस पान रखकर उपर अर्घ्य रखे, उस थाली को मध्य के कलश पर रखे, नित्यपूजा करके दशलक्षण व्रत विधान करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में दस पान लगाकर ऊपर अर्घ्य रखे, एक नारियल रखे, थाली हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उपवासादि यथाशक्ति करे, ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे। धर्मध्यान पूर्वक समय निकाले।

इस क्रम से दस दिन पूजा-क्रम करना चाहिए, और दस वर्ष तक करते रहना चाहिए। अन्त में उद्यापन करना चाहिए, उस समय दशलक्षणिक व्रत उद्यापन विधान करना चाहिए, एक नवीन चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा यक्षयक्षि सहित लाकर गणधर पादुका व श्रुतस्कंध लाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करावे, नवीन जिन मन्दिर बांधे, पुराने मन्दिर का जीर्णोद्धार करावे। मन्दिर में आवश्यक उपकरण देवे, चतुर्विध संघ को आहारदानादि देवे, उनको आवश्यक उपकरण देवे, दस दम्पति जोड़ा को भोजन कराकर वस्त्रादि देवे, दस वायना बांधकर देवशास्त्र गुरु के सामने एकेक रखे, और नमस्कार करे, गृहस्थाचार्य व दम्पतियों को एकेक देवे।

कथा

धातकी खण्ड के मेरु पर्वत के दक्षिण भाग में सीतोदा नदी के तीर पर विशाल नगर है, उस नगर में प्रीयंकर नाम का धार्मिक राजा अपनी रानी प्रियंकरी के साथ रहता था, उसके मृगांकलेखा नामक धर्मात्मा कन्या थी। राजा का मतिशेखर नाम का मन्त्रि था। उस मन्त्रि की पत्नी का नाम शशिप्रभा था। वह शीलगुण से सम्पन्न थी, उनकी कमलसेना नाम की सुन्दर कन्या थी, उसी नगर में गुणशेखर नाम का राजश्रेष्ठि अपनी शीलप्रभा सेठानी के साथ रहता था, उसके भी मदन रेखा नामक कन्या थी, और भी उस नगर में लक्षभट्ट नामक ब्राह्मण अपनी पत्नी चन्द्रवदना के साथ रहता था, उसके भी रोहिणी नाम की कन्या थी। इन चारों ही कन्याओं ने गुरु के पास एक साथ अध्ययन किया था।

एक दिन बसन्त ऋतु के अन्दर चारों ही कन्या नगर के उद्यान में घूमने

को गई । उस उद्यान में एक जगह एक शिला पर बसन्तसेन नाम के अवधिज्ञानी मुनिराज ध्यान कर रहे थे, ये चारों कन्याएं वहां पहुंचीं और तीन प्रदक्षिणा लगाकर नमस्कार कर समीप में बैठ गई, कुछ समय बाद मुनिराज ने ध्यान विसर्जन किया, तब उन चारों में से एक कन्या मुनिराज को हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगी कि हे देवें ! हमारे संसार का विच्छेद हो ऐसे किसी एक व्रत की विधि हमें बताओ ।

तब मुनिराज ने दशलक्षणिक व्रत की विधि कह सुनाई । उन चारों ही कन्याओं ने इस व्रत को विधिपूर्वक मुनिराज से ग्रहण किया और नगर को वापस लौट आई । भक्ति से उस व्रत का पालन किया और अन्त में समाधिपूर्वक मरण कर स्त्री पर्याय का छेद करती हुई स्वर्ग में देव हुई । वहां की आयुपर्यन्त स्वर्ग सुख भोग कर अन्त में मरण को प्राप्त हुए।

भरत क्षेत्र के मालव देश में उज्जयनी नगरी का स्थूलभद्र राजा अपनी विचक्षणा, लक्ष्मीमति, सुशीला, कमलाक्षी इन चार रानियों सहित राज्य करता था । इन चारों के क्रमशः चार पुत्र पैदा हुए, ये चारों ही पुत्र गुणवान व धर्मनिष्ठ थे । इन चारों ही राजकुमारों के यौवन अवस्था में आने पर चारों की शादी कर दी गई ।

एक दिन स्थूलभद्र राजा को मेघ-विघटन से वैराग्य हो गया, अतः अपने बड़े पुत्र को राज्य देकर दीक्षा ले ली और तपश्चरण करने लगा और सर्व कर्मों का क्षय कर मोक्ष को गया। वे चारों पुत्र राज्य करने लगे, राज्य-सुख भोगने लगे । उनको भी एक दिन वैराग्य हो गया और निर्ग्रंथ मुनिराज के पास जाकर दीक्षा लेली । वे भी कर्म काटकर मोक्ष को गये ।

अथ दशप्राणनिवारण व्रतकथा

व्रत विधि :—पहले के समान करे । अन्तर सिर्फ इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ल १ के दिन एकाशन करे । २ के दिन उपवास पूजा आराधना व मन्त्र जाप आदि करे ।

अथ दारिद्र्यविनाशक व्रत कथा

व्रत विधि :—आश्विन शुक्ल पक्ष में प्रथम गुरुवार को एकाशन करे और शुक्रवार को उपवास करे । दूसरी विधि पहले के समान करे ।

'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा ।"

इस मन्त्र का जाप १०८ बार करे । और णमोकार मन्त्र का जाप १८० बार करे । धर्मध्यानपूर्वक अपना समय बितावे । दूसरे दिन सत्पात्र को दान देकर पारणा करे ।

इस प्रकार यह व्रत ५ शुक्रवार करके अन्त में कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे । उस समय पंचपरमेष्ठी विधान करके महाभिषेक करे । आहारदान वस्त्रदान आदि करे ।

कथा

देवील नामक नगरी थी वहां का राजा देवसेन अपनी स्त्री देवकी के साथ राज्य करता था । उसका देवकुमार पुत्र व स्त्री देवमती थी । मन्त्री देवाकर, मन्त्री की देवसुन्दरी स्त्री थी । उसके देवकीर्ति नामक पुरोहित व देवकांती नामक स्त्री थी । देवदत्त नामक राजश्रेष्ठी और उसकी स्त्री देवदत्ता थी । राजा इनके साथ सुखपूर्वक रहता था ।

एक दिन उद्यान में देवसागर निर्मल महामुनि अपने संघ सहित आये । राजा उनके दर्शन करने को गये । धर्मोपदेश सुनकर राजा ने कोई एक व्रत विधि बताओ इस प्रकार कहा । तब महाराज ने यह व्रत और उसकी विधि बतायी । राजा वन्दना कर घर आये । उन्होंने विधिपूर्वक यह व्रत किया जिससे वे इस व्रत के प्रभाव से स्वर्ग गये और अनुक्रम से मोक्ष सुख को प्राप्त किया ।

द्वारावलोकन व्रत

द्वारावलोकनव्रते तु दिनयाममर्यादा कार्या, द्वौ यामौयावत् द्वारमवलोकयामि तावत् मुनिरागतश्चेत् तस्मै आहारं दत्वा पश्चादाहारं ग्रहीष्यामि । इति द्वारावलोकनव्रतम् ।

अर्थ :—द्वारावलोकन व्रत में दिन में दो प्रहरों का नियम करके द्वार पर खड़े होकर मुनिराज के आने की प्रतीक्षा करना, यदि इस बीच में मुनिराज आ जावे

तो उन्हें आहार कराने के पश्चात् आहार ग्रहण करना होता है। इस प्रकार द्वारावलोकन व्रत पूर्ण हुआ।

विवेचन :—द्वारावलोकन व्रत में दो प्रहर का नियम कर द्वार पर खड़े हो जाना और मुनि या ऐलक, क्षुल्लक के आने की प्रतीक्षा करना। यदि दो प्रहरों के मध्य में मुनिराज आ जायें तो उन्हें आहार करा देने के पश्चात् आहार ग्रहण करना। मुनिराजों के न मिलने पर ऐलक या क्षुल्लक को आहार करा देना होता है।

इस व्रत में दो प्रहर का ही नियम रहता है, यदि दो प्रहर तक कोई पात्र नहीं मिले तो स्वयं भोजन कर लेना चाहिए। दो प्रहर तक निरन्तर पात्र की प्रतीक्षा करनी पड़ती है, विधिपूर्वक नवधाभक्ति से युक्त होकर पात्र को भोजन कराया जाता है। पात्र के न मिलने पर किसी साधर्मी भाई को भी भोजन कराने के उपरान्त इस व्रत वाले को आहार ग्रहण करना चाहिए। यदि कोई भी उपयुक्त अतिथि उस दिन न मिले तो दीन बुभुक्षितों को ही आहार कराना उचित होता है। यद्यपि दो प्रहर के अनन्तर व्रत की मर्यादा पूरी हो जाती है, फिर भी किसी भी प्रकार के पात्र को आहार कराने के उपरान्त ही भोजन ग्रहण करना चाहिए।

धनकलश व्रत कथा

भाद्रपद शुक्ल १ के दिन स्नानादिक से शुद्ध होकर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजाभिषेक की सामग्री लेकर जिन मन्दिर जावे, प्रथम मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, फिर भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर आदिनाथ तीर्थंकर व यक्षयक्षिणी की मूर्ति स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे। मण्डप वेदी पर पांच वर्ण की रंगोली (चूर्ण) से अष्टदल कमल यन्त्र मांडे। मण्डप को खूब सजा देवे, अष्टद्रव्य से भगवान की पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की भी अर्चना करे, पंच पकवान बनाकर चढ़ावे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदिनाथ तीर्थंकराय गोमुखयक्ष चक्रेश्वरी देवि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, सहस्रनाम पढ़े, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में महार्घ्य हाथों में लेकर मन्दिर की

तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, पांच सौभाग्यवती स्त्रियों को हल्दी कुंकुम फलादिक देवे, उस दिन ब्रह्मचर्यपूर्वक उपवास करे। धर्मध्यान से समय बितावे।

इस व्रत को पांच वर्ष अथवा पांच महीने तक पालन कर अन्त में उद्यापन करे, उस समय आदिनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा स्थापन कर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, २५ नैवेद्य चढ़ावे। पांच मुनियों को आहार दान देकर उपकरण देवे, स्वयं पारणा करे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में चम्पापुरी नगरी है, वहां पर पहले पुरंधर नाम का राजा अपनी रानी मित्रावति के साथ सुख से राज्य करता था। उस राजा के राजश्रेष्ठि का नाम सुमित्र और उसकी सेठानी का नाम वसुमति था, वो लोग आनन्द से सुख भोग रहे थे।

एक समय उस नगरी के उद्यान में वीरसेन नामक आचार्य ३०० मुनियों के साथ आये, राजा को समाचार प्राप्त होते ही अपने परिवार सहित उद्यान में गया, वहां राजश्रेष्ठि भी गया, सब लोग हाथ जोड़ नमस्कार करके धर्मसभा में बैठ गये, कुछ समय उपदेश सुनकर, राजा ने विनती की हे गुरुदेव ! हम लोगों को कोई व्रत ऐसा बताओ कि जिससे अनन्त सुख मिले, तब मुनिराज ने कहा कि राजन आप लोग धनकलश व्रत करो, जिससे सुख की प्राप्ति होगी, ऐसा कहकर व्रत का विधान कह सुनाया। राजा ने आनन्द से उस व्रत को स्वीकार किया और सब नगर में वापस लौट आये। नगर में आकर व्रत को आनन्द से पालन करने लगे, अन्त में व्रत का उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से अन्त में समाधिमरण कर परम्परा से मोक्ष जायेंगे।

धनुधर्संक्रमण व्रत कथा

मार्गशीर्ष में आने वाले धनुसंक्रमण को यह व्रत करे, इस व्रत में पुष्पदन्त तीर्थंकर की आराधना करे, सब पूर्वोक्त विधि से अभिषेक पूजा करे, मन्त्र जाप्य पूर्वक आदि व्रत करे, कथा भी वही लेवे।

अथ धर्मप्रभावनांग व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान करे, अन्तर सिर्फ इतना है कि कार्तिक शु० ७ को एकाशन करे, ८ के दिन उपवास करे।

जाप :— ॐ ह्रीं अर्हं वात्यसल्यसम्यग्दर्शनांगाय नमः स्वाहा।

आठ दम्पति को खाना खिलाये। यहां सम्यग्दर्शन का पालन व्रजकुमार मुनि ने किया था।

अथ धर्मध्यान प्राप्ति व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृ० १३ के दिन एकाशन करे। १५ के दिन पूजा, आराधना व मन्त्र जाप आदि करे।

धर्मोदय व्रत कथा

पौष महिने के पहले शुक्रवार को शुद्ध होकर जिन मन्दिर जी जावे, प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नामस्कार करे, पार्श्वनाथ धरणेन्द्र पद्मावति की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से भगवान की पूजा करे, गुरु व शास्त्र की पूजा करे, नैवेद्य चढ़ावे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पार्श्वनाथ तीर्थंकराय धरणेन्द्र पद्मावति सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, यथाशक्ति उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे।

इस प्रकार आठ शुक्रवार पूजा करके नवें शुक्रवार को उद्यापन करे, उस समय पार्श्वनाथ विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को चारों प्रकार का दान देवे।

कथा

इस व्रत को धर्मराज युधिष्ठिर आदि पांच भाइयों ने किया था, इसके फलस्वरूप उसी भव से मोक्ष गये।

रानी चेलना व श्रेणिक की कथा पढ़े।

धर्मचक्र व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन की अष्टान्हिका में शुद्ध होकर मन्दिर में जाये, तीन प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, मूलनायक व नन्दीश्वर प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं समस्त जिन चैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, मंगल आरती पूर्वक एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, ब्रह्मचर्यपूर्वक यथाशक्ति उपवास करे, सत्पात्रों को दान देवे, इस प्रकार प्रतिदिन आठ दिन तक पूजा विधि करके व्रत करे, एक वर्ष में तीन बार अष्टान्हिका में करे, अन्त में उद्यापन करे, नन्दीश्वर विधान करे ।

कथा

धन्य कुमार सेठ ने इस व्रत को पालन किया था, उससे उसको स्वर्गादि सुख मिली थी । चेलना रानी की कथा पढ़े ।

अथ धन्यकुमार अथवा धन्यभति व्रत कथा

व्रत विधि :—किसी भी महिने की शुक्ल पक्ष की पंचमी को एकाशन करे, षष्ठी के दिन उपवास करे, सुबह उठकर शुद्ध कपड़े पहनकर अष्ट द्रव्य लेकर मन्दिर में जाये, वेदी पर पद्मप्रभु की प्रतिमा व कुसुमवर मनोवेगा यक्षयक्षी सहित स्थापित करे, पंचामृत अभिषेक करे । पाटे पर छः स्वस्तिक निकालकर उस पर पान व अष्ट द्रव्य रखे । पहले भगवान से छठे भगवान तक पूजा स्तोत्र आदि करे । श्रुत, गुरु, यक्षयक्षि व ब्रह्मदेव (क्षेत्रपाल) की पूजा अर्चना करे ।

जाप :—ॐ ह्रीं अर्हं श्रीं पद्मप्रभ जिनेन्द्राय कुसुमवर मनोवेगा यक्षयक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्पों से जाप करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे । श्री पद्मप्रभु चरित्र व कथा पढ़े । आरती करे । सत्पात्र को दान दे । दूसरे दिन पूजा व दान कर पारणा करे, तीन दिन ब्रह्मचर्य पाले ।

इस प्रकार ६ तिथि पूर्ण होने पर उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान दे । मूर्ति को या नवीन मन्दिर बनाकर पंचकल्याणक करे, नहीं तो जीर्णोद्धार करावे । २४ जिन मन्दिरों के दर्शन करे ।

कथा

यह व्रत धन्यकुमार आदि ने पालन किया था इसलिए उन्हें अभ्युदय सुख की प्राप्ति हुई और अनुक्रम से उन्हें मुक्ति मिली ।

धर्मचक्र व्रत

धर्मचक्र व्रत २२ दिनों में पूर्ण होता है । इसमें १६ उपवास और ६ पारणाएं सम्पन्न होती है । प्रथम उपवास, पारणा; पश्चात् दो उपवास पारणा; अनन्तर तीन उपवास पारणा, इस प्रकार उपवास पारणा की जाती हैं । धर्मचक्र व्रत के दिनों में "ॐ ह्रीं अरिहन्तधर्मचक्राय नमः" मन्त्र का जाप गुग्गुल और धूप देकर किया जाता है ।

अंत में उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि विधान करे । चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

राजा श्रेणिक रानी चेलना की कथा पढ़े ।

नमस्कारपैंतीसी व्रत की विधि

नमस्कारपञ्चत्रिंशत्कायां सप्तम्याः सप्त पञ्चम्याः पञ्च चतुर्दश्याश्चतुर्दश नवम्याः नवोपवासाः कथिताः । एतन्नमोकारपञ्चत्रिंशत्कमेतदक्षरसमुदायं विभज्यैकैकाक्षरस्योपवासः करणीयः । अस्मिन् व्रते न मासतिथ्यादिको नियमः, केवलां तिथि प्रपद्य भवतीति तिथिसावधिकानि व्रतानि ।

अर्थ :—नमस्कारपञ्चत्रिंशत्—नमस्कारपैंतीसी व्रत में सप्तमी के सात उपवास, पञ्चमी के पांच उपवास, चतुर्दशी के चौदह उपवास और नवमी के नौ उपवास बताये गये हैं । णमोकार मन्त्र में पैंतीस अक्षर होते हैं, एक-एक अक्षर का एक-एक उपवास किया जाता है । इस व्रत के आरम्भ करने में किसी मास की किसी

विशेष तिथि का नियम नहीं है । केवल तिथि के अनुसार ही व्रत किया जाता है । इस प्रकार तिथि सावधिक व्रतों का कथन समाप्त हुआ ।

विवेचनः—णमोकार मन्त्र की विशेष आराधना के लिए नमस्कार पैंतीसी व्रत किया जाता है । इस व्रत में ३५ उपवास करने का विधान है । सप्तमी तिथि के सात उपवास, पंचमी तिथि के पाँच उपवास, चतुर्दशी तिथि के चौदह उपवास एवं नवमी तिथि के नौ उपवास किये जाते हैं । इस व्रत में उपवास के दिन पञ्च परमेष्ठी का पूजन और अभिषेक करना होता है । तथा "**ओं ह्रां णमोअरिहन्ताणं, ओं ह्रिं णमो सिद्धाणं, ओं ह्रूं णमो आइरियाणं, ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं, ओं ह्रः णमोलोए सव्व साहूणं**"

इस मन्त्र का जाप किया जाता है । उपवास के पहले और पिछले दिन एकाशन करना होता है ।

णमोकारपैंतीसी व्रत

अपराजित है मंत्र णमोकार, अक्षर तसु पैंतीस विचार ।
कर उपवास वरण परिमाण, सातें सात करो बुद्धिवान ।।
पुनि चौदा चौदशि गण सांच, पांचैं तिथि के प्रोषध पांच ।
नवमी नव करिये भवि सात, सब प्रोषध गणात ।।
पैंतीसी णवकार जु येह, जाप्य मंत्र नवकार जयेह ।
मन वच तन नरनारी करे, सुरनर सुख लह शिवतिय वरे ।।

—क्रियाकोष

भावार्थ :—यह व्रत डेढ़ वर्ष अर्थात् एक वर्ष और छह मास में समाप्त होता है, और इस डेढ़ वर्ष की अवधि के भीतर सिर्फ पैंतीस दिन ही व्रत के होते हैं । आषाढ़ शुक्ल सप्तमी से यह व्रत शुरू होता है, इसकी विधि निम्न प्रकार है—

(१) प्रथम आषाढ़ शुक्ल सप्तमी का उपवास करे । फिर श्रावण की सप्तमी २, भादों की सप्तमी २, और आश्विन की सप्तमी २, इस प्रकार सात उपवास करे । पश्चात कार्तिक कृष्ण पंचमी से पौष कृष्ण पंचमी तक अर्थात पांच

पंचमियों के पांच उपवास करे । फिर पौष कृष्ण चतुर्दशी से चैत्र कृष्ण चतुर्दशी तक सात चतुर्दशियों के सात उपवास करे । फिर चैत्र शुक्ला चतुर्दशी से आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी तक सात चतुर्दशियों के सात उपवास करे । फिर श्रावण कृष्ण नवमी से अगहन कृष्ण नवमी तक नव नवमियों के नव उपवास करे । इस प्रकार ३५ उपवास द्वारा व्रत पूजा करे । प्रतिदिन अभिषेक पूर्वक नवकार मंत्र पूजन करे, पश्चात् उद्यापन करे ।

इस णमोकार मंत्र पैंतीसी व्रत के प्रभाव से गोपाल नाम का ग्वाला चम्पा नगरी में वृषभदत्त सेठ के यहां सुदर्शन नाम का पुत्र हुआ था और निमित्त पाकर वैराग्य धारण कर उसने कर्मों का नाश कर मोक्ष प्राप्त किया ।

नित्यानंद व्रत कथा विधि

तीनों अष्टान्हिका पर्व में किसी भी अष्टान्हिका को अष्टमी से प्रारम्भ करे, व्रतिक स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर अभिषेक पूजा की सामग्री लेकर मंदिर में जावे, मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर चतुर्विंशति तीर्थंकर की प्रतिमा स्थापन कर अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, जिनवाणी व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणियों का अर्घ करे, क्षेत्रपाल को अर्घ चढ़ावे, एक पाटे पर त्रिकालवर्ति तीर्थंकरों के नामोच्चारण करते हुये, बहत्तर स्वस्तिक निकाले गंध से अथवा केशर से, उन साथियों के ऊपर अष्टद्रव्य रखे, बाद में श्रुत व गुरु की पूजा कर यक्षयक्षणी की पूजा करे, क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं ऋषभादि वर्द्धमानांत्य चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, जिनसहस्र नाम स्तोत्र पढ़े, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, एक महाअर्घ्य करके मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगल आरती उतारे, उसी दिन शक्ति प्रमाण उपवास या एकभुक्ति वा कांजीआहार या एकाशन करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, इस प्रकार प्रत्येक अष्टमी को पूजाविधि करे, प्रतिदिन जिनेन्द्र प्रभु का क्षीराभिषेक करके बहत्तर अक्षतपुञ्ज रखकर भगवान को नमस्कार करे, इस क्रम से एक वर्ष तक पूजाविधि

करे, यह उत्तम विधि है, आठ महिने तक पूजा करना मध्यम विधि है, चार महिने तक पूजाविधि करना जघन्य विधि है। इन तीनों में से किसी भी विधि का आचरण करके आगे आने वाली अष्टान्हिका में त्रिशच्चतुर्विंशति (तीस चौबीसी) विधान करके, इस व्रत का उद्यापन करे, उस समय चारों प्रकार का दान करे, इस प्रकार व्रत की विधि है।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में अवंति देश है उस देश में हस्तिनापुर नगर है, उस नगरी में जयंधर राजा जयावति रानी के साथ में आनन्द से राज्य करता था, एक बार नगरी के उद्यान में ५०० मुनियों का संघ आकर उतरा, वनपाल के द्वारा राजा को खबर मिलने पर आनन्द से मुनिदर्शन को परिजन-पुरजन सहित चला, वहां जाकर दर्शन किये, दर्शनों के बाद धर्मश्रवण के लिये सभा में बैठ गया, धर्मोपदेश के अनन्तर रानी कहने लगी कि हे गुरो स्वामिन् ! मुझे अनन्त सुख का कारण ऐसा कोई एक व्रत प्रदान करिये, तब मुनिराज ने रानी जयावति को नित्यानंद व्रत का स्वरूप कहा और विधि कही, रानी ने उस व्रत को सहर्ष स्वीकार किया, फिर कहने लगी कि इस व्रत को किसने पालन किया और उसको क्या फल मिला, उसकी कथा कहता हूं रानी तुम सुनो।

इस भरतक्षेत्र के अन्तर्गत मगधदेश है, उसमें एक राजगृही नगरी है, उस नगरी में एक सिंहरथ राजा अपनी कनकप्रभा रानी के साथ में सुख से राज्य करता था, राजगृही नगर में एक धनपाल सेठ अपनी नंदावति सेठानी के साथ रहता था, उस सेठ के कालक्रम से सुरदत्त, विमल व विकार, ऐसे तीन पुत्र उत्पन्न हुये, एक दिन सेठ को वैराग्य उत्पन्न होने के कारण वह जंगल में जाकर किसी मुनिराज से दीक्षा ग्रहण करके तपश्चर्या करने लगा। उसका जो ज्येष्ठ पुत्र सुरदत्त था, वो सप्तव्यसनी होकर बहुत पाप कमाने लगा, एक दिन मरकर नरक में उत्पन्न हुआ, वहां से निकलकर विजयार्द्ध के दक्षिण भाग में मेघकूट नगर के रुद्रदत्त नामक वैश्य के यहां दुर्मुख नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ, दुर्मुख के उत्पन्न होते ही उसके मां बाप मर गये, बड़े कष्ट से बड़ा हुआ, जैसा नाम वैसा उस का रूप भी था, गांव के लोग

उस दुर्मुख से घृणा करते थे इसलिये वह बहुत दुःखी रहा करता था।

एक दिन अवधिज्ञानधारी विमलवाहन नामक महामुनि आहार के निमित्त उस नगर में आये, मुनिराज को देखकर उस दुर्मुख के मन में ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि जब ये मुनिश्वर आहार करके वापस जंगल को जायेंगे, तब मैं भी इनके पीछे जंगल को जाऊंगा मुनिराज का आहार हो जाने के बाद वे जंगल को चले तो दुर्मुख भी मुनिश्वर के पीछे चला गया, मुनिराज एक स्फटिक शिला के ऊपर ध्यानस्थ बैठ गये, वो दुर्मुख भी उनके निकट जाकर बैठ गया, मुनिराज का ध्यान समाप्त हो जाने के बाद निकट बैठे हुये व्यक्ति को देखा, अवधिज्ञान से उसके भवान्तर सब जान लिये, मुनिराज उस दुर्मुख को कहने लगे कि हे दुखिया ! तुम पहले नरक के दुःख भोगकर आये हो, अब तुम मनुष्य भव में आये हो और तुम्हारी आयु मात्र तीन दिन की रह गई है।

यह सुनकर वह दुर्मुख मुनिराज को भक्ति से नमस्कार करने लगा और कहने लगा कि स्वामिन ! मेरे दुःख का निवारण हो ऐसा कोई उपाय बताइये। तब मुनिराज कहने लगे कि हे भव्य तुम शीघ्र जिनदीक्षा धारण करो, ऐसा सुनकर उसने दिगम्बर दीक्षा धारण कर ली और तीन दिवस का संन्यास धारण कर मरा और ब्रह्मकल्प में देव होकर उत्पन्न हुआ। देव पर्याय के सागरों तक सुख भोगकर आयु समाप्त करके विजयार्धपर्वत के दक्षिण श्रेणि में रत्नपुर नाम का गांव है वहां का राजा वज्रबाहु अपनी रानी विजयावती सहित सुख से राज्य करता था, उसी राजा का वो अनन्तवीर्य नाम का पुत्र हुआ। क्रमक्रम से यौवन सम्पन्न हुआ एक समय वो मेरु पर्वत पर अकृत्रिम चैत्यालय की वंदना करने को गया, उस चैत्यालय में उसकी अभयघोस मुनिराज से भेंट हुई, मुनिराज को नमस्कार करके उसने कहा कि हे स्वामिन आप मुझे कोई ऐसा व्रत प्रदान करें, कि जो मुझे अनन्त सुख का कारण बने। तब मुनिराज कहने लगे कि हे भव्य ! तुम को नित्यानन्द व्रत का पालन करना चाहिए। उस अनन्तवीर्य ने भक्ति से व्रत को ग्रहण किया और नमस्कार करके वापस नगर में आया। व्रत को यथाविधि पालन कर फिर उद्यापन किया। व्रत के प्रभाव से उसको अवधिज्ञान प्रकट हुआ, थोड़े दिन बाद जिनदीक्षा ग्रहण कर तपश्चर्या करने लगा और सर्वकर्मों का क्षय कर मोक्ष को गया।

इस प्रकार व्रत का सर्व कथन व व्रतविधि सुनकर सब को आनन्द हुआ। जयन्धर राजा विनयावति रानी के साथ मुनिराज से व्रत को ग्रहण कर प्रजा सहित नगर में वापस आ गये, कालानुसार उन्होंने व्रत को पालन करके व्रत का उद्यापन किया, आयु के अन्त में समाधिपूर्वक मरकर स्वर्ग को चले गये। वहां की आयु पूर्ण कर मनुष्य भव धारण किया, दीक्षा धारण कर मोक्ष चले गये।

नवनिधि व्रत

इस व्रत में पूजा अभिषेक मूलनायक प्रतिमा का करें।

नवनिधि व्रत में २१ उपवास किये जाते हैं। चौदह चतुर्दशियों के चौदह, नौ नवमियों के नौ, तीन तृतीयाओं के तीन एवं पांच पञ्चमियों के पांच उपवास किये जाते हैं। प्रत्येक उपवास के अनन्तर एकाशन करने का विधान है। इस व्रत में "ॐ ह्रीं अक्षयनिधिप्राप्तेभ्यो जिनेन्द्रेभ्यो नमः" मन्त्र का जाप किया जाता है।

कथा

बारह चक्रवर्तियों की कथा पढ़े।

नैशिक व्रत

नैशिकानि चतुराहारविवर्जनं स्त्रीसेवनविवर्जनं रात्रिभुक्ति विवर्जनञ्चेत्यादीनि, खाद्य स्वाद्य लेह्यपेयभेदानि चतुर्विधान्यशनानि त्याज्यानि, चैतत् निशाभुक्तिपरित्यागं व्रतं विधीयते। स्त्रीसेवनविवर्जनं च यावज्जीवनं यमः नियमश्चेति मासदिन संख्याभवः कर्त्तव्यः। रात्रिभक्तव्रते तु दिवसे स्त्रीसेवनविवर्जनं यमनियमविभागतया करणीयम् भोगोपभोगपरिमाणव्रते तु ताम्बूल पुष्पमालाशैय्याभूषणवस्त्रादीनां नियमःसदैव निशि कार्यः, एवं नैशिकनियम इत्यादीनि नैशिकानि व्रतानि।

अर्थ :—नैशिक व्रतों में रात में चारों प्रकार के आहारों का त्याग एवं स्त्री सेवन का त्याग करना होता है। आहार चार प्रकार के होते हैं—खाद्य, स्वाद्य, लेह्य, पेय। जिस भोजन को दांतों से काटकर खाते हैं वह खाद्य, स्वाद्य में सभी प्रकार के सुगन्धित पदार्थों के सूंघने का त्याग करना, लेह्य में सभी प्रकार के चाटे जाने वाले पदार्थों का त्याग और पेय में सभी प्रकार के पेय पदार्थों का त्याग किया जाता है।

रात्रि भोजन त्याग में चारों प्रकार के भोजन के अलावा दिवामैथुन का भी त्याग करना आवश्यक है। जीवन भर के लिए त्याग करना यम और कुछ मास या दिनों के लिए त्याग देना नियम है।

भोगोपभोगपरिमाण व्रत में पान, पुष्पमाला, शय्या, आभूषण और वस्त्र आदि का नियम करना पड़ता है कि अमुक रात्रि को अमुक संख्या में भोगोपभोग की वस्तुओं का सेवन करूंगा, शेष का त्याग है। इस प्रकार व्रत करना भी नैशिक व्रत कहे गये हैं।

इसमें रात्रि भोजन त्याग व्रत के समान ही पूजा, अभिषेक, मन्त्र जाप्य आदि करे, उद्यापन भी उसी के समान करे, कथा भी वही पढ़े।

अथ नीललेश्यानिवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि चैत्र कृष्णा १२ के दिन एकाशन करे। १३ के दिन उपवास करे। नेमिनाथ भगवान की पूजा, मन्त्र जाप, मांडला आदि करे।

नोट :—कृष्णलेश्या के समान सब विधि पूजा करे।

अथ निश्वासपर्याप्तिनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान करे, अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृ० ६ के दिन एकाशन करे, ७ के दिन उपवास पूजा आराधना व मन्त्र जाप आदि करे। पत्ते मांडे।

अथ नवबल देव व्रत कथा

व्रत विधि :—आश्विन महिने के पहले बुधवार को एकाशन करे। गुरुवार को सुबह शुद्ध कपड़े पहनकर मन्दिर जाये। वहां पर वेदी पर श्री पुष्पदंत्त तीर्थंकर की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापित करे। पंचामृत अभिषेक करे। आदिनाथ भगवान से पुष्पदंत्त भगवान तक पूजा करे। स्तोत्र, जयमाला आदि पढ़े। ब्रह्मदेव, श्रुत, गुरु की पूजा करे।

जाप :—**"ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुष्पदंत तीर्थंकराय ब्रह्मयक्ष महाकाली यक्षी सहिताय नमः।"**

इस मन्त्र का १०८ पुष्पों से जाप करे । सहस्र नाम का पाठ करे । पुष्पदंत चरित्र पढ़े । णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे । एक पात्र पर नव पान रखकर उस पर अष्टद्रव्य व नारियल रखकर महार्घ्य तैयार करे व जयमाला बोलकर चढ़ावे । आरती करे । उस दिन उपवास करके धर्मध्यान पूर्वक काल बितावे, दूसरे दिन सत्पात्र को आहार देकर आहार दान करे ।

इस प्रकार यह व्रत नव गुरुवार करे और कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे । उस समय पुष्पदंत भगवान का विधान करे । महाभिषेक करे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में विजयार्ध पर्वत के दक्षिण श्रेणी में रथनपुर नामक एक शहर है । वहां पहले ज्वलन श्रेष्ठी नामक एक राजा राज्य करता था । उसकी वायुवेगा नामक सुन्दर स्त्री थी । उसका पुत्र अर्ककीर्ति था व लड़की का नाम स्वयंप्रभा था । उसके राज्य में पुरोहित श्रुतकीर्ति व मंत्री श्रुतार्थ था । सुदत्त नामक राजश्रेष्ठी था ।

एक दिन उस नगर के मनोहर नामक उद्यान में जगन्नंदन व भीमनंदन नामक दो चारण ऋद्धि महाराज आये । राजा यह बात सुनकर दर्शन करने के लिये अपने नगरवासियों सहित गया । वहां जाकर उसने तीन प्रदक्षिणा, वन्दना, पूजादि किया । धर्मोपदेश सुनने के बाद अपने दोनों हाथ जोड़कर बोले हे भक्तरोगनाशक ! आप हमें उत्तम पुण्य का कारण ऐसा कोई व्रत बताओ । तब उन्होंने नवबल देव व्रत करने के लिये कहा । फिर सब लोग वन्दना कर घर आये । विधिपूर्वक व्रत का पालन किया जिससे अनुक्रम से मोक्ष सुख की प्राप्ति हुई ।

अथ नवप्रतिवासुदेव व्रत कथा

व्रत विधि :—पौष शु. ७ के दिन एकाशन करे, अष्टमी के दिन पहले के समान सब विधि करे, अष्टद्रव्य लेकर मंदिर जाये । नवदेवता प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे । भगवान के सामने एक पाटे पर नव स्वस्तिक निकाले । उस पर पान रखें, उस पर अष्टद्रव्य रखें । अर्घ्य दे और पूजा अर्चना करे ।

जाप :—ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुजिनधर्म जिनआगम जिनचैत्य चैत्यालये नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे । णमोकार मंत्र का भी १०८ बार जाप करे । सहस्र नाम का पाठ करे, स्वाध्याय करे । फिर एक पात्र में महार्घ्य तैयार करे । आरती करते हुये मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा दे । उस दिन उपवास करे या कुछ वस्तुओं का नियम लेकर एकाशन करे । चतुर्विध संघ को आहारदान आदि दे । १२ व्रतों का पालन करे ।

इस प्रकार पूर्णिमा तक आठ दिन व्रत करके पौ. कृ. १ के दिन इस व्रत का उद्यापन करे । उस दिन नवदेवता विधान करके महाभिषेक करे । चतुर्विध संघ को आहार आदि दे ।

कथा

विजयार्ध पर्वत के दक्षिण श्रेणी पर धान्यमलाट नामक एक विस्तीर्ण देश है । वहां शोभावती नामक नगरी है । वहां पर प्रजापाल नामक राजा राज्य करता था । उसकी श्रीदेवी नामक सौन्दर्यवति रानी थी ।

एक दिन उस नगर के उद्यान में श्रीधर आचार्य अपने संघ सहित पधारे । राजा उनके दर्शन के लिये गये वन्दना कर राजा ने धर्मोपदेश सुना और महाराज जी से दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना की हे मुनिश्वर ! हमें कोई एक व्रत कहो । तब महाराज जी ने यह व्रत करने को कहा और सब विधि बतायी । राजा दर्शन कर नगर में आये और उचित समय में राजा ने यह व्रत विधिपूर्वक किया । इसके परिणामस्वरूप राजा अनुक्रम से मोक्ष गये ।

अथ निशःशल्याष्टमी व्रत कथा

व्रत विधि :—भाद्रपद कृष्णा ८ के दिन शुद्ध कपड़े पहनकर मन्दिर में जाये । वहां चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा विराजमान करके अभिषेक करे । अष्ट द्रव्य से उनकी पूजा अर्चना कर जयमाला पढ़े ।

जाप :—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वृषभादिचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे । णमोकार मन्त्र का जाप करे। यह कथा पढ़े फिर जयमाला कर महार्घ्य दे, आरती करे, उपवास करे ।

इस प्रकार १६ वर्ष पूर्ण होने पर उद्यापन करे । उस समय चतुर्विंशति तीर्थंकराराधना करके महाभिषेक करे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र है उसमें सोरठ देश (सौराष्ट्र) है उसमें द्वारका नामक एक नगर है । वहां कृष्ण नामक नारायण राज्य करता था । उसकी पट्टरानी सत्यभामा थी । पर सत्यभामा का अपमान कराने के लिये नारद ने रुकमणी का विवाह कृष्ण से करवा दिया । एक बार वह नेमिनाथ तीर्थंकर के समवशरण में सपरिवार गया । भगवान की प्रदक्षिणा, वन्दना, पूजा-स्तुति करने के बाद समवशरण में मनुष्य के कोठे में बैठ गये । धर्मोपदेश सुनने के बाद कृष्ण ने रुकमणी का भवान्तर पूछा । तब भगवान ने कहा कि मगध देश में राजगृह नामक नगर है । वहां पहले लक्ष्मीमति ब्राह्मणी रहती थी । एक दिन मुनि चर्या के निमित्त नगर में आये । वे अत्यन्त क्षीण शरीरी थे । उनको देखकर लक्ष्मीमति ने बहुत निंदा की और दुर्वचन बोलकर उनके शरीर पर थूक दिया । इस दुष्कृति से उसकी तिर्यंचायु का बंध हुआ और कुष्ठ रोग हो गया । आयुष्य पूर्ण होने पर मरकर भैंस हुई । वहां से मर कर डुकरी हुई फिर कुत्ती हुई, फिर धीवरी हुई, वहां मछलियां मारकर उसे खाने लगी ।

एक दिन एक वृक्ष के नीचे एक मुनिमहाराज बैठे थे । उस समय वह कुरूप दुष्ट पापी धीवरणी जाल लेकर वहां आयी । जाल रखकर वह वहां बैठी तब महाराज के मन में दया आयी वह उससे बोले हे कन्या ! तू पूर्व के पाप से ऐसे दुःख कष्टों को भोग रही है और अब भी ऐसे ही पाप कर रही है जिससे अब भी दुर्गति में जायगी । ऐसा कह कर उसके पूर्व भव कहे । यह सुन उसे मूर्च्छा आ गयी । फिर सावधान होकर वह बोली इस पाप से छुटने के लिये कोई उपाय हो

तो कहो । तब महाराज जी ने कहा सम्यग्दर्शन के साथ १२ व्रतों का पालन करो । साथ ही उसे धर्मोपदेश दिया । उसने उन व्रतों को धारण किया । आयु के अन्त में समाधिपूर्वक मरण हुआ जिससे वह लक्ष्मीमति कन्या हुई । पूर्वकृत पापकर्म से सुन्दर होते हुये भी अशुभ कर्म करने से लोग उसकी निंदा करते थे ।

एक बार उनके उपवन में नंद नामक मुनिश्वर आये थे । यह बात सुन राजा व प्रजा सब दर्शन करने को गई । वंदन आदि करके उनके समीप बैठ धर्मोपदेश सुना । अंत में नन्दा श्रेष्ठी ने पूछा कि मेरी कन्या रूपवती होते हुए भी अशुभ लक्षण वाली क्यों है जिससे सब लोग उसकी निन्दा करते हैं । तब महाराज ने उसके पूर्व भव बताये । अब यदि वह सम्यक्त्वपूर्वक निःशल्याष्टमी व्रत का पालन करे तो पाप से मुक्त होगी और ऐसा कहकर उन्होंने उसे सब विधि बतायी । लक्ष्मीमति ने वह व्रत ग्रहण किया । समयानुकूल विधिवत उसका पालन किया । फिर उसने शीलश्री आर्यिका के पास दीक्षा ली । समाधिपूर्वक मरण हुआ, १६वें स्वर्ग में देवी हुई । वहां ५५ पल्य की आयु सुख से पूर्ण कर भीष्म राजा की रुकमणी नामक कन्या हुई । अब वह क्रम से स्त्रीलिंग छेद कर मोक्ष पद को प्राप्त करेगी ।

इस प्रकार रुकमणी ने अपना भवान्तर सुनकर संसार से वैराग्य होने से राजमति आर्यिका के पास दीक्षा ली । तपश्चर्या करके अंत समय समाधिपूर्वक मरण हुआ जिससे वह स्त्रीलिंग छेदकर देव हुआ । वहाँ की आयु पूर्ण कर मनुष्य होगी । इस प्रकार से यह अपने पाप कर्म को व्रत के द्वारा नष्ट करके मोक्ष सुख को प्राप्त करेगी, यही इस व्रत का माहात्म्य है ।

नवरात्रि व्रत कथा

आश्विन शुक्ला एकम को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, आदिनाथ भगवान और उनके यक्षयक्षिणी का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदिनाथ तीर्थंकराय गोमुखयक्ष चक्रेश्वरी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, आदिनाथ चरित्र पढ़कर यह कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य में नारियल रखकर चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, यथाशक्ति उपवास करे, सत्पात्रों को दान देवे, रात्रि में जागरण करे ।

इस प्रकार नौ दिवस पूजा करके दसवें दिन विसर्जन करावे, दस दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे, इस प्रकार इस व्रत को ९ वर्ष करे । अंत में उद्यापन करे, उस समय आदिनाथ तीर्थंकर प्रतिमा, यक्षयक्षि सहित नवीन लाकर, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करावे, चतुर्विध संघ को चतुर्विध दान देवे, शास्त्र छपवाये, मन्दिर बनवाये, जीवों को अभयदान देवे ।

कथा

आदिनाथ तीर्थंकर के पुत्र श्री भरत चक्रवर्ति ने दिग्विजय के लिए निकलने के पहले नौ दिन बहुत उत्सव पूर्वक पूजा किया था, दान दिया था, आश्विन शुक्ला १०मी को विजय के लिये निकला था और पूर्ण षटखंड जीतकर वापस आकर आश्विन शुक्ला एकम से दशमी पर्यन्त रात दिन आदिनाथ व उनके यक्षयक्षिणी की आराधना की थी, इसीलिये इसका नाम नवरात्रि पड़ गया । दशमी के दिन समारंभ पूर्ण किया सो विजयदशमी कहलाई, जैनों को उपरोक्त विधि से ही नवरात्रि उत्सव व्रतादिक करना चाहिये, मिथ्या रूप से नहीं । सुख की प्राप्ति होगी । आदिनाथ चरित्र पढ़े ।

अथ नपुंसकवेद निवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान करे । अन्तर सिर्फ इतना है कि चैत्रकृष्णा २ के दिन एकभुक्ति (एकाशन) करे ३ को उपवास करे । विमलनाथ तीर्थंकर की पूजा, जाप, मन्त्र, पाने मांडना वगैरह करना चाहिये ।

अथ निर्णय व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सर्व विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृ. ३ के दिन एकाशन करे, ४ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान

करे, णमोकार मंत्र का जाप पांच बार करे, पांच दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे ।

कथा

पहले देवीजपुर नाम की नगरी में देवध्वज नाम का राजा देविली महारानी के साथ रहता था । उसका पुत्र देवकुमार उसकी स्त्री देवमालिनी, प्रधान नीतिसागर उसकी स्त्री चारुकीर्ति, पुरोहित चारुमति उसकी स्त्री राजश्रेष्ठी उसकी पत्नी प्रियमित्रा पूरा परिवार सुख से रहता था । एक दिन उन्होंने देवध्वज राजा सहित सुभद्राचार्य के पास यह व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया और अनुक्रम से मोक्ष गए ।

अथ निग्रंथ महाव्रत व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ कृ. ८ के दिन एकाशन करे, ९ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे ५ दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे ।

कथा

पहले कमलापुर नगरी के कमलसेन राजा कमलसुन्दरी अपनी महारानी के साथ रहते थे । उसका पुत्र कमलाकर व कमलावती, पुरोहित सारा परिवार सुख से रहता था । एक दिन उन्होंने कमलसागर मुनि से व्रत लिया, उसका यथाविधि पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गए ।

अथ निश्चयनय व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृ. सप्तमी के दिन एकाशन करे, ८ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे णमोकार मन्त्र का जाप १०८ बार करे व दम्पत्ति को भोजन करावे वस्त्र आदि दान करे ।

कथा

श्रेणिक महाराजा व चेलना की कहानी पढ़नी चाहिये ।

नामकर्म निवारण व्रत कथा

पहले कर्म कथानुसार इस व्रत की विधि भी उसी प्रकार करे आषाढ़ शुक्ला पंचमी को एकाशन षष्ठि को उपवास करे, पद्मप्रभ तीर्थंकर आराधना करे मंत्र जाप्य भी उसी प्रकार करे, कथा भी वही पढ़े ।

अथ नीतिसागर व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन के महिने के किसी भी अष्टान्हिका पर्व की अष्टमी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, संभवनाथ भगवान नंदीश्वर प्रतिमा स्थापन कर, पंचामृताभिषेक करे, एक पाटे पर तीन स्वस्तिक बनाकर, प्रथम पर ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय नमः ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नमः ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय नमः स्थापन कर उसके ऊपर पान, अक्षत, फूल, फल रखकर वृषभ, अजित, संभव, इन तीन तीर्थंकरों की पूजा करे, नंदीश्वर की पूजा करे, श्रुत गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं संभवनाथाय त्रिभुवन यक्ष, प्रज्ञप्ति यक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, १०८ बार णमोकार मन्त्र का जाप करे, व्रत कथा पढ़े, एक अर्घ्य हाथ में लेकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे मंगल आरती उतारे, उस दिन तीन वस्तुओं से एकाशन करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, धर्म ध्यान से समय बितावे, इस प्रकार नौ अष्टमी तक पूजा व्रत करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय संभवनाथ व नंदीश्वर विधान करे, महाभिषेक करे, तीन मुनिश्वर को आहार दान देवे ।

कथा

इस व्रत को भानुदत्त सेठ ने किया था, उसके प्रभाव से चारुदत्त के समान तद्भव मोक्षगामी पुत्र की प्राप्ति हुई । विशेष चारुदत्त चरित्र पढ़े ।

नरकगति निवारण व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल त्रयोदशी को एकाशन करके चतुर्दशी को शुद्ध होकर मंदिर

में जावे प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, पञ्चपरमेष्ठी भगवान का पञ्चामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से प्रत्येक परमेष्ठो की पूजा अलग २ करे, श्रुत व गणधर व यक्षयक्षि क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, दूसरे दिन पूजादानादिक करके स्वयं पारणा करे, तीन दिन ब्रह्मचर्य पाले, इस प्रकार शुक्ल व कृष्णपक्ष की १४ को पूजा व्रत विधि करे, अंत में कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठी विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को चारों प्रकार का दान देवे।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़ें।

अथ निर्विचिकित्सांग कथा

विधि :—पहले के समान करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि कार्तिक शुक्ला २ को एकाशन करे, ३ को उपवास करे।

जाप :—ॐ ह्रीं अर्हं निर्विचिकित्सा सम्यग्दर्शनांगाय नमः स्वाहा।

अथ निःशंकितांग व्रत कथा

व्रत विधि :—आश्विन कृ. ३० के दिन एकाशन करे और कार्तिक शु. १ के दिन उपवास और विधि पहले के समान करे। अनन्तर चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा यक्षयक्षी के साथ स्थापना करके पंचामृत से अभिषेक करे। अष्टद्रव्य से पूजा करे।

फिर "ॐ ह्रीं अर्हं निःशंकित सम्यग्दर्शनांगाय नमः स्वाहा।"

इस मंत्र का १०८ पुष्पों से जाप करे। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे। फिर व्रत कथा पढ़े। एक पात्र में ८ पत्ते मांडे। उस पर नारियल सहित अष्टद्रव्य को रखे। मंगल आरती करे। सत्पात्रों को आहार दान दे दूसरे दिन पारणा करे। ब्रह्मचर्य का पालन करे।

इस प्रकार महिने में दो बार यह व्रत करे । इस प्रकार आठ वर्ष पूर्ण होने पर फाल्गुन अष्टान्हिका में उद्यापन करावे । उस समय शिखरजी विधान करके महाभिषेक करे ।

यह सम्यग्दर्शन निःशंकितांग अंजन चोर द्वारा बड़ी श्रद्धा से करने पर उसको सद्गति मिली थी ।

अथ निःकाक्षितांग व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि कार्तिक शुक्ला १ के दिन एकाशन करे, २ को उपवास करे ।

मन्त्र :—ॐ ह्रीं अर्हं निःकांक्षित सम्यग्दर्शनांगाय नमः स्वाहा ।

यह सम्यग्दर्शन निःकाक्षितांग का व्रत अनंतमति ने किया था ।

अथ नागश्री व्रत कथा

इस जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र है उसमें कर्नाटक नामक देश है उसमें त्रयोदशपूर (तेरदल) नामक एक सुन्दर देश है वहां पर बंकभूपाल नामक महा पराक्रमी राजा राज्य करता था । उसकी पटरानी लक्ष्मीमति थी । राज्य में मंत्री, पुरोहित सेनापति आदि थे । सुख से राजा राज्य कर रहा था ।

एक दिन विद्यानंदी व माणिक्यनंदी ये दोनों मुनि चर्या निमित्त राजघराने की ओर आये । तब बंकभूपाल ने उनको पड़गाहन कर नवधाभक्ति पूर्वक आहार दिया । फिर मुनिश्वरों को बाहर उच्चै आसन पर बैठाया । धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा ने विनय से हमें कोई एक व्रत दे दीजिये ऐसा कहा । तब महाराज ने कहा तुम नागश्री व्रत करो । फिर व्रत की सब विधि कही ।

व्रत विधिः—१२ महिनों में कोई भी महिने के शुक्ल पक्ष में २ के दिन एकाशन करे और तृतीया के दिन उपवास करे । अन्य सब विधि पहले के समान करे ।

जापः—**ॐ ह्रीं अर्हं अरमल्लि मुनिसुव्रत तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।**

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे णमोकार मन्त्र का भी जाप करे।

इस प्रकार से महिने की एक तिथि को करे, इस प्रकार नव तिथि पूर्ण होने पर उद्यापन करे। उस समय रत्नत्रय विधान करके महाभिषेक करे। १०८ फूल व फल बढ़ाये। सत्पात्र को आहार दान दे। उन्हें शास्त्र या उपकरण भी दे। अभयदान, करुणादान आदि दे।

पहले यह व्रत मालव देश के उत्तर दिशा में चित्रकूट पर्वत पर रहने वाली मांगीण जिसको पति ने मारा था इसलिये १ वर्ष तक रात्रिभोजन का त्याग किया था और जिनपूजा का अनुमोदन किया था। उस पुण्य से वह सागरदत श्रेष्ठी की नागश्री नामक कन्या उत्पन्न हुई। अर्थात् धार्मिक व श्रीमंत्र के वहां उसका जन्म हुआ। फिर वह संसार सुख को भोगकर जिनपूजा दान व व्रत करने से स्वर्ग गयी।

यह दृष्टान्त और यह व्रत विधान मुनिश्वर के मुख से सुनकर सबको बहुत आनन्द हुआ। तब इस बंकभूपाल ने यह व्रत लिया। फिर मुनिश्वर जंगल में चले गये।

बाद में बंकभूपाल राजा ने यह व्रत विधिपूर्वक किया और उसका उद्यापन किया जिससे वह समाधिपूर्वक मरण कर स्वर्ग में देव हुआ। वहां वह चिर सुख भोगकर अनुक्रम से मोक्ष गये।

अथ नववासुदेव व्रत कथा

व्रत विधि :—किसी भी महिने के शुक्लपक्ष के गुरुवार से यह व्रत करे, उस दिन एकाशन करे और शुक्रवार के प्रातःकाल मन्दिर में जाये। वहां पर वेदी पर नवदेवता की स्थापना कर पंचामृत अभिषेक करे। उनके सामने नव स्वस्तिक निकालकर नव पान रखकर अष्टद्रव्य रखे और अष्टक पढ़कर पूजा करे। पंच पकवान से नैवेद्य बनाये, श्रुत व गुरु की अर्चना करे, यक्षयक्षी के साथ ब्रह्मदेव की अर्चना करे।

जाप :—"ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा।"

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्पों से जाप करे, णमोकार मन्त्र का भी १०८ बार जाप करे। श्री जिनसहस्रनाम का पाठ करे। इस कथा को पढ़ना चाहिये, फिर एक पात्र पर ६ पान रखकर उस पर महार्घ्य बनाना चाहिये और इससे मंगल आरती करे। उस दिन उपवास करके सत्पात्र को दान दे। दूसरे दिन पूजा व दान करके अपना पारणा करना चाहिये। तीन दिन ब्रह्मचर्य रखे।

इस प्रकार से महिने में एकबार या पक्ष में एकबार या आठ दिन में एक बार करके नव शुक्रवार करे, पूर्ण होने पर उद्यापन करे। उस समय नवदेवता पूजा कर महाभिषेक करे। चतुर्विध संघ को चार प्रकार का दान दे। नव दम्पत्ति को भोजन कराकर यथायोग्य उनका सत्कार करे।

कथा

पहले मेरुपर्वत के पश्चिम में पूर्व विदेह क्षेत्र में सीता नदी के किनारे मंगलावति नामक एक देश है। उसमें वत्स नामक एक देश है। वहां पर नागदत्त नामक एक राजा राज्य करता था। उसको वसुमति नामक पट्टराणी थी। नन्दमित्र नंदिषेण वरसेन व जयसेन ऐसे पांच पुत्र व यदुकान्ता व श्रीकान्ता ऐसी दो लड़कियां थीं। इसके अलावा मन्त्री पुरोहित राजश्रेष्ठी सेनापति आदि थे।

एक दिन पिहितास्रव भट्टारक नाम के एक अवधिज्ञानी महामुनि आहार करने के लिये राजमार्ग पर आये। राजा ने उन्हें पडगाहन किया और नवधाभक्ति पूर्वक आहार दिया। आहार होने के बाद महाराज जी को एक पाटे पर बैठाया थोड़ा धर्मोपदेश सुनने के बाद राज ने दोनों हाथ जोड़कर कहा महाराज! मुझे भी व्रत बताइये। महाराज पिहितास्रव ने कहा कि तुम नववासुदेव व्रत का पालन करो। यह सुन राजा को बहुत ही आनन्द हुआ। उन्होंने यह व्रत स्वीकार किया।

इसके बाद दोनों ने व्रत का यथाविधि पालन किया। जिससे वे सुख से राज्य करते थे। थोड़े दिन के बाद उन्हें वैराग्य हो गया जिससे उन्होंने अपने बड़े पुत्र को राज्य दे दिया और जंगल में जाकर मुनि-दीक्षा ली जिससे अंत समय में समाधिपूर्वक मरण हुआ और स्वर्ग गये।

उसी प्रकार वसुमति रानी ने भी एक आर्यिका के पास दीक्षा ली जिससे उनका भी समाधिपूर्वक मरण हुआ । बाद में उस व्रत का पालन करते हुये यथाक्रम से मोक्ष गये ।

नंद्यावर्त व्रत कथा

आश्विन महीने के अश्विन नक्षत्र के दिन शुद्ध होकर मंदिर जी में जावे, तीन प्रदक्षिणा देकर भगवान को नमस्कार करे, नगर के उद्यान में जाकर, वहां नवदेवता व वासुपूज्य तीर्थंकर की मूर्ति पालकी में रखकर पूजाभिषेक का सब सामान साथ में लेकर जावे, वहां भगवान का पंचामृताभिषेक करे । एक पाटे पर बारह स्वस्तिक निकाल उनके ऊपर अक्षतादि रखकर प्रत्येक तीर्थंकर की अलग-अलग पूजा करे, पंच पकवान का २७ नैवेद्य चढ़ावे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं अर्हं अनाहत पराक्रमाय सिद्धचक्रयंत्राधिपाय नमः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिन-चैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वासुपूज्य तीर्थंकराय षण्मुखयक्ष गांधारीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इन प्रत्येक मन्त्रों से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, वासुपूज्य तीर्थंकर का चरित्र पढ़े व्रत कथा पढ़े, सहस्रनाम पढ़े, एक सामूहिक जयमाला पूर्ण कर अर्घ्य चढ़ावे, आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, सत्पात्रों को दान देवे, उत्सवपूर्वक पुनः नगर में आवे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, सत्पात्रों को दूसरे दिन दान देकर स्वयं पारणा करे, उसी प्रकार प्रत्येक महीने में उसी नक्षत्र को इस व्रत का पालन करे, जैसे कार्तिक महिने में कृतिका, मार्गशीर्ष महिने में मृगशिरा, जैसा महिने का नाम वैसा ही नक्षत्र का नाम को व्रत करे, इस प्रकार बारह महिने तक बारह व्रत करके अंत में उद्यापन करे, उस समय वासुपूज्य तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

इस व्रत में भी रानी चेलना की कथा पढ़े। इस व्रत को नंदीषेण राजा ने पालन किया था।

नंदावति व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल अष्टमी को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, संभवनाथ भगवान की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, देव के आगे एक पाटे पर तीन पान लगाकर ऊपर अष्टद्रव्य रखे, फिर भगवान की पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की अर्चना करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं संभवनाथ तीर्थंकराय त्रिमुखयक्ष प्रज्ञप्तियक्षि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ जाप्य करे, पूर्ण अर्घ चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, शक्ति अनुसार उपवास या पारणा करे अथवा तीन वस्तुओं से एकाशन करे, ब्रह्मचर्यपूर्वक धर्मध्यान से रहे। दूसरे दिन पूजा, दान करके स्वयं पारणा करे।

इस प्रकार नौ अष्टमी नौ चतुर्दशि को व्रत करके पूजा करे, कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे, उस समय संभवनाथ विधान करे, महाभिषेक करे, तीन मुनि संघों को आहारादि देवे और चतुर्विध संघ को उपकरण दान देवे।

कथा

नंदीपुर नामक नगर में नंदीवर्धन राजा अपनी नंदावती रानी के साथ राज्य करता था। एक बार नंदिघोष नामक मुनिराज का उपदेश सुनकर राजा ने व रानी ने कहा कि गुरुदेव मुझे कोई संतान नहीं, सो होगी क नहीं? मुनिराज ने कहा कि तुम नंदावती व्रत करो, उसके प्रभाव से तुमको एक चरम-शरीरी पुत्र उत्पन्न होगा।

रानी ने प्रसन्नता से व्रत को ग्रहण किया, और व्रत को अच्छी तरह से पालन किया, उसके प्रभाव से उसको एक पुत्र-रत्न उत्पन्न हुआ, बड़ा होकर वे सब दीक्षा लेकर मोक्ष को गये ।

अथ नवनारद व्रत कथा

व्रत विधि :—आश्विन शुक्ला १ के दिन यथाशक्ति उपवास करके धर्म ध्यानपूर्वक दिन निकाले । विधि-पहले के समान मन्दिर में जाये । पंचामृत अभिषेक करे । महार्घ्य दे ।

जाप :—"ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्पों से जाप करे । जिन सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करे और यह कथा पढ़े । णमोकार मन्त्र का जाप करे । ब्रह्मचर्य का पालन करे । दूसरी सब विधि पहले के समान करे ।

इस क्रम से ९ दिन पूजा करके १०वें दिन जिनपूजा करके विसर्जन करे । ९ वर्ष या ९ महीने व्रत करके उद्यापन करे । उस समय नवदेवता विधान करे । महाभिषेक करे । चतुर्विध संघ को आहार दान दे । ९ दम्पतियों को भोजन करा करके उनकी ओटी भरे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप में पश्चिम विदेह क्षेत्र में सीतोदा नामक नदी है उस नदी के दायें प्रदेश में विभंगा नामक नदी है । उसके मध्य भाग में विजयार्द्ध नामक पर्वत है । उस पर्वत के उत्तर श्रेणी पर अलका नामक एक मनोहर नगरी है ।

वहां पहले अतिबल नामक एक महापराक्रमी रूपवान धर्मिष्ठ राजा रहता था । उसकी मनोहरी नामक स्त्री थी । उसको महाबल नामक एक लड़का था उसको गुणवती नामक एक सुन्दर स्त्री थी । उस राजा के स्वयंबुद्ध महामति शतमति संभिन्नमति ऐसे चार महामंत्री थे ।

एक दिन उस अतिबल राजा को किसी निमित्त से क्षणभंगुर संसार से

वैराग्य हो गया । इसलिये वह अपने पुत्र को राज्य देकर जंगल में चला गया । वहां एक निर्गंथमुनि से दीक्षा ली और तपस्या करने लगे जिससे उनके चारों घातिया कर्मों का क्षय हो गया और केवलज्ञान की प्राप्ति हुई और मोक्ष गये ।

इधर वह महाबल राजा अत्यंत सुख से राज्य करता था । उसका स्वयंबुद्ध मंत्री एक दिन श्रीमंधरस्वामी के समवशरण में गया । वहाँ तीर्थंकर के चरणों में पूजा वंदना स्तुति करके मनुष्यों के कोठ में बैठा । बहुत देर तक धर्म श्रवणकर उसके गणधर से दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना कर अपने भवान्तर पूछे । तब उन्होंने सब भवान्तर कहा और नवनारद का व्रत लेने को कहा । उस मन्त्री ने यह नारद व्रत लिया । फिर वह सबकी वन्दना कर अपने घर आया । फिर सब लोगों ने यह व्रत किया जिसके योग से आयु के अन्त में वे सब स्वर्ग गये और वहां का सुख भोगने लगे ।

अथ नवग्रह व्रत कथा

विधि :—आषाढ़ कार्तिक फाल्गुन इस मास के कोई भी एक शुक्ला ६ से १५ तक रोज प्रातःकाल इस व्रत के करने वालों को पवित्र जल से स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहने । सब पूजा का द्रव्य लेकर मन्दिर जाकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा करके ईर्यापथ शुद्धिपूर्वक भगवान को नमस्कार करें । नवग्रह जिनप्रतिमा हो तो वह अथवा चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा और नवदेवता प्रतिमा पीठ पर स्थापित करके पंचामृत अभिषेक करे । आरती उतारे । एक पट्टे पर ९ स्वस्तिक बनाकर उस पर पान अक्षत फल आदि रखकर मूल प्रतिमा तीर्थंकर नवदेवता आदि की अष्टद्रव्य से पूजा करे । तत्पश्चात् नवग्रह की पृथक् पृथक् पूजा करे ।

उस मन्त्र का क्रम इस प्रकार है :—

(१) ॐ ह्रीं आदित्यमहाग्रहसहित पद्मप्रभजिनदेवाय जलं निर्वपा० एवं गंधादिष्वपि योज्यम् ।

(२) ॐ ह्रीं सोममहाग्रह सहित चंद्रप्रभजिनदेवाय जलं ।

(३) ॐ ह्रीं कुजमहाग्रह सहित वासुपूज्य जिनदेवाय जलं ।

(४) ॐ ह्रीं बुधमहाग्रह सहित मल्लिनाथ जिनदेवाय जलं ।

(५) ॐ ह्रीं गुरुमहाग्रहसहित वर्धमान जिनदेवाय जलं ।
(६) ॐ ह्रीं शुक्रमहाग्रहसहित पुष्पदंत जिनदेवाय जलं ।
(७) ॐ ह्रीं शनिमहाग्रहसहित मुनिसुव्रत जिनदेवाय जलं ।
(८) ॐ ह्रीं राहूमहाग्रहसहित नेमि जिनदेवाय जलं ।
(९) ॐ ह्रीं केतुमहाग्रहसहित पार्श्व जिनदेवाय जलं ।

श्रुत व गणधर पूजा करके यक्ष यक्षी व ब्रह्मदेव इनकी अर्चा करे ।

फिर ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प चढ़ावे फिर ऊपर लिखे नवग्रह के मन्त्र से प्रत्येक के १०८ पुष्प क्रम से ९ दिन तक करे । अन्त में णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे । यह व्रत कथा पढ़ना । एक पात्र में ९ पान रखकर उस पर अष्टद्रव्य तथा एक नारियल रखकर महार्घ्य करे। मंगल आरती करना। सत्पात्रों को आहारदान दे । ९ दिन एकाशन करे। ब्रह्मचर्यपूर्वक धर्मध्यान से समय बितावे ।

इस प्रकार ९ दिन पूजा करके उसका उद्यापन करे । उस दिन (कृष्ण १ के दिन) नवग्रह विधान करके महाभिषेक कराये, शांतिहोम करना । चतुर्विध संघ को दान दे । ९ मुनियों को आहार देकर आवश्यक वस्तु देना । वैसे ही आर्यिकाओं को आहार दे । ९ दम्पतियों को भोजन करवाकर वस्त्रादिक देकर सम्मान करे ।

कथा

इस पुष्करार्ध द्वीप में पूर्वमंदर पर्वत के पूर्व भाग में विदेह क्षेत्र में मंगलावती नामक देश है। उसमें रत्नसंचय नामक एक मनोहर देश है । वहां पहले धरसेन नामक एक महापराक्रमी, सद्गुणी, सुशील, नीतिमान् ऐसा राजा सुख से राज्योपभोग करता था । उसकी मनोहरी नाम की पट्टरानी थी । उसके । विभीषेण व श्रीवर्म ऐसे दो पुत्र थे जो कि बलदेव व वासुदेव पदवी के धारक थे । उनकी श्रीमती व भूषणी नामक स्त्रियां थी । वैसे ही श्रीकांत मन्त्री व उनकी स्त्री श्रीमाला

श्रीकीर्ति पुरोहित व उनकी स्त्री श्रीसुन्दरी, विजय सेनापति व उनकी ग्रहिणी श्रीरमादेवी, श्रीदत्त श्रेष्ठी व उनकी स्त्री श्रीदत्ता ऐसे परिवारजन थे। उनके साथ एक बार राजा अपने उद्यान में सुधर्माचार्य नामक महामुनीश्वर के दर्शनों के लिए गये थे। उस समय यह व्रत उन्होंने लिया था। जिससे उनको सर्वसुखों का पूर्ण अनुभव हुआ और जिनदीक्षा धारण की। बाद में समाधिविधि से मरण करके स्वर्ग तथा परम्परा से मोक्ष गये। ऐसी इनकी विधि है।

अथ नित्यसुखदाष्टमी व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन की किसी भी अष्टान्हिका पर्व की अष्टमी के दिन व्रतिक स्नानकर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा सामग्री लेकर मन्दिर में जावे, ईर्यापथ शुद्धि कर भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर पंचपरमेष्ठि भगवान की मूर्ति स्थापन कर भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से भगवान की पूजा करे, श्रुत व गुरु की उपासना करे, पूजा करे, यक्षयक्षिरिण व क्षेत्रपाल की पूजा करे, खीर का नैवेद्य बनाकर चढ़ावे।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्रों का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महार्घ्य थाली में लेकर मन्दिर की ३ प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य भगवान को चढ़ा देवे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, उपवास करे, दूसरे दिन सत्पात्रों को आहारदान देकर पारणा करे, यह पहली पूजा हुई। इसी प्रकार दूसरी अष्टमी को पूजा कर, सेवयां की खीर बनाकर चढ़ावे, तीसरी अष्टमी को अहवा करके चढ़ावे, चौथी अष्टमी को चांवल की खीर करके चढ़ावे, पांचवीं अष्टमी को उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि भगवान का पंचामृत अभिषेक करके पूजा करना, पांच जगह २५ चरू (नैवेद्य) करके चढ़ावे, सत्पात्रों को दान देवे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में आर्यखंड है, आर्यखंड में चन्द्रवर्धन देश है उसमें चन्द्रपुर नामका नगर है, उस नगर में चन्द्रशेखर राजा अपनी रानी चन्द्रलेखा सहित सुख से राज्य करता था।

एक दिन नगरी के उद्यान में ३७०० मुनिसंघ सहित यशस्तिलक नाम के महामुनि आये, इस शुभवार्ता को राजा ने सुना, शीघ्र ही मुनिसंघ के दर्शन के लिए पुरजन परिजन को लेकर चला, वहां जाकर संघ को तीन प्रदक्षिणा पूर्वक नमस्कार किया, धर्मोपदेश सुनने के लिये सभा में बैठ गया, कुछ समय धर्मोपदेश सुनकर चंद्रलेखा रानी कहने लगी कि हे गुरुदेव ! संघ नायक आचार्य भगवान आज मुझे बहुत आनन्द हो रहा है, मेरे लायक मेरा संसार दुःख दूर हो उसके लिये कोई व्रत प्रदान करिये, तब मुनिराज कहने लगे कि हे पुत्री तुम नित्यसुखदा अष्टमी व्रत करो, जिससे शीघ्र संसार से पार हो जाओगी. ऐसा कहकर मुनिराज ने यथाविधि व्रत का स्वरूप वर्णन किया, और कहने लगे कि हे पुत्री सुनो इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में एक विशाल देश है, उस देश में नित्यवसंत नाम का नगर है, उस नगर में सत्यसागर राजा अपनी पट्टरानी चितोत्सवा सहित राज्य करता था, उस नगर में नित्य रोग नामका एक गृहस्थ रहता था, उसकी नित्यदुःखी नाम की स्त्री रहती थी, इस ग्रहस्थ को माणिक, वदन, विजय, मनोहर ऐसे चार पुत्र थे । ये सब दरिद्र अवस्था में समय निकाल रहे थे, एक बार भूतानंद नामक महामुनिश्वर आहार के लिये नगर में आये, तब नित्यरोग नामक ग्रहस्थ के यहां मुनिराज का आहार हुआ, मुनिराज का निरंतराय आहार होने पर मुनिराज को अपने घर के आंगन में बिठाकर नित्यदुःखी श्राविका कहने लगी कि हे मुनिराज आप मुझे मेरे घर की दरिद्रता नष्ट हो ऐसा कोई उपाय अवश्य बताइये । उसके नम्र वचन सुनकर मुनिराज कहने लगे कि हे पुत्री तुम नित्य सुखदा अष्टमी व्रत पालन करो, इस प्रकार कहकर सर्वविधि कह सुनाई, उसने सुनकर भक्ति से व्रत को ग्रहण किया, मुनिराज वहां से वापस वन को चले गये, उस ग्रहस्थ ने यथाविधि व्रत का पालन किया, अंत में व्रत का उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से सुखदा अवस्था प्राप्त हुई । यह सुनकर सबको बहुत आनन्द हुआ, यह व्रत कथा सुनकर चंद्रलेखा रानी ने इस व्रत को ग्रहण किया और सब लोग नगरी में वापस आ गये ।

एक दिन चंद्रलेखा रानी ने सामुद्रिक से सुना कि मेरी आयु मात्र सात दिन

की रह गई है, तब एक आर्यिका माताजी के पास दीक्षा ग्रहण कर अंत में समाधि-मरण कर स्वर्ग को गई, फिर परंपरा से मोक्ष को गई ।

नित्योत्सव व्रत कथा

चैत्रादि बारह महिनों में जिस दिन अमृतसिद्धियोग हो उस दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर अभिषेक पूजा को सामग्री (द्रव्य) लेकर जिनमन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, मन्दिर में घी का दीपक जलावे, शांतिनाथ तीर्थंकर की यक्षयक्षिणी सहित प्रतिमा की स्थापना कर गणधरपादुका व ज्वालामालिनी की भी स्थापना कर पंचामृताभिषेक करे, जयमाला व स्तोत्र सहित भगवान की पूजा करे, अष्टद्रव्य से श्रुत की पूजा, गुरु की पूजा, यक्षयक्षिणी की पूजा करे, क्षेत्रपाल की भी पूजा करे ।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशांतिनाथाय यक्षयक्षि सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्रों का जाप्य करे, सहस्रनामस्तोत्र पढ़े, शांतिनाथ चरित्र पढ़े, व्रत कथा पढ़े ।

एक थाली में पांच पान रखकर ऊपर अर्घ्य रखे, नारियल रखे, उस थाली को हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य भगवान को चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, अथवा कोई भी पांच वस्तु का त्याग कर एकाशन करे, सत्पात्रों को दान देवे, ब्रह्मचर्य पाले, इस प्रकार अमृतसिद्धियोग के दिन इस व्रत को करे, इस प्रकार पांच बार व्रत को करे, अंत में उद्यापन करे उस समय श्रीशांतिनाथ भगवान की नवीन मूर्ति यक्षयक्षिणी सहित मूर्ति की पंच-कल्याण प्रतिष्ठा करे, अथवा शांतिनाथ विधान कर महाभिषेक करे, पांच महामुनि-श्वरों को आहारादि दान देवे, आर्यिका माताजी को आहारदानादिक व वस्त्रदान देवे, पांच सौभाग्यवती स्त्रियों को भोजन वस्त्रदानादि देवे, दो गरीबों को अभय-दान देवे, इस प्रकार व्रत विधि पूर्ण करे ।

कथा में राजा श्रेणिक व रानी चेलना का चरित्र पढ़े ।

अथ नित्यसौभाग्य (सप्तज्योति कुंकुं) व्रत कथा

विधि :–आषाढ़ शुक्ल अष्टमी के दिन श्रावक स्नानकर शुद्ध वस्त्र पहनकर अभिषेक पूजा का सामान हाथ में लेकर जिनमन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे, श्रीपीठ पर चौबीस तीर्थंकर प्रभु की मूर्ति यक्षयक्षि सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, पूजा करे, शास्त्र व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, भगवान के आगे एक पाटे पर सात पान लगाकर ऊपर पृथक्-पृथक् अर्घ्य रखे, महादेवि पद्मावति की मूर्ति को हल्दी और कुंकुं लगावे।

ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, ॐ ह्रीं अर्हद्भ्यो नमः इस मन्त्र से १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में महाअर्घ्य रखकर हाथ में लेवे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, प्रदक्षिणा लगाते समय आत्मज्योति, आचार ज्योति, पुरुष ज्योति, पुण्य ज्योति, सहोदर ज्योति, छत्र ज्योतिश्चनित्यंमम् अस्माकं भवतु स्वाहा। पांच अथवा सात सौभाग्यवती स्त्रियों को हल्दी कुंकुं लगावे।

इस प्रकार से प्रतिदिन अभिषेकादि करके कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा के दिन चतुर्विंशति तीर्थंकरों का महाभिषेक पूजा करके व्रत का उद्यापन करे, एक चांदी का दीपक बनाकर उसमें सात सोने की बाती बनाकर रखे, एक थाली में नारियल सहित अर्घ्य रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य चढ़ा देवे, सौभाग्यवती सात स्त्रियों को भीगे चने, मिठाई, फलादि उनके आंचल में भरे याने ओटी भरे, सत्पात्रों को दान देवे, आषाढ़ शुक्ला अष्टमी से लगाकर कार्तिक पूर्णिमा तक उपवास अथवा एकाशन करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे।

कथा

प्रथम तो राजा श्रेणिक और चेलना की कथा पढ़े। उसी नगर में जिनदत्त श्रेष्ठि और उसकी पत्नी जिनदत्ता रहती थी, उसका पुत्र वृषभदत्त और उसकी पत्नी

सुमति ने इस व्रत को अच्छी तरह से पाला था । एक बार सेठ जिनदत्त पर कुछ लोगों ने उपसर्ग किया, बहूरानी के व्रत प्रभाव से शीघ्र उपसर्ग दूर हुआ, एक बार उसकी कन्या को सांप ने खा लिया, लेकिन वह भी निर्विष हो गई, मात्र उसके ऊपर गंधोदक छोड़ने मात्र से ही, एक बार उसके भाई पर भयंकर उपसर्ग किसी ने किया तब उसके व्रत के प्रभाव से यक्षदेव ने आकर उपसर्ग दूर किया । उसने अच्छी तरह से व्रत को पाला, अंत में समाधिमरण कर स्वर्ग गई, क्रमशः मोक्ष को जायेगी ।

नागपंचमी और श्रियालषष्ठि व्रत कथा

श्रावण शुक्ला पंचमी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजाभिषेक का सामान हाथ में लेकर जिनमन्दिरजी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धिपूर्वक भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा धरणेन्द्रपद्मावति सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, एक पाटे पर पान, सुपारी, लाया, भीगे हुये चने, गुड़ के पूड़े, भजिये, दूध, घी, शक्कर से बने नैवेद्य रखे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पार्श्वनाथ तीर्थंकराय धरणेन्द्रपद्मावति सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में नारियल सहित अर्घ्य लेकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, पांच सौभाग्यवती स्त्रियों को पान बीड़ा, गंधअक्षत, लाया, भीगे हुए चने, फल, हल्दी, कुंकुंयुक्त वायने देवे, उस दिन ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे, उपवास करे ।

पुनः षष्ठि के दिन मन्दिर में जाकर नेमिनाथ तीर्थंकर व यक्षयक्षिणी सहित प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे । श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं नेमिनाथ तीर्थंकराय सर्वान्हयक्षकुष्मांदीनीयक्षि सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ्य मंदिर की प्रदक्षिणा पूर्वक चढ़ावे, उपरोक्त

प्रमाण पांच सौभाग्यवती स्त्रियों को वायना देवे, चतुर्विध संघ को आहार दानादि देवे, स्वयं पारणा करे।

इस प्रकार इस व्रत को पांच वर्ष करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय पार्श्वनाथ और नेमिनाथ का महाभिषेक करके चतुर्विध संघ को चार प्रकार का दान देवे, मन्दिर में आवश्यक उपकरण देवे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी है, उसमें रत्नपुर नामका नगर है, वहां गरुडवेग राजा अपनी गरुडवेगा रानी के साथ में राज्य करता था। एक दिन नित्यनियम से अकृत्रिम चैत्यालयों की वंदना करने राजा गया, वंदना करके वापस आते समय पूर्व भवका शत्रु रास्ते में मिल गया और उसने पूर्व भव के वैरानुसार राजा के साथ युद्ध करके हरा दिया और उसकी विद्या हरली। तब वह विद्यारहित होकर जमीन पर गिर पड़ा, उस जगह समाधिगुप्त नामक मुनिश्वर के दर्शन हुये, उसने अपनी सर्व दुखवार्ता मुनिराज को कह सुनायी, तब मुनिराज को उसके ऊपर दया आ गई और उसको नाग पंचमी व्रत का स्वरूप कह सुनाया, और उसको व्रत दिया और कहा कि तुम इस व्रत को अच्छी तरह से पालन करो, जिससे धरणेन्द्रपद्मावति तुम्हारे ऊपर खुश होकर तुम्हारी विद्या तुमको वापस दे देंगे।

तब विद्याधर कहने लगा कि हे गुरुदेव इस व्रत को किसने पालन किया, और उसको क्या फल प्राप्त हुआ, सो कहो।

तब मुनिराज कहने लगे कि हे राजन सुनो मैं एक कथा कहता हूं।

कर्नाटक देश के विच गांव में नागगौंडा नाम का एक गृहस्थ अपनी पत्नी कमला के साथ रहता था, उसके पांच पुत्र, अतिबल, महाबल, परबल, राम और सोम थे, उसकी एक सुन्दर चारित्रमति नाम की कन्या थी, उस कन्या का विवाह समीप के चंपगांव में धनगौड़ के पुत्र मनोहर के साथ कर दिया, उस चारित्रमति को शांत नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ।

एक दिन चारित्रमति ने चारण ऋद्धिधारी मुनिराज को आहार दान दिया, और आसन देकर बिठाया, इतने में ही उसके पीहर से याने बाप के यहां से एक दूत आया और चारित्रमति को कहने लगा कि तुम्हारे माता-पिता मुच्छित होकर पड़े हुए हैं। तब उसने मुनिराज को हाथ जोड़ कर कहा कि हे मुनिराज ! मेरे माता-पिता के मूच्छित होने में क्या कारण है ?

तब मुनिराज कहने लगे कि हे देवो ! तुम्हारे खेत में एक वृक्ष है उस वृक्ष के नीचे एक सर्प की बामी है, तुम्हारे पिता ने उस बामी को विध्वंस किया है, क्षति पहुंचाई है, उस बामी में नेमिनाथ और पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा थी, उस प्रतिमा का अविनय हो गया है, उस प्रतिमा की भवनवासी देव नित्य ही पूजा करते हैं, वो देव क्रोधयुक्त हो गये हैं और उन्होंने ही तुम्हारे माता-पिता को विषयुक्त किया है।

तब चारित्रमति कहने लगी कि हे देव हे गुरु आप कृपा कर मेरे माता-पिता की मूर्च्छा दूर हो वैसा उपाय कहो, तब मुनिराज कहने लगे कल श्रावण शुक्ला पञ्चमी है, तुम अपने मायरे में जाओ और उपवास कर पार्श्वनाथ जिनेन्द्र की प्रतिमा का अभिषेक करके उस गंधोदक को तुम्हारे माता पिता पर छिड़क देना, उससे उनकी मूर्च्छा दूर हो जायेगी, ऐसा सुनकर उसने मुनिराज से नाग पञ्चमी और श्रियालषष्टि का व्रत ग्रहण किया, और अपने भाई के चली गई, वहां जाकर उसने व्रत विधि पूर्वक किया, गुरु के कहे अनुसार पूजाभिषेक खेत में जाकर किया, और गन्धोदक को लेकर उनके ऊपर छिड़का तब तत्क्षण उन दोनों की मूर्च्छा दूर हो गई।

तब वहां के देखने वाले लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ और सब पूछने लगे कि तुमने तुम्हारे माता-पिता की मूर्च्छा को कैसे दूर किया ? तब वह कहने लगी कि तुम सब लोग मिथ्यादृष्टि हो मैं तुमको नहीं कहूगी। उसने तो उनको नहीं कहा तब उन लोनों ने उसके साथ आने वाले दूत से पूछा कि तुम कहो कि इसने अपने माता-पिता की मूर्च्छा कैसे दूर की तब उस नौकर ने कहा कि इसने दूध, घी, शक्कर लाया आदि से बामी को पूजा वैसे तुम भी करो। तब से लोग एक पत्थर का नाग बनाकर बामी की पूजा करने लगे, उस दिन श्रावण शुक्ला पञ्चमी का दिन था, और

चारित्रमती ने फणों से सहित पार्श्वनाथ भगवान की पूजा की तब से ही नाग पञ्चमी का व्रत प्रसिद्ध हो गया ।

तब उसने उसको कहा कि मेरा षष्टि का भी व्रत है । मैं व्रत का पालन करने के लिए मेरे गांव जाती हूं क्योंकि बच्चा को अकेला छोड़कर आई हूँ तब उसके पिता ने कहा कि बेटी तुम इस व्रत को यहां ही पालन कर लो जो भी सामान तुम को जरूरत हो मैं उसको लाकर देता हूं । तब वह सब पूजा सामग्री लेकर खेत पर चली गई और विधि सहित पूजा व्रत करने लगी ।

इतने में पूर्व के मुनिगुप्त नामक मुनिराज वहां आ गये और कहने लगे कि हे चारित्रमति तेरे पुत्र को तेरी सासू ने सरोवर में डाल दिया है । तब उसने मुनि-राज को उपाय पूछा कि अब मैं क्या करूं ? मुनिराज कहने लगे कि तू अब पद्मावति देवी की और अम्बिका देवी की आराधना कर जिससे तेरे पुत्र को वे देवी सुख रूप लाकर देदेंगी । मुनिवचन प्रमाण मानकर उसने श्रियाल षष्ठि व्रत को पालन किया और देवियों की आराधना की, देवियों ने प्रसन्न होकर उसके पुत्र को सुख से लाकर दे दिया, यह सब देखकर सब को आश्चर्य हुआ । राजा ने सुना उसको भी बहुत आश्चर्य हुआ । वह चारित्रमति को उसके लड़के सहित पालकी में बैठाकर राजमहल में ले गया, राज सभा में सम्मान कर वस्त्राभूषण देकर उसके घर पहुंचाया । वह अपने पिता की आज्ञा लेकर अपने घर वापस लौट आई, वहां उसने अच्छी तरह से पांच वर्ष तक व्रत का पालन किया, अन्त में उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से चारित्र-मति समाधिमरण कर स्त्रीलिंग छेद करती हुई स्वर्ग में देव हुई, पुनः मनुष्य भव धारण कर दीक्षा लेकर मोक्ष गई ।

इस कथा को गडरुवेग ने मुनिराज से सुनकर मन में आनन्द व्यक्त किया और उसने उस व्रत को स्वीकार किया, घर जाकर व्रत को अच्छी तरह से पालन किया, गरुडवेग के ऊपर पद्मावती देवी कुष्मांडनी देवी प्रसन्न हो गई, देवियों ने उसकी विद्या उस को वापस दे दी, तब गरुडवेग ने विद्याधर लोक में रहकर सुख को भोगा फिर दीक्षा लेकर कर्म काटकर मोक्ष को गया ।

निरतिशय व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक व फाल्गुन, इन तीनों महीने की अष्टमी को इस व्रत का पालन करना चाहिए प्रातः शुद्ध वस्त्र पहन कर मन्दिर जी में जावे, वहां मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धिपूर्वक भगवान को नमस्कार करे, सिंहासन पीठ (अभिषेकपीठ) पर चौबीस तीर्थंकर की मूर्ति स्थापन करके पंचामृताभिषेक करे, प्रत्येक तीर्थंकर को अलग-अलग अर्घ चढ़ाकर जयमालापूर्वक पूजा करे, चौबीस तीर्थंकरों की अलग-अलग स्तोत्रपूर्वक पूजा करे, जिनवाणी को पूजा करे, गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षियों को, क्षेत्रपाल को अर्घादिक देकर सम्मान करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वृषभादि वर्धमानांत वर्तमान चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, तीर्थंकरों का चरित्र-वाचन कर व्रत कथा भी पढ़े, एक थाली में दो पान पर दो दो अक्षत पुञ्ज रखे, ऊपर सुपारी रखे, गन्ध, पुष्प, नैवेद्य, फलादि रखकर दीपक रखे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा देकर अर्घ चढ़ावे, आरती करे, पूजाविसर्जन करे उस दिन शक्ति अनुसार उपवास करके सत्पात्र को आहारदान देवे । यह विधि पहले दिन की है, इस दिन से लगाकर प्रतिदिन चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा का अभिषेक करके सामुदायिक अष्ट द्रव्य से पूजा करे, एक पुष्पमाला भगवान के चरणों में अर्पण कर, उपरोक्त मन्त्र को १०८ बार पुष्पों से जाप्य करे, रोज घी का अखण्ड दीपक जलावे, महाअर्घ (जयमालाअर्घ) करके विसर्सन करे ।

प्रत्येक महिने की पूर्णिमा व अष्टमी को पूर्व विधि के समान ही विधि करे, उसी प्रकार पूजा करे, इसी क्रम से चार महिने पूजा करना चाहिये, अन्त में चतुर्विंशति तीर्थंकर आराधना करके उद्यापन करे, शक्ति हो तो नवीन चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा बनवाकर पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा करे, चार प्रकार की मिठाई तैयार कराकर नैवेद्य अर्पण करे, चारप्रकार की धान्यराशि करे, चार प्रकार के फल चढ़ावे, चार वायने (सूप में सामान रखने को वायना कहते हैं) तैयार करे, चतुर्विध संघ को आहारादि देवे, बाद में पारणा करे, इस प्रकार व्रत की विधि है ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में कांबोज नामक एक विशाल देश है, उस देश में उज्जयिनी नाम की एक नगरी है।

उस नगर में प्राचीन काल में एक पराक्रमी, गुणवान, धर्मनिष्ठ, मदनपाल नाम का राजा था, उस की मदनावती रानी बहुत सुन्दर गुणवान व शीलवान थी, राजा इस प्रकार सुख से राज्य करता था। एक दिन नगरी के उद्यान में मुनिगुप्त नाम के एक दिव्यज्ञानी आये, वनपाल के द्वारा समाचार प्राप्त होने पर राजा मुनिराज के दर्शनों को सपरिवार रवाना हुआ, वहां जाकर मुनिराज को तीन प्रदक्षिणा दिया और उपदेश सुनने के लिए निकट में बैठ गये, धर्मोपदेश समाप्त होने के उपरान्त राजा की रानी मदनावती मुनिराज को कहने लगी हे संसारसिन्धु से पार उतारने वाले गुरुदेव ! मुझे एहिकलोक सुख की प्राप्ति होकर परमार्थ सुख की प्राप्ति होवे ऐसा कोई एक व्रत दीजिये।

रानी के ऐसे वचन सुनकर मुनिराज कहने लगे कि हे बेटी ! तुम को निरतिशय व्रत का पालन करना चाहिए, इस व्रत को जो कोई स्त्री पुरुष भक्ति, श्रद्धा से विधि पूर्वक पालन करता है उस भव्य को इस लोक के सुख की प्राप्ति होती है, और क्रम से मोक्ष सुख की प्राप्ति भी होती है, रानी ने व्रत का फल सुनकर श्रद्धा से व्रत को ग्रहण किया, वापस नगर में आकर व्रत को यथाविधि पालन करने लगी। उस समय उस नगरी में निर्विशुद्धि नामक एक वैश्य रहता था, उस वैश्य की शीलवती नाम की एक सुन्दर भावुक स्त्री थी, उस वैश्य के चौंतीस पुत्र थे। इतना सब होते हुए भी सेठ को दारिद्र ने घेर रखा था, उस दरिद्रता के कारण उन लोगों को पेट भर खाना भी नहीं मिलता था और शरीर पर वस्त्र भी पहनने को नहीं मिल पाता था, एक दिन वह स्त्री जिन मन्दिर में दर्शन को गई।

भगवान के दर्शन को करने के बाद जब रानी को व्रताचरण करते हुए देखा तो उसके मन में भी व्रताचरण करने की भावना उत्पन्न हुई, रानी के साथ उसने भी व्रताचरण करना प्रारम्भ किया, अन्त में दोनों ने व्रत का उद्यापन किया, आगे व्रताचरण के फलस्वरूप शीलवती के घर में बहुत ही धन-संपदा की समृद्धि हो गई।

उसने अपने सब पुत्रों की शादी कर दी । वो सब लोग आनन्द से अपना समय निकालने लगे, उन लोगों को जिन धर्म के ऊपर बहुत ही श्रद्धा उत्पन्न हुई, दीन अनाथ दुःखी लोगों को दान करने लगे, उसी प्रकार जिनपूजा, शास्त्र स्वाध्यायादि करने लगे, बहुत ही पुण्यसंचय करने लगे । अंत में जिनदीक्षा धारण कर तपस्या करने लगे, समाधिमरण कर स्वर्गसुख की प्राप्ति कर क्रमशः मोक्षसुख की प्राप्ति की ।

इसलिए हे भव्यजनो ! आप लोग भी इस व्रत का विधि पूर्वक पालन करो, आपको भी अनन्त सुख की प्राप्ति होगी ।

नवनिधि भांडार व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल अष्टमी के दिन श्रावक स्नान करके शुद्ध कपड़े पहनकर पंचामृताभिषेक का सामान व पूजाद्रव्य हाथों में लेकर जिनमन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर जिनेन्द्रप्रभु को नमस्कार करे, कोई भी एक प्रकार का धान्य चढ़ावे, नौ पुंज उस धान्य का नौ देवता के नाम का करे । अरहंत, सिद्ध, आचार्य उपाध्याय, सर्वसाधु, जिनधर्म, जिनागम, जिनचैत्य जिनचैत्यालयेभ्यो नमः ऐसा बोलता हुआ पुंज करे, भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, इसी प्रकार नित्य पूर्णिमा पर्यन्त करे, नित्य ही अभिषेक करे, ब्रह्मचर्य पालन करे, अन्त में इस व्रत का उद्यापन करे, उस समय नवदेवता का महाभिषेक करके पूजा करे, एक सेर धान्य का उपरोक्त प्रमाण नौ पुंज करे, नमस्कार करे, नौ प्रकार का नैवेद्य बनाकर जिनेन्द्र प्रभु को चढ़ावे, भगवान के सामने नौ पान रखकर नौ पान के ऊपर एक-एक अर्घ्य रखे, नौ पुड़ी को रखे, नौ पुष्पमाला रखे और जिनेन्द्र भगवान को चढ़ा देवे, व्रत कथा पढ़े, अंत में नवदेवता के नाम से १०८ बार पुष्पों से जाप्य करे, एक महाअर्घ्य करके मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, इस प्रकार व्रत की पूर्ण विधि हुई ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सुगंधी नाम का एक बड़ा देश है, उस देश के रत्नसंचय नगर में एक महापराक्रमी, देवपाल नाम का राजा अपनी रानी लक्ष्मीमति के साथ राज ऐश्वर्य का भोग करता था । एक समय उस नगर के उद्यान में श्रुत

सागर महामुनिश्वर पधारे, राजा को समाचार प्राप्त होते ही वह परिजन पुरजन के साथ मुनिराज की वंदना को गया, मुनिराज की तीन प्रदक्षिणा करके नमस्कार किया और धर्मोपदेश सुनने के लिए निकट ही बैठ गया, कुछ समय उपदेश सुनकर रानी ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की, कि हे स्वामिन ! अनन्त सुखों का कारण ऐसा कोई व्रत मुझे प्रदान करिये, जिससे मेरा जन्म सार्थक हो । तब मुनिराज कहने लगे कि हे बेटी तुम नवनिधि भांडार व्रत का पालन करो, ऐसा कहकर व्रत का स्वरूप समझाया, सब लोगों को व्रत की विधि सुनकर बहुत आनन्द हुआ, रानी लक्ष्मीमति ने भक्ति से व्रत को ग्रहण किया और सब नगर में वापस लौट आये, आगे रानी ने निर्दोष व्रत का पालन किया, अंत में उद्यापन किया ।

रानी के साथ में एक धनदत्त नाम के सेठ ने भी व्रत को यथाविधि पालन किया, उसके फल से उसको राजश्रेष्ठि पद प्राप्त हुआ । आगे जाकर सब लोक स्वर्ग मोक्ष को गये ।

कौनसा धान्य भगवान को चढ़ाने से क्या फल मिलता है ।

धान्य नाम	फल
चांवल	पुत्र प्राप्ति
तिल	कलंक रहित
कोई भी दाल सूखी	उत्तम कुलोत्पन्न
गेहूं	ज्ञानी (धारणा शक्ति)
चना	दरिद्रतारहित
तुअर	हंसमुखता
उड़द	मदरहित
मूंग	नवीन वस्त्राभूषण प्राप्ति

इस प्रकार और भी नाना प्रकार के धान्य चढ़ाने से सुख की प्राप्ति होती है ।

निर्दोषसप्तमी व्रत कथा

भाद्रपद शुक्ल सप्तमी के दिन स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहन कर, पूजा द्रव्य

को हाथ में लेकर जिनमन्दिर में जावे, मन्दिर को तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, मडप वेदी को अच्छी तरह से सजाकर मध्य में सात प्रकार के धान्यों की एक राशि करे, सामने पांच वर्णों से अष्टदल कमल निकाले, बीच में ह्रींकार लिखकर उसके ऊपर मंगल कलश दूध से भरकर रखे, उसमें भगवान रखे, मंगल कलश के रूप में अभिषेक पीठ पर सुपार्श्वनाथ की मूर्ति यक्ष यक्षिणी सहित विराजमान करके पंचामृताभिषेक करे, उस मूर्ति को कुंभ पर थाली रख कर विराजमान करे, आदिनाथ से लेकर सुपार्श्वनाथ पर्यन्त पूजा करे, सात प्रकार के नैवेद्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की अर्चना करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री सुपार्श्वनाथाय नंदिविजययक्ष कालीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प से जाप्य करे, णमोकार मन्त्रों का १०८ बार जाप करे, श्री सुपार्श्वनाथ भगवान के चारित्र का वाचन करे, व्रत कथा पढ़, सात पान एक थाली में रखकर प्रत्येक पान पर पृथक्-पृथक् अर्घ रखे, एक नारियल रखे, इस प्रकार अर्घ्य बनाकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य को चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, त्रेसठ शलाका पुरुषों के चारित्र को पढ़े, स्तोत्र आदि पढ़ते हुये रात दिन बितावे। दूसरे दिन स्नानादिक से निवृत होकर भगवान को कुंभ से बाहर निकाले, फिर भगवान का पंचामृताभिषेक, करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, सात प्रकार की मिठाई बनाकर चढ़ावे, सत्पात्रों को दान देकर स्वयं पारणा करे, इस प्रकार इस व्रत को सात वर्ष करे, अंत में उद्यापन करे, उद्यापन के समय, एक सुपार्श्वनाथ की नवीन मूर्ति यक्षयक्षी सहित बनवाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, सात मुनिश्वरों को दान देकर सात सौभाग्यवती स्त्रियों को वायना देवे, इस व्रत की विधि यही है।

कथा

इस भरतक्षेत्र में पृथ्वीभूषण नामक एक विशाल देश है, उस देश में पृथ्वी पालक नाम के राजा मदनमाला पट्टरानी के साथ राज्य करते थे, उस नगर में एक अर्हदास नामका राजश्रेष्ठि रूपलक्ष्मी नाम की सेठानी के साथ रहता था, पहले

सेठानी ने इस व्रत को पाला था, परिणामतः उस सेठानी को थोड़ा भी दुःख नहीं था, उस सेठ को पांच पुत्र, एक कन्या थी, वह श्रेष्ठी बहुत धनवान था, ३२ करोड़ दीनार का स्वामी था, वो नित्य ही अपने धन को दान पूजा, यात्रा प्रतिष्ठा में खर्च करता था, इस प्रकार वह सेठ सुख से समय व्यतीत कर रहा था। उसी नगर में दूसरा एक और सेठ रहता था, जो अच्छी बुद्धि वाला था। राजा उसके ऊपर बहुत गौरव करता था, वो भी बहुत धनवान था, उसकी एक सुनन्दा नाम की सेठानी थी, उसका एक मुरारी नाम का लड़का था, अकेला होने से उसके माता-पिता उससे बहुत प्यार करते थे।

जैसे २ वह बड़ा होने लगा, वैसे २ बहुत सुन्दर लगने लगा, उसको माता रात्रि में उसको दूध और चांवल खाने को देती थी। तुम रात्रि में बच्चे को खाना मत दो ऐसा उसका पति मना करता था, तो भी वो नित्य पुत्र को रात्रि में ही दूध भात खाने को देती थी। एक दिन उसने दूध और चांवल छींके पर रखा था, सो सर्प आकर विष छोड़कर चला गया, नित्य प्रमाण उसने अपने पुत्र को रात्रि में खाना दिया, उस दूध चांवल को खाते ही लड़का विष से प्रभावित होकर एक क्षण में ही मर गया, सुनन्दा सेठानी पुत्र के वियोग से बहुत दुःखित होने लगी और कहने लगी कि रात्री भोजन के कारण ही ऐसा हुआ है भव्य जीवो रात्रि में भोजन करने से ऐसे दुःख के परिणाम होते हैं, इसीलिये रात्रि में भोजन करने का शास्त्र में निषेध है।

सुनन्दा बहुत जोर २ से रोने लगी, उसका रोना सुनकर लक्ष्मीमति सेठानी अपनी सखी से कहने लगी आज सुनन्दा सेठानी के घर में क्या उत्सव है सो जोर २ से गा रही है, चलो देखकर आवें। ऐसा वो क्यों कहने लगी ? उसमें एक कारण है। इस जन्म में उसने दुःख नाम की कोई चीज ही नहीं सुनी न देखी थी, उसका जीवन तो हर समय सुख से ही निकलता था. लक्ष्मीमति सुनन्दा सेठानी के घर जाकर कहने लगी कि हे सखी यह गीत तुमने कहां सीखा, जो तुम गा रही हो, ऐसा सुनते ही सुनन्दा को बहुत क्रोध आया, और कहने लगी, कि तुम को भी ऐसा गीत चाहिए तो मैं तुम्हारे घर भेज देती हूं तुम अभी अपने घर वापस शीघ्र चली जाओ। तब लक्ष्मीमती कहने लगी कि हे सखी इस गायन को अवश्य मेरे घर भेज दो, कहकर लक्ष्मीमती अपने घर चली गई।

इधर सुनन्दा सेठानी विचार करने लगी कि कौनसे उपाय से लक्ष्मीमती को कष्ट हो, इतने में एक सपेरा वहां से निकला, उससे सुनन्दा सेठानी कहने लगी कि हे सपेरे भाई तुम एक कार्य मेरा करो, लक्ष्मीमती को किसी भी तरह से पुत्र शोक हो तब सपेरा कहने लगा कि हे देवी मैं एक सांप घड़े में डालकर देता हूं तुम उस घड़े को लक्ष्मीमती के घर भेज दो और कहलवा दो कि इस घड़े में तुम्हारे पुत्र के लिये बहुत सुन्दर हार है तुम्हारा पुत्र इस घड़े में हाथ डालकर निकाले और गले में पहने तो तुमको सुन्दर गीत गाना आ जायेगा।

तब सुनन्दा ने उस घड़े को एक मनुष्य के हाथ लक्ष्मीमती के घर भेज दिया, और सब बात कहला भेजी, तब लक्ष्मीमती ने उस घड़े में अपने पुत्र के हाथों से उस हार को निकलवा कर अपने गले में पहन लिया, लक्ष्मीमती उस हार से और भी सुन्दर दिखने लगी, रत्नहार का प्रकाश सारे घर में फैल गया, ये सब होने पर भी लक्ष्मीमती को गीत गाना नहीं आ रहा था।

इधर सुनन्दा सेठानी को भी बहुत खुशी हो रही थी कि अब तो अवश्य ही लक्ष्मीमती को कष्ट होगा, देखें उसके घर में क्या हो रहा है, ऐसा विचार कर वह लक्ष्मीमती के घर देखने को गई।

जब सुनन्दा को लक्ष्मीमती ने देखा उस ही समय लक्ष्मीमती कहने लगी देवी सुनन्दे, तुम्हारे कहे अनुसार सब मैंने किया लेकिन तुम्हारे समान हमको गीत गाना नहीं आया, क्या कारण है, सुनन्दा उसकी बात को सुनकर हैरान हो गई और अपने घर उल्टे पांव वापस लौट आई। मन में विचार करने लगी कि लक्ष्मीमती बहुत सौभाग्यशालिनी है उसको किसी प्रकार का कोई कष्ट नहीं हो सकता, मंने जो उसको दुःख पहुंचाने का कार्य किया सो बहुत ही अयोग्य किया, ऐसा रात-दिन विचार करने लगी।

हे भव्यजीवो आप ! लोग किसी दूसरे को कष्ट पहुंचाने रूप कार्य कभी मत करो। एक दिन लक्ष्मीमती मन्दिर में जिनदर्शन करने को गई, मन्दिर में राजा की रानी भी आई थी, लक्ष्मीमती के गले का सुन्दर हार देखकर रानी मदनमाला अपने राजमहल में आकर राजा को कहने लगी कि हे देव ! आज मैं लक्ष्मीमती के

गले में एक हार देखकर आई हूं वैसा हार मुझको भी चाहिये, तब राजा ने अर्हद्दास सेठ को बुलवा कर कहा कि श्रेष्ठिवर्य ! जो आपकी सेठानी के गले में हार है वैसा मेरी रानी को भी चाहिये आप बनवाकर देवें, जितना भी धन चाहिये ले जाओ, तब सेठ कहने लगा कि हे राजन ! मेरी संपत्ति सब आपकी ही है, उस हार को ही आप को भेंट कर देता हूं ऐसा कहकर सेठ ने उस हार को राज सभा में लाकर राजा को दे दिया ।

हार का प्रकाश देखकर सभा के लोग बहुत आश्चर्य करने लगे, राजा ने अपनी रानी के हाथ में उस हार को दिया, रानी ने जैसे ही उस हार को अपने गले में पहना उसी क्षण वो हार काला सर्प हो गया, रानी बहुत भयभीत हो गई, हार को गले से निकाल दिया, राजा को कहा, राजा को सेठ के ऊपर बहुत क्रोध आया, तब सेठ कहने लगा कि हे राजन मुझे पता नहीं मैं मेरी लक्ष्मीमती सेठानी को बुलाता हूं सेठ अपनी सेठानी को राज सभा में लेकर गया, उस हार को लक्ष्मीमती सेठानी ने पहना तो हार हो गया, और रानो के गले में सर्प दीखने लगा, यह सब देखकर राजसभा के लोगों को बहुत कौतुक हुआ, राजा के भी आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, रानी के गले में सर्प और सेठानी के गले में हार, यह सब देखकर राजा ने एक दिव्यज्ञान से सम्पन्न महामुनिश्वर को पूछा भगवान यह सब क्या कौतुक है मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा है ।

तब मुनिराज कहने लगे हे राजन ! इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है इस लक्ष्मीमती सेठानी ने पूर्व भव में निर्दोष सप्तमी व्रत को अच्छी तरह से पाला था, इसीलिये इसको किसी प्रकार का कष्ट नहीं हो सकता, धर्म के प्रभाव से सर्प भी रत्नहार होता है, हे भव्यजीवो आप भी इस व्रत का पालन करके पुण्य उपार्जन करो, ऐसा कहते हुये पूर्व वृतान्त सब कह सुनाया, सबको बहुत आनन्द हुआ, राजा ने, लक्ष्मीमती आदि सबने मुनिश्वर से निर्दोष सप्तमी व्रत स्वीकार किया, और अपने घर को वापस आ गये ।

लक्ष्मीमती आदि ने यथायोग्य व्रत का पालन किया, व्रत का उद्यापन किया, इस कारण वह लक्ष्मीमती स्त्रीलिंग छेद कर स्वर्ग में देव हो गई, वहां से

चयकर मनुष्य भव धारण कर मुनिदीक्षा धारण की, तपश्चरण करके कर्मों को नष्ट कर मोक्ष को प्राप्त किया ।

नक्षत्रमाला व्रत

गीत का छन्द

अश्विनी नक्षत्र थकी जु वासर चार अधिक पचास ही,
तिहिं मध्य एकाशन सत्ताइस बीस सात उपासही ।
युत शील मन वच तन त्रिशुद्धहिं कर विवेकी चाव सों,
माला नक्षत्र सु नाम व्रततें छूटिये विधि दाव सों ।।

—कि. क्रि. को.

भावार्थ :—यह व्रत चौवन दिन में समाप्त हो जाता है । प्रथम अश्विनी नक्षत्र के दिन प्रारम्भ करे । प्रथम दिन उपवास, दूसरे दिन पारणा, तीसरे दिन उपवास, चौथे दिन पारणा इस प्रक्रम से २७ उपवास और २७ पारणा करता हुआ क्रम से ५४ दिन पूरे करें । प्रति दिन त्रिकाल णमोकार मन्त्र का जाप्य करे । व्रत समाप्त होने पर उद्यापन करे ।

नित्यरसी व्रत

अडिल्ल–लूण दीत शशि हरि भौम मीठो हरै,
घृत बुध गुरु को दही दूध भृगु परिहरैं ।
तैल तजे शनि यहै वरत पांखा गहैं
मरयादा जिमि नेम धरे जिमि निरबहै ।।

—वर्धमान पुराण

भावार्थ :—रविवार को नमक, सोमवार को हरी, मंगलवार को मीठा, बुधवार को घृत, गुरुवार को दही, शुक्रवार को दूध और शनिवार को तैल का त्याग करे । यह व्रत एक वर्ष में समाप्त होता है । शक्तिन्यूनता में पक्ष, मास, दो मास आदि रूप से किया जा सकता है । व्रत धारण की अवधि पूर्ण होने पर उद्यापन करे । '**ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं नमः**' इस मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे ।

नवकार व्रत

नमोकार व्रत अब सुन राज सत्तर दिन एकान्तर साज।

—वर्धमान पुराण

भावार्थ :—यह व्रत सत्तर दिन में समाप्त होता है। सत्तर एकाशन करे। प्रतिदिन त्रिकाल णमोकार मन्त्र का जाप्य करे। पश्चात् उद्यापन करे।

नंदसप्तमी व्रत

भादों सुदी सप्तमी दिन जान, प्रोषध चरे सभी तज मान।

भावार्थ :—भादों सुदि सप्तमी के दिन उपवास करे। नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे। सात वर्ष पूरे होने पर उद्यापन करे।

निर्जर पञ्चमी व्रत

प्रथम आषाढ़ श्वेत पञ्चमी को वास करे,
कार्तिक लों मास पांच प्रौषध गहीजिये।
आठ प्रकार जिनराज पूजा भाव सेती,
उद्यापन विधि कर सुकृत लहीजिए।
कियो नागश्रीय सेठ सुता एक बरष लों।
सुरगति पाय निधि कथातें गहीजिये।
निर्जर पंचमी को व्रत यह सुखाकर भाव
शुद्ध किये दुःख को जलांजलि दीजिए।

भावार्थ :—यह व्रत पांच महीने में समाप्त होता है जिसमें ९ उपवास होते हैं। आषाढ़ शुक्ला ५ का उपवास, श्रावण में पञ्चमी २, भाद्रपद में २, आश्विन में २, कार्तिक में २ इस प्रकार ५ मास ९ पञ्चमियों के उपवास करे। त्रिकाल नमस्कार मन्त्र का जाप्य करे। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

यह व्रत सेठ पुत्री नागश्री ने किया था जिससे वह उत्तमोत्तम सुख को प्राप्त हुई थी।

नंदीश्वरपंक्ति व्रत

दोहा— **नंदीश्वर पंकति विरत, सुनहु भविक चित लाय।**
किये पुण्य अति ऊपजे, भव आताप मिटाय ।।

चौपाई– प्रथमहिं चार इकांतर बीस, कर पीछे बेला इकतीस ।
ता पीछे जु इकान्तर करे, द्वादश प्रोषध विधियुत धरे ।
पुन बेलो करिये हित जान, बारा वास इकान्तर ठान ।
पीछें इक बेलो कीजिए, इक अन्तर दश द्वय लीजिए ।
फिर इक बेलो कर धर प्रेम, वसु उपवास इकांतर एम ।
सब उपवास आठ चालीस, बिच बेलो चहु गहे गरीश ।
दधिमुख रति करके उपवास, अंजनगिरि चहुं बेला तास ।
दिवस एक सो आठ मझार, बरत यहै पूरणता धार ।
छप्पन प्रोषध भवि मन आन, करे पारणा बावन जान ।
लगते करे न अन्तर पड़े, अघ अनेक भव संचित हरे ।

यह व्रत १०८ दिन में पूरा होता है, जिसमें ५६ उपवास और ५२ पारणा होते हैं । यथा—

पूर्व दिशि—अंजनगिरिका बेला १, ताके उपवास २, पारणा १, दधिमुख के उपवास ४, पारणा ४ । रतिकर के उपवास ८, पारणा ८ । इस प्रकार पूर्व दिशि के उपवास १४ पारणा १४ । इसी प्रकार दक्षिण के, पश्चिम के और उत्तर के करे । नन्दीश्वर की भावना भावे ।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीपे द्वापञ्चाशज्जिनलयेभ्यो नमः' इस मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे, व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे ।

पञ्चालंकार व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला पञ्चमी के दिन स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहन हाथों में अभिषेक पूजा का सामान लेकर मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर पञ्चपरमेष्ठि भगवान का पञ्चामृत अभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से भगवान की पूजा करे, जिनवाणी व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल का यथायोग्य सम्मान करे, पंचपरमेष्ठि का अलग अलग नाम उच्चारण करके पांच अक्षतों का पुंज रखे, पुंज के ऊपर पांच सुपारी, पांच पुष्प, पांच लड्डू, पांच फल आदि रखे ।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा नमः सर्वशांतिर्भवतु स्वाहाः ।

इस मन्त्र से अथवा ॐ नमः पञ्चपरमेष्ठिभ्यः स्वाहा । इस मन्त्र से उनको एक २ अर्घ्य चढ़ावे, अन्त में १०८ पुष्प से जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, णमोकार मन्त्रों का १०८ बार जाप्य करे, उसके बाद एक महा अर्घ करे, अर्घ हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उपवासादि शक्ति प्रमाण करे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे।

इसी प्रकार प्रत्येक महीने की शुद्ध शुक्ल पञ्चमी को पूजा करना चाहिये, व प्रत्येक दिन पञ्च परमेष्ठि भगवान का दूध का अभिषेक करे, अन्त में व्रत का उद्यापन करे, उस समय श्रुत स्कंध यन्त्र की यथाविधि प्रतिष्ठा करके पांच प्रकार की मिठाई बनाकर पूजा करे, चतुर्विध संघ को आहारादि दान देवे, इस प्रकार इस व्रत की विधि है ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में मगध नाम का विशाल देश है, उस देश में सौन्दर नाम का एक गांव है, वहाँ पहले विश्वसेन नाम का राजा राज्य करता था, उसकी सौंधरी नाम की सुन्दर पट्टराणी थी, दोनों सुख से राजसुख भोग रहे थे। एक दिन भगवान महावीर का समवसरण विपुलाचल पर्वत पर आया है ऐसा वन-पालक के द्वारा सूचना प्राप्त होते ही, नगरवासी लोगों के साथ स्वयं के परिवार को लेकर विपुलाचल पर्वत पर चला गया, जाकर साक्षात भगवान को नमस्कार करके मनुष्यों के कोठे में बैठ गया, दिव्यध्वनि सुनने लगा, कुछ समय बाद हाथ जोड़ कर विनयपूर्वक गौतम स्वामी से प्रार्थना करने लगा कि हे जगत्गुरो ! आप कोई ऐसा व्रत कहिये कि जिसके फल से अनन्त सुख की प्राप्ति मुझे हो, तब गौतम स्वामी कहने लगे कि हे भव्योत्तम राजन ! तुम पञ्चालंकार व्रत को करो, जिसके फल से तुम को शीघ्र ही मोक्ष की प्राप्ति होगी । ऐसा कहकर भगवान ने पूर्ण रूप से व्रत की विधि कही ।

तब भक्ति से सब लोगों ने व्रत ग्रहण किया और अपने नगर में वापस आ गये, राजा ने विधिपूर्वक व्रत का पालन किया और उद्यापन भी किया । अन्त में

मरकर व्रत के पुण्य फल से पांचवें स्वर्ग में देव होकर उत्पन्न हुआ। वहां से चय कर भरत भूमि पर चक्रवर्ती हुआ, षड्खड का राज्य भोगकर दीक्षित हुआ, कर्म काट कर मोक्ष गया।

पुराणान्नत्याग व्रत विधि कथा

आषाढ़ शुक्ला अष्टमी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर जिनमन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर भगवान को विराजमान करके पंचामृत अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, जिनवाणी गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल का यथायोग्य सम्मान पूजा करना चाहिये।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं परमब्रह्मणे अनन्तानंतज्ञान शक्तये अर्हत्परमेष्ठिने नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, देव, शास्त्र, गुरु के आगे चांवल का चार पुंज बनाकर नमस्कार करता हुआ, उनकी साक्षी से एक भुक्ति का नियम करना चाहिये, और आज से लेकर चार महिने तक पुराना धान्य (अन्न) नहीं खाऊंगा ऐसा नियम करना चाहिये, व्रत कथा पढ़ना चाहिये, इसी क्रम से आगे कार्तिक शुक्ला पौर्णिमापर्यंत प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशी को पूर्वोक्त पूजा करना चाहिये, कार्तिक की पौर्णिमा के दिन इस व्रत का उद्यापन करना चाहिये, उस समय महाभिषेक पूजा करना, बारह बांस के करण्डों में नाना प्रकार के शुद्ध मिष्ठान्न और गंध, अक्षत, पुष्प, फलादि भरकर ऊपर से बंद कर देवे, वायने तैयार कर देवे, देव को एक, शास्त्र को एक, गुरु को एक, पद्मावती को एक, आर्यिका के आगे एक चढ़ा देवे, गृहस्थाचार्य को एक पण्डित, सौभाग्यवती स्त्री को एक देवे, एक स्वयं अपने घर को लेकर जावे, शक्ति के अनुसार चतुर्विध संघ को दान करे, फिर अपने पारणा करे, प्रत्येक अष्टमी वा चतुर्दशी को उपवास भी करे तो बहुत अच्छा है।

कथा

अवंति नामक देश में उज्जयनी नगरी में प्रतापसिंह राजा अपनी पद्मावती रानी के साथ में राज्य करता था, एक समय उस नगर के चैत्यालय में कनकश्री

व कनककांता आर्यिका ५०० आर्यिकाओं के साथ में दर्शन करने को आई, उस दिन पद्मावती रानी भी जिनचैत्यालय के दर्शन के लिये गई थी, आर्यिका माताजी को देखकर भक्तिपूर्वक रानी ने नमस्कार किया, विनय से कहने लगी कि हे माताजी ! अब आप इस वर्ष का चातुर्मास इसी नगरी में करिये, जिससे कि हमारी पुण्य वृद्धि हो, वर्षा योग निकट आ गया है, हमारी ऐसी इच्छा है कि आपके श्रीमुख से कोई ऐसा व्रत विधान कहो। रानी के विनयपूर्वक वचन सुनकर मुख्य आर्यिका कनक श्री कहने लगी कि हे रानी तुम पुराना अन्नत्याग व्रत करो, इस व्रत के प्रभाव से जीव को इहलोकसुख और परलोकसुख की प्राप्ति होती है, ऐसा कहकर व्रत की सम्पूर्ण विधि को कहा। रानी व्रत की विधि को सुनकर बहुत ही आनंदित हुई और विनयपूर्वक व्रत को स्वीकार किया, और घर वापस आ गई, अपनी दासी के साथ व्रत को अच्छी तरह से पालन करने लगी।

उद्यापन के दिन वसंतमाला दासी को सब द्रव्य तो प्राप्त हो गया, लेकिन एक नवीन कपड़ा न प्राप्त होने के कारण वह अत्यन्त चिंतातुर होने लगी, और जिनमन्दिर की तरफ जाने लगी, इतने में मार्ग में एक व्यक्ति मिला, वसंतमाला को चिंतातुर देखकर कहने लगा कि हे मां, आज आप चिंतावान क्यों दीख रही हो क्या कारण है। तब वह कहने लगी कि हे पिताजी आज मेरे को एक व्रत का उद्यापन करना था, लेकिन उद्यापन के लिये एक नवीन वस्त्र चाहिये सो वस्त्र न मिलने के कारण आज मैं उदासीन हूं। उसका दीन वचन सुनकर वह व्यक्ति कहने लगा कि हे मां आज आप जो व्रत कर रही हैं, उसमें से मुझे भी कुछ भाग अगर देती हो तो मैं तुमको एक नवीन वस्त्र लाकर शीघ्र देता हूं ऐसा सुनते ही वह दासी बहुत प्रसन्न हुई और वसंतमाला कहने लगी कि हे पिताजी जो मैं व्रत कर रही हूं उस पुण्य का आठवां भाग मैं आपको देती हूं। तब उसने एक नवीन कपड़ा लाकर शीघ्र दे दिया, तब वसंतमाला दासी ने बहुत बड़े उत्सव से व्रत का उद्यापन किया, चतुर्विध संघ को दान वगैरह देकर पारणा किया, उस व्यक्ति को भी अष्टमांश पुण्य लगा क्योंकि उद्यापन के लिये उसने नवीन कपड़ा दान किया था।

इधर पद्मावती रानी को सर्व पूजासाहित्य टाइम पर न मिलने के कारण कालातिक्रम हो गया, और रात्रि हो जाने के कारण खाने पीने के पदार्थों में

जीवोत्पत्ति हो गई, पूजा सामग्री में जीवाणु उत्पन्न हो गये, बहुत जीव हिंसा हो जाने के कारण उसको बहुत पाप लगा ।

आगे वह पद्मावती रानी मरकर एक वैश्या के गर्भ से सर्वप्रिया नाम की गणिका होकर उत्पन्न हुई, वह वसंतमाला भी आयु के अंत में समाधि धारण कर मरी, और उसी नगर के अन्दर रहने वाले भानुदत्त सेठ की लक्ष्मीमती सेठानी के गर्भ से कुमारकांत नामक पुत्र होकर जन्मी । वह व्यक्ति भी उसी नगरी में रहने वाले नंदिवर्धन वैश्य और उसकी पत्नि नंदीवर्धिनी के गर्भ से कनकमाला नामकी कन्या पैदा हुई । जब कुमारकांत युवा हुवा तब कनकमाला के साथ शुभ मुहूर्त में विवाह हो गया, और सुख से रहने लगे ।

एक दिन उस नगरी के उद्यान में विमलबोधन नाम के अवधिज्ञानी मुनिश्वर आये सामाचार प्राप्त होते ही नगरी का राजा प्रतापसिंह अपने परिजन पुरजन सहित मुनिदर्शन के लिये उद्यान में गया, मुनिराज को भक्तिपूर्वक नमस्कार करके धर्मोपदेश सुनने के लिये बैठ गया, कुछ समय के बाद कुमारकांत हाथ जोड़कर कहने लगा कि हे गुरुदेव ! मेरा मेरी पत्नी कनकमाला के ऊपर इतना प्रेम क्यों है इसका कारण क्या है, सो कहो ।

तब मुनिराज कहने लगे कि हे कुमारकांत पूर्व भव में तुमने व्रतोद्यापन में नवीन वस्त्र देकर पुण्य संपादन किया था, उसी पुण्य से वह तुम्हारी पत्नी हुई है, इसी कारण से तुम्हारा प्रेम उसके ऊपर ज्यादा है, वो राजा की पट्टरानी पद्मावती थी, वो मरकर वैश्या हुई है, यह सब भवान्तर मुनि के मुख से सुनकर सबको पूर्व भव का स्मरण हो गया और सब लोग सम्यग्दृष्टि हो गये ।

पुनः सब लोगों ने व्रत को ग्रहण किया, सब लोग वापस घर को आ गये, व्रत को अच्छी तरह से पालकर उद्यापन किया । उस वैश्या ने भी व्रत को पाला और संन्यासमरण से मरकर स्त्रीलिंग का छेदन करके सौधर्म स्वर्ग में अमरेन्द्र देव हुआ, कुमारकांत और कनकमाला भी समाधिमरण से मरकर अच्युत स्वर्ग में इन्द्रप्रतीन्द्र होकर सुख भोगने लगे ।

पंच सूनानिवारण व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला पंचमी को स्नान कर शुद्ध हो, जिनमन्दिरजी में जावे, तीन प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि प्रतिमा और पद्मप्रभ तीर्थंकर प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, एक पाटे पर पांच पान लगाकर ऊपर अक्षतादि रखकर, पांच प्रकार के नैवेद्य से पूजा करे ।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, उस दिन को धर्म ध्यान से बितावे । मुनिमहाराजादिक को दान देकर स्वयं पारणा करे, शक्ति न हो तो पांच वस्तु से एकाशन करे ।

इसी प्रकार प्रत्येक महिने की उसी तिथि को व्रत पूर्वक पूजा करे, कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि का महाभिषेक करके चतुर्विध संघ को आहारदानादि देवे ।

कथा

इस भरत क्षेत्र के कनकपुर नगर में नागकुमार केवली की गंध कुटी आई, वहां का राजा देवकुमार अपने परिवार सहित भगवान के दर्शन को गया, जाकर राजा ने भगवान से पंच सूनानिवारण व्रत ग्रहण किया, यथाविधि व्रत का पालन कर जिनदीक्षा ग्रहण कर मोक्ष को गया ।

पंच संसार व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला पंचमी के दिन शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा पूर्वक नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक नारियल सहित पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, सत्पात्रों को दान देवे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, दूसरे दिन दान देकर स्वयं पारणा करे, उपवास करने की शक्ति नहीं होने पर पांच वस्तु से पारणा करे, पंचपरावर्तन नष्ट करने के लिये पांच माला णमोकार मन्त्र की फेरे ।

इस प्रकार प्रत्येक महिने की पंचमी को व्रत कर पूजा करे, कार्तिक शुक्ला पंचमी को उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि विधान करके महाभिषेक करे, पांच मुनियों को आहारादि देवे, पांच शास्त्र भेंट करे, यथायोग्य सबको दान देवे ।

कथा

इस व्रत को राजा पाण्डु और कुन्ती ने पालन किया था, व्रत के प्रभाव से दीक्षा लेकर स्वर्ग के सुख भोग रहे हैं ।

इस व्रत की कथा राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

पर्वमंगल व्रत कथा

बैशाख शुक्ला एकम से तृतीया तक नित्य शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे ।

आदिनाथ भगवान की मूर्ति स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, यक्षयक्षिणी की व क्षेत्रपाल की पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, दीप जलावे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदिनाथ तीर्थंकराय गौमुखयक्ष चक्रेश्वरी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, सत्पात्रों को दान देवें ।

इस प्रकार इस व्रत को तीन वर्ष तक करे, या तीन महिने करे या तीन पक्ष करे, अपनी शक्ति प्रमाण व्रत करके अंत में उद्यापन करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

मथुरा नगरी के राजा जयवर्मा की रानी जयावंति ने एक बार इस व्रत का पालन किया था, उसके प्रभाव से, उसके यहां व्याल महाव्याल नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुये, रानी ने अंत में दीक्षा लेकर तपस्या की, समाधिमरण कर स्वर्ग में देव हुई ।

पर्वसागर व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला दशमी के दिन शुद्ध होकर जिनमन्दिर जावे, भगवान को नमस्कार करे, शीतलनाथ तीर्थंकर व यक्षयक्षि सहित भगवान का पंचामृत अभिषेक करे । फिर पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शीतलनाथ तीर्थंकर ईश्वर यक्ष मानवी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ्य पूर्वोक्त विधि से चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, यथाशक्ति उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, आहार दान देवे ।

इस प्रकार दस महिने तक इसी तिथि को व्रत और पूजा करे, उस समय शीतलनाथ तीर्थंकर का विधान करे, महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

इस व्रत को वसुदेव ने किया था, उन्हीं की कथा पढ़े । कृष्ण पुराण और वसुदेव कथा पढ़े ।

पुण्यसागर व्रत कथा

आषाढ़ व कार्तिक अथवा फाल्गुन की अष्टान्हिका में किसी भी अष्टान्हिका की सप्तमी को शुद्ध होकर मन्दिर जावे, भगवान को नमस्कार करे, नवदेवता और पंचपरमेष्ठि भगवान का पंचामृताभिषेक करे, उनकी पूजा करे, श्रुत व गणधर व यक्षयक्षी व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, पूर्वोक्तविधि से मंगल आरती उतारे, उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, दानादि देकर स्वयं सप्तमी से नवमी पर्यन्त पांच वस्तु से एकाशन करे, अष्टमी का उपवास करे, इस प्रकार चार महिने तक प्रत्येक अष्टमी चतुर्दशी के दिन व्रतपूर्वक भगवान की पूजा करे, आगे की अष्टान्हिका में व्रत का उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि की एक नवीन प्रतिमा तैयार कराकर प्रतिष्ठा करावे, महाभिषेक करे, विधान करें, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

इस व्रत को सेठ सुदर्शन ने पालन किया था, इसलिये सुदर्शन कथा पढ़े।

पंच श्रुत ज्ञान व्रत

यह व्रत ३३६ दिन में पूर्ण होता है। इसमें १६८ उपवास व १६८ पारणे होते हैं, एक उपवास एक पारणा इस क्रम से यह व्रत करना चाहिये। इस व्रत में "ॐ ह्रीं श्रुत ज्ञानाय नमः" इस मन्त्र का १०८ बार जाप करना चाहिये, व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए।

(जैन व्रत विधान संग्रह)

अथ श्रीपंचमी व्रत कथा

व्रत विधि—आषाढ़ शुक्ला पंचमी के दिन इस व्रत वाले प्रातःकाल स्नान करके सोला का कपड़ा पहनकर, सर्व प्रकार का पूजा साहित्य अपने हाथ में लेकर जिन-मन्दिर में जावे, वहां जाकर क्रिया करना चाहिये, जिनेन्द्रप्रभु के आगे घी का दीपक जलावे, जिनेन्द्र प्रतिमा जो यक्षयक्षि व अष्टप्रातिहार्य सहित हो उस प्रतिमा का पञ्चामृत अभिषेक करना व अष्टद्रव्य से पूजा करना।

"ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा।"

इस मन्त्र से १०८ बार सुगन्धित पुष्पों से जाप्य करे, और १०८बार णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, उसके बाद श्रुत, गुरु की पूजा करना, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल का यथायोग्य सम्मान करना (अर्चन करना) उसके बाद पूर्ण अर्घ्य करके

मंगल आरती करे, फिर घर जाकर आहारदान सत्पात्रों को देवे, स्वयं उपवास करे, सायंकाल दीपधूप से पूजा करके, जिनसहस्रनामादि स्तोत्र बोलकर, स्वाध्यायादिक करे, उसी प्रकार धर्मध्यान में समय निकाले, दूसरे दिन पूजाभिषेक क्रिया करके सद्पात्रों को आहारादि दान देकर पारणा करे, इस प्रकार प्रत्येक महिने में उसी तिथि को पूजा करके व्रत करे, इस प्रकार इस व्रत को पांच वर्ष, पांच महीने तक करना चाहिए, यह उत्कृष्ट विधि है। पांच वर्ष तक करना मध्यमविधि है और पांच महिने तक मात्र करना जघन्य विधि है, इस प्रकार इस व्रत को उत्तम, मध्यम, जघन्य किसी भी प्रकार करने के बाद उद्यापन करना चाहिये, उस समय तीर्थंकर की आराधना करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को आहारादि चारों प्रकार के दान को देवे, इस प्रकार इस व्रत का विधान है।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में वसंततिलक नाम का एक सुन्दर नगर है, वहां सत्पति नाम का एक पराक्रमी नीतिवान व गुणशाली ऐसा राजा सुख से राज्य करता था। उस राजा की मनोहर गुणवान, सुन्दरी प्रियादेवी नाम की पट्टरानी थी, उसी नगर में कोदंड नाम का एक ब्राह्मण रहता था, लेकिन वह ब्राह्मण दीन दरिद्र था, उस ब्राह्मण के प्रिया व कमला नाम की दो स्त्रियां थीं, उसके श्री और संपति ये दो कन्याऐं थीं, कालक्रम से एक दिन कोदंड ब्राह्मण यमराज के मुख में चला गया अर्थात् मर गया। तब कमला नाम की स्त्री पतिवियोग से बहुत ही दुःखी रहने लगी। सौभाग्य के खंडित हो जाने पर निस्तेज हो गई, पति के मर जाने पर उसको बहुत ही दीन अवस्था प्राप्त हुई, इसलिये उदरपूर्ति के लिये अन्य लोगों के घर जाकर काम करके स्वयं का और दोनों पुत्रियों का पेट भरने लगी, इस प्रकार समय बिताने लगी।

एक दिन सोतश्री के पिता की बहन कमला के पास आकर श्री की निन्दा करने लगी तब कमला श्री के ऊपर क्रोधित हुई, तब वह श्री उसी समय वहां से घर से बाहर निकली, तब उसको नगर निवासियों से मालूम हुआ कि नगर के उद्यान में दमवर महामुनिश्वर पधारे हुये हैं। ऐसा जानते ही श्री मुनिराज के दर्शन को उद्यान में गई और मुनिराज के चरणों में भक्ति से नमस्कार करके बैठ गई।

मुनिराज के मुंह से धर्मोपदेश सुनकर, श्री ने हाथ जोड़कर विनय से कहा हे संसार से पार उतारने वाले स्वामी, आप मुझे मेरे दारिद्र को नाश करने के लिये कुछ उपाय कहो।

मुनिराज ने उस कन्या के विनय सहित वचन को सुनकर देखा कि उसको अन्य व्रत करने की शक्ति नहीं है ऐसा जानकर कहने लगे कि हे कन्ये तुमको श्रुत पंचमी व्रत करना चाहिए, सुनकर उस कन्या को बहुत ही आनन्द हुआ, मुनिराज को भक्ति से नमस्कार कर उस कन्या ने जघन्यरूप से श्रुत पञ्चमी व्रत को स्वीकार किया, और घर आकर व्रत की महिमा और व्रत का स्वरूप मां और बहन को कह सुनाया, सुनकर वो दोनों भी आनन्दित हुई। तब कालक्रम से उन तीनों ने व्रत को विधिपूर्वक पालन किया, आगे वो तीनों सुख से रहने लगी।

कुछ दिन बाद वह कमला मरण को प्राप्त हुई, मरकर इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में एक शुभ देश है उस देश में ब्रह्मपुर नामक एक मनोहर गांव है वहां पहले एक देवसेन नाम का राजा राज्य करता था। उसके जयावती नाम की एक महाराणी थी, उस महारानी के उदर से उस कमला नाम की स्त्री ने व्रत के प्रभाव से प्रभंजन पुत्र के रूप में जन्म लिया, और सम्पति स्त्री ने भी मरकर भरत क्षेत्र के पूर्व देश में पुण्यपुर नगर में पुण्य के प्रभाव से पूर्णभद्र नाम का राजा होकर जन्म लिया। उसी प्रकार कोदंड ब्राह्मण की बहन संप्राप्ति भी भर कर पूर्णभद्र राजा की पृथ्वी-देवी नाम की बहन हुई।

आगे वही पृथ्वीदेवी उस देवसेन राजा का पुत्र जो प्रभंजन था, उसकी वह भार्या हुई, दोनों दम्पति कालक्रम से सुखों को भोगते हुए पूर्वोक्त श्री के जीव ने मरकर व्रतोपवास के पुण्यफल से उस पृथ्वीदेवी के गर्भ से सरल नाम का राजकुमार होकर जन्म लिया।

इस प्रकार कमला, संपत्ति, श्री ये तीनों जीव कालक्रम से समय व्यतीत करते रहे, एक दिन पृथ्वीदेवी रानी कुमति नाम के मन्त्री को देखकर मन्त्री के ऊपर आसक्त हो गई और वह उसकी सहायता से पूर्व वैरानुसार अपने पति का व पुत्रों का वध करने के लिए उपाय करने लगी, उस स्त्री की दुष्टप्रवृत्ति को देखकर प्रभंजन

और सरलकुमार दोनों ने संसार शरीर और भोगों से विरक्त होकर श्रीवर्द्धन मुनिश्वर के पास जाकर जिनदीक्षा ग्रहण करली, उसके साथ पूर्णभद्र राजा ने भी विरक्त होकर जिनदीक्षा ग्रहण कर ली और तीनों ही मुनिराज बारह प्रकार का तप और छह आवश्यक क्रिया, तीन गुप्ति दर्शनादि पञ्चाचार व पांच समिति इत्यादि गुणों का पालन करने में तत्पर हो गये ।

घोर तपस्या करने से तीनों ही महामुनि अनेक ऋद्धिसंपन्न हो गये, और देश देशान्तरों में विहार करने लगे । पूरमताल पर्वत के ऊपर कायोत्सर्ग मुद्रा में रह कर धर्मध्यान से मरण कर अच्युत स्वर्ग में देव होकर जन्म ग्रहण किया । आगे अच्युत स्वर्ग को आयुष्य को सुखपूर्वक भोगकर मरे और एक भवातारी होकर जन्में । मनुष्यभव पाकर जिनदीक्षा ग्रहण करके घोर तपस्या करने लगे, कर्मों को काट कर शाश्वत सुखरूप मोक्ष को प्राप्त किया ।

श्रुत पञ्चमी व्रत विधान और विधान की कथा गौतम स्वामी के मुख से सुनकर श्रेणीकादि को बहुत आनन्द हुआ, तब उस चेलना देवी ने गौतम स्वामी को नमस्कार करके श्रुत पञ्चमी व्रत को स्वोकार किया, उसके बाद भगवान महावीर को और गौतम स्वामी को नमस्कार करके राजा श्रेणिक प्रजाजनों के साथ राजग्रही नगरी में वापस लौट गया ।

आगे कालानुसार रानी चेलना ने व्रत को विधिनुसार पालन कर उद्यापन किया, फिर कुछ ही समय बाद आर्यिका दीक्षा लेकर उत्तम तपश्चरण कर स्त्रीलिंग का छेदनकर स्वर्ग में महान ऋद्धिधारी देव हुई । वहां वो बहुत हो देवों के सुख भोग रही है, इसलिए हे भव्यो ! आप भी इस व्रत का अच्छी तरह पालन करो, जिससे स्वर्ग सुख की प्राप्ति करते हुए क्रम से मोक्ष सुख की प्राप्ति करो ।

श्रुतपंचमी व्रत कथा

ज्येष्ठ सुदी पञ्चमी श्रुत-पञ्चमी है, इस दिन श्री भूतबली व पुष्पदंत मुनी ने धवल जयधवल और महाधवल इन मूल ग्रन्थों की षटखण्डागम पुस्तक की रचना की । उस दिन पूर्ण होने से उसकी पूजा की (देखो श्रुतस्कंध विधान) इसलिए प्रत्येक वर्ष प्रोषध उपवास करना चाहिए । १७ वर्ष यह तक व्रत करना चाहिए । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए ।

इसको दूसरी विधि :—ज्येष्ठ वदि पंचमी को उपवास करना, यह व्रत ५ वर्ष तक करना, उसको स्कंध श्रुत पंचमी भी कहते है ।

इस दिन जिनवाणी की पूजा करना, ग्रन्थ की रथ यात्रा निकालना, इसकी कथा पढ़ना । प्रत्येक श्रावक को अपने घर में रखे शास्त्र ठीक करना व उसकी पूजा करनी चाहिए, श्रुत पट ग्रन्थ पर श्री इन्द्रनंदी आचार्य ने लिखा है उसमें जिनधर्म का प्रचार कैसे हुआ उसका वर्णन है व उसकी उन्नति किसने की ग्रन्थ किसने किया व ग्रंथ की रचना कैसे हुई इसका इतिहास दिया है । वह पढ़ना चाहिए ।

कथा

धरसेन भूतबलि पुष्पदंताचार्य की कथा पढ़े ।

पञ्चमन्दर व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन महिने में आने वाले नंदीश्वर पर्व में सप्तमी को एकाशन करे, अष्टमी को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, मण्डप शृंगार करके पंच मन्दर की रचना करे, नन्दीश्वर प्रतिमा व अन्य कोई भी प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, पंचमेरु की अष्ट द्रव्य से अलग-अलग पूजा करे ।

ॐ ह्रीं पंचमेरु स्थित समस्त जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे उस दिन उपवास, एकाशन, वस्तु परिसंख्यान यथाशक्ति करे, सत्पात्रों को दान देवे, इस प्रकार प्रतिदिन पौर्णिमा पर्यन्त करे, इस प्रकार पांच अष्टान्हिका के अन्दर पूजा करने पर अन्त में उद्यापन करे, पंचमेरु विधान खूब ठाठ से करे, इसके मन्त्र आगे लिखे अनुसार हैं ।

१ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुपूर्वभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा अत्र आगच्छत २ संवौषट् आह्वाननं । ॐ अत्र तिष्ठत २ ठ ठ स्थापनं । ॐ अत्र मम सन्निहिता भव २ वषट् सन्निधीकरणं ।। ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुपूर्वभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो जलं निर्वपामि स्वाहा ।। एवं गंधादिष्वपि योज्यं ।। २ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुपूर्वनंदनवन-

जिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा अत्रागच्छत २ इत्याद्याव्हानादि० ॐ ह्रीं०—जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ३ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुपूर्वसौमनसवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा अत्रागच्छत २ इत्याव्हानादिकं । ॐ जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि । ४ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुपांडुकवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं ॐ०—जिनबिंबेभ्योजलमित्यादि० । ५ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुदक्षिणभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा अत्रागच्छत २ इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं–जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० ॥ ६ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुदक्षिणनंदनवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा अत्रागच्चत २ इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं०-जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ७ । ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुदक्षिणसौमनसवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबाइत्याव्हानादि० ॐ ह्रीं०–जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ८ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुदक्षिणपांडुकवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ०–जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ९ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुपश्चिम भद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा अत्रागच्छत २ इत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं०–जिनबिंबेभ्योजलमि० । १० ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुपश्चिमनंदनवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्यादि आव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं–जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ११ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुपश्चिमसौमनसवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० १२ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुपश्चिम पांडुकवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० ॐ ह्रीं०–जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । १३ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरूत्तर भद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं०–जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । १४ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरूत्तरनंदनवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं०–जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । १५ ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरूत्तरसौमनसवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० ॐ ह्रीं०–जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । १६ ॐ सुदर्शनमेरूत्तरपांडुकवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं०–जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि । १७ ॐ ह्रीं विजयमेरूपूर्वभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि १८ ॐ ह्रीं विजयमेरूपूर्वनंदनवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । १९ ॐ ह्रीं विजयमेरूपूर्वसौमनसवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा

इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि । २० ॐ ह्रीं विजयमेरू पांडुकवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जल-मित्यादि० । २१ ॐ ह्रीं विजयमेरू दक्षिणभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । २२ ॐ ह्रीं विजयमेरूदक्षि-णनंदनवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जल-मित्यादि० । २३ ॐ ह्रीं विजयमेरूदक्षिणसौमनसवनवजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । २४ ॐ ह्रीं विजयमेरूद-क्षिण पांडुकवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । २५ ॐ ह्रीं विजयमेरू पश्चिमभद्रसालवनजिनचैत्यालस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । २६ ॐ ह्रीं विजयमेरू पश्चिमनंदनवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । २७ ॐ ह्रीं विजयमेरूपश्चिमसौमसवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि । २८ ह्रीं विजयमेरूपश्चिम-पांडुकवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । २९ ॐ ह्रीं विजयमेरूत्तरभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ३० ॐ ह्रीं विजयमेरूत्त-रनंदनवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जल-मित्यादि० । ३१ ॐ ह्रीं विजयमेरूत्तरसौमसवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हा-नादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ३२ ॐ ह्रीं विजयमेरूत्तारपांडुकव-नजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० ३३ ॐ ह्रीं अचलमेरूपूर्वभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ३४ ॐ ह्रीं अचलमेरुपूर्वनंदनवनजिनचैत्या-लयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ३५ ॐ ह्रीं अचलमेरसौमनसवन जिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं०-जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ३६ ॐ ह्रीं अचलमेरुपूर्वपांडुकवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं–जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ३७ ॐ ह्रीं

अचलमेरुदक्षिणभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ३८ ॐ ह्रीं अचलमेरुदक्षिणनंदनवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ३९ ॐ ह्रीं अचलमेरुदक्षिण सौमनसवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ४४ ॐ ह्रीं अचलमेरुपश्चिमपांडुकवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० ४५ । ॐ ह्रीं अचल-मेरूत्तरभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबि-बेभ्यो जलमित्यादि० । ४६ ॐ ह्रीं अचलमेरूत्तरनंदवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ४७ ॐ ह्रीं अचलमेरूत्तर-सौमनसवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ४८ ॐ ह्रीं अचलमेरूत्तरपांडुकवन जिनचैत्यालयस्थित जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि । ४९ ॐ ह्रीं मंदरमेरूपूर्वभद्र-सालवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमि-त्यादि० । ५० ॐ ह्रीं मंदरमेरूपूर्वनंदनवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ५१ ॐ ह्रीं मंदरमेरूपूर्वसौमनसवनजिन-चैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ५२ ॐ ह्रीं मंदरमेरूपूर्वपांडुकवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ५३ ॐ ह्रीं मंदरमेरूदक्षिणभद्रसालवनजिनचैत्या-लयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ५४ ॐ ह्रीं मंदरमेरूदक्षिणनंदनवनजिनचैत्यालस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ५५ ॐ ह्रीं मंदरमेरूदक्षिणसौमनसवनजिनचैत्यालयस्थ-जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ५६ ॐ ह्रीं मंदरमेरूदक्षिणपांडुकवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ५७ ॐ ह्रीं मंदरमेरूपश्चिमभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ५८ ॐ ह्रीं मंदरमेरूपश्चिमनंदनवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिन-

बिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ५९ ॐ ह्रीं मंदरमेरूपश्चिमसौमनसजिनालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ६० ॐ ह्रीं मंदरमेरूपश्चिम-पांडुकवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जल-मित्यादि० । ६१ ॐ ह्रीं मंदरमेरूत्तरभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हा-नादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ६२ ॐ ह्रीं मंदरमेरूत्तरनंदनवन-चैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ६३ ॐ ह्रीं मंदरमेरूत्तरसौमनसवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादिकं । ६४ ॐ ह्रीं मंदरमेरूत्तरपांडुकवनजिनचैत्यालयस्थ-जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ६५ ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरूपूर्वभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ६६ ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुपूर्व नंदनवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबाइत्याव्हानादिकं ।। ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० ।। ६७ ॐ ह्रीं विद्युन्मालिपूर्वमेरूसौमनसवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ६८ ॐ ह्रीं विद्युन्मालिपूर्वपांडुकवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबाइत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं जिनबिंबे-भ्यो जलमित्यादि० । ६९ ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरूदक्षिणभद्रसालवनजिनचैत्यालयस्थ-जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ७० ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरूदक्षिणनंदनवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ७१ ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरूदक्षिणसौमनसवनजिनचैत्या-लयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादि० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ७२ ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरूदक्षिणपांडुकवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादि० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ७३ ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरूपश्चिमभद्रसालवन-जिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमि० । ७४ ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरूपश्चिमसौमनसवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० ७६ ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरूपश्चिमपांडुकवन-जिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० ७७ ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरूत्तरभद्रसालवन जिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादि-कं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ७८ ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरूत्तरनंदन-

वनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं । ॐ ह्रीं जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ७९ ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरूत्तरसौमनसवनजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबा इत्याव्हानादिकं० । ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । ८० ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरूत्तरपांडुकवनजिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबा इत्याव्हानादिकं ।। ॐ ह्रीं० जिनबिंबेभ्यो जलमित्यादि० । पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, ॐ ह्रीं पंचमेरुस्थित समस्तजिनचैत्यालयेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामि स्वाहा । अब श्रुत व गणधर पूजा करके यक्ष, यक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करे । ॐ ह्रीं पंचमेरुस्थित समस्तजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा ।

इन मन्त्रों से १०८ पुष्पों से जाप्य करे, चतुर्विध संघ को दान देवे, महाभिषेक करे ।

कथा

कासापुर नगर के धनसेन राजा की कुसुमावली नाम की पुत्री ने इस व्रत को अच्छी तरह से पालन किया, व्रत के प्रभाव से उसको धर्मराज युधिष्ठिर सरोखा पति मिला अन्त में वह आर्यिका दीक्षा ग्रहण कर घोर तपश्चरण कर समाधिमरण कर स्वर्ग में इन्द्र हुई । आगे क्रमशः मोक्ष को जायेगी । इस की कथा पांडव पुराण में प्रसिद्ध है, वहां पढ़े ।

अथ प्रमत्तगुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :---पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ शुक्ला ३ के दिन एकाशन करे, ४ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, ६ दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे, जिन बिम्ब, जिनालय, जिनपूजा, तीर्थ यात्रा दान, शास्त्र लिखने, प्रतिष्ठा महोत्सव आदि में धन खर्च करे ।

कथा

पहले सुरम्य नगरी में सुरेन्द्र राजा अपनी महारानी सुरमा के साथ रहता था, उसका पुत्र मदन, उसकी स्त्री सुमती, पुरोहित श्रेष्ठ, सेनापति वगैरह पूरा परिवार

सुख से रहता था। एक बार उन्होंने सुमतिसागर महामुनि से व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गये।

अथ पंचेन्द्रिय जातिनिवारण व्रत कथा

विधि :— चैत्र शुक्ला ४ को एकाशन और ५ को उपवास करना, सुमतिनाथ तीर्थंकर की पूजा मन्त्र जाप करना चाहिये, पत्ते रखना चाहिए, और सब विधि पूर्ववत है।

पुरन्दर व्रत

यह व्रत किसी भी महिने में कर सकते हैं। परन्तु वर्ष में एक बार ही कर सकते हैं। इसका क्रम सुदी प्रतिपदा से सुदी अष्टमी तक है। इन आठ दिन में प्रतिपदा और अष्टमी को प्रोषधोपवास करना व बचे दिनों में एकाशन (एक भुक्ति) करना। या एक उपवास एक एकाशन (प्रतिपदा को उपवास द्वितीय को एकाशन) ऐसा क्रम से आठ दिन करना। यह व्रत लेने पर बीच में छोड़ना नहीं चाहिए लगातार १२ वर्ष करना चाहिए। पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए, उद्यापन नहीं होने पर दूसरी बार करना चाहिए।

क्रियाकोष में कहा है कि किसी भी महिने की सुदि प्रतिपदा से अष्टमी तक आठ उपवास करना चाहिए। इन आठ दिनों में गृहारम्भ का त्याग कर मन्दिर में जाकर भगवान जिन्द्रदेव का अभिषेक विधि पूर्वक करना चाहिए। फिर पूजा स्तवन मंत्र जाप वगैरह क्रिया करना चाहिये। नव दिन एकाशन करना। व्रतों के दिनों की रात्रि धर्मध्यान पूर्वक बितावे। भजन स्वाध्याय मनन आदि करना चाहिए। रात्रि के मध्यभाग में थोड़ी सी नींद लेनी चाहिए। फिर उठकर सामायिक करना चाहिए।

इन आठ दिनों में स्नान, तैल मर्दन, दन्त धावन वगैरह क्रिया का त्याग कहा है। सब उपवास करने की शक्ति नहीं है तो पहले चार उपवास कर एकाशन करना चाहिए और एक ही अनाज खाना चाहिए।

पुरन्दर व्रत विधि

अथ पुरन्दर व्रतमाह-यत्र तत्र क्वचिन्मासे समारभ्य शुक्लपक्षे प्रतिपदामार-

म्याष्टमीपर्यन्तं कार्यम् । अत्र प्रतिपदाष्टम्योः प्रोषधं शेषमेकभुक्तञ्च वा एकान्तरेण व्रतं कार्यम् । एतद्व्रतमनियतमासिकं नियतपाक्षिकं द्वादशमासिकं ज्ञेयम् । फलञ्चैतत्—

दारिद्रयमृगशार्दूलं मूलं मोक्षश्च निश्चलम् ।
पुरन्दरविधिं विद्धि सर्वसिद्धिप्रदं नृणाम् ।। १ ।।

अर्थ :—पुरन्दर व्रत का स्वरूप कहते हैं–किसी भी महीने में शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से अष्टमी तक पुरन्दर व्रत का पालन किया जाता है । प्रतिपदा और अष्टमी का प्रोषध तथा शेष दिनों में एकाशन अथवा एकान्तर से उपवास और एकाशन करने चाहिए । अर्थात् प्रतिपदा का उपवास, द्वितीया का एकाशन । तृतीया उपवास चतुर्थी का एकाशन, पंचमी का उपवास षष्ठी का एकाशन, सप्तमी का उपवास और अष्टमी का एकाशन किये जाते हैं । यह व्रत अनियत मासिक और नियत पाक्षिक है क्योंकि इसके लिए कोई भी महीना निश्चित नहीं है, पर शुक्ल पक्ष निश्चित है । इसका फल निम्न है—

पुरन्दर व्रत दरिद्रता रूपी मृग को नष्ट करने के लिए सिंह के समान है और मोक्षरूपी लक्ष्मी की प्राप्ति के लिए मूल कारण है अर्थात् इस व्रत के पालन करने से निश्चय ही मोक्ष लक्ष्मी की प्राप्ति होती है । तथा यह व्रत मनुष्यों को सभी प्रकार की सिद्धियां प्रदान करता है । अभिप्राय यह है कि पुरन्दर व्रत का विधि पूर्वक पालन करने से रोग, शोक, व्याधि व्यसन सभी दूर हो जाते हैं तथा कालान्तर में परम्परा से निर्वाण की प्राप्ति होती है ।

विवेचन :—क्रिया कोष में बताया गया है कि पुरन्दर व्रत में किसी भी महीने की शुक्ल प्रतिपदा से लेकर अष्टमी तक लगातार आठ दिन का प्रोषध करना चाहिए । आठों दिन घर का समस्त आरम्भ त्यागकर जिनालय में भगवान जिनेन्द्र का अभिषेक, पूजन, आरती एवं स्तवन आदि करने चाहिए । आठ दिन के उपवास के पश्चात् नवमी तिथि को पारणा करने का विधान है । यह काम्य व्रत है, दरिद्रता एवं रोग शोक को दूर करने के लिए किया जाता है । व्रत के दिनों में रात्रि को धर्मध्यान करना रात्रि जागरण, करना, जिनेन्द्र प्रभु की आरती उतारना एवं भजन पढ़ना आदि क्रियाएं भी करना आवश्यक है । रात के मध्य भाग में अल्प निद्रा लेना

तथा जिनेन्द्र प्रभु के गुणों का चिन्तन करना और सामायिक स्वाध्याय करना भी इस व्रत की विधि के भीतर परिगणित हैं। प्रोषध के दिनों में स्नान, तेल मर्दन आदि क्रियाओं का त्याग करना चाहिए। यदि आठ दिन तक लगातार उपवास करने की शक्ति न हो तो चार दिन के पश्चात् पारणा कर लेनी चाहिए। पारणा में एक ही अनाज तथा एक प्रकार की वस्तु लेनी चाहिए। जिनमें उपर्युक्त प्रकार से व्रत करने की शक्ति न हो वे अष्टमी और प्रतिपदा का उपवास करे तथा शेष दिन एकाशन करे। अन्य धार्मिक क्रियाएं समान हैं, स्नान करने वाले को द्रव्य पूजा और स्नान न करने वाले श्रावक को भाव पूजा करनी चाहिए। व्रत के दिनों में प्रतिदिन णमोकार मन्त्र का १००८ बार जाप करना चाहिए। एकाशन के दिन तीन बार प्रातः, दोपहर और सन्ध्या को १००८ बार णमोकार मन्त्र का जाप करना चाहिए।

पञ्चमास चतुर्दशी व्रत, शीलचतुर्दशी और रूपचतुर्दशी व्रत

पञ्चमासचतुर्दशी तु शुचिश्रावणभाद्रआश्विनकार्तिक मास शुक्ल चतुर्दशी-पर्यन्तं कार्या, ज्ञेया एषा पञ्चमासचतुर्दशी, बृहती मासं मासं प्रति चतुर्दशीशुक्ला सा मासचतुर्दशी तां पर्यन्त कार्याः पञ्चोपवासाः। व्यतिरेकेण शीलचतुर्दशीरूप्यचतुर्दशी-मारभ्य कार्तिक शुक्लचतुर्दशीपर्यन्तं दशोपवासाः कार्या, भवन्ति।

अर्थ :—पञ्चमासचतुर्दशी आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक इन मासों की शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को व्रत करना कहलाता है। इन व्रतों में प्रत्येक महीने में एक ही शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को उपवास करना पड़ता है। पांच ही उपवास किये जाते हैं। विशेष रूप से आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक इन महिनों में दोनों ही चतुर्दशियों को उपवास करना, इस प्रकार उक्त पांच महीने में दश उपवास करना तथा रूपचतुर्दशी और शीलचतुर्दशी के उपवासों को भी शामिल करना पञ्च चतुर्दशी व्रत है। आषाढ़ मास की अष्टान्हिका की चतुर्दशी को रूप-चतुर्दशी कहते हैं। पञ्चमास चतुर्दशी का प्रारम्भ शीलचतुर्दशी से किया जाता है।

विवेचन :—मासिक व्रत उन व्रतों को कहा जाता है, जो वर्ष में कई महीने अथवा एक-दो महीने तक किये जायें। मासिक व्रत प्रायः महीने में एक बार ही किये जाते हैं। कुछ व्रत ऐसे भी हैं जिनके उपवास एक महीने की कई तिथियों में करने

पड़ते हैं। आचार्य ने ऊपर पञ्चमास चतुर्दशी का स्वरूप बतलाते हुए दो मान्यतायें रखी हैं। प्रथम मान्यता में आषाढ़ से लेकर कार्तिक तक पाँच महीनों की शुक्ला चतुर्दशी को उपवास करने का विधान किया है। इस मान्यता के अनुसार कुल पांच उपवास करने पड़ते हैं।

दूसरी मान्यता के अनुसार उपर्युक्त पांच महिनों में दस उपवास करने को पञ्चमास चतुर्दशी व्रत बताया गया है। इन दस उपवासों में शीलव्रत चतुर्दशी के और रूप चतुर्दशी के व्रत भी शामिल कर लिये गये हैं। आषाढ़ सुदी चतुर्दशी को शीलचतुर्दशी कहा जाता है, इस दिन शील व्रत की महत्ता को दिखाने के कारण ही इस व्रत को शीलचतुर्दशी व्रत कहा गया है। शीलचतुर्दशी के करने वाले को 'ॐ ह्रीं निरतिचारशीलव्रतधारकेभ्योऽनन्तमुनिभ्यो नमः।' मन्त्र का जाप करना चाहिए। इस व्रत को करने वाले को त्रयोदशी से शीलव्रत धारण करना होता है। और पूर्णमासी तक निरतिचार रूप से व्रत का पालन करना होता है।

रूप चतुर्दशी श्रावण सुदी चतुर्दशी को कहते हैं। इस चतुर्दशी को प्रोषधोपवास करना पड़ता है तथा भगवान आदिनाथ का पूजन-अभिषेक कर उन्हीं के अतिशय रूप का दर्शन करना चाहिए। अथवा किसी भी तीर्थंकर की प्रतिमा का पूजन अभिषेक कर उनके रूप का दर्शन करना चाहिए। इस व्रत की भी पूर्णिमा को पारणा करनी पड़ती है। इसके लिए 'ॐ ह्रीं श्रीवृषभाय नमः' मन्त्र का जाप करना पड़ता है।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

पौष्य कल्याण व्रत

पौष महिने के सुदी पक्ष में सप्तमी से यह व्रत शुरू करना। सप्तमी को एकाशन अष्टमी को एकभुक्ति करना नवमी को एक समय भोजन करना चाहिए। दशमी को कांजिकाहार और एकादशी को उपवास करना। इस व्रत में अभिषेक पूजा करनी चाहिये, रात में जागरण करके स्तुतिपाठ बोलना चाहिये। भजन आदि

करना चाहिये। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना, उद्यापन की शक्ति न हो तो व्रत दूना करना चाहिये।

—गोविन्द कविकृत वृतनिर्णय

अथ परिहारविशुद्धि चारित्र व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है १४ के दिन एकाशन करे। १५ के दिन उपवास करे। पूजा वगैरह पहले के समान करे। १५ दम्पतियों को भोजन करावे। वस्त्र आदि दान करे। १०८ फल, पुष्प, केले अर्पण करे। जिनमन्दिर के दर्शन करे।

कथा

पहले सुरेन्द्रपुर नगरी में सुरेन्द्रसेन राजा सुरसुन्दरी अपनी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र सुरेन्द्रकांत उसकी स्त्री सुरकांता, और शिवाय सुरेन्द्रकीर्ति पुरोहित उसकी स्त्री सुरत्नभूषणा सारा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने सुरकीर्ति और विशालकीर्ति मुनि से व्रत लिया। उस व्रत का विधिपूर्वक पालन किया। सर्वसुख को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गए।

पुष्पाञ्जलि व्रत की विधि

पुष्पाञ्जलिस्तु भाद्रपदशुक्ला पञ्चमीमारभ्य शुक्लानवमीपर्यन्त यथाशक्ति पञ्चोपवासाः भवन्ति ॥

अर्थ :—पुष्पाञ्जलि व्रत भाद्रपद शुक्ला पञ्चमी से नवमी पर्यन्त किया जाता है। इसमें पांच उपवास अपनी शक्ति के अनुसार किये जाते हैं।

विवेचन :—भादों सुदी पञ्चमी से नवमी तक पांच दिन पंचमेरु की स्थापना करके चौबीस तीर्थंकरों की पूजा करनी चाहिए। अभिषेक भी प्रतिदिन किया जाता है। पांच अष्टक और पांच जयमाला पढ़ी जाती हैं। '**ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनालयेभ्यो नमः**' मन्त्र का प्रतिदिन तीन बार जाप किया जाता है। यदि शक्ति हो तो पांचों उपवास, अन्यथा पञ्चमी को उपवास, शेष चार दिन रस त्याग कर एकाशन करना चाहिए। रात्रि जागरण विषय कषायों के अल्प करने का

प्रयत्न अवश्य करना चाहिए। विकथाओं को कहने और सुनने का त्याग भी इस व्रत के पालने वाले को करना आवश्यक है। इस व्रत का पालन पांच वर्ष तक करना चाहिए, तत्पश्चात् उद्यापन करके व्रत की समाप्ति कर दी जाती है।

पुष्पाञ्जलि व्रत की विशेष विधि और व्रत का फल

पूर्वकथितपुष्पाञ्जलिव्रतं पञ्चदिनपर्यन्तं करणीयम्। तत्र केतकीकुसुमादिभिः चतुर्विंशतिविकसितसुगन्धितसुमनोभिश्चतुर्विंशतिजिनान् पूजयेत्। यथोक्तकुसुमाभावे पूजयेत् पीततन्दुलैः। पञ्चवर्षानन्तरं उद्यापनं कार्यम्। केवलज्ञानसम्प्राप्तिरेतस्य परमं फलम्। तिथिक्षये वा तिथिवृद्धौ पूर्वोक्त एव क्रमः स्मर्तव्यः। पुष्पाञ्जलिव्रते पञ्चमीषष्ठयोरूपवासः सप्तम्यां पारणा अष्टमी नवम्योरूपवासः दशम्यां पारणा, एकान्तरेण तु तिथिक्षये चादिदिने गृहीते पारणाद्वयं मध्ये कार्यम्। पञ्चम्याष्टम्यां च षष्ठयामष्टम्यां वा यथैकान्तरं स्यात्तथा कार्यम्; एतत् पुष्पाञ्जलिव्रतं कर्मरोगहरं मुक्तिप्रदं च पारम्पर्येण भवति।

अर्थ :— पहले बताए हुए पुष्पाञ्जलि व्रत को पांच दिन तक करना चाहिए। इस व्रत में केतकी, बेला, चम्पा आदि विकसित और सुगन्धित पुष्पों से चौबीस भगवान की पूजा करनी चाहिए। यदि वास्तविक पुष्प न हों या वास्तविक पुष्पों से पूजन करना उपयुक्त न समझे तो पीले चावलों से भगवान की पूजा करनी चाहिए। पाँच वर्ष के पश्चात् व्रत का उद्यापन कर देना होता है। इस व्रत का फल केवलज्ञान की प्राप्ति होना बताया गया है अर्थात् विधिपूर्वक पुष्पाञ्जलि व्रत के पालने से केवलज्ञान की प्राप्ति होती है। तिथिक्षय या तिथिवृद्धि होने पर पूर्वोक्त क्रम ही अवगत करना चाहिए। तिथिक्षय में एक दिन पहले से और तिथिवृद्धि में एक दिन अधिक व्रत किया जाता है। पुष्पाञ्जलि व्रत में पञ्चमी और षष्ठी इन दोनों दिनों का उपवास, सप्तमी को पारणा, अष्टमी और नवमी का उपवास तथा दशमी को पारणा की जाती है। एकान्तर उपवास करने वाले को अर्थात् एक दिन उपवास दूसरे दिन पारणा, पुनः उपवास तत्पश्चात् पारणा इस क्रम से उपवास करने वालों को तिथिक्षय होने पर एक दिन पहले से व्रत करने के कारण मध्य में दो पारणाएं करनी चाहिए। पञ्चमी और अष्टमी की पारणा

अथवा षष्ठी और अष्टमी की पारणा की जाती है। एकान्तर उपवास और पारणा का क्रम चल सके ऐसा करना चाहिए । यह पुष्पाञ्जलि व्रत कर्मरूपी रोग को दूर करने वाला, लौकिक अभ्युदय का प्रदाता एवं परम्परा से मोक्ष लक्ष्मी को प्रदान करने वाला है।

विवेचन :—पुष्पाञ्जलि व्रत की तिथि पहले लिखी जा चुकी है। आचार्य ने यहां पर कुछ विशेष बातें इस व्रत में सम्बन्ध में बतलायी हैं। पुष्पाञ्जलि शब्द का अर्थ है कि पुष्पों का समुदाय अर्थात् सुगन्धित, विकसित और कीटाणुरहित पुष्पों से जिनेन्द्र भगवान की पूजा इस व्रत वाले को करनी चाहिए । पहले व्रत विधि में लिखे गये जाप को भी पुष्पों से ही करना चाहिए। यदि पुष्प चढ़ाने से एतराज हो तो पीले चावलों से पूजन तथा लवंगों से जाप करना चाहिए । पांचों दिन पूजन और जाप करना आवश्यक है । इस व्रत का बड़ा भारी माहात्म्य बताया गया है, विधिपूर्वक इसके पालने से केवलज्ञान की प्राप्ति परम्परा से होती है, कर्मरोग दूर होता है तथा नाना प्रकार के लौकिक ऐश्वर्य, धन-धान्यादि विभूतियां प्राप्त होती हैं। इसकी गणना काम्य व्रतों में इसीलिए की गयी है कि इस व्रत को विधिपूर्वक पालकर कोई भी व्यक्ति अपनी लौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार की कामनाओं को पूर्ण कर सकता है।

पुष्पाञ्जलि व्रत

भाद्रपद सुदि पंचमी से सुदि नवमी तक पांच उपवास करना ये पांच दिनों में मेरु की स्थापना कर नित्य पूजा के बाद चौबीस तीर्थंकर की पूजा करनी चाहिए बाद में पंच मेरु की पूजा करनी। रोज अभिषेक करना। "ॐ ह्रीं पंचमेरुसंबन्धशीतिजिनालयेभ्यो नमः" इस मन्त्र का त्रिकाल जाप प्रतिदिन करना। पंच उपवास करने की शक्ति न हो तो पंचमी का एक उपवास करके बचे हुये दिनों में रस का त्याग कर एकाशन करना चाहिए। रात्रि को जागरण, धर्मध्यान, शास्त्र पढ़ने में समय निकालना चाहिए। यह व्रत लगातार पांच वर्ष करना चाहिए। पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए नहीं तो पुनः व्रत करना चाहिए।

पांच ही उपवास करना इसको वृहत् पुष्पाँजली व्रत कहते हैं। ऐसा नाम गोविंद कवि ने दिया है।

और एक प्रकार :—

पंचमी और नवमी को उपवास करना और बीच में अर्थात् षष्ठी, सप्तमी और अष्टमी का एकाशन करना यह मध्यम प्रकार है। पांच ही दिन एकाशन करना जघन्य प्रकार है।

गोविन्द कविकृत व्रत निर्णय

इस व्रत के और प्रकार भी हैं।

सुदी पंचमी, सप्तमी और नवमी का उपवास व षष्ठी अष्टमी का एकाशन करना यह मध्यम विधि है। यह व्रत भाद्रपद, माघ और चैत्र में भी करना चाहिये ऐसा कई लोगों का मत है। जैन व्रत विधान संग्रह

इस व्रत में केतकी, बेला, चम्पा आदि के विकसित सुगन्धित पुष्पों से चौबीस तीर्थंकर की पूजा करनी। इस व्रत से ज्ञान की प्राप्ति होती है। पुष्पांजली का अर्थ पुष्पों का समुदाय, इसमें जाप भी पुष्पों से कहा है।

इसके उद्यापन के लिये २५ दल का कमलमण्डल निकालना और जलयात्रा, अभिषेक, सकलीकरण आदि कर उद्यापन करना। उसमें छत्र, चामर, झारी, तोरण, घंटा, धूपदान पात्र, चन्दोवा, दीपमाला, भामंडल, पांच बर्तन ५ शास्त्र, २५ नैवेद्य, २५ सुपारी ५ नारियल ५ रत्न २५ चांदी के स्वस्तिक इतनी सामग्री एकत्रित करनी व मांडले के बीच में जिन प्रतिमा विराजमान करनी चाहिए और पूजा करनी चाहिए। जाप व शान्ति विसर्जन करना चाहिए और कम से कम पांच श्रावकों को भोजन कराना चाहिए।

कथा

इस जम्बूद्वीप के पूर्वविदेह में सीता नदी के दक्षिण किनारे मंगलावति नाम का एक देश है। उस देश में रत्नसंचयपुर नाम की एक नगरी थी। वह धन-धान्य से भरपूर थी। उस समय राजा धनसेन अपनी रानी जयावति सहित वहां राज्य करता था। उनके कोई संतान नहीं थी। अतः वह हमेशा उदास रहता था। एक बार राजा रानी सहित जिनमन्दिर में गया, वहां उसे ज्ञानसागर मुनि के दर्शन हुये।

उनको नमोस्तु कहकर उनके मुख से धर्मोपदेश सुना, उसके बाद हमें संपत्ति योग है या नहीं ऐसा प्रश्न पूछा ।

महाराज ने उत्तर दिया कि तुम उसकी चिन्ता मत करो । तेरे पेट से उत्पन्न होने वाला पुत्र चक्रवर्ती होने वाला है । बाद में उसको पुत्र हुआ जिसका नाम रत्नशेखर रखा । थोड़ा बड़ा होने पर वह वनक्रीड़ा के लिये जा रहा था तब आकाशमार्ग से जाने वाले विद्याधर को उसका रूप देखकर उससे आत्मीयता उत्पन्न हुई । वह उसी समय विमान से उतर कर तुरन्त भूमि पर आ गये । उन्होंने अपना परिचय रत्नशेखर को बताया । तब उसने उनको परम मित्र माना और बोला :—

"मैं मेरू पर्वत पर वंदना के लिये जा रहा हूं । तुम मेरे साथ चलो ।" रत्नशेखर ने उत्तर दिया "मेरा कोई विरोध नहीं पर आप मुझे विमानविद्या सिखाओगे तो मैं आप के साथ आऊंगा ।" विद्याधर मान गया । उसने उसको विद्या सिखायी । बाद में दोनों विमान में बैठकर अढाईद्वीप के समस्त जिनमन्दिरों के दर्शन के लिये निकले ।

रास्ते में विजयार्द्ध पर्वत के ऊपर सिद्धकूट चैत्यालय के दर्शन पूजन स्तवन कर रहे थे, तब विजयद्वीप के दक्षिण श्रेणी के रथनपुर के राजा की कन्या मदन-मंजूषा अपनी सखी के साथ वन्दना के लिये आयी । वहां पर दोनों की दृष्टि एक दूसरे से मिली जिससे उनके मन में प्रेमांकुर उत्पन्न हुआ । और राजकन्या घर गयी ।

राजा को यह बात मालूम हुयी । तब उसने स्वयंवर की तैयारी की और नाना देशों के राजाओं को आमंत्रित किया । विद्याधर राजा एकत्रित हुये । वहां रत्नशेखर भी आया । मदनमंजूषा ने वरमाला रत्नशेखर के गले में डाल दी ।

जिससे विद्याधर राजा सब चिढ़ गये । भूमिपर रहने वालों की विद्याधर से शादी होती नही है । तब वे युद्ध के लिये तैयार हुये पर रत्नशेखर ने उनको परास्त किया । बहुत से राजाओं ने उनका आधिपत्य (दासत्व) स्वीकार किया । उस समय पुण्योदय से उसको चक्ररत्न की प्राप्ति हुयी । उसने षड्खंड की पृथ्वी जीती और उस पर अपना अधिकार जमाया । तब वह अपने माता-पिता के दर्शन को आया । सुख से राज्य करने लगा ।

बाद में कई दिनों के बाद रत्नशेखर के माता पिता दर्शन करने को परिवार सहित सुदर्शन मेरु पर गये। भाग्योदय से दो चारण मुनियों के दर्शन हुए। उनके मुख से धर्मोपदेश सुनकर अपना भव सफल किया। और अपना व मदनमंजूषा का पूर्व भव का सम्बन्ध पूछा। तब मुनि बताने लगे।

राजन् इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में आर्यखंड है। उस खंड में मृणालपुर नगर का राजा जितारी है। उसकी रानी कनकावती है। उस नगर में एक श्रुतकीर्ति नामक ब्राह्मण रहता था, उसकी पत्नी बंधुमती थी। उसकी पुत्री प्रभावति ने बाद में दीक्षा ली। श्रुतकीर्ति पत्नी के साथ वनक्रीडा को गया, वहां उसकी पत्नी बंधुमती सर्पदंश से मृत्यु को प्राप्त हुयी। उसका परिणाम श्रुतकीर्ति पर हुआ, वह उदास हो गया यह बात प्रभावति आर्यिका को मालूम हुयी। उसने आकर पिताजी को धर्मोपदेश दिया। संसार की असारता को बताया और उनको लेकर अपने गुरु के पास आयी व जिन दीक्षा दिलायी।

श्रुतकीर्ति ने शुरु में तो बहुत कठिन तपश्चरण किया पर बाद में वह चारित्र भ्रष्ट हुआ और यंत्र मंत्र करने में फस गया। विद्या के जोर से मायावी नगरी बना कर रहने लगे। विषयासक्त हो गये। यह बात प्रभावति को ज्ञात हुयी उसने पिताजी को फिर से उपदेश किया। पर उसका परिणाम अनिष्ट हुआ। पिता ने गुस्से में आकर प्रभावति आर्यिका को अपनी विद्या के प्रभाव से घनघोर जंगल में छोड़ दिया। वहां वह (प्रभावती) णमोकार मन्त्र का अखण्ड पाठ करती रही जिसके प्रभाव से वन देवी प्रगट हुयी। उसने पूछा तुम्हें क्या चाहिए ?

प्रभावती ने कहा मुझे कैलाश के दर्शन करने हैं वहां मुझे ले चलो। देवी उसको वहां ले गयी, उस दिन भाद्रपद सुदी पंचमी थी। उस दिन पुष्पांजलि व्रत शुरु होता है। वहां स्वर्ग के देव भी पूजा के लिये एकत्रित हुये थे। उन्होंने यह व्रत किया था। यह देख प्रभावती ने भी यह व्रत किया। यथाविधि यह व्रत बड़े आनंद से किया।

पांच वर्ष के बाद उस वन देवी ने उसको वापस लाकर मृणालपुरी में छोड़ा। वहां उसने स्वयंप्रभ के पास दीक्षा ली। तप किया जिससे उसकी ख्याति

बढ़ गयी। पर यह ख्याति उसके पिता को सहन न हुयी। इसलिये उससे छल करने का उन्होंने विचार किया। विद्या भेजकर उस पर उपसर्ग करना शुरु किया। पर प्रभावति ने वह उपसर्ग आनंद से सहन किया अंत में समाधिपूर्वक मर कर के अच्युत स्वर्ग में पद्मनाथ नामक देव हुयी।

इसी अवधि में मृणालपुरी की एक श्राविका रुक्मणी मर कर स्वर्ग में देवी हुयी। उन दोनों ने अपना समय सुख से बिताया। एक दिन पद्मनाथ देवी को बोला "मेरे पूर्व भव के पिता मिथ्यात्व में फंसे हैं। उनको उपदेश देकर सन्मार्ग पर लाना कठिन है। पर हम दोनों उधर जाते हैं।"

तब दोनों स्वर्ग से नीचे आये। श्रुतकीर्ति को अपना पहला भव बताया। जिससे उसको अपने किये हुये कुकृत्य पर पश्चाताप हुआ। उन्होंने सर्वप्रपंच का त्याग कर जिनदीक्षा लेकर तपश्चरण किया। समाधिपूर्वक मरण कर स्वर्ग में प्रभास नामक देव हुआ।

पद्मनाथ देव का जीव तू रत्नशेखर और देवी तेरी स्त्री मदनमंजूषा है। और वह प्रभास देव मेघवाहन विद्याधर है। पूर्व जन्म में पुष्पांजलि व्रत किया था उसकी प्रभावना से तू स्वर्ग के सुख भोगकर चक्रवर्ती हुआ। यह पूर्वभव का व्रत है। इसलिये तुम्हारा एक दूसरे के प्रति अधिक प्रेम है।

तब रत्नशेखर ने फिर से पुष्पांजली व्रत किया। पूर्ण करके वह घर आया। बहुत समय तक सांसारिक सुखों को भोगकर अन्त में जिनदीक्षा ली। अनेक भव्यजीवों को धर्मोपदेश दिया और शेष कर्मों का नाश कर अन्त में वह मोक्ष गये। मदनमंजूषा ने भी दीक्षा ली वह मरकर सोलहवें स्वर्ग में देव हुयो। अब वह मोक्ष जायेगी।

पञ्चपरमेष्ठी व्रत

अरिहन्त के ४६ गुणों के लिए चार चतुर्थियों के चार, आठ अष्टमियों के आठ उपवास, बीस दशमियों के बीस उपवास और चौदह चतुर्दशियों के चौदह उपवास किये जाते हैं। सिद्ध परमेष्ठी के आठ मूल गुण के आठ अष्टमियों के आठ उपवास किये जाते है। आचार्य के ३६ मूल गुणों के लिए बारह द्वादशियों के बारह

उपवास, छः षष्ठियों के छः उपवास, पांच पञ्चमियों के पांच उपवास, दस दशमियों के दस उपवास और तीन तृतीयाओं के तीन उपवास, इस प्रकार कुल ३६ उपवास किये जाते हैं। उपाध्याय परमेष्ठि के २५ मूल गुण होते हैं, उनके लिए ग्यारह एकादशियों के ग्यारह उपवास और चौदह चतुर्दशियों के चौदह उपवास सम्पन्न किये जाते हैं। साधु परमेष्ठि के २८ मूल गुण हैं। इनके लिए पन्द्रह पञ्चमियों के पन्द्रह उपवास, छः षष्ठियों के छः उपवास एवं सात प्रतिपदाओं के सात उपवास किये जाते हैं। इस प्रकार कुल १४३ उपवास करने का विधान है। जिस परमेष्ठि के मूलगुणों के उपवास किये जा रहे हैं, व्रत के दिन उस परमेष्ठी के गुणों का चिंतन करना तथा-

ॐ ह्रीं अर्हद्भ्यो नमः, ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः, ॐ ह्रीं आचार्येभ्यो नमः, ॐ ह्रीं उपाध्यायेभ्यो नमः, ॐ ह्रीं सर्वसाधुभ्यो नमः

का क्रमशः जाप करना चाहिए।

अथ पंचपरमेष्ठी व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन मास की अष्टान्हिका में व्रतिक अष्टमी के दिन स्नानकर शुद्ध वस्त्र पहन सर्व प्रकार के अभिषेक पूजा का सामान हाथों में लेकर जिन मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को हाथ जोड़ नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर पञ्चपरमेष्ठि की मूर्ति स्थापन कर पञ्चामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, शास्त्र की पूजा, गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि की व क्षेत्र पाल की भी अर्चना करे।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अर्हं पञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महा अर्घ्य करके मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगल आरती उतारे, शक्ति प्रमाण उपवास या एकाशन करे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, धर्म ध्यान से समय निकाले, इसी क्रम से प्रत्येक महीने की पौर्णिमा को ऐसी पूजा करे, चार महीना पूर्ण होने पर उद्यापन करे, उस समय एक पंचपरमेष्ठि भगवान

की नवीन मूर्ति बनवाकर पञ्चकल्याण प्रतिष्ठा करे, पांच प्रकार का नैवेद्य बनाकर सोलह भाग करे।

एक पञ्चपरमेष्ठि को, १ मूल नायक भगवान को श्रुत, गुरु चक्रेश्वरी रोहिणी ज्वालिनी, पद्मावती, जल देवतादि को नैवेद्य चढ़ावे, अर्पण करे, सौभाग्यवती पांच स्त्रियों को पान, सुपारी, फल, अक्षत, पुष्प आदि देकर सत्कार करे, तीन मुनि संघ को आहार दान देवे, पांच आर्यिका, पांच ब्रह्मचारी को आहार देकर वस्त्रादि उपकरण देवे, इस व्रत की विधि यही है।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में कांभोज नाम का विशाल देश है, उसमें भूतिलक नाम का एक गांव है, उस नगर में राजा सिंहविक्रम अपनी पद्मावती रानी के साथ सुख से राज्य करता था, एक दिन नगर के उद्यान में मुनिगुप्त नाम के दिव्य ज्ञानी महामुनिश्वर पधारे, यह शुभ वार्ता राजा को मालूम पड़ते ही नगरवासियों के साथ अपने परिवार सहित मुनिराज के दर्शन करने को गये, साथ में नगरवासी लोग भी गये, मुनिराज का धर्मोपदेश सुना, कुछ समय बाद पद्मावती रानी ने हाथ जोड़ कर प्रार्थना की कि स्वामिन मेरा संसार भ्रमण कम हो उसके लिए कुछ सुख का उपाय कहो।

तब मुनिराज कहने लगे कि हे देवि! तुम्हारे द्वारा पञ्चपरमेष्ठि व्रत करने योग्य है, ऐसा कहकर व्रत विधान कहा। सब लोगों ने व्रत का स्वरूप सुनकर आनन्द व्यक्त किया, रानी पद्मावती ने भक्तिपूर्वक व्रत ग्रहण किया, सब लोग नगर में वापस लौट आये। यथाविधि रानी ने व्रत का पालन किया, अन्त में समाधिमरण कर स्वर्ग सुख भोगा, परम्परा से मोक्ष को गये।

पार्श्वतृतीया (तदगी) व्रत कथा

श्रावण शुक्ला तृतीया के दिन इस व्रत को पालने वाला व्रतिक स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहिन कर अभिषेक पूजा की सामग्री लेकर जिन मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर, भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर पार्श्वनाथ

धरणेन्द्र पद्मावती सहित की मूर्ति को स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से भगवान की पूजा करे, घृत शक्कर से युक्त खीर चढ़ावे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्ष यक्षणी को अर्घ चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीपार्श्वनाथ तीर्थंकराय धरणेन्द्रपद्मावति सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र को १०८ सुगन्धित पुष्प लेकर जाप करे, व्रत कथा पढ़े, णमोकार मन्त्र १०८ बार जपे, एक श्रीफल अर्घ सहित एक थाली में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगल आरती उतारकर अर्घ चढ़ा देवे, शक्ति के अनुसार उपवास या कांजी का अहार अथवा एकभुक्ति अथवा एकाशन करके ब्रह्मचर्य पूर्वक धर्मध्यान से समय निकाले, दूसरे दिन चतुर्विध संघ को आहार दान देकर, तीन सौभाग्यवती स्त्रियों को भोजन कराकर उनकी गोद में पान, गंधाक्षत, फल वगैरह से भर कर सत्कार करे, फिर अपने पारणा करे, इस प्रकार भाद्र, आश्विन, कार्तिक महिनों की शुक्ल तृतीया को पूर्वोक्त विधि से व्रत करे, कार्तिक शुक्ल ३ के दिन व्रत का उद्यापन करे, उस समय पार्श्वनाथ तीर्थंकर का महाभिषेक करके क्षेत्रपाल का सिन्दूर आदि लगाकर सत्कार करके पूजन अर्घ्य समर्पण करे, नाना प्रकार का नैवेद्य बनाकर भगवान की अर्चना करे, पद्मावती को चढ़ावे, क्षेत्रपाल को चढ़ावे, सौभाग्यवती स्त्रियों को भी सब प्रकार का मिष्ठान्न देवे, अन्त में एक थाली में महाअर्घ्य लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ चढ़ा देवे, चतुर्विध संघ को दान देवे, दान देकर ही पारणा करे, ऐसा यहां नियम है ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में कांभोज नाम का नगर है, उस नगर में देवपाल राजा अपनी लक्ष्मीमति रानी के साथ आनन्द से राज्य करता था । एक दिन उस नगरी के उद्यान में ज्ञानसागर नाम के मुनिराज आये, वनपाल के द्वारा मुनि आगमन का समाचार पाते ही पुरजन परिजन सहित राजा वंदनार्थ गया और भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हुआ, धर्म सभा में जाकर बैठ गया ।

कुछ समय धर्म श्रवण कर रानी हाथ जोड़कर विनती करती हुई कहने

लगी कि स्वामिन मुझे कोई व्रत प्रदान करो, तब मुनिराज ने पार्श्वतृतीया व्रत की विधि कह सुनायी, रानी लक्ष्मीमति ने व्रत का स्वरूप सुनकर बड़ी प्रसन्नता के साथ में व्रत को ग्रहण किया और राजा के साथ नगर में वापस आ गई व्रत को अच्छी तरह से पालन कर उसका उद्यापन किया, इस व्रत के प्रभाव से लक्ष्मीमती रानी ने बहुत पुण्यसंचय किया, क्रमशः स्त्रीलिंग छेदकर मोक्ष को गई ।

पंचपरमेष्ठी गुण व्रत

अरिहंत के ४६ गुण उसके उपवास—चार चतुर्थी के चार, आठ अष्टमी के आठ, बीस दशमी के बीस और चौदह चतुर्दशी के १४ ऐसे ४६ उपवास करना ।

सिद्धि के आठ—आठ अष्टमी के आठ उपवास करना ।

आचार्य के ३६—१२ द्वादशी के १२, ६ षष्ठी के ६, ५ पञ्चमी के ५, दश दशमी के दस और तीन तृतीया के तीन इस प्रकार ३६ उपवास करना ।

उपाध्याय जी के २५ गुण उसके उपवास—११ एकादशमी के ग्यारह चौदह चतुदर्शी के १४, सर्व साधु के २८ गुण—१५ पञ्चमी के १५, ६ षष्ठी के ६, ७ प्रतिपदा के ७ ऐसे २८ उपवास करना अर्थात् सब मिलाकर १४३ है । एक एक परमेष्ठी के उपवास क्रम से पूर्ण करे । अरिहंत भगवान के ४६ उपवास क्रम से पूर्ण करने के बाद में (फिर) सिद्धो के उपवास करना इस प्रकार यह व्रत करना जिस-जिस परमेष्ठी के उपवास करना उस-उस परमेष्ठी के गुणों का चिन्तवन उस उस दिन करना और **"ॐ ह्रीं अर्हद्भ्यो नमः" "ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः" "ॐ ह्रीं आचार्येभ्यो नमः" "ॐ ह्रीं उपाध्यायेभ्यो नमः" "ॐ ह्रीं सर्व साधुभ्यो नमः"** ।

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करना, यह व्रत २८६ दिन में पूर्ण होता है । इसमें १४३ उपवास, १४३ पारणा होते हैं । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए । यदि उद्यापन नहीं किया तो व्रत फिर से करना (दूना करना) ।

इसके अलावा इस व्रत की और तीन रीतियां गोविन्दकृत व्रत नियम में दो हैं । वह इस प्रकार हैं—

(१) श्रावण सुदी पञ्चमी के दिन प्रोषधोपवास करना । उस दिन पञ्च

परमेष्ठी का पूजन करना, उन उन गुणों का चिंतवन करना । इस प्रकार पांच वर्ष करना । पूर्ण होने पर उद्यापन करना । यह प्रथम प्रकार है ।

(२) भाद्रपद सुदी पञ्चमी को प्रोषध उपवास करना । सप्तमी का अल्पहार लेना । अष्टमी को कांजि का आहार लेना और नवमी को उपवास करना, ऐसे पांच वर्ष करना । यह दूसरा प्रकार है ।

(३) भाद्रपद सुदी पञ्चमी, सप्तमी, अष्टमी और नवमी को उपवास करना श्रद्धा से पञ्चपरमेष्ठो का अभिषेक पूजन करना, पंच नमस्कार मन्त्र का १०८ बार जाप करना ऐसे यह व्रत पांच वर्ष करना । यह तीसरा प्रकार है ।

परमस्थान व्रत

यह व्रत श्रावण सुदी ७ को प्रोषधोपवासपूर्वक करना चाहिए । हर श्रावण सुदी ७ को उपवास ऐसा सात वर्ष तक करना चाहिए । इसका फल नंदिमित्र को मिला था । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए । यदि उद्यापन नहीं किया तो पुनः सात वर्ष करना चाहिए ।

(गोविन्दकविकृत व्रतनिर्णय)

पुष्पचतुर्दशी व्रत

आषाढ़ सुदी १४ के दिन सर्वारम्भ का त्याग करके उपवास करना । व्रत के दिन जिनपूजा सिर्फ चरु से ही करनी चाहिए । उसके बाद श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक इन चार महीनों की सुदी १४ को उपवास करना चाहिए । इस प्रकार वर्ष में ५ उपवास करना । यह व्रत क्रम से ५ वर्ष करना चाहिए ।

(गोविन्दकविकृत व्रतनिर्णय)

पात्रदान व्रत

प्रत्येक सत्पात्र को दान देने का नियम लेना व उसका पालन करना । प्रतीक्षा और द्वारावलोकन करना, यदि पात्र नहीं मिला तो रस त्याग कर खाना ।

(व्रत तिथि निर्णय)

पल्यविधान व्रत

इस व्रत के उपवास ७२ हैं। एक वर्ष में करना चाहिए। इसको आश्विन शुक्ल एकादशी से शुरू करना चाहिए। इसके क्रम नीचे लिखे प्रमाण से होते हैं।

(१) आश्विन महिने की शुक्ल ११, १२, १४ व कृष्ण ६, १३, ऐसे ५ उपवास करना।

(२) कार्तिक महिने की सुदी ३, १२ और वदी १२ ऐसे ३ उपवास करना।

(३) मार्गशीर्ष सुदी ३, १२ और वदी ११ ऐसे तीन उपवास करना।

(४) पौष सुदी ५, ७, १५ और वदी २, ३० (अमावस्या) ऐसे ५ उपवास करना।

(५) माघ सुदी ७, ८, १० और वदी ४, ७ और १४ ऐसे ६ उपवास करना।

(६) फाल्गुन सुदी १, ११, वदी ५ और ६ ऐसे चार उपवास करना।

(७) चैत्र महिने की सुदी ७, १० और वदी १, २, ४, ६, ८ और ११ ऐसे आठ उपवास करना।

(८) वैशाख सुदी २, सुदी ३, ६, १३ और वदी ४ और वदी १० ऐसे ६ उपवास करना।

(९) ज्येष्ठ सुदी ८, १०, १५ और वदी १०, १३, १४, ३० (अमावस्या) ऐसे ७ उपवास करना।

(१०) आषाढ़ सुदी ८, १० और ११, १३, १४, ३० (अमावस्या) ऐसे सात उपवास करना।

(११) श्रावण सुदी ३, १५ और वदी ४, ६, ८ और १४ ऐसे ६ उपवास करना।

(१२) भाद्रपद सुदी ५, ६, ७, ९, ११, १२, १३ और वदी ६, ७, ९, ११, इस प्रकार ११ उपवास करना चाहिए।

इस प्रकार सब मिलाकर ७२ उपवास करना।

इस प्रकार सब मिलकर ७२ उपवास होते हैं। व्रत के दिन आरम्भ का त्याग कर धर्मध्यानपूर्वक दिन व्यतीत करना चाहिए।

जिस पल्यविधान के उपवास करना है उनके नाम निम्न प्रकार हैं ।

१. सूर्यप्रभ, २. चंद्रप्रभ, ३. कुमारसंभव, ४. षडशीति, ५. प्रोषध, ६. नंदीश्वर, ७. सर्वार्थसिद्धी ८. प्रातिहार्य, ९. जितेन्द्रिय १०. विमानपंक्ति, ११. सद्वीर्य, १२. अजित, १३. अतुल पराक्रम, १४. जयरत, १५. वात्सल्य विजय, १६. रत्नप्रभ, १७. सम्यक्त्व १८. चतुर्मुख १९. सच्छील २०. पंचातिशय २१. अर्कप्रभ, २२. सद्वीर्यप्रभ, २३. प्रजावर्त २४. रूपस्वो २५. चंद्रप्रभ २६. विमानावजो २७. अपराजित २८. मेरुपंक्ति २९. नंदीश्वर, ३०. त्रिलोक, ३१. त्रिरत्न ३२. महारथ ३३. शर्मकर्म ३४. सर्वार्थसिद्धी ३५. संतती ३६. वर्द्धमान ३७. गुणसागर ३८. धर्मार्थकाम ३९. शीतल ४०. सुखोत्पादक ४१. नंदीश्वर ४२. त्रिभुवनवल्लभ ४३. दुर्जय, ४४. जितशत्रु, ४५. जितरिपु ४६. गंधर्व, ४७. देवाभीष्ट ४८. सर्वसौख्य ४९. लक्षणपंक्ति ५०. विमानपंक्ति ५१. जितमात्सर्यक ५२. जितकर्मा ५३. ५४. ज्ञान ५५. चातुर्यमुख ५६. मेरुपंक्ति ५७. इन्द्रकीर्ति ५८. जितक्रोध ५९. हर्षोत्पादक ६०. भद्रक, ६१. विमानसाधक ६२. श्रेयकारण ६३. ज्ञानसागर ६४. रत्नावली ६५. ६६. त्रिलोक, ६७. त्रिलोचन ६८. जिनेन्द्र ६९. अजितप्रभ, ७०. शशिप्रभ, ७१ शीलसत्य ७२. निर्वाण साधक । (गोविन्दकृत व्रत-निर्णय)

इस व्रत की और विधि भी मिलती हैं ।

इसमें ७१ उपवास होते हैं । वे निम्न प्रकार हैं ।

आश्विन सुदी ११, १२ और १४ व वदी ६, १३ ऐसे ५ उपवास करना इन उपवासों के नाम क्रम से कुमार संभव, षडशीति, कुमार संभव, सूर्यप्रभ व चंद्रप्रभ ऐसे नाम हैं ।

कार्तिक सुदी ३, १२ और वदी १२ ऐसे तीन उपवास करना ।

इसके नाम क्रम से वीर्यसिद्धी, प्रातिहार्य व नंदीश्वर ऐसे हैं ।

मार्गशीर्ष (मंगसिर) सुदी ३, १२ और वदि ११ ऐसे तीन उपवास करना ।

इसके नाम क्रम से विमानपंक्ति, सुवीर्य व जिनेन्द्रिय ऐसे हैं ।

पौष सुदी ५, ७ व १५ और बदि २, ३० (अमावस्या) ऐसे ५ उपवास करना ।

ऐसा क्रम से जयद्रव्य, स्वयंप्रभ, रत्नप्रभ, अजित व पराक्रम ऐसा है ।

माघ सुदी ७, ८, १० और वदि ४, ७, १४ ऐसे छः उपवास करना ।

इसके नाम क्रम से पंचातिशय, सूर्यप्रभ, वीर्यप्रभ, सम्यक्त्व, चतुर्मुख व सत्यशील ऐसे हैं ।

फाल्गुन सुदी १, ११ १५ और वदी ५ व ६ ऐसे सात उपवास करना ।

क्रम से नाम–चन्द्रप्रभ, विमाबभद्र, अपराजित, प्रजावतीव, समश्री ।

चैत्र सुदी ७ और वदि १, २, ४, ६, ८ और ११ ऐसे पांच उपवास करना ।

उसके नाम क्रम से सर्वार्थसिद्धी, सूर्यप्रभ, त्रिलोकगुरु, सज्ञान, त्रिरत्न, महारथ त्रिभुवन प्रकाश ऐसे हैं ।

वैशाख सुदी २, ५, ९ व १३ और वदी ४, १० व १२ ऐसे सात उपवास करना । इसके नाम क्रम से शीतवात, मनोज, नन्दीश्वर, त्रिभुवनवल्लभ, संजय, गुण-सागर ऐसे हैं ।

ज्येष्ठ सुदी ८, १०, १५ और वदि ७, १० ऐसे ५ उपवास करना ।

इसके नाम ज्ञानभावक, ज्ञानदीपिका, चंद्रकान्ति, दुर्जय, जितारि ऐसे हैं ।

आषाढ़ सुदी ८, १०, १५ और वदि १०, १३, १४, ३० ऐसे ७ उपवास करना । इसे क्रम से लक्ष्मण पंक्ति, मेरूपंक्ति, जितमात्सर्य, जितशत्रु, गंधर्व, गंधर्व, गंधर्व, ऐसे हैं ।

श्रावण सुदी ३, १०, १३, १५ और वदि ४, ८, १४ ऐसे सात उपवास करना और उसका नाम क्रम से लक्ष्मण पंक्ति, चन्द्रकीर्ति, जितक्रोध, जिनहर्ष जितकामाक्ष, धर्मराज और चतुर्मुख ऐसे हैं ।

भाद्रपद सुदी ५, ६, ७, ११, १२, १५ और वदी १५, २, ६, ७, १२ ऐसे १० उपवास करना । उसके नाम क्रम से रत्नावली, त्रिलोक गुरु, सर्वार्थसिद्धी, सर्वार्थसिद्धी, सर्वार्थसिद्धी, निर्वाणसाधक, भद्रक, विमान पंक्ति, आनंद धातुरसागर ऐसे हैं ।

इस प्रकार ७१ उपवास होते हैं ।

जैन कथा संग्रह में इस व्रत के ६६ उपवास बताये हैं उसकी विधि—

(१) आश्विन सुदी ६, १३, व वदि ६, ११, १४, ऐसे ५ उपवास करना। इन उपवासों के नाम क्रम से सूर्यप्रभा, चंद्रप्रभा, कुमारसंभव, षडशीती पुष्पोत्तर, ऐसे नाम हैं।

(२) कार्तिक महिने की सुदी १२ व वदि १२ को २ उपवास करना इसके नाम नन्दीश्वर प्रतिहार्य ऐसे नाम हैं।

(३) मार्गशीर्ष सुदी ४, ११, और वदि ३, १२ ऐसे तीन उपवास करना इसके नाम जितेन्द्रय, पंक्ति मानव व सूर्य ऐसे नाम हैं।

(४) पौष सुदी ५, ११, और वदि २, ४, ३० ऐसे ५ उपवास करना इसके नाम पराक्रम, जयपृथ्, स्वयंप्रभ, रत्नाप्रभा ऐसे नाम हैं।

(५) माघ सुदि ४, ७, ११ व वदि ३, २, १४ ऐसे ५ उपवास करना शील पंचशीति में दो पहले दो उपवास के बाकी उपवास के नाम दिये नहीं हैं।

(६) फाल्गुन सुदी ४, ११, व वदि ३, ८, १४ ऐसे पांच उपवास करना।

(७) चैत्र सुदि १, ५, ८, ११, व वदि ३, ८, १४, ऐसे सात उपवास करना।

(८) वैशाख सुदि १, ५, ८, ११, वदि ३, ८, १४, सात उपवास करना।

(९) ज्येष्ठ सुदी ५, ८, १४, वदि ५, ८ ऐसे पांच उपवास करना।

(१०) आषाढ़ सुदि १, ८, १४, वदि १, ५, ८, १४, आठ उपवास करना।

(११) श्रावण सुदि ३, ५, ८, १४ वदि ५, ८, १४, ऐसे सात उपवास करना।

(१२) भाद्रपद सुदी ५, ११, १४, और वदि ५, ८, १४ ऐसे सात उपवास करना।

इस प्रकार (५+२+३+५+६+५+७+७+५+८+७+६) = ६६ उपवास करना व्रत पूर्ण हो तो उद्यापन करना चाहिए।

ये ऊपर दी हुई सभी विधियां बृहत्पल्य विधान की हैं। इस व्रत में त्रिकाल पंचनमस्कार मंत्र का जाप करना। इसका एक भेद लघुपल्यविधान व्रत है।

यह व्रत राजा श्रेणिक व रानी चेलना ने किया था ।

पंचमास चतुर्दशी व्रत

आषाढ़ से कार्तिक इन पांच महिने की शुक्लपक्ष चतुर्दशी को प्रोषधोपवास करे, इस व्रत में मात्र पांच ही उपवास होते हैं ।

इसकी दूसरी विधि में इन पांच महिने के शुक्लपक्ष की और कृष्णपक्ष की दोनों चतुर्दशी को उपवास करे, १० उपवास मिलाने से पंच चतुर्दशी व्रत होता है, आषाढ़ में शुद्ध चतुर्दशी को शील चतुर्दशी कहते हैं, श्रावण शुद्ध चतुर्दशी को रूप चतुर्दशी कहते हैं यह मासिक व्रत होता है वर्ष में एक महिने अथवा दो महिने करने वाले व्रत को मासिक व्रत कहते हैं ।

व्रत पूर्ण होने पर व्रत का उद्यापन करे, उद्यापन करने की शक्ति नहीं होने पर दुगने व्रत करे ।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

अथ पुंवेदनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान विधि करे । अन्तर सिर्फ इतना है कि चैत्र कृष्ण ३ के दिन एकाशन करे और चतुर्थी के दिन उपवास करे । अनंतनाथ तीर्थंकर की पूजा मन्त्र, जाप, पत्ते मडला आदि करना चाहिए ।

पंचपर्व व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल पंचमी को शुद्ध होकर, मन्दिर जी में जावे, प्रदक्षिणापूर्वक भगवान को नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि भगवान की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, आहारदान देवे, ब्रह्मचर्य पाले ।

इस प्रकार पंचमी से दशमी पर्यंत पांच उपवास करे, श्रावण में पूजाकर उन्हीं तिथियों में पांच एकाशन करे, भाद्र में उन्हीं पांच दिनों मे उनोदर करे, आश्विन महिने की उन्हीं तिथियों में कांजिआहार करे, कार्तिक में फलाहार करे, अंत में उद्यापन करे, पंचपरमेष्ठि विधान कर महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

इस व्रत को पहले शंखनिर्णामिक ने विधिवत् किया था, इसलिये वह बलदेव नारायण हुये, आगे मोक्ष को जायेंगे।

कथा रानी चेलना की पढ़े।

अथ श्रीपाल व्रत कथा

इस जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र है वहां एक कर्नाटक देश है उसमें संकेश्वर नामक शहर है। उसमें शंखपाल राजा राज्य करता था। उसके पुत्र, मित्र, कलत्र मन्त्री, पुरोहित, राजश्रेष्ठी, सेनापति आदि अनेक परिजन थे और राजा सुख से राज्य करता था।

एक दिन शंखगुप्ताचार्य नामक मुनिश्वर चर्या निमित्त राजघराने की ओर आये, राजा ने पडगाहन करके नवधाभक्ति से आहार दिया, आहार के बाद वे एक पाटे पर बैठ गये। तब थोड़ा धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा ने कहा महाराज मुझे को व्रत दे दीजिए। तब महाराज ने उन्हें श्रीपाल व्रत करने को कहा और व्रत विधि भी बतायी।

व्रत विधि :—चैत्र आदि १२ महीनों में किसी भी महीने के शुक्ल पक्ष की ४ के दिन एकाशन करे। और सब पहले के समान विधि करे। वेदि पर पंच-परमेष्ठि की प्रतिमा रखकर अभिषेक करे।

जाप :—ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा। इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे, णमोकार मन्त्र का भी जाप करे।

इस प्रकार ५ तिथि पूर्ण होने पर इस व्रत का उद्यापन करे। उस समय पंच

परमेष्ठी विधान कर महाभिषेक करे। १०८ कमल पुष्प बहाकर अभिषेक करे। मुनि आर्यिका को आहार दान दे। सत्पात्र को दान दे।

यह व्रत पूर्व के भव में पद्मरथ व पद्मावती ने किया था और उद्यापन किया था। जिससे वे श्रीपाल व मदनावती होकर जन्मे। वे सब सांसारिक सुख भोग कर स्वर्ग में देव हुये।

यह दृष्टांत व ऊपर लिखी कथा श्री शंखगुप्ताचार्य के मुख से सुनकर सब को बहुत ही खुशी हुई। फिर राजा ने मुनिमहाराज की वन्दना की, मुनिमहाराज जंगल में चले गये।

इधर शंखपाल राजा ने कालानुसार यह व्रत किया और उद्यापन किया। और वैराग्य होने से दीक्षा ली, समाधिपूर्वक इनका मरण हुआ जिससे सौधर्म स्वर्ग में देव हुये।

अथ पंच पांडव व्रत कथा

व्रत विधि :—सब विधि पहले के समान करे अन्तर सिर्फ इतना है कि शुक्ल पक्ष या कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को एकाशन करे, और पंचमी को उपवास करे। पीठ पर पंचपरमेष्ठी की प्रतिमा को स्थापित कर पंचामृत अभिषेक करे।

जाप :—"**ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा**" इसका १०८ बार पुष्पों से जाप करे।

इस प्रकार ५ बार व्रत करने के बाद उद्यापन करे पंचपरमेष्ठी विधान करके महाभिषेक करे। मन्दिर में ५ घण्टी, ५ कलश, घण्टा, तोरण, ध्वज, चामर वगैरह उपकरण रखे।

कथा

इस जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र है उसमें अंग देश है उसी में शुण्डालपुर नामक सुन्दर नगर है उसमें मेघकुमार नामक एक राजा रहता था। उसकी पटरानी मनोरमा थी। उसी प्रकार सोमसेन मन्त्रि उसकी पत्नी सोमदत्ता थी उनको सोमदत्त सोमभूति सोमिल ऐसे तीन पुत्र थे उनकी क्रम से हेमश्री मित्रश्री व नागश्री ऐसी पत्नियां थीं। इस प्रकार पूरे परिवार सहित मेघकुमार रहता था।

एक दिन उस नगर के उद्यान में ३० निर्ग्रन्थ मुनिश्वर अपने संघ सहित आये यह शुभ समाचार राजा ने सुना तो तुरन्त ही राजा अपने परिवार सहित दर्शन करने के लिए गया। वहाँ जाकर दर्शन, पूजन प्रदक्षिणा करके नमस्कार कर राजा ने कहा कि परमार्थिक सुख का कारण ऐसा कोई व्रत विधान कहो। तब महाराज ने कहा पंच पांडव व्रत करो वही उचित है यह कहकर उसकी सब विधि बतायी। यह सुन सब बहुत ही खुश हुये। फिर वन्दना कर अपने घर गये। समयानुकूल राजा ने उस व्रत का पालन किया और व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन किया। फिर राजा को वैराग्य उत्पन्न हुआ जिससे अपने विमलवाहन पुत्र को राज्य देकर सोमसेन प्रधान के साथ दीक्षा ली और तपश्चर्या की।

इधर विमलवाहन सुख से राज्य भोगने लगा। एक दिन बसंत ऋतु में क्रीड़ा करने के लिए वन में गये। उस समय सोमदत्ता ने अपने दो भाइयों व उसकी व अपनी दोनों स्त्रियों को राजा के साथ भेजा सब चले गये पर नागश्री पीछे रह गयी। वह अपना शृंगार कर रही थी।

इतने में शीलभूषण मुनि चर्या के निमित्त वहां आये। तब सोमदत्ता उन्हें पडगाहन कर घर में ले गयी तब तक एक राजदूत ने सोमदत्ता को बुला लिया तब सोमदत्ता ने अपनी नागश्री भाभी को मुनिश्वर को यथाविधि आहार देने को कहा और आप राज दरबार में चली गयी। फिर इस मुनि ने वन क्रीड़ा करने में विघ्न डाला है ऐसा सोचकर नागश्री ने क्रोधावेश में आकर विषमिश्रित आहार दिया जिससे वे मुनिश्वर तड़पने लगे। पर उन धीर वीर मुनि ने शान्ति से सहन करके समाधि ले ली जिससे वे कर्म का क्षय कर मोक्ष गये।

यह अन्याय देखकर सोमदत्ता आदि व उसके बन्धुओं को वैराग्य हो गया जिससे उन्होंने वन में जाकर दीक्षा ली और घोर तपश्चर्या करने लगे। आगे तप के प्रभाव से सोमदत्ता उसके दोनों भाई व दोनों भाभी १६वें स्वर्ग में देव हुए और वहां का सुख भोगने लगी।

इधर विमलवाहन ने नागश्री को नगर के बाहर निकाल दिया। उसके शरीर में महान रोग हो गया जिससे बहुत दुर्गन्ध आने लगी बहुत पाप कर्म से वह

नरक गयी। वहाँ का दुःख भोगकर तिर्यंच हुई वहां भी दुःख भोगा फिर कर्मों के उपशम से वह चम्पापुरी में चाण्डाल के घर कन्या हुई। पाप कर्म से मां बाप का छोटेपन में मरण हो गया वह घर घर में भीख मांग कर अपना पेट भरने लगी।

एक दिन चम्पापुर के उद्यान में एक महाज्ञानी मुनिश्वर अपने संघ सहित आये। यह शुभ समाचार सुनते ही राजा अपने परिवार सहित दर्शन को आया। भक्ति से राजा ने तीन प्रदक्षिणा देकर वन्दना की, धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा ने व बहुत ही लोगों ने व्रत लिया और वे सब नगर में वापस गये।

यह सब देखकर नागश्री मुनिश्वर की वंदना कर बोली हे दयासिंधु! आपने राजादिक को जो दिया है वह मुझे भी दो। तब मुनिश्वर ने उसको मद्य, मांस, मधु का त्याग कराया जिससे वह मरकर एक श्रेष्ठि के घर सुकुमारी नामक कन्या हुई।

पूर्वकर्म के उदय से उसके शरीर में बहुत ही दुर्गन्ध आती थी। उस नगर में जिनदेव, जिनदत ऐसे दो भाई रहते थे। उसके पिता ने जिनदेव का सुकुमारी से विवाह कराया। पर उसके शरीर से बहुत ही दुर्गन्ध आने से उसे (जिनदेवको) वैराग्य हो गया और उसने दिगम्बरी दीक्षा ले ली। जिससे सुकुमारी अत्यन्त दुःखी हुई।

एक दिन सुव्रत मुनिश्वर वहां आये तो उसने पूछा मैंने पहले क्या पाप किया तब मुनिश्वर ने उसके पहले भव सब बताये। यह सब सुन उसे बड़ा पश्चाताप हुआ जिससे उसको वैराग्य हो गया और उन मुनिश्वर के पास आर्यिका दीक्षा लेकर तप करने लगी। फिर उसने वह निदान किया कि पहले भव में सोमिल मेरा पति था वही आगे के जन्म में मेरा पति बने जिससे यह भी उसी १६वें स्वर्ग में देवी होकर जन्म लिया।

इधर वह सोमदत्ता आदि पांचों देव स्वर्ग से चयकर पाण्डु राजा के धर्म भीम, अर्जुन, नकुल व सहदेव इस नाम से पांच पुत्र उत्पन्न हुए और स्वर्ग की देवी (पूर्वभव की नागश्री) भी अर्जुन की धर्मपत्नी द्रौपदी हुई। इस प्रकार से इनके पूर्वभव का वृतान्त है।

इन पांचों पांडवों ने अनेक राजऐश्वर्य भोगकर सांसारिक विषयों से वैराग्य उत्पन्न होने से वन में जाकर एक मुनिश्वर के पास जिन दीक्षा ली। धर्म, भीम व अर्जुन तो घोर उपसर्ग सहन कर अन्त में शुक्ल ध्यान के बल से सब कर्मों का क्षय कर मोक्ष गये और नकुल व सहदेव ये दोनों तपश्चरण करके सर्वार्थसिद्धि में अहमिंद्र हुये। ऐसी इस व्रत की महिमा है।

अथ पद्मदत्त चक्रवर्ति व्रत कथा

व्रत विधि :—फाल्गुन शु० ७ के दिन एकाशन करे और अष्टमी के दिन सुबह शुद्ध कपड़े पहन कर अष्ट द्रव्य लेकर मन्दिर में जाये। दर्शन आदि कर पीठ पर नन्दीश्वर बिम्ब व तीर्थंकर (भूतकाल के) की प्रतिमा यक्षयक्षी सहित स्थापित करे। फिर भगवान के सामने स्वास्तिक निकाल कर उस पर नव पत्ते रखकर उस पर अष्टद्रव्य रखे। निर्वाण से लेकर अंगीर तक भूतकाल तीर्थंकर की पूजा करे।

जाप :—ॐ ह्रीं अर्हं अंगिर तीर्थंकराय यक्षयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का जाप १०८ बार पुष्पों से करे। णमोकार मन्त्र का भी जाप करे। सहस्र नाम पढ़े। यह व्रत कथा पढ़े आरती करे उस दिन उपवास करे।

इस प्रकार नव तिथि पूर्ण होने पर कार्तिक अष्टाह्निका में इस व्रत का उद्यापन करे। उस समय अंगिर तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे। चार प्रकार का व करुणा दान दे। मन्दिर में उपकरण आदि रखे।

कथा

इस जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र है, उसमें सुकच्छ देश है, उसमें श्रीपुर नामक नगर है, वहां प्रजापाल नामक राजा राज्य करता था। उसके राज्य में पट्टरानी, पुरोहित मन्त्री, सेठ आदि थे।—

एक दिन मुनिमहाराज चर्या के निमित्त राजवाड़ा में आये। उन्हें नवधा-भक्तिपूर्वक आहार दिया। फिर उन महाराज को एक पाटे पर बैठाया। राजा ने विनती कर कोई एक व्रत मांगा महाराज ने पद्मदत्त चक्रवर्ती यह व्रत करने को कहा और उसकी सब विधि बतायी। समयनुसार उस व्रत का पालन किया और उद्यापन किया।

एक दिन रात के समय उल्कापात को देखकर राजा को वैराग्य हो गया। तब वह अपने पुत्र को राज्य देकर जंगल में गये, वहां जिनदीक्षा ली और तपश्चर्या करने लगे, अन्त समय समाधिपूर्वक मरण हुआ जिससे वे अच्युत स्वर्ग में देवेन्द्र हुये। वहां से चय कर वे पद्मावती रानी के गर्भ से पद्मदत नाम से उत्पन्न हुए। युवावस्था में चक्रवर्ती होकर राज्य सुख भोगा।

बाद में बहुत समय तक राज्य किया और संसार से वैराग्य उत्पन्न होने से अपने पुत्र को राज्य देकर जंगल में गया। वहां एक मुनि से दिगम्बरी दीक्षा धारण की और घोर तपश्चरण किया जिससे सब कर्मों का क्षय करके मोक्ष गये। यही इस व्रत का महत्व है।

अथ पंचकुमार व्रत कथा अथवा गुरुवार व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि कार्तिक के शुक्लपक्ष में पहले बुधवार को एकभुक्ति (एकाशन) करे और गुरुवार को उपवास करे। पूजा वगैरह करे। पंचपरमेष्ठी की आराधना कर वस्तुकुमार, वायुकुमार, मेघकुमार, अग्निकुमार व नागकुमार, इनकी क्रम से पांच पान मांडकर अर्चना करे।

इस प्रकार पांच गुरुवार को पांच पूजा पूर्ण होने पर अन्त में फाल्गुन अष्टान्हिका में इनका उद्यापन करे। पांच मुनि व आर्यिका को आहारदान दे, उसी प्रकार पांच दम्पति को भोजन करावे।

कथा

मंगलावती देश में मंगलपुर नगर है, वहां पर पहले सुमंगल नामक एक गुणवान सदाचारी शूरवीर राजा राज्य करता था। उसकी मंगल देवी नामक स्त्री थी। उसको जयमंगल नामक पुत्र था उसकी स्त्री जयावती थी, उसको विजयकीर्ति नामक पुरोहित, गजगामिनी नामक स्त्री और विजय नामक सेठ व यमुनादता नामक स्त्री थी।

एक दिन विजयसेन नामक महामुनि उस नगर के उद्यान में आये। राजा अपने पूरे परिवार सहित उनके दर्शन को गया। धर्मोपदेश सुनकर राजा ने कोई एक व्रत *विधान बताने की प्रार्थना की। महाराज ने उन्हें यह व्रतविधि बतायी उन्होंने यह व्रत*

रानी के साथ लिया । सब लोग वन्दना करके अपने नगर में वापस आये । व्रत का पालन विधिपूर्वक किया । इस व्रत के प्रभाव से समाधिपूर्वक उनका मरण हुआ और अनुक्रम से स्वर्गसुख भोगते हुए मोक्ष गये ।

अथ पंचमहाक्षेत्रपाल व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर सिर्फ इतना है कि आश्विन महिने के पहले शनिवार को एकाशन करे और रविवार को उपवास करे, क्षेत्रपाल की पूजा करते समय एक पाटे पर पांच पान मांडे और उस पर अष्टद्रव्य व गुड़ मिश्रित पांच लड्डू रखे । पांच क्षेत्रपाल की क्रम से अर्चना करना । पांच पकवान का चरू बनावे ।

ॐ आं क्रों ह्रीं ह्रूं फट् पंचमहाक्षेत्रपाल देवेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ पुष्प से जाप करे । पांच रविवार व्रत करके अन्त में कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे । आहारदान देकर उन्हें योग्य उपकरण दे । पांच दम्पति को भोजन करावे, उन्हें वस्त्र आदि दे । चावल, गंध, फल, नारियल, हल्दी, कुंकु उससे ओटी भरे ।

कथा

मिथिला नगरी में जिनराय नामक एक राजा राज्य करता था । उसकी विदेही नामक पट्टरानी थी, उसको कनक महाराज नामक एक भाई था, उसकी स्त्री कनकवती थी । इनके अलावा मन्त्री, पुरोहित, राजश्रेष्ठी आदि परिवार था ।

एक दिन नगर के उद्यान में श्री कनकप्रभ नामक मुनिमहाराज अपने संघ सहित आये । नगर के लोग संघ सहित मुनि के दर्शन को गये । मुनि की प्रदक्षिणा लगाकर वन्दना की । फिर धर्मोपदेश सुनकर राजा ने हाथ जोड़कर कहा कि हे दया-सिंधो स्वामिन्! आज मुझे सुख का कारण ऐसा कोई व्रत कहो । तब महाराज जी ने कहा हे भव्योत्तम राजन् श्री पंचमहाक्षेत्रपाल व्रत का पालन करो । राजा नगर में वन्दना कर वापस आया और इस व्रत का पालन किया और उद्यापन किया । आयु पूर्ण होने पर स्वर्ग गये वहां पर चिरकाल सुख भोगा ।

अथ पंचपर्वी व्रत

द्वितीया, पंचमी, अष्टमी, एकादशमी और चतुर्दशी, ये पांच तिथि प्रत्येक महिने में दोनों पक्ष में होती है। उस दिन यथाशक्ति प्रोषधोपवास करना। अथवा कांजिका आहार अथवा एकाशन करना, उस दिन हरी वस्तु का त्याग करना। कच्चे फल उस दिन नहीं खाना। यह व्रत आजन्म अथवा नियम से कई वर्ष तक किया जाता है।

यह व्रत अपनी शक्ति अनुसार करना।

(गोविन्दकृत व्रत निर्णय)

अथ पीतलेश्यानिवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि चैत्रकृष्णा १४ के दिन एकाशन करे। ३० के दिन उपवास करना, महावीर भगवान की पूजा, जाप, मन्त्र, मांडला आदि करे।

अथ पद्मलेश्या निवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि वैशाख शुक्ला १ के दिन एकाशन करे और २ को उपवास करे। पंचपरमेष्ठी की पूजा, मन्त्र, जाप, पाने माण्डला आदि करे। पहले के जैसे ६ पूजा पूर्ण होने पर कार्तिक अष्टान्हिका में उसका उद्यापन करे।

अथ पृथ्वीकाय निवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले जैसी सब विधि करनी चाहिए। अन्तर केवल इतना है कि चैत्र शुक्ला ५ को एकाशन करना चाहिए और ६ को उपवास करना चाहिए। पद्मप्रभ तीर्थंकर की पूजा, मन्त्र जाप्य करना चाहिए, ६ पत्ते रखना चाहिए।

पंचमास चतुर्दशी व्रत

आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक इन पांच महिनों में शुद्ध चतुर्दशी को प्रोषधोपवास करना। इस व्रत को पंचमास चतुर्दशी व्रत कहते हैं। इसमें पांच उपवास होते हैं। यह इस व्रत का एक प्रकार है।

दूसरी विधि :—उपरोक्त पाँच महिनों के दोनों पक्ष में अर्थात् शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष की १४ को उपवास करना। अर्थात् सब १० उपवास होते हैं। इसमें रूपचतुर्दशी व शील चतुर्दशी के उपवास मिलाने पर पंच चतुर्दशी व्रत होता है। आषाढ़ की शुक्ल १४ को शील चतुर्दशी, और श्रावण की शुक्ल चतुर्दशी रूप चतुर्दशी को कहते हैं। वर्ष में कई महिने अथवा दो महिने करने से मासिक व्रत कहते हैं।

अथ पंचाणु व्रत कथा व विधि

चैत्र शुक्ला अष्टमी से या कोई भी महिने की अष्टमी से व्रत प्रारम्भ कर सकते हैं, सप्तमी के दिन एकाशन कर अष्टमी को प्रातः स्नानादि करके शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजा द्रव्य हाथ में लेकर जिनमन्दिर जी में जावे, तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करता हुआ व्रतिक भगवान को साष्टांग नमस्कार करे। अभिषेक पीठ पर भगवान बाहुबली और चौबीस तीर्थंकर की मूर्ति यक्षयक्षि सहित स्थापन कर पंचामृत अभिषेक करे, एक पाटे पर केसर से वा अष्टगंध से २५ स्वस्तिक निकाले, उन स्वस्तिकों पर एक २ पान लगावे, उन पानों पर गंधाक्षत, फूल, फल आदि रखे, चौबीस तीर्थंकर व बाहुबली भगवान की अष्टद्रव्य से पूजा कर श्रुत की पूजा करे, गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षी क्षेत्रपाल को अर्घ्य समर्पण करे।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप करे, १०८ बार णमोकार जपे,

ॐ ह्रीं अर्हं बाहुबलि जिनदेवाय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का भी १०८ बार जाप करे, उसके बाद पंचाणु व्रत पूजा आगे लिखे अनुसार करे।

१ ॐ ह्रीं अर्हं छेदनातिचार रहिताय अहिंसाणु व्रताय नमः स्वाहा।
२ ,, ,, ,, बंदनातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
३ ,, ,, ,, पीडनातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
४ ,, ,, ,, अतिभारारोपणातिचार ,, ,, ,,
५ ,, ,, ,, अन्नपाननिरोधातिचार ,, ,, ,,

६ ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्योपदेशातिचार रहिताय सत्याणुव्रताय नमः स्वाहा
७ ,, ,, ,, रहोभ्याख्यानातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
८ ,, ,, ,, कुटलेखक्रियातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
९ ,, ,, ,, न्यासापहारातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
१० ,, ,, ,, साकारमन्त्रभेदातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
११ ,, ,, ,, स्तेनप्रयोगातिचार ,, अचौर्याणुव्रताय ,, ,,
१२ ,, ,, ,, तदाहृतादानातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
१३ ,, ,, ,, विरुद्धराज्यातिक्रमातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
१४ ,, ,, ,, हीनाधिकमानोन्मानातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
१५ ,, ,, ,, प्रतिरूपकव्यवहारातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
१६ ,, ,, ,, परविवाहकरणातिचार ,, ब्रह्मचर्याणुव्रताय ,, ,,
१७ ,, ,, ,, इत्वरिकागमनातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
१८ ,, ,, ,, परिगृहीतापरिगृहीतागमनातिचार रहिताय ब्रह्मचर्याणुव्रताय नमः स्वाहा
१९ ,, ,, ,, अनंगक्रीडातिचार रहिताय ,, ,, ,, ,,
२० ,, ,, ,, कामतीव्राभिनिवेशातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
२१ ,, ,, ,, अतिवाहनातिचार परिमितपरिग्रहाणुव्रताय ,, ,,
२२ ,, ,, ,, अतिसंग्रहातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
२३ ,, ,, ,, विस्मयातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
२४ ,, ,, ,, लोभातिचार ,, ,, ,, ,, ,,
२५ ,, ,, ,, अतिभारवहनातिचार ,, ,, ,, ,, ,,

उपरोक्त २५ मन्त्रों से अष्टद्रव्य लेकर पूजा करे, पंच पकवान का नैवेद्य चढ़ावे, प्रत्येक उपवास के समय क्रम से एकेक मन्त्र से एकेक पुष्प चढ़ावे, प्रत्येक मन्त्र का १०८ बार चढ़ावे, णमोकार मन्त्र का जाप करे, सहस्र नाम पढ़कर, पंचाणुव्रत पालन करने में प्रसिद्ध पुरुषों की, मातंग, धनदेव, वारिषेण आदि की कथा पढ़े, एक पात्र में २४ पान रखकर उसके ऊपर अर्घ रखे और एक नारियल रखकर

महाअर्घ करे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा देकर मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करके धर्मध्यान से समय बितावे, सत्पात्रों को आहारदान देवे, दूसरे दिन पूजा व दान करके स्वयं पारणा करे, याने एकभुक्ति करे, तीन दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे। इसी क्रम से प्रत्येक अष्टमी व चतुर्दशी को प्रोषधोपवास पूर्वक व्रत उपवास करे, पच्चीस उपवास पूर्ण होने के बाद व्रत का उद्यापन करे, उस समय सर्वदोष प्रायश्चित विधान करके महाअभिषेक करे, चारों संघों को चार प्रकार का दान देवे। इस प्रकार इस व्रत की पूर्ण विधि है, जो भी भव्यजीव इस व्रत का यथाविधि पालन करता है उसको इस लोक और परलोक में सुख की प्राप्ति होती है।

पात्रदान और प्रतिमायोग व्रत का स्वरूप

प्रतिदिनं पात्रदानं कार्यम्। यदि पात्रदानं न स्यात्तदा रसपरित्यागः कार्यः। प्रतिमायोगः कायोत्सर्गादिकः यथाशक्ति नियमः दैवासिकः कार्यः इत्यादीनी दैवासिकव्रतानि।

अर्थ :—प्रतिदिन पात्रदान करने का नियम लेना पात्रदान व्रत है। यदि प्रतीक्षा और द्वारापेक्षण करने पर भी पात्र नहीं मिले तो रसपरित्याग करना चाहिए।

शक्ति के अनुसार कायोत्सर्ग आदि का नियम दिन के लिए लेना प्रतिमायोग व्रत है। इस प्रकार दैवसिक व्रतों का पालन करना चाहिए। उपर्युक्त त्रिमुखशुद्धि आदि सभी व्रत दैवसिक हैं।

विवेचन :—गृहस्थ को अपनी अर्जित सम्पत्ति में से प्रतिदिन दान देना आवश्यक है। जो गृहस्थ दान नहीं देता है, पूजा-प्रतिष्ठा में सम्पत्ति खर्च नहीं करता है, उसकी सम्पत्ति निरर्थक है। धन की सार्थकता धर्मोन्नति हेतु धन व्यय करने में ही है, भोग के लिए खर्च करने में नहीं। अपना उदर पोषण तो शूकर-कूकर सभी करते हैं, यदि मनुष्य जन्म पाकर भी हम अपने ही उदर-पोषण में लगे रहे तो हम शूकर-कूकर से भी बदतर हो जायेंगे। जो केवल अपना पेट भरने के लिए जीवित है, जिसके हाथ से दान-पुण्य के कार्य कभी नहीं होते हैं, जो मानव-सेवा में कुछ भी खर्च नहीं करता है, दिन-रात जिसकी तृष्णा धन एकत्रित करने के लिए बढ़ती जाती है,

ऐसे व्यक्ति की लाश को कुत्ते भी नहीं खाते हैं। अतएव प्रत्येक गृहस्थ के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि वह प्रतिदिन नियमपूर्वक दान देवे तथा कुछ तपश्चर्या भी करे।

वास्तविक तप तो इच्छाओं का रोकना ही है या दिन को कुछ समय की अवधि कर कायोत्सर्ग करना भी तप है। अभ्यास के लिए कायोत्सर्ग आदि का भी नियम करना तथा अपनी भोगोपभोग की लालसाओं को घटाना जीवन को उन्नति की ओर ले जाना है।

पंचश्रुतज्ञान व्रत

पंचश्रुतज्ञानहिं व्रत सार, कर उपवास निरन्तर धार।
इक सौ अड़सठ दिन परवान, जब चाहे आरम्भे थान।।

—वर्धमान पुराण

भावार्थ :—यह व्रत ३३६ दिन में समाप्त होता है, जिसमें १६८ उपवास और १६८ पारणे होते है। एक उपवास एक पारणा इस अनुक्रम से करे। **ॐ ह्रीं पंचश्रुतज्ञानाय नमः** इस मन्त्र का जाप्य करे। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

अथ ब्रह्मदत्त चक्रवर्ति व्रत कथा

व्रत विधि :—कार्तिक शु० दशमी के दिन एकाशन करे, और ११ के दिन शुद्ध कपड़े पहन कर मन्दिर जाये, दर्शन आदि करने के बाद वेदि पर कुसुमांजलि तीर्थंकर की प्रतिमा यक्षयक्षी के साथ स्थापित करे फिर पंचामृताभिषेक करे। एक पाटे पर १२ स्वस्तिक निकाल कर उस पर अष्टद्रव्य रखकर निर्वाण से कुसुमांजली तीर्थंकर तक पूजा करे।

जाप :—ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुसुमांजली तीर्थंकराय यक्षयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे। श्री जिन सहस्रनाम स्तोत्र पढ़े। यह कथा पढ़े। फिर एक पात्र में अष्टद्रव्य से आरती करे। उस दिन उपवास करे। धर्म-ध्यान पूर्वक समय निकाले। चार प्रकार का दान देवे।

इस प्रकार एक महीने में एक एक बार, ऐसे १२ तिथि पूर्ण होने पर कार्तिक माह की अष्टान्हिका में इसका उद्यापन करे। उस समय कुसुमांजलि तीर्थंकर का विधान कर महाभिषेक करे। १०८ कमलों के पुष्पों से पूजा करे। चतु:विध संघ को दान देवे। १२ दम्पतियों को भोजन करावे। फिर उनका सत्कार करे। मन्दिर बनावे या जीर्णोद्धार करावे। मन्दिर में उपकरण आदि भेंट करावे।

कथा

यह व्रत पहले ऐरावत क्षेत्र में वीरसेन राजा ने पालन किया था जिससे वह चक्रवर्ति राजा हुआ, भावीकाल में वह तीर्थंकर होगा, यही इस व्रत का महत्व है।

बलगोबन्द व्रत कथा (बलप्रद)

भाद्र शुक्ल दशमी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहिन कर पूजा अभिषेक का द्रव्य लेकर मन्दिर जी जावे, वहां मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, बेदी पर चौबीसी प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षिणियों की और क्षेत्रपाल की पूजा करे, जिनेन्द्र भगवान की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में अर्घ्य रख कर नारियल रखे, फिर हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य जिनेन्द्र को चढ़ा देवे। ब्रह्मचर्य का पालन करे, उस दिन उपवास करे, धर्मध्यान से समय बितावे, दूसरे दिन दान देकर स्वयं पारणा करे।

इसी क्रम से इस व्रत को दश वर्ष करे अथवा दश महीने करें, अन्त में उद्यापन करे, उस समय महाभिषेक करके दश प्रकार का नैवेद्य चढ़ावे, चतुर्विध संघ को चार प्रकार का दान देवे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में चंद्रवर्धन नाम का बड़ा देश है, उस देश में चन्द्रपुर नाम का मनोहर नगर है, उस नगर में चंद्रसेन नाम का राजा अपनी रानी चन्द्रलेखा के साथ राज्य करता था, एक दिन नगर के उद्यान में यशोभद्र नाम के मुनि आये, यह समाचार राजा को वनपाल से प्राप्त होते ही पुरजन परिजन सहित मुनि-दर्शन के लिए उद्यान में गया, वहां जाकर मुनि दर्शन करके धर्मसभा में जाकर बैठा। कुछ समय धर्मोपदेश सुनकर मुनिराज को हाथ जोड़ते हुये विनती करने लगा कि हे गुरुदेव हमारे आत्म-कल्याण के लिए कोई ऐसा व्रत विधान कहो कि जिससे आत्म-कल्याण हो, तब मुनिराज ने कहा कि हे राजन आप लोग बलगोबंद व्रत का पालन करो, ऐसा कहते हुए व्रत की विधि को कहा। इस व्रत को किसने पालन किया उस की कथा कहता हूं। सुनो।

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में आर्यखण्ड जन्मनिलय नाम का एक देश है। उस देश में नित्य वसंत नाम का एक सुन्दर नगर है। उस नगर में सत्यसागर नाम का राजा अपनी सदगुणी रानी चितात्सवा के साथ सुख से राज्य करता था। एक बार राजा के घर भूतानन्द नाम के मुनिराज आहार के लिए आये, आहार होने के बाद मुनिराज को पाटे पर विराजमान करके हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगा कि हे गुरुदेव ! मेरे को सन्तान सुख की प्राप्ति है कि नहीं, कृपा करके कहें।

तब मुनिराज कहने लगे कि राजन तुमको दो पुत्ररत्न उत्पन्न होंगे, लेकिन उसके लिए आपको बलगोबंद व्रत करना चाहिए, ऐसा कहकर व्रत का स्वरूप बताया, राजा ने प्रसन्न होकर व्रत को स्वीकार किया। मुनिराज जंगल को वापस चले गये, राजा ने व्रत को विधि से पालन किया। अन्त में उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से राजा को दो गुणवान पुत्र उत्पन्न हुये, सुख से राज्य किया, अन्त में समाधिपूर्वक मरण कर स्वर्ग में देव हुआ। वहां से मनुष्य भव धारण कर दीक्षा ग्रहण कर घोर तपश्चरण करता हुआ कर्म काट कर मोक्ष को गया।

चन्द्रसेन राजा ने इस व्रत की कथा को सुनकर आनन्द से इस व्रत को ग्रहण

किया, नगर में वापस लौट आये, नगर में आकर व्रत को अच्छी तरह से पालन किया अन्त में व्रत का उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से राजा को दो पुत्र उत्पन्न हुए, एक का नाम जय और दूसरे का विजय था, पुत्र बड़े होने पर बड़े को राज्य देकर दीक्षा ग्रहण कर ली, अन्त में मोक्ष सुख की प्राप्ति की।

बारह भेद तप व्रत

लाइन (क्रम) से बारह उपवास। उपवास करने के बाद क्रम से कांजिकाहार बारह, अन्नाहार बारह, मनचित्याहार बारह, रूक्ष नीरस आहार बारह, घृतरहित एकाशन बारह, तेल रहित एकाशन बारह, दूध रहित एकाशन बारह, दही रहित एकाशन बारह, इक्षुरस रहित एकाशन बारह, मीठा (नमक) रहित एकाशन १२, इस क्रम से व्रत करना चाहिए। इस व्रत को बारह भेद तप व्रत कहते हैं।

बीज पूरत तप व्रत

भाद्र सुदी को उपवास करके दो दिन एकाशन करना उसके बाद फिर दो दिन एकाशन करके अष्टमी को उपवास करना चाहिए। फिर दो दिन आहार करके एकादशी को उपवास करना चाहिए। द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी को उपवास करके पूर्णिमा को एकाशन करना। उपवास की रात्रि को जागरण कर रात्रि धर्मध्यान पूर्वक व्यतीत करनी चाहिए।

बारह बिजोरा व्रत

प्रत्येक महिने की सुदी व वदी की द्वादशी को प्रोषधोपवास करना ऐसे बारह महिने करना चाहिए अर्थात् वर्ष में २४ उपवास करना यह एक वर्ष करना। उसका प्रारम्भ कभी भी कर सकते हैं। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए। उद्यापन नहीं किया तो व्रत फिर से एक बार करना चाहिए।

—जिनव्रत विधान संग्रह

बसरबलगद व्रत विधि व व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन की तीनों अष्टान्हिका में से कोई एक अष्टान्हिका से प्रारम्भ करे, स्नान कर, शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजाभिषेक का सामान अपने हाथों

में लेकर जिनमन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाते हुये भगवान को नमस्कार करे, ईर्यापथ शुद्धि क्रिया करके भगवान को अभिषेक पीठ पर स्थापन करके पंचामृत अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से भगवान की पूजा करके, ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनंतानंत ज्ञान शक्तये अर्हत्परमेष्ठिने नमः स्वाहा. १०८ बार पुष्प लेकर जप करे जिन सहस्रनाम पढ़े, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे ।

यह व्रत कथा पढ़े, शास्त्र, गुरु की पूजा करना, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल इनका भी इनके योग्यतानुसार अर्घ्यादि देकर सम्मान करना, एक महाअर्घ्य बनाकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाते हुये मंगल आरती उतारे, अर्घ्य को भगवान के आगे चढ़ा देवे । इसी क्रम से चार महिनों तक नित्य पूजा करनी चाहिये, व्रत के पूर्ण होने पर अर्हत्परमेष्ठि की महाभिषेक पूजा करता हुआ व्रत का उद्यापन करे, उस समय बारह बांस का छोटा करंड मंगवाकर उत्तम २ वस्तु, मिठाई भरकर करंडों को कागज आदि से बंद कर देवे, उसमें बारह प्रकार का धान्य भी भरे, और क्रमशः एक-एक पर अलग २ कलश रखकर उन कलशों में दूध और घी भरे, अन्दर सोने के पुष्प डाले, कलश सूत के धागे से लपेटे हुए रहना चाहिए, कलशों को गंध, हल्दी, अक्षत लगाना, करंड कलशों के सामने बहुत प्रकार की मिठाई रखना चाहिये, एक मन चांवल को बारह जगह अलग २ रखकर उसके ऊपर भी एक कलश रखे, भगवान जिनेन्द्रदेव की अभिषेक पूर्वक पूजा करता हुआ, वायना करंड को प्रदान करे, एक देव को एक गुरु को एक शास्त्र एक आर्यिका को एक पद्मावती, एक ज्वालामालिनी, एक जलदेवता को अर्पण करे, सामने रखी हुई मिठाई भी अर्पण करे, कथा सुनाने वाले गृहस्थाचार्य (पंडित) को एक देवे, चार सौभाग्यवती स्त्रियों को देवे, इस प्रकार बारह वायना देवे ।

कथा

एक बार राजगृही नगर में रहने वाला राजा श्रेणिक का राजश्रेष्ठि भगवान महावीर के समवशरण में जाकर धर्मोपदेश सुनने के लिए मनुष्य के कोठे में बैठ गया कुछ समय वाणी को सुनने के बाद सेठ जयसेन और धर्मपत्नी जयसेना सहित हाथ जोड़कर नमस्कार करता हुआ, गौतम गणधर से कहने लगा कि हे गुरो

मेरी सेठानी की ऐसी इच्छा है कि आपके मुख से परम सुख को देने वाला कोई व्रत विधान का स्वरूप सुने इसलिये कृपा करके कोई व्रत विधान कहिये, तब गौतम गणधर कहने लगे कि हे भव्यो आप लोग बसरबलगद व्रत को स्वीकार करो जिसके प्रभाव से इस लोक में इन्द्रिय सुख भोगकर परमार्थ सुख को भी भोगोगे ऐसा इस व्रत का प्रभाव है, ऐसा कहकर गौतम स्वामी ने व्रत का विधान कहा, सेठ-सेठानी को व्रत की विधि को सुनकर बहुत आनन्द हुआ ।

सेठानी ने खुशी से व्रत को स्वीकार किया, और नगर में वापस आये, आगे कालानुसार उस जयसेना स्त्री ने यह व्रत पालन करने के लिये प्रारम्भ किया, तब एक दिन जिनमन्दिर से व्रताचरण करके वापस घर को आ रही थी, रास्ते में विजयसेना नामकी स्त्री के साथ भेंट हुई, तब वह कहने लगी कि हे बहन आज आप इधर कहां गई थी ? तब वह कहने लगी, अरी बहन मैं आज बसरबलगद व्रताचरण करने के लिये जिनमन्दिर में गई थी, यह सुनकर उसके मन में व्रत की जानकारी करने की आकांक्षा हुई, वह कहने लगी, बहन इस व्रत का फल क्या है और कैसे किया जाता है मैं भी इस व्रत को पालन करूंगी, ऐसा सुनकर उसने पूर्ण व्रत का विधान और फल कह सुनाया, विजयसेना के पास में यह व्रत को लेकर यथाविधि पालन करने लगी, थोड़े ही समय में व्रत के फल से पुत्र, बहुत सा धन वगैरह बहुत ही हो गया, इसके कारण वह भोगासक्त हो गई और अहंकार में आकर व्रत को छोड़ दिया । इस कारण से सब पुत्र छोड़कर अलग २ हो गये, धन संपति सर्व नष्ट हो गई और पति-पत्नी दोनों दूसरे के घर जाकर रहने लगे, इस प्रकार उसकी अत्यंत दुर्दशा हो गई ।

एक दिन चर्या के लिये सुभद्र नाम के मुनि आहार के लिये उसके घर पर आये, तब उसने योग्य रीति से नवधाभक्ति से आहार दिया और एक पाटे पर मुनिराज को स्थापन कर हाथ जोड़ नमस्कार करती हुई कहने लगी कि हे स्वामिन हमारी ऐसी दुर्दशा क्यों हो गई, पुत्र सब छोड़कर चले गये, धनधान्यादि नष्ट हो गये, इसका कारण क्या है, अवधिज्ञान से सर्व वृतांत जानकर मुनिराज कहने लगे कि हे भव्यो तुमने अहंकार में आकर व्रत को पूरा न करके अधूरे में ही छोड़ दिया, इस पाप से तुमको यह कष्ट मिला है ।

इसलिये पुनः इस व्रत को पूर्णरूप से पालन करो तब तुम्हारा दुःख-दारिद्र सब नष्ट हो जायेगा। ऐसा सुनते ही वो अपने पाप से डरी और पुनः व्रत को पालन करने लगी, व्रत पूर्ण होने के बाद व्रत का उद्यापन किया, व्रत के पुण्य से पुनः धन सम्पत्ति प्राप्त होकर सर्व सुखी हो गई, इतना होने पर अब वो अच्छी तरह से धर्म का पालन करने लगी, समाधिमरण से मरकर स्वर्ग में गई और क्रमशः मोक्ष सुख को प्राप्त किया, व्रत का अचिन्त्य प्रभाव है।

अथ बुधाष्टमी व्रत कथा

बारह महिने की किसी भी अष्टमी को जिस दिन बुधवार हो (बुधाष्टमी हो) उस दिन व्रत को धारण करने वाला प्रातःकाल स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर, पूजा का सामान साथ में लेकर जिनमन्दिर को जावे, मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, जिनेन्द्र भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, नंदादीप जलावे, याने मन्दिर में दीपक जलावे, अभिषेक पीठ पर पंचपरमेष्ठि की और महावीर स्वामी की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, भगवान के सामने एक पाटे पर चांवल से साथिया निकालकर, पांच पान रखे, उन पानों पर प्रत्येक पर अष्टद्रव्य रखे, उसके आगे चांवल का एक ढेर बनाकर उस ढेर पर सजा हुआ मंगल कलश रखे, फिर अष्टद्रव्य से पूजा करे, गुरु व शास्त्र की पूजा करे, यक्षयक्षि क्षेत्रपाल (ब्रह्मदेव) को अर्घ चढ़ावे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वर्धमानजिनेन्द्राय मातंगसिद्धायिनी यक्षयक्षि सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, सहस्रनाम स्तोत्र पढ़े, महावीर चरित्र पढ़े, व्रत कथा पढ़े ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा स्वाहा। १०८ पुष्प से जाप्य करे।

एक पात्र में नारियल सहित अर्घ्य रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगलारती उतार कर अर्घ्य को चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य पाले, सत्पात्रों को दान देवे, दूसरे दिन पारणा करे, इस प्रकार आठ बुधवार अष्टमी व्रत करे, नवमी बुधवार अष्टमी को इस व्रत का उद्यापन करे, उस समय वर्द्धमान

भगवान की एक नवीन मूर्ति बनवाकर पंचकल्याण प्रतिष्ठा करे, एक पाटे पर गंध से नौ साथिया निकालकर ऊपर पान रखे, उसके ऊपर प्रत्येक पर अष्टद्रव्य रखे, उसके आगे एक बड़ा धान्य का ढेर बनावे, नौ प्रकार का पकवान चढ़ावे, आठ मुनियों के संघ को आहारदानादि देवे, आर्यिका व ब्रह्मचारी को भी भोजनादि देवे, श्रावक श्राविकाओं को भोजन करावे, पान सुपारी खिलावे, सम्मान करे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में आर्यखंड है, उसमें अंग देश है, उस देश में चंपापुर नगर है, उस नगर का राजा विजितांक अपनी रानी गुणवती सहित सुख से राज्य करता था।

उस नगर में गुणवर्मा नाम का ब्राह्मण सावित्री स्त्री के साथ रहता था, गुणवर्मा का पिता पुत्रमोह से मरकर कुत्ता की पर्याय में गया, लोग उसको देखकर ग्लानि से पत्थर मारते थे। एक दिन उस नगर के कुछ श्रावक लोग बुद्धाअष्टमी व्रत करने को जिनमन्दिर में जा रहे थे, तब वह कुत्ता भी सब लोगों के साथ जिनमन्दिर में गया, श्रावक लोग अपने २ पाँव धोकर मन्दिर में गये, वह कुत्ता भी पांव धोये हुये पानी में ही अपना शरीर आलोड़ित करके मन्दिर में चला गया और श्रावकों द्वारा होने वाली बुद्धाअष्टमी व्रत की पूजा को अच्छी तरह से देखने लगा, पूजा को देखते ही शांत हो गया, वही कुत्ता पूजा देखने के पुण्य से मरकर उस नगर के राजा विजितांक की रानी गुणवती के गर्भ से रूपमति नामक कन्या होकर उत्पन्न हुआ, आगे जाकर वह रूपमति कन्या सुन्दर व विद्यावान हुई। कन्या तारुण्य अवस्था में आने पर एक दिन अपने महल के गच्छी पर बैठी थी, कि एक चित्रवाहन नाम का विद्याधर राजा अपने विमान में बैठकर कहीं जा रहा था, अचानक दृष्टि उसी कन्या पर पड़ी, कन्या को देखते ही विद्याधर नीचे उतर आया और विजितांक राजा को नमस्कार कर राज्य सभा में बैठ गया, राजा को कहने लगा कि राजन मैं विद्याधर राजा हूं, मेरा नाम चित्रवाहन है, आपकी लड़की पर मैं मोहित हो गया हूं, अपनी लड़की का विवाह मेरे साथ कर दीजिये।

राजा ने यह सब सुना और मन में प्रसन्नता व्यक्त की और अपनी लड़की

का विवाह शुभ मुहूर्त में उस विद्याधर राजा के साथ कर दिया, कुछ दिन अपनी रानी के साथ उस नगरी में रहकर अपने नगर में चला गया, वह विद्याधर राजा अपनी रानी के साथ में सुख से राज्य करता था ।

एक दिन मासोपवासी ज्ञानसागर मुनि महाराज आहार के लिये राजमहल में आये, तब रूपमति रानी ने नवधाभक्ति से आहारदान दिया । दान के प्रभाव से पंचाश्चर्य वृष्टि हुई, आहार होने के बाद मुनिराज को रानी ने ऊंचे आसन पर बैठाया, तब रूपमती राणी ने मुनिराज से कहा कि हे देव, मेरे पूर्व भव कहो, मुनिराज ने उसके सर्व भव प्रपंच को कह सुनाया, तब रानी ने कहा हे देव आप कृपा करके मेरे को बुद्धाअष्टमी व्रत की विधि कहो, मुनिराज ने व्रत की विधि कही तब रानी ने व्रत को स्वीकार किया और व्रत को विधिपूर्वक पाला, अंत में उद्यापन किया ।

एक दिन रूपमति अपने पीहर चंपापुर में विमान से आयी, सहस्रकूट जिनमन्दिर में दर्शन को गई, वहां मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार किया, सभा मंडप में आई, वहां एक श्रीमती नामक आर्यिका जी को देखा, उनको नमस्कार किया, धर्मोपदेश सुना, और घर को गई ।

आगे उस व्रत को अपने पति सहित पालन कर, व्रत का उद्यापन किया, और अपने नगर में वापस आ गई, राजऐश्वर्य का भोग कर दोनों ही अन्त में दीक्षा लेकर स्वर्ग में गये, परम्परा से मोक्ष को जायेंगे ।

अथ बृहत श्रुतस्कंध व्रत कथा

कार्तिक शुक्ल चतुर्थी के दिन व्रतिक एकाशन का नियम करके प्रातः स्नान आदि से निवृत होकर शुद्ध वस्त्र पहने पूजा का सामान हाथ में लेकर जिनमन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धि करके जिनेन्द्र प्रभु को साष्टांग नमस्कार करे, उसके बाद सभा मण्डप को शृंगारित करे, ऊपर चंदोवा बांधे, वेदि पर पांच रंगों से श्रुतस्कंध यन्त्र मण्डल बनावे, उसके आगे चतुरस्त्र पंच मंडल निकाले, आठ मंगल कुंभ रख कर अष्ट मंगल द्रव्य रखे, पञ्चवर्ण सूत्र से मण्डल को तीन बार वेष्टित कर नवीन केशरिया या शुक्ल वस्त्र लगावे, मण्डल के मध्य में एक

सुशोभित कुंभ रख कर उसके ऊपर एक थाली रखे, उस थाली में अष्ट गंध से या केशर से श्रुतस्कंध यन्त्र निकाले, उस यन्त्र पर २६ पान रखे, उन पानों पर अष्ट द्रव्य रखे।

उसके बाद अभिषेक पीठ पर चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापन करे, श्रुतस्कंध यंत्र स्थापन करे, फिर पञ्चामृताभिषेक करे, चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा, श्रुतस्कंध यन्त्र को मंडल पर जो कुंभ के ऊपर थाली रखी है, उस थाली में विराजमान करे, फिर नित्य पूजा विधि करके श्रुत स्कंध विधान करे, २६ नैवेद्य चढ़ावे, श्रुतस्कंध विधान के मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप करे, एक माला णमोकार मन्त्र की फेरे, शास्त्र स्वाध्याय करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में महाअर्घ्य करके तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगल आरती उतारता हुआ अर्घ को चढ़ा देवे।

उस दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे, उपवास पूर्वक धर्मध्यान से समय बितावे, दूसरे दिन सर्व पूजा विधि करके स्वयंभु स्तोत्र का पाठ करे। इस प्रकार यह व्रत १४ वर्ष पालन कर अन्त में उद्यापन करे, एक नवीन श्रुत स्कंध यन्त्र तैयार कर, उसकी प्रतिष्ठा करावे, यथाशक्ति चतुर्विध संघ को दान देवे। इस प्रकार व्रत की विधि कही।

कथा

इसी जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र के अन्दर पुष्कलावती नाम का देश है, उस देश में पुंडरीकिणी नाम की नगरी है, उस नगरी में एक विजयंधर राजा अपनी रानी विशालनेत्रा के साथ सुख से राज्य करता था। उस राजा का एक सोमदत्त पुरोहित था, पुरोहित की पत्नी का नाम लक्ष्मीमती था, पुरोहित को सोमदत्ता नाम की एक पुत्री थी। एक दिन सुगुप्ताचार्य नाम के महामुनिश्वर मासोपवास के बाद आहारार्थ नगर में भ्रमण-कर रहे थे, तब पुरोहित की लड़की सोमदत्ता ने मुनिराज को देखकर ग्लानि करती हुई मुनिराज के ऊपर थूक दिया, मुनिराज अन्तराय मान कर जंगल को चले गये।

वहां उन्होंने आत्म ध्यान के बल से केवलज्ञान प्राप्त किया और मोक्ष चले

गये। उधर पुरोहित पुत्री सोमदत्ता की वाणी बंद हो गई, अनेक प्रकार का औषधोपचार करने पर भी रोग नहीं खतम हुआ, माता-पिता को बहुत चिंता रहने लगी।

एक बार उस नगरी के उद्यान में यशोधर मुनिश्वर पधारे, इस शुभ वार्ता को सुनकर राजा अपने परिजन पुरजनों के साथ उद्यान में मुनिराज के दर्शन को गया धर्म श्रवण कर पुरोहित हाथ जोड़ कर विनय से प्रार्थना करने लगा कि हे देव महा-मुनिश्वर मेरी कन्या की वाणी क्यों एकदम बन्द हो गई क्या कारण है, उसके गूंगे-पन का कारण कहो। तब अवधिज्ञान-सम्पन्न महामुनिश्वर कहने लगे कि कुछ दिन पूर्व इस नगरी में सुगुप्ताचार्य महामुनि आहार के लिए आये थे तब इस सोमदत्ता ने ग्लानिपूर्वक मुनिराज के ऊपर थूक दिया था, उसी पाप के कारण तुम्हारी लड़की की वाणी बन्द हो गई है, इसलिए अब इसको वृहत श्रुतस्कंध व्रत विधान यथाविधि पालन करने से इसका गूंगापन हट जायेगा और फिर से बोलने लगेगी, ऐसा कहकर व्रत विधि कह सुनाई।

ऐसा सुनकर सब को आनन्द हुआ। राजा ने, रानी ने, पुरोहित व उसकी सोमदत्ता कन्या ने बड़े आनन्द से श्रुतस्कंध व्रत को स्वीकार किया, मुनिराज को नमस्कार कर सब लोग अपनी नगरी में वापस आ गये और यथाविधि सब लोग व्रत का पालन करने लगे। व्रत के पूर्ण होने पर उद्यापन किया, उसी समय पुरोहित कन्या सोमदत्ता का गूंगापन हट गया, बोलना चालू हो गया।

आगे सोमदत्ता ने आर्यिका के पास जाकर ब्रह्मचर्य व्रत को ग्रहण कर लिया, थोड़े ही दिनों में आर्यिका दीक्षा लेकर अन्त में समाधिमरण धारण किया और मरकर सोलहवें स्वर्ग में इन्द्र होकर उत्पन्न हो गई। वहां का सुख भोगकर पूर्व विदेह के सीता नदी के उत्तर भाग में प्रकावती देश में रत्नसंचय नाम का एक सुन्दर नगर है वहां रत्नवाहन नाम का राजा पृथ्वीमति रानी के साथ राज्य करता था, उस राजा के यहां वह सोलहवें स्वर्ग का इन्द्र कंठकुमार नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। कालक्रमा-नुसार सर्व प्रकार का राजेश्वरी सुख भोगकर अन्त में दीक्षा लेकर कर्म काट कर मोक्ष को गया।

बेला व्रत

आदि अन्त एकाशन करे, बीच दोय उपवास जु धरे । (हरिवंशपुराण)

भावार्थ :—प्रथम एक एकाशन, फिर दो उपवास, पीछे एक एकाशन करना ।

अथ भाषापर्याप्ति निवारण व्रत कथा

व्रत विधि:—पहले के समान करे, अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृ. ७ के दिन एकाशन करे, ८ के दिन उपवास पूजा अराधना व मन्त्र जाप आदि करे । पत्ते मांडे ।

अथ भयकर्म निवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करे । अन्तर सिर्फ इतना है कि चैत्र कृष्णा ८ के दिन एकाशन करे । ९ के दिन उपवास करे । मल्लिनाथ भगवान की पूजा जाप, मन्त्र, मांडला आदि करे ।

अथ भगीरथ व्रत कथा

व्रत विधि :—१२ महीने में कोई भी महीने के शुक्ल पक्ष में शुभ दिन एकाशन करे । दूसरे दिन शुद्ध कपड़े पहन कर मन्दिर जावे, वहां पीठ पर श्री सुमतिनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा का व पुरुषदत्ता यक्षयक्षी सहित स्थापन करे । पंचामृत अभिषेक करे । वृषभनाथ से सुमतिनाथ तीर्थंकर तक उनकी पूजा, अष्टक, स्तोत्र, जयमाला आदि करे ।

जाप—ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुमतिनाथ तुंबरूपुरुषदत्ता यक्षयक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।"

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्पों से जाप करे । णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे । यह कथा पढ़े । आरती करे । उस दिन उपवास करके धर्मध्यान पूर्वक समय बितावे । सत्पात्र को दान देवे । दूसरे दिन पूजा दान आदि करके पारणा करे ।

इस प्रकार व्रत करने के बाद उद्यापन करे । उस समय सुमतिनाथ विधान करके महाभिषेक करे । १०८ पुष्प या फल अर्पण करे । चतुर्विध संघ को चार प्रकार का दान देवे । अभयदान देवे ।

यह व्रत पहले भव में सगरचक्रवर्ति के पुत्र भागीरथ राजा ने किया था जिससे वह भागीरथ राजा हुआ । इस भव में भी उसने उस व्रत को किया जिससे उसने राज्य का सुख भोगा और बाद में वैराग्य हो जाने से अपने पुत्र को राज्य देकर जिनदीक्षा ग्रहण की । कैलाश पर्वत के पास गंगा नदी के तीर पर प्रतिमायोग धारण किया जिससे ४ घातिया कर्मों का नाश कर केवलज्ञान को प्राप्त किया । तब देवी ने आकर उनका अभिषेक किया जिससे वह पानी बहकर गंगानदी में मिल गया इसलिये उसे भागीरथी, ऐसा अभी भी कहते हैं । ४ अघातिया कर्मों का नाश करके वे मोक्ष गये ।

भव्यानंद व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन महिने की कोई भी एक अष्टमी को शुद्ध वस्त्र पहनकर, हाथ में पूजाभिषेक की सामग्री लेकर जिनमन्दिरजी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर पंचपरमेष्ठि की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, पांच प्रकार का नैवेद्य बनाकर पूजा करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, शास्त्र व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, एक थाली में महाअर्घ्य लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे । अर्घ्य चढ़ा देवे, उस दिन उपवास रखे । ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, दूसरे दिन पारणा करे, इसी क्रम से चार महिने तक पंचमी, अष्टमी व चतुर्दशी की तिथि को पूजा करे, उपवास रखे, आगे आने वाली अष्टान्हिका में उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठी की महाभिषेक पूजा करे, पांच सौभाग्यवति स्त्रियों को वायना देवे, पांच मुनिसंघों को आहारदान देवे, फिर स्वयं पारणा करे ।

कथा

इस व्रत को रानी चेलना ने धारण किया था, व्रत कथा रानी चेलना की पढ़े, चेलना चरित्र पढ़े ।

भवदुःख निवारण व्रत कथा

ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा द्रव्य हाथ में लेकर जिनमन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, ब्रह्मचर्य पूर्वक उपवास का व्रत ग्रहण करे, अभिषेक पीठ पर अर्हन्त और सिद्धप्रभु की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृत अभिषेक करे, अष्ट-द्रव्य से भगवान की पूजा करे, गुरु, शास्त्र की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की भी अर्चना करे ।

ॐ ह्रीं असिआउसा अनाहत विद्यायै श्री सिद्धाधिपतये नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करना चाहिये, ॐ नमः सिद्धे-भ्यः । इस मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, फिर एक महाअर्घ्य थाली में रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारें, उस दिन उपवास करे, दूसरे दिन सत्पात्रों को दान देकर स्वयं पारणा करे, उस दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे, इस प्रकार एक साल तक इस तिथि को पूजा कर व्रत करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय सिद्धचक्र विधान करे ।

राजा श्रेणिक और रानी चेलना का चरित्र पढ़े ।

भवसागर व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक व फाल्गुन महिने के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी के दिन प्रातः काल स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहनकर अभिषेक पूजा का सामान हाथ में लेकर जिन-मन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को साक्षात नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर चौबीस तीर्थंकर की यक्षयक्षि सहित प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की अर्चना करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, अंत में एक थाली में नारियल सहित अर्घ्य हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगल आरती उतारे, अर्घ्य प्रभु को चढ़ा देवे, ब्रह्मचर्य पालन करे, उस दिन उपवास करे, सत्पात्रों को आहारदान देवे, इसी क्रम से चार महिने व्रत को करे। प्रतिदिन पूजा करके अष्टमी चतुर्दशी को उपवास करे, दूसरे टाइम भोजन करे, आगे आने वाली अष्टान्हिका में उद्यापन करे, उस समय चौबीस तीर्थंकरों का विधान करे, २४ नैवेद्य चढ़ावे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

इस व्रत की कथा में राजा श्रेणिक और रानी चेलना का चरित्र पढ़े ।

भावना पच्चीसी व्रत

इस व्रत का उद्देश्य द्वादशांग जिनवाणी की आराधना करना है । सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति करना ही उसका फल है । सम्यक्त्व की विशुद्धि इस व्रत से होती है । सम्यक्त्व के २५ दोष बताये हैं । वह इस प्रकार हैं ।

तीन मूढता (गुरु मूढ़ता, देव मूढ़ता, लोक मूढ़ता) ६ अनायतन (कुदेव, कुधर्म, कुगुरु व उनके सेवक) आठ मद (कुल, जाति, अधिकार, रूप, बल, धन, तप व ज्ञान) और शंकादि आठ दोष ऐसे यह २५ दोष हैं। उन दोषों के नाश को (क्षालनार्थ) यह व्रत करना चाहिए । उसका क्रम इस प्रकार है ।

तृतीया के तीन उपवास तीन मूढ़ता दूर करने को षष्ठी के ६ उपवास अनायतन दूर करने को, अष्टमी के आठ उपवास आठ मद दूर करने को और शंकादि आठ दोष दूर करने को प्रतिपदा का एक, द्वितीया के दो, पञ्चमी के पांच ऐसे आठ उपवास करना । यह महान व्रत है, इन उपवासों की शुरूआत करने के लिए निश्चित महिना नहीं बताया है ।

फिर भी भाद्रपद महिने से शुरू करने हैं । इसका प्रारम्भ अष्टमी से करना चाहिए । व्रत शुरू करने से पहले ४ महिने का ब्रह्मचर्य व्रत लेना चाहिए । इस व्रत

के दिन ॐ ह्रीं पञ्चविंशति दोष रहिताय सम्यग्दर्शनाय नमः । इस मन्त्र का जाप त्रिकाल १०८ बार करना चाहिए ।

यह जाप उपवास के दिन करना चाहिए । उपवास प्रोषध पूर्वक करे । इसका दूसरा नाम सम्यक्त्व पच्चीसी व्रत है । जिस दिन उपवास करना हो उस दिन चैत्यालय (मन्दिर) के आंगन में एक पाटे पर केशर से सुगन्धित द्रव्य से सुसंस्कृत करके एक कुंभ रखना चाहिए ।

उसके ऊपर एक बड़ी थाली रखकर उस पर सम्यग्दर्शन के गुणों से अंकित करना, बीच में पांडुक शिला निकालकर उस पर जिनप्रतिमा विराजमान करना चाहिए । भगवान का अभिषेक कर पूजा करना । सम्भव हो तो ४ महीने रोज जाप करे । उद्यापन करे नहीं तो व्रत दुगना करे ।

इस व्रत की दो विधि बतायी हैं गोविन्दकृत व्रत निर्णय में दी हैं । उसमें से पहली विधि :—

दशमी के दस, पञ्चमी के पांच, अष्टमी के आठ और प्रतिपदा के दो ऐसे २५ उपवास करना चाहिए । दूसरी विधि :—

दशमी के दस, पूर्णिमा के पन्द्रह ऐसे २५ उपवास करना । इस व्रत में अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और परिग्रह त्याग । प्रत्येक व्रत की पांच पांच भावना है ।

(१) अहिंसा व्रत की ५ भावना—(१) एषणा समिति (२) आदान निक्षेपण समिति (३) ईर्या समिति (४) मनोगुप्ती (५) अलोकितपान । भोजन भिक्षाकाल, बुभुक्षुकाल व अवग्रह काल ये तीन काल होते हैं ।

इस महिने में इस गली में इसके घर में भोजन मिलेगा तो करूंगा । ऐसा नियम लेना भोजन भिक्षाकाल है । आज भूख लगी है पर भोजन कम लेना (खाना) क्योंकि शरीर की प्रकृति आहार के बिना नहीं चलती है वगैरह विचार करना बुभुक्षितकाल है । मैंने कल यह आहार लिया था आज यह आहार नहीं लूंगा इस प्रकार नियम करना अवग्रह काल है । आहार के समय जाते हुए चार हाथ प्रमाण भूमि ज्यादा तेज भी नहीं व बहुत धीरे भी नहीं ऐसा चलकर जाना एषणा समिति भावना है ।

(२) सत्य—क्रोध लोभ भय व हास्य और अनुवीची भाषण ये पांच भावना सत्य की हैं।

(३) अचौर्य शून्यागारवास—दुर्व्यसनी तीव्र कषायी भ्रष्ट मनुष्य से दूर एकान्तवास करना हमेशा आत्मध्यान करना।

(ब) विमोचित एकान्तवास—सब लोगों से झगड़ा होने से दूर रहना।

(स) परोपराधीकरण—कोई दुष्ट मनुष्य की जगह पर जाने की आज्ञा नहीं है। वहां पर जाने की इच्छा नहीं करना।

आहार शुद्धि—न्यायोपार्जित धन से प्राप्त आहार में सन्तोष करना उसी में तृप्त होना।

स्वधर्मविसंवाद—साधर्मी बन्धुओं से आपस में न झगड़ना अपना काम सरल परिणामों से करने की भावना करना।

(४) ब्रह्मचर्य—इसकी ५ भावना है। (१) स्त्रियों के साथ प्रेम भाव बढ़ने की बातें न तो सुनना और न ही करना।

(२) उनके मनोहर अंग को न देखना और न विचारना।

(३) पहले भोगे हुए पदार्थों को स्मरण न करना।

(४) कामोद्दीपक रस सेवन न करना (५) अपना शरीर श्रृंगारित न करना।

(५) परिग्रहत्याग :—किसी भी प्रकार का परिग्रह न रखना। उसकी इच्छा न करना पूर्व के परिग्रह का स्मरण न करना आदि की भावना भाना।

इसका और एक विधान जैन व्रत विधान संग्रह में दिया है। इसमें २० दशमी के २० उपवास करके १६ अष्टमी के १६उपवास और ४ प्रतिपदा के चार उपवास ऐसे ४० उपवास करना। उसमें १० पारणे आते हैं।

एक साथ २५ उपवास करने में एक उपवास एक पारणा इस क्रम से करना श्रेष्ठ है।

भावना द्वात्रिंशतिका व्रत

इस व्रत के कुल उपवास ३२ हैं। चतुर्दशी के १६, द्वादशी के १२, चतुर्थी के चार इस प्रकार ३२ उपवास करना यह व्रत आठ महीने में पूरा होता है। प्रत्येक उपवास प्रोषधपूर्वक करना चाहिए। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए। यदि उद्यापन नहीं किया तो व्रत दुगना करना चाहिए।

भाद्रवनसिंहनिष्क्रीडित व्रत

यह व्रत २०० दिन में पूरा होता है इसमें १७५ उपवास और २५ पारणे होते हैं। पारणे के दिन एकाशन करना चाहिए। इसका क्रम निम्न प्रकार है।

एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, छः उपवास एक पारणा सात उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, नव उपवास एक पारणा, दस उपवास एक पारणा, ग्यारह उपवास एक पारणा, बारह उपवास एक पारणा, तेरह उपवास एक पारणा करके फिर से तेरह उपवास एक पारणा, बारह उपवास एक पारणा, ग्यारह उपवास एक पारणा, दस उपवास एक पारणा, नव उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, सात उपवास एक पारणा, छः उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा, इस प्रकार बिना खण्ड क्रम ये उपवास करना चाहिए।

—जैन व्रत विधान संग्रह

भाद्रपद पर्व व्रत

मनुष्यों में जैसे राजा श्रेष्ठ होता है वैसे सब महिनों में भाद्रपद महिना श्रेष्ठ माना जाता है। मल्लिनाथ-पुराण में कहा है कि—

"अहो भाद्रपदाख्योऽयं मासेऽनेक व्रत करः।
धर्म हेतुपरोऽप्यस्त्येऽन्तमासानां नरेन्द्र व्रत" ।।

इस पर्व का प्रारम्भ भाद्र सुदी पंचमी से शुरू होता है और भाद्र सुदि चतुर्दशी को पूरा होता है, इसको ही पर्युषण पर्व कहते हैं। पर्युषण के प्रथम दिन

सृष्टि का आदि दिन है। कारण छठे काल के अन्त में भरत व ऐरावत खण्ड में प्रलय होगा ऐसा कहा है (देखो त्रिलोकसार गाथा ६४-६७) छठे काल के अन्त में 'सर्वत्र' नामक पवन, पर्वत, वृक्ष, पृथ्वी वगैरह को पूर्ण करता हुआ सब दिशाओं और सब क्षेत्र में भ्रमण करता है। इस पवन से समस्त जीव मूर्छित होते हैं। विजयार्द्ध गुफा के आश्रय में ७२ युगल को देव बचाकर लेजाकर वहां रखते हैं। बाकी के बचे हुए जीवों का नाश होता है।

फिर ६ठे काल के अंत में अत्यन्त शीत क्षाररस, विष, भयंकर अग्नि, धूल की क्रम से वर्षा होती है, उसके बाद उत्सर्पिणी काल आता है। तब नये काल की शुरुआत होती है। इस छठे काल का अंत आषाढ़ सुदी १५ को होता है। नये युग का प्रारम्भ श्रावण वदि १ अभिजित नक्षत्र से होता है। इसलिये आषाढ़ सुदि १५ से बाद में श्रावण सुदि प्रतिपदा से भाद्रपद सुदि ४ तक ४६ दिन होते हैं। इसलिये भाद्रपद सुदि ५ को उत्सर्पिणी का अन्त और अवसर्पिणी काल का प्रारम्भ है। इन दोनों कालों का अन्त आषाढ़ सुदि १५ को ही है। यह दिन स्मृति के लिये पर्वक के रूप में मनाया जाता है।

इस पर्व की शुरूआत भाद्रपद सुदि ५ से १४ तक होती है यदि कोई तिथि इसके बीच में क्षय हो तो १ दिन पहले से प्रारम्भ करना चाहिये। यह पर्व वर्ष में तीन बार आता है माघ, चैत्र और भाद्रपद । परन्तु भाद्रपद महिने का पर्व ज्यादा प्रसिद्ध है।

इस व्रत की उत्कृष्ट विधि १० उपवास है। यदि शक्ति न हो तो पंचमी, अष्टमी, एकादशी, चतुर्दशी ये चार दिन के उपवास करना और बचे हुये दिनों का एकाशन करना। यह मध्यम विधि है। और ५ से १४ तक १० दिन एकाशन करना जघन्य विधि है।

भयहरण चतुर्दशी व्रत

भय सात प्रकार के हैं। वह नष्ट करने के लिये यह व्रत करना चाहिये।

श्रावण वदि १४ को प्रोषधोपवास करना। इस प्रकार १४ वर्ष करना, व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये, उद्यापन नहीं किया तो व्रत दुगना करना चाहिये।

--गोविन्दकविकृत व्रत निर्णय

अथ भोगांतराय निवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ला १० के दिन एकाशन करे ११ के दिन उपवास करे पूजा वगैरह पहले के समान करे, णमोकार मन्त्र का जाप १०८ बार करे ३ दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले शांतभद्रपुर नगरी में भद्रसेन राजा भद्रादेवी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र सुभद्र और उसकी स्त्री वसुभद्रा, वसुमती मन्त्री उसकी स्त्री, वसुधाचार्य पुरोहित उसकी स्त्री वसुमती, सुकांत श्रेष्ठी पूरा परिवार सुख से रहता था। एक दिन उन्होंने वसुन्धराचार्य मुनि के पास जाकर यह व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ भवरोगहराष्टमी व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला अष्टमी के दिन प्रातःकाल में स्नान करके व्रतीक को शुद्ध वस्त्र पहनना चाहिये, सब प्रकार का अभिषेक पूजा सामग्री लेकर जिनेन्द्र भगवान के मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर भगवान की मूर्ति यक्षयक्षि सहित स्थापन कर भगवान का अभिषेक करे, फिर पूजा करे, खीर बनाकर चढ़ावे, नाना प्रकार के फलों से पूजा करे। **ॐ ह्रीं अर्हद्भ्यो नमः स्वाहा** । इस मन्त्र से पुष्प लेकर १०८ बार जाप्य करे, जिन सहस्र नाम पढ़े, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ्य हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, इसी क्रम से कार्तिक पूर्णिमा तक प्रतिदिन पूजा करना, अंत में उद्यापन करे, उस समय एक नवीन चौबीस तीर्थंकर प्रतिमा यक्षयक्षि सहित बनवाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, पंच प्रकार का पकवान बनवाकर मुनिश्वरों को आहारदान देवे, योग्य उपकरण दान करे, पारणा करे, मध्य में अष्टमी चतुर्दशी को उपवास करे, बाकी के दिन भोजन करना चाहिये।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में काश्मीर नाम का एक विशाल देश है, उस

देश में एक केशवांक नाम का राजा अपनी कौशिक पट्टरानी के साथ राज्य करता था, उसी नगरी में एक कुसुमदत्त नाम का राज्य श्रेष्ठि अपनी भार्या कुसुमदत्ता नाम की सेठानी के साथ रहता था, उस सेठ को ३२ पुत्र थे, महान संपत्तिशाली था, इसलिये सुख से रहता था। एक दिन भुवनभूषण नाम के दिव्यज्ञानी महामुनि अपने संघ सहित नगरी में पधारे, राजा को समाचार प्राप्त होते ही पुरजन-परिजन सहित मुनिराज के दर्शन करने को गया, कुछ समय धर्मोपदेश सुनने के बाद, कुसुम-दत्ता सेठानी हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगी कि हे देव, हमने पूर्व भव में कौनसा ऐसा पुण्य किया, जिससे हमारे घर में अक्षय संपत्ति बनी हुई है ? ऐसा प्रश्न सुनकर मुनिराज कहने लगे कि हे देवी, सुनो !

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में कलिंग नाम का देश है, उस देश में कनकपुर नाम का मनोहर नगर है, उस नगर में एक बहुत गरीब कमलमुख नाम का सेठ अपनी कमलमुखी सेठानी के साथ रहता था, उस सेठ को बहुत सन्तान होने से कभी पेट भरकर भोजन नहीं मिलता था, बहुत कष्ट से दुःखपूर्वक जीवन व्यतीत करता था।

एक बार देवपाल व यशोभद्र नाम के दो मुनिश्वर मासोपवास करके पारणा के लिये नगर में आये, शुभ योग से कमलमुख सेठ के घर में निरन्तराय आहार हुआ, आहार होने के बाद सेठ मुनिराज को कहने लगा कि हे देव, मेरा नर जन्म पाना व्यर्थ हो रहा है, मेरे घर में दरिद्रता का वास हो गया है, मैं महादुःखी हूं, मेरा कष्ट दूर करो। ऐसे बचन सेठ के सुनकर मुनिराज ने दयाबुद्धि से कहा कि हे सेठ तुम भवरोगहराष्टमी व्रत का पालन करो, इस व्रत के प्रभाव से सर्व दुःखों का निवारण होता है, ऐसा कहकर उस व्रत की विधि कह सुनायी।

ऐसा व्रत का विधान सुनकर उन दोनों ने इस व्रत को ग्रहण किया, मुनि-राज व्रत की विधि बताकर नगर से वापस लौट गये, सेठानी ने विधिपूर्वक व्रत का पालन किया, उद्यापन करके अन्त में समाधिपूर्वक मरकर व्रत के फल से, तुम इस कुसुमदत्त सेठ की पत्नी हुई हो, वहां से ही ये सब तुम्हारे पुत्र हुये हैं, यह सब सुनकर सबको बहुत आनन्द हुआ, सब लोगों ने भक्तिपूर्वक मुनिराज को नमस्कार करके व्रत को ग्रहण किया, और वापस नगर में लौट आये, और सबने व्रत को विधिपूर्वक पालन किया।

व्रत के प्रभाव से सब लोग सद्‌गति को प्राप्त हुये। वो कुसुमदत्ता अपने मरणकाल में दीक्षा लेकर घोर तपश्चरण करके अच्युत स्वर्ग में देव हुई। कुसुमदत्त सेठ भी दीक्षा लेकर मोक्ष को गये।

अथ भरत चक्रवर्ति व्रत कथा

व्रत विधि :—चैत्र शुक्ला ४ को एकाशन करना। ५ कोशुद्ध वस्त्र पहन कर सर्व पूजाद्रव्य लेकर मन्दिर जाये। जिनालय की तीन प्रदक्षिणा लगाकर नमस्कार करे। वासुपूज्य तीर्थंकर प्रतिमा षण्मुख यक्ष व गांधारी यक्षी के साथ स्थापित करके पंचामृताभिषेक करे। अष्टद्रव्य से पूजा करे। एक पाटे पर भगवान के सामने १२ पान रखकर अक्षत, फूल, फल, नैवेद्य रखकर पूज्य १२ चक्रवर्ती राजाओं का स्मरण करना। श्रुत व गणधर इनकी पूजा करे। यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वासुपूज्य तीर्थंकराय षण्मुखयक्ष गांधारीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प चढ़ावे तथा णमोकर मन्त्र का १०८ बार जाप करे। इस कथा को पढ़े। एक पात्र में १२ पान रखकर अष्टद्रव्य तथा नारियल रखकर महार्घ्य करे। उस दिन उपवास करना चाहिए। सत्पात्र को आहारादि दान करे। दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करे। तीन दिन ब्रह्मचर्य से रहे।

इस प्रकार माह में एक बार उसी तिथि को पूजा करे। ऐसे १२ पूजा पूर्ण होने पर फाल्गुन अष्टान्हिका में इसका उद्यापन करे। वासुपूज्य तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करना चाहिये। चतु:संघ को चतुर्विध दान देकर पूर्ण विधि अनुसार व्रत करे।

कथा

जम्बूद्वीप में मेरुपर्वत के पूर्व विदेह क्षेत्र में कच्छ देश है। प्रभंकर नगर में अतिगृद्ध नाम का राजा राज्य करता था। उसने यह चक्रवर्ती व्रत करके उत्कृष्ट पुण्य संपादन किया। किन्तु बहुत आरम्भ और परिग्रह के मोह से वह तीसरे नरक गया। वहां दश सागरोपम वर्ष तक अनेक दुःख भोगकर पूर्वोक्त देश के वन में व्याघ्र हुआ। उस समय वहां प्रीतिवर्धन नाम के राजा राज्य करते थे। एक दिन अपने परिवार सहित वन विहार करने को निकले थे कि मार्ग में उसे शुभ शकुन हुआ। यह देख पुरोहित से पूछा कि इसका क्या फल है। तब पुरोहित बोला—तुम्हें वन में सत्पात्र

दान का लाभ होगा। यह सुन राजा आनन्दित हुए। राजा परिवार सहित एक अशोक वृक्ष के नीचे बैठे थे कि पिहितास्रव नाम के 'मासोपवासी महामुनि पारणे के निमित्त से आये। राजा ने नवधाभक्ति के आहारदान दिया, जिससे वहाँ पंचाश्चर्य वृष्टि हुई। मुनिराज ने थोड़ी देर बैठकर धर्मोपदेश दिया। उस समय वह बाघ भी उपदेश सुन रहा था। उसे सुनकर तुरन्त जातिस्मरण हो गया। तब राजा ने बाघ के भवांतर मुनिराज के पूछे, सुनकर राजा को बहुत आश्चर्य हुआ। उस उद्यान में अनेक जिनमन्दिर बनवाकर जिनप्रतिमा प्रतिष्ठित की तथा धर्मध्यान में लीन होने लगा।

उस बाघ ने अपना भवांतर सुनकर अठारह दिन तक आहारपानी का त्याग करके समाधि ली ईशान कल्प में देव हुआ। वह प्रीतिवर्धन राजा अपने मन में प्रबल वैराग्य उत्पन्न होने से जिनदीक्षा लेकर तपश्चर्या करने लगा। जिससे सर्व कर्मक्षय करके मोक्ष गये।

ईशान कल्प में दिवाकर देव च्युत होकर मतिवर नामके राजा हुए। उसी भव में जिनदीक्षा लेकर तपस्या करने लगे। उस तप के प्रभाव से स्वर्ग में अहमिन्द्र हुआ। फिर सुबाहु राजा हुआ, जिनदीक्षा लेकर पुनः अहमिन्द्र हुआ। वहां से चयकर भरतक्षेत्र में अयोध्या में आदिनाथ तीर्थंकर के यशस्वती के उदर से भरत हुए। यही प्रथम चक्रवर्ती हुए। अन्त में जिनदीक्षा धारण कर आजन्म अभ्यास करके शुद्धात्मध्यान से एक अंतर्मुहूत में केवलज्ञान प्राप्त करके मोक्ष गये।

मुकुटसप्तमी व्रत और निर्दोषसप्तमी व्रतों का स्वरूप

मुकुट सप्तमी तु श्रावणशुक्लसप्तम्येव ग्राह्या, नान्या तस्याम् आदिनाथस्य वा पार्श्वनाथस्य मुनिसुव्रतस्य च पूजां विधाय कण्ठे मालारोपः। शीर्षमुकुटञ्च कथितमागमे। भाद्रपदशुक्लासप्तमीव्रतमागमे निर्दोषसप्तमीव्रतं कथितम्। सप्तवर्षावधिर्यावत् अनयोः व्रतयोः विधानं कार्यम्।

अर्थ :—श्रावण शुक्ला सप्तमी को मुकुट सप्तमी कहा जाता है, अन्य किसी महीने की सप्तमी का नाम मुकुट सप्तमी नहीं है। इसमें आदिनाथ अथवा पार्श्वनाथ और मुनिसुव्रतनाथ का पूजन कर जयमाला को भगवान का आशीर्वाद समझकर गले में धारण करना चाहिए। इस व्रत को आगम में शीर्षमुकुट सप्तमी व्रत भी कहा गया है।

भाद्रपद शुक्ला सप्तमी व्रत को आगम में निर्दोष सप्तमी व्रत कहा जाता है। इस व्रत में भी भगवान पार्श्वनाथ की पूजा करनी चाहिए। सात वर्ष तक इन दोनों व्रतों का अनुष्ठान करना चाहिए। पश्चात् उद्यापन करना चाहिए।

विवेचन :—आगम में श्रावण शुक्ला सप्तमी और भाद्रपद शुक्ला सप्तमी इन दोनों तिथियों के व्रत का विधान मिलता है। श्रावण शुक्ला सप्तमी तिथि के व्रत को मुकुट सप्तमी या शीर्षमुकुट सप्तमी कहा गया है। इस तिथि को व्रत करने वाले को षष्ठी तिथि से ही संयम ग्रहण करना चाहिए। षष्ठी तिथि को प्रातःकाल भगवान की पूजा, अभिषेक करके एकाशन करना चाहिए। मध्यान्हकाल के सामायिक के पश्चात् भगवान की प्रतिमा या गुरु के सामने जाकर संयमपूर्वक व्रत करने का संकल्प करना चाहिए। चारों प्रकार के आहार का त्याग सोलह प्रकार के लिए भोजन के समय ही कर देना चाहिए।

सप्तमी को प्रातःकाल सामायिक करने के पश्चात् नित्य क्रियाओं से निवृत्त होकर पूजा-पाठ, स्वाध्याय, अभिषेक आदि क्रियाओं को करना चाहिए। पार्श्वनाथ और मुनिसुव्रतनाथ की पूजा करने के उपरान्त जयमाला अपने गले में धारण करना चाहिए। मध्यान्ह में पुनः सामायिक करना चाहिए। अपरान्ह में चिन्तामणी पार्श्वनाथ स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। सन्ध्याकाल में सामायिक, आत्मचिन्तन और देवदर्शन आदि क्रियाओं को सम्पन्न करना चाहिए। तीनों बारकी सामायिक क्रियाओं के अनन्तर **ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथाय नमः, ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथाय नमः**" इन दोनों मन्त्रों का जाप करना आवश्यक है। इस मन्त्र का रात भी एक जाप करना चाहिए। अष्टमी को पूजन, अभिषेक और स्वाध्याय के अनन्तर उपर्युक्त मन्त्रों का जाप कर एकाशन करना चाहिए। इस प्रकार सात वर्षों तक मुकुट सप्तमी व्रत किया जाता है, पश्चात् उद्यापन कर व्रत समाप्ति करनी चाहिए।

निर्दोष सप्तमी व्रत भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को करना चाहिए। इस व्रत को षष्ठी तिथि से संयम ग्रहण करना चाहिए। इस व्रत की समस्त विधि मुकुटसप्तमी के ही समान है, अन्तर इतना है कि इसमें रात भी जागरण पूर्वक व्यतीत की जाती है अथवा रात के पिछले प्रहर में अल्प निद्रा लेनी चाहिए।

"ॐ ह्रां ह्रीं सर्वविघ्ननिवारकाय श्री शान्तिनाथस्वामिने नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का जाप करना होगा। कषाय, राग-द्वेष-मोह आदि विकारों का भी त्याग करना अनिवार्य है, इस व्रत को इस प्रकार करना चाहिए जिससे किसी भी प्रकार दोष नहीं लगे। आत्म-परिणामों को निर्मल और विशुद्ध रखने का प्रयास करना चाहिए। इस व्रत को अवधि भी सात वर्ष है, पश्चात् उद्यापन कर छोड़ देना चाहिए।

मुकुट सप्तमी व्रत

श्रावण सुदि सप्तमी को मुकुट सप्तमी कहते हैं, और महिने की सप्तमी को मुकुट सप्तमी नहीं कहते हैं। इस व्रत के दिन आदिनाथ, पार्श्वनाथ और मुनिसुव्रत-नाथ इनकी पूजन करके जयमाला उनकी आशीर्वाद है ऐसा समझकर गले डालनी। इस सप्तमी को शीर्षमुकुट सप्तमी कहते हैं। सप्तमी को प्रोषधोपवास करना चाहिए। यह व्रत क्रम से सात वर्ष करना चाहिये। बाद में उद्यापन करना चाहिये यदि उद्यापन को शक्ति नहीं हो तो व्रत दूना करना चाहिये।

सप्तमी को प्रातःकाल सामायिक के बाद नित्य क्रिया से मुक्त हो पूजा-पाठ अभिषेक स्वाध्याय आदि क्रिया करनी चाहिये। पूजा के बाद जयमाला गले में पहननी चाहिए। दोपहर को सामायिक करनी चाहिये। और चिन्तामणी पार्श्वनाथ का स्तोत्र बोलना चाहिए। शाम को सामायिक आत्मचिंतन वगैरह करना। इसके बाद **ॐ ह्रीं श्रीं मुनिसुव्रतनाथाय नमः, ॐ ह्रीं श्रीं पार्श्वनाथाय नमः** इन दोनों मन्त्रों का अलग अलग जाप करना। रात को एक बार करना।

इस व्रत के उद्यापन के लिए सात कोष्ठक (कोठे) का एक वलयाकार मण्डल निकाले अथवा नवीन मटकी को साफ करके सुगन्धित द्रव्य से लेप करे फिर बड़ी ऊपर रखे, उसके ऊपर मण्डल निकाले। उसके बाद जल यात्रा, अभिषेक, सकलीकरण जिनपूजा, अंगन्यास, मंगलात्मक स्वस्ति विधान करके चतुर्विंशति पूजा करे। उद्यापन के समय मन्दिर में सात उपकरण, सात शास्त्र, चांदवा, मण्डल व बर्तन देना, श्रावक मुनि को आहार देना। यह उद्यापन श्रावण सुदी अष्टमी को करना चाहिए। इसकी कथा इस प्रकार है।

कथा

जम्बूद्वीप में कुरुजाङ्गल देश में हस्तिनापुर नामक एक सुन्दर धनधान्य सम्पन्न नगर था। वहां विजयसेन राजा राज्य करता था, उसकी रानी विजयावंती थी। उसके दो लड़कियां मुकुटकेसरी व विधिशेखरी थीं, इन दोनों बहनों का एक-दूसरे पर बहुत ही प्रेम था। वे दोनों एक दूसरे को छोड़कर कहीं नहीं रहती थीं। अतः राजा ने दोनों की शादी अयोध्या के राजपुत्र से कर दी।

थोड़े समय के बाद वहां पर बुद्धिसागर और सुबुद्धिसागर नाम के दो चारण मुनि हस्तिनापुर में आये। विधिपूर्वक राजा ने उनको आहारदान दिया। फिर उनसे पूछा—

"इन दोनों का एक दूसरे पर इतना प्रेम क्यों है?" मुनिमहाराज ने कहा "राजन! पूर्व में इनकी नगरी में एक धनदत्त नामक श्रेष्ठी रहता था, उसकी लड़की जिनमति व एक माली लड़की वनसती ये दोनों जीवश्चकंठ सहेलियां थीं। इन दोनों ने मुकुट सप्तमी का व्रत किया था।

एक दिन वह उस उद्यान में खेल रही थीं कि सांप ने काट लिया जिससे उनका मरण हो गया। मरते समय नमस्कार मन्त्र का पाठ किया जिससे वे स्वर्ग में देव हुई। वहां की आयु पूर्ण कर उन्होंने आपके घर जन्म लिया है। पहले से ही उनका एक दूसरे पर प्रेम था।

यह कथा उन लड़कियों ने भी सुनी और उन्होंने वह व्रत फिर से लिया। उसको यथाविधि पालन किया जिससे समाधिपूर्वक मरण कर १६वें स्वर्ग में देव हुए। स्वर्गीय सुख भोगकर मनुष्य भव लेकर मोक्ष जायेंगे।

इसके अलावा जिनमती नामक श्रेष्ठी कन्या ने भी यह व्रत किया।

मासिक सुगन्धदशमी व्रत

मासिकसुगन्धदशमीव्रतं तु पौषशुक्लपञ्चमीमारभ्य दशमी पर्यन्तं भवति हानौ वृद्धौ च स एव मार्गो ज्ञेयः, इत्यादिनो मासिकानि भवन्ति ॥

अर्थः—सुगन्ध दशमी व्रत पौष शुक्ला पञ्चमी से दशमी तक किया जाता

है । तिथि की हानि, वृद्धि होने पर पूर्वोक्त क्रम समझना चाहिए । इस प्रकार मासिक व्रतों का कथन समाप्त हुआ ।

विवेचन :—सुगन्ध दशमी व्रत भादों सुदी दशमी को किया जाता है । न मालूम आचार्य ने यहां किस अभिप्राय से पौष सुदी पञ्चमी से पौष सुदी दशमी तक किये जाने वाले व्रत को सुगन्ध दशमी व्रत कहा है । इस व्रत की प्रसिद्धि भादों सुदी दशमी को है ।

व्रत के दिन चारों प्रकार के आहार का त्याग कर श्री जिनेन्द्रदेव की पूजा, अभिषेक आदि करे । दसवें तीर्थंकर श्री शीतलनाथ भगवान की पूजा विशेषतः की जाती है । रात्रि जागरणपूर्वक बितायी जाती है । '**ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशीतलनाथ-जिनेन्द्राय: नमः**'
मन्त्र का जाप किया जाता है । प्रोषध के दूसरे दिन चौबीसों भगवान की पूजा तथा अतिथि को आहारदान देने के उपरान्त पारणा की जाती है । इस व्रत को सौभाग्य की आकांक्षा से प्रायः स्त्रियां करती हैं । व्रत के मध्यान्ह में पूर्वोक्त मन्त्र के प्रत्येक उच्चारण के साथ अग्नि में धूप का हवन किया जाता है ।

माससावधिक व्रतों का कथन

मास्सावधिकानि ज्येष्ठजिनवरसूत्रचन्दनषष्ठीनिर्दोषसप्तमी जिनरात्रि-मुक्तावलीरत्नत्रयानन्तमेघमालाषोडशकारणशुक्लपञ्चम्यष्टान्हिकादीनि ।

अर्थ :—माससावधिक ज्येष्ठजिनवर, सूत्रव्रत, चन्दनषष्ठी, निर्दोषसप्तमी, जिनरात्रि, मुक्तावली, रत्नत्रय, अनन्त, मेघमाला, शुक्लपञ्चमी और अष्टान्हिका आदि हैं ।

मासिकव्रत

मासिकानि पञ्चमासचतुर्दशी-पुष्पचतुर्दशी- शीलचतुर्दशी-कनकावली रत्नावली-पुष्पाञ्जलिलब्धिविधानकार्यानिर्जरादीनि व्रतानिभवन्ति ।

अर्थ :—मासिकव्रतों में पञ्चमासचतुर्दशी, पुष्पचतुर्दशी, शीलचतुर्दशी, रूपचतुर्दशी, कनकावली, रत्नावली, पुष्पाञ्जलि, लब्धिविधान और कार्यनिर्जरा इत्यादि व्रत हैं ।

मंगलार्णव व्रत कथा

कार्तिक शुक्ल एकम से पंचमी पर्यंत शुद्ध होकर जिनमन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाते हुये भगवान को नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि भगवान की प्रतिमा सरस्वती प्रतिमा, गणधर प्रतिमा अथवा पादुका, पद्मावति प्रतिमा को स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार जाप्य करे। णमोकार मन्त्र का १०८ जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, सत्पात्रों को दान देवे, ब्रह्मचर्यपूर्वक उपवासादि करे, सायंकाल को सरस्वती पद्मावति की मूर्ति को स्थापन कर वस्त्रालंकार से विभूषित करके उनकी प्रार्थना करे, दूसरे दिन पूजा दान करके स्वयं पारणा करे।

इस प्रकार पांच वर्ष व्रत पूजन करके अंत में उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि विधान व पद्मावति विधान करके, महाभिषेक करे, सत्पात्रों को दान देवे।

कथा

श्रेणिक राजा व रानी चेलना की कथा पढ़े।

मंगलभूषण व्रत कथा

चैत्र शुक्ल एकम से तृतीया तक तीन दिन प्रातःकाल स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर जिनमन्दिरजी में जावे, तीन प्रदक्षिणापूर्वक भगवान को नमस्कार करे। आदिनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे। श्रुत व गुरू की पूजा करे। यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की पूजा करे। अखण्ड दीपक जलावे। पद्मावति व सरस्वती की मूर्ति को वस्त्रालंकार से विभूषित करे, सायंकाल प्रार्थना करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदिनाथ तीर्थंकराय गोमुखयक्ष चक्रेश्वरी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, १०८ बार णमोकार मन्त्र का

भी जाप्य करे, जिनसहस्रनाम पढ़े, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, तीन दिन कांजीआहार करे, एक समय। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे।

इस प्रकार इस व्रत को तीन वर्ष करके अंत में उद्यापन करे, उस समय आदिनाथ विधान (भक्तामर विधान) करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

इस भरत क्षेत्र में त्रिलोकतिलक नामक सुन्दर नगर है, उस नगर में जयवर्म नाम का राजा अपनी जयावति रानी के साथ में सुख से राज्य करता था। उसको एक लक्ष्मीमती नाम की गुणवान कन्या थी, एक दिन राजा के यहां यशोधर नामक मुनिराज का आहार हुआ, आहार होने के बाद राजा ने पूछा गुरुदेव मेरी कन्या का वर कौन होगा, तब गुरुदेव कहने लगे, राजन कनकपुर नगर के राजा जयधर के पुत्र नागकुमार के साथ तुम्हारी कन्या का विवाह होगा, उसको मंगलभूषणव्रत करना चाहिए, ऐसा कहते हुये विधि कह सुनाई। उस कन्या ने प्रसन्नतापूर्वक व्रत को ग्रहण किया, मुनिराज ने कहा तीन वर्ष में तुम्हारी शादी होगी, ऐसा कहकर जंगल को चले गये, कन्या ने यथाविधि व्रत का पालन किया, व्रत के प्रभाव से उसको नागकुमार-सा वर मिला, सुखों को भोगकर अंत में संसार से विरक्त होकर आर्यिका दीक्षा लेकर समाधिमरण करके स्वर्ग में देव हुई।

मुक्तावली व्रतकी विधि

का नाम मुक्तावली ? कथं चेयं क्रियते सज्जनोत्तमैः ? मुक्तावलयामेकः द्वौ त्रयश्चत्वारः पञ्चोपवासाः, पश्चात् चत्वारः त्रयो द्वावेकः उपवासाः भवन्ति। अस्य व्रतस्योपवासाः पञ्चविंशतिः पारणा नवदिनानि। इति चतुंस्त्रिशत् दिनानि। एतदपि निरवधिः।

अर्थ :—मुक्तावली व्रत किसे कहते हैं ? यह सज्जन पुरुषों के द्वारा कैसे किया जाता है ? आचार्य कहते हैं कि मुक्तावली व्रत में पहले एक उपवास, फिर दो उपवास, पश्चात् तीन उपवास, चार उपवास अनन्तर पांच उपवास किये जाते हैं। पांच उपवास के पश्चात् चार उपवास, तीन उपवास, दो उपवास और एक उपवास

किये जाते हैं। इस प्रकार व्रत के मध्य में नौ बार पारणा और २५ दिन व्रत किय जाता है। इस व्रत की गिनती भी निरवधि व्रतों में है।

विवेचन :—मुक्तावली व्रत का अर्थ है मोतियों की लड़ी, जो व्रत मोतियों की लड़ी के समान हो, वही मुक्तावली है। मुक्तावली व्रत में एक उपवास से प्रारम्भ कर पांच उपवास तक किये जाते हैं, पश्चात् पांच पर से घटते-घटते एक उपवास पर आ जाते हैं। इस प्रकार यह व्रत गोल माला के समान बन जाता है। २५ दिन उपवास करने पर केवल नौ दिन पारणा करनी पड़ती है। इस व्रत के दिनों में णमोकार मन्त्र का तीन बार जाप करना चाहिए। व्रत के दिनों में कषाय और विकथाओं का त्याग करना चाहिए। इस व्रत के विधिपूर्वक धारण करने से सांसारिक उत्तम भोगों को भोगने के उपरान्त मोक्षलक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

मुक्तावली व्रत का स्वरूप

मुक्तावल्यास्तु नवोपवासाः भाद्रपदे शुक्ला सप्तमी, आश्विने कृष्णाष्टमी, त्रयोदशी, आश्विने शुक्ला एकादशी, कार्तिके कृष्णा द्वादशी, कार्तिके शुक्ला तृतीया, शुक्ला एकादशी, मार्गशीर्षे कृष्णैकादशी, शुक्लपक्षे तृतीया चेति नवोपवासाः स्युः।

अर्थ :—मुक्तावली व्रत में नौ उपवास प्रतिवर्ष किये जाते हैं। पहला उपवास भाद्रशुक्ला सप्तमी को, दूसरा आश्विन कृष्णाष्टमी को, तीसरा आश्विन कृष्णा त्रयोदशी को, चौथा आश्विन शुक्ला एकादशी को, पांचवां कार्तिक शुक्ला तृतीया को, सातवाँ कार्तिक शुक्ला एकादशी को, आठवां मार्गशीर्ष कृष्णा एकादशी को और नौवाँ मार्गशीर्ष शुक्ला तृतीया को करना चाहिए। उपवास के पहले और अगले दिन एकाशन करना चाहिए। यह लघुमुक्तावली व्रत की विधि है। बृहद् मुक्तावली व्रत में कुल २५ उपवास और ९ पारणाएं की जाती हैं।

मुक्तावलीव्रत कथा

भाद्रपद शुक्ला ७ के दिन प्रातःकाल में शुद्ध वस्त्र पहनकर सर्व प्रकार के पूजाद्रव्य हाथ में लेकर जिन मन्दिर में जावे। तीन प्रदक्षिणा देवे और भगवान को ईर्यापथ शुद्धिपूर्वक साष्टांग नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर नवदेवता की प्रतिमा स्थापन करके, पंचामृत अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से जयमालापूर्वक स्तोत्र सहित पूजा

करे, जिनवाणी, निर्ग्रन्थगुरु की अष्टद्रव्य से पूजा करे, फिर यक्षयक्षि, क्षेत्रपाल की यथायोग्य पूजा कर अर्घ्यपूर्वक सम्मान करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुजिनधर्म जिनागम जिन चैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से पुष्पों से १०८ बार जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का भी १०८ बार जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े, शास्त्रस्वाध्याय करके व्रत कथा पढ़े, एक थाली में नौ पान लगाकर उसके ऊपर जल, गंध, अक्षत, पुष्प, फल आदि रखकर एक महा-अर्घ्य करे, उस अर्घ्य को उतारता हुआ, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा देवे, मंगल आरती उतारे, हाथों में का अर्घ्य चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्यपूर्वक धर्मध्यान से समय बितावे, दूसरे दिन सत्पात्रों को दान देकर स्वयं पारणा करे । इस क्रम से भाद्रपद कृष्ण ८ त्रयोदशी, आश्विन शुक्ला एकादशी व कृष्ण द्वादशी, कार्तिक शुक्ल तृतीया व एकादशी और कार्तिक कृष्ण एकादशी, उसके बाद मार्गशीर्ष शुक्ल तृतीया, इस तिथि को भी पूजा उपरोक्त क्रम से ही करना चाहिए ।

इस प्रकार यह व्रत नौ वर्ष तक करना चाहिये, अन्त में उद्यापन करना चाहिए, उद्यापन के समय आदिनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा गोमुखयक्ष चक्रेश्वरी यक्षी सहित तैयार कराकर पंचकल्याण प्रतिष्ठा करना, मन्दिर में आवश्यक उपकरण नवीन बनवाकर रखना, नौ मुनियों को आहारदान देना, नौ आर्यिकाओं को वस्त्रदान करना, नौ दम्पति वर्ग को भोजन कराकर वस्त्रादिक देकर सम्मान करना चाहिये, इस प्रकार व्रत विधि है ।

इस प्रकार व्रत विधि में भाद्रशुक्ला सप्तमी को होने वाले उपवास को निर्वाणसिद्धि कहा है । इस दिन उपवास के फल से निर्वाण सुख प्राप्त होता है । भाद्रकृष्ण अष्टमी को होने वाले आदित्यप्रभा ऐसा नाम है । इस उपवास का फल एक सहस्रपल्य उपवास का फल उपवास का प्राप्त होता है ।

भाद्रकृष्ण त्रयोदशी के उपवास का चन्द्रप्रभा ऐसा नाम है । इस उपवास का फल एक पल्य तक उपवास करने का मिलता है, आश्विन शुक्ल एकादशी के उपवास का कुमारसम्भव उपवास नाम है, इस उपवास का फल एक हजार पल्य उपवास करने का फल है, आश्विन कृष्ण द्वादशी के उपवास को सर्वार्थसिद्धि

उपवास कहते हैं, इस उपवास का फल एक पल्य तक उपवास करने का फल मिलता है।

कार्तिक शुक्ल तृतीया के उपवास को नन्दीश्वर उपवास कहते हैं, इस दिन उपवास का फल एक हजार पल्य उपवास करने का फल मिलता है। कार्तिक शुक्ल एकादशी के उपवास को प्रातिहार्य उपवास कहते हैं, इस दिन उपवास करने से असंख्यात उपवास करने का फल मिलता है।

कार्तिक कृष्ण एकादशी के उपवास का जिनेन्द्रध्वज उपवास नाम है, इस दिन उपवास करने का फल एक कोटि पल्य तक उपवास करने का फल मिलता है। मार्गशीर्ष तृतीया के दिन उपवास करने को आनन्दकर उपवास कहते हैं, इस दिन उपवास करने से असंख्यात उपवास करने का फल मिलता है। यह लघु मुक्तावली की विधि है।

वृहत मुक्तावली व्रत की विधि इस प्रकार है।

पूजा क्रम उपरोक्त प्रकार से करना, उपवास का क्रम इस प्रकार है।

एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा।

तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा।

पांच उपवास, एक पारणा।

फिर चार उपवास एक पारणा, ३ तीन उपवास एक पारणा।

दो उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा, इस प्रकार यह व्रत चौतीस दिन में पूर्ण होता है, जैसी शक्ति हो वैसा करे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में कच्छ नामक एक विस्तीर्ण देश है, उसके विजयार्द्ध पर्वत पर उत्तर श्रेणी में चक्रवालपुर नामक एक अत्यन्त मनोहर नगर है। वहां पर यशोधर नाम का राजा राज्य करता था, उसको विजयावती नाम की सौन्दर्यवती स्त्री थी, उस राजा का सोमदत्त नाम का पुरोहित और मदनवेगा नाम की एक सुन्दर स्त्री थी, उस पुरोहित का एक विशाखदत्त नाम का पुत्र था।

उसी नगर में विष्णुदत्त नामक एक ब्राह्मण रहता था, ब्राह्मण की मदन-मुखी नाम की रूपवान स्त्री थी, उसके पेट से कामसेना नाम की एक गुणवान कन्या उत्पन्न हुई। कन्या को विवाह के योग्य समझकर विवाह कर दिया।

एक दिन कामसेना अपनी सखी के साथ में बसंत ऋतु की क्रीड़ा करने को निकली। रास्ते में यशोभद्र नाम के दिगम्बर मुनि को देखकर मिथ्यात्व कर्म के उदय से ग्लानिपूर्वक निन्दा किया, मुनिनिन्दा के प्रभाव से अन्त में मरण कर छठे नरक में उत्पन्न हुई। बाईस सागर पर्यन्त दुःख भोगने लगी। आयु के समाप्त होने के बाद वहां से निकलकर, पुष्करार्द्ध द्वीप के अन्तर पूर्वमेरु पर्वत के दक्षिण भाग में भरत क्षेत्र है, भरत क्षेत्र के अन्तर्गत अयोध्या नगरी है, वहां श्रीवर्मा नाम का राजा राज्य करता था।

उस राजा की रानी का नाम लक्ष्मीमती था, राजा का कपिल पुरोहित था, पुरोहित की स्त्री का नाम सुप्रभा था, वह मुनिनिन्दक पापिनी छठे नरक से निकल कर, पुरोहित की कन्या होकर उत्पन्न हुई, पैदा होते ही उसके माता पिता मर गये, फिर वह घर घर भिक्षा माँगकर भोजन करने लगी, उसका शरीर दुर्गन्ध से युक्त था, इसलिए लोग उसको दुर्गन्धा के नाम से पुकारते थे, यौवनवती होने के बाद एक दिन वन में लकड़ी लेने गई, वहां नाभिगिरिपर्वत के ऊपर गुहा में रहने वाले मनोगुप्ति नाम के महामुनिश्वर दृष्टिगत हुये।

तब दुर्गन्धा का मिथ्यात्व कर्म के उपशम होने से मुनिराज को नमस्कार करूं ऐसा भाव जाग्रत हुआ, जाकर नमस्कार किया और कहने लगी कि स्वामिन मैंने कौनसे पाप किये जिससे मेरा शरीर दुर्गन्धमय है आप कृपा करके मुझे बताइये, तब मुनिराज कहने लगे कि हे कन्ये तुमने पूर्व जन्म में मुनिनिंदा की है, इस कारण मरकर नरक में गई, वहां का दुःख भोगकर अवशेष पुण्य के कारण ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुई और दरिद्री होकर दुःख भोग रही हो।

यह पूर्व भव वार्ता सुनकर दुर्गन्धा बहुत ही पश्चाताप करने लगी, मुनिराज को कहने लगी, हे भवोदधितारक अब मुझे मेरे पाप कर्म दूर हो ऐसा कोई उपाय बताओ, उस दुःखी दुर्गन्धा के वचन सुनकर मुनिराज कहने लगे कि हे बेटी तुम अपने

किये हुए पापों को दूर करना चाहती हो तो मुक्तावली व्रत को विधिपूर्वक करो जिससे तुम्हरा सर्व रोग नष्ट होकर सुख सम्पत्ति प्राप्त होगी, ऐसा कहकर उसको व्रत का स्वरूप बताया, व्रत का स्वरूप बताने पर दुर्गन्धा को बहुत ही आनन्द आया, उसने खुशीपूर्वक व्रत को स्वीकार किया, और अपने गांव में वापस आ गई, आगे उसने यथाशक्ति व्रत को विधिपूर्वक पालन किया, उद्यापन किया । अन्त में समाधि-पूर्वक मरण कर स्त्रीलिंग का छेद करती हुई सौधर्म स्वर्ग में विभूतिशाली देव हुई, वहां दो सागर के सुख का अनुभव कर इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में मिथिलापुर नाम के एक रम्य नगर में पहले पृथ्वीपाल नाम का एक भद्र परिणामी राजा राज्य करता था । उसकी पृथ्वीदेवी नाम की रानी थी, उस रानी के गर्भ से पद्मरथ नामक बलिष्ठ पुत्र होकर जन्म लिया, थोड़े ही दिन में वह कुमार तारुण्य अवस्था को प्राप्त हुआ ।

एक दिन चतुरंग सेना के साथ हाथी पकड़ने के लिए वन में गया था, तब वहां, हाथी, सिंह, गाय, बाघ, हरिण, लोमड़ी, कुत्ता आदि पशु अपना स्वा—भाविक वैर छोडकर शांतता से परस्पर क्रीड़ा करते हुये बैठे थे, यह देखकर कुमार को बहुत ही आश्चर्य हुआ, उस समय उसने हाथी को पकड़कर एक पेड़ से बांध दिया, वह भी वहां शांति से बैठ गया, उस वक्त उस पर्वत की गुफा में बैठे एक निर्ग्रन्थ मुनि उसकी दृष्टि में आये तब उसने सब के साथ वहां जाकर तीन प्रद-क्षिणा लगाकर नमस्कार किया, वहां सर्व पशु-पक्षि अपना अपना वैरभाव छोड़कर बैठे थे, यह सब देखकर राजकुमार को बहुत आश्चर्य हुआ ।

तब कुमार मुनिराज को कहने लगा कि हे स्वामिन आपके तपोबल का महात्म्य जैसा है वैसा मैंने कहीं पर भी नहीं देखा, ऐसा मुनिश्वर ने सुना तब उन्होंने कहा कि हे युवराज हमारे तपोबल का ही ऐसा आश्चर्य है इस प्रकार तुम मत समझो, अंगदेश के चंपापुर नगर में मेरुपर्वत के समान आत्मध्यान में निश्चल रहने वाले और जिनके सर्वाङ्ग से मेघगर्जना के समान दिव्यवाणी प्रकट होती है, और प्रातः काल के सूर्य की जैसे कांति होती है वैसी उनकी कांति है, ऐसे भगवान श्री वासुपूज्य तीर्थंकर का समवशरण आकर ठहरा हुआ है, उन्हीं का यह प्रभाव है, कारण जहां

तीर्थंकर रहते हैं वहां १०० योजन तक सुभिक्षता रहती है, इसलिये सर्व पशुपक्षी परस्पर वैर भाव छोड़कर प्रेम से खेलते रहते हैं ।

ऐसा सुनकर युवराज को बहुत--आनन्द आया, तब वह कुमार मुनिराज को नमस्कार करके बड़ी उत्सुकता से सर्व लोगों के साथ अपने नगर में वापस आया। दूसरे दिन अपने माता-पिता की आज्ञा लेकर बड़े उत्साह से श्री वासुपूज्य तीर्थंकर का दर्शन करने को हाथी पर बैठकर निकल गया। उस समय उसके मनोबल की परीक्षा करने के लिये, धनपूज्य और विश्वानुलोम नाम के दोनों देवों ने आकर नगर के परकोटे का और द्वार का ध्वंस कर दिया, यह देखकर मन्त्री वर्ग ने राजपुत्र को कहा कि हे स्वामिन बहुत बड़ा अपशकुन हो रहा है, आप कहां जा रहे हो रुको।

ऐसा सुनकर और देखकर भी भयभीत नहीं होता हुआ अपशकुनों की परवाह नहीं करता हुआ, युवराज 'ॐ नमो भगवते वासुपूज्याय नमः' ऐसा उच्चारण करके आगे बढ़ा, फिर उन दोनों देवों ने आगे जाकर युवराज का मार्ग रोकने के लिये सर्प के विषमिश्रित रक्त को रास्ते में भर दिया, तो भी युवराज 'ॐ नमो भगवते वासुपूज्य नमः' कहता हुआ हाथी को वहां से आगे बढ़ा दिया, तब देव उस राजकुमार की दृढ़भक्ति को देखकर कुमार के सामने प्रत्यक्ष हुये, और क्षमा मांगने लगे, कहने लगे कि हमने आपका बड़ा अपराध किया है, आपकी भक्ति में प्रतिबन्धक हुये हम लोग, ऐसा कहकर दोनों देवों ने राजकुमार की पूजा किया, और कहने लगे कि हे कुमार आपका यह प्रयाण सुखकर हो, ऐसा कहकर चले गये । फिर वह राजकुमार आतुरता से आगे चला, दूर से समवशरण को देखकर हाथी से नीचे उतरा अपने दोनों हाथों को जोड़ता हुआ, समवशरण के द्वार पर जा पंहुचा, श्री वासुपूज्य नमः कहता हुआ समवशरण में प्रवेश किया, गंधकुटी की तीन प्रदक्षिणा देकर तीर्थंकर को साष्टांग नमस्कार किया। फिर अष्टद्रव्य से भगवान की पूजा स्तुति करके मनुष्य के कोठे में जाकर बैठ गया।

भगवान का धर्मोपदेश सुनकर हाथ जोड़कर सुधर्म गणधर को कहने लगा, हे भवसागरोद्धारक दयानिधि स्वामिन ! आज आप भवावली कहो, गणधर स्वामी कहने लगे हे कुमार तुम प्रथम भव में कामसेन पुरोहित की लड़की थे, दूसरे

भव में छठे नरक में थे, तीसरे भव में ब्राह्मण के घर में दुर्गन्धा होकर पैदा हुये, मुक्तावली व्रत को पालन करके देवपर्याय प्राप्त किया, वर्तमान में तुम मिथिलापुरी के पृथ्वीपाल राजा के घर पद्मरथ नाम के पुत्र होकर जन्मे ।

इस प्रकार अपने पूर्वभवों को सुनकर तत्काल वैराग्य उत्पन्न हुआ, तब जिनदीक्षा धारण कर समशवरण में धर्मरथ नाम के गणधर बन गये । आगे घातिया कर्मों का नाश करके केवलज्ञानी हुये, फिर अघातिया कर्मों का भी नाश करके मोक्ष को गये ।

इसलिये हे भव्यो ! आप भी मुक्तावली व्रत को भक्तिभाव से यथाविधि पालन करो, और उस व्रत का उद्यापन करो, तुमको भी सद्गति की प्राप्ति होगी ।

माघमाला व्रत कथा

माघ शुक्ला पौर्णिमा के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजाभिषेक का सामान हाथ में लेकर जिनमन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, मन्दिर में दीपक जलावे, मण्डपवेदी को खूब सजाकर वेदी पर अष्टदलाकर पांच रंगों से निकाले आठ कलश सजाकर आठों दिशाओं में रखे, एक बड़ा मंगल कलश सजाकर मंडल के मध्य में रखे, ऊपर एक थाली में यन्त्र निकालकर थाली कलश के ऊपर रखे, अभिषेक पीठ पर पंचपरमेष्ठि भगवान की मूर्ति को स्थापन कर भगवान का पंचामृताभिषेक करे, भगवान को एक सुगन्धित फूलों की माला चढ़ावे, उसी प्रकार अपरान्हकाल में भी अभिषेक कर माला समर्पण करे, थाली में नवदेवता यन्त्र चंदन से निकाले, उस यन्त्र पर नवदेवता प्रतिमा स्थापन कर अष्टद्रव्य से पूजा करे, नैवेद्य चढ़ावे, श्रुत की पूजा व गणधर पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल पूजा भी करे ।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का भी १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ्य थाली में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन ब्रह्मचर्य व्रत को पालन करे, उपवास

आदि करे, बारह व्रतों का पालन करे, इस प्रकार एक वर्ष तक इस व्रत को पाले, अंत में उद्यापन करे, पंचपकवान चढ़ावे, महाभिषेक पूजा करके चारों संघों को चार प्रकार का दान देवे।

कथा

कुरुजांगल देश में कनकपुर नाम का नगर है, उस नगर में विजयकीर्ति नामक राजा अपनी रानी विनयवती के साथ राज्यसुख भोगता था, उसी नगर में जिनदत्त राजश्रेष्ठि अपनी सेठानी रत्नमाला के साथ में रहता था, उसकी कन्या का नाम वनमाला था, एक दिन वनमाला अभयवती आर्यिका के पास जाकर माघमाला व्रत को ग्रहण कर व्रत का पालन करती हुई धर्मध्यान से समय बिता रही थी।

सिन्धुदेश में रत्नपुर नाम का नगर है, उस नगर का राजा जितशत्रु अपनी रानी कमलावती के साथ राज्य करता था, उस राजा का राजश्रेष्ठि विनयदत्त और उसकी सेठानी सुभद्रा थी, उस सेठ के सुशर्मा नाम का कुरूप एक पुत्र था, पुत्र की शादी हो ऐसा उद्‌देश्य लेकर दूसरे गांव की ओर चले, और कनकपुर नगर के उद्यान में आकर उतरे।

उसी समय अवंती देश के सुसीमा नगरी में वसुपाल नामक राजा निपुण-मति रानी के साथ में राज्य करता था, उसके राज्य में मन्त्री अभिचन्द्र अपनी पत्नी कुसुमलेखा के साथ रहता था, एक दिन राज्यश्रेष्ठि जिनदत्त व्यापार के लिये रत्न द्वीप गया, वापस आते समय सुवर्ण पात्र में रखकर रत्नभूषण आदि राजा को भेंट किया, और आदर से नमस्कार करके सामने खड़ा हो गया।

राजा ने बैठने के लिये अपने पुत्र का सिंहासन दिया, तब सेठ को आश्चर्य हुआ और कहने लगा कि राजन मैं इस सिंहासन पर बैठने योग्य नहीं हूं, क्योंकि मेरे पुत्र नहीं है, तब राजा ने दूसरे सिंहासन पर बैठने को कहा वो उसके ऊपर बैठ-कर कुशलवार्ता पूछने लगा, राजा ने उसका अच्छी तरह से आदर सत्कार करके उसके गांव को भेज दिया, उस प्रसंग में सारा वृतान्त राजा के प्रधान को मालुम पड़ने से गहरा धक्का मन में बैठ गया, अन्य लोगों को भी आश्चर्य हुआ, और मन में

पुत्र चिन्ता को करने लगे। एक दिन उस नगर के उद्यान में बोधसिंधु नामक मुनिराज संघ सहित आकर उतरे, राजा को समाचार प्राप्त होते ही पुरजन-परिजन सहित नगर के उद्यान में मुनिदर्शन को गया, मुनिदर्शन कर कुछ क्षण धर्मोपदेश सुना, फिर हाथ जोड़कर नमस्कार करता हुआ कहने लगा कि हे गुरुदेव मेरे सन्तान सुख नहीं है सो मुझे संतान उत्पत्ति होगी कि नहीं, तब मुनिराज कहने लगे कि हे मन्त्री आपको अवश्य ही सन्तान प्राप्ति होगी लेकिन सोलह वर्ष की उम्र में उसको सर्प काट लेगा, और वह मर जायेगा।

यह सुनकर मन्त्री को हर्ष और विषाद दोनों ही हुए, सर्वजन नगर में वापस लौट आये, आगे कुछ वर्ष निकल जाने के बाद मन्त्री को संतान प्राप्ति हुई, उस पुत्र का नाम मृत्युञ्जय रखा, मन्त्री ने एक नवीन मन्दिर बनाकर प्रतिमा स्थापन कर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा की और उसी मन्दिर में चिता से आक्रान्त होकर धर्मानुष्ठान करने लगा, एक दिन मृत्युञ्जयकुमार अपने मित्र के साथ में तीर्थक्षेत्र यात्रा के लिये निकला, मार्ग में कनकपुर नगर के उद्यान में एक पेड़ की छाया में ठहर गया।

उसका मित्र भोजन सामग्री लेने को गांव में गया, उसी उद्यान में जो पूर्व का वरदत्त सेठ अपने सुधर्म नाम के कुरूप पुत्र का लग्न करने को वहां आया था, उसकी पत्नी सुभद्रा वहां के सरोवर में पानी को आई, वहां उसने पेड़ के नीचे ठहरे हुये मृत्युञ्जय को देखा, उसके पास जाकर उसके पांव दबाने लगी, तब वह कहने लगा कि ये तुम क्या कर रही हो, ये तो अनुचित कार्य है, तब वह कहने लगी कि हे कुमार तुम सुनो मेरा एक कुरूप पुत्र है, उसका कोई भी विवाह नहीं करता है।

इसलिये उसके बदले तुम्हारा विवाह करूंगी, मात्र एक यही उपाय है, तुम्हारे सरीखे सज्जन का पर-उपकार करना परम आवश्यक कार्य है, क्योंकि कहा भी है, सत्पुरुषाः सोपकारिणः। इसलिये मैं तुम्हारे पास आई हूं। तब वह मृत्युञ्जयकुमार कहने लगा कि हे मां मेरा मित्र नगर में भोजन के लिये गया है, उसके आने पर विचार कर कहता हूं। इतने में उसका मामा वहां आ गया, और मृत्युञ्जय ने सब बात कह सुनाई, उसके मामा ने इस कार्य के लिये अनुमति दे दी, तब

वह सेठानी उस मृत्युञ्जयकुमार को साथ में लेकर गई और जिनदत्त सेठ को दिखा दिया और कहा यही मेरा पुत्र है, तब उस सेठ ने अपनी कन्या वनमाला का विवाह मृत्युञ्जय के साथ में कर दिया, और उसको शय्याग्रह में भेज दिया।

वनमाला ने वहां जाकर मृत्युञ्जय को खाने के पदार्थ दिये तब मृत्युञ्जय कहने लगा कि हे प्यारी मैं रात को भोजन नहीं करता, तब उसने पान का बीड़ा दिया, और अपने अंग पर से कंचुकी निकालकर खटिया (पलंग) पर रखकर बाहर चली गयी, तब मृत्युञ्जय ने कंचुकी पर चूने से अपना नाम लिखकर अपनी जगह सुशर्मा वहाँ रखकर, मृत्युञ्जय चला गया, इतने में वनमाला वहां आ गई, देखा तो अपना पति कुरूप देखा, तब मैं पानी लेकर आती हूं ऐसा कहकर एक कमरे में बैठ गई, द्वार को बंद करके प्रातःकाल होने पर सबने उस सुशर्मा कुरूपी को देखा, सबने मिलकर उसकी खूब मजाक उड़ाई और कहने लगे कि हमारी कन्या को ऐसा कुरूप वर मिला है, यह बहुत खराब हुआ है, लोग अनेक प्रकार की चेष्टा करने लगे, तब उसको बहुत खराब लगा, और वो वहां से चला गया, रात्रि को हुई घटना को अपने माता-पिता को बताया, यह सब सुनकर अपने कपटाचार से अपना अपमान हुआ है, ऐसा समझकर नगर में वापस लौट आये।

इधर वह मृत्युञ्जय कुमार घूमता-घूमता रत्नसंचयपुर नगर के उद्यान में पहुंचा, वहां एक ऐसी घटना घटी कि उस रत्नसंचयपुर नगरी का राजा, सिंहरथ की दो कन्या थी, उनका नाम विशालनेत्रा व कुवलयनेत्री था, दोनों कन्याएं जब युवा अवस्था में आई तब राजा को कन्याओं के विवाह की चिन्ता रहने लगी, एक दिन एक अवधिज्ञान-सम्पन्न मुनिराज से राजा ने पूछा कि हे गुरुदेव मेरी कन्याओं का विवाह कब होगा, तब मुनिराज कहने लगे कि हे राजन, तुम्हारे नगर के उद्यान में चित्रकूट जिनमन्दिर का दरवाजा जो कोई खोलेगा, वो ही तुम्हारी कन्या का वर होगा, क्योंकि दरवाजा बहुत दिनों से बन्द है, सुनकर राजा ने दो सेवकों को मन्दिर के सामने नियुक्त कर रखा था।

इधर मृत्युञ्जय मामा के साथ में उद्यान के सरोवर पर स्नान करके हाथों

में कमल के पुष्प लेकर जिनमन्दिर के दरवाजे खोलकर ईर्यापथ शुद्धिपूर्वक भगवान का दर्शन करने लगा ।

इस शुभवार्ता को सेवकों ने राजा को जाकर बताया, तब राजा मृत्युञ्जय कुमार को हाथी पर बैठाकर उत्सवपूर्वक राजभवन में ले गया, वहां शुभ मुहूर्त में दोनों कन्याओं का विवाह कुमार के साथ में कर दिया, मृत्युञ्जय भी वहां के सुख भोगने लगा, कुछ समय वहां रहकर ससुर की आज्ञा लेकर वहां से मामा के साथ में उर्जयन्तगिरि पर चला गया, मेरी मरणावधि समीप आ गई है ऐसा समझकर एक शिला पर णमोकार मन्त्र का जाप्य करता हुआ उपसर्ग टलने तक नियम करके बैठ गया, उसी शिला के नीचे से एक सर्प ने आकर मृत्युञ्जय कुमार को काट लिया, और उसी शिला के नीचे जाकर वापस सर्प बैठ गया ।

णमोकार मन्त्र-जाप्य के प्रभाव से पद्मावति देवी का आसन कंपायमान हुआ, और देवी ने वहां आकर कुमार का सर्प विष दूर किया, और अपने स्थान को वापस चली गयी ।

इतने में वहां पर मेघरथ राजा आकर कुमार मृत्युञ्जय को अपने घर ले गया और अपनी कन्या का विवाह कुमार के साथ में करके आधा राज्य देकर अपने पास रख लिया, कुछ समय वहां का राज्य करके और अपनी पत्नी को लेकर अपने नगर को चला, रास्ते में पूर्व की अपनी दोनों पत्नियों को लेकर कनकपुर नगर के उद्यान में उतरा, उन सबको जिनदत्त सेठ अपने घर भोजन के लिये ले गया और सबको आनन्द से वहां पर भोजन दिया, वनमाला ने अपनी कंचुकी पर लिखा हुआ मृत्युञ्जयकुमार का नाम दिखाया, तब मृत्युञ्जयकुमार अपना नाम देखकर संतुष्ट हुआ, और अपने विवाह पर होने वाली घटना को बताया, तब सब लोग इस घटना को सुनकर आनन्दित हुये, वनमाला को लेकर कुमार सुसीमा नगरी को चला गया, और सुख से समय बिताने लगा ।

वनमाला इस माघमाला व्रत के पुण्य प्रभाव से स्त्रीलिंग का छेद करती हुई स्वर्ग में देव हुई, ऐसा इस व्रत का प्रभाव है ।

मोक्ष सप्तमीव्रत

श्रावण सुदि सप्तमी को मोक्ष सप्तमी कहते हैं। श्रावण सुदि षष्ठी को एकाशन करके सप्तमी को उपवास करना और अष्टमी को एकाशन करना, तीनों दिन पूजन, अभिषेक, धर्मध्यान, चिंतन, मनन, स्वाध्याय में बिताये। इस व्रत के दिन ॐ ह्रीं पार्श्वनाथाय नमः। इस मन्त्र का जाप त्रिकाल १०८ बार करना चाहिए। यह व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये। शक्ति नहीं हो तो व्रत दूना करना चाहिए।

व्रत विधि

पोष वदि एकादशी को मौन एकादशी कहते हैं। इस दिन सोलह पहर का प्रोषधोपवास करना चाहिए। वह दिन धर्म कथा, पूजा आदि में व्यतीत करना चाहिए। त्रिकाल सामायिक करनी चाहिए मौन से रहना चाहिए। द्वादशी को अभिषेक पूजा आदि करके प्रथम प्रहर के बाद अतिथि को भोजन करावे, फिर भोजन करना चाहिए। यह व्रत क्रम से ११ वर्ष करना चाहिए। पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए। शक्ति न हो तो व्रत दुगुना करना चाहिए।

इसके अलावा यह व्रत दो और विधि से किया जाता है।

(१) नित्यमौन भोजन वमन स्नान मैथुन मलक्षेपण सामायिक जिनपूजन इस सात स्थानों पर आजीवन मौन का पालन करना।

(२) पौष सुदि १४ से प्रत्येक महिने की दोनों एकादशी को उपवास करना ऐसा एक वर्ष में २४ उपवास करना यह व्रत एक वर्ष करना। उस दिन मौन रहना चाहिए।

उद्यापन विधि—शक्ति हो तो जिनमन्दिर बनवाना उसमें २४ तीर्थंकर की प्रतिमा विराजमान करना और घंटा, झालर, चाँदवा, छत्र, चमर, शास्त्र वगैरह वस्तु २४-२४ मन्दिर में देना चाहिये।

शास्त्र भण्डार खोलना, शास्त्रदान देना, महापूजा विधान करना, आहार, औषधदान देना। अन्त में संन्यास लेकर समाधिमरण करना चाहिए। शक्ति हो तो जिनदीक्षा लेनी चाहिए।

कथा

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में कोशल नामक एक देश है। उस देश में यमुना के किनारे कौशांबी नाम की एक नगरी थी। यह पद्मप्रभु भगवान की जन्म भूमि है। वहां पर पद्मप्रभु का समवशरण आया था। यह उस समय की कहानी है।

राजा हरिवाहन वहां राज्य करता था। उसकी रानी शशीप्रभा व उसका पुत्र सुकोशल था। वह सब विद्याओं में कुशल, सम्पन्न व पारंगत था। परन्तु उसका ध्यान हमेशा खेलने की ओर रहता था। वह अपना पूरा समय खेलने में खर्च करता था। राज्य के कार्यभार को वह देखता नहीं था।

राजा को उसकी चिन्ता थी। एक दिन भाग्योदय से सोमप्रभु मुनिराज संघ के साथ कौशांबी आये। अपने परिवार व प्रजा के साथ वह वंदना के लिए गया। वंदना के बाद मुनि के मुख से धर्म श्रवणकर मुनि से पूछा—भगवान ! मेरे लड़के का ध्यान राज-काज की ओर क्यों नहीं जाता है, इसका कारण क्या है और भविष्य में उसका क्या होगा ? मुनि ने उत्तर दिया हे राजन ! पूर्व में इस देश में कुटन नगरी का राजा अपनी त्रिलोचना रानी के साथ राज्य करता था। उस समय वहां एक कुणबी रहता था उसकी लड़की तुंगभद्रा थी, उस भाग्यहीन कन्या के पापोदय से बालपन में उसके माता-पिता परलोक चले गये इसलिये अपनी उदरपूर्ति रास्ते रास्ते में घूमते हुए जूठन आदि मिल जाय तो करती थी। फिर जब वह आठ वर्ष की हुई तब जंगल में घास काटने गयी थी, वहां पिहिताश्रव मुनि के दर्शन हुए। भूख से व्याकुल होने के कारण मुनिमहाराज का धर्मोपदेश उसको अच्छा नहीं लगा वह दुःखी थी। दुःख से व्याकुल होकर वह अपना दुःख महाराज को कहने लगी और उससे मुक्त होने का उपाय पूछा, तब मुनिमहाराज ने कहा :—

बालिका यह तेरे पाप-कर्म का फल है तू अब मौन एकादशी का व्रत कर। इससे तेरे पाप कर्म का नाश होगा और दुःखद संसार का अन्त होगा।

उसने यह व्रत अच्छी भक्तिभावना से किया जिससे वह मरकर हे राजन ! तेरे घर में जन्म लिया है। यह तेरा पुत्र चरमशरीरी है, उसका राज्य भोग में

चित्त नहीं लगेगा और संसार में बहुत कम समय रहेगा। बाद में राजा घर आया और उसे वैराग्य हो गया। उसने पुत्र सुकौशल को राज्य का भार देकर दीक्षा ली।

सुकौशल राज्य करने लगा, वह विद्वान था। फिर भी राजनीति की कुटिलता उसे मालुम नहीं थी। उसका भण्डारी मतिसागर बड़ा ही चालाक था। राजा का ध्यान राज्य की ओर नहीं है—ऐसा जानकर उसने श्रुतसागर मन्त्री से कहा तुम राजा को कैद में डालकर राज्य अपने हाथ में ले लो। तुम राजा बनो, मैं मन्त्री बनूंगा

यह बात मतिसागर के लड़के को ज्ञात हुई। वह राजा का बचपन का दोस्त था। उसने सुकौशल को सतर्क किया। तब राजा ने मतिसागर को अपने अधिकार की शिक्षा दी और फिर मन्त्री को राज्य देकर आप पिताजी के पास जाकर जिन-दीक्षा ली।

मतिसागर दुःखी हुआ, वह वहीं मर कर उसी वन में सिंह हुआ।

सुकौशल मुनि होकर कठोर तप करने लगे। तब उस सिंह ने पूर्वभव के वैर के कारण उसके शरीर को त्रास दिया। वह सुकौशल उपसर्ग सहन कर शुक्ल ध्यान में लीन हो गये। सिंह अपने कृत्यों पर पछताकर भाग गया। मुनिमहाराज को अन्त में केवलज्ञान प्राप्त हुआ और मोक्ष गये। वह सिंह दुःख पाता हुआ मरकर घोर नरक में गया।

उस दरिद्र कन्या ने सिर्फ मौन एकादशी का व्रत विधिपूर्वक किया जिससे राजकुमारी हुई और अन्त में वह मोक्ष गयी। इसलिए प्रत्येक जीव को मौन व्रत पालन करना इष्ट है। इसी में आत्मा का हित है।

मंगलत्रयोदशी व्रत कथा

आश्विन कृष्ण १२ के दिन शुद्ध वस्त्र पहन कर जिन मन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, विमलनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा यक्षयक्षणी सहित स्थापन कर भगवान का पंचामृताभिषेक करे, फिर अष्टद्रव्य से आदिनाथ से लगाकर विमलनाथ तीर्थंकर तक की पूजा करे, श्रुत व गुरु की, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, क्षेत्रपाल का तैलाभिषेक करे, सिन्दूर

लगावे, फूलमाला पहनावे, नारियल, गुड़, लाल वस्त्र, लड्डू आदि अर्पण करे, गुड़ के पूडे पांच चढ़ाकर नारियल फोड़े ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विमलनाथ तीर्थंकराय पाताल यक्ष वैरोटीयक्षि सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्रों का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में तेरह पान लगाकर उनके ऊपर अष्ट-द्रव्य सजाकर एक नारियल रखे, अर्घ्य हाथ में लेवे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, धर्मध्यान से समय निकाले, सत्पात्रों को दान देवे, उपवास करे अथवा एकाशन करे, एकाशन में मात्र तीन वस्तु ग्रहण करे, इस प्रकार तेरह महिने उसी तिथि को पूजा कर व्रत करे, अन्त में उद्यापन करे, उस समय विमलनाथ विधान करके सत्पात्रों को दान देवे और व्रत को पूर्ण करे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में आर्यखण्ड है उस खण्ड में मालवा नाम का देश है, उस देश में उज्जयिनी नाम की नगरी है, वहाँ पर एक गुणपाल नाम का दरिद्री रहता था, लेकिन वह सदाचारी और गुणश्रेष्ठ था । उसकी पत्नी का नाम गुणवती था, इनको एक गुणवान पुत्र था, लेकिन वो दरिद्र अवस्था का दुःख भोग रहा था, नगर में सब श्रावकवर्ग आहारदान देते थे, लेकिन उसकी शक्ति नहीं रहने से मुनि दान नहीं कर सकता था, सो मन में बड़ा दुःख मानता था ।

एक दिन जिनमन्दिर में सप्तऋद्धि सम्पन्न सोमचन्द्र नाम के मुनिराज को आया देखकर अपनी सेठानी से कहने लगा कि हे प्रिय अपन भी मुनिराज को आहार दान देवें, तब सेठानी कहने लगी कि हे पतिदेव आपकी इच्छा है तो अवश्य ही हम लोग भी आहारदान देवेंगे चाहे उपवास क्यों न करना पड़े । और दोनों ही पति-पत्नी मन्दिर में जाकर हाथ जोड़ते हुए मुनिराज से प्रार्थना करने लगे कि हे गुरु ! आप चातुर्मास यहां ही करें, हमें कोई हमारे कल्याण के लिए व्रत देवें ।

तब मुनिराज उसको कहने लगे कि हे श्रेष्ठि तुम मंगल त्रयोदशी व्रत करो तुम्हारा कल्याण होगा, और व्रत की विधि उसको बताई। सेठ ने प्रसन्नतापूर्वक व्रत को ग्रहण किया, और नगर में वापस आया, मुनिराज ने चातुर्मास उसी नगरी में करना निश्चित किया। वह दरिद्र सेठ अपनी पत्नी सहित एक उपवास एक पारणा करने लगा। उपवास के दिन दोनों ही मुनिराज को आहारदान देने लगे, चातुर्मास आनन्द से बीतने लगा, इतने में आश्विन शुक्ल १३ के दिन व्रत कर मुनिराज को दान दिया, और सेठ मुनिराज को उद्यान में पहुंचाने गया, रास्ते में मुनिराज कहने लगे हे सेठ अब आप अपने घर जाओ, तब सेठ मुनि की आज्ञा का पालन करने के लिये नमोस्तु करने लगा। मुनिराज ने उसको धर्मवृद्धिरस्तु कहते हुए, एक पत्थर उसके दुपट्टे में डाल दिया।

तब वह गुरु का प्रसाद समझकर उस पत्थर को अपने घर लेकर आ गया उसने उस पत्थर की पूजा की, इतने में उसका लड़का खेलते २ वहां आया और एक लोहे की चीज उसके हाथ में थी वह लोहा उसके हाथ से उस पत्थर पर गिर पड़ा, लोहे का स्पर्श उस पत्थर से होते ही लोहा सोना बन गया, क्योंकि वह पारस पत्थर था, यह वार्ता सारे नगर में फैल गई और नगरवासी लोग वहां इकट्ठे हो कर उससे पूछने लगे। सारी वस्तुस्थिति सब ने जानी, और आश्चर्य करने लगे।

जैन धर्म के ऊपर सब को दृढ़ श्रद्धान हो गया, उसी समय से धन तेरस पर्व प्रसिद्ध हो गया, आगे वह सेठ बहुत बड़ा बन गया, आनन्द से समय बिताने लगा, उस व्रत को वह अच्छी तरह से पालन करने लगा, अन्त में व्रत का उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से संन्यास विधिपूर्वक मरकर स्वर्ग में देव हुआ।

मोहनीय कर्म निवारण व्रत कथा

कोई भी अष्टान्हिका की अष्टमी के दिन शुद्ध होकर जिनमन्दिर में जावे, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, अभिनन्दन भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्ष यक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अभिनन्दन तीर्थंकराय यक्षेश्वर यक्ष व शृंखला यक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, ब्रह्मचर्य का पालन करे उस दिन उपवास करे, दूसरे दिन पूजा दान करके स्वयं पारणा करे, इस प्रकार चार महिने प्रत्येक अष्टमी व चतुर्दशी को व्रत पूजा करके अन्त में कार्तिक अष्टान्हिका में व्रत का उद्यापन करे, उस समय अभिनन्दन तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे, चार दम्पति वर्ग को भोजनादिक देकर वस्त्रादिक देवे ।

कथा

राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े ।

मेरू व्रत

मेरु पांच हैं । सुदर्शन, विजय, अचल, मंदर और विद्युन्माली । प्रत्येक मेरुवार चार वन है । उनके नाम :—भद्रसाल, नंदन, सौमनस और पांडुक । प्रत्येक वन में चार-चार चैत्यालय हैं । ऐसे पांच मेरु के अस्सी चैत्यालय हैं । उस सम्बन्धी व्रत मेरु व्रत है ।

प्रथम सुदर्शन मेरु के भद्रसाल वन में चार मन्दिर के लिये एक उपवास एक पारणा ऐसे चार उपवास चार पारणा करके एक बेला करके पारणा करना । उसके बाद नंदन वन के चैत्यालय सम्बन्धी एक उपवास एक पारणा ऐसे चार पारणा उपवास चार पारणा करके एक बेला करना उसके बाद पारणा करना उसके बाद सोमनस व चौथा पांडुकवन में चैत्यालय संम्बन्धी ऊपर के अनुसार चार-चार उपवास चार-चार पारणा करना व बेला व पारणा करना चाहिए ।

ऐसे सब मिलकर १६ उपवास १६ पारणा चार बेला चार पारणा करना इस प्रकार ४४ दिन में प्रथम मेरु सम्बन्धी उपवास पूर्ण होते हैं । इस प्रकार विजय मेरु, अचलमेरु, मन्दरमेरु और विद्युन्माली मेरु के १६ उपवास १६ पारणा ४ बेला ४ पारणा करना इस प्रकार इस पांच मेरु के व्रत २२० दिन में पूर्ण होते हैं । व्रत का दिन धर्मध्यान पूर्वक बिताये । व्रत के दिन बारह भावना का चिन्तवन करना चाहिए । सब पूजा करने के बाद पंचमेरु की पूजा करनी त्रिकाल सामायिक करना ।

इस व्रत का प्रारम्भ श्रावण शुदि प्रतिपदा से करना बाद में लगातार २२० दिन व्रत करना। बीच में छोड़ना नहीं चाहिए। यह व्रत सात वर्ष करना।

इस व्रत में जिस-जिस मेरू सम्बन्धी मन्त्र का जाप करना पहिले मेरु के व्रत का मन्त्र ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरू सम्बन्धी षोडष जिनालयेभ्यो नमः इस मन्त्र का १०८ बार जाप करना, दूसरे मेरु का जाप **"ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धी षोडषजिनालयेभ्यो नमः"** इसका जाप करना, तीसरे मेरु सम्बन्धी **"ॐ ह्रीं अचलमेरु सम्बन्धी षोडषजिनालयेभ्यो नमः" और** चौथे मेरु सम्बन्धी ॐ ह्रीं मंदरमेरु सम्बन्धी षोडषजिनालयेभ्यो नमः इस मन्त्र का जाप करना।

पारणे के दिन एक ही अन्न लेना चाहिए। फल में संतरा आम वगैरह फल लेना। रात को जागरण करना पंचमेरु की पूजा के साथ ही त्रिकाल चौबीस विद्यमान विंशतितीर्थंकर और पंचपरमेष्ठी पूजा करना। शीलव्रत का पालन करना।

इस व्रत का फल लौकिक व पारलौकिक अभ्युदय की प्राप्ति है। इसलिये स्वर्गसुख भोगोपभोग कर सामग्री भोगकर विदेह में जन्म लिया, बाद में पांच चार भव में मुक्ति मिलेगी।

इस व्रत में और एक विधि गोविंद कवि ने अपने व्रत निर्णय में दी है।

प्रथम दो उपवास प्रोषध से करे, बाद में चार उपवास करके एकान्तर करे। उसके बाद दो उपवास करके एकाशन करे उसके बाद क्रम से २१ बेले करना, उसके बाद लाइन से चार उपवास करके एकाशन करना, उसके बाद फिर २१ बेला दो उपवास व एक एकाशन करना। इस प्रकार यह व्रत १४४ दिन में पूरा करना, पूर्ण होने पर उद्यापन करना नहीं तो दूना करना। प्रारम्भ करने के बाद क्रम से पूर्ण किया हो तो उद्यापन करे।

मृदंगमध्य व्रत

प्रथम दो उपवास करके पारणा करना फिर तीन प्रोषधोपवास करके एक पारणा के साथ आहार ले। फिर चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा (धारणे के साथ) चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा इस प्रकार २३ उपवास करना, इसमें सात पारणे आते हैं।

व्रत ३० दिन में पूरा होता है। एक वर्ष में वह पूर्ण होता है। यथाशक्ति उद्यापन करना उद्यापन नहीं किया तो व्रत दूना करना चाहिये। इस व्रत में तिथि मास का कोई नियम नहीं है। कभी भी प्रारम्भ कर सकते हैं पर शुरू करने के बाद क्रम से ही करना चाहिए।

(गोविंदकृत व्रत निर्णय)

हरिवंश पुराण में इसकी और एक विधि दी है।

द्वयाद्यास्ते यत्र पंचान्ता द्वयान्ताश्च चतुरादयः विधिर्मृदङ्ग मध्योऽयं मृदङ्ग-कृतिरिष्यते।

क्रम से दो उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, फिर चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, इस प्रकार २३ उपवास व पारणा करना।

और एक विधि किशनसिंह कृत क्रियाकोष में दी है। उसको गृहत् मृदंगव्रत कहा है। यह व्रत ६८ दिन में पूरा होता है। इसमें ८१ उपवास १७ पारणे आते हैं। इसका क्रम पहला एक उपवास एक पारणा दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, छः उपवास एक पारणा, सात उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, नव उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, सात उपवास एक पारणा, छः उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा। इस क्रम से इस व्रत को करना चाहिए। क्रम से यह व्रत करना चाहिये बीच में क्रम टूटना नहीं चाहिये। व्रतों के दिनों में णमोकार मन्त्र का जाप त्रिकाल करना चाहिए। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए, उद्यापन नहीं किया तो व्रत दूना करना चाहिए।

मौन व्रत

श्रावण महिने की वदि पक्ष में प्रतिपदा को मौन पालकर प्रोषधोपवास करना। बाद में वदि अष्टमी और वदि चतुर्दशी को प्रोषधोपवास करना। फिर से

भाद्रपद सुदि अष्टमी और चतुर्दशी को प्रोषधोपवास करना । इस दिन मौन का पालन करना, बाकी बचे हुए दिनों में एकाशन कर मौन पालन करना चाहिए। यह व्रत पांच वर्ष करना चाहिए पूर्ण होने पर उद्यापन करना, नहीं किया तो व्रत फिर से करो।

—गोविन्दकविकृत व्रत निर्णय

मेघमाला व्रत की विधि

मेघमालां कथयाम्यहम्—

भद्रे भाद्रपदे मासे मेचके प्रतिपद्दिने ।
आरम्भेत व्रतं मासं प्रोषधैकान्तरेण च ।।
स्नातव्यं च सुनीरस्य धाराभिः ब्रह्मचारिभिः ।
आव्रतं परिधातव्यं शुक्लमेवांशुकद्वयम् ।।?।।
जिनालये पुरःप्रस्थायाकाशे विष्टर शुभम् ?
संस्थाप्य मेघ मालेयं शुक्लं धार्यं वितानकम् ।।
विष्टरे श्रीजिनाधीशं यथाशक्ति महोत्सवम् ।
स्नापयेदमृतेनापि पञ्चधा परमेश्वरम् ।।
संस्थाप्य कलशैश्चैनं वितानोपरि शान्तये ।
गन्धाम्बुचिन्तयेदेवं वारिमेघाकृतं यथा ।।?।।

पूर्वं संस्नाप्य पूजयेत्, तिथिहानिवृद्धौ षोडशकारणवत्मेघमालाज्ञेया । मासिकव्रतत्वात्तत्पारणा पात्रदानादनन्तरं पञ्चवर्षयावत्करणीयम् । तत उद्यापनं कुर्यात् ।

अर्थ :—मेघमाला व्रत की विधि का वर्णन किया जाता है । कल्याणकारी भाद्रपद मास में कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से एक महीने तक व्रत करना चाहिए । एकान्तर उपवास व्रत के दिनों में करना चाहिए । व्रत धारण करने वाले ब्रह्मचारी को स्वच्छ प्रासुक जल से स्नान करके व्रत विधि को सम्पन्न करना चाहिए । व्रत समाप्त होने तक दो शुक्ल वस्त्र धारण करने चाहिए । अर्थात् एक स्वच्छ धोती तथा दूसरा दुपट्टा धारण कर व्रत सम्पन्न करना चाहिए। यदि कोई नारी इस व्रत को सम्पन्न

करे तो उसे एक साड़ी तथा एक अन्य वस्त्र धारण कर व्रत सम्पन्न करना चाहिए।

जिनालय के प्रांगण में एक स्वच्छ दूध के समान सफेद चंदोवा लगाकर उसके नीचे सिंहासन बिछाकर भगवान् को स्थापित करना चाहिए। भगवान को स्थापित करने की विधि यह है कि एक घड़े को चन्दन, कपूर, केशर आदि से संस्कृत कर उसके ऊपर थाल रखकर भगवान को विराजमान करना चाहिए। प्रतिदिन अभिषेक, पूजन आदि कार्यों को उत्साह और उत्सवसहित करना चाहिए। पञ्चामृत से प्रतिदिन भगवान् का अभिषेक होना चाहिए। शान्ति प्राप्त करने के लिए अभिषेक के कलशों को स्वच्छ चंदोवे के ऊपर स्थापित कर मेघों के वर्षण के समान अभिषेक किया जाता है। जल, चन्दन आदि पदार्थों से भगवान् का अभिषेक होना चाहिए। गन्धोदक की चिन्ता इस प्रकार करनी चाहिए, मानो मेघ की जलधारा ही गिर रही हो। इस प्रकार अभिषेक के अनन्तर भगवान की पूजा करनी चाहिए।

यदि तिथि-वृद्धि या तिथि-हानि हो तो सोलहकारण व्रत के समान एक दिन पहले से तथा एक दिन अधिक मेघमाला व्रत नहीं किया जाता है। मासिक व्रत होने के कारण इस व्रत की पारणा पात्रदान के अनन्तर की जाती है। आश्विन वदि प्रतिपदा को व्रत करने के अनन्तर इस व्रत की समाप्ति होती है। पांच वर्ष तक व्रत किया जाता है, पश्चात् उद्यापन करने का विधान है। मेघमाला व्रत में तिथिवृद्धि और तिथि-हानि में सोलहकारण व्रत के समान व्यवस्था है।

मेघमाला और षोडशकारण व्रतों की विधि

मेघमालाषोडशकारणञ्चैतद्द्वयं समानं प्रतिपद्दिनमेव द्वयोरारम्भं मुख्यतया करणीयम्। एतावान् विशेषः षोडशकारणे तु आश्विन कृष्णा प्रतिपदा एव पूर्णाभिषेकाय गृहिता भवति, इति नियमः। कृष्णपञ्चमी तु नाम्न एव प्रसिद्धा।

अर्थ :—मेघमाला और षोडशकारण व्रत दोनों ही समान हैं। दोनों का आरम्भ भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा से होता है। परन्तु षोडशकारण व्रत में इतनी विशेषता है कि इसमें पूर्णाभिषेक आश्विन कृष्णा प्रतिपदा को होता है, ऐसा नियम है। कृष्णा पञ्चमी तो नाम से ही प्रसिद्ध है।

विवेचन :—सोलह कारण प्रसिद्ध ही है । मेघमाला व्रत भादों सुदि प्रतिपदा से लेकर आश्विन वदि प्रतिपदा तक ३१ दिन तक किया जाता है । व्रत के प्रारम्भ करने के दिन ही जिनालय के आंगन में स्थापित करे अथवा कलश को संस्कृत कर उसके ऊपर थाल रखकर थाल में जिनबिंब स्थापित कर महाभिषेक और पूजन करे, श्वेत वस्त्र पहने, श्वेत ही चन्दोवा बांधे, मेघधारा के समान १००८ कलशों से भगवान का अभिषेक करे। पूजापाठ के पश्चात् **ॐ ह्रीं पञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः ।** इस मन्त्र का १०८ बार जाप करना चाहिए ।

मेघमाला व्रत में सात उपवास कुल किये जाते हैं और २४ दिन एकाशन करना होता है । तीनों प्रतिपदाओं के तीन उपवास, दोनों अष्टमियों के दो उपवास, एवं दोनों चतुर्दशियों के दो उपवास, इस प्रकार कुल सात उपवास किये जाते हैं । इस व्रत को पांच वर्ष तक पालन करने के पश्चात् उद्यापन कर दिया जाता है । इस व्रत की समाप्ति प्रतिवर्ष आश्विन कृष्णा प्रतिपदा को होती है । सोलहकारण व्रत भी प्रतिपदा को समाप्त किया जाता है । परन्तु इतनी विशेषता है कि सोलह कारण का संयम और शील आश्विन कृष्णा प्रतिपदा तक पालन करना पड़ता है तथा पंचमी को ही इस व्रत की पूर्ण समाप्ति समझी जाती है । यद्यपि पूर्ण अभिषेक प्रतिपदा को हो जाता है, परन्तु नाम मात्र के लिए पञ्चमी तक संयम का पालन करना पड़ता है ।

मेघमाला व्रत

यह व्रत ३१ दिन का है। इसका प्रारम्भ भाद्रपद सुदि प्रतिपदा से होता है । समाप्ति आश्विन वदि प्रतिपदा को होती है ।

इस व्रत में सात उपवास और चौबीस एकाशन होते हैं । भाद्रपद सुदि प्रतिपदा, सुदि पंचमी, सुदि अष्टमी, सुदि चतुर्दशी, वदि प्रतिपदा, वदि नवमी और वदि चतुर्दशी इन सात तिथियों में उपवास करना बाकी के दिनों में एकाशन करना ।

भाद्रपद सुदि १२ इस दिन जिनालय के सभामडप में या प्रांगण में सिंहासन पर स्थापना करके उसके ऊपर जिनबिम्ब स्थापित करना । उसका विधिपूर्वक अभिषेक करना, श्वेत वस्त्र पहनना, श्वेत (सफेद) चांदवा बांधना, १०८ कलशों से अभिषेक करना और पूजा करनी चाहिए। पंचपरमेष्ठी का १०८ बार जाप

करना । रात में जागरण करना तथा भजन आदि करना चाहिए । हिंसादि पांच पापों को छोड़कर ब्रह्मचर्य व्रत से व्रत पूर्ण हो तब तक रहना चाहिए। एकाशन के दिन एक एक रस छोड़कर खाना चाहिए। ५ वर्ष तक यह व्रत करना चाहिए। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए, शक्ति न होने पर व्रत फिर से करना चाहिए ।

इस व्रत की और एक विधि---

(१) तीन प्रतिपदा के तीन, दो अष्टमी के दो और चतुर्दशी के दो ऐसे सात उपवास करके बाकी के २४ दिन एकाशन करना, यह व्रत ५ वर्ष तक करना चाहिए। पूर्ण होने पर उद्यापन करना। राजा वत्स व पद्मश्री ने यह व्रत किया था ।

—गोविंद कवि कृत व्रत निर्णय

(२) प्रथम उपवास, बाद में एकाशन इस प्रकार १६ उपवास व १५ एकाशन करना चाहिए ।

—गोविंद कवि कृत व्रत निर्णय

इस व्रत की सफलता संयम से होती है। मेघपंक्ति से आकाश आच्छादित हुआ हो तो उस समय पंचस्त्रोत बोलना चाहिए और जिस दिन जिस तिथि का उपवास करना कहा है उस दिन ज्योतिष शास्त्र के अनुसार व्रत विधि प्रारम्भ होती है, इसलिये इस व्रत को मेघमाला यह नाम दिया है ।

पूजा के बाद ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठी नमः इस व्रत का १०८ बार जाप करना चाहिए। यह इच्छा व्रत है, किसी भी इच्छा से किया गया व्रत इच्छा व्रत होता है।

इसकी कथा—वत्स देश में कौसांबी नगर में राजा भूपाल राज्य करता था। उसी नगरी में वत्स नामक सेठ अपनी पत्नी पद्मश्री के साथ रहता था। पूर्वकृत अशुभ कर्म के उदय से उसके घर में अठारह विश्व दरिद्रता से नाचते थे। ऐसी गरीबी अवस्था में भी उसके पेट से १६ लड़के और १२ कन्या का जन्म हुआ। गरीब स्थिति में बच्चों का पालन करना और घर का खर्चा चलना अत्यन्त कठिन था। उनका रोज पेट भरना भी बहुत कठिन था।

उसके भाग्य से एक दिन एक चारण ऋद्धिधारी मुनि विहार करते हुये वहां आये। सेठ ने बहुत ही आदर पूर्वक उनको आहार दिया। मुनि महाराज आहार करके जंगल में जाने को निकले। सेठ भी मुनिमहाराज के पीछे पीछे जंगल में गया। गुरु-मुख से धर्मोपदेश सुनकर उसने पूछा—

भगवान मेरे दरिद्रता का क्या कारण है? पूर्व भव में मैंने क्या पाप किया है जिसे मुझे उसका यह फल मिला?

मुनिमहाराज ने उत्तर दिया "सुन पूर्वी कौशल देश में अयोध्या नगरी में देवदत्त श्रेष्ठी अपनी औरत देवदत्ता के साथ रहता था, वह अत्यन्त धनवान था पर उसकी देवदत्ता कंजूस थी। उसको कभी भूलकर भी दान देने की भावना नहीं होती थी। इतना ही नहीं औरों का धन अपहरण करने की उसकी इच्छा होती थी।

कई दिन ऐसे ही बीते। एक दिन एक ब्रह्मचारी आहार के लिये उसके घर आया। उसकी प्रकृति बहुत ही क्षीण हो गयी थी, पर देवदत्ता को उस पर दया नहीं आयी उल्टे उसने अपशब्द बोलकर भेज दिया। श्रेष्ठी ने भी उसका अनुमोदन किया। उस पाप से वे आगे गरीब हो गये। वहां उसे पेट भर खाना भी नहीं मिलता था। आर्तध्यान से मरकर वे ब्राह्मण के घर में भैंस, भैंसा हुए। एक बार वे पानी पीने के लिए सरोवर के पास गये। वहाँ कीचड़ में फंसकर वहीं उनका मरण हो गया। उस समय एक दयालु सेठ ने मरते समय णमोकार मन्त्र सुनाया था जिसके प्रभाव से तुम दोनों मनुष्य हुए। पूर्व संचित पाप कर्म अभी खत्म नहीं हुआ है। इसलिये इससे मुक्त होने की इच्छा हो तो मेघमाला व्रत का आचरण करो और धर्म का अध्ययन करो।

तब उन दोनों ने मेघमाला व्रत किया। उसका विधिवत पालन किया। आगे उनका दारिद्र दूर हो गया। सुख से मरकर वे देव हुये। वहां से च्युत होकर वे पोदनपुर में विजय भद्रराजा व विजयावति रानी हुये।

मुरजमध्य व्रत

इस व्रत में प्रथम ५ उपवास करके पारणा करना, फिर क्रम से ४ उपवास

करके एक पारणा, फिर तीन उपवास करके एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, फिर तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, २६ उपवास व सात पारणे करना चाहिए। यह व्रत ३६ दिन में पूरा होता है। इस व्रत में मास तिथि वगैरह निश्चित नहीं है। वर्ष में कभी भी कर सकते हैं। जब से प्रारम्भ करो तब से क्रम से पूरा करना। उद्यापन करना चाहिए।

—गोविन्दकविकृत व्रत निर्णय

इसकी और एक विधि जैन व्रत विधान में दी है।

प्रथम ५ उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, फिर पांच उपवास एक पारणा, इस प्रकार २६ उपवास ७ पारणा करना चाहिए।

इसी प्रकार एक और विधि—पहले क्रम से पांच उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा और पांच उपवास एक पारणा, ऐसे २६ उपवास सात पारणे करके ३३ दिन में व्रत पूरा करना होता है।

अथ मिथ्यात्वगुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृ० १३ के दिन एकाशन करे, १४ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, एक दम्पति को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले सरापुर नगरी में शूरसेन राजा सुकांत अपनी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र रूपसुन्दर, उसकी स्त्री रूपसुन्दरी और सुकौशल प्रधान, उसकी स्त्री सुमति, सुरकीर्ति पुरोहित उसकी स्त्री सुरत्नमालिनी सुघोषदत्त उसकी स्त्री

सुगुणी पूरा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने सुगुप्ताचार्य मुनि से व्रत लिया, उसका व्रत विधि से पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गये।

मंगलगौरी व्रत कथा

भाद्र महिने के प्रथम सोमवार को स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर पंचामृताभिषेक का और पूजा का सामान लेकर जिनमन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर भगवान श्रेयांस तीर्थंकर व कुमारयक्ष गौरीयक्षी सहित प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि, क्षेत्रपाल की पूजा करे, पंच पकवानों को चढ़ावे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रेयोजिनेन्द्रा कुमारयक्ष गौरीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, १०८ णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, सहस्र नाम पढ़े, एक थाली में अर्घ्य रखकर नारियल रखे, उस थाली को हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन ब्रह्मचर्य पूर्वक उपवास करे, धर्मध्यान से काल बितावे, सत्पात्रों को आहारदान देवे, अपने पारणा करे।

इस प्रकार ९ मंगलवार पूजा विधि करके अन्त में उद्यापन करे, उस समय श्रेयांसनाथ तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे, पंच पकवान चढ़ावे, ११ मुनिश्वरों व आर्यिकाओं को, श्रावक, श्राविकाओं को आहारादि देकर उपकरण देवे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में आर्य खण्ड है, उस खण्ड में सूरसेन नाम का देश है, उसमें मथुरापुर नाम का नगर है, उस नगर में जयवर्मा नाम का राजा अपनी जयावती नाम की रानी के साथ में सुख से राज्य करता था। राजा को कोई संतान नहीं होने के कारण राजा बहुत चिंता करता था।

एक बार नगर के उद्यान में धर्मधर मुनिश्वर पधारे, राजा को समाचार मालुम होते ही पुरजन परिजन सहित उद्यान में मुनिदर्शन कर धर्मोपदेश सुना। कुछ समय बाद हाथ जोड़कर राजा प्रार्थना करने लगा कि गुरुदेव ! मेरे सन्तान सुख नहीं है, सो पुत्रोत्पत्ति कब होगी ? तब मुनिराज कहने लगे कि हे राजन ! आप की रानी को मंगलगौरी व्रत का पालन करना चाहिए, ऐसा कहते हुए व्रत विधि बता दी और कहा कि इस व्रत को यथाविधि तुम पालन करो जिससे तुम्हारी इच्छा पूर्ति होगी।

राजा रानी ने प्रसन्न होकर सहर्ष व्रत को स्वीकार किया और नगर में वापस लौट आये। नगर में आकर यथाविधि व्रत का पालन किया, अन्त में उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से राजा के यहां दो पुत्रों ने जन्म लिया एक का नाम व्याल दूसरे का नाम महाव्याल, दोनों ही सद्गुणी पुत्र थे, पुत्रों के यौवन अवस्था में आने के बाद राजा को वैराग्य उत्पन्न हो गया, बड़े पुत्र को राज्य देकर दीक्षा ग्रहण कर ली और तपश्चरण करके कर्मक्षय करते हुये मोक्ष को गये।

मोक्षलक्ष्मीनिवास व्रत कथा

आषाढ़ महिने की शुक्ल अष्टमी के दिन स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजाद्रव्यों को हाथ में लेकर जिनमन्दिर में जावे, ईर्यापथ शुद्धि करके, भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर चन्द्रप्रभु भगवान श्यामयक्ष (अजित) ज्वालामालिनीयक्षी सहित मूर्ति स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरू की पूजा करे, यक्षयक्षिणी, क्षेत्रपाल का यथायोग्य सम्मान करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चन्द्रप्रभ तीर्थंकराय अजितयक्ष, श्यामयक्ष, ज्वालामालिनी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, तीर्थंकर चारित्र पढ़े, व्रत कथा भी पढ़े, एक महाअर्घ्य करके मन्दिर को तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, महाअर्घ्य भगवान के सामने चढ़ा देवे, इसी क्रम से चार महिने तक नित्य पूजा करे, मात्र प्रत्येक अष्टमी व चतुर्दशी के दिन पांच प्रकार का नैवेद्य बनाकर चढ़ावे, एकाशन करे, अंत में कार्तिक शुक्ल पौर्णिमा के दिन चन्द्रप्रभु तीर्थंकर व यक्षयक्षिणी का महाभिषेक करे, चौबीस प्रकार का पकवान तैयार कर २४ नैवेद्य बनावे, उसमें

से तीर्थंकर भगवान को पांच नैवेद्य चढ़ावे, उसी प्रकार जिनवाणी को ६, आचार्य को ३, पद्मावती को २, रोहिणी देवी को २, ज्वालामालिनी देवी को ५ (ब्रह्मदेवको) क्षेत्रपाल को एक, इस प्रकार नैवेद्य चढ़ावे, एक ध्वज तैयार कर खड़ा करे, तीन मुनिराज को आहारदान देवे । आवश्यक सर्व उपकरण देवे, इस व्रत का यही उद्यापन है ।

कथा

इस व्रत को मरुभूति ने किया था, इसलिये पार्श्वनाथ तीर्थंकर होकर मोक्ष में गये, व्रत कथा की जगह पार्श्वनाथ चरित्र पढ़ना चाहिये, और भी इस व्रत को निर्नामिका स्त्री ने पालन किया, इसलिये श्रीमति नामक राजकन्या हुई इत्यादि ।

फल मंगलवार व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक और फाल्गुन महीने में मंगलवार को व्रतधारियों को शुद्ध होकर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा पंचामृताभिषेक का सामान लेकर जिनमन्दिर में जाना चाहिए, प्रथम मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, भगवान का पंचामृताभिषेक करके पूजा करे, श्रुत की पूजा, गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षी व क्षेत्रपाल की पूजा करे, पंचप्रकार का पकवान बनाकर बारह बार चढ़ावे, एक पाटे पर पृथक २ पान लगाकर उनके ऊपर पृथक २ अक्षत, सुपारी, फल, फूल, रखे, तिल, गुड़, और भीगे हुए चने रखे, केला रखे, हल्दी, कुंकुं रखे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं परमब्रह्मणे अनंतानंत ज्ञानशक्तये अर्हत्परमेष्ठिने नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में महाअर्घ्य लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगलारती उतारे, ब्रह्मचर्यपूर्वक शक्तिअनुसार उपवासादि करे, सत्पात्रों को दान देवे, इस व्रत को बारह महिने १२ दिन मंगलवार की मंगलवार करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय भगवान का अभिषेक करके १२ पात्रों में नैवेद्य भरकर, बाहर नारियल रखे, अनेक प्रकार के फल रखे, एक सुवर्ण पुष्प रखे,

सरस्वती मूर्ति को व पद्मावती मूर्ति को वस्त्राभरणों से सजाकर खोल भरे (गोदभरे) चतुर्विध संघ को आहारदानादि देवे, बारह वायना देवे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में आर्यखंड है, उस खण्ड में कंभोज नामक देश है, उस देश में भूतिलक नाम का नगर है । वहां पर पहले एक भूपाल नाम का राजा अपनी रानी लक्ष्मीमती के साथ रहता था, उस राजा की और ५०० रानियां थीं, किन्तु उसके कोई पुत्र नहीं था, उसी नगर में एक श्रेष्ठि वृषभ नाम का रहता था, उसकी सेठानी का नाम वृषभदत्ता था, उसको भी संतान नहीं थी, इसी कारण से राजा और राजश्रेष्ठि को निसंतान होने का दुःख होता था, वे चिंता में निमग्न रहते थे ।

आगे एक समय नगर के उद्यान में श्रीधराचार्य नाम के महामुनी आये, उनके संघ में ५०० मुनिराज थे ।

राजा को समाचार प्राप्त होते ही नगरवासी लोगों के साथ अपने परिवार को लेकर उद्यान में गया, वहां तीन प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कार करता हुआ, धर्मसभा में बैठ गया, कुछ समय धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा हाथ जोड़कर नमस्कार करता हुआ मुनिराज को कहने लगा कि हे गुरुदेव, हमको सन्तान सुख नहीं है, होगी या नहीं, तब मुनिराज कहने लगे कि राजन तुमको आठ पुत्र होंगे, उस सेठ ने भी पूछा तब राजश्रेष्ठि को कहा कि तुमको पांच पुत्र होंगे, सन्तान प्राप्ति के लिये तुमको फल मंगलवार व्रत करना चाहिये, ऐसा कहकर इस व्रत की विधि कह सुनाई । उन दोनों ने प्रसन्नतापूर्वक व्रत को स्वीकार किया, और नगर में वापस लौट आये, नगर में आकर यथाविधि व्रत का पालन किया, अन्त में उद्यापन किया, फलस्वरूप राजा को आठ पुत्र और श्रेष्ठि को पांच पुत्र उत्पन्न हुये । सब लोग धर्म के प्रभाव से क्रमेण संसार सुख भोगकर, परम्परा से मोक्ष को जायेंगे ।

मीनसंक्रमण व्रत कथा

मकरसंक्रान्ति व्रत के समान ही सर्व विधि इस व्रत की भी है, मात्र फरक इतना ही है कि फाल्गुन महिने में आने वाले मीनसंक्रमण के दिन व्रत पूजा करे,

वासुपूज्य भगवान का पूजाभिषेक करे, बारह पूजा पूर्ण होने पर उद्यापन करे, कथा वगैरह पूर्ववत् समझना ।

अथ मृषानंद निवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान करे । अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख शु. ६ के दिन एकाशन करे व सप्तमी के दिन उपवास व नवदेवता आराधना मन्त्र जाप्य पत्ते मांडला करे। कथा पूर्ववत है । ६ पूजा पूर्ण होने पर कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे ।

मकरसंक्रमण व्रत कथा

पौष मास के अन्दर आने वाले मकरसंक्रान्ति के दिन शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, शीतलनाथ तीर्थंकर का व यक्षयक्षि का पंचामृताभिषेक करे, नंदादीप लगावे, भगवान के सामने पाटे पर १० स्वस्तिक बनाकर ऊपर पान रखे, उनके ऊपर अष्टद्रव्य रखे, १० लड्डू रखे, १० कलश में १० प्रकार का धान्य भरकर रखे, उसके बाद वृषभनाथ से लेकर शीतलनाथ भगवान की अलग २ पूजा करे, पंचपकवान चढ़ावे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि की व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शीतलनाथ तीर्थंकराय ईश्वरयक्ष मानवीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, पूर्ण अर्घ चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, सताईस आहारदान देवे, दूसरे दिन पूजा व दान करे, स्वयं पारणा करे, तीन दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे ।

इस व्रत को महिने की उसी तिथि को व्रत पूजन करे, प्रत्येक १२ बारह पूजा पूर्ण होने पर, अंत में उद्यापन करे, उस समय शीतलनाथ विधान करे, महाभिषेक करे, मन्दिर में आवश्यक उपकरण चढ़ावे, चतुर्विध संघ को दान देवे, दश सौभाग्यवती स्त्रियों को भोजन कराकर वस्त्रादिक से सम्मान करे ।

कथा

श्रेणिक महाराज और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

मुष्टितंदुल व्रत कथा

आषाढ़ मास की प्रतिपदा के दिन यह व्रत ग्रहण करना चाहिए, उस दिन से लगाकर प्रत्येक दिन एक मुठ्ठी भर चांवल रोज एक पात्र में इकट्ठा करके रखे, इस प्रकार रोज एक-एक मुठ्ठी चांवल उस पात्र में डालता रहे, चतुर्दशी तक चांवल इकट्ठा करता रहे, पूर्णिमा के दिन प्रातःकाल स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजाभिषेक का द्रव्य लेकर जिनमन्दिर में जावे, ईर्यापथ शुद्धि क्रिया करके नमस्कार करे, भगवान को अभिषेक पीठ पर यक्षयक्षि सहित स्थापन करके पंचामृत अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, जिनवाणी गुरु की पूजा करे यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल इनका अर्घ्यादि देकर पूजा सम्मान करे, चौदह दिन तक एकत्र किये हुए चांवलों का नैवेद्य बनाकर भगवान को चढ़ावे, उस दिन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, उपवास करे, धर्मध्यान से समय बितावे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं परमब्रह्मणे अनंतानंत ज्ञानशक्तये अर्हत्परमेष्ठिने यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्पों से जाप्य करे, जिनसहस्रनाम का पाठ करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, महाअर्घ्य करके हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतार कर अर्घ्य भगवान के सामने चढ़ा देवे, रात्रि में शास्त्र स्वाध्यान करे, दूसरे दिन जिनपूजा करे, सत्पात्रों को दान देवे, अपने पारणा करे ।

इस प्रकार आषाढ़ कृष्ण अमावस्या के दिन सर्व पूजा विधि करे, इस प्रकार यह आषाढ़मासी पूजा हुई, इस पूजा का नाम सौधर्म कल्प है इस विधि को करने से ११ हजार उपवास का फल मिलता है, श्रावण महिने में भी पहले कहे अनुसार पूजा विधि करे, दोनों पक्षों नें पहले जैसा कहा है वैसी पूजा विधि करे। इस महिने की पूजा का नाम ईशानकल्प है, इसका फल १६ हजार उपवास करने का है, भाद्रपद मास के दोनों पक्षों के उपवास करने से, पूर्वोक्त

प्रमाण पूजाविधि करने से बीस हजार उपवास का फल मिलता है, इस व्रत का नाम सनतकुमार व्रत है, आश्विन मास के दोनों पक्षों के विधिपूर्वक पूर्व प्रमाण पूजाविधि करने से, और उपवास करने से माहेन्द्र कल्प नामक बाईस हजार उपवास का फल मिलता है। इसी क्रम से प्रत्येक महीने के दोनों पक्षों के उपवास करते हुये पूर्वोक्त प्रमाण ही पूजा करना चाहिए।

कार्तिक मास के उपवास को लांतवकल्प नामक ३० हजार उपवास का फलहै। मार्गशीर्ष मास के उपवास को कापिष्टकल्प नामक ३२००० हजार उपवास का फल है। पौष में उपवास करने से शुक्रकल्प नाम के ३४००० हजार उपवास का फल होता है, माघ मास में उपवास करने से महाशुक्रकल्प नामक ३६ हजार उपवास का फल होता है, फाल्गुन मास में उपवास करने से शतदलकल्प नामक ३८ हजार उप. का फल होता है, चैत्र मास में उपवास करने से सहस्रकल्प नामक ४० हजार उपवास का फल होता है, वैशाख मास में उपवास करने से आणतकल्प नामक ४२००० ह. उप. का फल होता है, ज्येष्ठ मास, में उपवास करने से प्राणतकल्प नामक ६० ह. उप. का फल होता है।

इसी क्रम से बारह महिने इस व्रत के पूर्ण पालन से क्रोध, माना, माया, लोभ व मत्सर आदि कषायों को छोड़े, बारह व्रतों का पालन करे, बारह महीने पूजा पूर्ण होने पर अन्त में उद्यापन करे, नवीन जिनप्रतिमा करवा कर पंचकल्याण प्रतिष्ठा करे, उस समय बारह प्रकार का नैवेद्य तैयार करके फल, पुष्प, सुवर्ण कमल के पुष्प तैयार कराकर एक थाली में अष्ट द्रव्य उपरोक्त द्रव्यों के साथ रखकर हाथ में महाअर्घ्य लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, महाअर्घ्य चढ़ा देवे, मन्दिर में आवश्यक उपकरण चढावे, घण्टा धूपाना दीप आदि बारह प्रकार के उपकरण करवाकर चढ़ावे, बारह मुनियों को आहारदान देवे, उनको शास्त्र भेंट करे, आर्यिकाओं को भी आहारदान व वस्त्रदान करे, श्रावक-श्राविकाओं को भी भोजन, पान, वस्त्र देकर सम्मान करे, यक्षिणियों को शक्ति प्रमाण चांदी के नेत्र बनवाकर लगावे, इस प्रकार यह इस व्रत की विधि है।

इस व्रत को जो भव्य मानव भक्ति से ग्रहण करता है और यथाविधि व्रत को पालन करता है उसके गृहकार्य में होने वाले समस्त पाप दूर हो जाते हैं और

उसको अपूर्व पुण्य का लाभ मिलता है। इस कारण से उसके आगे के भव में भी सद्गति की प्राप्ति होती है, पंचकल्याणक का भागी होता है, स्त्रीलिंग छेद होकर पुरुष पर्याय की उसको प्राप्ति होती है, और नियम से मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है।

कथा

राजगृह नगर में रानी चेलना ने मुनिराज को नमस्कार करके गृहस्थारम्भ में होने वाले पापों की निवृत्ति कैसे हो यह उपाय पूछा, तब मुनिराज ने कहा हे बेटो तुम मुष्टितंदुल व्रत का पालन करो, ऐसा कहकर रानी को सब व्रत विधि कह सुनाई चेलना ने व्रत विधि को सुनकर मन में आनन्द मनाया और भक्तिपूर्वक नमस्कार करके व्रत को स्वीकार किया, मुनिराज यथास्थान चले गये। कालानुसार चेलना रानी ने व्रत को अच्छी तरह से पाला, अन्त में उत्साहपूर्वक उद्यापन किया, व्रत के फल से सद्गति को प्राप्त हुई, और क्रम से मोक्ष को जायेगी।

महोदय व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला एकादशी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर जिनमन्दिर जी में जावे, प्रदक्षिणा पूर्वक ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, श्रेयांसनाथ भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षी व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रेयांसनाथ तीर्थंकराय कुमारयक्ष गौरीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे, उस दिन उपवास करे, दूसरे दिन दान देकर पारणा करे।

इस प्रकार ग्यारह एकादशी इस व्रत को करके अंत में उद्यापन करे, उस समय श्रेयांसनाथ विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को चारों प्रकार का दान देवे।

कथा

इस व्रत को राजा श्रेयांस ने पालन किया था, कथा में रानी चेलना की कथा पढ़े ।

अथ मनपर्याप्तिनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान करे । अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृ. ९ के दिन एकाशन करे । १० के दिन उपवास पूजा आराधना व मन्त्र जाप आदि करे । पत्ते मांडे ।

मनोगुप्ति व्रत कथा

इस व्रत में भी सब विधि पूर्ववत् करके सिद्धपरमेष्ठि की आराधना करे ।

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं सर्वसिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, बाकी सब विधि पूर्ववत् करे, अंत में उद्यापन करे, उद्यापन के समय सिद्धचक्र आराधना करे ।

कथा

पहले इस व्रत को कलिंग देश के राजा धर्मपाल ने किया था, अंत में मोक्ष सुख को प्राप्त किया ।

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

मंगलसार व्रत कथा

आश्विन महिने के पहले सोमवार को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, भगवान की प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कार करे, चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, पंच पकवान से चौबीस बार पूजा करे, जिनवाणी और गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, महाअर्घ्य चढ़ावे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे, दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करे।

इस प्रकार पांच मंगलवार इस व्रत को करके अंत में कार्तिक अष्टान्हिका में व्रत का उद्यापन करे, उस समय चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा का अभिषेक करे, प्रत्येक तीर्थंकर की अलग-अलग पूजा करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

इस व्रत को पहले सूर्यप्रभ नामक राजा ने यथाविधि पालन किया था, उनको स्वर्ग सुख प्राप्त होकर नियम से मोक्ष सुख की प्राप्ति हुई। राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

अथ (मिगी आरल) त्रिमुष्टि लाजा व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल ८ अष्टमी के दिन व्रत धारण करने वाला व्यक्ति स्नानकर शुद्ध कपड़ा पहनकर, अभिषेक पूजा का द्रव्य, लाहा शुद्ध अपने घर में भूनकर बनावे, और जिनमन्दिर जी में जावे, ईर्यापथ शुद्धि करके मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाते हुये, भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर जिनेन्द्र भगवान को स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से भगवान की पूजा करे, जिनवाणी और गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि क्षेत्रपाल को भी पूजा करे, भगवान के आगे कोई भी धान्य का लाह्या लाजा (धानी) तीन मुट्ठी पुञ्ज रूप में चढ़ावे, ऊपर पुष्प रखे, भक्ति से साष्टांग नमस्कार करे।

ॐ ह्रीं अर्हद्भ्यो नमः स्वाहा। इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, जिन सहस्र नाम पढ़े, णमोकार मन्त्र की एक माला जपे, व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ्य हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगल आरती उतारे, अर्घ्य चढ़ा देवे, मध्य में आने वाली अष्टमी चतुर्दशी के दिन उपवास करे, नहीं तो एकाशन करे, इसी क्रम से प्रतिदिन कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा पर्यन्त पूजा करे, अन्त में पूर्णिमा के दिन उद्यापन करे, उस समय यथाशक्ति महाभिषेक करके तीन

धान्य के लाह्या का पुञ्ज रखकर तीन सुवर्णपुष्प रखे, महाअर्घ्य चढ़ावे, चतुर्विध संघ को चार प्रकार का दान देवे, इस प्रकार इस व्रत की विधि है ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में अवंति नाम का देश है, उस देश में कनकपुर नाम का गांव है, उस गांव में एक पृथ्वीदेवी सहित अयंधर नाम का राजा राज्य करता था, उस नगर में एक धनपाल नाम का वैश्य रहता था, उसकी धनश्री नाम की सेठानी थी, सैठ-सेठानी महान दरिद्र थे ।

एक बार श्रुतसागर नाम के महा मुनिराज नगर में आहार के लिए आये । मुनिराज को देख कर धनपाल वैश्य ने मुनिराज का पडगाहन किया, यथाविधि नवधा भक्तिपूर्वक निरंतराय आहार कराया, मुनिराज को घर के बाहर बैठाया, धर्मोपदेश सुनकर धनश्री हाथ जोड़कर कहने लगी कि हे गुरुदेव ! हम को द्रारिद्र ने क्यों घेर रखा है, क्या कारण है ? उसके वचन सुनकर मुनिन्द्र कहने लगे ।

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में काश्मीर नाम का बहुत बड़ा देश है, उस देश में हस्तिनापुर नाम का नगर है, उस नगर में वृषभांक नाम का राजा अपनी वृषमति रानी के साथ में सुख से राज्य करता था, उसकी नगरी में एक सोमशर्मा नाम का पुरोहित अपनी सोमश्री पुरोहितानी के साथ रहता था, उसको एक सुवर्णमाला नाम की कन्या थी ।

एक बार उस नगर में देशभूषण नामक महामुनि आहार के लिये आये । कर्मयोग से मुनिराज को देखकर मुनिराज की निन्दा की, ग्लानि की, इसी पाप से तुम्हारे घर में दरिद्रता ने बसेरा किया है । ऐसे मुनिराज के वचन सुनकर उसको बहुत बुरा लगा और हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगे, कि हे देव ! अब हमारी यह दरिद्रता नष्ट हो ऐसा कोई एक उपाय कहो ।

तब मुनिराज दया करके कहने लगे कि हे देवी अब तुम त्रिमुष्टि लाजा व्रत स्वीकार करो, ऐसा कहकर मुनिराज ने व्रत की विधि बतलाई, तब उसने इस व्रत को स्वीकार किया, और विधिपूर्वक व्रत का पालन किया, व्रत के प्रभाव से उस

वैश्य के घर में छप्पन कोटि दीनार की सम्पत्ति आई, दरिद्रता दूर हो गई, सुख से समय व्यतीत करने लगे, अन्त में मरकर स्वर्ग में देव हुए, मनुष्यभव धारण कर संयम का पालन किया और मोक्ष सुख को प्राप्त किया।

इसी व्रत के प्रभाव से ही सीतादेवी राम की पट्टराणी हुई, चेलना श्रेणिक को प्राणवल्लभा हुई, आदि।

अथ मघवाचक्रवर्ति व्रत कथा

व्रत विधि :—चैत्र महीने के शुक्ल पक्ष में प्रथम सोमवार को एकभुक्ति करे और मंगलवार को सुबह शुद्ध कपड़े पहन कर अष्ट द्रव्य लेकर मन्दिर जाये। पीठ पर अनन्तनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा के साथ किन्नरयक्ष व अनन्तमति यक्षी की स्थापना करे। पंचामृत अभिषेक करे। अष्ट द्रव्य से अर्चना करे। श्रुत व गणधर की पूजा करके यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करनी चाहिए। भगवान के सामने नंदा दीप लगाना चाहिए। पंच पकवान का नैवेद्य बनाकर चढ़ाना चाहिए।

जाप :—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनंतनाथ तीर्थंकराय किन्नरयक्ष अनंतमति यक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ पुष्पों से जाप करे। १०८ बार णमोकार मन्त्र का जाप करे। यह व्रत कथा पढ़नी चाहिए। महार्घ्य लेकर तीन प्रदक्षिणा देते हुये मंगल आरती करे। उस दिन उपवास करे। सत्पात्र को दान देकर पारणा करे। तीन दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे।

इस प्रकार बारह मंगलवार पूजा पूर्ण होने पर आषाढ़ अष्टान्हिका को उद्यापन करे। उस दिन अनन्तनाथ तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे। चतुःविध संघ को दान दे।

कथा

इस जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र में नरेन्द्र नामक नगर है। वहां पहले नरपति व कमलावति पट्टराणी रहते थे। उनको धरसेन नामक पुत्र था। मन्त्री, पुरोहित, श्रेष्ठी सेनापति वगैरह भी थे।

एक दिन नगर के उद्यान में वासुपूज्य तीर्थंकर का समवशरण आया था। राजा यह सुन परिवार सहित दर्शन को गये थे। पूजा वंदना आदि करने के बाद धर्मोपदेश सुना। उसके बाद राजा ने अपने भव पूछे। अपना पूर्वभव सुनकर वह मघवा-चक्रवर्ती व्रत स्वीकार कर अपने नगर में वापस आये।

घर आकर उसने विधिपूर्वक यह व्रत किया। जिससे संसार सुख भोग करने से वैराग्य हो गया। जिससे अपने पुत्र को राज्य देकर जिनदीक्षा धारण की। घोर तपश्चर्या करने से वे मध्य ग्रैवेयक में अहमिन्द्र हुये। वहां उन्होंने २७ सागरोपम दिव्य सुख भोगकर धर्मनाथ तीर्थंकर के समय में सुकौशल देश के बीच साकेत नगरी में जन्म लिया। यही मघव चक्रवर्ती हुआ। पिता ने इन्हें राज्य दिया और जिनदीक्षा धारण की।

एक दिन उस नगर के उद्यान में अभयघोष नामक महामुनि अपनी गधकुटी सहित आये। यह सुन मघव चक्रवर्ती दर्शन को गये। वहां वन्दना पूजा आदि कर मनुष्यों के कोठे में जाकर बैठ गये। वहां धर्मोपदेश सुन वैराग्य हो गया जिससे उन्होंने अपने पुत्र प्रियामित्र को राज्य देकर अभयघोष मुनि से जिनदीक्षा ली। घोर तपश्चरण के प्रभाव से कर्मक्षय कर मोक्ष गये।

मध्यकल्याणक व्रत

मध्यकल्याणक जु तेरा दिन आदि अन्त द्वय प्रोषध गिना।
एकल चार कंजिका तीन, रूक्ष जु अनागार द्वय दून।।

—वर्धमान पुराण

भावार्थ :—यह व्रत १३ दिन में पूर्ण होता है। यथा—प्रथम एक उपवास, दूसरे चार दिन एकलठाना, तीसरे ३ कंजिकाहार, चौथे २ रूक्ष भोजन, पांचवें २ दिन मुनि वृत्ति से आहार, छठवें १ उपवास। इस प्रकार १३ दिन करे। त्रिकाल नमस्कार मन्त्र का जाप करे। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

यशोदशक दशवार व्रत

एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, छः उपवास एक

पारणा, सात उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, नव उपवास एक पारणा, इस प्रकार क्रम से ५५ उपवास और १० पारणे करना। इस प्रकार यह व्रत दस बार करना। अर्थात् ५५० उपवास और १०० पारणे होते हैं, यह व्रत ६५० दिन में पूर्ण होगा। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए।

—गोविन्दकविकृत व्रत निर्णय

यशोनव नवमी तप व्रत

उपवास १/२/३/४/५/६/७/८/९ (अर्थात् एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा ...) इस प्रकार ९ बार अर्थात् ४०५ उपवास व ८१ पारणे। इस प्रकार ४८६ दिन में यह व्रत पूर्ण होता है।

यशोनव नववार व्रत

एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, छः उपवास एक पारणा, सात उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, नव उपवास एक पारणा, इस प्रकार ४५ उपवास व ८ पारणे करना अर्थात् ५४ दिन में यह व्रत पूर्ण होगा।

इस प्रकार नव बार यह व्रत क्रम से करना जिससे ४०५ दिन उपवास और ८१ पारणे आयेंगे क्रम टूटना नहीं चाहिए, व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए नहीं किया तो व्रत दूना करना चाहिए।

अथ यथाख्यातचारित्र व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ कृ. १ के दिन एकाशन करे, २ के दिन उपवास करे। पूजा वगैरह पहले के समान करे, पांच मुनिराज को दान करे, दम्पति को भोजन करावे, शास्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले परमानन्दपुर नगरी में परिपूर्णचन्द राजा पूर्णचंद्राननी अपनी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र चंद्रवदन उसकी स्त्री चद्रवंदना, मंत्री, पुरोहित,

श्रेष्ठी, सेनापति सारा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने चन्द्रसागर मुनि से व्रत लिया। उसका यथाविधि पालन किया सर्व सुख को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गये।

रत्नावली व्रत की विधि

कनकावली चैवमेव रत्नावली, तस्यामाश्विनशुक्ले तृतीया, पञ्चमी, अष्टमी, कार्तिककृष्णे द्वितीया, पञ्चमी, अष्टमी एवं एतद्दिवसेषु सर्वेषु द्विसप्ततिरुपवासाः कार्याः। प्रत्येक मासे षडुपवासाः भवन्ति। इयं द्वादशमासभवा रत्नावली। सावधिका मासिका रत्नावली न भवति।

अर्थ :—कनकावली व्रत के समान रत्नावली व्रत भी करना चाहिए। इसमें भी आश्विन शुक्ला तृतीया, पंचमी, अष्टमी तथा कार्तिक कृष्ण द्वितीया, पञ्चमी और अष्टमी इस प्रकार प्रत्येक महीने में छः उपवास करने चाहिए। बारह महीनों में कुल ७२ उपवास उपर्युक्त तिथियों में ही करने पड़ते हैं। यह द्वादश मास वाली रत्नावली है। सावधिक मासिक रत्नावली व्रत नहीं होता है।

विवेचन :—कनकावली के समान रत्नावली व्रत में भी मास गणना अमावस्या से ग्रहण की गयी है। अमान्त से लेकर दूसरे अमान्त तक एक मास माना जाता है। व्रत का आरम्भ आश्विन के अमान्त के पश्चात् किया जाता है तथा कनकावली और रत्नावली दोनों व्रतों के लिए वर्षगणना आश्विन के अमान्त से ग्रहण की जाती है। रत्नावली व्रत मासिक नहीं होता है, वार्षिक ही किया जाता है। प्रत्येक महीने में उपर्युक्त तिथियों में छः उपवास होते है, इस प्रकार एक वर्ष में कुल ७२ उपवास हो जाते हैं। उपवास के दिन अभिषेक पूजन आदि कार्य पूर्ववत् ही किये जाते हैं।

ॐ **ह्रीं त्रिकालसम्बन्धि चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः** । इस मन्त्र का जाप इन दोनों व्रतों में उपवास के दिन करना चाहिए।

रत्नावली व्रत कथा

(१) इस व्रत के ७२ उपवास एक वर्ष में करने का है प्रत्येक महिने की दोनों पक्षों की तृतीया, पंचमी, अष्टमी को प्रोषधोपवास करने का है, इस व्रत का प्रारम्भ श्रावण महीने से ही होता है, इस प्रकार ७२ उपवास एक ही वर्ष में करने का है।

उस दिन जिनमन्दिर में जाकर भगवान को प्रदक्षिणा पूर्वक नमस्कार करे, भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, उस दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे, व्रत कथा पढ़े, मन्त्र जाप्य करे, अगले वर्ष व्रत का उद्यापन करे, उद्यापन करने की शक्ति नहीं होने पर व्रत को दुगुना करे। इसी को प्रथम रत्नावलि कहते हैं।

(२) दूसरी विधि इस प्रकार है—पहले दिन एकाशन दूसरे दिन उपवास, ३ दिन एकभुक्ति, चौथे व पांचवें दिन दो उपवास, छठे दिन एकभुक्ति, सातवे, आठवें और नौवें दिन लगातार तीन उपवास, दशवें दिन एकभुक्ति, ग्यारवें दिन, बारहवें दिन, तेरहवें दिन, चौदहवें दिन लगातार ४ उपवास, पंद्रहवें दिन एक भुक्ति करे, सोलहवे, सतरहवें, अठारहवें, उन्नीसवें व बीसवें दिन लगातार पांच उपवास करे, इक्कीसवें दिन एकभुक्ति करे, २२-२३-२४-२५-२६ वें दिन लगातार उपवास करे, २७वें दिन एकभुक्ति करे, अठाइसवें दिन, २९वें दिन तीसवें दिन, ३१वें दिन चार उपवास, बत्तीसवें दिन एकभुक्ति करे, ३३-३४-३५वें दिन उपवास ३६वें दिन एकभुक्ति करे, फिर ३७वें व ३८वें दिन उपवास, ३९वें दिन एकभुक्ति, ४० वें दिन उपवास, ४१वें दिन एकभुक्ति करे, इस व्रत का प्रारम्भ श्रावण शुक्ला प्रतिपदा से करे, इसमें ३० उपावास ११ एकभुक्ति होती है, इसको लघुरत्नावली व्रत भी कहते हैं।

(३) तीसरी विधि में यह व्रत ३६ दिन में पूर्ण होता है। इसमें ३०० उपवास और ९६ पारणे करने पड़ते हैं। इस व्रत का प्रारम्भ किसी भी महीने से करे।

(४) चौथी विधि और भी देखी जाती है, इस का उपवास क्रम ऐसा है, एक उपवास, एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा,...... दो उपवास एक पारणा, इस प्रकार ८ बार करे, उसके बाद एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पराणा, तीन उपवास एक पारणा, ४ उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, ६ उपावास एक पारणा ७ उपवास एक

पारणा, ८ उपवास एक पारणा ६ उपवास एक पारणा १० उपवास एक पारणा ११ उपवास एक पारणा १२ उपवास एक पारणा १३ उपवास एक पारणा १४ उपवास एक पारणा १५ उपवास एक पारणा १६ उपवास एक पारणा फिर क्रमशः दो उपवास एक पारणा इस प्रकार ३४ बार करे, अर्थात् ३४ उपवास माने ६८ उपवास ३४ पारणा करे, बाद में १६ उपवास एक पारणा, १५ उपवास एक पारणा, १४ उपवास एक पारणा इस प्रकार क्रमशः घटाते हुये एक उपवास एक पारणा तक नीचे लावे, इस प्रकार ३८४ उपवास ८८ पारणा, सब मिलकर ४७२ दिन में पूर्ण होता है।

इस प्रकार और भी एक विधि पाई जाती है, इसके अन्दर २८४ उपवास व ४६ पारणा ऐसे ३३३ दिन में यह व्रत पूर्ण होते हैं, इसकी विधि इस प्रकार है, एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, इस प्रकार बढ़ाते हुये १६ उपवास एक पारणा तक बढ़ाते जावे, फिर पन्द्रह उपवास एक पारणा घटाते हुये एक उपवास एक पारणा तक करे, यह सब मिलकर २८४ उपवास ४६ पारणा ऐसे सब मिलकर ३३३ दिन में पूर्ण होता है।

इस व्रत में ॐ **ह्रीं त्रिकाल संबन्धि चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः**

इस मन्त्र का नित्य १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, एक पूर्ण अर्घ चढ़ावे।

गोविन्द कविकृत व्रत निर्णय पुस्तक में पहली व्रतविधि को सामान्यविधि कहा है, इसका प्रारम्भ आश्विन महीने में किया जाता है, उन्होंने इस व्रत की तीन विधि कही है, पहली जघन्य, दूसरी मध्यम, तीसरी विधि को उत्कृष्ट विधि कहा है।

(१) प्र. जघन्य रत्नावली व्रत, ऊपर कहे अनुसार दूसरे प्रकार से यह व्रत करना जघन्य प्रकार है।

दूसरी प्रकार मध्यमरीति, इस व्रत की शुरूआत एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, उसके बाद आठ प्रौषधयुग्म करे,

प्रोषधयुग्म का अर्थ पहले दिन एकाशन फिर दूसरे तीसरे दिनादि लगातार दो उपवास व चौथा दिन एकाशन करे, इसी को प्रोषधयुग्म कहते हैं ।

एक उपवास एक पारणा से लगाकर १६ उपवास एक पारणा तक चढ़ावे, फिर क्रमशः ३४ प्रोषधयुग्म करे, इस प्रकार २२६ होते हैं, ६१ पारणा होते हैं, सब मिलकर २८७ दिन में पूर्ण होता है, एक बार प्रारम्भ करके बीच में खण्डित नहीं करते हुये एक सरीखा करे, व्रत की समाप्ति के बाद उद्यापन करे, पूजा दान करे ।

उत्कृष्ट रत्नावली व्रत

प्रथम प्रोषधोपवास करके भोजन करे, दो प्रोषधोपवास करके भोजन करे, तीन प्रोषधोपवास करके फिर भोजन करे, फिर एक उपवास एक पारणा से बढ़ाते हुये १६ उपवास एक पारणा करे, फिर क्रमशः चौतीस प्रोषधोपवास करे, उसी प्रकार घटाते हुये, १६ उपवास एक पारणा । १५ उपवास एक पारणा से घटाते हुये १ उपवास एक पारणा करे, फिर तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा एक प्रोषधोपवास करके भोजन ग्रहण करे ।

इस प्रकार इस व्रत का एकान्तर उपवास ३८४ व पारणा ८८ होते हैं, व्रत के पूर्ण होने में ४७२ दिन लगते हैं, व्रत के पूर्ण होने पर अन्त में उद्यापन करे ।

कथा

इस व्रत को पहले अनेक बलभद्रादि मुनियों ने किया था, अन्त में मोक्ष को गये ।

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

रात्रिभुक्तित्याग व्रत कथा

यह व्रत प्रत्येक दिन पाला जाता है, सूर्यास्त के डेढ़ घड़ी पहले से लगाकर सूर्योदय के डेढ़ घड़ी बाद तक चारों प्रकार का रात्रि-भोजन त्याग करना, इस व्रत को प्रत्येक श्रावक को अवश्य पालन करना चाहिये, नित्यप्रति भगवान की पूजा करे, दान देवे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे ।

कथा

राजग्रही नगरी में सागरदत्त सेठ अपनी प्रभाकरी सेठानी के साथ रहता था, उसको दो पुत्र थे, एक नागदत्त दूसरा कुबेरदत्त, नागदत्त मिथ्यादृष्टि था, कुबेरदत्त व उसकी पत्नी बहुत जिनधर्म भक्त थी।

एक बार सागरदत्त सेठ ने मुनिराज से पूछा स्वामिन मेरी आयु कितनी है, मुनिराज ने कहा मात्र तीन दिन की।

तब सेठ ने वैरागी होकर दीक्षा ली और मरकर स्वर्ग में देव हुआ।

सेठ के पुत्र ने मुनिराज से पूछा गुरुदेव ! मेरे संतान होगी कि नहीं ? तब मुनिराज ने कहा तुम्हारे चरमशरीरी पुत्र होगा, कुछ दिन बाद उसको एक प्रीतिकर नामका पुत्र हुआ। सेठ महावीर भगवान के समवशरण में जाकर दीक्षा लेकर तपस्या कर मोक्ष को गये।

प्रीतिकर का जीव पूर्व भव में सियाल का जीव था, उसने मुनिराज से रात्रि-भोजन त्याग व्रत लिया, और अन्त में कंठगत प्राण होने पर भी रात्रि में पानी भी नहीं पीया और मरकर दृढ व्रत के कारण कुबेरदत्त सेठ के यहां प्रीतिकर नाम का पुत्र हुआ। वहीं अन्त में कर्म काटकर मोक्ष गया।

इस प्रकार और भी अनेक रात्रि भोजन त्याग व्रत की कथाएं हैं। एक चांडालनी ने भी इस व्रत को ग्रहण किया था, और वो भी व्रत के प्रभाव से सेठानी के गर्भ में कन्या होकर उत्पन्न हुई, अन्त में मरकर स्वर्ग में देव हुई, आगे मोक्ष जायेगी।

रक्षाबन्धन व्रत कथा

इस व्रत के लिए श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को प्रातः शुद्ध होकर मन्दिर में जावे तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, मूलनायक भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर तथा यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस प्रकार इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे १०८ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, विष्णुकुमार मुनि की और अकंपनाचार्यजी की पूजा करे। अन्त में होमविधि करके प्रत्येक श्रावक वर्ग यज्ञोपवीत धारण करे।

यज्ञोपवीत धारण करने का मन्त्र :—

ॐ नमः परमशांताय शान्तिकराय पवित्रीकृतायाहम् रत्नत्रय स्वरूपं यज्ञोपवीतं दधामि मम् गात्रं पवित्रं भवतु अर्हं नमः स्वाहा। इस मन्त्र को पढ़कर यज्ञोपवीत धारण करे, उस दिन उपवास करे।

उस दिन **ॐ ह्रीं श्रीं चंद्रप्रभुजिनाय कर्मभस्म विधूनमं सर्वशांति वात्सल्योपवर्द्धनं कुरु कुरु स्वाहा ।**

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे, रात्रिजागरण करे, भक्तामर व कल्याण मन्दिरादि स्तोत्र पढ़े, प्रतिपदा को पूजा दान करके स्वयं एकाशन करे, भोजन में एक धान खावे, दूधभात, दहीभात खावे, इस व्रत को आठ वर्ष करे, अन्त में उद्यापन करे। श्रेयांसनाथ तीर्थंकर का निर्वाण लड्डू चढ़ावे, उनका जीवन चरित्र पढ़े।

कथा

अडिल्ल

प्रथमहि प्रथम जिनेन्द्र चरण चितु लाइये।
पंच महाव्रत धरम सुताहि मनाइये ।।
प्रथम महा मुनि भेष सुधर्म धुरन्धरो ।
प्रथम धरम परगासन प्रथम तीर्थंकरो ।।१।।

गीता छन्द

प्रथम तीर्थंकर सुमिर मन शारदा निज मन धरो ।
गुरु चरण वन्दो शुद्ध मन करि कथा अनुपम विस्तरो ।।

उपसर्ग पायो सात सौ मुनि आनि जिनऊ निवार की ।
तुम सुनो भविजन येक चित्त है कथा विष्णु कुमार की ।।२।।

दोहा

बन्दौ विष्णु कुमार मुनि, मुनि उपसर्ग निवार ।
वात्सल्य अंग की कथा, सुनो भविक जनसार ।।३।।

चौपाई

अब यह जम्बूद्वीप मंझार, भरत क्षेत्र सोभित सिंगार ।
देश अवन्ती उत्तम ठौर, तेहि समान देश नहि और ।।४।।
तहां नगर उज्जैन समान, अवनी विषं न दीसै आन ।
बन उपवन राजत चहुं ओर, क्या शोभा बरनौ तेहि ठौर ।।५।।
बाग बावरी कूप गहीर, कमल सरोवर निर्मल नीर ।
दुर्ग खातिका गोपुर बने, कनक कलश धारै मन मने ।।६।।
मन्दिर महल उतंग आवास, मानो इन्द्र पुरी सुख वास ।
चित्र विचित्र अनूपम करै, के उपमा ताकी विस्तरै ।।७।।
जिन मन्दिर पर धुज फरहरै, ते दामिन को लज्जित करै ।
वेदी पर कलशा झलमलै, मानो गगन मिलन को चले ।।८।।
तिन में प्रतिमा श्री जिन तनो, दर्शन मन्त्र पाप मोचनी ।
जती अर्जिका तिन में रहै, धर्म ध्यान अपने व्रत गहै ।।९।।
सुन्दर गली सघन बाजार, बिच बिच मानिक चौर द्वार ।
चहल पहल दीसै चहुं ओर, बरन छत्तीस बसे तेहि ठौर ।।१०।।
सकल वस्तु तंह दीसै घनी, गिनती गिनत जाय नहि गनी ।
सुख सौ रहै व्यापारी लोग, पंचामृत रस कीजै भोग ।।११।।
श्री वर्मा राजा तहं तनो सुख सों राज करै आपनो ।
जैन धर्म पर अति लवलीन, न्याय मार्ग में परम प्रवीन ।।१२।।

प्रजा पालिबे को चित्त भलो, निग्रह दुष्ट करन को बलो ।
हय गय सेना सकल समाज, दण्ड बन्ध नहिं ताके राज ।।१३।।

रानी तास नाम श्रीमति, शील अंग आभूषण सती ।
जैन धर्म मत के गुन लहै, गुरु की भक्ति हिय में रहै ।।१४।।

शील वन्त सुन्दर जु अपार, रति कीजै तापर बलिहार ।
रम्भा समान उरवसी लहै, चन्द्र धरनि की शोभा गहै ।।१५।।

ता राजा के मन्त्री चार, महा दुष्ट मिथ्याति मंझार ।
कहिबे को ब्राह्मण पद जनो, चांडाल हूं ते दुरमति तनो ।।१६।।

जेठो बली दूजो प्रहलाद, जौन पढै यो मिथ्यामत वाद ।
तृतीय बृहस्पति निमुची चतुर्थ, जानै नहीं धर्म गुण अर्थ ।।१७।।

ये चारों मन्त्री तसु तने, महा दुष्ट मति गर्भित घने ।
इनकी कथा कही नहिं जाय, धर्म शत्रु जग उपजे आय ।।१८।।

धर्म तनी रुची राजा करै, तिनकी ये सब सेवा करै ।
ज्यो चन्दन तरु बैठो जाय, रहे दुष्ट विषधर लपटाय ।।१९।।

जैसी संगति चन्दन तनी, तैसी सभा राय की बनी ।
हंस को मन्त्री काग जो होय, कहां ते पार लगावे सोय ।।२०।।

ज्यो चन्दा ढिग आवै राहु, लगै विमान श्यामता ताह ।
तैसे सज्जन पुर्जन संग, होइय होई कछुक मति भंग ।।२१।।

एक दिवस सो वन उद्यान, आवे मुनिवर संघ प्रधान ।
नाम अकम्पनाचार्य तहां, सम्यक ज्ञान लसत दिग जहां ।।२२।।

वचनामृत मुनि बरषत यहां, सिंचित भव्व लोग सब तहां ।
सात सौ मुनि- संघ समेत, धर्म मार्ग उपदेशन हेत ।।२३।।

काम समर मुनि शत्रु समान, भविजन को मुनि मित्र समान ।
देवन कर मुनि पूजन जोग, दुरगति के नाशन सब रोग ।।२४।।

आयो संघ तिष्ठि बन मांहि, मुनिवर एक अहार को जांहि ।
तापै सुनियो ऐसो तन्त, राजा जैनी मिथ्या मन्त्र ॥२५॥

जब नृप की गति ऐसी सुनी, तब मुनिवर गहि मूडी धुनी ।
खोटी संगत पहुंचे आय, जोग मध्य जबै नहि जाय ॥२६॥

तब मुनि अपनो संघ बोलाय, विनय सहित कहियो समुझाय ।
राजा आदि और सब लोई, तुम्हरे ढिग जो आवै कोई ॥२७॥

काहू सन बोलो मति भूल, आवत नात वचन लघु भूलि ।
जो कबहूं बोलउगे कोई, तो विनाश सब हिन को होई ॥२८॥

जब ही सुनियो मुनि के बैन, इस भव पर भव के सुख दैन ।
लियौ मौन व्रत सब हिन तबे, ध्यानारूढ भये मुनि सबे ॥२६॥

शिष्य सोय जो गुरु आदरै, जो गुरु वचन प्रसंसा करे ।
प्रीति विनय जो मानै नहीं, ना तरु कुल कुपुत्र है सही ॥३०॥

ये ते मे पुरजन समुदाय, सकल लोग मिलि बन्दन जाय ।
वसु विधि पूजा लै लै संग, नर नारि सब बन बनि रंग ॥३१॥

अपने मन्दिर बैठो राय, मुनिवर या सब देखो समाज ।
बिना परब बिन तिथि त्यौहार, कहां जात सब लोक अपार ॥३२॥

इतनी सुन तहिं बोलो धाय, मन्त्री दुष्ट राय के आय ।
महाराज तुम्हरे उद्यान, नगिन दिगम्बर उतरे आन ॥३३॥

तिनको यह सब वन्दन जाय, जिनके कछु विवेक हित नाय ।
ज्ञान रहित जन मूर्ख मांहि, सो सब वन्दन को उमगांहि ॥३४॥

इतनी सुन कर बोल्यो राई, चलो तो हमहूं देखै जाई ।
कैसे है मुनि वो प्रवीन, धर्म ध्यान मे मत लवलीन ॥३४॥

वे कौतुक देखै चलो जाय, फिर आनन्द घर बैठे आय ।
इनमे हमरो कोह न जान, सुनियत है मुनि मेरु समान ॥३६॥

दोहा

तब मन्त्री बोले सबै, इन दर्शन नहि जोग ।
नगिन फिरे ये जगत मे, ये दरसनिया लोग ।।३७।।

बन बन फिरत भयावने, घिन लागे तेहि देखि ।
ते कैसे करि बन्दिये, बाहिर भेष निषेक ।।३८।।

।।अडिल्ल।। ये सुनो के तो राय, कहो हम जाई है ।
ऐसे मुनि के दरस परस कब पाइ है ।।
तुम मति आवऊ जाऊ जो तुमहि गिलानि है।
परि ताको फल होइ जो जैसो मानि है ।।३९।।

यह कहि नृप उठि चले मनहि आनन्द भरे ।
मन्त्री लागे संघ कछुक यक जिय मे डरे ।।
राजा संघ न जाहि तो मन रिस मान ही ।
अरि जानो कह करै कहा मन आन ही ।।४०।।

।।सोरठा।। ऐसी मनहि विचार सब राजा के संघ गये ।
देख्यो बनहि मंझार ध्यानारूढ सबै तहां ।।४१।।

बन्दे राजा जाय गद्य पद्य स्तुति करि ।
मन वच क्रम सिर नाय बिगत २ इक पांति सो ।।४२।।

चौपाई

बिगत–२ बन्दे सब राय, कोई न तिन में बोलो जाय ।
मौन व्रत सब हिन मिल लियो आशिरवाद न कोई दियो ।।४३।।
अपने ध्यान सवे आरूढ, निस्प्रेही मुनि परम अगूढ ।
घरी येक द्वेइ ठाढे रहे, उन मह कोई कछुक नहीं कहे ।।४४।।
तब राजा समुझो मन माहिं, ध्यानारूढ सभी मुनि आहि ।
फिर बन्दन करि घर को चले, संघ लोग सब मिलिकरि भले ।।४५।।

फिर पापी बोले तब जाय, मन्त्रीगण व दोषी आय ।
इतने मुनिवर है इन माहि, बोलन कोऊ जानै नाहि ।।४६।।
कीधौ ये सब गूंगे राय, की तुम आगे बोलि न जाय ।
जग मे ये कहवति सब कहैं, मूरख जती मौन व्रत गहै ।।४७।।
जिनको पढि गुनि आवै नाहि, ते मूरख जड मौन गहाहि ।
ये सब है मुनि वृषभ समान, यह राजा निश्चय करि जान ।।४८।।
तातै सबन मौन इन गहौ, तुम आगे कछु जात न कहौ ।
ऐसी कहत भूप के संग, चले जात सब फूलत अंग ।।४६।।
तब राजा बोल्यौ हरषाय, इनकी महिमा कहो न जाय ।
इनको बन्दहि इन्द्र फनीन्द्र, चक्री खग देवन के देव ।।५०।।
जो जन इनकी निन्दा करै, सो नर स्वान मूस हो मरे ।
ये मुनिवर सब ध्यानारूढ, इनकी महिमा अगम अगूढ ।।५१।।
इतने में एक मुनिवर ताम, श्रुत सागर है ताको नाम ।
किये आहार आइ गयौसोइ, ता सम्मुख बोल्यौ अविलाई ।।५२।।
उन माँहि को यह आवत चलों, बांय वृषभ जो तन को भलो ।
ता सम्मुख बलि बोल्यौ जाय, तक्र पीत बहु कुक्ष भराय ।।५३।।
तब मुनि सुनि करि उत्तर दियो, रे जड तक्र पीत किम कियो।
तक्र सेत अति निर्मल महा, कौन ग्रन्थ में पीरो कहा ।।५४।।
तुमको लह्यो तक्र प्यौसार, गाय मूत के पीवन हार ।
ताके धोखे पीरो कह्यो, तक्र मूत को भेद न लह्यो ।।५५।।
तेतिस कोटि देवता रहै, गाय योनि मे तुम दुज कहै ।
जब योनि को वृषभ लगाय, तब वै देव कहां कों जाय ।।५६।।
गाय को माता कहे जो येह, मेरे मन उपज्यो सन्देह ।
गाय योनि सो निकसो होय, फिर ताहि को लागै सोय ।।५७।।

सो पूछौ तुमरो को लगै, मेरे मन को संशय भगै ।
ताही को जोती लै जाय, तसु महिमा को कहै बनाय ।।५८।।

अरु गंगा को माता कहै, ताकी महिमा यहि विधि लहै ।
रैन करै त्रिया प्रसंग, भोरी कांध धोवै मधि गंग ।।५९।।

कहै याहि न्हाये तिरि जाहि, मन वच क्रम सो संसय नाहि ।
जो जल के न्हाये शिव होय, काहे को वांछे तप कोय ।।६०।।
मद के भाजन लावै कोइ, सो बिच गंग प्रछालै सोई ।
वह पवित्र काहै नहि भयौ, वामै दोष कहां रहि गयौ ।।६१।।
यहि को मौको उत्तर देहु, तब मोसौ कछु और सुनेहु ।
अब राजा तुम पूछौ इन्हे, यह सब बचन कह्यौ है किन्है ।।६२।।

कौन शास्त्र मे है जो येह, सो मोहि ग्रंथ दिखावो केह ।
काहू रिषि की साषी देहि, ताकी हम परमान करेहि ।।६३।।

एक बात औरो जो कहै, सो नरपति नीकै करि लहै ।
ब्रह्मा विष्णु रुद्र त्रय येह, तिनकी कहै येक है देह ।।६४।।

यह निश्चय कैसे करि ठहराय, सो मोसी सब देहिं बताय ।
कहं ब्रह्मा कहं कृष्ण मुरारि, कंह रुद्र गोरि पर नारी ।।६५।।

ब्रह्म तात प्रजापति आहि, पद्मावति माता है ताहि ।
तषत रेवती ताको जयौ, येक मूर्ति कैसे करि भयो ।।६६।।

वासुदेव के भये कृष्ण मुरारी, माता विदित देव की धारि ।
जनम नक्षत्र रोहिनि भयौ, येक मूर्ति कैसे करि ठयौ ।।६७।।

उवला के सुत भये महेश, वाइस को माता उरतेस ।
मुल नक्षत्र जना है ताहि, येक मूर्ति कैसे करि आहि ।।६८।।

चारि वन्दन ब्रह्मा के भये, लो चन तीन रुद्र के यहै ।
भये चतुर्भुज विष्णु स्वरूप, येक मूर्ति कैसे करि भूप ।।६९।।

अरुन वरन ब्रह्मा की देह, सेत वरन तन रुद्र सनेह ।
विष्णु कृष्ण तन श्याम जु लहै, येक मूर्ति कैसे करि कहै ॥७०॥

चम्पापुर मे ब्रह्म भये, राजगृही में महेसुर जये ।
मथुरा माहिं कृष्ण अवतरै, येक मूर्ति कैसे संचरे ॥७१॥

ब्रह्मा वाहन हंस स्वरूप, महा रुद्र सो वृषभ अनूप ।
कृष्ण गरुड वाहन जग माहिं, येक मूर्ति कैसे ठहराय ॥७२॥

सोम बंस ब्रह्मा अवतरे, सुरज बन्स रुद्र उर धरे ।
जदु बन्सी भये कृष्ण मुरारी, येक मूर्ति कैसे करि भारि ॥७३॥

ब्रह्म दण्ड कमल को फूल, महा रुद्र मंडो तिरसूल ।
शंख चक्र धर कृष्ण जु भये, येक मूर्ति कैसे करि ठये ॥७४॥

कत जुग में ब्रह्मा जु भये, त्रेता माहिं रुद्र पर भये ।
द्वापर मे जु कृष्ण अवतरै, येक मूर्ति कैसे संचरे ॥७५॥

ब्रम्हा ब्रम्हचर्य व्रत धरे, महा रुद्र गौरी संग वरै ।
कृष्ण के गोपी सोलह हजार, येक मूर्ति कैसे संसार ॥७६॥

यह को उत्तर दीजे मोहिं, तब मै पंडित जाने तोहि ।
ना तर तागा धरऊ उतार, को तुम बात जु कहौ बिचार ॥७७॥

तब चारौं बोले रिष खाय, यह को उत्तर देह आय ।
अब नृप संघ कहा हम कहै, तातै मौन बरत ही गहै ॥७८॥

दोहा

स्याद बाद यह बहुत किय । ए सब भये अबाघ ॥
जो गूंगे सो झूठ है । जों सांचों सौ सांच ॥७९॥

ज्ञान गर्भ द्विज को गयौ । नृप दियो मुस्काय ॥
बोल कहु आवै नहीं । रहे गरब मुख द्वार ॥८०॥

छन्दगीतका

एक मुनि सब विप्र जीते । जैन धर्म प्रभाव सौ ॥
भानु सम मुनि नाश किनो । तिमिर मिथ्या चाव सौ ॥
जीत द्विज मुनि आय । गुरु चरणनि तनी वंदक करि ॥
तुम प्रसादै महा द्विज । मे जीत आयो इन बली ॥८१॥
यह सुनत गुरू हा हा करी । सुत हीन कार्य महा कियो ।
हते अपने हाथ सब मुनि । मानो करावत कर लियो ॥
तुम बाद थानक जाहु । अजहू रात एकाकी रहौ ।
तौ बचे सब संघ मुनि कौ । जो परीषह तुम सहौ ॥८२॥

"सोरठा"

श्रुत सागर मुनि धीर । गयो बाद के थान पर ।
कायोत्सर्ग शरीर । जोग दियो मुनि मेरू ज्यो ॥
ठाडो रहो अडोल । मन बच काय शुद्ध सो ।
मुख नहि बोलत बोल । ध्यान धरे भगवन्त को ॥८३॥

"चौपाई"

यहां सब विप्रन क्यो ठयो, मान भंग जिनको अति भयो ।
मुनि के मारन अर्थ उपाय, चारो घर ते निकरे धाय ॥८४॥
हाथन से लीने कृपान, मन मे धरे महा दुर ध्यान ।
जब हम मुनि को मारै जाय तब ही शुभ होय अधिकाय ॥८५॥
जब हम मुनिन की करै संघार, तो जीवन सफल होय हमार ।
उन हमरो सब हरयो मान, अब हम उनको करै निदान ॥८६॥
चले सब मिलि आये कहां, हती बाद की जगह जहां ।
तिहि ठौर देख्यो जो आय, श्रुत सागर ठाठो मुनिराय ॥८७॥
देख निशंक होय यह खरो, अपने जिय को नेक नहि दुरो ।
मान भंग जिन हमरो कियो, सो तो विधना याहि दियो ॥८८॥

सब हिन को काहे को हनै, आपस मे चारो मन्त्री भनै ।
तब बलि कही नीति है येह, आपहि हने मारिये तेह ॥८९॥

मुनि को बहुरि कहा उन कियो, काठो खडग हाथ में लियौ ।
चारो जने जो एकही बार, कर लै लै दौरे तलवार ॥९०॥

तब मुनि तप महातम घनो, आसन कम्पयो सुर वन तनो ।
ते दौरि करि थम ते भये, चारो ज्यो के त्यो रही गये ॥९१॥

हाथ पांव कीलत सब करै, अंग अंग मनु सकल जरे ।
इत उत डोल न भाग्यौ जाय, पाथर से गठि राखे ताहि ॥९२॥

प्रात भये तब देखे कहां, चारो मन्त्री कीले महा ।
काहू जाय राय से कही, देखौ चरित्र मंत्रिन के सही ॥९३॥

सुनि के राजा दौरे आय, वन्दे श्रुतसागर के पाय ।
देखो समाचार सब एह, चारो मन्त्री कीले तेह ॥९४॥

तब भुपति तिन सो इम कही, अपनौ कियो पाईयो सही ।
बिन अपराध कहां बैर धरे, ते नर नरक कुण्ड मे परै ॥९५॥

छोटे जन्तु जौ मारहि लोग, तिनको मुख नहि देखन जोग ।
ये त्रिभुवन के पूज्य महन्त, तिनकौ मारन चाहत संत ॥९६॥

बहु अपराध कियो इन आप, चन्डालन को लियो बुलाय ।
इनको सुला रोपण करो, इनको मस्तक छेदन करो ॥९७॥

इतनी सुनि मुनि बोले जाय, जीव दया तुम पालौ राय ।
अपनो कियो पाई है आप, तुम काहे को लेहौ पाप ॥९८॥

राज निति जो बहुत करेहू, इनको दण्ड और कछु देहू ।
तब नृप मुनि चरणनि को नये, चारो बांध घरै ले गये ॥९९॥

चारो को सिर मुन्डन कियो, तापर नीको पछनो दियो, ।
तवा पोछ मुख स्याहि लगाय खर बाहन पर तिनको बैठाय ॥१००॥

तिनके पाछे बाजत ढोल, किंकर जन तब बोलत बोल ।
पाप अनिति करै जो कोय, ते नर की गति ऐसी होय ।।१०१।।

धर्म न्याय श्री वर्मा करो, नगर लोग सब आनन्द भरो ।
जै जैकार सकल जग भयो, देश देश में नृप जस लियो ।।१०२।।

देश निकारो दीनो राय, अब यह कथा उन्हीं सघ जाय ।
कुरु जांगल है देश प्रधान, हस्तनागपुर तंह शुभ थान ।।१०३।।

महा पद्म राजा को नाम, लक्ष्मीमती प्रिया शुभधाम ।
तिनके पुत्र दोय अवतरे, पदम विष्णु दोनों गुण भरे ।।१०४।।

एक दिवस महा पदम प्रधान, राजा जीव बिलोचन जान ।
जिन चरणन पूजा रति सोय, जगते तब उदास तिह होय ।।१०५।।

जेष्ठ पुत्र तिन लियो बुलाय, राज्य भार सब सौंप्यौ जाय ।
आपुन श्रुत सागर मुनि पास, लीनो दीक्षा परम उदास ।।१०६।।

विष्णु कुमार संघ व्रत धरे, दोऊ जने घोर तप करै ।
तथपि तिन मे विष्णु कुमार, भये ध्यान परायन सार ।।१०७।।

करि जिनोक्त तपस्या सिद्ध, उपजी तिनके वेक्रिया रिद्ध ।
तप बल रिद्धि-सिद्धि सब पाय, धरनी भूषणगिर पर जाय ।।१०८।।

धर अब पद्म करै निज राज, सेना सहित सकल सुख साज ।
बलहि आदिदे मन्त्री चार, विप्र यहां आये सब द्वार ।।१०९।।

आनि पद्म को दई असीष, अविचल होय राज्य तुम ईस ।
दिन दिन तेज बढे प्रताप, बाढै धर्म धरै अरि पाप ।।११०।।

महाराज कहिये एक बार, बदन मलीन देख्यो तुम्हार ।
हमको बड़ी अशंका भई, कौन भोर तुमको उपजई ।।१११।।

तब इन सो बोले निजराय, कहा कहो कछु कहिये न जाय ।
नगर कुम्भ पूरब की ओर, कोनन कोर खाई चहुं ओर ।।११२।।

सिंह बली नाम ताको राय, करन उपद्रव को तिहि आय ।
ताके बस करिये की चित, ता कारण हम दर्बल मित्त ।।११३।।

बली तब बोले राय सुनेहु, यह आज्ञा तुम हमको देहु ।
तुरन्त ले आवे ताको बांधि, तब हम धरै जनेऊ कांध ।।११४।।

राजा कहै सुनो बलिराज, जो यह करो हमारो काज ।
जो मांगो सो तुमको देहु, यह तुमरी हम सेव करेऊ ।।११५।।

बलि बोले सुनि पदम सुजान, प्रथम करै तुमरो कल्याण ।
ता पाछे मांगे सो लेहि यही वचन मोहि राजा देहि ।।११६।।

राजा कहै यह मोहि प्रमान, बचन हरै तो जिनकी आन ।
सकल विप्र मिल पहले गहे, नगर कुम्भ पुर पहुंचत भये ।।११७।।

खबर भयी राजा को जाय, आसन से उठि आयो राय ।
शुद्धचित अति आनन्द भरो, आवत द्विज के पायनि परयो ।।११८।।

विप्र जानि उठि मिलियो आय, इन बांधो धरे भुजन चढाय ।
ले आयो तिन पकरि अवास, राजा पदम राय के पास ।।११९।।

बांधि हाथ तिन ठाढो कियो, राजा उठि तेहि आसन दियो ।
बैठो तहं नीचो सिर नाय, बहुत भांति सो भक्ति कराय ।।१२०।।

धन्य पदम नृप पद्म समान, जाको सुजस सुगंध बखान ।
अरू भूपति है मधुकर राय, तुम चरणन गुंजत लपटाय ।।१२१।।

तुम नृप विक्रम भोज समान, क्या उपमा दीजै तुम आन ।
जस काहु ते नाहि भयो, ते सब तुमही कीन्हो नयो ।।१२२।।

ऐसो आज कहो को करै, शत्रु पाप जिस करूणा धरे ।
ऐसे नृप व्है है ना भये, जैसे तुम्हे विधाता ठये ।।१२३।।

कौन जीभ ते स्तुति करै, आज्ञा करी तुम नीर भरे ।
अरू हमको किंकर समगिनो, और बात हम कहलंग भनो ।।१२४।।

तब नृप पदम तासु सो कही, ऐसे बचन न बोलो सही।
हम सबके दासन के दास, तुम अपने घर करो निवास ।।१२५।।
भीतर लै किन्हो ज्योनार, सुन्दर बसन आभूषण सार।
देकर पान बिदा तिन कियो, राजा पदम महा जस लियो ।।१२६।।

"दोहा"

यह अवसर मुनि संघ सब । हस्तनागपुर जाय ।।
गुरू अकम्पनाचार्य मुनि । बाहर उतरे आय ।।१२७।।
नगर लोग बन्दन चले । आनन्द हर्ष समेत ।।
करत महोत्सव भाव सो । दान भली विधि देत ।।१२८।।

"अडिल्ल"

यह सुनि करि विप्र मनहि चिन्ता धरे।
राजा वन्दन जाय तो हम अब कह रहे ।।
तब बलि आदिक जाय, राय सो यों कही।
हमे दक्षिना देहु वचन जो हैं सही ।।१२९।।
पदम कहो कर जोर चाहो सो लीजिये।
सात दिवस का राज कहो बलि दीजिये ।।
दियो राज तब राय बलिन दिन सात को।
आप अन्तःपुर जाय बैठो रनिवास को ।।१३०।।

"सोरठा"

मन्त्रिन पायो राज। सब कुमन्त्र ठानन लयो ।।
कीजं सोई इलाज। जासो ये सब मारिये ।।१३१।।

"चौपाई"

तब बली मन्त्र उपायो आय। जो सन्मुख हम मरिहि जाय।
हमको भलो न भाषं कोय, महा अकीर्ति जगत मे होय ।।१३२।।
ताते कछुक बहानो करो, जाते इन सब ही संघरो।
और हमें नहिं लागे दोष, पीछे राजा करे न रोष ।।१३३।।

तब चारों मिल रचो उपाय, घेर लियो मुनिवर को जाय ।
लागे दुष्ट करन उपचार, जाके पाप न वारा पार ।।१३४।।

काठ घास वन बहुत मंगाय, मंडप बडो कियो तंह जाय ।
रच्यो यज्ञ नर मेधक जाल, जापे है जीवन को घात ।।१३५।।

नाशै धर्म पाप अधिकाय, कारन करिनि जो नरके जाये ।
अस्थि चाम मृत जीव बटोरि, करि दोन्हो धुवां टक टोरि ।।१३६।।

अति उपसर्ग कियो तिन जाय, मुनि मारन को सहज उपाय ।
तब मुनि द्वै विधि लै संयास, परमेष्टि पद सुमिरियो तास ।।२३७।।

शत्रु मित्र दोऊ सम गिनै, राग द्वेष नहिं धारै मनै ।
कियो उपसर्ग धरै मुनि ध्यान, रहे अचल मुनि मेरू समान ।।१३८।।

सहैं परिषह दुद्धर घोर, अब यह कथा गई कहुं और ।
मिथलापुर को बन है जहां, अवधिज्ञान श्रुत सागर तहां ।।१३९।।

तिन निशि को देख्यो आकाश, श्रवन नक्षत्र कंपित भये आस ।
अवधि ज्ञान दृग देख्यो सोय, महा कष्ट मुनिवर को होय ।।१४०।।

हा हा कार कियो तिन जाय, संकट निपट सहत मुनिराय ।
इतनी सुनके शिष्य जो ताम, पुष्पदन्त छुल्लक है नाम ।।१४१।।

पूछी गुरू को शिश नवाय, कौन ठांव गुरू कहो समुझाय ।
कहे गुरू सुनि बक्ष खगेश, हस्तनागपुर दुष्ट नरेश ।।१४३।।

तिन उपसर्ग तहां बहु कियो, सात सै मुनिवर को दुख दियो ।
सो स्वामी कैसे क्षय होय, अब उपचार बतावौ सोय ।।१४३।।

तब गुरू कहे सुनौ रे वक्ष, धरनी धर बरकत प्रत्यक्ष ।
विष्णु कुमार करत तप तहां, रिद्धि विक्रिया उपजी महा ।।१४४।।

तिनसो वह निर्वार जु होय, ऐसे वचन कहो मुनि सोय ।
यह सुनि क्षुल्लक गुरू सो कही, आज्ञा हो तो जाऊं में तही ।।१४५।।

ढील न कीजै जाव इस घरी, कारज करौ यही घरी बली ।
यह सुनि खग पुनि छिन मे जाय, विद्या के बल पहुंचो जाय ।।१४६।।

नमस्कार करि बैठो पास, सब विरतान्त कह्यो प्रकासि ।
जब मुनि सुन्यौ रिद्धि को नाम, मन मे शंका उपजी ताम ।।१४७।।

रिद्धि परिक्षा लीजै आज, हाथ पसार दियो मुनिराज ।
तब गिरतरु भेवत भयो, लांबो चलो उदधि लौ गयो ।।१४८।।

तब मुनि जाना सांची बात, मोहि रिद्धि उपजी है विख्यात ।
मुनि उपसर्ग निवारो जाय, श्री जिनवर के धर्म सहाय ।।१४९।।

तब मुनि हस्तनागपुर गये, पद्म राय घर पूजत भये ।
तिन मुनि को जब देखा जाय, नमस्कार कहि पूजे पाय ।।१५०।।

ले चरणोदक नायो शीष, धर्म वृद्धि दीनी मुनि ईश ।
पूछौ समाचार हौ वीर, हो सब मे नाशन पर पीर ।।१५१।।

ऊचै आसन पर बैठाय, हाथ जोड ठाढो भयो राय ।
बहु विधि भक्ति करत नृप भये, तब मुनिवर पूछत भये ।।१५२।।

अहो वीर तुम यह क्या कियो, मरण कष्ट मुनिवर को दियो ।
अपने कुल की छोड़ी रीति, कह रची तुम यह विपरित ।।१५३।।

हमरे कुल पूरब जो भये, कुरू बन्शी राजा ते ठये ।
तिनकी सुन करतुत विशेष, सो राजा मन मे धर देख ।।१५४।।

प्रथम सोम श्रेयांश नरेन्द्र, जिनधर आये आदि जिनेन्द्र ।
तिनहि इक्षु रस दियो आहार, प्रथम दान भाख्यो संसार ।।१५५।।

हमरे वश चार तीर्थेश, प्रगटे जो तम हरण दिनेश ।
धर्म नाथ अरु शान्ति जिनेन्द्र, कुन्थ अरह जिन कर्म निकन्द ।।१५६।।

चारो आनि लीयो अवतार, हमरे कौन बडो संसार ।
तिनमे तीन चक्रवती भये, तापर काम देव पद लहे ।।१५७।।

तिन साधो षट खण्ड अपार, कह विभूत वरणौ तिस सार ।
शास्त्र पुराण सुनो जिन कोय, उनकी महिमा जाने सोय ।।१५८।।

सब तज जिन दिक्षा आदरी, केवल ज्ञान उपार्जन करी ।
समोशरण तिनके तहं भये, धर्म चलाय मुकत को गये ।।१५६।।

तिनके कुल मे हम हैं वीर, दया धर्म पालन गुण धीर ।
हमरे कुल ऐसी किन करि, जैसी भैया तुम चित्त धरी ।।१६०।।

मुनि उपसर्ग कहा किन कियो, महा पाप अपने सर लियो ।
कैसे करी छूटेगे कर्म, कियो वीर तुम महा अधर्म ।।१६१।।

इष्टनि पाले दुष्टनि हमै, ऐसे राज नीति मे भनै ।
मनुष होम किन गंथनि कहयो, कह जानि तुम इह संग्रहयो ।।१६२।।

साधुनि सो इतनो संताप, महा कष्ट कीनो भव पाप ।
तुमरे राज इतनो दुख होय, तुम्हे लाज आवै नहि कोय ।।१६३।।

अजहु शान्ति करो तुम जाव, लेहु मुनिन को जीव बचाय ।
इतनो जस तुम अब लेव, इतनो मांगै हमको देव ।।१६४।।

इतनो सुनकर बोलो राय, अब मैं कहा करो मुनिराय ।
सात दिनो को अपनो राज, दीनो बली बाह्मन के काज ।।१६५।।

वचन हार दोनो मे जाय, अब कैसे करि मांगो ताय ।
कहा कहो वासो मै जाय. हारियो वचन रहयो धर आय ।।१६६।।

ताते हमे कहा है कोय, अपनो कियो पाई है सोय ।
हम क्या उनको दियो लगाय, की तुम उनको मारो जाय ।।१६७।।

ताको हमे कहां है पाप, करम किये को पावेगो आप ।
जो करता सो भोक्ता होय, यह जग मे भाषै सब कोय ।।१६८।।

तब मुनिराज कहयो सुनि वीर, तेरी मति नांहि है थीर ।
कृत कारित मोदन है एक, यामै नाहि कछु रहयो विवेक ।।१६९।।

बहुरी पदम ने उत्तर दियो, यामे स्वामि हम क्या कियो ।
मेरे देखो कौन प्रमोद, ना हम कृत कारित अनुमोद ।।१७०।।
याते होन हार सोई होय पूरब लिखो न मेटे कोय ।
मोहि कलंक बन्दो मुनिराय, जुक्ति होय सो किजै काय ।।१७१।।
अब तुम सकल योग मुनिराय, जुगत होय सो किजे काज ।
पं तुम आगे भाषौ कहा तुम सब समरथ कारन अब महा ।।१७२।।
जहां मणि की है पूरन ज्योति, तहं दीप की किम गिनती होत ।
चन्द्र कला षोडस है जहां, तारा गण को पूछे कहां ।।१७३।।
जहां स्वामी तुम हव प्रत्यक्ष, उलटन पलटन मेरू समर्थ ।
चाहो उलट उदधि तुम भरो, तल से पृथ्वी ऊपर करो ।।१७४।।
तुम स्वामी सब गुण गंभीर, तुम आगे मे क्या बनिये वीर ।
तुमरी इच्छा होय सो करो, यामे मोको मत आदरो ।।१७५।।
यह सुनि कोपो विष्णु कुमार, रिद्धि विक्रिया कर संचार ।
बामन रूप विप्र को करो, माला कंठ जनेऊ धरो ।।१७६।।
कर बीना लीनी सो तुरन्त, नाना भांति बजावत जंत ।
करत वेद धुनि परम अपार, चारो वेद अंग विस्तार ।।१७७।।
गयो यज्ञ शाला मे सोय, मानो ब्रह्मो आयो कोय ।
देख प्रिय बहु आदर कियो, सबके ऊंचे बैठक दियो ।।१७८।।
हाथ जोरि बलि बिनवे सोई, मांगो प्रिय जो इच्छा होइ ।
तुम धुनि सुनि मैं हो संतुष्ट, जो मांगौ सो देहौ अभीष्ट ।।१७९।।
तब मुनि कह्यो पुर्ण है सबै, मोको कछु नहि चाहिये अबै ।
मैं अतथि द्विज बावन अंग, जाने सकल वेद बेदांग ।।१८०।।
जो राजा बहु दान करेहु, तीन हाथ मोहि प्रथ्वी देहु ।
तहां कुटी मे लेहुं बनाय, धर्म ध्यान के हेत सुभाय ।।१८१।।

तब बलि बोलो मांगो कहा, मन वंछित कछु मांगो महा ।
याको महाराज इहु एहु, तुमको शक्ति होय सो देहु ।।१८२।।

"दोहा"

बलि बोलो सुनि विप्र गुरु, मनमति क्रोध करेहु ।
पृथ्वी है चहु दिस परि, जित भावै तित लेहु ।।१८३।।

देहु म.हि संकल्प करि, मुख सो स्वस्ति बुलाय ।
तीन लोक मुनि साखि दे, तब मे लै हो जाय ।।१८४।।

कियो संकल्प जो तास को, स्वस्त कहत प्रकाश ।
तबहि विष्णु कुमार मुनि, लागौं जाय अकाश ।।१८५।।

प्रथम चरण धर मेरू पै, दुजो मानुषोत्तर पे जाय ।
तीजै को पृथ्वी नही, तब बलि रह्यो शंकाय ।।१८६।।

"छन्द जोगी रासा"

कंप्यो शेष धरनि सब कंप्यो कंप्यो उदधि गम्भीरा ।
मेरू आदि गिरिवर सब कंप्यो कंप्यो नेक धरत नहि धीरा ।।
व्योम भानु शशि सरगरण, कंप्यो तारे नखत समेता ।
देव असुर दानवे कंपे, किन्नर यक्ष समेता ।।१८७।।

तीन भुवन मे शंका भई, जब मुनि देह बढ़ाई ।
देख रूप भय भीत भये, सब कौन विक्रिया आयी ।।
चढि चढि देव विमाननि ऊपर दशो दिशाते धाये ।
जहां विष्णु मुनि छोम सूंठाहे, तहां दौरि सब आये ।।१८८।।

क्षमा क्षमा कीजै मुनि नायक तुम सम को है ।
तुम ही अन्तर जामी स्वामी शिव गामी पद सो है ।।
सब देवनि मिलि बलि को बांध्यो डारयो मुनि के पाई ।
अब तुम राख लेहु शरणागति हो त्रिभुवन के राई ।।१८९।।

ठाठे भक्ति करै सब सुरनर धन्य-२ तुम देवा ।
यह उपसर्ग निवारो मुनि को, जासु पुन्य नहि सेवा ।
तुम मुनिराज महा जस लीनो कीनो धर्म अपारा ।
वात्सल अंग सुभ हो पूरण, तुमही विष्णु कुमारा ॥१९०॥

राजा पद्म महा भय भीत, तबहि दौरि करि आये ।
विष्णु कुमार महा मुनिवर, के चरणनि शीश नवावे ।
धनि स्वामी उपसर्ग निवारण कारण पाय के आय ।
धन्य भाग मै अपने जाने तुम दर्शन हम पाय ॥१९१॥

सोरठा

सुरनर खग मुनि आय, सब उपसर्ग निवारिये ।
वन्दे बहु विधि पाय, मुनि अकम्पनाचार्य के ॥१९२॥

तब मुनि बलि देख, भाष्यो विष्णु कुमार सो ।
जब ये छुटे विशेष, तब आहार हम सब करैं ॥१९३॥

"चौपाई"

यह सुनि मुनि दियो छुडाय, रहे मन्त्रि सब शीश नवाय ।
धृग धृग जन्म हमारो आय, ए करनी हम कीनी जाय ॥१९४॥

सोइन हमसो ऐसी करी, इन मन मे जो दया आदरी ।
झुठा मिथ्यातम हम दीन, जामे दया अंग नहि लीन ॥१९५॥

बिना दया करनी सब छार बिना दया नर जन्म चांडाल ।
बिना दया सद्गति नहि होय, कोटी उपाय करै जो कोय ॥१९६॥

तब चारो श्रावक व्रत लियो मिथ्या धर्म छाडि सब दियो ।
चारो स्तुति मुनि की करै, लै लै शीश चरण पर धरै ॥१९७॥

पुरजन लोग जुरे सब जाय, वन्दे मुनि गण सब शीश नाय ।
अपने अपने घर ले गये, मुनि की सेवा करत जु भये ॥१९८॥

कान नाक मुख धूमा करो, मुनि कों कंठरुधि सब गयो।
ताको सबनि कियो उपचार, प्रासुक जल अरु सुरस आहार ।।१९९।।

सिमई दूध खीर औटाय घीव शर्करा सरस मिलाय।
सो दीनो मुनि आहार बहु विधि पुन्य उपजायो सार ।।२००।।

"दोहा"

पुरजन जो बाकी रहे, सोच कर मन माहि।
धर धर मुनि परगाहियो, अब हम कहा कराय ।।२०१।।

हम जो प्रतिज्ञा आदरी, एं मुनि देय आहार।
डूबे सोच समुन्द्र में, ताको वार न पार ।।२०२।।

"सोरठा"

एक कह्यो मुसकाय, चलो विष्णु कुमार ढिग।
जो मुनि देय बताय, सो सब मिलिकर किजिये ।।२०३।।

"चौपाई"

शेष रहे जो नगर के लोग, आये विष्णु कुमार के जोग।
नमस्कार कर बोले बैन, तुम देखत पवित्र भये नैन ।।२०४।।

भो मुनिराज प्रतिज्ञा हमे मुनि आहार जो देवें सबै।
तब हम करे अन्न अरुपान, ना तर हमको जिनकी आन ।।२०५।।

ओ आहार मुनिवर लियो सबै भों मुनिवर अब हम क्या करें।
यह संशय हमको अपनो तब प्रभु तुम से आय के गुनो ।।२०६।।

तब मुनिवर दीनो उपदेश मित्र साधु करो तुम जाय विशेष।
उनको भोजन देव सुजान, उनको जानो मुनहि समान ।।२०७।।

नमस्कार करि घर को चले, आनन्द सहित लोग सब भले।
तब उन विधि कीनी घर जाय, फिर पाछे आहार कराय ।।२०८।।

तब मुनि रक्षक कियो विधान, रक्षा होय तुम्हारे प्राण।
मंगल चिन्ह बांधि सब हाथ, सलीनो जगत भयो विख्यात ।।२०९।।

यह उपसर्ग निवारण किन्ह, प्रगटो देश देश मे ग्रन्थ ।
बहुरि कथा जग प्रगटत भई, देश देश परगासी गई ।।२१०।।

सब जन मिलकर पूजे पांय, विष्णु कुमार गये निज थान ।
सकल सुरन को करि सनमान, फेरि जाय दीक्षा आदरी ।।२११।।

तब सब मुनि अपनो तप करै, दर्शन ज्ञान चरण आदरै ।
श्रावण सुदि पूनम तिथि तनो, कथा विचित्र अनुपम बनी ।।२१२।।

वात्सल्य अंग कथा यह कही, कहा कोष मै जो कुछ लही ।
यह विधि भक्ति भविक जो करै, जति व्रती मुनि को आदरै ।।२१३।।

वात्सल अंग सर्वथा होय, स्वर्ग मोक्ष फल पावै सोय ।
श्रवन कथा संपूरन भई, अंग अंग करुनारस भई ।।२१४।।
जो यह कथा सुनै दे कान, सो नर पावै शिवनर थान ।।२१५।।

"दोहा"

विष्णु कुमार मुनि की बरनो कथा रसाल ।
सुनि भव्य जन चाव सो कहै विनोदी लाल ।।२१६।।

मुनि उपसर्ग निवारनी कथा सुनै जो कोय ।
करुना उपजै चित्त मे, दिन दिन मंगल होय ।।२१७।।

'इति'

"श्री विनोदी लाल कृत रक्षाबन्धन कथा सम्पूर्ण"

रोटतीज व्रत

भादों सुदी तीज दिन जान, सब आरम्भ तजे बुधिवान ।
तीन वरष प्रोषध चित धार, पीछे उद्यापन कर सार ।

कथाकोष

भावार्थ :—यह व्रत तीन वर्ष में समाप्त होता है । प्रतिवर्ष भाद्रपद शुक्ला ३ के दिन उपवास करे और अभिषेकपूर्वक त्रैलोक्य जिनालय विधान करे । 'ओं ह्रीं

त्रिलोकसम्बन्धिकाकृत्रिम जिनचैत्यालयेभ्यो नमः' इस मन्त्र का त्रिकाल जाप करे। तीन वर्ष बाद उद्यापन करे।

यह व्रत हस्तिनागपुर के राजा विशाखदत्त की रानी विजय सुन्दरी ने किया था जिसके प्रभाव से स्त्रीलिंग छेदकर देव होकर फिर मनुष्य पर्याय प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त किया।

रुद्रवसन्त व्रत

रुद्रवसंत चवालिस दिना, पैंतीस प्रोषध नव पारणा।

—वर्धमान पुराण

भावार्थ :—यह व्रत चवालीस दिन में पूरा होता है, जिसमें ३५ उपवास और नव पारणा होते हैं। जैसे—

(१) दो उपवास एक पारणा,
(२) तीन उपवास एक पारणा,
(३) चार उपवास एक पारणा,
(४) पांच उपवास एक पारणा,
(५) छह उपवास एक पारणा,
(६) छह उपवास एक पारणा,
(७) चार उपवास एक पारणा,
(८) तीन उपवास एक पारणा,
(९) एक उपवास एक पारणा।

इस प्रकार व्रत पूर्ण करे। त्रिकाल नमस्कार मन्त्र का जाप करे। व्रत पूरा होने पर उद्यापन करे।

तिथिक्षय और तिथिवृद्धि होने पर रत्नत्रय व्रत की व्यवस्था

तिथिक्षये चादिदिनं वाधिकेप्यधिकं फलमिति। द्वादश्याधिके पूर्वतिथिनिर्णय ग्रहणात् धारणाद्वा; त्रयोदशी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, इति तिथित्रयस्य मध्येऽन्यतरस्य

वृद्धिगते सति प्रोषधाधिक्यं कार्यम्, पारणाधिक्ये नियमो नास्तीति । तिथिह्रासे द्वादशीतः व्रतं कार्यम् ।।

अर्थ : —तिथिक्षय होने पर एक दिन पहले व्रत किया जाता है और तिथि-वृद्धि होने पर एक दिन अधिक व्रत करना पड़ता है । एक दिन अधिक व्रत करने से अधिक फल की प्राप्ति होती है । यदि द्वादशी तिथि की वृद्धि हो तो पूर्वतिथि निर्णय के अनुसार व्रत धारण करना चाहिए । यदि त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा से कोई तिथि बढ़े तो एक अधिक प्रोषध करना चाहिए । यदि पारणा का दिन अर्थात् प्रतिपदा की वृद्धि हो तो एक दिन अधिक उपवास या एकाशन करने की आवश्यकता नहीं है । तिथिक्षय होने पर द्वादशी से व्रत करना चाहिए ।

रत्नत्रय व्रत की विधि

अथ रत्नत्रयव्रतमुच्यते—भाद्रपदमासे सिते पक्षे द्वादशीदिने स्नात्वा गत्वा जिनागरे पूजयित्वा जिनान् । भोजनानन्तरं जिनवेश्मनी गन्तव्यम् । त्रयोदश्यां सम्यग्दर्शनपूजा चतुर्दश्यां सम्यग्ज्ञानपूजा पौर्णमास्यां सम्यक्चारित्रपूजा आश्विनप्रतिपदि महार्घ्यमेकभुक्तं पूर्णाभिषेकश्च पञ्चामृतैः करणीयः चरस्थिर बिम्बानाम् ।

अर्थ : —रत्नत्रय व्रत को कहते हैं—भाद्रपद शुक्ल में द्वादशी तिथि को स्नानकर जिनालय में जाकर जिन-भगवान की पूजा की जाती है । भोजन के अनन्तर जिन-मन्दिर में जाना चाहिये । वहां शास्त्रस्वाध्याय, स्तोत्रपाठ आदि धर्मध्यान में समय को व्यतीत करना चाहिए । त्रयोदशी तिथि को सम्यग्दर्शन की पूजा, चतुर्दशी को सम्यग्ज्ञान की पूजा, पूर्णिमा को सम्यक्चारित्र की पूजा, और आश्विनकृष्णा प्रतिपदा को महार्घ्य, एक बार भोजन तथा चल और अचल जिनबिम्बों का पञ्चामृत पूर्ण अभिषेक किया जाता है ।

रत्नत्रय व्रत की विधि

रत्नत्रयं तु भाद्रपदचैत्रमाघशुक्लपक्षे च द्वादश्यां धारणं चैकभक्तं च त्रयोदश्यादिपूर्णिमान्तमष्टमं कार्यम् । तद्भावे यथाशक्ति काञ्जिकादिकं; दिनवृद्धौ तदधिकतया कार्यम्: दिन हानौ तु पूर्वदिनमारभ्य तदन्तं कार्यमिति पूर्वक्रमो ज्ञेय ।

अर्थ :—रत्नत्रय व्रत भाद्रपद, चैत्र और माघ मास में किया जाता है। इन महीनों के शुक्ल पक्ष में द्वादशी तिथि को व्रत धारण करना चाहिए तथा एकाशन करना चाहिए। त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा का उपवास करना; तीन दिन का उपवास करने की शक्ति न हो तो कांजी आदि लेना चाहिए। रत्नत्रय व्रत के दिनों में किसी तिथि की वृद्धि हो तो एक दिन अधिक व्रत करना एवं एक तिथि की हानि होने पर एक दिन पहले से लेकर व्रत समाप्ति पर्यन्त उपवास करना चाहिए। यहां पर भी तिथिहानि और तिथिवृद्धि में पूर्व क्रम ही समझना चाहिए।

विवेचन :—रत्नत्रय व्रत के लिए सर्वप्रथम द्वादशी को शुद्धभाव से स्नानादि क्रिया करके स्वच्छ सफेद वस्त्र धारण कर जिनेन्द्र भगवान का पूजन-अभिषेक करे। द्वादशी को इस व्रत की धारणा और प्रतिपदा को पारणा होती है। अतः द्वादशी को एकाशन के पश्चात् चारों प्रकार के आहार का त्याग कर, विकथा और कषायों का त्याग करे। त्रयोदशी और पूर्णिमा को प्रोषध तथा प्रतिपदा को जिनाभिषेकादि के अनन्तर किसी अतिथि या किसी दुःखित-बुभुक्षित को भोजन कराकर एक बार आहार ग्रहण करे। अपने घर में ही अथवा चैत्यालय में जिनबिम्ब के निकट रत्नत्रय यन्त्र की भी स्थापना करे।

द्वादशी से लेकर प्रतिपदा तक पांचों ही दिनों को विशेष रूप से धर्म ध्यान पूर्वक व्यतीत करे। प्रतिदिन त्रैकालिक सामायिक और रत्नत्रय विधान करना चाहिए। प्रतिदिन प्रातः, मध्यान्ह और सायंकाल में "**ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो नमः**" इस मन्त्र का जाप करना चाहिए। इस व्रत को १३ वर्ष तक पालने के उपरान्त उद्यापन कर देना चाहिए। यह व्रत की उत्कृष्ट विधि है। इतनी शक्ति न हो तो बेला करे तथा आठ वर्ष व्रत करके उद्यापन कर देना चाहिए। यह व्रत की मध्यम विधि है। यदि इस मध्यम विधि को सम्पन्न करने की भी शक्ति न हो तो त्रयोदशी और पूर्णिमा को एकाशन एवं चतुर्दशी को प्रोषध करना चाहिए। यह जघन्य विधि है। इस विधि से किये गये व्रत का ३ या ५ वर्ष के बाद उद्यापन कर देना चाहिए। इस व्रत में पांच दिन तक शील व्रत का पालन करना आवश्यक है।

रत्नत्रय व्रत के दिनों में तिथिवृद्धि या तिथिह्रास हो तो पहले के समान व्रत व्यवस्था समझनी चाहिए। एक तिथि की वृद्धि होने पर एक दिन अधिक और एक तिथि की हानि होने पर एक दिन पहले से व्रत करना चाहिए। व्रत तिथि का प्रमाण छः घटी ही उदयकाल में ग्रहण किया जायेगा।

रत्नत्रयव्रत कथा

भाद्रमास, माघ मास, और चैत्र महीने के शुक्ल पक्ष के प्रथम शुक्ल पक्ष में द्वादशी को एकासन करके, चारों प्रकार के आहार पानी का त्याग करे, त्रयोदशी को प्रातःकाल शुद्ध होकर जिनमन्दिरजी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, रत्नत्रय भगवान (शान्ति कुन्थु अरह) का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से अलग-अलग पूजा करे, श्रुत व गुरु, यक्षयक्षि क्षेत्रपाल की पूजा करे, सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र को पूजा करे।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो नमः।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे, व्रत कथा पढ़े, सहस्र नाम पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य भगवान को चढ़ा देवे। इस प्रकार चतुर्दशी को और पूर्णिमा को पूजा करे, तीनों दिन निर्जल उपवास करे, आश्विन कृष्ण एकम। (भाद्रकृष्ण एकम) को दानपूजा करके स्वयं पारणा करे, इस व्रत को साल में तीन बार करे। ब्रह्मचर्य का पालन करे, इस व्रत को सतत तीन वर्ष करना पड़ता है, अन्त में उद्यापन करे, उद्यापन का सामर्थ्य नहीं होने पर व्रत को दुगुना करे। यह इस व्रत की उत्कृष्ट विधि है।

दूसरी प्रकार की विधि में मात्र इतना ही फरक है कि द्वादशी को एकासन त्रयोदशी को उपवास, चतुर्दशी को एकासन पूर्णिमा को उपवास प्रतिपदा को एकासन करना। इस व्रत को तेरह वर्ष करके उद्यापन करना पड़ता है। बाकी पूजा विधि सब उपरोक्त प्रमाण ही करना पड़ता है।

तीसरी प्रकार की विधि और पाई जाती है, जिसमें द्वादशी से लेकर पूर्णिमा

तक पांचों ही दिन एकासन करना पड़ता है। इस व्रत को २६ वर्ष करना पड़ता है, बाकी सब विधि प्रथम विधि के अनुसार करे।

व्रत का उद्यापन करते समय, रत्नत्रयविधान करे एक रत्नत्रय प्रतिमा नवीन लाकर पंच कल्याणक प्रतिष्ठा करे, मुनि-आर्यिका, श्रावक-श्राविका सब को यथायोग्य आहारादि उपकरण देवे, मन्दिर का जीर्णोद्धार करे, मन्दिर में उपकरण देवे।

एक विधि में कांजीकाहार से एकासन करके भी कर सकते हैं, १३ वर्ष करे।

कथा

पूर्व विदेह के कच्छ देश में वीतशोकपुरी का राजा वैश्रवण अपनी राज रानी श्रीदेवी के साथ रहता था, सुख से राज्य करता था।

एक बार नगरी के उद्यान में सुगुप्ताचार्य मुनिराज का चतुर्विध संघ आया, राजा को वनमाली के द्वारा समाचार प्राप्त होते ही पुरजन परिजन सहित मुनिसंघ के दर्शन के लिए गया, वहां जाकर धर्मोपदेश सुना, मुनिराज के मुख से रत्नत्रय का स्वरूप सुनकर राजा बहुत सन्तुष्ट हुआ और हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगा कि हे गुरुदेव ! मेरे आत्म कल्याणार्थ मुझे ऐसा कोई व्रत प्रदान कीजिये, जिससे मुझे शीघ्र मोक्ष सुख की प्राप्ति हो। तब मुनिराज ने राजा को रत्नत्रय व्रत दिया, राजा ने नगर में आकर व्रत को विधिपूर्वक किया, अन्त में व्रत का उद्यापन किया। एक दिन नगर के बाहर बिजली के पड़ने से किसी पेड़ को नष्ट होता देखा, जिससे राजा को वैराग्य उत्पन्न हो गया और अपने पुत्र को राज्य देकर दिगम्बर दीक्षा ले ली और घोर तपश्चरण करते हुए षोडसकारण भावना भाते हुए तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया, अन्त में समाधि मरण कर अपराजित स्वर्ग में देवेन्द्र हो गया। वहां से च्युत होकर मल्लिनाथ तीर्थंकर होकर मिथिला नगरी में उत्पन्न हुए, इन्द्रों ने पाँचों कल्याणक मनाया अंत में मल्लिनाथ तीर्थंकर सर्व कर्म काट कर मोक्ष को गये। यह इस रत्नत्रय व्रत का फल है। भव्य जीवो ! तुम भी इस व्रत को अच्छी तरह से पालो।

अथ रतिकर्मनिवारण व्रत कथा

विधि :—पूर्ववत् सब विधि करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि चैत्र कृष्णा ५

को एकाशन करे ६ को उपवास करे। शान्तिनाथ भगवान की पूजा, मंत्र जाप पत्ते मांडला आदि करे।

रविव्रत की विधि

आदित्यव्रते पार्श्वनाथार्कसंज्ञके आषाढमासे शुक्लपक्षे तत्प्रथमादित्यमारभ्य नवसु अर्कदिनेषु व्रत कार्यं नववर्षं यावत्। प्रथमवर्षे नवोपवासः, द्वितीयवर्षे नवैकाशनाः तृतीयवर्षे नवकाञ्जिकाः, चतुर्थवर्षे नवरूक्षाः, पञ्चमवर्षे नवनीरसाः, षष्ठवर्षे नवालवणाः, सप्तमवर्षे नवागोरसाः अष्टमवर्षे नवोनोदराः, नवमववर्षे अलवणा ऊनोदराः नव। एवमेकाशितिः कार्याः। व्रत दिने श्री पार्श्वनाथस्याभिषेकं कार्यं पूजनं च। समाप्तावुद्यापनं च कार्यम्, ये भव्या इदं रविव्रतं विधिपूर्वकं कुर्वन्ति तेषां कण्ठे मुक्तिकामिनी कण्ठरत्नमाला पतिष्यति।

अर्थ :—रविव्रत में आषाढ़ मास शुक्ल पक्ष में प्रथम रविवार पार्श्वनाथ संज्ञक होता है, इससे आरम्भ कर नौ रविवार तक व्रत करना चाहिए। यह व्रत नौ वर्ष तक किया जाता है। प्रथम वर्ष में नौ रविवारों का उपवास, द्वितीय वर्ष में नौ रविवारों को एकाशन, तृतीय वर्ष में नव रविवारों को काञ्जी-छाछ या छाछ से बने महेरी आदि पदार्थ लेकर एकाशन, चतुर्थ वर्ष में नव रविवारों को बिना घी का रूक्ष भोजन, पञ्चम वर्ष में नौ रविवारों को नीरस भोजन, षष्ठ वर्ष में नौ रविवारों को बिना नमकका अलोना भोजन, सप्तम वर्ष में नौ रविवारों को बिना दूध, दही और घृत के भोजन, अष्टम वर्ष में नौ रविवारों को ऊनोदर एवं नवम वर्ष में नौ रविवारों को बिना नमक के नौ ऊनोदर किये जाते हैं। इस प्रकार ८१ व्रत-दिन होते हैं। व्रत के दिन श्री पार्श्वनाथ भगवान् का अभिषेक और पूजन किये जाते हैं। जो विधिपूर्वक रविव्रत का पालन करते हैं, उनके गले में मोक्षलक्ष्मी के गले का हार पड़ता है। व्रत पूरा होने पर उद्यापन करना चाहिए।

विवेचन :—आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष के प्रथम रविवार से लेकर नौ रविवारों तक यह व्रत किया जाता है। प्रत्येक रविवार के दिन उपवास या बिना नमक का एकाशन करने का नियम है। व्रत के दिन पार्श्वनाथ भगवान् का पूजन, अभिषेक करे तथा समस्त गृहारम्भ का त्याग कर, कषाय और वासना को दूर करने

का प्रयत्न करे। रात्रि जागरण पूर्वक व्यतीत करे तथा "**ओं ह्रीं अर्हं श्रीपार्श्वनाथाय नमः**" इस मन्त्र का तीन बार एक सौ आठ बार जाप करना चाहिए। नौ वर्ष व्रत करने के उपरान्त उद्यापन करने का विधान है।

पहले वर्ष नव उपवास, दूसरे वर्ष नमक बिना माड़भात, तीसरे वर्ष नमक बिना दाल-भात, चौथे वर्ष बिना नमक खिचड़ी, पांचवें वर्ष बिना नमक रोटी, छठवें वर्ष बिना नमक दही-भात, सातवें और आठवें वर्ष बिना नमक मूंगकी दाल और रोटी तथा नौवें वर्ष एक बार का परोसा हुआ बिना नमक का भोजन करे। थाली में जूठन नहीं छोड़ना चाहिए। प्रथम रविवार और अन्तिम रविवार को प्रतिवर्ष उपवास करना चाहिए। व्रत के दिन नवधा भक्ति सहित मुनिराजों को भोजन कराना चाहिए।

रविव्रत का फल

सुतं वन्ध्या समाप्नोति दरिद्रो लभते धनम्।
मूढः श्रुतमवाप्नोति रोगी मुञ्चति व्याधितः॥

अर्थ :—रविवार का व्रत करने से बन्ध्या स्त्री पुत्र प्राप्त करती है, दरिद्री व्यक्ति धन प्राप्त करता है, मूर्ख व्यक्ति शास्त्र ज्ञान एवं रोगी व्यक्ति व्याधि से छुटकारा प्राप्त कर लेता है।

रविवार व्रत कथा

आषाढ शुक्ला के अंतिम रविवार को शुद्ध होकर जिन मंदिर जी में जावे, प्रदक्षिणापूर्वक भगवान को नमस्कार करे, पार्श्वनाथ भगवान व धरणेन्द्र पद्मावति की मूर्ति का पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर व यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकराय धरणेंद्र पद्मावती यक्षयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८

बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महा अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, दूसरे दिन सत्पात्रों को दान देवे, इस प्रकार नौ रविवार व्रत करे और नव वर्ष पर्यंत करे । पहले वर्ष में नौ उपवास

२ वर्ष में		अलूणा भोजन से एकासन वो भी आंवली भो०
३ वर्ष में		एकासन
४	,,	कांजीहार
५	,,	मठाभात
६	,,	एकासन
७	,,	गोरस छोड़कर भोजन
८	,,	घी छोड़कर भोजन
९	,,	एकाशन

दूसरी विधि इस प्रकार है:—लगातार प्रत्येक रविवार को उपवास या नमक रहित एकासन करे, सब मिलाकर ८१ रविवार करे ।

इस प्रकार व्रत पूरा होने के बाद अंत में उद्यापन करे, उस समय रविव्रत उद्यापन करे ।

श्री भाऊकवि अग्रवाल विरचित

श्री रविव्रत कथा

छन्द, चौपाई (१५ मात्रा)

ऋषभनाथ प्रणमउं जिणंद, जा प्रसाद चित्त होय अनन्द ।
प्रणमों अजित बिनासे पाप, दुख दारिद्र हरे सन्ताप ।।

सम्भवनाथ तनो थुति करों, जा प्रसाद दुस्तर भव तरौं ।
अभिनंदन सेऊं वर वीर, जा प्रसाद आरोग्य शरीर ।।

सुमतिदेव जिन पद्म सुपास, भूरि विनय करता कविदास ।
चन्द्रप्रभ जिन प्रणमों तोहि, हरो कलंक देहु जस मोहि ।।

सुविधि सुशीतल सेवा करों, धुनि श्रेयांस प्रभू मन धरों।
वासुपूज्य प्रणमों धर भाव, होय रिद्धि वैकुण्ठहि ठाव ।।
विमल अनंत धर्म जिन शान्ति, प्रणमों कुन्थु नमों बहुभांति।
अरह मल्लि मुनिसुव्रत देव, सुमिरत होय पाप को छेव ।।
बहुभांती नमि जिन प्रणमन्त, जा प्रसाद हो जग का अन्त।
रिष्टनेमि प्रणमों कर जोरि, जासें जन्म न होय बहोरि ।।
पार्श्वनाथ जप हिय में धरों, जन्म न पास कर्म के परों।
वर्धमान पूजों मन लाय, बाढ़े धर्म पाप छय जाय ।।
जिनचौबीस करो श्रुति जाम, सब जिनेन्द्र को प्रणमों ताम।
जिन स्वामी पायो निर्वान, तिनको पुनि सुमरों धरि ध्यान ।।
शारद तनी सेव मन धरों, जा प्रसाद कविता उच्चरों।
मूरखतें पढ़ि पण्डित होइ, ता कारण सेवे सब कोइ ।।
छह दरसन मुखमण्डन सार, गरे परे गज मोतिन हार।
मुकुटतिलकसिर सोवनसिरी, कानन कुण्डल रतनन जरी ।।
शीश मांग मोती झलमलें, चालत नेवर रुणझुण करें।
हंस चढ़ी कर वीणा लेय, सुमरत बुद्धि महाफल देय ।।
शारद नमन करों बहु भाय, पुनि पुनि लागों गुरु के पाय।
जैसे कहि समुझे सब जान, तैसी भाषा करों बखान ।।
पढ़त सुनत चित होय अनन्द, बाढ़े जस जिमि पूरचंद।
गुणिजन होय सुनें दे कान, सरस कथाको करो बखान ।।

कथा प्रारम्भ

पुर वाराणसि पूरब देश, करे राज महिपाल नरेश।
बाकी महिमा को कवि कहे, पढ़त सुनत को उअन्त न लहे ।।
नगर धनी निवसे सब लोग, भोगें नानाभोग मनोग।
मतिसागर कोटिध्वज साह, आदर करे बहुत नरनाह ।।

बनजे हीरा माणिक लाल, बेचें मोति सुरङ्ग रसाल ।
कसे कसौटी परखे दाम, आदर बहुत राय के ताम ।।

देव पूजि नित भोजन करे, राग द्वेष नहिं मन में धरे ।
बहुत कुटुम्ब बहुत परिवार, खरचे दाम राजसो धार ।।

विधि सों दान सुपात्रहिं देय, दशलक्षण को धर्म करेह ।
जीवदया पाले बहु भाय, ताकी उपमा दीजे काय ।।

कहे मुनिश्वर सुन हो राय, पाप करत नर नरकें जाय ।
दुख देखे निन्दे संसार, महामोह मन धरे गँवार ।।
पापलीन जाको मन होइ, ताकी बात न पूछे कोइ ।
मूरख पाप करे बहु भाइ, अंतकाल गति नीची जाइ ।।
धर्म ये कि धन होइ अपार, धर्म एक तारे संसार ।
मन दे धर्म करे जो कोइ, मुक्ति अङ्गना पावे सोइ ।।
सब विचार मुनिकह्यो बुझाइ, सुनि राजा पहुंचो घर आइ ।
वंदन जे नर-नारी गये, कोइ आये कोई रह गये ।।
साहुनि मतिसागर घर तनी, तिनहुं बात पूछी आपनी ।
स्वामी यह संसार असार, भटकत जीव न पावे पार ।।
आवत जात बहुत दुख सहे, योनीसंकट फिर-फिर लहे ।
जीवत मूढ़ न चेते आप, मुये होय यमपुर संताप ।।
आय काल का दिन संग्रहे, राय नीर नैननितें बहे ।
बात पित्त दुख संकट मरण, ता दिन नाहीं कोई शरण ।।
बाढ्यो धर्म पाप छय गयो, स्वामी तुम्हरो दर्शन भयो ।
ऐसो वृष उपदेशहु मोहि, नासे कर्म परमपद होहि ।।

मुनीश्वर का उत्तर

दोहा—जो जिन पूजे भाव धर, दान सुपात्रहिं देहि ।
सो नर पावे परमपद, मुक्ति सिरीफल लेहि ।।

चौपाई

पुत्री सुनहु सर्व व्योहार, कहों सुवृष धन होय अपार।
धर्म-धुजा गुण सुन्दरी, वासर रमण करे बहुररी।।
ऐसी जुगत बहुत दिन गये, सात पुत्र ताके घर भये।।
रूपवंत बहु तेज अपार, दिन-दिन बाढ़े साहुकुमार।
मात पिता की आज्ञा लेहिं, भूले मारग पांव न देहिं।।
ज्यों ज्यों बढ़े सयाने भये, छहों पुत्र साहू परिणये।
लुहरो गुणधर बुद्धि विशाल, घालो पठन गयो चटशाल।।
पढ्यो संस्कृत प्राकृत दान, व्याकरणादिक ग्रंथ महान।
पढ्यो श्रावकाचार विचार, ज्योतिष सामुद्रिक सुखकार।।
अस्त्र-शस्त्र विद्या रणधीर, सब सीखी गुणधर वरवीर।
अधिक बात को कहे बढ़ाय, पढ़ि गुरु चरणपूजि घर आय।।
धाय पिता गोदी भरि लियो, जननी आय सीस चुंबियो।
आगे और कथांतर होय, मन धर भाव सुनिजे सोय।।
जो यह धर्म सुने धरि भाव, होइ सिद्ध स्वर्गों में ठांव।
जो मिथ्यामति निन्दा करे, नरक घोर सो निहचै परे।।
सहसकूट चैत्यालय जहां, महा मुनीश्वर बैठे तहां।
सुन नरेन्द्र मन भयो उछाव, वेगें कियो निशाने घाव।।
नगर लोग सब वंदन गयो, सहपिरवार गमन तिन कियो।
चलत चलत सो पहुँचे तहां, महामुनीश्वर बैठे जहां।।
बंदे चरण धरो मन भाव, पाप धर्म सब पूछो राव।
पाप करत जैसा फल होय, धर्म करत फल लाहे सोय।।
स्वामी कहो सर्व आचार, जैसो जीव तनो व्यवहार।
शिवपुरजात भीति जिन करो, पार्श्वनाथ स्वामी मन धरो।।
सुदि अषाढ़ जब रविदिनहोय, संजम शील अराधो सोय।
नीर धार ढारो जिनराय, पात्रहिं दीजे दान बुलाय।।

बरस बरस में नौ नौ बार, नों बरसें कीजे इकसार ।
अथवा एक बरस मन लाय, बारह मास करे जो ध्याय ।।
थानइकासीग्रब [१] बीजौर, बिम्बा सरस सदाफल और ।
साधि सकल चूनी फल करो, पार्श्वनाथ स्वामी मन धरो ।।
इतने फल ऐसी विधि जान, नरघर देहुसरावग [२] मान ।
हर हर बरस करो यह जोग, दुख दारिद्र न व्यापे रोग ।।
सुनि साहुन मन गहगही भई, नमस्कारकरि पुनि घर गई ।
ताने परिजन लियो बुलाय, मुनि के वचन कहे समुझाय ।।
सुनी बात साहुनि पै जाम, परिजन बात विसारी ताम ।
यह तो चून तनो फल ग्राइ, निंदो रविव्रत चित न सुहाय ।।

मुनीश्वर का उत्तर

दोहा—पोतें कर्म पड्यो घनो, सुख में दुख भयो आय ।
मतिसागर की लक्ष्मी, विहूँडी छिन में जाय ।।

चौपाई

गई लक्ष्मी भयो सन्देह, चित्तवन साहु आप मन एह ।
देसन फिरत बहुत दुख भयो, सो धन देखत ही सब गयो ।।

गये पटोले दक्खिन चीर, गये अँगरजे वास गहीर ।
सोनो रूपो गयो कपूर, बिहुँडो लाल चुनी को चूर ।।

अरथ दरब बिहुँड़े भण्डार, साहुनि को गजमोतिन हार ।
रतन जड़ित बिहुँड़े तोरण, बिहुँड़े कर कंकन आभरण ।।

बिहुँड़े थार तमोर कचोर, बिहुँड़े कज्जल कुंकुम रोर ।
बिहुँड़े पान फूल के भोग, बिहुंसे रस षोड़श संयोग ।।

सूनी बङ्ग तुरँग की सार, गये ते चंदन वास अपार ।
दासी दास बिहुँड़ सब गये, कौन पाप तें ये फल भये ।।

कै मैं दियो कुपात्रहिं दान, कै जिनवर को धरो न ध्यान ।
कै मैं करी न गुरु की सेव, कै मैं अपमान्यो जिनदेव ।।
कै मैं खोटो इच्छा करी, कै मैं पूज कुदेवहिं करी ।
कै मैं पाप पुण्य न विचार, कै मैं मारे प्राणी रिसधार ।।

कै विष मेल खवाई खीर, कै अनछान्यो पीयो नीर ।
कंदमूल कै भखे अघाइ, कै जिनभक्ति न चित्त सुहाइ ।।

ऐसे कहि मन में पछिताय, तब गुणधर राखो समुझाय ।
दुख मतकरहु तात सुनिमोहि, राजा रंक करम तें होंहि ।।

कर्महिं राम दशानन हन्यो, लंका राज्य विभीषण दियो ।
सिया मिलाई दल संहार, कर्मयोग दीनो सुनिकार ।।
राय यशोधरजी अति बली, अमृत देवी तिस सुन्दरो ।
तिन कुबड़ोरमियो धरिभाव, विष लाडु दे मार्यो राव ।।

पूरब भव को संगम भयो, प्रदुमन धूमकेतु ले गयो ।
चांपिशिलातल धर्यो शरीर, कर्म भुंजि निकसो वरवीर ।।
कौरव पांडव कीन्हो रार, जिनकी सेना को नहिं पार ।
दुसह कर्म तें विग्रह भयो, दल छोहिणी अठारह गयो ।।

बहुत भांति समुझायो साव, बैठि मतौ जिन कियो उछाव ।
जननी पिता रहें इस देश, पेट भरन हम जांहि विदेश ।।
चलत सीख दीनी तिन योग्य, सुखकारी अरु महा मनोग्य ।
पूंजी काढ़ सुबानिज करो, आमद खार मूल विवहरो ।।
प्यारे बोल बोल जस लेहु, नित्ययोग कुछ धरम करेहु ।
वैरी मित्र गिनो इकसार, सांचो भरियो साख कुमार ।।

जबदिन फिरें कुंवर तुमतने, तब फिर आवहु घर आपने ।
सजन मित्र प्रीतम परिवार, बढ़ें लछिम धन होय अपार ।।

पाखण्डी जोगी ठग चाल, दयाहीन अरु मर्म चण्डाल।
करें पहाड़ घाट में वास, करो भूलिमति तिन विश्वास॥
जार चोर विसनी परधनी, वेश्या दासी और कुट्टनी।
ये शुभ सीख हिये में धरो, इनकी भूल न संगति करो॥
सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान, अरु सम्यक्चारित्र बखान।
तीनों रतन धरो मन लाय, ताको सेव करें सुरराय॥

दोहा

भाषा बोलो सत्य कर, तो सुपुरुष तनु सार।
जननी प्यारे चिराघर, सज्जन मितु परिवार॥

चौपाई

करियो मेरे वचन सँभाल, जननी पिता न आवे गाल।
दुख सुख दिवस आपने भरो, सातों विसन वीर परिहरो॥
दही दूध सिर लाइ चढ़ाइ, जननि असीस दई बहु भाइ।
चलत शकुन सब नीके भये, गांठि बांधि औधापुर गये॥
जहां सेठ जिनदत्त सुजान, राखे षड्दर्शन को ज्ञान।
रूपवंत गुण लच्छन भार, गुण बरनो तो होइ अवार॥
हाथ जोरि यों कहे कुमार, सुन जश आय तुम्हारे द्वार।
करो कृपा गहि लीजे बांह, गये दिवस पावें तुम छांह॥
पूछे साहु करो सतभाव, को कुल कौन तुम्हारो ठांव।
कौन काज इत आये भ्रात, करो वीर तुम सांची बात॥
तब गुणधर बोलो सतभाव, बणिक सुपुत्र बनारस ठांव।
जैसे कर्म उदय भये आय, सब विरतन्त कह्यो समुझाय॥
दयाभाव वाके उर भयो, आदर करि भीतर ले गयो।
पूंजी दइ वाणिज के जोग, करि सहाय और हू योग॥

इतनी कथा रही इस ठांहिं, करि करसन जे पेट भरांहि।
बहुरि कथा गई सो तहां, रहे साहु मतिसागर जहां।।
पीछे इन दुख बहुतै कियो, अवधिज्ञानी मुनि बंदियो।
नारि पुरुष दोउ सिर नाय, भावभगति करि लागे पांय।।
स्वामी कहहु सबै निरदोष, कौन कर्म तें लागो दोष।
सुतनविछोह कर्म किनकियो, सब धन कौन कर्म तें गयो।।
अजहूं मासों कहो सुभाई, बहुरि सुपुत्र मिले जो आई।
अवधिज्ञान मुनि बोलत भयो, बात भेद सब तासों कह्यो।।
करहु न चिन्ता सुतसुख होंहि, बहुत लाभसो मिलसी तोहि।
पारसनाथ रविव्रत निन्दयो, सुतन विछोह कर्म इन कियो।।
अब संयम व्रत धरहु दिढाई, एकचित्त कीजे मन लाई।
बढ़ै लक्षिम होवे यश कोष, अशुभकर्म को भागे दोष।।
सुनि मुनिवचन भयो आनन्द, दासभाव सेयो जिनचन्द।
अतुल लक्षिम ताके घर भई, बहुरिकथा सु अवधपुर गई।।
इकदिन गुणधर भूखो भयो, हँसत हँसत भावज पै गयो।
ता क्षण भावज कही रिसाय, भोजन देहों घास लिआय।।
लागो बोल कुंवर गयो तहां, वन उद्यान घास था जहां।
दुख सुख काटि मूंडपै लियो, हँसिया भूलि कुंवरघर गयो।।
ताछिन भावज उठी रिसाय, हंसिया वेगि लिआवहु जाय।
जब तुम हंसिया देहो मोहि, तबही भोजन दूंगी तोहि।।
ऐसे वचन सुने वरवीर, उठे रोम थरहरो शरीर।
तिन मनमें दुख धरो अपार, बिन प्रभुता धिक है संसार।।
धुनतो सीस बहुरि सो गयो, तो लगि दात्र बैठि अहि रहो।
तब गुणधर बोलो अकुलाय, नमस्कार कर लागो पाय।।

देहु दाम मत लावहु बार, कं डस देव करो मुहि छार।
अब जो दाम छोड़ घर जाहुं, तो हों उत्तर कहां कराहुं ।।
विसमौ साहु तने घर होय, बेंचो दाम कहे सब कोय।
जब दिन बुरे परत हैं आय, गुण करते अवगुण हो जाय।
नशै बुद्धि होवे तन छीन, कहिवे पुरीपुरुष धनहीन ।।
धनबिन सेवक सेव न करे, धनबिन पुरुष नारि परिहरे।
धनबिन मान महत क्यों होय, महा कुपूत कहे सब कोय ।।
धनबिन परघर काम कराय, धनबिन भोजन रूखे खाय।
धनबिन चिन्ता द्युति हर लेय, धनबिन दान न शोभा देय ।।
धनबिन पायन चले नरेश, धनबिन नर भटके परदेश।
धनबिन धरणि न लागे पाय, धनबिन बन्धु न करे सहाय ।।
धनबिन जीवन विफल कहाय, धनबिन काढि परायो खाय।
धनबिन बात न पूछे कोय, धनबिन एको काज न होय ।।
जान्यो कुंवर खरो दुख भरो, शेषराय को आसन टरो।
पद्मावति सों कह्यो बुलाय, बालक को दुःख भंजो जाय ।।
वाको पिता पूज नित करे, पार्श्वनाथ स्वामी मन धरे।
अब याको तुम होहु सहाइ, निधि देवो बालकहिं बुलाय ।।
पद्मावति मन हर्षित भई, देव पंच कल्याणक ठई।
पंच पदारथ मोतिन हार, स्वर्णदाम सोने को थार ।।
निधि लै पुनि वह पहुंची तहां, वन में कुंवर अकेलो जहां।
बैठो देख बुला जो लियो, दोनो निधि बहु आनन्द कियो ।।
विलसहु वत्स शङ्क निजहरो, पार्श्वनाथ स्वामी मन धरो।
जब रवि दिवस परे शुभआय, ध्यावहुपार्श्व चित्त विलसाय ।।
अपने मन मत धारो शंक, लेहु कुंवर घर जाहु निशंक।
जा प्रसाद भाजे सन्देह, ता प्रसाद फल पायो येह ।।

जा प्रसाद भव दुस्तर तरो, व्रत की निन्दा बहुरि न करो।
मानुष जन्म जु विरलो पाय, श्रावक कुल उत्तम कुइ पाय ।।
बारम्बार मिले नहिं आय, फणिपति कहै विसर जिन जाय।
धर्म अहिंसा मन विस्तरो, पैंतिस अक्षर मन में धरो ।।
अन्तकाल ये होय सहाय, होइ सिद्धि स्वर्गों में ठांय।
मन अपनो थिर राखो शांत, लेहु सकल निधि जाहु तुरन्त ।।
बहुत सीख पद्मावति दई, पुनि अपने अस्थानै गई।
आनन्द अधिक कुंवर मन भयो, हँसत हँसत सो घर को गयो ।।
निधि दीनी बांधव बुलवाय, देखत सर्व विकल भयो आय।
मूसि राव को मंदिर लियो, कहा उपाय कुंवर तुम कियो ।।
निश्चय जाय आज निज लाज, नई उपाधि करी इन आज।
जोरि अभागो खेती करे, बैल मरै कै सूखा परे ।।
गुणधर दोष नहीं तुम तनो, यह लहणो लाभै आपनो।
औरहु चिन्तत औरहु होय, कर्मलिखित नहिं मेटत कोय ।।
मूद्यो हियो न आवे सांस, थाक्यो बोल पसीजो गात।
नैनन नीर बहै असरार, जिमि घन बरसै मूसलधार ।।
तब गुणधर बोले सतभाव, तात न कछू करो विसमाव।
शेषराय मोकों दे गयो, करो न चिन्ता इमि कहगयो ।।
इतनो सुनत उठे विसमाय, सबै कुंवर तें लिपटे धाय।
करके प्यार कहै बड़वीर, धन धन गुणधर साहसधीर ।।
नेम धरम संजम आचार, तो सम पुरुष नहीं संसार।
तो प्रसाद दुख दारिद गयो, कुलमण्डन बालक तू जयो ।।
बहुत सराहत होय अबार, सबमिल करें कुंवर की स्वार।
खरचें खावें सुख व्योहरें, पार्श्वनाथ जप हिय में धरे ।।

ऐसी विधि मास इक गयो, तब जिन तनों भवन संठयो।
भले भले कारीगर लाय, चौड़ी नींव दयी भरवाय ।।
फटिकजड़ित उतुङ्ग आवास, स्वर्गपुरी सम इन्द्रनिवास।
कनक-खम्भ लागे चौकोर, कियो चतेरन बहुत चतेर ।।
आड़ो सिर रत्ननको दियो, ताकी जोति भानु लोपियो।
सात पौर राखी इक सार, सोने सांकर जड़े किवार ।।
रहे कंगूरे ऐसी भांत, देखत जिनके भूख बुझात।
वेदीमध्य बनी चौखूट, अवर छत्र जो अधिक अनूप ।।
छज्जे अब राखे इक सार, मोती झालर बन्दन वार।
ध्वजा पताका उड़े उतङ्ग, धौरागिरि पर्वत के रंग ।।
सात दिवस में पूरी सोय, सुर नर देख अचम्भो होय।
पुनि चौबीसो बिम्ब कराय, भई प्रतिष्ठा लागे पांय ।।
देश देश के श्रावक लोग, चल आये वन्दन जिन योग।
जिनको सुभग रची ज्योंनार, वस्तु कहां लों बरनों सार ।।
संघ पूजि कर दीनो दान, घर घर सम दे राखो मान।
चुगल एक राजा पै गयो, कान लागि ऐसी कहि गयो ।।
सुनो गुसांई अखराचार, तुमरे नगर तनो व्यंहार।
पेट भरन जे मानव आंय, यों वैभव तिन कैसे पाय ।।
जाति बानियों सुनहु नरिन्द, खरचौ धन यश भौ तिहुखंड।
इतनी बात सुनो जब राय, कोतवाल तब लियो बुलाय ।।
जाहु बोर जिन देर लगाहु, परदेशी कों वेगि लिआहु।
ले आयसु सो पहुँचो तहां, मतिसागर के सुत थे जहां ।।
तिहिसों बात कही समुझाय, वेगें चलो बुलावें राय।
तासु वचन सुनि ठाढ़े भये, सातों वोर नृपति पै गये ।।
कारन जान सके ना भेव, मन में जपत चले जिनदेव।
जब बालक देखे भूपाल, मन आनन्द भयो तिहिकाल ।।

पूरी सभा रही सो मोहि, रूपवन्त नर आये कोहि ।
आदर कर तिन लियो बुलाय, सिंहासन बैठारे राय ।
दे ताम्बूल कहे गुणधीर, कछु चिन्ता मत करहु शरीर ।
तुमको यातें लियो बुलाई, मेरे मन विकल्प भयो आइ ।।
कैसे धन पायो तुम येह, ज्यों भाजे मेरो सन्देह ।
धर्म फलाफल सुनो विचार, जय जयकार करे भूपार ।
धनधन पिता धन्य तुम माइ, जाकी कूंख जने तुम आइ ।।
धन तू वंश धन्य कुल होहि, अब तुम वत्स क्षमाकर मोहि ।
बोले गुणधर सुन हो राय, भले दिवस हम नगरी आय ।।
प्राण काढ़ि तुमको रिन देहिं, तऊ न ऊरनि तुम तें होंहि ।
इतनी सुन आनन्दो राव, तुष्ट कुंवर का कियो पसाव ।।
हुती सुता बहु गुणसंयुक्त, दीनी गुणधर जोग तुरन्त ।
तासु रूप को सके विचार, सत्य शील सीता उनहार ।।
लछन बत्तीस लिलार दिपंत, मधुर लचन कोंकिल के भंत ।
टीका कर घर दियो पठाय, वेग विप्र तिन लियो बुलाय ।।
लिखीलनगु शुभदिनसोधियो, मंगलाचार सुता को कियो ।
पञ्च सबद बाजे धुनाकार, बुधजन मन्त्र पढ़े झनकार ।।
तबल निशान भेरि धुनि भई, दासी एक सुता पै गई ।
स्वामिनिसुन अब धारो पांव, नृप ने रचो तुम्हारो ब्याय ।।
मनको चिन्तो कारज भयो, रूपवंत गुणधर वर लयो ।
चित आह्लादी राजकुमारि, सुवरण सांकल दई उतारि ।।
वचन तिहारो मोकों होहि, दासी बहुतक दूंगी तोहि ।
चँवरी मण्डप धरी उठानि, कनककलशचौखूटहि ठानि ।।
रहस रसीलो बीतो ब्याह, बहु भण्डार दियो नरनाह ।
चमर छत्र दीनों भण्डार, दिये सिंहासन मोतिनहार ।।

बहुत भांति दीनों मून्दड़ो, रतन पदारथ मोती जड़ो।
षोडश बरस तनी सो बाल, दीनी दासी नयन सुतार ।।

कुंकुम केसर करिहिं भराय, बहुत दये आभरण चढ़ाय।
हय गज पट्टन दीने ठान, तिन सबको को करे बखान ।।

मोती माणिक थाल भराय, हीरा पन्ना लाल सहाय।
जेतो कछु दीन्यो नृपराय, ना सब मो पै बरनों जाय ।।

करि ज्योनार दिवाये पान, सब प्रकार तें राखो मान।
पौढ़े गुणधर कनक अवास, नितप्रति भोगे भोग विलास।
रहत बहुत दिन बीते जाम, राजासों यों विनवै ताम ।।

अब तुम पिता एक जस लेहु, हमको विदा कृपा करि देहु।
ऐसी जम्पे बारम्बार, अब हम जाय मिलें परिवार ।।

राजा तिन्हें विचारे भाव, हठ राखे उपजे विसभाव।
उठकें कुंवर गोद में लये, भाँतिन भांति पदारथ दये ।।

भेंट सुता भरि आये नैन, लागे राय बहुत सिख दैन।
सास ननद सेवा चित धरो, आज्ञाभंग भूलि जिन करो ।।

यही सीख में देऊँ तोहि चलियो ज्यों कुलगारिनहोहि।
कोस एकलों राव सु अयो, दल चतुरंग साज सब लयो ।।

तबल निशान ढोल बाजियो, अति उछाह बाराणसि गयो।
कण्ठ लगाय सजन भेंटियो, सफल जनम मन में लेखियो ।।

मात पिता के बन्दे पांय बहुत भावसों भक्ति कराय।
भयो आनन्द नगर में जिसो, अवध प्रवेश राम है जिसो ।।

दोहा—अशुभ कर्मफल भोग करि, मिलो कुटुम्बहिं जाय।
धन परिग्रह बाढ्यो घनो, पार्श्वजिनेन्द्र सहाय ।।

चौपाई

पार्श्वनाथ–रविव्रत सार, सेवत नवनिधि होंइ अपार।
नारि पुरुष जो मन बच करें, सकल आपदा छिन में हरें।।

बहुप्रकार जो संकट सहे, कुष्ट व्याधि से पीडित रहे।
सो सुमरे श्री पार्श्वजिनेन्द्र, सब प्रकार पावे आनन्द।।

पुत्र कलत्र विहूंड़ो होय, बहुरि बांझ जो नारी होय।
मन दे रविव्रत पाले सोय, पारसनाथ सहाई होय।।

छलो मन्दमति विद्याहीन, जे नर सुमरें चक्षु–विहीन।
चलत विदेश नाम जो लेंहि, ताको पार्श्वनाथ फल देंहि।।

पुण्यकथा यह पूरन भई, भविजन को सुखदाई कही।
भविपंकज विकसावन भान, समदर्शी सर्वज्ञ सुजान।।

मोहमल्ल जिनने वश कियो, रागद्वेषतजि संयम लियो।
अजर अमर निर्भय ह्वै रह्यो, सो जिनदेव सभी को जयो।।

देय दृष्टि में रचो पुरान, उठी बुद्धि में किया बखान।
हीन अधिक जो अक्षर होंय, बहुरि संवारो गुणधर लोय।।

अग्रवाल तिन कियो बखान, मूढ़ा जननी तियरण थान।
गरग गोत मल्ल को पूत, 'भाऊ' कवि सुभक्ति संजूत।।

कर्मक्षय कारण मति भई, तब यह धर्मकथा वरनई।
मन धरि 'भाउ' सुने जो कोय, सो नर स्वर्ग–देवता होय।।

।। इति रविव्रत कथा समाप्त ।।

अथ रौद्रध्याननिवारण व्रतकथा

व्रत विधि :—पहले के समान करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृष्णा १२ के दिन एकाशन करे। १३ के दिन उपवास व पूजा आराधना मंत्र जाप आदि करे। पत्ते मांडें।

रत्नशोक व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल तृतीया के दिन शुद्ध होकर मंदिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, रत्नत्रय मूर्ति का पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, गणधर की पूजा करे, शास्त्र व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणि की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर मल्लि मुनिसुव्रत तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्योनमः स्वाहा ।

इस मंत्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मंत्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में अर्घ्य लेकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, तीन प्रकार का नैवेद्य चढ़ावे, तीन मुनिराज को दान देवे, स्वयं के भोजन में तीन वस्तु ही से एकासन करे । इस प्रकार से नव पूजा व्रत पूर्ण करके, इस व्रत को शुक्ल पक्ष व कृष्ण पक्ष की तृतीया को व्रत व पूजा करे । आषाढ़ की दो और श्रावण की दो, भाद्र की दो, आश्विन महिने की दो और आठ कार्तिक शु० तृतीया, इस प्रकार नौ तृतीया को व्रत करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय रत्नत्रय की मूर्ति बनाकर प्रतिष्ठा करवावे, ९ मुनि संघों को आहार-दानादि देवे ।

कथा

कनकपुर नाम के एक नगर में जयंधर नाम का राजा अपनी पृथ्वीदेवी नामक रानी के साथ सुख से राज्य करता था । पृथ्वीदेवी ने इस व्रत का पालन किया था, व्रत के प्रभाव से नागकुमार नामक पुण्यशाली पुत्र उत्पन्न हुआ, नागकुमार ने आगे जिनदीक्षा ग्रहण कर स्वर्ग और मोक्ष को प्राप्त किया ।

रामनवमी व्रत कथा

चैत्र शुक्ल पंचमी से नवमी तक प्रतिदिन जिनेन्द्र भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, जिनवाणी और गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं परमब्रह्मणे अनन्तज्ञान शक्तये अर्हंत्परमेष्ठिने नमः स्वाहा ।

इस मंत्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े, रामोकार मंत्र को १०८ बार जपे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में अर्घ्य लेकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य चढ़ा देवे, घर जाकर चतुर्विध संघ को दान देकर स्वयं पारणा करे, प्रतिदिन एकासन करे, पांचों ही दिन अणुव्रतों का पालन करते हुवे, धर्मध्यान से समय बितावे, अंतिम दिन में पंचामृताभिषक करके पंच पकवान चढ़ावे, पांचों दिन घी का अखण्ड दीप जलावे ।

इस व्रत को नव वर्ष करे, अथवा नव महिने करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय चंद्रप्रभु भगवान की प्रतिमा यक्षयक्षिणी सहित नवीन लाकर पंच कल्याणक प्रतिष्ठा करावे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में रत्नपुर नाम का नगर है, उस नगर में एक बार प्रजापति राजा अपनी गुणवती रानी के साथ सुख से राज्य करता था, उस राजा के चन्द्रशूल नाम का पुत्र था, और उस राजा का मन्त्री सुबुद्धि था, उसको भी एक पुत्र विजय नाम का था, एक समय आहार के लिए चारणऋधिधारी महामुनी राजमहल में पधारे, राजा ने नवधाभक्तिपूर्वक आहारदान दिया, आहार होने के बाद मुनिराज ने राजपुत्र को और मन्त्री पुत्र को रामनवमी व्रत दिया और मुनि-राज जंगल में तपस्या के लिए वापस चले गये । इधर दोनों ही व्रत को ग्रहण कर उन्मत्त हो गये और यौवन अवस्था में चूर होकर नगर की युवतियों का शील भ्रष्ट करने लगे ।

नगरवासी प्रजा की यह दशा देखकर राजा इन दोनों के ऊपर बड़ा रुष्ट हुआ और दोनों कुमारों को पकड़वाकर शिरच्छेद करवाने का आदेश दे दिया, सेवक लोग उन दोनों को जंगल में ले गये, तब रास्ते में एक गुफा मिली । उस गुफा में एक मुनिराज के दर्शन कर दोनों जने उपशम भाव को प्राप्त हो गये, और दोनों ही ने उनसे मुनिदीक्षा ग्रहण कर ली । राजा को यह समाचार प्राप्त होते ही, जंगल में

जाकर दोनों मुनिराजों से क्षमा मांगी और नमस्कार कर नगर में वापस लौट आया, वे दोनों मुनिराज तपश्चरण करके समाधिमरण पूर्वक मरकर स्वर्ग में देव हुये, वहाँ से चयकर वे दोनों राजा दशरथ के यहाँ राम लक्ष्मण होकर जन्मे । राम मुनि बनकर तपश्चरण करके मोक्ष को गये, लक्ष्मण आगे मोक्ष को जायेंगे । जो राजा था, उसने रामनवमी का व्रत पुत्रों के बदले स्वयं पालन किया, अंत में उद्यापन किया, अंत में दीक्षा ग्रहण कर मोक्ष को गया ।

रोहिणी व्रत करने की आवश्यकता

यथा शुक्लकृष्ण पक्षयो: पञ्चदशदिनेषु अष्टम्यां चतुर्दश्याञ्चोपवास: तथैव सौभाग्यनिमित्तं स्त्रिय: सप्तविंशतिनक्षत्रेषु रोहिण्याख्यनक्षत्रे उपवासं कुर्वन्ति ।।

अर्थ :—जिस प्रकार कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष के पन्द्रह-पन्द्रह दिनों में प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशी को उपवास किया जाता है, उसी प्रकार स्त्रियां अपने सौभाग्य की वृद्धि के लिए सत्ताईस नक्षत्रों में से रोहिणी नक्षत्र का उपवास करती हैं ।

रोहिणीव्रत का फल

रोहिणीव्रतोपवासस्य किं फलमिति चेत्तदुक्तं योगीन्द्र देवै:—

दीवइं दिण्णइं जिणवरहं मोहहु होइ ण ठाउ ।

अह उववासहिं रोहिणिहिं सोउ बिपलहु जाई ।।

[सावयधम्मदोहा १८८ दूहा, पृ० ५९ ।]

अर्थ :—रोहिणी व्रत के उपवास का क्या फल है ? आचार्य योगीन्द्रदेव ने फल बतलाते हुए कहा है—

जिनेन्द्र भगवान् को दीप चढ़ाने से मोह को स्थान नहीं मिलता अर्थात् मोह नष्ट हो जाता है तथा रोहिणी व्रत के उपवास से शोक भी प्रलय को पहुंच जाता है । अभिप्राय यह है कि रोहिणी व्रत करने से सभी प्रकार के शोक, दारिद्र्य आदि नष्ट हो जाते हैं ।

रोहिणी व्रत की व्यवस्था

तथा पद्मदेवैः प्रोक्तं चेति—

यस्मिन् दिने समायाति, रोहिणीभं मनोहरम् ।
तस्मिन् दिने व्रतं कार्यं न पूर्वस्मिन् परत्र वा ।।

अर्थ :—जिस दिन रोहिणी नक्षत्र हो उसी दिन व्रत करना चाहिए । आगे-पीछे व्रत करने का कुछ भी फल नहीं होता है । रोहिणी नक्षत्र व्रत प्रत्येक महीने में एक बार किया जाता है ।

यदा रोहिणी न स्यात् कृत्तिकामृगशीर्षौ स्तः तयोर्मध्ये किं करणीयं स्यादित्याह—काले यदि रोहिणीकायाः प्रोषधः न स्यात्, तदा स निष्फलः स्यात् कालेन विना यथा मेघः ।

वामदेवैः प्रोक्तमिदं यावत् कालं भं स्यात् तावत् कालं करोतु भव्रतकम्, न तु दैवसिकासु नियमः प्रोक्तः मुनीश्वरैः ; अर्थात् यावत् रोहिणी तावत् सर्वेषां त्यागः कार्यः । पारणादिने तदुत्तरानन्तरं च पारणा कर्त्तव्या । एतदेव शुक्लपञ्चमीकृष्णपञ्चमी जिनगुण सम्पत्ति ज्येष्ठ जिनवर कवलचान्द्रायणादयो ज्ञातव्याः । रोहिणी तु त्रिवर्षाः स्यात्, पञ्चवर्षा सप्तवर्षा च संप्रोक्ता वसुनन्द्यादिसूरिभिः ; आदि शब्देन सकलकीर्तिछत्रसेनसिंहनन्दिमल्लिषेण हरिषेण पद्मदेव वामदेवैः संप्रोक्ता ग्राह्याः । अन्येऽप्याधुनिका दामोदर देवेन्द्रकीर्त्ति हेमकीर्त्यादयश्च ज्ञेयाः ।

अर्थ :—यदि व्रत के दिन रोहिणी न हो अर्थात् रोहिणी नक्षत्र का क्षय हो कृत्तिका और मृगशीर्ष हों तो क्या करना चाहिए; इस प्रकार की शंका उत्पन्न होने पर आचार्य कहते हैं कि यदि समय पर रोहिणी व्रत का प्रोषध नहीं किया जायगा तो, उसका फल कुछ भी नहीं होगा । जिस प्रकार असमय पर वर्षा होने से उस वर्षा से कुछ भी लाभ नहीं होगा उसी प्रकार असमय में व्रत करने से कुछ भी लाभ नहीं होता है ।

वामदेव आचार्य ने भी कहा है कि जब रोहिणी नक्षत्र हो तभी व्रत करना चाहिए । आचार्यों ने दैवसिक व्रतों के लिए यह नियम नहीं बताया है । अर्थात् जिस

दिन रोहिणी हो उस दिन व्रत करना, अन्य नक्षत्रों में व्रत नहीं किया जाता है। रोहिणी के अनन्तर अर्थात् मृगशिर नक्षत्र में पारणा की जाती है। शुक्ल पञ्चमी, कृष्णपञ्चमी, जिन गुण सम्पत्ति, ज्येष्ठजिनवर, कवल चान्द्रायण आदि व्रतों को इसी प्रकार मासावधि समझना चाहिए।

रोहिणी व्रत तीन वर्ष, पांच वर्ष या सात वर्ष प्रमाण किया जाता है, ऐसा वसुनन्दी, सकलकीर्त्ति, छत्रसेन, सिंहनन्दि, मल्लिषेण, हरिषेण, पद्मदेव, वामदेव आदि आचार्यों ने कहा है। अन्य अर्वाचीन आचार्य दामोदर, देवेन्द्रकीर्त्ति, हेमकीर्त्ति आदि ने भी इसी बात को बतलाया है।

विवेचन :—रोहिणी व्रत प्रतिमास रोहिणी नामक नक्षत्र जिस दिन पड़ता है, उसी दिन किया जाता है। इस दिन चारों प्रकार के आहार का त्याग कर जिनालय में जाकर धर्मध्यानपूर्वक सोलह पहर व्यतीत करे अर्थात् सामायिक, स्वाध्याय, पूजन, अभिषेक में समय को लगाया जाता है। शक्त्यनुसार दान भी करने का विधान है। इस व्रत की अवधि साधारणतया ५ वर्ष पांच महीने की है, इसके पश्चात् उद्यापन कर देना चाहिए।

रोहिणी व्रत के समय का निश्चय करते हुए आचार्य ने कहा है कि यदि रोहिणी नक्षत्र किसी भी दिन पञ्चांग में एक-दो घटी भी हो तो भी व्रत उस दिन किया जा सकता है। जब रोहिणी नक्षत्र का अभाव हो तो गणित के हिसाब के कृत्तिकाकी समाप्ति होने पर रोहिणी के प्रारम्भ में व्रत करना चाहिए। मृगशिर अथवा कृत्तिकाको व्रत करना निषिद्ध है, इन नक्षत्रों में व्रत करने से व्रत निष्फल हो जाता है। जब तक सूर्योदय काल में रोहिणी नक्षत्र मिले तब तक अस्तकालीन रोहिणी नक्षत्र नहीं ग्रहण करना चाहिए। यद्यपि आगे आचार्य छः घटी प्रमाण ही नक्षत्र ग्रहण करने के लिए विधान करेंगे, पर छः घटी के अभाव में एक दो घटी प्रमाण भी उदयकालीन रोहिणी ग्रहण किया जा सकता है।

रोहिणी व्रत की अन्य व्यवस्था

तथान्यैः प्रोक्तं रोहिण्यां दशलक्षण रत्नत्रयषोडशकारण–व्रतवत् रसघटिका प्रमाणं ग्राह्यामिति अन्यत् देवनन्दिमुनिभिः प्रोक्तं यत् दिवसे क्षीणे नियमस्तुते कार्याः,

दिवसे तस्मिन्नेव हि चतुष्टयोपलम्भात् । ते के इति चेदाह—निर्वाण कार्तिकोत्सव मालोत्सव धूपोत्सव यात्रोत्सव वस्तूत्सवा: । चतुष्टयं किमिति चेदाह–द्रव्यकाल क्षेत्र भावाख्यमिति श्रुत सागरै: प्रोक्तं, अन्यै रपि चोक्तं तद्यथा —

आदि मध्यावसानेषु हीयते तिथिरुत्तमा ।
आदौ व्रत विधि: कार्य: प्रोक्तं श्रीमुनिपुङ्गवै: ।।
आदि मध्यान्तभेदेषु व्रत विधिर्विधीयते ।
तिथि ह्रासे तदुक्तञ्च गौतमादिगणेश्वरै: ।।

अर्थ :—अन्य आचार्यों ने भी कहा है कि रोहिणी नक्षत्र का प्रमाण दशलक्षण, रत्नत्रय, षोडशकारण व्रत के समान छः घटी प्रमाण ग्रहण करना चाहिए । देवनन्दि आचार्य ने और भी कहा कि दिन हानि होने पर–रोहिणी नक्षत्र का अभाव होने पर उसी दिन व्रत, नियम करना चाहिए, क्योंकि पूर्वाचार्यों के वचनों में व्रत तिथि का निर्णय करते समय चतुष्टय शब्द की उपलब्धि होती है । निर्वाण, द्वीपमालिका उत्सव, धूपोत्सव, यात्रोत्सव, वस्तु-उत्सव आदि व्रतों के निर्णय में भी आचार्य ने चतुष्टय शब्द का व्यवहार किया है । श्रुतसागर आचार्य ने चतुष्टय शब्द का अर्थ द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव लिया है, अन्य आचार्यों ने भी व्रत व्यवस्था के लिए कहा है—

यदि व्रत के दिनों में आदि, मध्य और अन्त के दिनों में कोई तिथि घट जाय, तो एक दिन पहले व्रत करना चाहिए । ऐसा श्रेष्ठ मुनियों ने कहा है । तिथि ह्रास होने पर आदि, मध्य, और अन्त भेदों में व्रत विधि की जाती है अर्थात् तिथि-ह्रास होने पर एक दिन पहले व्रत किया जाता है । इस प्रकार गौतम आदि श्रेष्ठ आचार्यों ने कहा है ।

विवेचन :— रोहिणी-व्रत के दिन रोहिणी नक्षत्र छः घटी प्रमाण से अल्प हो तो भी देश, काल आदि के भेद से आचार्यों ने व्रत करने का विधान किया है, अतः रोहिणी-व्रत करना चाहिए । रोहिणी व्रत के लिए एक-दो घटी प्रमाण नक्षत्र को भी उदयकाल में ग्रहण किया गया है । कुछ आचार्यों का यह मत है कि रोहिणी नक्षत्र को क्षीण होने पर भी व्रत उसी दिन करना है अर्थात् कृत्तिकाके उपरान्त और मृग-

शिरा के पूर्व का जितना समय है, वही व्रत–काल है । रोहिणी व्रत यों तो ऐश्वर्य, सुख आदि की वृद्धि के लिए स्त्री-पुरुष दोनों ही करते हैं, पर विशेषतः इस व्रत को स्त्रियां करती हैं । इस व्रत के करने से स्त्रियों को सौभाग्य, सन्तान, ऐश्वर्य, स्वास्थ्य आदि अनेक फलों की प्राप्ति होती है । इस व्रत में उपवास के दिन तीनों समय '**ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः**' मन्त्र का जाप करना चाहिए ।

जिनको उपवास करने की शक्ति न हो वे संयम ग्रहण कर अल्पभोजन करें, या कांजी अथवा मांड-भात लें । व्रत के दिन पञ्चाणु व्रतों का पालन करना, कषाय और विकथाओं को छोड़ना आवश्यक है । मृगशिर नक्षत्र में पारणा करना एवं कृत्तिका में व्रत की धारणा करने से व्रत विधि पूर्ण मानी जाती है ।

अत्राप्य यामस्तमुपैति सूर्यस्तिथि मुहूर्त्तत्रयवाहिनी च ।
धर्मेषु कार्येषु वदन्ति पूर्णां तिथि व्रतज्ञानधरा मुनीशाः ।।

इति चामुण्डरायवाक्यं तथा च तत् पुराणेप्येवमुक्तम् व्रतानां दिनेशाः दिनेशं प्रहीणे किलादौ च मध्येऽवसाने तथैव । तथा मुख्यघस्त्रं ग्रहीत्वा प्रकार्यं विधानं व्रतानां समुक्तं मुनीशैः ।।

आदितः दिनक्षयेषु प्रथममेवमाचरेत् मध्यतः दिनक्षयेषु प्रथममेवमाचरेत्; अन्ततः दिनक्षयेषु अयं विधिः न विधीयते । उक्तं च—

तिथीनां क्षये द्वित्रितुर्यादिकानां
न वै तदव्रतानां तिथिश्चेत्प्रयाति ।
दिनेकेऽवशिष्टे व्रतं कार्यमादौ
गृहीत्वा दिनं तत्प्रपूर्णां विधि च ।।१।।

तिथीनां सुवृद्धौ द्वितुर्यादिकानां
व्रतानां दिनेष्वेव कार्यं विधानम् ।
यदा कोऽपि मर्त्यो सरोगः सदुःखः
तदा तेषु कार्यं विधान बुधोक्तम् ।।२।।

इति चामुण्डरायपुराणे रोहिण्योत्सवनिर्वाणकार्त्तिकाभिषेकोत्सवे यात्रोत्सवे वस्तुत्सवे च विधानम् ।।

अर्थ :—जिस तीन मुहूर्त्त वाली तिथि को प्राप्त कर सूर्य अस्त होता है, उस तिथि को व्रत के ज्ञाता धर्मादि कार्यों में पूर्ण मानते हैं। इस प्रकार चामुण्डराय ने कहा है, चामुण्डरायपुराण में और भी कहा गया है—

व्रतों के दिनों में आदि, मध्य या अन्त में तिथि का ह्रास हो तो मुख्य दिन को लेकर व्रत विधान करना चाहिए। इस प्रकार श्रेष्ठ आचार्यों ने कहा है।

आदि में तिथि–क्षय हो या मध्य में तिथि–क्षय हो तो एक दिन पहले व्रत करना चाहिए। अन्त में तिथि–क्षय होने पर यह विधि नहीं की जाती है। कहा भी है—

दो–तीन या चार दिन के व्रतों में किसी तिथि के क्षय होने पर, पूर्व दिन से व्रत करने चाहिए तथा पूर्व दिन से ही व्रत विधि सम्पन्न की जाती है।

यदि दो–तीन या चार दिन के व्रतों में किसी तिथि की वृद्धि हो जाय तो, व्रत संख्यक दिनों में ही व्रत विधि पूर्ण करनी चाहिए। परन्तु आचार्यों ने यह विधान किसी रोगी, दुःखी व्यक्ति के लिए किया है। स्वस्थ और सुखी व्यक्ति को तिथि वृद्धि होने पर एक दिन अधिक व्रत करना चाहिए।

इस प्रकार चामुण्डरायपुराणमें रोहिणी–उत्सव, निर्वाण–कार्त्तिक उत्सव, यात्रा–उत्सव, वस्तु–उत्सव आदि के लिए विधान किया है।

विवेचन :—रोहिणी व्रत के लिए उदयकाल में रोहिणी नक्षत्र छः घटी अथवा इससे अल्प प्रमाण भी हो तो उसी दिन रोहिणी व्रत करना चाहिए। यदि उदयकाल में रोहिणी नक्षत्र का अभाव हो तो एक दिन पहले व्रत किया जायेगा। यों तो सभी व्रतों के लिए यही नियम है कि तिथि क्षय में एक दिन पूर्व से व्रत किया जाता है और तिथि–वृद्धि में एक दिन अधिक व्रत करने का विधान है। चामुण्डरायपुराण के अनुसार रोगी, वृद्ध और असमर्थ व्यक्तियों को तिथि वृद्धि होने पर नियत दिन प्रमाण ही व्रत करना चाहिए। रोहिणी व्रत सिर्फ एक दिन का होता

है, अतः इस व्रत में उदयकाल में छः घटी का नियम प्रायः मान्य होता है। हाँ, कभी-कभी एक-दो घटी प्रमाण उदय में रोहिणी के रहने पर भी व्रत किया जाता है।

दिने कृत्ते च छिन्ने वाऽछिन्ने तत्र च निश्चयः।
क्षेत्रकालादिमर्यादोल्लंङ्घनं तत्र दूषणम् ।।

अन्यदपि षोडशकारणवारिदमालारत्नत्रयादिव्रतानां पूर्णाभिषवे प्रतिपत्तिभिरेषा नापरा ग्राह्य ेति पूर्वोक्तवचनात्। अपरा द्वितीया ग्राह्य ेति अनवस्थाज्ञाभङ्गसंकरादयो दोषाः भवन्तीति अभ्रदेवमतमित्येष रोहिणीव्रत निर्णयः।

अर्थ :—तिथिक्षय या तिथि-वृद्धि होने पर व्रत करने के लिए देशकाल की मर्यादा का विचार अवश्य किया जाता है। जो देश-काल की मर्यादा का विचार नहीं करता है, उसके व्रतों में दूषण आ जाता है।

अन्य षोड़शकारण, मेघमाला, रत्नत्रय आदि व्रतों के पूर्ण अभिषेक के लिए प्रतिपदा तिथि ग्रहण की गयी है, अन्य तिथि नहीं। यदि अन्य द्वितीया तिथि ग्रहण की जाय तो अनवस्था आज्ञाभंग, संकर आदि दोष आ जायेंगे, इस प्रकार अभ्रदेव का मत है। रोहिणी व्रत के निर्णय के लिए भी देश काल की मर्यादा का विचार करना चाहिए। इस प्रकार रोहिणी व्रत का निर्णय समाप्त हुआ।

विवेचन :—रोहिणी व्रत रोहिणी नक्षत्र को किया जाता है। जिस दिन पञ्चांग में रोहिणी छः घटी या इससे अधिक प्रमाण हो उस दिन व्रत करने का विधान है। यदि कदाचित् छः घटी प्रमाण रोहिणी नक्षत्र न मिले तो एकाध घटी प्रमाण मिलने पर भी व्रत किया जा सकता है। जब रोहिणी नक्षत्र का अभाव हो तो कृत्तिका के उपरान्त और मृगशिर से पूर्व रोहिणी व्रत करना चाहिए। जब दो दिन रोहिणी नक्षत्र हो तो जिस दिन पूर्ण नक्षत्र हो उस दिन व्रत करना तथा अगले दिन यदि छः घटी से ऊपर या छः घटी प्रमाण ही रोहिणी नक्षत्र हो तो अगले दिन भी व्रत किया जायेगा। इससे कम प्रमाण होने पर व्रत की पारणा की जायेगी।

रोहिणी व्रत

यह व्रत अधिकतर औरतें अपने सौभाग्य की वृद्धि और प्रीति के लिये करती हैं। उपवास का फल कहते हुए योगीन्द्र देव ने कहा है जिनेन्द्र भगवन्त को दीप चढ़ाने से मोह नष्ट होता है। उसी प्रकार रोहिणी के व्रत से शोक दारिद्र आदि का नाश होता है। रोहिणी नक्षत्र प्रत्येक महिने में आता है। जिस दिन नक्षत्र न हो उस दिन उपवास करने से उसका फल नहीं होता है। उपवास के दिन चार प्रकार का आहार का त्याग कर मन्दिर में जाकर धर्म ध्यान पूर्वक १६ प्रहर बिताये। वहां सामायिक, स्वाध्याय, पूजन अभिषेक इसमें समय निकाले।

यदि रोहिणी नक्षत्र एक या दो घटक हो या यदि कृतिका नक्षत्र की समाप्ति पर रोहिणी नक्षत्र हो तो भी अथवा सूर्योदय के समय नक्षत्र आता हो तो उस दिन करना। व्रत के उपवास के दिन त्रिकाल **ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभु जिनेन्द्राय नमः** इस मन्त्र का १०५ बार जाप करे। यदि उपवास की शक्ति न हो तो संयम से अल्प भोजन करे या कांजीहार या भात की मांड लेना। व्रत के दिन पंचाणुव्रत का पालन करना चाहिए। उद्यापन करना चाहिये उद्यापन के दिन एक नयी मिट्टी का कलश ले उसको चंदन आदि से लेप करना चाहिए ऊपर सफेद वस्त्र से ढके उस पर पुष्पमाला डालनी उसके मुंह पर पीतल की थाली रखनी उसके ऊपर ऋषि मंडल निकालना और उस दिन पूजा करना पूजा की प्रक्रिया रत्नत्रयावली में बतायी है चतुर्विंशति की पूजा करना। उसमें जलयात्रा, अभिषेक, सकलीकरण अगन्यास, मंगलाष्टक, स्वस्तिवाचन करना। उसके बाद ७२ पूजा नित्य पूजा के बाद करे अर्घ में चाँदी के स्वस्तिक नारियल सुपारी चढ़ानी उद्यापन में पांच बर्तन झालर घंटा आदि देना चाहिए।

कथा

मगध देश में राजगृह नामक एक नगर था। वहां श्रेणिक राजा राज्य करता था। उनका पुत्र वारिषेण था। एक दिन विपुलाचल पर महावीर भगवान का समोशरण आया था। उस समय राजा श्रेणिक ने रोहणी व्रत किसने और क्यों किया था ऐसा प्रश्न पूछा?

तब भगवान महावीर की दिव्य ध्वनि खिरी—

इस भरतक्षेत्र में जम्बूद्वीप नामक कुरुजाङ्गल देश है, उसमें हस्तिनापुर नामक एक नगरी है, उसमें विगतशोक नामक राजा राज्य करता था, उसका पुत्र अशोक सदगुणी था ।

इस द्वीप में अंगदेश में चंपानगरी का राजा मघवा उसकी राणी श्रीमती थी । उसके आठ लड़के थे और एक पुत्री थी, उसका नाम रोहिणी था । रोहिणी नक्षत्र के समान ही रूपवान थी ।

कार्तिक महिने को बात है कि अष्टान्हिका पर्व शुरू था । उसका उस दिन उपवास था, पूजा के लिये वह मन्दिर में गयी और भक्तिभाव से पूजा करके साधुओं को नमस्कार किया और अपने पिताजी के पास आयी । पूजा का प्रसाद सबको दिया । उसका रूप देखकर उसके पिताजी को विचार आया ।

इतनी सुन्दर लड़की किसके पल्ले जायेगी इसके योग्यतानुसार वर मिलेगा कि नहीं । इसी चिता से ग्रस्त उसने मंत्रियों को बुलाया और कहा अपनी रोहिणी बड़ी हो गयी है इसलिए उसकी योग्यता अनुसार हमें उसका पति ढूंढ़ना चाहिए । इसलिये आप लोग ढूंडो और किसको देनी यह निश्चित करो ।

तब उनमें से एक मन्त्री बोला राजन् पूर्वापर पद्धति से आप स्वयंवर रचो क्योंकि स्वयंवर में उसे जो पसन्द आये उसे वह अपना पति वरेगी ।

राजा को यह बात पसन्द आयी । उन्होंने स्वयंवर मंडप की रचना की व सब राजाओं को आमन्त्रित किया । सब राजकुमार स्वयंवर मंडप में आये सबका ध्यान रोहिणी की ओर था वे सब चाहते थे कि रोहिणी हमें वरे । रोहिणी अपने दिव्य अलंकार पहनकर स्वयंवर मंडप में आयी । उसके हाथ में पंचवर्णी पुष्पों का हार था उसके रूप को देखकर सब राजकुमार मोहित हो गये । रोहिणी की दासी सभी राजाओं का परिचय बताती हुई आगे बढ़ी । रोहिणी ने वीतशोक राजा के पुत्र अशोक के गले में माला डाली । सब राजकुमार अपने-अपने घर चले गये । थोड़े दिनों के बाद रोहिणी की शादी अशोक के साथ हो गई । वे दोनों वहीं रह कर सुख भोगने लगे । वहां पर वीतशोक राजा के बहुत ही पत्र अशोक के पास आये, पर वह वहां गया नहीं । तब राजा ने कड़क पत्र लिखा जिससे दोनों वीतशोक राजा के पास पहुंचे ।

राजा वीतशोक को वैराग्य हो गया था जिससे उसने थोड़े ही दिन में अशोक को राज्यभार सौंपकर जिनदीक्षा ली और बहुत कठिन तपश्चर्या करके मोक्ष गये।

रोहिणी को आठ पुत्र व चार पुत्री उत्पन्न हुये, एक दिन राजा रोहिणी के साथ बैठा था और दासी लोकपाल को अपनी गोद में लेकर खेल रही थी। तब एक औरत अपने बालों को बिखराये हुये छाती पीटते हुये बच्चे को मारते हुये रोते हुए जा रही थी। तब रानी ने "यह क्या है ऐसा प्रश्न पूछा। मैंने नाटक में रास क्रीड़ा लोकनृत्य, लोक-गीत ये सब देखा। पर ऐसा नहीं देखा। यह नाटक का कौनसा प्रकार है ?"

दासी ने उत्तर दिया 'राणी, यह दुःख का प्रदर्शन है।' रानी को दुःख की जानकारी नहीं थी। उसने दुःख क्या होता है ? ऐसा पूछा क्योंकि वह अपने जीवन में कभी भी दुःखी नहीं हुई थी। ऐसा बार-बार पूछने पर दासी गुस्से से बोली—

"क्या बाई तुम्हारा पांडित्य ! तुम्हें ऐश्वर्य सुख का गर्व चढ़ा है। इतनी आपकी उम्र गई पर अभी तक आपको दुःख की कल्पना नहीं है आश्चर्य है।"

रोहिणी को खराब लगा पर फिर भी शान्त भाव से उसने फिर कहा–गुस्सा मत करो, मैंने बहुत सी कलाएँ सीखीं पर अभी तक ऐसी कला मैंने नहीं सीखी।

तब दासी ने कहा "यह नाटक नहीं, गायन नहीं है, यह तो उसके लाड़ले भाई की मृत्यु का रुदन है। इसलिये मैंने इसे शोक कहा। रोना कैसे आता है ऐसा उस रानी ने फिर पूछा, तब राजा वहीं बैठा था, उसने यह संवाद सुना तो उसने कहा रोना कैसे आता है ? और क्यों आता है ? और दुःख किसे कहते हैं ? यह मैं तुझे बताता हूं ऐसा कहकर उसका पुत्र लोकपाल जो दासी की गोद में खेल रहा था उसे उठाकर नीचे फेंक दिया।

लोकपाल जोर से नीचे गिरा पर पुण्योदय से नीचे पुष्पों की शैया थी, उसके ऊपर वह गिरा। यह गोष्ट नगर देवता को मालुम हुयी वे एकत्रित होकर रोने लगे फिर भी रानी को उसकी कल्पना नहीं हुई। दुःख का उसे अनुभव नहीं आया

तब देवों ने लोकपाल को उठाकर रानी को दिया और उनकी पूजा की और रानी के पुण्य की कथा कहने लगे।

गांव के बाहर अशोक वन था वहां अतिभूति, महाभूति, अंबरविभूति और अंबरतिलक ऐसे चार विशाल जिनमन्दिर थे। वहाँ पर हस्तिनापुर से बिहार करते हुये दो चारण मुनि रूपकुम्भ व वर्णकुम्भ महाभूति मन्दिर में उतरे (आये)। यह बात वनपाल ने आकर राजा को बताई। तब राजा रानी और नगरवासियों सहित वंदन को गया। वहां वन्दना कर महाराज से पूछा कि रोहिणी ने ऐसा क्या पुण्य किया है कि जिससे उसको दुःख का अनुभव नहीं होता व मेरे आठ पुत्र व आठ पुत्री का क्या सम्बन्ध है, सो कहें।

तब मुनिराज बोले—

"राजन ! हस्तिनापुर से १२ कोस दूर पर एक नीलगिरि पर्वत है। उस पर्वत पर यशोधर चारण मुनि तपश्चरण करते थे। उन्होंने एक मास का उपवास लिया था। एक दिन एक शिकारी शिकार करता-करता वहाँ आया पर मुनिमहाराज के महात्म्य से मृग पर छोड़े गये सब बाण निष्फल हुये, ऐसा क्यों हुआ ऐसा सोचता हुआ कारण ढूंढ़ने के लिये वह आगे निकला तो वहाँ पर महाराज को बैठे हुए देखा तो उसे ज्ञात हुआ इसी कारण से ऐसा हुआ है और उसे गुस्सा आया तो जब महाराज महिना पूरा होने पर पारणा के दिन आहार को नगर में गये तब पीछे से शिला के नीचे आग लगाकर शिला गर्म कर दी। फिर वह दूसरी ओर निकल गया।

आहार के बाद महाराज वापस आये, नित्यक्रम के अनुसार उस शिला पर जाकर बैठ गये, पर शिला भयंकर तपी हुई थी। तब उन्होंने सोचा यह उपसर्ग है, ऐसा सोचकर वे उठे नहीं और बैठे हुए ही ध्यान में लीन हो गये, तब थोड़े समय में उनको केवलज्ञान हो गया।

पर उस मृग मारने वाले को पाप के कारण उदुम्बर रोग हो गया जिससे वह सात दिन के अन्दर मृत्यु को प्राप्त हुआ। मरकर वह सातवें नरक में उत्पन्न हुआ। वहां से अनेक भव धरता हुआ मनुष्य हुआ। उसका नाम वृषभसेन रखा, बड़ा होने पर

वहीं जंगल में वह भैंस चराता था, पर दावानल अग्नि के लग जाने से मर गया है और गंधारी इसीलिए रो रही थी, इस दुःख का कारण यही था।

इसी हस्तिनापुर की कथा—उस समय वसुपाल अपनी रानी वसुमती सहित राज्य करते थे। उसका भाई धनमित्र उसका राजश्रेष्ठी था, उसकी औरत धनमित्रा उसकी लड़की पूतगंधा थी जिसके शरीर से मृतक शरीर के जैसी अत्यन्त दुर्गन्ध आती थी, कोई भी मनुष्य उसकी ओर देखता नहीं था।

इसी नगर में एक वसुमित्र श्रेष्ठी रहता था वह बहुत ही धनाढ्य था उसकी भार्या वसुमती और उसका पुत्र श्रीसेण था। श्रीसेण सप्तव्यसनी था। सदा ही जुआ खेलना और वेश्या के घर जाना अर्थात् सप्तव्यसनी था। अपने व्यसनों को पूरा करने के लिए वह धीरे-धीरे चोरी करने लगा जिससे लोगों को दुःख होने लगा। एक दिन वह राजश्रेष्ठी के घर चोरी करने गया। वहां यमदंड कोतवाल ने उसको पकड़ लिया और हाथ बांधकर उसे नगर में घुमाया। यह बात वसुमित्र को ज्ञात हुई जिससे उसको बहुत ही दुःख हुआ।

वह धनमित्र के पास गया धनमित्र ने उसे कहा मेरी लड़की पूतगंधा के साथ शादी करेगा तो मैं उसे छोड़ देता हूं ऐसा कहा। तब लाचार होकर उसने 'हां' कह दिया, श्रेष्ठी ने पूतगंधा से शादी करा दी पर उसने पूतगंधा से शादी होने तक तो कैसे भी कर समय निकाला पर शादी होने के बाद घर छोड़कर भाग गया। पूतगंधा अपने कर्मों को दोष देती हुई अपने पिता के घर गयी। एक बार आर्यिका माताजी उनके घर आहार को आयी, उनको उन्होंने आहार दिया, उस दिन से उसका रोग अच्छा होता गया।

इसी नगर में कीर्तिधर राजा अपनी पत्नी कीर्तिमति के साथ रह रहा था। वहां पिहिताश्रव और अमिताश्रव नामक चारणमुनि नगर के बाहर आये। यह बात सुनकर राजा अपने परिवार के साथ दर्शन के लिए गया। मुनि-मुख से धर्म-श्रवण कर सम्यक्त्व में दृढ़ता लाया। पूतगंधा भी वहां आयी थी उसने अपना पूर्वभव पूछा।

अमिताश्रव मुनि महाराज कहने लगे "इस भारतवर्ष में पश्चिम के समुद्र

के पास सौराष्ट्र देश है। उसमें गिरनार पर्वत है। वहां राजा भूपाल अपनी पत्नी रूपवति व स्वरूपा, उनका श्रेष्ठी गंगदत्त अपनी स्त्री सिन्धुमति के साथ रहता था, सिन्धुमति मिथ्यात्वी थी। उसको अपने सौन्दर्य का बहुत गर्व था।

एक बार मासोपवास के बाद समाधिगुप्ति महाराज आहार के लिए उस नगर में आये। राजा के महल से वह किसी कारण से (अंतराय से) वापस घूमे तो गंगदत्त ने उन्हें देखा। वह सम्यक्त्वी था, उसने महाराज को पडगाह लिया और सिन्धुमति को आहार देने के लिए कहा। सिन्धुमति ने कड़वी लौकी का पकवान बनाकर आहार में दिया जिससे महाराज के पेट में बहुत दर्द होने लगा पर महाराज ने शान्त भाव से उसे सहन किया और तपश्चरण किया जिससे उनका समाधिपूर्वक मरण हुआ और वे स्वर्ग में देव हुये।

चारणऋद्धि मुनि महाराज वहां से निकले तो यह बात राजा को बतायी उन्होंने सिन्धुमति को गधे पर बिठाकर नगर में घुमाया और अपने नगर से निकाल दिया। उसे पाप के कारण अंबर कुष्ठ रोग हो गया जिससे उसका मरण हो गया और वह नरक में गयी। वहां से निकलकर वह कुत्ती हुयी, फिर मरकर डुकरी, शृगाल, मूषक, गधी आदि हुई और नाना प्रकार के दुःख भोगने लगी। वहां से मरकर वह पूतगंधा हुई है।

अपने जन्म की यह कथा सुनकर उसे बहुत दुःख हुआ। उसने महाराज से पूछा कि इससे छुटने का उपाय बताओ। तब महाराज ने कहा—

हे बाला! तू रोहिणी नक्षत्र का व्रत कर जिससे तुझे कभी भी दुःख नहीं आयेगा। उसने यह व्रत किया जिससे वह मरकर अच्युत स्वर्ग में देवी हुई। वहां के सुख भोगकर वह यह रोहिणी हुई है। फिर राजा ने अपना व लड़के का भी भवान्तर पूछा। उसका उत्तर महाराज ने दिया।

एक बार बात करते हुये दोनों बैठे थे। रोहिणी ने राजा के कान पर से सफेद बाल निकाल कर दिया जिससे अब मेरा समय आ गया है ऐसा सोचकर वासुपूज्य मंदिर में जिन दीक्षा ली। तपश्चरण करके वासुपूज्य के गणधर हुये। उग्र तपश्चरण करके मोक्ष गये। रानी ने भी दीक्षा ली और तपश्चरण करके अच्युत स्वर्ग में देव हुई। वहां से चय होकर मनुष्य भव लेकर मोक्ष गई।

अर्थात् धर्म से क्या नहीं होता है इसलिये हे भव्य प्राणी ! आत्म--कल्याण करना चाहिये जिससे इस भव में और परभव में सुख मिलेगा ।

रसाञ्जली व्रत

इस व्रत का प्रारम्भ वैशाख सुदि प्रतिपदा से करना चाहिए । उस दिन सिर्फ तीन अञ्जुली पानी पीना उसके बाद कुछ भी नहीं खाना । प्रत्येक महिने की सुदि व वदि तृतीया को तीन अञ्जुली पानी लेना । व्रत के दिन इक्षुरस से जिनाभिषेक करना चाहिये । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए, यदि शक्ति न हो तो व्रत दूना करे ।

रैंदेतल व्रत

जिस महिने में शुक्ल पक्ष में तीन शनिवार आयें उस महिने में यह व्रत करना चाहिए । उस पक्ष में पहिले शनिवार के पहले दिन एकाशन करना, शनिवार से तीन उपवास करना, दूसरे शनिवार को और तीसरे शनिवार को भी ऐसे ही करना चाहिये, यह व्रत एक वर्ष करना चाहिये ।

इसकी दूसरी विधि लघु व्रत करके पहचानी जाती है ।

शुक्ल पक्ष के पहले शनिवार व अन्तिम शनिवार को एकाशन (एकभुक्ती) करना । बीच वाले शनिवार को उपवास करना, इस प्रकार यह व्रत करना चाहिये । पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये । नहीं किया तो व्रत दूना करना चाहिये ।

रूप चतुर्दशी व्रत

श्रावण सुदि चतुर्दशी रूप चतुर्दशी है । इस दिन प्रोषधोपवास करना चाहिए उपवास के दिन भगवान ऋषभनाथजी का अभिषेक करके और सब पूजा करके बाद में आदिनाथजी की पूजा करनी चाहिये । "ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथाय नमः" इस मंत्र का जाप करना चाहिये ।

व्रत तिथि निर्णय

इसकी दूसरी विधि—भाद्र सुदि १८ को कुमारिकाओं को यह व्रत करना

चाहिए। जिन मंदिर में जाकर तीन प्रदक्षिणा देना चाहिए फिर भगवान का अभिषेक व अष्टद्रव्य से पूजा करनी चाहिये, उस दिन उपवास करना चाहिये। उपवास प्रोषध-पूर्वक होना चाहिए। ५ वर्ष तक यह व्रत करना चाहिये। नहीं किया तो व्रत दूना करना चाहिए।

रूपाष्टमी व्रत

भाद्रपद सुदि अष्टमी को प्रोषधोपवास करना चाहिए। यह व्रत आठ वर्ष तक करना चाहिए। पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये, नहीं तो व्रत दूना करना चाहिए।

रुक्मिणी व्रत

भाद्रपद सुदि ७ को एकाशन करके सुदि ८ को उपवास करना, नवमी को एकाशन करना दशमी को उपवास, एकादशी को एकाशन, द्वादशी को उपवास, त्रयोदशी को एकाशन, चतुर्दशी को उपवास, पौणिमा को एकाशन इस प्रकार हर साल चार उपवास चार एकाशन करना चाहिये। इस प्रकार आठ वर्ष तक यह व्रत करना चाहिए। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये। नहीं किया तो व्रत दूना करना चाहिये।

यह व्रत रुक्मिणी ने लक्ष्मीपती ब्राह्मणी के जन्म में किया था। उसके बाद वह रुक्मिणी के रूप में जन्मी। फिर अपने पुत्र प्रद्युम्नकुमार के साथ जिन दीक्षा ली, अंत में मोक्ष गयी।

—किशनसिंहकृत क्रिया कोष

रस परित्याग व्रत की विधि व कथा

श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहिने अभिषेक व पूजा द्रव्यों को हाथ में लेकर जिन मंदिर में जावे, ईर्यापथ शुद्धि करता हुआ मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, जिनेन्द्र भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, श्री अभिषेक पीठ पर जिनेन्द्र भगवान की स्थापना कर पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से भगवान की पूजा

करे, जिनवाणी, गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी, क्षेत्रपाल की यथायोग्य पूजा तथा सम्मान करना।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हत्परमेष्ठिने नमः स्वाहा

इस मंत्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, सहस्र नाम का पाठ करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करना चाहिये, एक महाअर्घ्य करके हाथ में लेते हुवे मंदिर की तीन प्रदक्षिणा डाले, मंगल आरती उतारे, महाअर्घ्य को भगवान के आगे चढ़ा देवे, एक महिने तक ब्रह्मचर्य व्रत को पालन करता हुआ एकभुक्ति करे, श्रावक के बारह व्रतों का पालन करे, दूध, दही, घी, तेल, शक्कर, नमक, इन षट्रसों का त्याग करे, अशौच होने पर शुद्धि के समय शरीर में काली मिट्टी लगाकर स्नान करे। इस प्रकार भाद्र कृष्ण प्रतिपदा तक प्रतिदिन पूर्वोक्त क्रिया, करे उसी दिन उद्यापन करे, उस दिन अर्हत् परमेष्ठि का महाअभिषेक करे, सात मोगे तैयार करे, घी भरकर देव के आगे, शक्कर भरकर सरस्वति के आगे, गुड़ भरकर गुरु के आगे चढ़ावे, नमक भरकर स्वयं लेवे, बाकी बचे हुवे तीन, सम्यग्दृष्टि श्रावकों को आहारदान व वस्त्रदानपूर्वक देवे, सात मुनियों को आहारदान देवे, उपकरण भी देवे, इस प्रकार व्रत को विधि है, त्रिकरण शुद्धिपूर्वक व्रत को करने से क्रमशः मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है।

कथा

इस व्रत को राजा श्रेणिक और रानी चेलना ने किया था, कथा के स्थान पर चेलना पुराण श्रेणिक पुराण पढ़े।

रूपातिशयव्रत कथा और विधि

अषाढ शुक्ल अष्टमी के दिन प्रातःकाल में स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजा का सामान लेकर जिन मंदिर में जावे, मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धिपूर्वक भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा यक्षयक्षिणी सहित स्थापन कर पंचामृत अभिषेक करे, फिर प्रत्येक तीर्थंकर की स्तोत्र पूर्वक जयमाला पढ़ते हुवे, पंचकल्याणक के अर्घ चढ़ा कर पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः स्वाहा

१०८ पुष्प लेकर इस मंत्र से जाप्य करे, १०८ बार णमोकार मंत्र का जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, जिनवाणी की पूजा करे, गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की पूजा सम्मान करे, अंत में एक महाअर्घ करके हाथ में अर्घ को लेकर मंदिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, इस प्रकार कार्तिक महिने की पूर्णिमा पर्यंत प्रतिदिन लगातार पूजा करना चाहिये, अष्टमी उपवास, पंचमी और चतुर्दशी को एकभुक्ति करनी चाहिये, । शेष दिनों में भोजन करना व ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना चाहिये ।

इस प्रकार चार महिने तक पर्वकाल पालना चाहिये, अंत में व्रत का उद्यापन करे, एक नवीन पंचपरमेष्ठि की प्रतिमा स्थापन करके पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करना, नाना प्रकार का नैवेद्य, मिष्टान्न तैयार करके पंचपरमेष्ठि, जिनवाणी, गुरु, यक्षयक्षिणी (पद्मावति) को अर्पण करना, यथाशक्ति ध्यानाध्ययन करना चाहिये, गुरुओं को वैयावृत आहारदानादिक देवे, अनेक प्रकार का फल, मेवा, मिठाई डालकर वायना तैयार करे, एक वायना देव, एक गुरु, एक शास्त्र को भेंट करके एक कथा पढ़ने वाले को और एक स्वयं लेकर घर आवे, इस प्रकार व्रत की विधि है ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में आर्य खंड है, वहां काश्मीर देश है, उस देश में हस्तिनापुर नाम का एक गांव है, उस ग्रांव में जिनमित्र नाम का एक वैश्य रहता था, उस वैश्य की स्त्री का नाम जिननंदी था, वैश्य को सुमति नाम की एक कन्या उत्पन्न हुई वह कन्या रूप-सौन्दर्य से रहित थी, इसलिये उसके साथ कोई भी विवाह करने को तैयार नहीं था, वैश्य को रात दिन इसी बात की चिन्ता रहती थी ।

एक दिन मासोपवासी यशोधर नाम के मुनिराज पारणा के लिये नगर में आये, घूमते-घूमते सेठ जिनमित्र के घर पर आये, जिनमित्र ने नवधाभक्ति पूर्वक मुनिराज को आहार दिया, आहार होने के बाद एक पाटे पर मुनिराज को स्थापन कर हाथ जोड़ नमस्कार करके कहने लगा कि हे गुरुदेव ! मेरी यह कन्या रूप-सौन्दर्य से रहित क्यों उत्पन्न हुई, इससे कोई विवाह करने को तैयार नहीं है, इस दुःख

के निवारण होने का क्या उपाय है ? यह सब हम को कहो।

तब मुनिराज कहने लगे कि हे जिनमित्र ! इस कन्या ने पूर्वभव में अपने रूप-सौन्दर्य के मद में आकर एक दिगम्बर मुनिराज के ऊपर ग्लानि से थूक दिया था। इस कारण से यह कन्या रूप-सौंदर्य से रहित उत्पन्न हुई है, अगर यह कन्या रूप-सौन्दर्य से सहित बने ऐसी तुम्हारी इच्छा है तो तुम इसको रूपातिय व्रत कराओ, व्रत की विधि पूर्णरूप से कही, लड़की ने व्रत को श्रद्धा से ग्रहण किया, मुनिराज उन सबको आशीर्वाद देकर पुनः जंगल में चले गये। इधर सुमति कन्या ने विधिपूर्वक व्रत का पालन किया, अंत में व्रत का उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से सुमति को पुनः रूप-सौन्दर्य प्राप्त हुआ। एक श्रेष्ठि की प्राणवल्लभा होकर सुख भोगने लगी, उसके गर्भ से देवकुमारादि बहुत पुत्र उत्पन्न हुवे, एक दिन उसके घरपर सामुद्रिकशास्त्र का ज्ञाता एक ज्योतिषी आया और कहने लगा कि हे सुमति ! अब आपकी आयु मात्र सात दिन की रह गई है, ऐसा सुनकर सुमति को वैराग्य हुआ और एक आर्यिका के पास जाकर दीक्षा ले ली और तपश्चरण करने लगी, अंत में समाधिमरण कर स्त्रीलिंग का छेद करती हुई अच्युत कल्प में देव होकर उत्पन्न हुई, बाईस सागर तक सुखों को भोगकर मनुष्यभव धारण करके मुनिदीक्षा ग्रहण कर घोर तपश्चरण करते हुए कर्म काट कर मोक्ष को गई।

रूपार्थ वल्लरी व्रत कथा

भाद्रपद कृ० अमावश्या (आश्विन कृष्णा अमावश्या) को शुद्ध होकर एकाशन करे, एकम को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, नव देवता की प्रतिमा स्थापन करके पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, पंच पकवान चढ़ावे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८

बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, पूर्ण अर्घ चढ़ावे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, दूसरे दिन पूजा व दान करके स्वयं पारणा करे ।

इस प्रकार ९ दिन पूजा करके दसवें दिन जिनपूजा करे, नैवेद्य चढ़ाकर विसर्जन करे, यह पूजा क्रम आश्विन शुक्ला एकम् से नौमी पर्यन्त करे । यथाशक्ति एकाशन करे, उपवास करे ।

इस प्रकार व्रत पूजा ९ वर्ष ९ महिना तक करके अन्त में उद्यापन करे, उस समय नवदेवता विधान करके महाभिषेक करे । चतुर्विध संघ को आहारादि देवे ।

कथा

श्रेणिक राजा व चेलना रानी की कथा पढ़े ।

रत्नभूषण व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला नवमी से तीन दिन तक लगातार शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, दर्शन की पूर्वोक्त सब विधि करे, अरहनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रतनाथ भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से उनकी अलग-अलग पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षणी व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अरमल्लि मुनिसुव्रत तीर्थंकरेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प से जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महार्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, ब्रह्मचर्य पूर्वक उपवास करे, दूसरे दिन दानादिक देकर स्वयं पारणा करे ।

इस प्रकार नौ पूजाक्रम उपरोक्त तिथि को करके अन्त में उद्यापन करे, उस समय रत्नत्रय विधान कर महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को यथाविधि दान देवे ।

कथा

श्रेणिक राजा और चेलना रानी की कथा पढ़े ।

लघु सुखसम्पत्ति व्रत

इस व्रत में १२० उपवास किये जाते हैं। प्रतिपदा का एक, दो द्वितीयाओं के दो, तीन तृतीयाओं के तीन, चार चतुर्थियों के चार, पांच पंचमियों के पांच, छः षष्ठियों के छः, सात सप्तमियों के सात, आठ अष्टमियों के आठ, नौ नवमियों के नौ, दश दशमियों के दश, ग्यारह एकादशियों के ग्यारह, बारह द्वादशियों के बारह, तेरह त्रयोदशियों के तेरह, चौदह चतुर्दशियों के चौदह एवं पन्द्रह पूर्णमासियों के पन्द्रह इस प्रकार एक सौ बीस उपवास सम्पन्न किये जाते हैं। १+२+३+४+५+६+७+८+९+१०+११+१२+१३+१४+१५=१२० उपवास। उपवास के दिनों में श्रावक के उत्तर गुणों का पालना और शीलव्रत धारण करना आवश्यक है।

लघुचौतीसी व्रत

अरिहंत भगवान के ३४ अतिशय प्राप्त करने का व्रत। इसके कुल उपवास ६५ हैं। दस उपवास दशमी के, २४ चतुर्दशी के, १६ अष्टमी के, ५ पंचमी के, ६ षष्ठी के ऐसे कुल ६५ उपवास करना।

लक्षणपंक्ति व्रत

इस व्रत में मास, तिथि, पक्ष का नियम नहीं है पर शुरू करने के बाद पूर्ण होने तक करना चाहिए।

यह व्रत ४०८ दिन में पूरा होता है। इस व्रत के २०८ उपवास होते हैं एक उपवास, फिर एकाशन, फिर उपवास, दूसरे दिन एकाशन इस क्रम से उपवास पूरे हों तब तक करना चाहिए। यह व्रत बहुत से भव्य जीवों ने किया था।

—गोविन्दकृत व्रत निर्णय

व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए, नहीं तो व्रत दूना करना चाहिए।

लघुपल्य विधान

यह व्रत ३४ दिन का है। प्रारम्भ में एक उपवास एक पारणा, फिर दो

उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा इस प्रकार २५ उपवास ६ पारणे इस प्रकार हैं। यह व्रत एक ही वर्ष में करना, उपवास के दिन "णमोकार मन्त्र" का त्रिकाल जाप करना।

(वर्धमान पुराण के आधार से
जैन व्रत विधान संग्रह)

लब्धिविधान व्रत की विधि

लब्धिविधानस्तु भाद्रपदमाघचैत्रशुक्ल प्रतिपदमारभ्य तृतीयापर्यन्तं दिनत्रयं भवति। दिनहानौ तु दिनमेकं प्रथमं कार्यम्, वृद्धौ स एव क्रमः स्मर्तव्यः ॥

अर्थ :—भाद्रपद, माघ और चैत्र मास में शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से लेकर तृतीया तक तीन दिन पर्यन्त लब्धिविधान व्रत किया जाता है। तिथि हानि होने पर एक दिन पहले से व्रत करना होता है और तिथि वृद्धि होने पर पहले वाला क्रम अर्थात् वृद्धिगत तिथि छः घटी से अधिक हो तो एक दिन व्रत अधिक करना चाहिए।

विवेचन :—भादों, माघ और चैत्र सुदी प्रतिपदा से तृतीया तक लब्धि-विधान व्रत करने का नियम है। इस व्रत की धारणा पूर्णिमा को तथा पारणा चतुर्थी को करनी होती है। यदि शक्ति हो तो तीनों दिनों का अष्टमोपवास करने का विधान है। शक्ति के अभाव में प्रतिपदा को उपवास, द्वितीया को ऊनोदर एवं तृतीया को उपवास या कांजी-छाछ या छाछ से निर्मित महेरी अथवा माड़भात लेना होता है। व्रत के दिनों में महावीर स्वामी की प्रतिमा का पूजन अभिषेक किया जाता है तथा '**ॐ ह्रीं महावीर स्वामिने नमः**' मन्त्र का जाप प्रतिदिन तीन बार किया जाता है। त्रिकाल सामायिक करने का भी विधान है। रात्रि जागरण तथा स्तोत्र पाठ, भजन-गान आदि भी व्रत के दिनों की रात्रियों में किये जाते हैं।

आवश्यकता पड़ने अथवा आकुलता होने पर मध्य रात्रि में अल्प निद्रा ली

जा सकती है । कषाय और आरम्भ परिग्रह को घटाना, विकथाओं की चर्चा का त्याग करना एवं धर्म-ध्यान में लीन होना आवश्यक है ।

लब्धिविधान व्रत

प्रत्येक वर्ष की भाद्रपद, माघ और चैत्र इन तीन महिनों में सुदि पक्ष में प्रतिपदा से लेकर तृतीया तक अर्थात् तीन दिन यह व्रत करना । तिथि का क्षय हो तो एक दिन पहले शुरू करना । वृद्धि हो तो एक दिन अधिक करना । व्रत की धारणा अमावस्या के दिन व पारणा चतुर्थी को करना । तीनों दिन उपवास करना चाहिए । इस व्रत के दिन नित्य नियम की पूजा करके भ० महावीर की पूजा करनी चाहिये । और "ॐ ह्रीं महावीर स्वामिने नमः" इस मन्त्र का १०८ बार त्रिकाल जाप करना चाहिये । रात को जागरण करके स्तोत्र, गायन भजन और ध्यान करना चाहिये । कषाय आरम्भ परिग्रह का त्याग करना चाहिये । विकथा नहीं करनी चाहिये । यह व्रत लगातार तीन वर्ष करना चाहिये ।

दूसरी विधि :—प्रतिपदा को एकाशन, द्वितीया को उपवास व तृतीया को एकाशन ऐसे तीन वर्ष यह व्रत करना चाहिये । कहीं पर ६ वर्ष करना चाहिये ऐसा लिखा है ।

—गोविन्दकृत व्रत निर्णय

तीसरी विधि :—प्रतिपदा को उपवास, द्वितीया को उपवास व तृतीया को एकाशन ऐसे ६ वर्ष करना ।

चौथी विधि :—प्रतिपदा को एकाशन, द्वितीया को उपवास, तृतीया को एकाशन करना ।

—किसनसिंहकृत क्रिया कोष

पांचवीं विधि :—सिर्फ भाद्रपद सुदि १, सुदि २ और सुदि ३ को उपवास करना इस प्रकार तीन वर्ष करना । णमोकार मंत्र का जाप करना ।

कथा

काशी देश की बाराणसी नगरी में एक राजा विश्वसेन रहता था । वह राजा

महान पराक्रमी, गुणी, प्रजा का हित सोचने वाला था। उसकी रानी विशालनयना थी। एक दिन राजा ने अपने मनोरंजन के लिये नाटककार को बुलाकर नाटक करने को कहा। नाटककार ने राजा को प्रसन्न करने के लिये अनेक प्रकार के गीत और नृत्य आदि किये जिससे रानी का मन चलायमान हुआ और वह अपने साथ रंगी व चमरी इन दो दासियों के साथ राज वैभव छोड़कर गुप्त रूप से वेश्या का काम करने लगी। राजा को उसका वियोग सहन न हुआ और वह अपने पुत्र पर राज्यभार छोड़कर आर्तध्यान से मरकर उसी वन में हाथी हुआ। वह वन में भटक रहा था तभी वन में उसे मुनि महाराज के दर्शन हुये। उनके उपदेश सुनकर उसने अणुव्रत धारण किये जिससे वह मरकर सहस्त्रार स्वर्ग में देव हुआ। वहां की आयु पूर्णकर वह पाटलिपुत्र का महिचंद्र राजा हुआ।

एक बार वह वनक्रीड़ा के लिये गया था, वहां उसको मुनि महाराज के दर्शन हुये। मुनि महाराज का उसने धर्मोपदेश सुना तब तक वहां पर एक कुबड़ी, एक कुष्ठ रोगी और एक बहरी ऐसी तीन स्त्रियां उसे मिलीं जिन्हें देखकर राजा को उनके प्रति प्रीति उत्पन्न हुई, तब राजा ने महाराज से पूछा इसका कारण क्या है।

महाराज ने कहा हे राजन्! इनमें से पहले भव में एक तेरी रानी और दूसरी दो दासी हैं। उन्होंने राज धर्म छोड़कर वेश्या का काम किया था। एक दिन राज्यमार्ग से जाते समय इन्हें मुनि के दर्शन हुये पर वे इनको अपशकुन लगे और उनको वश करने के लिये अपने हाव-भाव दिखाने लगी, पर महाराज इनके वश में नहीं हुये उल्टे वे धर्मध्यान में लीन हो गये। मुनि उपसर्ग से इनका सौन्दर्य चला गया और वे कुबड़ी व बहरी हो गयी। वहां से मरकर नरक में गयी, वहां से निकलकर कई भव धारण किये, अब ये तीनों पापोदय के कारण कुबड़ी, कुष्ठ रोगी व बहरी उत्पन्न हुई हैं। जन्म लेते ही इनके माता—पिता चल बसे हैं, लोगों ने इनको घर से निकाल दिया है।

और राजा! तू रानी के वियोग में मरकर हाथी हुआ पर मुनि उपदेश से अणुव्रत धारण कर देव हुआ, वहां से आकर अब तू राजा बना है। इसलिये इन्हें देख तुझे प्रेम उत्पन्न हुआ है। तब राजा ने कहा ये किस प्रकार इस दुःख से दूर होंगी? तब महाराज जी ने कहा—

लब्धि विधान व्रत करने से इनको सद्गति मिलेगी।

उन तीनों स्त्रियों ने यह कथा सुनी और मुनि के पास व्रत लिया, व्रत को विधिपूर्वक किया जिससे मरकर वे स्वर्ग में देव हुई, वहां के सुख भोगकर मगध देश के वाडव नगर में काश्यप गोत्रीय शांडिल्य ब्राह्मण की स्त्री शांडिल्या के पेट से गौतम नाम से जन्म लिया। चमरी व रंगी के जीव स्वर्ग का सुख भोगकर मनुष्य पर्याय में आकर घोर तप करके मोक्ष गये। भगवान महावीर को केवलज्ञान हुआ तब इन्द्र गौतम गणधर से त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं...वगैरह श्लोक बनाकर ब्राह्मण के वेश में गौतम के पास गये। पर गौतम से अर्थ नहीं हुआ। तब इन्द्र उन्हें समोशरण में लाया। वहां मानस्तम्भ देखकर उनके मिथ्यात्व का नाश हुआ व गर्व चला गया और भगवान के चरणों में दीक्षा ली। वे तुरन्त गणधर बने और केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गये, इसलिए प्रत्येक को यह व्रत करना चाहिए।

अथ लाभांतरायकर्म निवारण व्रत कथा

पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृ० ६ के दिन एकाशन करे, १० के दिन उपवास करे। पूजा वगैरह पहले के समान करे, णमोकार मन्त्र का जाप करे, दो दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे।

कथा

संगीतपुर नगरी में सुगमित्र राजा सुगंधादेवी महारानी के साथ रहता था, उसका पुत्र संगीतगोष्टी, उसकी स्त्री सुमंगलादेवी, सुगुणाचार्य पुरोहित उसकी स्त्री गुणवती, पूर्णदत्त श्रेष्ठी उसकी पत्नि पूर्णदत्ता सारा परिवार सुख से रहता था। एक दिन उन्होंने भानुदत्ताचार्य मुनि के पास यह व्रत लिया तथा इसका यथाविधि पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गए।

लोकमंगल व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला चतुर्थी के दिन शुद्ध होकर मन्दिर जी में जावे, तीन प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, चोबीस तीर्थंकर प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे,

श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे ।

चत्तारि मंगलं अर्हंरत मंगलं, सिद्ध मंगलं,
साहु मंगलं, केवलिपण्णतो धम्मो मंगलं,

इन चारों मंगलों की पूजा करे, नैवेद्य चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे । उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, दूसरे दिन सत्पात्रों को दान देकर स्वयं पारणा करे ।

इस प्रकार प्रत्येक महिने के कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष की उन्हीं तिथियों में इस व्रत को चार महिने तक करे, कार्तिक अष्टान्हिका में व्रत का उद्यापन करे । उस समय चौबीसी विधान करके महाभिषेक करे । चतुर्विध संघ को दान देवे, चार वायने बनाकर एक देव, एक शास्त्र, एक गुरु को चढ़ाकर एक अपने घर लेकर जावे ।

कथा

इस व्रत को पूर्वभव में भरत व शत्रुघ्न ने पालन किया था, दशरथ के पुत्र होकर जिनदीक्षा लेकर मोक्ष को गये ।

राजा श्रेणिक, रानी चेलना की कथा पढ़े ।

लक्ष्मीमंगल व्रत कथा

आश्विन कृष्ण बारस को एकाशन करके त्रयोदशी के दिन शुद्ध होकर मन्दिर जी में जावे, प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, सुमतिनाथ तीर्थंकर यक्षयक्षि सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुमतिनाथ तीर्थंकराय तुम्बरूयक्ष पुरुषदत्तायक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, एक अर्घ्य नारियल रखकर पूर्णार्घ्य रूप में चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, दूसरे दिन पूजा करके मुनियों को आहार दान करके स्वयं पारणा करे।

इस प्रकार पांच महिने उसी तिथि को व्रत पूजन करे, अन्त में उद्यापन करे, उस समय सुमतिनाथ तीर्थंकर विधान करे, महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

राजा श्रेणिक की कथा पढ़े, रानी चेलना की कथा पढ़े।

लघुकल्याणक व्रत

लघुकल्याणक व्रत दिन पंच, एक एक दिन वहि विधि संच।
प्रोषध कंजिक एक लठान, रूक्ष जु अनागार पहिचान।

—वर्ध० पु०

भावार्थ :—यह व्रत पांच दिन में पूरा होता है जिसमें प्रथम १ दिन उपवास, दूसरे १ दिन कांजिक भोजन, तीसरे १ दिन एक लठाना, चौथे एक दिन रूक्ष भोजन, पांचवें १ दिन मुनिवृत्ति से भोजन करे। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे। त्रिकाल नमस्कार मन्त्र का जाप्य करे।

वीरशासनजयन्ती व्रत

वासस्स पढममासे पढमे पक्खम्मिसावणे बहुले।
पडिवद पुव्वदिवसं तित्थुप्पत्ति अभिजम्हि।।

(धवला प्रथम खंड)

भावार्थ :—श्रावण कृष्णा प्रतिपदा के प्रथम प्रहर में अन्तिम तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी की दिव्य वाणी प्रकट हुई थी और उसके द्वारा अनन्तानन्त संसारी जीवों का कल्याण हुआ था, अतएव इस पवित्र दिन उपवास करे। श्री महावीर स्वामी का अभिषेक पूजन करे। **ॐ ह्रीं श्री महावीराय नमः** इस मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे।

श्रीवीरजयंती व्रत

चैत्र शुक्ल तेरस दिन जान, उपजे वीरनाथ भगवान।
सुरपति आय मेरु पधराय, कियो अभिषेक महासुखदाय ।।

भावार्थ :—चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन कुन्दनपुर नगर में सिद्धार्थ राजा के घर त्रिशलादेवी की कूख से श्री महावीर स्वामी ने जन्म लिया। इसी पवित्र दिन सौधर्म इन्द्र ने आकर भगवान को मेरु पर्वत पर ले जाकर अभिषेक किया था। इस दिन उपवास करे। धर्मप्रभावना के कार्य करे। धर्मध्यान में सारा दिन व्यतीत करे।

वस्तुकल्याण व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन इन महीनों में आने वाले कोई भी एक अष्टान्हिका की अष्टमी के दिन व्रतिकों को स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजा द्रव्य अभिषेक का सामान लेकर मन्दिर में जाना चाहिए। तीन प्रदक्षिणा देकर जिनेन्द्र को नमस्कार करे, सिंहासन पर जिनेन्द्र प्रभु की प्रतिमा स्थापन करके पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तर शतसहस्रनाम सहित श्री जिनेन्द्राय नमः स्वाहा।

सफेद पुष्पों से १०८ बार इस मन्त्र से जाप करे, श्रुत व गुरु की पूजा करना, यक्षयक्षी व क्षेत्रपाल की पूजा करना, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जप करना, शास्त्रस्वाध्याय करके व्रत कथा कोष को पढ़ना, भगवान के आगे अखण्ड दीप (नंदादीप) लगाना, महाअर्घ्य के द्रव्यों को थाली में लेकर तीन प्रदक्षिणा देना, उस दिन ब्रह्मचर्य व्रत पालन करना, एक ही वस्तु को खाकर उस दिन एकासन करना, नवमी को पूर्वोक्त प्रमाण से पूजा करना, दो माला णमोकार मन्त्र की फेरे, दो वस्तु खाकर रहे, दशमी के दिन पहले के समान पूजा करता हुआ तीन माला णमोकार मन्त्र की फेरे, तीन पदार्थ कोई भी खाकर रहे।

इसी प्रकार एकादशी और द्वादशी के दिन भी पूजा करता हुआ, चार-२ वस्तु खाकर रहे और णमोकार मन्त्र की माला भी चार-२ फेरे। त्रयोदशी, चतुर्दशी

और पूर्णिमा को भी पूर्वोक्त विधि से पूजा करे, मात्र क्रमशः माला तीन, दो, एक और खाने के पदार्थ भी क्रमशः घटाते जाना, तीन पदार्थ, २ पदार्थ, एक पदार्थ, आठ दिनों तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, प्रतिपदा को पूर्वानुसार पूजा करके एकासन करे।

इसी विधि यह व्रत आठ वर्ष तक करना चाहिये, अन्त में उद्यापन करके, एक धातु के ऊपर श्रुतस्कन्ध की स्थापना करके, प्रतिष्ठा करनी चाहिये, फिर श्रुत-स्कन्ध की पूजा करना, बारह बांस की टोकरी मंगाकर उसमें नाना प्रकार की मिठाई और वायना द्रव्य, गन्ध, अक्षत, फूल, फल, खाने का पान डालकर वायना बांधे, उन तैयार की हुई १२ टोकरियों में से एक देव, एक शास्त्र, एक गुरू, एक पद्मावती, रोहिणी और व्रत करने वाले, व्रत कथा पढ़ने वाले, आर्यिका और सौभाग्यवती इन सब को एक-२ वायना देना चाहिये, चौबीस मुनिराज को पुस्तकें, पिच्छी, कमण्डलु देवे, आर्यिका माताजी को आहारदान देवे।

इस व्रत के प्रभाव से व्रतिक को भोगोपभोग सुख की प्राप्ति होकर नियम से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में आर्य खण्ड है, वहां एक मगध देश है, उस मगध देश में राजग्रह नाम का एक सुन्दर नगर है। उस नगर में पहले एक राजा श्रेणिक राज्य करते थे, श्रेणिक की रानी का नाम चेलना था, राजा श्रेणिक का एक धनमित्र नाम का सेठ था, उस सेठ की धनवति नाम की गुणवान पत्नी थी, उस सेठ का एक पुत्र नंदिमित्र था, वो सप्तव्यसन में लिप्त था।

आगे एक दिन उस नगर के उद्यान में रहने वाले सहस्रकूट चैत्यालय में दर्शन के लिए एक पिहिताश्रव नाम के महामुनिश्वर अपने संघ सहित पधारे, नन्दी-मित्र अपने मित्रों सहित वहां आया, मुनि समुदाय को देखकर बहुत ही क्रोध से व कामाहंकार से संतप्त होकर मुनिराज को मारकर वहां डालकर चला जाऊं, ऐसा

विचार करके प्रयत्न करने लगा, लेकिन मुनिराज आहार के लिए नगर में चले गये, उसने देखा कि मेरा कार्य नहीं हुआ तब वह मुनिराज के बैठने के स्थान पर शव डाल कर चला गया ।

इस पाप से वह सातवें दिन भयंकर कुष्ट से ग्रसित हो गया और महान दुःखित होता हुआ मर गया, मरकर एक जंगल में बहुत बड़ा व्याघ्र हुआ । एक दिन शिकारी ने उस व्याघ्र को मार गिराया । मरकर प्रथम नरक में नारकी होकर उत्पन्न हुआ, वहां की आयु पर्ण कर बकरा होकर उत्पन्न हुआ, वहां से मरकर दूसरे नरक में गया, वहां की आयु भोगकर मरा और सूकर पर्याय में उत्पन्न हुआ है ।

एक दिन उस सूकर को कुत्ते ने मार डाला, वहां से मरकर तीसरे नरक में गया, वहां का दुःख भोगकर सर्प पर्याय में गया, वहाँ उसको एक गरुड़ ने पकड़कर मार डाला, मरकर चौथे नरक में गया, चौथे नरक में दस सागर की आयु पाकर घोर दुखों को सहन करने लगा, आयु समाप्त होने के बाद वहां से मरा और भैंसे की पर्याय में आकर उत्पन्न हुआ, वहां से मरकर पांचवें नरक में सतरह सागर की आयु लेकर जन्मा और घोर दुःख सहन करने लगा, वहां से निकल कर मेढ़क की पर्याय में गया और हाथी के पांव से दबकर मर गया और छठे नरक में जाकर उत्पन्न हो गया, वहां से कौशल देश के अन्दर एक कोशाँबी नगर में ब्राह्मण के घर पाड़ा होकर जन्मा, बरसात काल में होने वाले कीचड़ में एक दिन फँस गया और उसके ऊपर बिजली पड़ गयी और वह पाड़ा मरणासन्न हो गया ।

वहां एक दयाबुद्धि को धारण करने वाले मुनिराज ने उसके कान में पंच-नमस्कार मन्त्र दिया, मन्त्र को शांति से सुनकर मरने से वह पुष्कलावती देश के पुण्डरिकिणी नगर में विद्युत्प्रभ राजा की बिमलावती पटरानी के गर्भ से पुत्र होकर पैदा हुआ, जन्मते समय ही उसके हाथ, पांव, लूले, लंगड़े और शरीर कुबड़ा था, राजा ने उसको देखा, देखते ही राजा का मन बहुत ही खेद-खिन्न हुआ—राजा ने उसका नामकरण भी नहीं किया, बड़ा हुआ तो भी उसको बोलना नहीं आता था, इसलिए लोग उसको चंबु कहकर बुलाने लगे ।

एक दिन उस नगर के उद्यान में जिनचैत्यालय का दर्शन करने के लिए दो

चारण मुनिश्वर आये, वनपाल ने राजा को समाचार दिया, समाचार सुनते ही राजा को बहुत आनन्द हुआ, सर्व वस्त्राभरण वनपाल को दे दिया और अपने पुरजन-परिजन सहित पैदल उद्यान में गया, भगवान का दर्शन करके मुनिराज को भक्ति से नमोस्तु किया, मुनिराज का धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा हाथ जोड़कर विनती करने लगा कि हे स्वामिन् आप इस राजकुमार के भवप्रपंच को सुनाओ, मुनिराज ने राजा को कुमार का जैसा भव दुःख था उसको कह सुनाया, इस कुमार ने पूर्व जन्म में मुनिराज के ऊपर उपसर्ग किया था इसीलिए इसको इतना कष्ट भोगना पड़ा, अगर इसको सुख चाहिये तो वस्तुकल्याण व्रत को करे, व्रत के प्रभाव से कामदेव के समान सुन्दर होकर सर्वसुखों की प्राप्ति होगी।

ऐसा कहकर राजा को व्रत का विधान कह सुनाया, आगे उस कुमार ने व्रत को ग्रहण कर यथाशक्ति पालन किया, उद्यापन किया, इस कारण से उसको इस लोक का सुख मिलकर परलोक का सुख भी प्राप्त हुआ।

अतः हे भव्य जीवो ! आप भी सुखी होने के लिए इस व्रत का यथाशक्ति पालन करो।

वृश्चिकसंक्रमण व्रत कथा

मकर संक्रमण की तरह पूर्ववत् पूजा विधान करे, मात्र फरक इतना ही है कि कार्तिक महीने में वृश्चिक संक्रमण आवे तब इस व्रत को करे, आठ स्वस्तिक बनाकर चन्द्रप्रभ तीर्थंकर की आराधना करे, मन्त्र जाप्य आदि सब पूर्ववत् करे। कथा भी उसी समान पढ़े।

वज्रमध्य व्रत

यह व्रत ३८ दिन में पूरा होता है। इसमें २९ उपवास और ९ पारणे होते है। इस व्रत का प्रारम्भ कभी भी कर सकते हैं, पर पूर्ण होने तक अखण्ड करना चाहिये।

इसका नियम एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, फिर पांच

उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा इस प्रकार व्रत एक वर्ष करना चाहिये । पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये । यदि उद्यापन की शक्ति न हो तो व्रत दूना करना चाहिए ।

इसकी दूसरो विधि—प्रथम पांच उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा और एक उपवास एक पारणा करके पुनः दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा इस प्रकार २६ उपवास ६ पारणे ऐसे ३८ दिन में यह व्रत करना चाहिये ।

—हस्तलिखित गुटका

अथ वारिषेण कथा

सकल श्रेयोनिधि व्रत कथा

व्रत विधि—१२ महीने में कोई भी शुक्ल पक्ष के प्रथम शनिवार को एकाशन करे और रविवार को प्रातःकाल शुद्ध कपड़े पहन कर अष्टद्रव्य लेकर मन्दिर में जाये । दर्शन वगैरह करने के बाद वेदि पर श्री पद्मप्रभ तीर्थंकर की प्रतिमा कुसुमवर मनोवेगा यक्षयक्षी सहित स्थापित करे । पंचामृत अभिषेक करे । भगवान के सामने एक पाटे पर छः स्वस्तिक निकालकर उसके ऊपर ६ पान व अष्टद्रव्य रखे । वृषभनाथ से पद्मप्रभु तक अष्ट स्तोत्र पूजा अर्चना जयमाला पढ़े । श्रुत, गुरु यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करे ।

जाप—ॐ ह्रीं अर्हं श्री पद्मप्रभ जिनेंद्राय कुसुमवर मनोवेगा यक्षयक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे, णमोकार मन्त्र का भी जाप करे । यह कथा भी पढ़े ।

आरती करे । उस दिन उपवास करे । सत्पात्र को दान दे । दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करे ।

इस प्रकार यह व्रत नव रविवार करके अन्त में उद्यापन करावे । श्री पद्म-प्रभ तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे । चतुःविधि संघ को दान दे । दीन अनाथ आदि को अभयदान दे ।

कथा

श्रेणिक महाराज ने व चेलना ने यह व्रत किया था, अतः इन्हीं की कथा पढ़े ।

वसंततपव्रत किंवा रुद्रतर वसंतव्रत

इसके दो भेद हैं (१) रुद्रतर वसंत तप व्रत (२) भद्रतर वसंत तप व्रत ।

रुद्रतर वसंत तप व्रत—प्रथम पाँच उपवास करके छठे दिन एकाशन करे, फिर क्रम से ६ उपवास एक एकाशन, सात उपवास एक एकाशन (पारणा) आठ उपवास एक एकाशन, नव उपवास एक एकाशन ऐसे ३५ उपवास ५ एकाशन, ४० दिन में यह व्रत पूरा होता है । व्रत पूरा होने पर मन्दिर में मण्डल निकालकर जिनेश्वर की पूजा करनी चाहिये । उद्यापन करना चाहिये, यथाशक्ति दान देना चाहिये । इसमें महीना, पक्षतिथि का नियम नहीं है पर व्रत पूर्ण होने तक अखण्ड करना चाहिये ।

(२) **भद्रतर वसंत तप व्रत**—भद्रतर वसंत व्रत में प्रथम पाँच उपवास करके एक पारणा करना, फिर दो उपवास एक पारणा, सात उपवास एक पारणा, फिर दो उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, ९ उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, ६ उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, ७ उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, ८ उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, ९ उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, पाँच उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, ६ उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, सात उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, सात उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, ८ उपवास एक पारणा, ९ उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, ६ उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, इस प्रकार यह व्रत करना चाहिये ।

इस व्रत के कुल १७५ उपवास और ३८ पारणे होते हैं कुल २०४ दिन का यह व्रत है । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये नहीं तो व्रत दूना करना चाहिये ।

(५+२+७+२+८+२+६+२+५+२+६+२+७+२+६+२+७+२+८+२+६+२+५+२+७+२+८+२+७+२+८+६+२+५+२+६+२ इस प्रकार क्रम है । —गोविन्दकृत व्रत निर्णय

इसकी और विधि इस प्रकार है—

इसको रुद्रवसंत व्रत कहते हैं । इसमें ३५ उपवास ९ पारणे होते हैं अर्थात् ४४ दिन का यह व्रत है । इसका क्रम दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, छः उपवास एक पारणा, छः उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा । यह व्रत प्रारम्भ से अंत तक पूरा करना चाहिए । त्रिकाल णमोकार मन्त्र का जाप करना चाहिए । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए ।

—जैन व्रत विधान संग्रह

वर्तमान चतुर्विंशति व्रत

जम्बूद्वीप आदि अढ़ाई द्वीप में सुदर्शन, विजय, अचल, मन्दर और विद्युन्माली ये पांच मेरु पर्वत है । इन पर्वतों के दक्षिण और उत्तर में पांच भरत ५ ऐरावत क्षेत्र हैं । वह वर्तमान २४ तीर्थंकर हुए हैं वे सब मिलकर २४० तीर्थंकर हुए, उनके नाम पर एक-एक उपवास करना, इसमें मास, पक्ष, तिथि का नियम नहीं है । पूर्ण होने पर उपवास करना चाहिये ।

—गोविन्दकृत व्रत निर्णय

विमानपंक्ति व्रत

यह अकाम्य व्रत है । इसमें किसी भी प्रकार की इच्छा नहीं की जाती इसलिये यह अकाम्य व्रत है । स्वर्ग में ६३ पटल हैं इसलिये एक-एक पटल के ४–४ उपवास एक बेला और अन्त में तीन उपवास करके व्रत पूर्ण करना चाहिये ।

इसका प्रारम्भ कभी-भी कर सकते हैं परन्तु श्रावण सुदि प्रतिपदा को करना अच्छा है । इस दिन शुरू किया तो प्रतिपदा को उपवास द्वितीया को एकाशन तृतीया के उपवास चतुर्थी को उपवास इस क्रम से करना चाहिये । इस प्रकार इस व्रत में ६३×४=२५२ उपवास ६३ बेले व ३ उपवास अर्थात् एक पटल के कुल ३८१ उपवास होते हैं । ऐसे यह व्रत ६६७ दिन में पूरा होता है । यह व्रत प्रारम्भ से

अन्त तक करते रहना चाहिये, खण्ड नहीं करना चाहिये । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये ।

—जैन व्रत विधि

इसकी दूसरी विधि—यह व्रत १४४ दिन में पूरा होता है । शुक्ल पक्ष में किसी भी तिथि को व्रत प्रारम्भ करना चाहिये । प्रथम १२ उपवास क्रम से करके १२ एकाशन करना, फिर १२ गौरस से ही भोजन करना, फिर १२ अल्पाहार, १२ एकाशन, १२ केवल मूंग खाकर आहार करना, फिर १२ बिना नमक, फिर १२ केवल पानी लेकर, फिर १२ घी छोड़कर आहार लेना, इस प्रकार १४४ दिन का यह व्रत है । भोजन अन्तराय पालकर करना चाहिये । व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये ।

—क्रियाकोष किसनसिंह कृत

अथ विषयानंदनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि—पहले के समान करना चाहिये । अन्तर सिर्फ इतना है कि बैशाख शु० १० के दिन एकाशन करें । ११ के दिन उपवास करें । नव देवता पूजा आराधना, जाप करें, पन्ने मांडे ।

अथ वात्सल्यांग व्रतकथा

जाप—पहले के समान करे अन्तर सिर्फ इतना है कि कातिक शु० ६ को एकाशन करे ७ के दिन उपवास करे ।

जाप—ॐ ह्रीं अर्हं वात्सल्यसम्यग्दर्शनांगाय नमः स्वाहा । सात दम्पतियों को खाना खिलाये ।

यह सम्यग्दर्शन वात्सल्यांग पहले विष्णुकुमार मुनी ने पालन किया था, इसलिए उसकी अच्छी गति हुयी ।

विद्यामंडूक व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला पंचमी के दिन शुद्ध होकर जिन मन्दिर में जावें, भगवान को नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणि का अभिषेक करे ।

पंच ज्ञान प्रकाशाय, पंचेन्द्रियनिवारिणे ।
पंच मंगल नाशाय, पंच कल्याण कारिणे ।।१।।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाते हुए एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, एकासन करे, इसी क्रम से प्रत्येक महिने की शुक्ल पंचमी को पूजा कर. व्रत करे, कार्तिक शुक्ला पंचमी के दिन व्रत का उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठी विधान करके महाभिषेक करे, अथवा एक नवीन प्रतिमा लाकर पञ्चकल्याण करावे, चतुर्विध संघ को दान देवे, मुनियों को पांच शास्त्र भेंट करे ।

कथा

प्रभामण्डल कामदेव ने अपने पूर्व भव में इस व्रत को पालन किया था, उसी के प्रभाव से इस भव में १४ विद्या चौसठ कला में अत्यंत प्रवीण होकर अनेक सुख का भोग करने लगा, अंत में मोक्ष को प्राप्त किया ।

वैक्रियिक शरीरनिवारण व्रत कथा

औदारिक व्रत कथा के समान इस व्रत की सब विधि है, मात्र फाल्गुन शुक्ला चतुर्थी को एकाशन, पंचमी को उपवास, नव पूजा पूरी होने पर आषाढ़ अष्टान्हिका में व्रत का उद्यापन करे, कथा पूर्वोक्त पढ़े ।

आहारक शरीर निवारण व्रत कथा

इसकी कथा भी उपरोक्त प्रमाण ही है, फरक आषाढ़ शुक्ल ४ को एकाशन पंचमी को उपवास, नव पूजा पूर्ण होने पर कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे, कथा भी उसी प्रकार करे ।

तैजस शरीर निवारण व्रत कथा

उपरोक्त प्रमाण यहां भी सब विधि समझे, मात्र फरक इतना है कि, वैशाख शुक्ला चतुर्थी को एकाशन और पंचमी को उपवास । १३ व्रत पूजा पूर्ण होने पर कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे, बाकी सब पूर्ववत् समझना, कथा भी पूर्व की ही पढ़े ।

कार्मण शरीर निवारण व्रत कथा

इस विधि को भी पूर्ववत् समझना, फरक मात्र जेष्ठ ४ को एकाशन करे, पंचमी को उपवास करे, चौबीस तीर्थंकर की पूजा करे, मन्त्र जाप भी वही करे, १० पूजा व्रत समाप्त होने पर कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे, शिखरजी विधान करे, कथा पूर्ववत् समझना।

वेदनीय कर्मनिवारण व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला एकादशी को शुद्ध होकर मन्दिरजी में जावे, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, संभवनाथ भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, गुरु व श्रुत, यक्षयक्षिणि क्षेत्रपाल की पूजा करे, अखण्ड दीपक भी जलावे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं संभवनाथ त्रिमुख यक्षे प्रज्ञप्ति यक्षयक्षिसहिते नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ पुष्प से जाप्य करे, १०८ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, दान देवे, दूसरे दिन दानादिक करके स्वयं पारणा करे।

इस प्रकार प्रत्येक शुक्ल व कृष्ण पक्ष की उसी तिथि को व्रत पूजा करके अन्त में अष्टान्हिका को उद्यापन करे, उस समय संभवनाथ तीर्थंकर विधान करके, महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे, तीन सौभाग्यवती स्त्रियों को वस्त्रालंकार देकर सम्मान करे।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

अथ विपरीतनय व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृ. ५ के दिन एकाशन करे, ६ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, णमोकार मन्त्र का जाप ७ बार करे, सात दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले नागपुर नगर में नागसेन राजा अपनी नागदत्ता महारानी के साथ राज्य करता था, उसका पुत्र नागेन्द्र उसकी स्त्री नागवासु सारा परिवार सुख से रहता था। एक दिन उन्होंने शिवगुप्त भट्टारक महामुनि के पास व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया जिससे सर्व सुख को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गये।

अथ ब्रह्मचर्य महाव्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ कृ. ७ के दिन एकाशन करे, ८ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, ४ दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले श्रीरंगपट्टम नगरी में श्रीरंग राजा श्रीरंग महादेवी अपनी महारानी के साथ रहता था, उसका पुत्र श्रीरंगकुमार और पुरोहित सारा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने श्रीषेण मुनि से व्रत लिया उसका यथाविधि पालन किया। सर्व सुखों को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ वीर्यान्तराय निवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृ. १२ के दिन एकाशन करे, १३ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, णमोकार मन्त्र का जाप १०८ बार करे। पांच दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले महीन्द्रपुर नगरी में महिपाल राजा अपनी स्त्री देवीरानी और अपने पुत्र महेन्द्र कुमार और उसकी स्त्री महीदेवी सारा परिवार सुख से रहता था, उन्होंने महादिव्य ज्ञानी मुनि के पास यह व्रत लिया, उसका यथाविधि पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया और अनुक्रम से मोक्ष गये।

अथ व्यवहारनय व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृ. ६ के दिन एकाशन करे सात को उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, णमोकार मन्त्र का जाप १०८ बार करे, आठ दम्पतियों को भोजन करावे। वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले राजपुर नगरी में गजगामिनी नाम का राजा महारानी के साथ रहता था, उसका पुत्र गजकुमार उसकी स्त्री गजनती पूरा परिवार सुख से रहता था, एक दिन उन्होंने देवसेनाचार्य मुनि के पास यह व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया जिससे सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ विनयव्रत कथा

व्रत विधि—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृ० १ के दिन एकाशन करे, २ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, णमोकार मन्त्र का जाप तीन बार करे, तीन दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले आनन्दपुर नगरी में सुप्रतिष्ठ नामक राजा लक्ष्मीमति महारानी के साथ रहता था, उसका पुत्र सुरेन्द्र, उसकी स्त्री, कमलावती, प्रधान नीतिसागर, उसकी स्त्री शीलवती, पुरोहित सुरकीर्ति, उसकी स्त्री कामरूपिणी, राजश्रेष्ठी लक्ष्मीकांत, उसकी पत्नि लक्ष्मीमती, पूरा परिवार सुख से रहता था। एक दिन उन्होंने मुनिगुप्ताचार्य के पास यह व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुकम से मोक्ष गए।

अथ विपरीतमिथ्यात्वनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि—पहले के समान करें। अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख शु० १२ के दिन एकाशन करें। १३ के दिन उपवास व नवदेवता पूजा, आराधना व मन्त्र जाप करें। पत्ते मांडे।

अथ वायुकाय निवारण व्रत कथा

विधि—पहले के समान ही है।

अन्तर सिर्फ इतना है कि चैत्र शुक्ला ८ को एकाशन करे और ९ को उपवास करे। पुष्पदन्त तीर्थंकर की आराधना मन्त्र जाप व पान मांडना चाहिये।

कथा पूर्ववत्।

वीर्याचार व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल चतुर्थी के दिन शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, अभिनंदन भगवान की, यक्षयक्षि की प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा तथा यक्षयक्षी व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अभिनन्दन तीर्थंकराय यक्षेश्वरयक्ष वज्रशृंखला यक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उपवास करे, दूसरे दिन पूजा कर व्रत करे।

इस प्रकार ८ चतुर्थी पूजा करके कार्तिक अष्टान्हिका में अभिनन्दन विधान करके अभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

इस व्रत को अयोध्या के राजा ने पालन किया था, उससे वो नेमिनाथ तीर्थंकर होकर मोक्ष को गये।

राजा श्रेणिक रानी चेलना की कथा पढ़े।

वर्धमान व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल द्वितीया से षष्टि पर्यन्त प्रातःकाल नित्य स्नान कर शुद्ध होकर मन्दिर में आवे, तीन प्रदक्षिणापूर्वक भगवान को नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि

की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की पूजा करे, पांच प्रकार का नैवेद्य चढ़ावे, अखण्ड दीप जलावे ।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, सत्पात्रों को दान देवे, यथाशक्ति उपवास आदि करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, इस प्रकार इस व्रत को पांच दिन करे, अन्त में उद्यापन करे, मध्यम से इस व्रत को पांच महिने करे, पांच वर्ष उत्तम है, इन तीनों में से कोई एक प्रकार का व्रत करे, अन्त में व्रत का उद्यापन करे, महाभिषेक करे, चार प्रकार का दान देवे ।

कथा

इस व्रत को मेरु मन्दर राजा ने किया था, कथा में रानी चेलना की कथा पढ़े ।

वचनगुप्ति व्रत कथा

कार्यगुप्ति व्रत विधान के अनुसार ही इस व्रत को करे, मात्र इसमें अजितनाथ तीर्थंकर की पूजा आराधना करना है ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अजितनाथ तीर्थंकराय महायक्षयक्ष रोहिणी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ पुष्पों से जाप्य करे, बाकी सब विधि पूर्ववत् समझना ।

कथा

इस व्रत को भूतिलक नाम के राजा ने किया था, दीक्षा लेकर वचनगुप्ति का अच्छी तरह से पालन किया था, उसके कारण क्रमशः स्वर्ग सुख और अन्त में मोक्ष सुख को प्राप्त किया था ।

इस व्रत में राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

वसुधा भूषण व्रत कथा

कार्तिक शुक्ला पौर्णिमा के दिन शुद्ध वस्त्र पहन कर मन्दिर में जावे,

नमस्कार करे, पञ्चपरमेष्ठि की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, पञ्चपरमेष्ठि की अलग-अलग पूजा करे, नैवेद्य चढ़ावे, जिनवाणी व गुरु की पूजा करे, यक्ष-यक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र को १०८ सुगन्धित पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, अन्त में एक पूर्ण अर्घ्य के साथ नारियल लेकर चढ़ावे, मंगलारती करे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, सत्पात्रों को दान देवे, दूसरे दिन व्रत पूजा करके दान करके पारणा करे।

इस प्रकार पांच पोर्णिमा को पूजा करके अन्त में फाल्गुन शुक्ल पोर्णिमा के दिन उद्यापन करे। उस समय एक नवीन परमेष्ठि की मूर्ति लाकर पंच कल्याणक प्रतिष्ठा करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

इस व्रत को वज्रजंघ श्रीमती ने विधिपूर्वक किया था, वज्रजंघ श्रीमति रानी की कथा पढ़े।

वर्णसागर व्रत कथा

श्रावण महिने के श्रवण नक्षत्र को शुद्ध होकर जिनमन्दिर जी में जावे प्रदक्षिणा पूर्वक नमस्कार करे पद्मप्रभ भगवान की मूर्ति यक्षयक्षि सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, भगवान के आगे एक पाटे पर स्वस्तिक निकाल कर ऊपर पान रखे, उसके ऊपर अक्षत, फल, फूल, नैवेद्य वगैरह रखे, भीजे हुए चने का पूञ्ज, हल्दी कुंकु हवन सूत्र रखे, श्री, ह्रीं, धृति, कीर्ति बुद्धि व लक्ष्मी, इन छह देवियों की पूजा करे, मूल नायक, सरस्वती, गणधर और उपरोक्त छह देवताओं को मिलाकर नौ नैवेद्य चढ़ावे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पद्मप्रभ तीर्थंकराय कुसुमवर यक्ष, मनेवेगायक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ कमल पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, मंगल आरती पूर्वक एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, चतुर्विंश तीर्थंकर की स्तुति व प्रतिक्रमण करके भगवान के सामने रखे हवन सूत्रों को स्त्रियां अपने कंठ में धारण करे, गुरु का आशीर्वाद लेकर अपने घर जावे, पुरुष लोगों को होम करके यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र को बोले, मुनि संघ को चारों प्रकार का दान देवे, इस व्रत में पुरुष अगर वंश परम्परा तक करता जावे स्त्रियाँ छह वर्ष तक अथवा छह महीने तक करे, आगे उसी तिथि को व्रत करे पांच बार, अन्त में उद्यापन करे, उस समय पद्मप्रभ तीर्थंकर का विधान करके महाभिषेक करे। चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

अथ वास्तुकुमार व्रत कथा

व्रत विधि :— चैत्र शुक्ला १ के दिन इस व्रत के करने वाले को एकाशन करना और दूसरे दिन प्रातःकाल शुद्ध जल से स्नान करके शुद्ध वस्त्र धारण करना। पूजा द्रव्य हाथ में लेकर जिनालय जायें। मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा करके भगवान को साष्टांग नमस्कार करें। पीठ पर पञ्चपरमेष्ठी स्थापित कर पञ्चामृत अभिषेक करे। अष्ट द्रव्य से पूजा करे। श्रुत व गणधर पूजा करके यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करना।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प चढ़ाना। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करना। इसकी व्रत कथा पढ़नी। तथा एक महार्घ्य लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा करके मंगल आरती करना। उस दिन उपवास करना। सत्पात्र को आहारादि देना, दूसरे दिन (चैत्र शु० ३) विधिपूर्वक वास्तु विधान करना। ४१ वास्तुकुमार की पृथक् पृथक् पूजा, नारियल चढ़ावे। सत्पात्र को आहार देकर पारणा करना। पश्चात् दूसरे दिन (चैत्र शु. ४) जल होम करना, चतुर्विध संघ को चार

प्रकार का आहार देना । इस प्रकार उद्यापन करना । चार दिन ब्रह्मचर्य पूर्वक धर्मध्यान से समय व्यतीत करना ।

इस व्रत के योग से गृहशुद्धि, परमगति शुद्धि, ग्रामभूमि शुद्धि, इहगति शुद्धि आत्मशुद्धि होकर शिव गति की प्राप्ति होती है ।

कथा

पुष्करार्ध द्वीप में मन्दर पर्वत के पूर्वभाग में विदेह क्षेत्र है । उसमें मंगलावती देश में मलखेड नगर है । वहां वज्रबाहु राजा वसुन्धरा रानी सहित राज्य करते थे । उनको वज्रजंग पुत्र तथा श्रीमती पुत्रवधु थी । मतिवर मन्त्री तथा उसकी स्त्री मतिवंती, नन्दन कुमार पुरोहित व उनकी पत्नी नंदि, अकंपन सेनापति व उसकी भार्या अमितवेगी, धनमित्र श्रेष्ठी व उसकी गृहणी धनवती इस प्रकार उनका परिवार था । एक बार राजा सम्पूर्ण परिवार सहित सागरसेन नामक चारण मुनियों के दर्शनों को गये थे । उस समय यह व्रत उनसे लेकर उसका यथाविधि पालन किया ।

उस योग से वह वज्रबाहु अपने सातवें भव में श्रेयांस राजा हुए । वैसे ही मतिवर मन्त्री भरत चक्रवर्ती हुए । अकंपन सेनापति बाहुबली हुए नन्दकुमार थे वे वृषभसेन गणधर हुए । धनमित्र ये अनन्तवीर्य हुए । ये सब दीक्षा लेकर घोर तप करके कर्मक्षय से मोक्ष गये । इस प्रकार इस व्रत का यही माहात्म्य है ।

विनयसंपन्नता व्रत व कथा

आषाढ़शुक्ला अष्टमी को स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहिने, पूजा अभिषेक का सामान लेकर जिन मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर जिनेन्द्रप्रभु की मूर्ति यक्षयक्षि सहित स्थापन कर अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से जिनेन्द्र भगवान की पूजा करे, जिनवाणी व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल का यथायोग्य सम्मान करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं परम ब्रह्मणे अनंतानंत ज्ञान शक्तये अर्हत्परमेष्ठिने नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्पों से जाप्य करे, सहस्र नाम पढ़े, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े ।

इसी क्रम से सात दिन पर्यन्त त्रिकाल पूजा करना चाहिये, सामायिक भी करनी चाहिये, मात्र उस समय पांच वर्णों से चतुष्कोणाकृति पांच मण्डल भूमि पर निकालकर उसके ऊपर एक सेर चाँवल बिछाकर मध्य में एक कलश रखे, उस कलश के ऊपर एक थाली रखे, उस थाली में जिनबिंब की स्थापना करके अष्टद्रव्य से पूजा करे, मण्डल के चारों कोनों में चार दीपक जलावे, चतुर्दशी के दिन इस व्रत का उद्यापन करे, उस समय चार बार भगवान का दिन में अभिषेक करके, अष्टद्रव्य से भगवान की पूजा करे, पाँच प्रकार का नैवेद्य बनाकर चढ़ावे, चार निरंजन, चार कलश, ये उपकरण भगवान के आगे रखे, चार वायना करके देव को एक, गुरु को एक, शास्त्र को एक वायना चढ़ावे, स्वयं एक लेवे, मुनिसंघ को आहारदान देकर अपने स्वयं पारणा करे, यही इस व्रत की उद्यापन विधि है।

कथा

राजगृही नगर के विपुलाचल पर्वत पर भगवान महावीर के समवशरण में राजा श्रेणिक ने प्रवेश कर भक्ति से वन्दन किया और मनुष्य के कोठे में जाकर बैठ गये, शांतचित्त से भगवान का उपदेश सुनने के बाद हाथ जोड़कर गौतम स्वामी को कहने लगे कि हे भगवान ! ये जो हमारी अनेक स्त्रियां हैं ये सब हमको कौनसे पुण्य से प्राप्त हुई हैं, तब गौतम गणधर स्वामी कहने लगे कि हे श्रेणिक ! अब मैं इन स्त्रियों के पूर्वभवों को कहता हूं सो सुनो। यह सब स्त्रियाँ पहले भव में उज्जयनी नगर में एक प्रधान के घर में बहनें थी, पिहिताश्रव मुनिराज से सब ने अलग-अलग व्रत ग्रहण किये थे, व्रत के प्रभाव से स्वर्ग में देवी और वहां से चयकर, अलग-अलग राजाओं के यहां राजपुत्रियां हुई और अब तुम्हारी रानियां हुई हैं। रानी चेलना ने पूर्वभव में विनय संपन्नता व्रत का पालन किया था, विजयावति राणी ने कल्पाभर व्रत को किया था, जयावती रानी ने केवलबोध व्रत को किया था, सुमति रानी ने चारित्रमान, वसुधा रानी ने श्रुतस्कंध, नंदा ने त्रैलोक्य-सार, लक्ष्मीदेवी ने दुर्गतिनिवारण, मलयावति ने कल्याणतिलक, ललितांगी ने अनंतसुख, सुभद्रा ने समाधिविधान, श्यामादेवी ने भवदुःख निवारण, विमलादेवी ने मोक्षलक्ष्मी निवास व्रत किया था, इस पुण्य का प्रभाव है कि आपकी प्राण वल्लभायें हुई हैं, गौतम स्वामी ने सबको विनय संपन्नता व्रत का प्रभाव कह सुनाया, सबने पुनः

व्रत को ग्रहण किया, सब क्रमशः स्वर्ग में देव उत्पन्न हुई ।

शिवरात्री व्रत कथा

माघकृष्णा चतुर्दशी के दिन प्रतिक स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारणकर पूजाभिषेक का द्रव्य लेकर जिन मन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर आदिनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा गोमुख यक्ष और चक्रेश्वरी देवी सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, इस प्रकार दिन में चार बार अभिषेक पूजा करे, पंचपकवान का नैवेद्य बनाकर चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आदिनाथाय गोमुखयक्ष चक्रेश्वरी देवी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, सहस्रनाम पढ़े, श्री आदिनाथ चरित्र पढ़े, बाद में जिनवाणी और गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की भी पूजा करे ।

एक थाली में चौदह पान लगाकर ऊपर अर्घ्य रखे, एक श्रीफल रखे, अर्घ्य की थाली हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, सत्पात्रों को आहारदान देवे, रात्रि में देशभक्ति व पंचस्तोत्रादि पढ़कर स्वाध्याय करे, रात्रि जागरण करे प्रातः उपरोक्त पूजा करके सत्पात्र को दान देकर, स्वयं पारणा करे । इस प्रकार व्रत पूजा पांच वर्ष करके अन्त में उद्यापन करे, उद्यापन के समय आदि तीर्थंकर की एक यक्षयक्षि सहित नवीन प्रतिमा लाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, चतुर्विध संघ को आहारादि दान देवे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में पुंडरीकिणी नगरी है, उस नगरी का राजा सूरसेन अपनी रानी मंगलावती सहित राज्य करता था, राजा को रुद्रसेन, विष्णुसेन नाम के दो पुत्र थे, वे दोनों यौवन अवस्था में आने पर सप्त व्यसनी हो गये, अपने पुत्रों की ऐसी दशा देखकर राजा को वैराग्य उत्पन्न हो गया और एक

मुनिराज के पास जाकर दीक्षित हो गया और घोर तपश्चरण करने लगा, अन्त में समाधिकरण कर स्वर्ग में देव उत्पन्न हो गया ।

उधर वे दोनों सप्त व्यसनों के कारण पाप कमाकर आर्तध्यान से मरे और नरक में पैदा हो गये, वहां का कष्ट भोगकर और भी अनेक पर्यायों में भ्रमण करने लगे, कुछ काल बाद वे दोनों हेमगिरि पर व्याघ्र हो गये, उस पर्वत की गुफा में जयंधर नामक मुनिराज रहते थे, उन मुनिराज को देखने से वे दोनों व्याघ्र शांत हो गये, मुनिराज के सम्बोधन करने पर उन्होंने अणुव्रतों को ले लिया व्रती बनकर अन्त में समाधि से मरकर दोनों व्याघ्र सौधर्म स्वर्ग में देव हो गये, वहां के सुख भोगकर अन्त में वहां से चयकर पूर्वविदेह के मंगलावति देश में अयोध्या नगर है, उस नगर में विमलसेन राजा राज्य करता था, उस राजा की सुमंगलादेवी रानी के गर्भ से वे दोनों देव पैदा हो गये । पुत्रों के बड़े हो जाने पर राज्य भार पुत्रों को देकर राजा ने दीक्षा ग्रहण कर ली, और तपश्चरण कर स्वर्ग को गया ।

इधर जयसेन राजा को नवनिधि चौदह रत्न उत्पन्न हुये, राजा जयसेन चक्रवर्ती होकर सुख भोगने लगा ।

एक बार वह चक्रवर्ती राजा मतिसागर केवलि के पास गया और हाथ जोड़कर नमस्कार करता हुआ कहने लगा कि हे भगवान संसार समुद्र से पार होने के लिये कोई ऐसी व्रत विधि कहो जिससे शीघ्र ही संसार से पार उतरा जाय, तब भगवान ने उसको शिवरात्री व्रत की विधि समझाई, चक्रवर्ती ने आनन्द से उस व्रत को स्वीकार किया और नगर में वापस लौट आया । नगर में आकर व्रत को अच्छी तरह से पालन किया, अन्त में व्रत का उद्यापन किया, कुछ काल राज्य सुख भोगकर अन्त में संसार शरीर भोगों से विरक्त हुआ और मतिसागर केवलि के पास जाकर जिनदीक्षा ग्रहण करली और घोर तपश्चरण करने लगा, तपस्या के प्रभाव से चार घातिया कर्मों का नाश कर अर्हंपद की प्राप्ति की और कुछ काल तक धर्मोपदेश देकर मोक्ष को गये ।

अथ शरीरपर्याप्तिनिवारण व्रतकथा

व्रत विधि—पहले के समान करे । अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृ०

३ के दिन एकाशन करे। ४ के दिन उपवास पूजा आराधना व मन्त्र जाप आदि करे। पत्ते मांड़ें।

शील कल्याण व्रत

मनुष्यनी, तिर्यंच, देवाङ्गना व अचेतनस्त्री ये चार प्रकार की स्त्रियों को ५ इन्द्रिय व मन वचन काय और कृतकारित अनुमोदना इस का परस्पर में गुणा करने से १०८ भंग होते हैं उनके उपवास अर्थात् एक उपवास एक पारणा इस प्रकर ३६० दिन तक करना। व्रत के दिन पञ्च नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप करना।

शील व्रत

शील व्रत एक वर्ष में पूर्ण किया जाता है। वर्ष के ३६० दिनों में एकान्तर से उपवास करने चाहिए। सम्पूर्ण शील का पालन करना इस व्रत के लिए अनिवार्य है। बात यह है कि देवी मनुष्यणी, तिर्यञ्चणी और अचेतन इन प्रकार की स्त्रियों को पांच इन्द्रिय तथा मन, वचन, काय और कृतकारित अनुमोदना से गुणा करे तो १८० दिन उपवास के आते हैं। अर्थात् ४×५×३×३=१८० दिन उपवास और १८० दिन पारणा की जाती हैं। अतः वर्ष भर एकान्तर रूप से उपवास और एकाशन करने चाहिए। इस व्रत में **ॐ ह्रीं समस्तशीलव्रतमण्डिताय श्री जिनाय नमः** मन्त्र का जाप करना चाहिए।

इस व्रत में मास पक्ष तिथि का नियम नहीं है। मन, वचन, काय की दृष्टि से ८८ उपवास होते हैं यह व्रत पूर्ण होने तक शीलव्रत पालना चाहिए। व्रत पूर्ण होने पर जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक-पूजा करनी चाहिए।

— गोविन्दकृत व्रत निर्णय

इसका एक प्रकार लघुशील कल्याण नामक है इसमें एकान्तर १८ उपवास करने होते हैं। पारणा के दिन एक भुक्ती आहार करना चाहिये। यह व्रत क्रम से ३६ दिन मे पूर्ण होता है। इसकी शुरूआत मार्गशीर्ष महिने में करे, व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए।

—गोविन्दकृत व्रत निर्णय

इसकी एक और विधि :—यह व्रत ३६० दिन का है, इसमें १८० उपवास

१८० पारणे आते हैं । इसमें देवी, मनुष्यनी, निर्यंचनी व अचेतनी ये चार को पांच इन्द्रिय मन वचन काय और कृतकारित अनुमोदना से परस्पर गुणा करने पर १८० उपवास होते हैं । यह व्रत एक वर्ष तक करना चाहिए । पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए । व्रत के दिन पंच नमस्कार मन्त्र का जाप या "शील मंडिताय श्री जिनाय नमः" इस मंत्र का जाप करना चाहिए ।

कथा

सब द्वीपों में श्रेष्ठ जम्बूद्वीप उसमें कौशल देश स्वर्ग से भी सुन्दर था । वहां का राजा पद्मसेन उसकी पत्नी कंचनमाला थी । राजा बड़ा ही धर्मप्रेमी, प्रजाहित-तत्पर, न्यायी और चतुर था ।

यहां पर एक राजा महिपाल रहता था । वह भी धनाढ्य था । उसकी सम्पत्ति १६ कोटि दीनार की थी । उसकी पत्नी गुणमाला भी गुणी व शील-सम्पन्न थी । उसके पेट से सुखानन्द था । जन्म का दिन श्रेष्ठी ने बड़े उत्सव के साथ मनाया ।

दिन--दिन वह बढ़ने लगा थोड़े ही दिन में वह सब विद्याओं में पारंगत हुआ । विद्या पूर्ण होने पर घर वापस आया ।

इस नगरी के पश्चिम में उज्जयनी नामक एक नगर था । वहां नगर श्रेष्ठी महिदत्त उसकी पत्नी शीलवती श्रीमती उसकी लड़की मनोरमा थी । वह बहुत सुन्दर व गुणवान थी । आठवें बर्ष उसे आर्यिका के पास पढ़ने भेजा । थोड़े ही दिन में उसने सब विद्यायें सीख लीं ।

मनोरमा १६ वर्ष की हो गयी तो उसके पिताजी को शादी की चिन्ता हुई । इसलिए राजा ने ब्राह्मण को एक हार दिया । जो इस हार की कीमत द्वादस कोटि कहेगा उसके गले में हार डालना, वही मेरी लड़की का पति होगा ऐसा कहा ।

ब्राह्मण हार लेकर निकला । वह नाना देशों में फिरा पर कोई भी हार का सच्चा पारखी मिला नहीं । आखिर में वह कौशल देश में विजयंति नगरी में आया । वहां धनपाल श्रेष्ठी के पास गया और हार की कीमत कहने के लिए कहा । जिनदत्त ने चार दिन की अवधि मांगी, ब्राह्मण ने हार उसे दे दिया ।

हार लेकर सेठ घर आया पर उसके मन में पाप जागा। उसने अपनी पत्नी से कहा कि तेरा खोटे रत्न का हार है वह उसे दे दो और ये हार तुम ले लो पर सेठानी ने उसे समझाया कि ऐसा करना महान पाप है, राजा भी दण्ड देगा और जो घर में सम्पत्ति है वह भी चली जायेगी।

पर सेठ लोभी था वह नहीं माना, उसने उस हार को अपने घर रखा और उस ब्राह्मण को झूठ बोलकर हार दिया वह बोला ऐसा झूठा हार लेकर क्यों घूमता है ? इसकी कीमत तो कोड़ी की भी नहीं है। यह बात यदि राजा के कान पर गयी तो उलटा राजा तुझे दण्ड देगा मैं तो तेरे पर दया करता हूं इसलिए जैसे आया था वैसे ही वापस जाओ।

ब्राह्मण तो घबरा गया फिर भी उसने वह हार लिया और बाजार के पैठ में जाकर चिल्लाने लगा "मेरा हार धनपाल ने ले लिया है और मुझे झूठा हार दिया है।"

पर लोगों ने ब्राह्मण की बात नहीं मानी और सब हंसने लगे। उलटा लोगों ने उसके ऊपर चोरी का आरोप लगाया, तब ब्राह्मण ने खाने का त्याग किया। फिर १ महिना बीत गया। तब वह रोते–रोते राजदरबार में गया। तब राजा ने उसकी बात की चिन्ता की। गांव में ढिंढोरा पीटा गया, सब लोग राज दरबार में आये, धनपाल श्रेष्ठी को भी बुलाया गया मन्त्री आदि दरबार में बैठ गये। तब मन्त्री ने कहा ऐसे निर्णय कैसे होगा सब ब्राह्मण को ही चोर कहते हैं।

इसलिए राजन ! अपनी नगरी में महिपाल श्रेष्ठी का पुत्र सुखानन्द यहां आया नहीं, वह बड़ा ही गुणी व चतुर है। उसे बुलाना चाहिए।

तब महिपाल ने कहा "राजन् ! वह ऐसे नहीं आयेगा, उसे आदर व प्रेम से बुलाने भेजोगे तो वह अवश्य ही आयेगा।" राजा का राजदूत उन्हें बुलाने गया।

सुखानन्द ने कहा दो चार घण्टे के बाद में राज दरबार आऊंगा। तुम जाओ। कुमार को हार की बात मालुम थी। इसलिए उसने अपनी चतुर दासी को बुलाया और कहा "तुम धनपाल के घर जाकर उसकी पत्नी से कहो कि ब्राह्मण का हार मंगवाया है राज दरबार में।

दासी उसी समय धनपाल के घर गयी कुमार के कहे अनुसार उसने हार मांगा तब धनपाल की औरत बोली में हार कैसे दूं सेठ घर पर नहीं है मुझे देने का अधिकार नहीं है, उनको तू बुलाकर ला वे हार ले जायेंगे। दासी वापस आयी और उसने सब वृतान्त सुखानन्द को सुना दिया।

तब सुखानन्द राज दरबार में गया। उसका द्विव्य रूप देखकर राज दरबार के सब लोगों ने स्वागत किया। राजा ने बैठने की जगह दी। सच है पुण्य से क्या नहीं मिलता है।

राजा ने सब हकीकत कुमार से कह सुनायी और न्याय करने के लिए कहा। तब कुमार ने झूठा हार ब्राह्मण से ले लिया और राजा से कहा कि मुझे चार घण्टे का समय दे दीजिए। तब तक दरबार में से किसी को बाहर मत जाने देना, मैं जल्दी ही आता हूं।

उसने उसी दासी को बुलाकर वह हार उसे दिया और कहा "धनपाल की पत्नी के पास जाओ और कहो कि यह हार लेकर सच्चा हार दे दो, यदि नहीं दिया तो सेठ को फांसी पर लटकाया जायेगा। वे राज दरबार में बैठे हैं और मुझे यहां भेजा है।"

यह सुन धनपाल की पत्नी ने वह हार रखकर सच्चा हार दे दिया। दासी ने वह हार सुखानन्द को दिया। सुखानन्द ने हार राजा को दिया और सब हकीकत राजा को सुनायी। उसका चातुर्य देखकर राजा उसके ऊपर बहुत प्रसन्न हुआ और बोला— श्रेष्ठीवर्य ! इसको कौन से प्रकार का दण्ड देना चाहिए ?

तब उसने कहा हे राजन् ! इस चोर को गधे पर बिठाकर उसे पूरे गांव में घुमाया जाय, इसका पूरा धन राजदरबार में जमा कराया जाय और अन्त में नगर से बाहर निकाल दिया जाये।

तब राजा ने वैसा ही किया। और राजा ने ब्राह्मण को बुलाकर उसको हार वापस किया। राजा को धन्यवाद देकर ब्राह्मण बाहर गया। तब ब्राह्मण हार लेकर महीपाल सेठ के पास गया और उस हार की कीमत पूछी, १२ कोटि दीनार बतायी और खंजाची को कहा कि इनको चाहिये जितना धन दो और हार बिकत

लो । तब पुरोहित ने कहा श्रेष्ठी मैं हार बेचने नहीं आया हूं । जो इसकी सही कीमत बतायेगा उसके साथ हमारे श्रेष्ठी की लड़की का विवाह करेंगे ।

श्रेष्ठी को उसकी बात समझ में नहीं आयी । तब विप्र ने कहा कि श्रेष्ठी ने यह हार मुझे लेकर भेजा है कि जो इसकी सही कीमत करेगा उसी के साथ उसकी लड़की की शादी करायी जायेगी । तब सुखानन्द को बुलाया और ब्राह्मण ने उनके गले में हार पहना दिया । महीपाल ने बड़ा भारी महोत्सव किया और ब्राह्मण को बहुत धन देकर सम्मान किया । ब्राह्मण वापस आया । पहले हुई सब बात उसने श्रेष्ठी को बतायी ।

मनोरमा की शादी शुभ मुहूर्त में हो गयी । जब वह ससुराल जा रही थी तब उसके पिताजी ने कहा तुझे अच्छा घर मिला है तेरा भाग्य बहुत ही अच्छा है । इसलिये तू अपना जैन धर्म छोड़ना नहीं और तूने जो व्रत लिया है उसका पालन कर शीलव्रत का पालन करना वही संसार में श्रेष्ठ है । शील नहीं है तो संसार में उसका कोई नहीं है पति के अलावा सब तेरे बांधव हैं ऐसा मान । तू तो गुणी है, सुख से जा और आनन्द से संसार कर जिससे दोनों कुल का उद्धार हो । वहां पर वह सुख से रहने लगी पर उसका पति थोड़ा उदासी से रह रहा था तब मनोरमा ने पूछा कि नाथ आप उदास क्यों हैं ? तब सुखानंद ने कहा कि पिताजी की कमाई पर कितने दिन रहूंगा ? मुझे भी कुछ व्यापार-धन्धा करना चाहिये । घर बैठकर धन्धा होगा नहीं ।

दूसरे दिन सुखानन्द पिताजी के पास गया और अपने विचार प्रगट किये । तब पिताजी ने कहा "हे बालक ! अपनी सम्पत्ति कम है क्या तू आनन्द से रह और सुख भोग । पर सुखानन्द ने कहा उसके अलावा मुझे सुख नहीं मिलेगा, कोई भी कर्त्तव्य करके दिखाने से ही मेरे मन में शान्ति मिलेगी, उद्योग के बिना जीना निरर्थक है ।

तब पिता ने विचार कर उसे परदेश जाने की आज्ञा दी और कहा जाते समय तेरी सुख सुविधा की सब सामग्री लेजा । धन भरपूर ले जा जिससे उस पर तू अपना धंधा कर सके ।

सुखानन्द ने निकलने की पूरी तैयारी की । निकलते हुए उन्होंने मनोरमा को समझाया वह भी चतुर थी अतः उसने भी समझाया कि स्त्रियों की जात बड़ी

चंचल होती है इसलिये आप उनसे दूर रहें उनको माता व पुत्री समान देखना। शीलव्रत का पालन करना, इतनी ही इस दासी की विनती है।

फिर वह जिन मन्दिर के दर्शन कर ५०० शूर सिपाही को लेकर हंसद्वीप को गया। व्यापार के लिए योग्य स्थान देखकर उसने व्यापार शुरू किया।

इधर मनोरमा अपने १६ शृंगार सहित जिन मन्दिर में गयी। रास्ते में राजकुमार की दृष्टि उसके ऊपर गयी, वह उसके रूप को देखकर पागल हो गया। यह सुन्दरी मुझे कैसे मिलेगी ? ऐसी उसको चिन्ता हुई। अतः उसने घर आकर चतुर दासी को उसके पास भेजा।

दासी ने मनोरमा को नाना प्रकार के भाषण से उसका मन चलायमान करना चाहा। पर मनोरमा का मन थोड़ा भी चलायमान नहीं हुआ और उलटा दासी को चाबुक से मार कर भगा दिया।

दासी राजमहल में गयी, सब समाचार राजकुमार को बता दिया। उसने कहा यह बात मेरे वश की नहीं है। और मुझे मार भी खानी पड़ती है इसलिए यह काम में नहीं कर सकती हूं।

पर दासी को मनोरमा का बर्ताव अपमानजनक लगा। अपमान की सुई उसे लगी। तब उसने उसका बदला लेना चाहा। इसलिए वह मनोरमा की सास को कुछ-कुछ भिड़ाने लगी। जिससे उसकी सास के मन में शंका उत्पन्न हो। वह कहने लगी पति नहीं है तो भी यह इतनी सज-धज के क्यों जाती है। अब उसको पूरा संशय होने लगा और दासी उसमें तेल डालने लगी। अब उसमें आग लगने की देर क्या थी। सास ने दासी की बात मान ली। मनोरमा को बुलाया उसे कहा तुम अब इतनी सज करके क्यों जाती हो और उसने श्रेष्ठी से नमक मिर्ची लगाकर कहा मनोरमा को घर से बाहर निकालना चाहिए। तब ससुर ने रथ सजाकर मनोरमा को लाने हेतु सारथी को कहा और सब बात समझा दी। सारथी मनोरमा को लेकर जंगल में गया। मनोरमा से कहा बहन तुम इधर रुको मुझे यहीं छोड़ने के लिए कहा है आपके ऊपर चारित्र भ्रष्ट होने का आरोप लगाया है। पूर्व कर्म उदय में आए हैं उसे भोगे बिना छुटकारा नहीं। अब आप यहीं उतरें और मुझे छुट्टी दें।

तब मनोरमा ने कहा मुझे इस संसार में दो ही जगह हैं । एक तो पति-गृह दूसरा पितृ-गृह । पति के घर से बाहर निकाला है इसलिए अब मुझे पितृ-गृह छोड़ें ।

सारथी को दया आई इसलिए वह उसे उज्जयनी लाया और महीपाल को खबर दी । महीपाल को संशय हुआ क्यों घर से निकली है । जब उसे सब बात मालूम हुई तो अपने यहां उसने उसे आश्रय नहीं दिया । तब सारथी वापस उसे जंगल में ले गया । उसने उसे भयानक जंगल में छोड़ा उसकी आंखों में आंसू आ गये, उसने कहा बहन तुम व्यर्थ शोक मत करो । वह बोली मेरे कर्म ही उदय में आये हैं, कुछ उपाय नहीं है । यह सब मुझे भोगना ही पड़ेगा । आप अब जाएं आमने अपनी आज्ञा का पालन किया । इस एकाकी वन में मुझे अकेले ही छोड़ दें । मेरे धर्म के सिवाय कोई आधार नहीं है । व्यर्थ में ही मेरे पर दोष लगाकर मुझे उठाया है । मनोरमा रथ से नीचे उतरी सारथी ने बड़े कष्ट से रथ को वापस फिराया ।

उस वन में नाना प्रकार के पशु थे, पग-पग पर शेर की आवाज, सर्पों का इधर-उधर जाना आदि देख रही थी, उसका पूरा शरीर कांप रहा था, वह रोने लगी, वह मन में सोचने लगी, मैंने कौनसा ऐसा पाप किया जिससे मुझे ऐसी जबरदस्त शिक्षा भोगनी पड़ रही है । मेरे पति परदेश में गये हैं । ऐसी सर्दी में मुझे घर से बाहर निकाला, पिता ने भी दोषी ठहराकर आश्रय नहीं दिया, मैं किसकी शरण जाऊं ऐसा सोचकर जंगल में इधर-उधर घूमने लगी ।

एक दिन वहां पर राज्यगृह का युवराज वन क्रीड़ा के लिए आया । उसकी दृष्टि मनोरमा पर पड़ी उसका सौन्दर्य देखकर वह पागल हो गया, जिससे उसने जबरदस्ती मनोरमा को उठाकर रथ में बिठा दिया और अपने घर ले आया । अपने पर संकट आया जानकर उसने अन्न-पानी का त्याग कर दिया, वह विचार करने लगी सब मेरे कर्मों का दोष है और मन में पंचपरमेष्ठी का ध्यान व चिंतन करने लगी । इधर इन्द्र का आसन कम्पायमान हुआ, उसने अवधि लगायी और जान लिया, मनोरमा पर संकट है । उसके शील की रक्षा करनी है । यदि उसकी रक्षा नहीं हुई तो वह अपने प्राण त्याग देगी और शील की कीमत संसार में नहीं रहेगी, इसलिए एक देव से कहा कि उसकी रक्षा के लिए तुम जाओ । तब इन्द्र की आज्ञा से देव ने

ब्राह्मण का रूप बनाया मनोरमा जिस महल में थी उस महल में गया और उसकी रक्षा के लिए दरवाजे पर खड़ा रहा इतने में राजकुमार वहां आया।

वह महल के अन्दर जाने लगा तो उस ब्राह्मण ने उसे जाने नहीं दिया तब युवराज ने पूछा तुम कौन हो, मुझे महल में क्यों नहीं जाने देते ? तब उसने उत्तर दिया मैं मनोरमा का सेवक हूं मुझे उनकी आज्ञा है। किसी को भी अन्दर मत आने देना यह उत्तर सुनकर कुमार को गुस्सा आया दोनों के बीच में वहां झगड़ा हुआ, ब्राह्मण ने उसे उठाकर जमीन पर फेंक दिया और उसके हाथ पैर बांधकर चाबुक से मारा तब उसका विलाप सुनकर गांव के सब लोग एकत्रित हो गये।

परन्तु मारने वाला किसी को दिखाई नहीं दिया पर राजकुमार को कोई मार ही रहा था। अन्त में ब्राह्मण ने कहा कुमार जाओ। मनोरमा से माफी मांगो यदि उसने माफ कर दिया तो तुम मुक्त हो जाओगे। तब वह राजकुमार मनोरमा के पास गया और माफी मांगने लगा तो मनोरमा सोचने लगी कि ऐसा क्यों हुआ। शायद धर्म ने ही सहायता की होगी इसके सिवाय मेरा कौन होगा। उसने कुमार को माफ किया और ब्राह्मण से कहा इसे मुक्त कर दो।

तब देव ने अपना सच्चा रूप प्रकट किया, नम्रतापूर्वक अभिवादन किया और बोला देवी ! तुम्हारे जैसी पतिव्रता नारी और कोई भी नहीं है। इन्द्र की आज्ञा से मैं आपकी रक्षा के लिए आया हूं। अब आप जरा भी चिन्ता न करें, आज से आपकी रक्षा का भार मेरे ऊपर है। इतना कहकर वह चला गया।

फिर राजकुमार ने उसे रथ में बैठाकर वन में छोड़ दिया। वन में आकर वह णमोकार मन्त्र का जाप करने लगी।

ऐसे कई दिन निकल गये तब एक दिन काशी देश से बनारस के प्रवासी प्रवास करते-करते इस वन में आये। मनोरमा को देखकर उससे पूछा "बाला तू कौन है और किसकी पुत्री है ? और इस बन में अकेली कैसे आयी है ?"

तब मनोरमा ने अपनी कहानी बतायी। तब धनदत्त ने कहा मैं तेरा मामा धनदत्त हूं, बनारस में रहता हूं, अब तुम हमारे घर चलो, ऐसा कह कर अपने घर ले गये। वहीं वह अपना समय धर्मध्यानपूर्वक बिताने लगी।

इधर उसके पति ने हंसद्वीप में बहुत धन कमाया पर निकलते हुए वह राजा से मिलने के लिए गया, राजा ने उसका बहुत सम्मान किया। उसका रूप देखकर रानी ने उसे अपने महल में बुलाया। तब सुखानन्द ने रानी को हार भेंट में दिया, रानी को आनन्द हुआ। रानी ने भी उसका मान सम्मान कर बहुत ही वस्त्रालंकार भेंट किये। वह उसके ऊपर आसक्त हो गई और बोली आप जाओ नहीं, आनन्द से यहीं रहो, हम दोनों आनन्द से रहेंगे। यह सुनते ही सुखानन्द कांप गया उसने रानी को धिक्कार किया। रानी को गुस्सा आया। सुखानन्द वहां से निकलकर आ गया।

रानी स्वभाव से ही दुष्ट थी। इसलिये वह राजा के पास आयी और कहने लगी राजा मेरी एक तकराल है। मैंने श्रेष्ठी को हार के लिए गजमोती खरीदने के लिए बुलाया था। पर उस दुष्ट ने मेरे पर बलात्कार करने का प्रयत्न किया परन्तु मैंने तुरन्त नौकरों को बुलाकर उसको निकलवा दिया।

राजा स्त्री-लम्पट था, उसने आगे-पीछे का विचार न करते हुये कहा— उसके हाथ-पैर बांध दो और सूली पर चढ़ा दो।

मन्त्री भी वहां खड़े थे उन्होंने कहा "राजन ! आप न्यायी हैं, आप ऐसा अविचार मत करो क्योंकि यह व्यापारी है, लक्ष्मी उसके घर पानी भरती है, उसके साथ ५०० शूर सिपाही है वह ऐसा कृत्य करेगा नहीं अतः यदि आपने हाथ लगाया तो विकट संकट उत्पन्न होगा।

तब राजा ने अपना विचार बदल दिया, उन्होंने उसको बुलाकर सब समाचार पूछे। श्रेष्ठी ने सब वृतांत कह सुनाया जिससे राजा को उन पर विश्वास हो गया। राजा ने उसको पुत्री को देना चाहा तब श्रेष्ठी ने कहा राजन्! रानी मेरी मां है, तब मैं बहन से शादी कैसे करूंगा ! इससे राजा और अधिक प्रभावित हुआ। तब उसका सम्मान कर राजा ने विदाई दी।

फिर कोई नई मुसीबत न आ जाये ऐसा सोच कर वह जल्दी ही निकल गया। वहां से वह उसी जंगल में आया जहां मनोरमा थी। वह उस जगह रुक गया और सारी सम्पत्ति नौकर द्वारा घर भेज दी व घर के सब समाचार लाने के लिए

कहा । नौकर ने आकर सारी हकीकत श्रेष्ठी को कह सुनायी । यह सुनकर उसके मन पर भारी आघात हुआ । उसने सब को घर जाने की आज्ञा दी व स्वतः मनोरमा की खोज करने को अकेला ही रह गया । घूमता-घूमता वह वाराणसी आया, उधर मामा के घर मनोरमा से भेंट हुई । पति के आने से मनोरमा को आनन्द हुआ ।

इस प्रकार सुख से कई दिन निकल गये तब वह मनोरमा से कहने लगा चलो अब हम अपने घर जायेंगे यहां कितने दिन रहेंगे ।

तब मनोरमा ने कहा मेरे पर ससुर ने शीलभंग का दोष लगाया है और मुझे घर से बाहर निकाला है । वह दूर नहीं होगा तब तक मैं घर कैसे जा सकती हूं ।

उसकी यह बात सुनकर वह भी वहीं रहने लगा । एक दिन राजा ने सोचा कि श्रेष्ठी कब से धन कमाने गया है, वह अभी तक क्यों नहीं आया, तब नौकरों ने मनोरमा की सब हकीकत बता दी ।

तब राजा ने महीपाल को बुलाया और उससे कहा कि सही बात क्या है वह मुझे बताओ, यदि नहीं बताया तो तुम्हें सजा होगी, तब महीपाल ने कहा मुझे तो पूरी बात मालूम नहीं है पर आपकी दासी के कहने पर उसकी सास ने मनोरमा पर आरोप लगा कर निकाल दिया है । तब राजा ने दासी को बुलाया और कहा सच्ची बात क्या हुई है यह बताओ । दासी घबरा गयी सच बताती हूं तो राजकुमार की मुसीबत और वह ऐसा सोच हो रही थी कि राजा ने कहा सच बताओ नहीं तो तुम्हें सूली पर चढ़ाऊंगा ।

तब मरने के भय से दासी ने सच्ची बात राजा को बता दी । तब यह बात सुनकर राजा व महीपाल को आश्चर्य हुआ । राजा ने राजकुमार को बुलाकर उसको राज्य से बाहर निकाल दिया । महीपाल भी आकर अपनी पत्नी को बोला कि तेरे कहने पर मैंने निर्दोष मनोरमा को घर से बाहर निकाल दिया है । महीपाल बहुत विलाप करने लगा और कहने लगा यदि मैंने मनोरमा को ढूंढ़ा नहीं तो राजा मुझे शिक्षा (दण्ड) दिये बिना रहेगा नहीं ऐसा सोचकर वह देश-विदेशों में ढूंढ़ने निकला । घूमते-घूमते वह बनारस में आया धनदत्त के घर उसकी भेंट हुई । सुख

दु:ख की बातचीत करके महीपाल ने अपनी गलती की माफी माँगी। व उनको घर चलने की विनती की। तब मनोरमा ने कहा—

"मेरे पर कलंक लगा है जब तक वह दूर नहीं होगा तब तक मैं अपने घर की एक भी सीढ़ी नहीं चढ़ूंगी। हां, मैं आपके साथ आऊंगी पर गांव के बाहर रहूंगी।

राजा को उसके आने की बात मालूम हुई। उसके कहे अनुसार राजा ने न्याय करने का निश्चय किया और दरबार में बुलाया। देवों को भी अवधिज्ञान से यह बात ज्ञात हुई जिससे उन्होंने सोचा कि यदि इस समय शील का माहात्म्य नहीं बताया तो लोगों को इसका महत्व ज्ञात नहीं होगा।

उन्होंने नगर के बाहर दरवाजे बंद किये, वह दरवाजे किसी से भी नहीं खुले, यह बात नगर के बाहर-अन्दर हा हा करते हुए सब जगह फैल गई। इतना ही नहीं यह बात राजा के कान पर भी गयी। दरवाजे खोलने के लिए सब ने बहुत ही प्रयत्न किये पर सब व्यर्थ गये। राजा को बड़ी चिंता हुई। राजा ने अन्न-पानी का त्याग किया। सारी जनता चिंताग्रस्त थी। दो दिन निकल गये फिर राजा को स्वप्न में आकर देव ने कहा—

"राजन ! जो कोई स्त्री पतिव्रता होगी उसके अंगूठे के स्पर्श मात्र से दरवाजा खुलेगा नहीं तो कितना भी प्रयत्न किया तो व्यर्थ जायेगा। दूसरे दिन राजा ने पूरे राज्य में कहलवा दिया, हजारों स्त्रियां दरवाजे पर दरवाजा खोलने के लिए गयी पर सब व्यर्थ गया। अन्त में मनोरमा का नम्बर आया। उसके स्पर्श से ही दरवाजे खुल गये।

स्वर्ग के देवों ने उसका जयजयकार किया व पुष्पवृष्टि की और उसके शील के गीत गाये। इस प्रकार मनोरमा अपने दोषों को दूर कर ससुर के घर गयी।

इसलिए शील का उत्तम रीति से पालन करना चाहिए, इसी से जीव का कल्याण है, शीलव्रत का पालन मोक्ष है।

शील सप्तमी व्रत

भाद्रपद सुदी सप्तमी को प्रोषधोपवास करना, ७ वर्ष यह व्रत करना।

पूर्ण होने पर उद्यापन करे, व्रत के दिन शीलव्रत-चिंतन करना, धर्मध्यानपूर्वक दिन बिताये, णमोकार मन्त्र का जाप करना चाहिए ।

शतिकुम्भ व्रत

इस व्रत के उपवास को 'शराब्धी प्रमित' उपवास कहते हैं ।

इसका क्रम ५ उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा, फिर चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा, फिर चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा ऐसे ४५ उपवास व १७ पारणे होते हैं । सब ५२ दिन का व्रत है । यह व्रत अखण्ड करना चाहिये ।

—गोविंदकविकृत व्रत निर्णय

शिवकुमार बेला व्रत

बेला अर्थात् दो उपवास करना । यह व्रत १२८ दिन में पूरा होता है इसमें मास पक्ष तिथि का नियम नहीं है कभी भी कर सकते हैं । इसका क्रम दो उपवास एक एकाशन इस प्रकार ३२ बेले करना एकाशन के दिन सिर्फ कांजिकाहार लेना व्रत के दिन अभिषेक पूजन करना चाहिये और उद्यापन करना चाहिये ।

दूसरी विधि—यह व्रत १६ महिनों में पूरा होता है इसमें ६४ बेला व ६४ पारणे हैं प्रत्येक महीने की सप्तमी, अष्टमी, त्रयोदशी, चतुर्दशी इस प्रकार चार बेले करना और ४ पारणे इसलिये यह व्रत १६ महीनों में पूर्ण होता हैं ।

कथा

इस भरत क्षेत्र में मगध देश है उसकी राजधानी राजगृही । यहां पर राजा श्रेणिक राज्य करता था । वहीं पर एक सेठ अर्हद्दास रहता था वह राजश्रेष्ठी था । उनकी पत्नी जिनमति थी, वे दोनों धार्मिक थे । उनके पेट से जम्बुकुमार उत्पन्न हुए, ये अन्तिम केवली थे । पूर्वभव के संस्कार के कारण छोटी उम्र में ही व्याकरण, न्याय, गायन वगैरह का अध्ययन कर लिया था । इसमें उन्होंने अद्वितीय बुद्धि का

परिचय दिया था। पर छोटेपन से ही उन्हें वैराग्य था। विद्या पूर्ण होते ही दीक्षा लूंगा ऐसा उसने दृढ़ निश्चय किया था।

परन्तु माता-पिता के आग्रह से उन्होंने चार लड़कियों से शादी की। पर शादी के दूसरे दिन ही दीक्षा लेने के लिए निकले। उनकी पत्नियों ने उन्हें बहुत कथा कहकर समझाने का प्रयत्न किया। पर उनको यश मिला नहीं। उसी रात्रि विद्युच्चर चोर चोरी करने को उनके घर आया था। उसने यह संवाद सुना जिससे उसके मन पर भी परिणाम हुआ और उसने जिनमति माता से कहा कि मैं यदि इनको दीक्षा न लेने के लिये सहमत नहीं कर सका मैं भी इनके साथ दीक्षा ले लूंगा। पर उसे विजय मिली नहीं जिससे उसने भी उनके साथ दीक्षा ले ली।

जम्बुकुमार, उनकी चार पत्नी, विद्युच्चर चोर आदि ने दीक्षा ली।

उन सब ने गौतम गणधर से विपुलाचल पर्वत पर दीक्षा ली, तब विद्युच्चर ने गौतम गणधर से पूछा कि हम सबने एक साथ दीक्षा ली इसका कारण क्या है?

मुनि महाराज ने उत्तर दिया—

'भव्यो!' मगध देश में वर्धमान नामक एक सुन्दर नगरी थी। उसका राजा महीपाल था। वह बड़ा ही धर्म-धुरन्धर और नीति-निपुण था। उसके राज्य में एक ब्राह्मण रहता था। वह धर्म से मिथ्यात्वी था। उसके दो पुत्र थे, एक का नाम भावदेव व दूसरे का नाम भवदेव, वे विद्या में निपुण थे। पर वे भी मिथ्यात्वी थे।

वह ब्राह्मण मृत्यु को प्राप्त हुआ, उनके लड़के सुख से दिन बिताने लगे पर वहां एक दिन गांव के बाहर एक मुनि महाराज आये। वे द्विजपुत्र नगर के लोगों के साथ दर्शन को गये, मुनि-सुख से धर्म-श्रवण कर भावदेव ने दीक्षा ले ली, गुरु के साथ तपश्चरण करता हुआ वह बिहार करने लगा, बिहार करते-करते भावदेव संघ सहित उसी नगर में आये। उन्हें अपने छोटे भाई की याद आ गयी उसे मिथ्यात्व से छुड़ाने के लिए उन्होंने निश्चय किया। वे उनके घर गये।

उस दिन भवदेव की शादी थी, लग्न की गड़बड़ थी। फिर भी उन्होंने संसार की अनित्यता का उपदेश दिया जिससे भवदेव ने अणुव्रत लिये और नवधाभक्ति से आहार दिया। आहार के बाद मुनि बाहर जाने के लिये निकले। तब भवदेव उनको

पहुंचाने के लिये गये । मुनि महाराज तो मौन होकर जा रहे थे पर उसके मन में घर वापस जाने का विचार था, पर महाराज बोलें तब वह जायें, पर महाराज कुछ बोले नहीं । महाराज को पूछे बिना कैसे घर जाना ? ऐसा सोचकर गया नहीं ।

अन्त में वे दोनों गुरु जहां बैठे थे वहां पहुचे, भवदेव की पहचान गुरु ने कर दी । गुरु ने भव्य जानकर उसे उपदेश दिया, भवदेव ने तत्काल दीक्षा ली । परन्तु भवदेव का लक्ष अपनी नवपरिणीता पत्नी की ओर था । पर वह संघ के साथ बिहार करने लगा जिससे वह अपने गांव नहीं जा सका ।

बाद में कई वर्ष तक बिहार करते हुए वह उस नगर में आये । वहां गुरु को नमस्कार करके नगर में गये । प्रथम वे जिन-मन्दिर में गये । वहां उन्होंने नव-दीक्षित आर्यिका को देखा । उनसे धर्म कुशल पूछकर महाराज जी ने पूछा कि "एक ब्राह्मण पुत्र अपनी नव-परिणीता पत्नी को छोड़कर मुनि दीक्षा लेकर चला गया था तो उस स्त्री का क्या हुआ ?"

उस आर्यिका ने उन मुनि महाराज को पहचान लिया था इसलिये बोली "मैं ही आपकी नवविवाहिता पत्नी थी । आपके जाने के बाद मैंने संसार असार जानकर दीक्षा ले ली । अब इस मार्ग से च्युत नहीं होना है । हम निःशंक तपश्चरण करेंगे इसी में हमारा हित है ।"

तब वे मुनि वापस गुरु के पास आये । मुनि को (गुरु को) अपना सब वृत्तान्त सुनाया और सबने प्रायश्चित लेकर फिर से दीक्षा ली । दोनों भाइयों ने विपुलाचल पर घोर तपश्चरण किया, समाधिपूर्वक मरकर सनत्कुमार देव हुये, अवधि-ज्ञान से अपना पूर्वभव जानकर कृत्रिम अकृत्रिम जिनमन्दिरों की वंदना की । वहाँ की आयु पूर्णकर भवदेव का जीव विदेह क्षेत्र में पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्र-दंत के पेट से सागरचन्द्र नामक पुत्र हुआ । और भवदेव का जीव वीतशोकपुर के राजा महायक्ष व उसकी पत्नी वनमाला के पेट से शिवकुमार नामक राजकुमार हुआ ।

फिर बड़े होकर सागरचन्द्र ने मुनिदीक्षा ली । वे बिहार करते हुए शोकपुर नगर में आये, चर्या के लिये नगर में प्रवेश किया । एक श्रावक ने नवधा-भक्तिपूर्वक उन्हें आहार दिया । मुनि महाराज ने उसको अक्षयदानी हो ऐसा आशीर्वाद

दिया, उसके घर देवों ने पंचाश्चर्यवृष्टि की, यह दृश्य देखकर सब नगर के लोग व राजपुत्र उसे देखने के लिये एकत्रित हुए। राजकुमार ने मुनिमहाराज को नमस्कार किया। उन्हें देखते ही राजकुमार का, मुनि से प्रेम व आदर जागा। इसलिये इसका कारण मुनि महाराज से पूछा, मुनिराज ने उसके पूर्व भव बताये, यह सुनकर कुमार विरक्त हुये। उन्होंने दीक्षा लेने का निश्चय किया। पर माता-पिता के प्रेम से क्षुल्लक दीक्षा ली और घर पर ही रहने लगे। घर पर भी नाना प्रकार के व्रत तथा बेला व्रत किये जिससे वे ब्रह्मोत्तर स्वर्ग में देव हुए।

वहाँ की आयु पूर्णकर हस्तिनापुर के राजा के घर विद्युच्चर नामक पुत्र हुआ। वह प्रतापी बलवान व सब विद्याओं में निपुण था, पर देवयोग से मित्रों की कुसंगति के कारण चोरी करने लगा। एक बार राज-दरबार में चोरी करते हुए कोतवाल ने उसे पकड़ लिया और राजा के पास लाये। राजा को उसे देखकर बुरा लगा, उन्होंने उसे उपदेश दिया पर उसके ऊपर इसका कुछ असर नहीं हुआ जिससे राजा ने उसे नगर के बाहर निकाल दिया।

वहां से निकलकर वह राजगृह में आया और एक वैश्या के घर रहने लगा। वह रोज चोरी कर वैश्या को धन देता था।

सागरचन्द्र के जीव ने स्वर्ग से च्युत होकर अग्निवेश्यमान नामक धम्लि ब्राह्मण और उसकी स्त्री भद्रि के पेट से सुधर्म नाम से जन्म लिया। उन्होंने मुनि दीक्षा ली और भगवान महावीर के ५वें गणधर श्री सुधर्माचार्य हुये। वही मं हूं।

अर्हद्दास का एक सहोदर बंधु रुद्रदास था। वह पक्का जुआरी था। वह हमेशा जुआ खेलता था। उसकी सब सम्पत्ति जुए में चली गयी फिर वह उधार (कर्ज) लेकर भी खेलने लगा जिससे लोगों ने उसे बहुत ही मारा। यह अर्हद्दास को ज्ञात हुआ तो उसने उसको णमोकार मन्त्र दिया, संन्यास मरण कराया जिससे वह मरकर यक्षदेव हुआ ये ही विद्युतवेग देव जम्बुकुमार हुआ, ऐसा यह आपका पूर्व भव है।

तब सबने सुधर्माचार्य के पास संसार से विरक्त होकर जिनदीक्षा ली। जम्बुस्वामी केवली बनकर मोक्ष गये। विद्युच्चर समाधिपूर्वक मरण साधकर सर्वार्थ

सिद्धि स्वर्ग में अहमिन्द्र देव हुआ । वहाँ से वह एक भव लेकर अर्थात् मनुष्य होकर मोक्ष जायेगा । सुधर्माचार्य अन्त में घोर तपश्चरण करके मोक्ष गये ।

शीर्षमुकुट सप्तमी व्रत

अथ श्रावणमासे शुक्ल-पक्षे सप्तमीदिनेप्यादिनाथस्य वा पार्श्वनाथस्य कण्ठे मालां शीर्षे मुकुटं च निधाय उपवासं कुर्यात् । न तु एतावता वीतरागत्वहानिर्भवति । यतः कापि कन्या तु स्ववैधव्यानिवारणाय जिनशासनागमोद्दिष्टविधिं कुरुते । एतद्विधिनिन्दकस्तु जिनागमद्रोही जिनाज्ञालोपी भवतीति न सन्देहः कार्यः । सकलकीर्तिभिः स्वकीये कथाकोषे श्रुतसागरैस्तथा दामोदरैस्तथादेव नन्दिभिरभ्रदेवैश्च तथैव प्रतिपादितमतः पूर्वक्रमो नाक्रमो ज्ञेयः ।

अर्थ :—श्रावण शुक्ला सप्तमी को आदिनाथ या पार्श्वनाथ के कण्ठ में माला और शिर में मुकुट बांध कर उपवास करना, शीर्ष मुकुट सप्तमी व्रत है । वीतरागी प्रभु के गले में माला और शिर पर मुकुट बांधने में वीतरागता की हानि नहीं होती है । क्योंकि कोई भी कन्या अपने वैधव्य के निवारण के लिए जिनागम में बताई हुई विधि का पालन करती हैं । जो कोई इस विधि को निन्दा करता है, वह जिनागमद्रोही तथा जिनाज्ञालोपी होता है । अतः इस विधि में सन्देह नहीं करना चाहिए । सकलकीर्ति आचार्य ने अपने कथाकोष में तथा श्रुतसागर, दामोदर, देवनन्दी और अभ्रदेव आदि ने भी इस विधि का कथन किया है । अतः ऊपर जिस विधि का कथन किया है, वह समीचीन है, क्रमपूर्वक है, अक्रमिक नहीं है ।

विवेचन :—शीर्षमुकुट सप्तमी व्रत श्रावण सुदी सप्तमी को किया जाता है । इस दिन कन्याएं या सौभाग्यवती स्त्रियां अपने सौभाग्य की वृद्धि के लिए भगवान आदिनाथ का पूजन अभिषेक करती है तथा प्रोषधोपवास करती हुई धर्मध्यान से दिन व्यतीत करती हैं । इस व्रत में **ॐ ह्रीं श्रीवृषभतीर्थंकराय नमः** इस मन्त्र का या **ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथाय नमः** इस मन्त्र का जाप किया जाता है । रात को जागरण करना आवश्यक माना गया है । मुकुट सप्तमी व्रत में भगवान आदिनाथ और पार्श्वनाथ के नामों की एक हजार आठ जाप करनी चाहिए । इस व्रत में रात को बृहत्स्वयंभूस्तोत्र, संकटहरण विनतो, दुःखहरण विनती, कल्याणमन्दिर, भक्तामर स्तोत्र आदि का पाठ करना चाहिए । अष्टमी के दिन अभिषेक, पूजन और

सामायिक के पश्चात् एकासन करना चाहिए। षष्ठी से लेकर अष्टमी तक तीन दिनों का पूर्ण शीलव्रत पालन किया जाता है।

शुद्धदशमी व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला दशमी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन कर पूजा अभिषेक का द्रव्य साथ में लेकर मन्दिरजी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर, ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, फिर अभिषेक पीठ पर धरणेन्द्र पद्मावती सहित पार्श्वनाथ स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करना।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीपार्श्वनाथाय धरणेंद्र पद्मावति सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, यह व्रत कथा पढ़े, जिनवाणी की पूजा, गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल का यथायोग्य सम्मान सत्कार करे, पूजा करे, भगवान के आगे एक पाटे पर पांच पान रखकर पानों पर अक्षत, गंधादि अष्ट द्रव्य रखकर पांच सुपारी रखे, भीगे हुये चने रखे, पद्मावती देवि को हल्दी कुंकुम लगावे, फिर एक महा अर्घ्य करके, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती करे, महा अर्घ्य जो हाथ में है उसको भगवान के सामने चढ़ा देवे, भीगे हुए चने की खीर बनाकर (पायस) आधी खीर के पांच भाग करके भगवाग के सामने चढ़ा देवे, आधी खीर स्वयं खाकर एक भुक्ति करे।

इसी प्रकार कार्तिक शुक्ला दशमी तक पूजा विधि करते हुए प्रत्येक महिने की दशमी तक व्रत करता जावे, श्रावण की दशमी को अंबील चढ़ा कर स्वयं भी अंबील का भोजन करे, भाद्र शुक्ला दशमी को शुद्ध घर में बनायी हुई मिश्री खीर के साथ चढ़ाकर स्वयं भी आधी बची हुई खीर का भोजन करे, आश्विन शुक्ला दशमी के दिन सेमइ (सावीगे) की खीर बनाकर भगवान को चढ़ावे, आधी अपने एकभुक्त करे, कार्तिक शुक्ल दशमी को पांच प्रकार के मिष्ठान्न बनाकर, बांस की करंडी में भर कर भगवान के सामने मात्र रखे, और सौभाग्यवती स्त्रियों को वह करंडी देवे,

शक्तिप्रमाण चतुर्विध संघ को आहारादिक दान देकर स्वयं भोजन करे, इस प्रकार इन पांच दशमियों को पूर्वोक्त विधि से व्रत करे, यही इस व्रत की विधि है, यही काल है, व्रत उद्यापन भी यही है ।

कथा

श्रीमदमरेंद्र वंद्य काममदध्वंसि विजयि पार्श्वतीर्थाधिपं,
प्रणमाभिवंद्य कामित फलप्रदां शुद्ध दशमी कथामभिस्तौमि ।।

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में अवंति नाम का देश है, उस देश में उज्जयिनी नाम को एक सुन्दर नगरी है, उस नगर का राजा जिनसेन और पत्नी जितसेना थी, उस राजा का एक जिनदत्त नाम का राजश्रेष्ठी था, उस श्रेष्ठी की स्त्री का नाम धनवती था, सेठ के श्रीकांत आदि पांच पुत्र थे, इस प्रकार अपने परिवार सहित सेठ आनन्द से समय निकाल रहा था ।

एक बार की बात है कि नगर के बाहर एक मुनिराज रात्रियोग धारण कर खड़े हुए, प्रभात काल में सेठ की बड़ी पुत्रवधु गोबर डालने के लिये वहां गई और उसने मुनिराज के ऊपर गोबर डाल दिया और घर वापस आ गई, थोड़े समय के बाद श्रेष्ठी भगवान की पूजा के लिए उद्यान में गया, रास्ते में उस सेठ की दृष्टि मुनिराज के ऊपर पड़ी, मुनिराज उपसर्ग समझकर जैसे के तैसे ही खड़े थे, सेठ ने देखा कि मुनिराज के ऊपर गोबर डाल रखा है, सेठ भयभीत हुआ, और उष्ण जल से मुनिराज का शरीर धो डाला, और मुनिराज को चैत्यालय में लेकर गया, पूजाभिषेक करने के बाद सेठ अपने घर को आया, मुनिराज आहारचर्या के निमित्त नगर में आये और सेठ ने नवधाभक्तिपूर्वक आहार दिया, मुनिराज वन में वापस चले गये ।

कुछ समय के बाद उस सेठ की बड़ी पुत्रवधु रोगाक्रांत होकर मर गई, एक नगर में राजा की स्त्री के गर्भ से उत्पन्न हुई, गर्भ के सहवास से रानी का रूप बिगड़ गया, यह देखकर राजा ने रानी को महल से बाहर रख दिया, तब मन्त्री रानी को अपने घर लेजाकर रानी के नौ मास पूर्ति किये, नव मास बीतने पर रानी ने एक लड़की को जन्म दिया, तब रानी ने उस प्रसूत कन्या को मारने के लिए दासी के हाथ

में और दिया, दासी ने उस नवजात कन्या को नगर के बाहरी उद्यान में अति दूर एक पेड़ के नीचे वस्त्र बिछा कर सुला दिया, और वापस लौटकर आ गई, थोड़े समय के बाद दो आर्यिकाएं वहां शौच-क्रिया के लिए गई थीं, सो उस बालिका को आर्यिकाओं ने देखा, उसी समय उस छोटी सी कन्या को लेकर अपने स्थान पर वापस लौट आई, आर्यिकाओं ने भी श्रावकों के यहां से दूध वगैरह मंगवाकर पालन-पोषण किया और उसका नाम मदनावली रखा।

इधर वह रानी पहले के समान ही वापस रूपवती हो गई, यह जानकर राजा रानी को वापस राजमहल में ले गया, और सुख से दोनों समय निकालने लगे। इधर वह मदनावली दस वर्ष की होकर आनन्द से क्रीड़ा करने लगी।

एक दिन आर्यिका माताजी आहार के लिए नगर में गई थी और इधर मदनावली के आगे पद्मावती देवी प्रत्यक्ष प्रकट होकर कुमारी मदनावली को कहने लगी कि हे बालिके ! तुम शुद्ध दशमी व्रत का पालन करो जिससे कि तुमको श्री सम्पत्ति सुख प्राप्त होगा, ऐसा कहकर देवी अदृश्य हो गई। आर्यिका माता जी को लड़की ने सब वृतांत कह सुनाया, यह सुनकर आर्यिकाजी को बहुत आनन्द हुआ।

दूसरे दिन फिर माताजी आहार के लिये नगर में गई, पीछे से फिर मदनावली के सामने देवी प्रकट होकर कहने लगी कि हे मदनावली मैं तुमको शुद्ध दशमी व्रत की विधि कहती हूं सुनो, ऐसा कहकर देवी ने पूर्ण व्रत विधि का स्वरूप कहा और अदृश्य हो गई, जब आर्यिकाजी आहार करके वापस आयीं, तो मदनावली ने पीछे घटने वाली घटना को कह सुनाया, माताजी ने उसको आशीर्वाद दिया, मदनावली विधि से व्रत को पालने लगी।

एक समय राजा के पुत्र को सांप ने काट खाया और पुत्र मर गया। उस पुत्र के ऊपर माँ का बहुत प्रेम था, इसलिए माँ, रानी उस पुत्र का संस्कार नहीं होने दे रही थी, तब मन्त्रीवर्ग ने विचार करके एक गाड़ी में एक हजार स्वर्ण मोहरें भरकर नगर में सूचना करवाई कि जो कोई राजकुमार को जिन्दा कर देगा उसको ये एक हजार सुवर्ण मोहरें दी जायेंगी, यह सब समाचार मदनावली ने सुना,

और राज सेवकों के साथ राज महल में गई और कहने लगी कि आप लोग इस प्रेत (शव) का दाहसंस्कार न करते हुए, इसको जिन मन्दिर के समीप ले चलो ।

तब मृतक राजकुमार को उठाकर मन्दिर के समीप योग्य स्थान पर सेवकों की सुरक्षा में रखा, मन्दिर में जाकर मदनावली अपने मन में परमात्मा का चिंतवन करने लगी, उस समय पद्मावति देवी का आसन कंपायमान हुआ, तत्क्षण देवी वहां आकर मदनावली को कहने लगी कि तुम चिन्ता मत करो, भगवान का पंचामृत अभिषेक करके (पार्श्वनाथ) उस अभिषेक को राजकुमार के ऊपर डालो, राजकुमार जिन्दा हो जाएगा, ऐसा कहकर देवी अदृश्य हो गई ।

तब मदनावली ने विधिपूर्वक पार्श्वनाथ का अभिषेक करके राजकुमार के ऊपर गंधोदक का छिड़काव किया, राजकुमार का शरीर तत्क्षण निर्विष हो गया और राजकुमार उठकर जिन मन्दिर में गया और भगवान को नमस्कार करने लगा, यह सब वार्ता सेवकों ने राजा को जाकर कही, राजा मन्त्री आदि सब जिन मन्दिर में आये, उस लड़की का परिचय पूछा, मदनावली ने व्रत का माहात्म्य सबको कह सुनाया, व्रत का माहात्म्य सुनकर सबको बहुत आनन्द हुआ, सब लोग नगर में वापस आ गये, आगे मदनावली आर्यिका दीक्षा लेकर तपस्या करने लगी, अन्त में समाधिमरण कर स्त्रीलिंग को छेद स्वर्ग में देव हुई ।

अथ शुक्ललेश्यानिवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करे अन्तर केवल इतना है कि वैशाख शुक्ला ४ के दिन एकाशन करे, ५ के दिन उपवास करे, रत्नत्रय की पूजा, मन्त्र, जाप, माण्डला आदि करे । पूर्ववत् विधि करे ।

अथ शोककर्म निवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करे । अन्तर सिर्फ इतना है कि चैत्र कृष्ण ७ के दिन एकाशन करे, अष्टमी के दिन उपवास करे, अरनाथ भगवान तीर्थंकर की पूजा, मन्त्र, जाप, मांडला आदि करे ।

शांतिनाथ तीर्थंकर चक्रवर्ति व्रत कथा अथवा सकलैश्वर्यभूषण व्रत कथा

व्रत विधि :—आश्विन कृष्ण ३० के दिन एकभुक्ति करे और कार्तिक

शुक्ला १ के दिन शुद्ध कपड़े पहनकर अष्टद्रव्य लेकर मन्दिर जाना चाहिए। फिर वहां पीठ पर श्रीधर तीर्थंकर की प्रतिमा को स्थापित कर पंचामृत अभिषेक करे। एक पाटे पर ५ स्वस्तिक निकालकर उस पर पान अक्षत आदि रखकर अष्टदल यन्त्र निकालकर बीच में प्रतिमा स्थापित करे। नित्यपूजा आदि करके निर्वाणसागर महासाधु विमलप्रभ व श्रीधर ऐसे ५ तीर्थंकरों की आराधना करे, श्रुत व गणधर की पूजा कर यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करे।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधर तीर्थंकराय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्पों से जाप करे। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे। यह व्रत कथा पढ़े। एक पात्र में पांच पान लगाकर उस पर अष्टद्रव्य व नारियल रखकर प्रदक्षिणा देते हुये मंगल आरती करे। सत्पात्र को आहारदान दे। उस दिन उपवास करे। दूसरे दिन पूजा व दान करके भोजन करे। इस प्रकार यह व्रत ५ वर्ष करे, मध्यम ५ दिन और जघन्य एक दिन करे।

व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे, उस दिन श्रीधर तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे। चतुर्विध संघ को आहारदान दे। जिनमन्दिर में आवश्यक उपकरण रखे। शक्ति होने पर नूतन जिनमन्दिर बनाकर उसमें कोई भी तीर्थंकर की प्रतिमा विराजमान कर पंचकल्याण करे। यह व्रत ५ वर्ष पालन करने वाले को सर्वार्थसिद्धि प्राप्त होती है ५ महिने पालन करने वाले को महेन्द्रकल्प, ५ दिन के पालन करने वाले को सौधर्म स्वर्ग, १ दिन पालन करने वाले को उत्तम मनुष्यगति प्राप्त होती है। ऐसा इस व्रत का माहात्म्य है।

कथा

इस जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र में सुरम्य नामक एक बड़ा देश है। उसमें पोदनपुर नामक एक अत्यन्त रमणीय नगर है। वहां पर पहले बाहुबली वंश में प्रजापति नामक एक बड़ा पराक्रमी नीतिवान व न्यायवान ऐसा राजा राज्य करता था। उसको मृगावति नामक स्त्री थी, उसके पुत्र अपारकीर्ति, लक्ष्मीपति और विजयी ऐसे त्रिपृष्ठ पुत्र उत्पन्न हुए। यह प्रतिवासुदेव था उसको स्वयंप्रभा नामक स्त्री थी, उसको विजय व विजयभद्र नामक दो पुत्र और ज्योतिप्रभा

नामक एक लड़की थी। इस विजय को सुतारा नामक स्त्री थी और विजयभद्र को विजयावति नामक पतिव्रता स्त्री थी। इस सारे परिवार सहित राजा सुख से राज्य करता था।

त्रिपृष्ठ को चक्ररत्न की उत्पत्ति हुई जिससे वह त्रिखण्डाधिपति बना। संसार मोह के कारण व गुरुद्रोह के कारण वह पहले नरक गया पर उसका लड़का विजय भद्र-परिणामी था, उसको संसार से वैराग्य हो गया जिससे उसने अपने पुत्र को राज्य देकर सुवर्णकुम्भ मुनि के पास दीक्षा ली। तपश्चरण कर सब कर्मों का क्षय करके मोक्ष गये। श्री विजय भद्र आदि श्रावक के व्रत लेकर राज्य सुख को भोगने लगे।

एक दिन राज्य सभा में बैठा था कि एक अमोघचिह्न नामक एक अष्टांग-निमित ने वज्रपात निवारण का उपाय बताया। राजा ने वह उपाय किया जिससे बच गया और सुख से रहने लगा।

एक दिन अशनिघोष विद्याधर ने उसकी पत्नी सुतारा का हरण किया जिससे दोनों के बीच युद्ध हुआ। पर अमिततेज नामक विद्याधर की सहायता से वह विजयी हुआ। अशनिघोष डर करके विजयजिनेश्वर के समोशरण में गया। वहां पर यह पूरा परिवार भी गया था, वहाँ धर्मोपदेश सुनकर अमिततेज ने दोनों हाथ जोड़कर पूछा कि सुतारा का हरण करने का कारण क्या है। यह सुन केवली तीर्थंकर ने कहा मलय देश में रत्नसंचयपुर नगर है, वहां पर श्रीषेण नामक राजा और उसको सिंहनंदिता व अनिंदिता नामक दो स्त्रियां थीं। उसको इन्द्र व उपेन्द्र ऐसे दो पुत्र थे। उसी नगर में सात्यकी नामक एक ब्राह्मण था, उसको सत्यभामा नामक एक कन्या थी। उस नगर के पास ही एक गांव था उसमें धरणीजट नामक एक बड़ा विद्वान वैदिक ब्राह्मण रहता था। उसको अग्नीला नामक स्त्री थी, उसको इन्द्रभूति व अभिभूति ऐसे दो पुत्र थे। उसको कपिल नामक एक दासीपुत्र था। जब वह ब्राह्मण अपने दोनों पुत्रों को वेद सिखाता था तब वह कपिल भी छिपकर सब सुनता था। वह तीव्र बुद्धिवान था। अतः उसे चारों वेद का मुख पाठ हो गया। जब ब्राह्मण को यह बात ज्ञात हुई तो उसने उसको निकाल दिया।

तब वह कपिल ब्राह्मण रत्नसंचय नगर में गया। वहां पर वो सात्यकी

ब्राह्मण के घर गया, उसकी विद्वत्ता वेद के ऊपर श्रुत उसका सौन्दर्य आदि देखकर उसका मन सन्तुष्ट हुआ तब शुभ मुहूर्त में कपिल के साथ अपनी लड़की सत्यभामा का विवाह किया । वहां श्रीषेण राजा ने भी उसका पाण्डित्य देखकर अपने दरबार में उसको आश्रय दिया ।

एक बार सत्यभामा रजस्वला थी, कपिल उसके साथ भोग करना चाहता था, उसके इस दुराचार से सत्यभामा के मन में यह विचार आया कि यह कोई विजातीय है ऐसा सोचकर उसने उससे प्रेम करना छोड़ दिया । एक बार धरणीजट ब्राह्मण अतिशय दरिद्री हो गया जिससे वह कपिल के घर आया, कपिल ने अपने पिता को सबको पहचान करके दी ।

एक दिन सत्यभामा ने धरणीजट को धन देकर एकान्त में सब बात पूछ ली और फिर सत्यभामा ने विचार करके श्रीषेण राजा के पास जाकर सब समाचार उसे बता दिया । तब श्रीषेण राजा ने सत्यभामा को अपने पास रखकर उस कपिल को नगर से बाहर निकाल दिया ।

एक दिन राजा शहर के बाहर वैभार पर्वत पर क्रीड़ा करने के लिये गया था, वहां पर आदित्य नामक महामुनि एक पेड़ के नीचे दिखाई दिये, राजा उनके पास गया वंदना की और आत्महित का प्रश्न पूछा तब मुनिराज ने यह आत्महित करने में असमर्थ है ऐसा सोचकर सत्पात्र को दान देने का उपदेश दिया ।

एक दिन राजघराने में श्री अजितगति और आदित्यगति नामक दो चारण मुनि आहार के निमित्त से वहां आये । राजा ने नवधाभक्तिपूर्वक अपनी दोनों स्त्रियों सहित आहार दिया । तब राजा के घर पर पंचाश्चर्य वृष्टि हुई । इस दान क्रिया को देखकर सत्यभामा को बड़ा आश्चर्य हुआ ।

सत्पात्र को दान देने से वे सब भोगभूमि में उत्पन्न हुये, श्रीषेण की पत्नी सिंहनंदिता तो उसी की पत्नी हुई पर अनिंदिता यह पुरुष बनी व सत्यभामा उसकी स्त्री हुई ।

वहां की आयु पूरी कर वे सौधर्म स्वर्ग में उत्पन्न हुये । वहां से चयकर श्रीषेण का जीव तू अमिततेज है सिंहनंदा ने निदान किया था अतः त्रिपृष्ट नारा-

यण की पत्नी ज्योतिप्रभा हुई। अनिंदिता श्रीविजय नाम से उत्पन्न हुआ। सात्यकी ब्राह्मण की पुत्री सत्यभामा सुतारी हुई है। जिसको श्रीषेण राजा ने निकाल दिया था वह कपिल बहुत संसार परिभ्रमण कर निदान से अशनिघोष विद्याधर हुआ है, इसका मन सत्यभामा में रह गया था इसलिये अब वह पीछे लगा है।

इस प्रकार अपने-अपने पूर्वभवों को सुनकर उन्हें वैराग्य हो गया। दीक्षा लेकर वे सब घोर तपश्चर्या करने लगे जिससे वे सब स्वर्ग में देव हुये और वहां की आयु पूर्ण करके मनुष्य बने और फिर वे मोक्ष गये।

इधर अमिततेज व विजय दोनों ने आहारदान दिया था। दो चारण मुनि के पास गये। उनके दर्शन कर उनसे पूछा कि भगवान हमारी आयु कितनी बाकी रह गयी है? उन्होंने बताया कि अब तुम्हारी आयु ३६ दिन शेष रही है तब वे घर गये और अपने पुत्रों को राज्य देकर उन्होंने अष्टान्हिका पर्व में व्रत का उद्यापन करके श्री अभिनंदन मुनि के पास दीक्षा ली। मरणपर्यन्त उपवास भी ले लिया जिससे वे मरकर देव हुये पर विजय ने निदान किया जिससे वे देव होकर अनंतवीर्य वासुदेव हुये। वहां से मरकर नरक गये। पर अमिततेज जो देव हुआ था वह मरकर बलदेव हुआ समय पाकर दीक्षा लेकर तपश्चर्या की जिससे वह फिर १६वें स्वर्ग में प्रतिइन्द्र हुये। वहां से चयकर क्षेमंकर नामक चक्रवर्ति हुये। वहां पर बहुत दान पूजा की तथा वैराग्य धारण कर दीक्षा ली जिससे वे स्वर्ग में अहमिंद्र हुये। वहां की आयु पूर्ण कर वह मेघरथ नामक राजा बना, वहां पर उन्होंने तीर्थंकर के पादमूल में १६ भावन की भावना भाई जिससे वे सर्वार्थसिद्धि में देव हुए। वहां से चयकर हस्तिनापुर में राजा विश्वसेन के यहाँ जन्म लिया, उनका नाम शान्तिनाथ था, कामदेव चक्रवर्ति व तीर्थंकर पदवी के धारी हुये, देवों ने उनके पांचों कल्याणक मनाये। केवलज्ञान प्राप्त कर धर्मोपदेश कर वे मोक्ष गये।

अथ शतेन्द्रव्रत कथा

व्रत विधि :—आषाढ़ शुक्ल ८ के दिन उपवास करे, पूजा सामग्री हाथ में लेकर शुद्ध कपड़े पहन कर मन्दिर में जाये। पाटे पर चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा विराजमान करके पंचामृत अभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से अर्चना करे। पंच पकवान का नैवेद्य चढ़ावे।

जाप :—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प से जाप करे । णमोकार मन्त्र का जाप करे । एक पात्र में २४ पत्ते रखकर उसमें अष्ट द्रव्य रखे और नारियल भी रखना चाहिए और महार्घ्य देना चाहिए । आरती करनी चाहिए । सत्पात्र को आहारदान देना चाहिये । ब्रह्मचर्य पूर्वक समय बिताये ।

इस प्रकार प्रत्येक अष्टमी व चतुर्दशी के दिन करना चाहिए । नित्य क्षीराभिषेक करना चाहिए । इस प्रकार से चार महिने तक करना चाहिये, अन्त में कार्तिक शु. १५ के दिन उद्यापन करे । उस समय सम्मेदशिखरजी विधान करके महाभिषेक करना चाहिए ।

वृषभादि चौबीस तीर्थंकर के गर्भकल्याण, जन्मकल्याण, दीक्षाकल्याण, केवलकल्याण, निर्वाणकल्याण में ४० भवनवासी, बत्तीस व्यन्तरवासी, चौबीस कल्पवासी, एक सूर्य, एक चन्द्र, एक नरेन्द्र और एक सिंह इस प्रकार १०० इन्द्र जिनकी भक्ति करके पुण्य सम्पादन करते हैं ।

कथा

धातकी खण्ड में मंदर नामक मेरू पर्वत है, उसके उत्तर में ऐरावत नामक एक क्षेत्र है उसमें भूतिलक नामक एक राज्य है । वहां अभयघोष नाम के नीतिवान् व पराक्रमी राजा राज्य करते थे । उनकी कनकलता नाम से रूपवती गुणवती पटरानी थी । उनसे जय विजय नाम के दो पुत्र हुए । सब परिवार सहित सुख से काल बिता रहे थे । एक दिन सिद्धकूट चैत्यालय के दर्शन को गये थे । वहां से दर्शन करके सभा मण्डप में आये तब उन्हें चारण मुनीश्वरों के दर्शन हुए, वहाँ उनके दर्शन प्राप्त कर तथा अपने भव जानकर सुनकर आनंदित हुए । फिर कोई भी एक व्रत देने के लिए निवेदन किया तब मुनिवर ने शतेन्द्र व्रत की विधि बतायी । राजा ने यह व्रत ग्रहण किया । पश्चात् अपनी नगरी को लौटे । कालानुसार सब ने इस व्रत का पालन किया । आगे किसी निमित्त से उन्हें वैराग्य उत्पन्न हुआ । राजा ने वन में जाकर मुनिराज से जिनदीक्षा धारण की । घोर तपश्चरण से तथा व्रत पुण्य के फल से

स्वर्ग में देव हुए । वहां से चयकर उत्तम राजकुल में उत्पन्न हुए । वहां अधिक समय तक संसार सुख भोगकर अन्त में निर्ग्रन्थ दीक्षा लेकर तपस्या की जिससे वे सब कर्मों को नाशकर मोक्ष पधारे ।

अथ शुक्लध्यानप्राप्ति व्रतकथा

व्रत विधि :—पहले के समान करें । अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख कृ० १४ के दिन एकाशन करें । १५ के दिन उपवास पूजा आराधना व मन्त्र जाप आदि करें । पत्ते मांडे ।

श्वेत पंचमी व्रत

आषाढ़ फाल्गुण कार्तिक एह, सितपंचमि तें व्रत को लेह ।
पेंसठ प्रोषध करिये तास, वरष पांच-पांच परिमास ।।
श्वेत पंचमी को व्रत धार, त्रिविध शुद्ध धारों नरनार ।

—कि० सिं० क्रि०

भावार्थ :—यह व्रत पांच वर्ष और पांच महीने में समाप्त होता है । आषाढ़ कार्तिक या फाल्गुन इन तीनों मासों में से किसी एक मास में प्रारम्भ करे । प्रतिमास शुक्ल पक्ष की पंचमी के दिन उपवास करे । इस प्रकार ६५ उपवास पूर्ण होने पर उद्यापन करे । नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे ।

षट्कर्म व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला पंचमी के दिन शुद्ध होकर एकासन करे, षष्टि प्रातः शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, पद्मप्रभ भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पद्मप्रभतीर्थंकराय कुसुमयक्ष मनोवेगायक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मंत्र का १०८ बार जाप करे, एक पाटे पर पांच पान लगाकर ऊपर अष्टद्रव्य रखे ।

देव पूजा गुरु पास्तिः स्वाध्यायः संयमस्तपः ।
दानं चेति गृहस्थानां, षट् कर्माणि दिने दिने ।।१।।

णमोकार मंत्र का छह बार जाप करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, धर्मध्यान से रहे, सत्पात्रों को दान देवे, छह वस्तुओं से स्वयं पारणा करे ।

इस प्रकार चार महीने तक इस व्रत को करके कार्तिक की अष्टान्हिका में उद्यापन करे, उस समय पद्मप्रभ तीर्थंकर का विधान करे, महाभिषेक करे, मुनि संघ को दान देवे, वेष्टन ६ और शास्त्र छह, माला छह, सब मन्दिर जी में भेंट करे ।

कथा

इस व्रत को एक पद्मराज नामक राजा ने पालन किया था उसके फल से परम्परा से मोक्ष पा गया ।

इस व्रत को राजा श्रेणिक और रानी चेलना ने भी किया था उनकी कथा पढ़ें ।

अथ षोडशक्रिया व्रत कथा

आषाढ शुक्ल अष्टमी को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणापूर्वक भगवान को नमस्कार करे, शांतिनाथ भगवान का पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शांतिनाथतीर्थंकराय गरुडयक्ष महामानसीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प से जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, उस दिन उपवास करे, शक्ति अनुसार उपवास व एकासन करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, दान देकर पारणा करे, सोलह अष्टमी को इस व्रत का पालन करे, फाल्गुन शुक्ल अष्टमी को इस व्रत का उद्यापन करे, शान्ति विधान करे, महाभिषेक करें ।

कथा

इस व्रत का राजा वज्रजंघ और श्रीमती रानी ने पालन किया था, इस व्रत के अन्दर राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

अथ षोडशविद्या देवता व्रत कथा

व्रत विधि—पहले के समान सब क्रिया करके अन्तर सिर्फ इतना है कि आषाढ़ शु० १० के दिन एकभुक्ति (एकाशन) करे, ११ के दिन उपवास करें।

जाप—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शांतिनाथाय गरुडयक्ष महामानसीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प से जाप दें। महीने में एक दिन उस तिथि को पूजा करें। ऐसी सोलह पूजा पूर्ण होने पर कार्तिक अष्टाह्निका में उद्यापन करें।

शांतिनाथ विधान व पूजा करें। पात्र में १६ पान रखकर उस पर अष्टद्रव्य व नारियल रखें। महार्घ्य जयमाला पढ़कर दें। षोडश विद्या देवता की पृथक-पृथक अर्चना करावें। उद्यापन करे।

कथा

जम्बूद्वीप में ऐरावत क्षेत्र में गांधार नामक बड़ा देश है। उसमें विंध्यपुर नामक सुन्दर नगर है, वहां पर विद्यासेन नामक राजा अपनी स्त्री लक्ष्मीमती सहित राज्य करता था। उसको नलिनकेतु पुत्र, नलिनाक्षी नामक स्त्री थी। कमलकीर्ति नामक पुरोहित व कमलावती उसकी स्त्री, विजयंधर नामक मन्त्री व विजयावती उसकी स्त्री, धनमित्र नामक श्रेष्ठी व उसकी पत्नी श्रीदत्ता थी।

एक दिन नगर में विमलप्रभ नामक मुनि आहार के लिए आये, नवधाभक्तिपूर्वक पडगाहन करके विधिपूर्वक आहार दिया। फिर राजा ने प्रश्नोत्तर कर यह व्रत लिया और यथाविधि व्रत का पालन किया। जिससे बहुत समय तक सुख से राज्य किया फिर अपने पुत्र को राज्य देकर जिनदीक्षा ली। घोर तपश्चरण किया। इस व्रत से व तपश्चरण से राजा मोक्ष गये।

अथ षट्कन्याका व्रत कथा

व्रत विधि—ज्येष्ठ शु० ४थी के दिन एकाशन करे, ५ के दिन शुद्ध कपड़े पहनकर मन्दिर जायें। वेदि पर पद्मप्रभु की मूर्ति विराजमान कर कुसुमवर यक्ष व मनोवेगायक्षी की स्थापना करे। पंचामृत अभिषेक करे। अष्ट द्रव्य से अभिषेक करे।

श्रुत व गणधर की पूजा करके भगवान के सामने एक पाटे पर ६ पत्ते रखकर उस पर अष्टद्रव्य रखें और यह जाप करें।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पद्मप्रभ तीर्थंकराय कुसुमवरयक्ष मनोवेगायक्षी सहिताय नमः स्वाहा: ॥

इसका १०८ पुष्पों से जाप करे। णमोकार मन्त्र का भी जाप करे। यह कथा पढ़नी चाहिए। एक पात्र में ६ पत्ते लगाकर महार्घ्य दें। आरती करें। उस दिन उपवास करे, सत्पात्र को आहारदान दे। तीन दिन ब्रह्मचर्य का पालन करे।

इस प्रकार महिने में एक बार उसी तिथि को व्रत करे। ऐसी ६ पूजा (छः पंचमी पूर्ण होने पर) पूर्ण होने पर उद्यापन करे। उस समय पद्मप्रभ विधान करावे। महाभिषेक करे, सत्पात्र को दान दे।

कथा

इस जम्बूद्वीप में धातकी खण्ड में मेरू पर्वत के पश्चिम में विदेह क्षेत्र है। उसमें दासीका नदी के किनारे वत्स नामक विस्तीर्ण देश है। उसमें सुसीमा नामक मनोहर नगरी है। उसमें अपराजित नामक राजा अपनी पत्नी लक्ष्मीमति के साथ राज्य करता था। उसको सुमित्र नामक एक लड़का था। इसके अलावा मन्त्री, पुरोहित, श्रेष्ठी, सेनापति आदि परिवार था।

एक दिन चारणऋषिधारी मुनि-महाराज चर्या के निमित्त से वहां आये। नवधाभक्तिपूर्वक उन्हें आहार दिया। आहार हो जाने पर उनको ऊंचे आसन पर बिठाया। धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा ने हाथ जोड़कर कहा हे मुनिराज ! शाश्वत सुख के कारणभूत ऐसा कोई व्रत दो। तब महाराज जी ने यह व्रत विधिपूर्वक कहा फिर वे जंगल में चले गये। राजा ने व्रत विधिपूर्वक पूर्ण किया। फिर सुखपूर्वक राज्य किया और वैराग्य हो जाने से अपने पुत्र को राज्य देकर आपने पिहिताश्रव भट्टारक से दिगम्बर दीक्षा ली। फिर बहुत तपश्चर्या की जिससे ११ अंग का ज्ञान हो गया। समाधिपूर्वक मरण हुआ जिससे वे उपरिम ग्रैवेक में देव हुये।

फिर वहां से चयकर कौशांबी नगर में काश्यगोत्रीय धारण नामक राजा के घर जन्म लिया। उनको देव मेरू पर्वत पर ले गये, वहां उनका अभिषेक किया, उस समय उनका नाम पद्मप्रभु रखा।

उस बच्चे की ६ पर्वतों पर रहने वाली श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी ऐसी ६ कन्याओं ने प्रसूति गृह में सेवा की अर्थात् अजन आदि लगाया। इसलिये इस व्रत का नाम षटकन्या व्रत है ।

पद्मप्रभु जिन बालक चन्द्रमा के समान बड़ा होने लगा । वह तरुण हो गया तब उनके पिता ने उनको राज्य भार सौंपकर संसार विषय से उदासीन होकर दीक्षा ली । जिससे उनकी सुगति हुई ।

पद्मप्रभु बहुत समय तक राज्य करके इस क्षणिक संसार से विरक्त हो गये । तब लोकान्ति देव ने आकर अनेक प्रकार का उपदेश दिया और स्तुति कर चले गये । तब पद्मप्रभु एक पालकी में बैठकर जंगल में गये, वहां पंचमुष्ठी केशलोंच करके दिगम्बरी दीक्षा ली । तपश्चर्या के प्रभाव से चार घातिया कर्मों का नाश करके केवलज्ञान को प्राप्त किया और अन्त में योग निरोध कर अघातिया कर्मों का नाश कर मोक्ष गये ।

षष्ठी व्रत

श्रावण शुक्ला ६ के दिन उपवास करना । मनोकामना पूर्ण होने के लिये यह व्रत करते हैं । ये उपवास प्रोषधोपवास पूर्वक करना चाहिये । शुक्ल पंचमी को मन्दिर में जाकर नित्य नियम पूजा करनी चाहिये । भगवान नेमिनाथ की पूजा करनी चाहिये । बाद में भक्त महाकल्याण मन्दिर स्तोत्र का पाठ करना, पंचमी को एकाशन करके ६ को उपवास करना, उस दिन भी पूरा दिन धर्मध्यानपूर्वक बिताये । णमोकार मन्त्र का जाप करना चाहिये । आत्मचिन्तन करना चाहिये । एकाशन के दिन कोई भी एक अन्न खाना चाहिये । यह व्रत १० वर्ष तक करना फिर उद्यापन करना चाहिये । यदि शक्ति नहीं है तो व्रत दूना करना चाहिये ।

षोडषकारण व्रत

यह व्रत वर्ष में तीन बार आता है । चैत्र, श्रावण और माघ, इन महिनों में वदि प्रतिपदा से एक महिना तक यह व्रत किया जाता है । इसमें एक दिन उपवास एक दिन एकाशन इस क्रम से करना चाहिये ।

दूसरी विधि :—भाद्रपद शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को उपवास करके दूसरे

दिन एकाशन करना, तीसरे दिन उपवास फिर एकाशन, इस प्रकार तीस दिन करना चाहिये, इसमें सम्पूर्ण कषायों का त्याग करना चाहिये, सोने या चांदी का या ताम्बे का यन्त्र बनाना चाहिये। उसमें १६ घर बनाना चाहिये, उन १६ घरों में १६ भावना लिखनी चाहिये। रोज एक भावना का चिन्तन मनन करना चाहिये। और

ॐ ह्रीं अर्हं असि आ उ सा दर्शनविशुद्धि षोडषकारणेभ्यो: नमः

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करना चाहिये। व्रत सोलह वर्ष करना चाहिये, व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये।

तीसरी विधि :—तीन प्रतिपदा, दो पंचमी, दो अष्टमी, दो एकादशमी और दो चतुर्दशी इस पर्व के दिन प्रोषधोपवास करना। ये ११ उपवास और दूसरे एकाशन करना। इसके अलावा बहुत सी विधियां इस व्रत की दिखाई देती हैं।

यह व्रत करने से तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध होता है। यह व्रत करते समय एक-एक भावना का चिन्तन करना। इसकी १६ भावनाएं हैं।

(१) दर्शन विशुद्धि (२) विनयसम्पन्नता (३) शीलव्रतेष्वनतीचार (४) अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग (५) संवेग (६) शक्तित्याग (७) शक्तिस्तप (८) साधु समाधि (९) वैयावृत्यकरण (१०) अर्हतभक्ति (११) आचार्यभक्ति (१२) उपाध्याय भक्ति (१३) प्रवचन भक्ति (१४) आवश्यक परिहारि (१५) मार्ग प्रभावना (१६) प्रवचन वात्सल्यत्व।

इस व्रत के उद्यापन में २५६ कोष्टक का मण्डल बनाना चाहिए। पहले मण्डल पर दर्शन विशुद्धि के १९८ कोष्टक, दूसरे मण्डल पर विनय सम्पन्न के ५ कोष्टक, तीसरे मण्डल पर शील भावना के १० कोष्टक, चौथे अभीक्ष्ण भावना के २ कोष्टक, पाँचवें संवेग भावना के १४ कोष्टक छठे शक्ति त्याग के ४ कोष्टक सातवें मण्डल शक्तिस्त के १४ कोष्टक, ८वें मण्डल साधु समाधि के ४ कोष्टक ९वें मण्डल वैयावृत्य के ४ कोष्टक १०वें मण्डल पर अर्हतभक्ति के १३ कोष्टक, ११वें आचार्य भक्ति के १२ कोष्टक, १२वें बहुश्रुत भक्ति के २ कोष्टक, १३वें प्रवचन भक्ति के ५ कोष्टक, १४वें आवश्यक परिहार के ६ कोष्टक, १५वें मार्ग प्रभावना के १० कोष्टक, १६वें प्रवचन वात्सल्य के ४ कोष्टक इस प्रकार २५६ कोष्टक बनाना।

जलयात्रा, अभिषेक, मंगलाष्टक, सकलीकरण, अगन्यास, स्वस्तिवाचन

वगैरह क्रिया करनी चाहिए। फिर पूजा करनी चाहिये। हवन शान्ति विसर्जन करना चाहिए। उद्यापन में १६ घट पर १६ फल बाटना चाहिये। षोडशकारण यन्त्र, पूजनसामग्री, २५६ चांदी के स्वस्तिक, २५६ सुपारी, १६ शास्त्र, १६ श्रीफल, बर्तन, छत्र, चमर आदि मंगल द्रव्य दान करना चाहिए।

एक और विधि :––श्रावण वदि प्रतिपदा से क्रम से एक महिना भर उपवास करना या एक उपवास या एक एकाशन करना।

—हस्त लिखित पोथी

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगध नामक देश है, वहां की राजगृही राजधानी है। वहां राजा हेमप्रभ अपनी विजयावती रानी के साथ रहता था।

राजा का एक सेवक महाशर्मा, उसकी पत्नी प्रियंवदा थी। उसकी लड़की कालभैरवी बहुत ही कुरूप थी। उसको देखते ही सबको घृणा होती थी। एक बार चारण मुनि मतिसागर आकाश मार्ग से विहार करते हुये उस नगर में आये। महाशर्मा ने उन्हें नवधाभक्तिपूर्वक आहार दिया। मुनीमहाराज ने धर्मोपदेश दिया। तब महाशर्मा ने अपनी लड़की कुरूप क्यों है ऐसे प्रश्न पूछा तब महाराज बोले "इस उज्जयनी नगरी में राजा महीपाल अपनी पत्नी वेगवती रानी के साथ राज्य करता था, उनकी लड़की बहुत ही सुन्दर थी, उसे अपने रूप का घमण्ड था।

एक बार एक मुनि महाराज आहार लेकर उसके घर से निकले वह उसने देखा, उसने अच्छे बुरे का विचार न करते हुये महाराज के ऊपर थूक दिया, पर महाराज तो क्षमाधारी थे वे कुछ न बोलते हुये चले गये।

राजा ने व पुरोहित ने देखा, वे कन्या का उन्मत्तपणा देखकर उसके ऊपर गुस्सा हुए। उन्होंने मुनि महाराज के शरीर को प्रासुक पानी से पोंछ दिया जिससे राज कन्या लज्जित हुई। उसे अपने कृत्य पर पश्चाताप हुआ। वह मुनि महाराज के पास आयी और नमोस्तु कर अपने अपराध की क्षमा मांगी यही लड़की मरकर तेरे पेट से उत्पन्न हुई है। पूर्व का पाप कर्म का उदय है जिसे वह भोग रही है। इससे

छुटने के लिये षोडशकारण व्रत करना चाहिए जिससे वह स्त्रीलिंग छेद कर मोक्ष जायेगी । फिर मुनि महाराज ने उसे व्रत करने की विधि बतायी ।

(१) **दर्शनविशुद्धि** :—संसार में जीव का शत्रु मिथ्यात्व है और मित्र सम्यक्त्व है, इसलिए जीव को पहले मिथ्यात्व का त्याग करना इष्ट है । मिथ्यात्व का अर्थ है विपरीत श्रद्धान, अतत्व श्रद्धान । दर्शन निर्दोष होना दर्शन विशुद्धि है । उसके आठ अंग हैं ।

(१) **निःशंकित** :—धर्म के ऊपर शंका न करना कितनी भी मुसीबत में आ जाय पर सच्चे धर्म पर शंका न करना । उस पर दृढ़ विश्वास रखना ।

(२) **निःकांक्षित्व** :—इहलोक या परलोक में विषय-भोग की इच्छा न रखना, दूसरे धर्म में कुछ चमत्कार देखकर उस मत को अच्छा मान लेना और सच्चे धर्म पर श्रद्धा छोड़ देना । अपनी श्रद्धा सच्चे धर्म पर होना ।

निर्विचिकित्सा :—पदार्थों को मिथ्याभाव से अशुद्ध समझना, अर्हत परमेष्ठी के उपदेश में यह बात कठोर कही है या सब को मानना पर एक को नहीं मानना यह एक ही बात नहीं होती तो धर्म सरल था ।

अमूढ़ दृष्टित्व :—नाना प्रकार के मत एक जैसे ही दिखते हैं पर उनकी परीक्षा कर उनमें मिथ्या मत को न मानना, सच्ची बात समझना, सम्यक्त्व पर दृढ़ श्रद्धा रखना अमूढ दृष्टि अंग है ।

(५) **उपगूहन अंग** :—साधर्मी जो दूसरों की संगति से कोई दोष उत्पन्न हुए हों तो उसे उपदेश देकर दृढ़ करना, यदि कोई पुरुष धर्म से च्युत हो रहा है तो उसे दृढ़ करना ।

(६) **स्थितिकरण अंग** :—कर्म के उदय से किसी साधु या व्रती या किसी मनुष्य के भ्रष्ट होने की भावना हुई तो उसे दृढ़ करना या उसे धर्म में स्थित करना ही स्थितिकरण अंग है ।

(७) **वात्सल्य अंग** :—धार्मिक लोगों पर प्रेम करना, उनके प्रति प्रेम बढ़ाना वात्सल्य है जैसे गौ अपने बच्चे के प्रति प्रेम करती है वैसे करना ।

(८) **प्रभावना अंग** :—जिनधर्म पर श्रद्धा करना, उसकी प्रभावना करना, जिनधर्म का प्रचार करना।

इन आठ अंगों का पालन करके सम्यग्श्रद्धा बढ़ाना दर्शन विशुद्धि भावना है।

(२) **विनय सम्पन्नता** :—संसार में जीव अहंकार से (मान से) सब के दिल उतर जाता है। अभिमान के कारण यदि कोई अपने को सबसे बड़ा समझे तो वह बड़ा नहीं कहा जाता हैं। मन्दिर के ऊपर शिखर ही शोभा देता है पर यदि उसके ऊपर कौआ बैठ गया तो शोभा देगा क्या ? नहीं। मान से मनुष्य दुःखी होता है, अपने से बड़ों का विनय करना, उनके गुणों की स्तुति करना, उनका आदर करना। जो मनुष्य अपने दोष स्वीकार करता है उसके दोष बढ़ते नहीं हैं। इसलिए दर्शन, ज्ञान और चारित्र, तप आदि का विनय करना, उनको यथार्थ समझना यही विनय-सम्पन्नता है।

शीलव्रतेष्वनातिचार :—मर्यादा के बिना या प्रतिज्ञा के बिना मन को वश नहीं कर सकते हैं लगाम डाले बिना घोड़ा अंकुश में नहीं आता है। उसी प्रकार मन व इन्द्रियों को भी वश करने के लिए व्रतों का पालन करना चाहिए। अहिंसा अणुव्रत अर्थात् किसी भी जीव का घात न करना। सत्याणुव्रत अर्थात् किसी को भी दुःख पहुंचे ऐसे वचन नहीं बोलना। अचौर्याणुव्रत अर्थात् दिये बिना कोई भी वस्तु नहीं लेना। ब्रह्मचर्य अर्थात् अपनी स्त्री के अलावा दूसरी सब स्त्रियों को बहन के समान देखना। परिग्रह व परिग्रह का प्रमाण करना ये ही पांच व्रत हैं, इनका पालन करने के लिये ७ शीलव्रत (४ दिग्व्रत ३ गुणव्रत) का पालन करना। यही शीलव्रतेष्वनातिचार व्रत है।

अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग—मिथ्यात्व के उदय से जीव अपना भला किसमें है यह जानता नहीं है सांसारिक सुख के लिए चाहे जैसा मार्ग ग्रहण करता है जिससे उसे सुख के बिना दुःख ही मिलता है। इसलिए सच्चा ज्ञान प्राप्त करना चाहिये। ऐसा विचार कर सच्चे ज्ञान की प्राप्ति करनी चाहिये। यही ज्ञानोपयोग भावना है।

संवेग—संसारी जीव का विषय भोग की ओर ही ध्यान रहता है, उसको तीन लोक की पूरी सम्पत्ति भी मिल जाय तो सन्तोष नहीं है। पर उसकी इच्छा

का असंख्यातवां भाग भी पूरा नहीं होता है, ऐसे अनन्त जीव हैं। उसको भी जीव ने किसी न किसी अवस्था में भोगा ही है। सन्तोष नहीं हुआ है अतः मन को वश कर संसार के सुख का त्याग करना, हमेशा उससे वैराग्य की भावना भाना संवेग है।

शक्तिस्त्याग :—मनुष्य जब तक सासारिक वस्तु का, ममत्व का त्याग करता नहीं है तब तक उसे सच्चा सुख मिलता नहीं है। क्योंकि संसार के सब पदार्थ नाशवान हैं। यह विचार कर आहार, औषध, शास्त्र और अभयदान इस प्रकार चार प्रकार का दान करना चाहिए। धर्म की प्रभावना के लिए धन खर्च करना तथा सब वस्तुओं का थोड़ा-थोड़ा दान करना चाहिए।

(७) **शक्तिस्तप :**—शरीर दुःख का कारण है, वह अनित्य, अस्थिर, अशुद्धि-पूर्ण, कृतघ्न है। इस शरीर को कितना ही खिलाया पिलाया या हृष्ट पुष्ट किया पर शरीर अपना बनता नहीं है। वह अपने को छोड़ कर जाता है इसलिए उसके पोषण की चिन्ता करना व्यर्थ है। पोषण करते हुए तपश्चरण करना चाहिए, अपनी शक्ति के अनुसार तप करना चाहिए। तप से इन्द्रियों के विषयों की लोलुपता नष्ट होती है। तप से आत्मोन्नति होती है। शारीरिक सुखोपभोग भोगने की इच्छा तप से नष्ट होती है। तप से सर्व साध्य होता है। इसलिए शक्ति अनुसार तप करना चाहिए।

(८) **साधुसमाधि :**—सारे जीवन का कल्याण करने की धर्म की प्रवृत्ति धर्मात्माओं से मिलती है। धर्मात्मा में श्रेष्ठ सम्यग्रत्नत्रयधारी दिगम्बर साधु हैं। उनकी सेवा करना, उनके ऊपर आया हुआ संकट दूर करना साधु समाधि है।

(६) **वैयावृत्तकरण :**—साधु अथवा साधर्मी बन्धु किसी रोग से पीड़ित हो तो उसे दूर करने के लिए औषध देना। उनकी योग्य प्रकार से शुश्रूषा करना, आहार वगैरह में औषध देना आदि वैयावृत्तकरण है।

(१०) **अर्हंतभक्ति :**—अरिहंत भगवान उपदेश देकर स्वयं भी मोक्ष जाते हैं और सब लोगों को मोक्ष का रास्ता बताते हैं। इसलिये उनके गुणों पर अनुराग करना, उनकी भक्तिपूर्वक पूजा करना, ध्यान करना यही भावना अर्हंतभक्ति भावना है।

(११) **आचार्य भक्ति** :—गुरु के बिना कोई भी ज्ञान प्राप्त नहीं होता है। इसलिये सच्चे निष्पक्ष हितोपदेशी गुरु के पास शिक्षा प्राप्त करना, गुरु के सम्यग्गुण का चिंतन करना, उसी अनुसार चलना, आत्मध्यान करना, यही आचार्य भक्ति है।

(१२) **बहुश्रुत भक्ति** :—सम्यग्धर्म का उपदेश थोड़े ज्ञान वाले से लेना अच्छा नहीं है। द्वादशाङ्ग पारंगत उपाध्याय की भक्ति करना, उनके गुणों से प्रेम करना, उनके सान्निध्य में रहकर अध्ययन—मनन करना, यही बहुश्रुत भक्ति है।

(१३) **प्रवचन भक्ति** :—अरिहन्तों के मुख से सुनकर मिथ्यात्व का नाश करना, सब जीवों को हितकारी वस्तु का जैसा स्वरूप है वैसा करना, जिन-वाणी का अध्ययन करना मनन करना वैसा आचरण करना व उसका प्रवचन करना, यही प्रवचन भक्ति है।

(१४) **आवश्यक परिहारिणी भावना** :—मन-वचन-काय की शुभाशुभ क्रियाओं को आश्रव कहते हैं। उस आश्रव की क्रिया रोकना संवर है। संवर को कारण-भूत सामायिक, प्रतिक्रमण आदि षट-आवश्यक क्रिया है। उसका रोज (नित्य) पालन करना इष्ट है।

पद्मासन से या खड़े रहकर मन-वचन-काय के समस्त व्यापार को रोकना व चित्त में एकाग्र होना, आत्मा में लीन होना, यही सामायिक है। अपने किये हुये दोषों का स्मरण करना, उस विषय पर पश्चाताप करना और उन्हें मिथ्या मानकर उनके त्याग करने का प्रयत्न करना प्रतिक्रमण है। आगे यह दोष लगे नहीं ऐसा सोचकर यथाशक्ति नियम लेना प्रत्याख्यान है। पंचपरमेष्ठी व चौबीस तीर्थंकरों के गुणों का कीर्तन करना स्तवन है। मन-वचन-काय को शुद्धि कर चार दिशाओं में चार शिरोनति करना व प्रत्येक दिशा में तीन-तीन आवर्त करना व पूर्व व उत्तर दिशा में अष्टांग नमस्कार करना वन्दना है। समय की मर्यादा करके अमुक समय तक एक आसन से बैठकर अमुक समय तक शरीर की मर्यादा छोड़ना। तब उपसर्ग आदि होने पर समभाव से सहन करना कायोत्सर्ग है। इस प्रकार छः आवश्यकों का चिंतन-मनन करना संवर है और उसी को आवश्यक परिहारिणी कहते हैं।

मार्ग प्रभावना :—काल दोष से अथवा उपदेश के बिना संसारी जीवों में सत्यधर्म का आचरण नहीं हो रहा है। उस समय उसे किसी भी प्रकार से उपदेश

या धर्म प्रभावना करके धर्म में लगाना, शास्त्र-दान देना, संघों को निकालना, उन्हें पात्र वगैरह करवाना, प्रतिष्ठा आदि करवाना मार्ग प्रभावना है ।

प्रवचन वात्सल्य :—संसारी जीवों की परस्पर सेवा करना, उनका उपकार करना, निष्कपटता से प्रेम करना, विशेषतः साधर्मियों से प्रेम करना, यही प्रवचन वात्सल्य है ।

इन भावनाओं को शुद्ध मन से चिंतन व मनन करने से तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध होता है । इसलिये यह व्रत करते हुये उपरोक्त भावनाओं का चिन्तन करना इष्ट है ।

षट्रसी व्रत

दूध दही घृत तैल लूण मीठो सही,
तजै पाख दोय दोय सकल संख्या कही ।
करे असन इकबार व्रती हम व्रत करे,
पख बारह मरयाद षट्रसी व्रत गहै ।।

—वर्धमान पुराण

भावार्थ :—यह व्रत छह महिने में समाप्त होता है । प्रथम महीने में दूध का त्याग करे । दूसरे में दही, तीसरे में घृत, चौथे में तैल, पांचवें में लूण, छठवें में में मीठा, इस प्रकार त्याग करें । **'ओं ह्रीं वृषभादि वीतरान्तेभ्यो नमः'** इस मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे । छह महिने समाप्त होने पर उद्यापन करे ।

सर्वार्थसिद्धि व्रत

कार्त्तिक सुदी अष्टमी से लगातार आठ दिन उपवास किये जाते हैं । तथा कार्त्तिक सुदी सप्तमी का एकाशन कर मार्गशीर्ष वदी प्रतिपदा को पुनः एकाशन करने का विधान है । इस व्रत में लगातार आठ दिन तक उपवास करना चाहिए । व्रत के दिनों में **'श्री सिद्धाय नमः'** मन्त्र का जाप किया जाता है ।

सावधि व्रतों के भेद

सावधीन्युच्यन्ते, तानि द्विविधानि, तिथि सावधिकानि दिन संख्या सावधि-

कानि च । तिथि सावधिकानि कानि ? सुखचिन्तामणिभावना-पञ्चविंशति भावना-द्वात्रिंशत्-सम्यक्त्व पञ्चविंशत्यादीनि णमोकार पञ्चत्रिंशत्कानि ।।

अर्थ :—सावधि व्रतों को कहते हैं, ये दो प्रकार के होते हैं—तिथि की अवधि से किये जाने वाले और दिनों की अवधि से किये जाने वाले । तिथि की अवधि से किये जाने वाले व्रत कौन-कौन हैं ? आचार्य कहते हैं कि सुख चिन्तामणि भावना, पञ्चविंशति भावना द्वात्रिंशत् भावना, सम्यक्त्व पञ्चविंशति—भावना और णमोकार पञ्चत्रिंशत्—भावना ।

विवेचन :—जो किसी भी प्रकार की अवधि को लेकर किये जाते हैं, वे सावधिक व्रत कहलाते हैं यो तो सभी व्रतों में किसी न किसी प्रकार की मर्यादा रहती ही है । परन्तु सावधिक व्रतों में उन्हीं की गणना की गयी है, जिनमें तिथि आदि का विधान बिल्कुल निश्चित है । ऐसे व्रत सुख चिन्तामणि भावना, णमोकार पञ्चत्रिंशत् भावना आदि हैं । इन व्रतों में तिथि की अवधि के अनुसार उपवास किये जाते हैं । समय मर्यादा के अतिक्रमण करने पर इन व्रतों का फल भी कुछ नहीं होता है । इनका फल समय—मर्यादा पर ही आश्रित है । अतः ये व्रत तिथि सावधिक कहलाते हैं । क्रियाकोश आदि आचार के ग्रन्थों में इन व्रतों की विशेष विशेष विधियों का निरूपण किया गया है । इस ग्रन्थ में पूर्वाचार्यों द्वारा प्रतिपादित १०८ व्रतों की विधियों का संक्षेप में निरूपण किया गया है । व्रत विधियों के सम्बन्ध में प्रकरणवश आगे विचार किया जायेगा ।

सुख चिन्तामणि व्रत का स्वरूप

उच्यते, सुख चिन्तामणौ चतुर्दशी चतुर्दशकं, एकादश्येकादशकं, अष्टम्यष्टकं, पञ्चमी पञ्चकं तृतीया त्रिकमेवमुपवासाः एकचत्वारिंशत् । न कृष्णपक्ष शुक्ल-पक्षगतो नियमः, केवलां तिथिं नियम्य भवन्तीति उपवासाः । अस्य व्रतस्य पञ्च-भावनाः भवन्ति, प्रत्येक भावनायामभिषेको भवति ।

अर्थ :—सुख चिन्तामणि नाम के व्रत को कहते हैं—सुख चिन्तामणि व्रत में चतुर्दशियों में चौदह उपवास, एकादशियों के ग्यारह उपवास, अष्टमियों के आठ, पञ्चमियों के पांच उपवास, तृतीयाओं के तीन उपवास इस प्रकार कुल ४१ उपवास करने चाहिए । इस व्रत में कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष का कुछ भी नियम नहीं है,

केवल तिथि का नियम है । उपवास के दिन व्रत की विधेय तिथि का होना आवश्यक है । इस व्रत की पांच भावना होती है, प्रत्येक भावना में एक अभिषेक किया जाता है । अभिप्राय यह है कि चौदह चतुर्दशियों के व्रत के पश्चात् एक भावना, ग्यारह एकादशियों के व्रत के पश्चात् एक भावना, आठ अष्टमियों के व्रत के बाद एक भावना, पांच पञ्चमियों के व्रत के पश्चात् एक भावना एवं तीन तृतीयाओं के व्रत के पश्चात् एक भावना करनी पड़ती है । प्रत्येक भावना के दिन भगवान् का अभिषेक करना पड़ता है ।

विवेचन :—सुख चिन्तामणि व्रत के लिए केवल तिथियों का विधान है । यह व्रत तृतीया, पञ्चमी, अष्टमी, एकादशी और चतुर्दशी को किया जाता है । प्रथम इस व्रत का प्रारम्भ चतुर्दशी से करते हैं, लगातार चौदह चतुर्दशी अर्थात् सात महीने की चतुर्दशियों में चतुर्दशी व्रत पूरा होता है । साथ ही चतुर्दशी व्रत के तीन उपवास हो जाने पर एकादशी व्रत प्रारम्भ होता है । जिस दिन एकादशी व्रत आरम्भ किया जाता है, उस दिन भगवान् का अभिषेक करते हैं तथा व्रत की भावना भाते हैं । तीन चतुर्दशियों के व्रत के उपरान्त एकादशी और चतुर्दशी दोनों व्रत अपनी-अपनी तिथि में साथ साथ किये जाते हैं ।

तीन एकादशी व्रत हो जाने के पश्चात् अष्टमी व्रत प्रारम्भ किया जाता है । जिस दिन अष्टमी व्रत प्रारम्भ करते हैं, उस दिन भगवान् का अभिषेक समारोह-पूर्वक करते हैं । यह सदा स्मरण रखना होगा कि प्रत्येक व्रत के प्रारम्भ में अभिषेक १०८ कलशों से किया जाता है । तीन अष्टमी व्रत हो जाने के उपरान्त पञ्चमी व्रत प्रारम्भ करते हैं, इसके प्रारम्भ करने की विधि पूर्ववत् ही है । चतुर्दशी एकादशी, अष्टमी और पञ्चमी ये व्रत एक साथ चलते हैं । दो पञ्चमी व्रतों के हो जाने पर तृतीया व्रत आरम्भ होता है, इस दिन भी बृहद अभिषेक, पूजन-पाठ आदि धार्मिक कृत्य किये जाते हैं । ये सभी व्रत तीन पक्ष तक अर्थात् तीन तृतीया व्रतों के सम्पूर्ण होने तक साथ-साथ चलते हैं । तृतीया के दिन ही इन व्रतों की समाप्ति होती है । इस दिन बृहद अभिषेक समारोहपूर्वक करना चाहिए । उपवास के दिनों में '**ॐ ह्रीं सर्वदुरितविनाशनाय चतुर्विंशतितीर्थंकराय नमः**' इस मन्त्र का जाप प्रातः मध्यान्ह और सायंकाल करना चाहिए । सुख चिन्तामणि व्रत निश्चित् तिथि में ही सम्पन्न

किया जाता है। यदि व्रत की तिथि आगे पीछे के दिनों में होती है तो व्रत आगे-पीछे किया जाता है। यह व्रत चिन्तामणि रत्न के समान सभी प्रकार के सुखों को देने वाला है। भगवान के दिन चिन्तामणि भगवान् पार्श्वनाथ की पूजा विशेष रूप से की जाती है तथा "ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिकराय पार्श्वनाथाय नमः" इस मन्त्र का जाप किया जाता है।

सांवत्सरिक व्रत

सांवत्सरिकानि नन्दीश्वरपंक्तिचारित्र्यशुद्धिदुःखहरणसुखकरणलक्षणपंक्तिसिंहनिष्क्रीडितभद्रावसन्तत्रिलोकसारश्रुतस्कन्धविमानपंक्तिमुरजमध्यमृदंगमध्यशातकुंभश्रुतज्ञानद्वादशव्रतत्रिपञ्चाशत्क्रियाघातिक्षयादीनि व्रतानि वात्सरिकानि भवन्ति।

अर्थ :—नदीश्वरपंक्ति, चारित्र्यशुद्धि, दुःखहरण, सुखकरण, लक्षणपंक्ति, सिंहनिष्क्रीडित, भद्रावसन्त, त्रिलोकसार, श्रुतस्कन्ध, विमानपंक्ति, मुरजमध्यमृदंग, मध्यशातकुम्भ, श्रुतज्ञान, द्वादशव्रत, त्रिपञ्चाशत् क्रिया एवं घातिक्षय आदि व्रत सांवत्सरिक व्रत कहे जाते हैं।

नन्दीश्वरपंक्तौ षट्पञ्चाशदुपवासाः द्विपञ्चाशत्पारणाः भवन्ति। इदं व्रतं वत्सरमध्ये मासत्रयमष्टादशदिनपर्यन्तंस्वशक्त्या करणीयम्।

अर्थ :—नंदीश्वरपंक्ति व्रत में ५६ उपवास और ५२ पारणाएं होती हैं। वह व्रत एक वर्ष में तीन मास अठारह दिन तक अपनी शक्ति के अनुसार किया जाता है।

विवेचन :—नन्दीश्वरपंक्ति व्रत १०८ दिन में पूर्ण होता है। इसमें पहले चार उपवास और चार पारणाएं की जाती हैं। पश्चात् एक बेला दो दिन का उपवास करने के अनन्तर पारणा करने का नियम है। तदुपरान्त एक उपवास, पश्चात् पारणा इस प्रकार १२ उपवास और १२ पारणाएं करनी पड़ती हैं। अनन्तर एक बेला करने के उपरान्त पारणा की जाती है। इसके पश्चात् उपवास और पारणा इस क्रम से करते हुए १२ उपवास और १२ पारणाएं सम्पन्न की जाती हैं। पुनः एक बेला करने के अनन्तर पारणा की जाती है। तत्पश्चात् उपवास और पारणा के

क्रम से १२ उपवास और पारणा करने का विधान है। पुनः एक बेला और पारणा करने के पश्चात् उपवास और पारणा क्रम से आठ उपवास और आठ पारणाएं करनी चाहिए। इस प्रकार इस व्रत में कुल चार बेला और पैंतालीस उपवास तथा बावन पारणाएं होती हैं। कुल उपवास (४+१२+१२+१२+८+४ बेला=८) =५६ उपवास। पारणाएं ४+१+१२+१+१२+१+१२+१+८=५२ होती हैं। इस व्रत में **'ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपस्थाकृत्रिमजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो नमः।'** मन्त्र का जाप किया जाता है। तीन महीना अठारह दिन तक शीलव्रत का पालन भी करना चाहिए।

संकटहरण व्रत

संकटहरण व्रत तीनों शाख, तेरसि तें दिन तीनों भाख।

—वर्धमान पुराण

भावार्थ :—यह व्रत एक वर्ष में तीन बार आता है, भादों, माघ और चैत्र। शुक्ला त्रयोदशी से प्रारम्भ होकर पूर्णिमा को समाप्त होता है। प्रतिदिन त्रिकाल **'ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा सर्वशान्ति कुरु कुरु स्वाहा'** इस मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे। तीन वर्ष पूरा होने पर उद्यापन करे।

सकलसौभाग्य व्रत कथा

आश्विन शुक्ला चतुर्दशी के दिन प्रातःकाल में इस व्रत को पालन करने वाले को स्नानकर शुद्ध वस्त्र पहनकर, हाथों में पूजा की सामग्री लेकर मन्दिर में जाना चाहिये, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर नमस्कार करे, ईर्यापथ शुद्धि क्रिया करे, अभिषेक पीठ पर नवदेवता यक्षयक्षि स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे।

ॐ ह्रीं असि आउसा मम सर्व सौभाग्यं कुरु कुरु स्वाहा।

इस मन्त्र से गंधोदक लेवे, मंडपप्रसाधन करे, भगवान के आगे शुद्ध भूमि पर पंचरंग रंगोली नवदेवता मंडल निकाले, यन्त्र सामने रखे, मंडल के ऊपर आठ कुंभ कलश रखे, अष्ट द्रव्य का सब सामान सामने रखे, अष्ट मंगल द्रव्य की स्थापना करे, पंचरंगासूत्र से वेष्टित करे, श्वेतसूत्र से कुंभ वेष्टित करके रखे, उसके ऊपर एक पात्र रखे, उस पात्र में नौ पान लगाकर उन पानों के ऊपर, गंध अक्षत, फूलादि

रखकर द्रव्यों को रखे, फिर नवदेवता की प्रतिमा रखकर पूजा करना चाहिये, उसके बाद अष्टद्रव्य से पूजा जयमाला सहित स्तोत्र पढ़ते हुये पूजा करे, इस प्रकार दिन में चार बार व रात्रि में चार बार अभिषेक पूर्वक पूजा करना चाहिये, साथ में जिनवाणी, गुरु की पूजा करना, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की योग्यतानुसार पूजा सम्मान करना चाहिये ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मंत्र से सुगन्धित पुष्प लेकर १०८ बार जाप करे, शास्त्रस्वाध्याय करना, व्रत कथा पढ़ना, एक पात्र (थाली) में नौ पान लगाकर उसके ऊपर अष्टद्रव्य लगावे, ऊपर एक श्रीफल रखे, महाअर्घ्य करते हुये मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाते हुये, मंगल आरती करके पान वाली थाली के अर्घ्य को जिनेन्द्रभगवान के सामने चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, धर्मध्यान से समस्त आरंभादिक का त्याग करते हुये समय बितावे, उस दिन ब्रह्मचर्य से रहे, दूसरे दिन सत्पात्रों को आहारादि दान देकर पारणा करे, इस प्रकार इस व्रत को आठ वर्ष पालन कर अन्त में उद्यापन करे, उस समय नवदेवता विधान करके ११३ कलशों से पंचामृत महाअभिषेक करना चाहिये, उत्तम १ लाख ८, मध्यम १००८, जघन्य १०८ मुनियों को आहारदान देकर जिनवाणी देवे, पिच्छी, कमंडल, माला देवे, उसी प्रकार आर्यिकाओं को आहारदान पूर्वक वस्त्रादि देवे, एक लाख अथवा १००८ अथवा १०८ दंपतियों को भोजन-वस्त्रादि देकर संतुष्ट करे, इस प्रकार इस व्रत का विधान है ।

व्रत की कथा

इस जंबूद्वीप के भरत क्षेत्र में आर्यखण्ड नाम का देश है, उस देश में सौराष्ट्र नाम का प्रदेश है, सौराष्ट्र में द्वारावती नाम की नगरी में बहुत बड़ा पराक्रमी कृष्ण नाम का राजा राज्य करता था, उसकी पट्टराणी का नाम सत्यभामा था, कृष्णराजा और भी अनेक स्त्रियों के साथ राजवैभव का उपभोग कर रहा था। एक दिन उसके राजमहल में नारद ऋषि आये, कृष्ण से भेंट कर रनवास में पहुंच गये, उस समय सत्यभामा दर्पण में मुख देख रही थी, इसलिए नारद ऋषि को पूर्ण सम्मान न दे पाई, इसलिए नारद ऋषि रुष्ट होकर चले गये ।

सत्यभामा के द्वारा सम्मान न मिलने पर नारद को बहुत बुरा लगा, विचारते रहे कि कौनसा ऐसा कार्य करूँ जिससे सत्यभामा को कष्ट उत्पन्न हो, विचारते-विचारते उपाय ढूंढ निकाला, वह यह कि कृष्ण महाराज की किसी विशिष्ट सुन्दर कन्या के साथ शादी करवा देना चाहिए, जिससे सत्यभामा, घमण्डी को सौत का कष्ट सहन करना पड़े, कन्या की खोज करते-करते कुन्दनपुर नगर में भीष्मराजा की कन्या रुकमणी को देखा, रुकमणी बहुत ही सुन्दर थी, इसलिए नारद ने रुकमणी का चित्र बनाकर कृष्ण को दिखाया, चित्र देखते ही कृष्ण मोहित हो गये, नारद ने उपाय बताया कि आप बलदेव के साथ कुन्दनपुर जाइये और रुकमणी का हरण कर द्वारिका लेकर आ जाइये ।

कृष्ण और बलदेव रथारूढ़ होकर कुन्दनपुर के उद्यान में जाकर छिपकर बैठ गये, रुकमणी भी कामदेव की पूजा के बहाने उद्यान में आ गई, कृष्ण ने रुकमणी को उठाकर रथारूढ़ कर दिया और पंचजन्य शंख को बजाया और कहा कि मैं द्वारिका नगरी का राजा कृष्ण रुकमणी को हरकर ले जा रहा हूं जिसमें भी ताकत हो मुझसे छुड़ा लेवे, ऐसा सुनते ही रुकमणी का भाई रूप्यकुमार राजा शिशुपाल सहित युद्ध के लिए युद्धभूमि में आ गये, घोर युद्ध होने लगा, एक तरफ दो और एक तरफ अनेकों, तो भी कृष्ण और बलदेव ने रूप्यकुमार को बन्धन में डालकर, शिशुपाल को मार गिराया, रुकमणी को द्वारका नगरी में लाकर उसके साथ कृष्ण ने विवाह कर लिया और उसको मुख्य पट्टराणी का पद देकर राजमहल मे रख लिया, काम-सुख का अनुभव करते हुये आनन्द से रहने लगे, कालक्रम से रुकमणी गर्भवती हुई और सत्यभामा भी, नौ महीने के पूर्ण होने पर दोनों ने पुत्रों को जन्म दिया, प्रसूति के छठे दिन की रात्रि में रुकमणी से उत्पन्न होने वाले पुत्र को पूर्वभव का शत्रु आकर हरण कर एक भयंकर अटवी में ले गया और एक विशाल शिला के नीचे मारने के लिये रखकर चला गया, कर्मयोग से राजा कालसंवर अपनी पत्नी कनकमाला सहित विजयार्ध पर्वत से निकलकर वनक्रीडा को वहां आया और शिला को हिलती हुई देखकर आश्चर्यचकित हुआ ।

जब शिला को अपने विद्या बल से ऊपर उठाया तो नीचे एक सुन्दर छोटे-से बालक को देखा, तुरन्त ही राजा ने बालक को उठाया और रानी कनकमाला की

गोद में रख दिया, कनकमाला ने कोई सन्तान नहीं होने से उस बालक को घर ले जाकर अपना ही पुत्र है ऐसा समझकर पालन किया, उस पुत्र का नाम प्रद्युम्नकुमार रखा, प्रद्युम्नकुमार धीरे-धीरे रूप यौवन सम्पन्न होने लगा, विद्याधरों की नगरियों में घूम-घूमकर सोलह कलाओं से युक्त हुआ ।

उधर द्वारिका नगरी में पुत्रहरण-शोक कृष्ण को और रुकमणी को बहुत ही दुःख देने लगा, यह बात नारदजी को पता लगते ही विदेह क्षेत्र पहुंचे, श्रीमंदर भगवान से प्रद्युम्नहरण की वार्ता कहकर सुनाई स्वयं के समाधान के लिए, वहां के चक्रवर्ति ने श्रीमंदर भगवान से प्रश्न किया कि भगवान रुकमणी के पुत्र की क्या हालत है, कहां है, मरा या जिन्दा है, मेरी सुनने की इच्छा है । तब भगवान ने कहा कि पुत्र का हरण एक असुर ने किया है असुर बालक को मारने के लिए सिंह अटवी में शिला के नीचे रखकर चला गया, वहां विद्याधरों का राजा कालसंवर वनक्रीड़ा के लिए आया था, शिला को हिलती हुई देखकर शिला को उठाया और बालक को निकाल कर ले गया है, वहां उसका अच्छी तरह पालन-पोषण हो रहा है, सोलह वर्ष पूर्ण होने के बाद कारणवश कालसंवर राजा का और प्रद्युम्न का विरोध पड़ेगा और वह द्वारिका जावेगा ।

यह सब प्रद्युम्न का चरित्र सुनकर नारद को बहुत आनन्द हुआ । वहां से चलकर राजा कालसंवर की नगरी में गया, बालक को देखा, आशीर्वाद दिया और द्वारिका नगरी में आकर रुकमणी और कृष्ण को जैसा श्रीमंदर भगवान ने कहा था वैसा कह सुनाया, कृष्ण को बहुत ही आनन्द हुआ, रुकमणी का भी शोक दूर हुआ। उधर प्रद्युम्नकुमार का रूप सौंदर्य बढ़ता ही गया, एक दिन पूर्वकर्मानुसार रानी कनकमाला प्रद्युम्नकुमार को रूपवान देखकर उसके ऊपर आसक्त हो गई और प्रद्युम्न कुमार को अपने पास बुलवाकर कामवासना की शांति करने की याचना करने लगी, यह सब सुनकर प्रद्युम्न को बहुत ही आश्चर्य हुआ और जिन मन्दिर में जाकर अवधिज्ञानी मुनि से पूछा, सब अपने भवों का वृतांत जाना, शीघ्र जाकर कनकमाला रानी से दो विद्या और प्राप्त कर लिया और वहां से मां कहकर चला गया ।

कनकमाला ने देखा कि इसने मुझे ठग लिया है तब तिरिया-चरित्र दिखाते हुए राजा को भड़काया, राजा ने अपने पांच सौ पुत्रों को और सेना को प्रद्युम्न

के साथ लड़ाई के लिए भेजा, प्रद्युम्न ने सबको हराकर राजा को भी युद्ध में जिंदा पकड़ लिया। नारदजी वहां पहुच गये, कालसंवर राजा को छुड़ाकर प्रद्युम्नकुमार को द्वारिका नगरी में ले आये। पुत्र-आगमन को सुनकर कृष्ण और रुकमणी बहुत ही खुश हुए, द्वारिका नगरी में उत्सव मनाया गया, सब ही सुखी हुए। विशेष जानकारी के लिए प्रद्युम्न चरित्र पढ़ें। इस प्रकार राजा कृष्ण और रानी रुकमणी सुख से द्वारिका नगरी में सुख भोगने लगे।

एक दिन गिरनार पर्वत पर नेमिनाथ तीर्थंकर का समवशरण आया, कृष्ण अपने समस्त प्रजाजन सहित सर्व परिवार को लेकर समवशरण में पहुंचा, भगवान को साष्टांग नमस्कार करके मनुष्यों के कोठे में बैठ गया, कुछ समय उपदेश सुनकर रुकमणी हाथ जोड़ विनयपूर्वक गणधर भगवान को कहने लगी कि हे भगवान ! मैंने कौनसा ऐसा पुण्य किया था जिससे कि मुझे ऐसा अखण्ड सौभाग्य मिला है ?

तब गणधर भगवान कहने लगे कि इस भरत क्षेत्र के मगध देश में लक्ष्मी ग्राम नाम का एक गांव है, उस गांव में सोमसेना नाम का ब्राह्मण लक्ष्मीमती स्त्री के साथ रहता था।

एक दिन अपने रूप-सौन्दर्य के अभिमान में चूर होकर दर्पण में मुख देख रही थी, वहां समाधिगुप्त नाम के महामुनि चर्या के निमित्त उसके घर के सामने से जा रहे थे, उनको देख कर लक्ष्मीमति ने मुनिराज की बहुत ही निन्दा की, उसके फल से लक्ष्मीमति को भयंकर भगंदर रोग उत्पन्न हो गया, और मरकर भैंस, कुत्ता, सुकर, गधा हुई, वहां से छठे नरक में उत्पन्न होकर महान दुःख भोगने लगी, नरक से निकलकर नर्मदा नदी के तट पर एक गांव में नीचकुलोत्पन्न हुई।

वहां उसके मां बाप मर गये, अन्य लोगों ने उसका पालन पोषण किया, वह भीख मांगकर अपना पेट भरने लगी, एक दिन नर्मदा नदी के तीर पर महामुनिराज रात्रियोग धारण कर बैठे थे, प्रातःकाल में वह लड़की नदी पर गई, और मुनिराज को देखकर संतुष्ट हुई, नमस्कार किया, मुनिराज के मुख से धर्मोपदेश सुनकर व्रत को ग्रहण किया, अन्त में मरकर कोंकण देश के शोभा नगर में नन्दन नाम का एक श्रेष्ठी रहता था, उसकी नन्दावती नाम की सेठानी थी, उस सेठानी के गर्भ से लक्ष्मीमति नाम की कन्या उत्पन्न हुई।

एक समय सेठ के घर में श्री नन्दस्वामी नाम के महामुनि आहार के लिए आये, सेठ ने नवधाभक्तिपूर्वक मुनिराज को आहारदान दिया, फिर मुनिराज के आहारदान होने के बाद में एक आसन पर मुनिराज को विराजमान करके लक्ष्मीमती अपने भवान्तर को पूछने लगी, मुनिराज ने उसके सात भवों की कथा सुनाई, तब लक्ष्मीमति ने कहा कि स्वामी! आप मुझे मेरा सौभाग्य अखण्ड रहे, इसके लिए कोई उपाय बताओ तब मुनिराज कहने लगे कि हे बेटी! तुम सकल सौभाग्य व्रत का पालन करो, और व्रत पूर्ण होने के बाद उद्यापन करो। इस व्रत को उसने विधिपूर्वक पालन किया, अन्त में मरकर राजा भीष्म की रुकमणी नाम की कन्या होकर उत्पन्न हुई, इसलिए तुम राजा श्रीकृष्ण की प्रिय पत्नी हुई हो। पूर्व जन्म में तुमने यथाशक्ति सकल सौभाग्य व्रत को पाला है, इस कारण तुम को सकल सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

ऐसा सुनकर रुकमणी ने पुनः सकल सौभाग्य व्रत गणधर स्वामी से स्वीकार किया, नेमिश्वर को नमस्कार करके द्वारिका में वापस आये, कालानुसार रुकमणी ने सर्व यादवों के साथ व्रत का यथाविधि पालन किया, यथाविधि उद्यापन किया, आर्यिका दीक्षा लेकर तपश्चरण किया, अन्त में समाधिमरण करके स्त्रीलिंग का छेद करके सोलहवें स्वर्ग में देव उत्पन्न हुई।

हे भव्य जीवो! तुम भी इस व्रत का पालन करो, इस व्रत के कारण तुम को भी स्वर्ग सुख की प्राप्ति होकर मोक्ष गति मिलेगी।

प्रकारान्तर से सुगन्धदशमी व्रत की विधि

सुगन्धदशमीमाह—

भद्रे भाद्रपदे मासे शुक्लेऽस्मिन्पञ्चमीदिने।
उपोष्यते यथाशक्तिः क्रियते कुसुमाञ्जलिः॥
तथा षष्ठयां च सप्तम्यां वाष्टम्यां नवमीदिने।
जिनानामग्रतो भूयो दशम्यां जिनवेश्मनि॥
उपवासं समादाय विधिरेष विधीयते।
चतुर्विंशतितीर्थानां स्नपनं पूजनं ततः॥
सुमधुररसैः पूजां धूपं दशविधं तथा।
पूर्णेन्दुदशमे वर्षे तदुद्यापनमाचरेत्॥

अर्थ :—सुगन्ध दशमी व्रत की विधि कहते हैं—श्रेष्ठ भाद्रपद महीने के शुक्ल पक्ष की पञ्चमी से यथाशक्ति पुष्पाञ्जलि व्रत करते हुए षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी और नवमी का उपवास या एकान्तर उपवास करने चाहिए। दशमी को जिन-मन्दिर में जाकर उपवास ग्रहण किया जाता है तथा चौबीस तीर्थंकरों की पूजा, अभिषेक क्रिया की जाती है। दशाङ्गी धूप भगवान् के सामने खेई जाती है। दस वर्ष तक इस व्रत का पालन किया जाता है, इसके पश्चात् उद्यापन क्रिया सम्पन्न की जाती है।

सुगन्ध दशमी व्रत

भाद्र शुक्ल दशमी के दिन व्रत ग्रहण जिन्होंने किया है, वो लोग स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहनकर अष्ट द्रव्य का व अभिषेक का सब सामान लेकर जिनमन्दिर में जावे। ईर्यापथ शुद्धि करके, भगवान का तीन प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर यक्षयक्षणी सहित शीतलनाथ जिनेन्द्र का पंचामृताभिषेक करे, और आदिनाथ तीर्थंकर से लेकर शीतलनाथ जिनेन्द्र तक की अष्ट द्रव्य से पूजा करे, पंचकल्याणक के पृथक २ अर्घ चढ़ावे, जयमाला पढ़े, स्तोत्र पढ़े, यह विधि दिन में चार बार करे, जिनवाणी की पूजा करे, गुरुओं की पूजा करे, यक्षयक्षिणी क्षेत्रपाल सब का यथायोग्य पूजा सन्मान करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथाय ईश्वर यक्ष मानवी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से पुष्प लेकर धूप खेते हुये जाप्य करे, सुगन्धित चम्पा के पुष्पों से अथवा केवड़ा के पुष्पों से जाप्य करे अर्चना करे (क्योंकि सुगन्ध दशमी व्रत है) शीतलनाथ तीर्थंकर का चरित्र पढ़े, व्रत कथा का वाचन करे, जिन सहस्रनाम स्तोत्र को पढ़े, णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, एक थाली में १० पान लगाकर गंध, अक्षत, पुष्प, फल आदि रखकर महाअर्घ्य तैयार करे, महाअर्घ्य को हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा देकर मंगल आरती उतारे, भगवान के सामने महाअर्घ्य चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, धर्मध्यान से समय बितावे, शास्त्र स्वाध्याय करे, दूसरे दिन प्रातः काल में जिनेश्वर का अभिषेक करके सुवर्ण का केतकी (केवड़ा) पुष्प बनाकर पूर्वोक्त महाअर्घ्य चढ़ावे, घर जाकर दश मुनियों को आहारदान देवे, फिर स्वयं पारणा करे।

इस प्रकार इस व्रत को दश वर्ष तक करे, अन्त में व्रत का उद्यापन करे, शीतलनाथ भगवान की यक्षयक्षि सहित नवीन प्रतिमा बनवाकर पंच कल्याण प्रतिष्ठा करावे, शीतलनाथ चरित्र को छपवाकर शास्त्रदान करे, सोना चाँदी, पुष्प नारियल, सुगन्धित चूर्ण, पान, सुपारी, गंधाक्षत ये सब टोकरी में डालकर देव, शास्त्र, गुरु के सामने चढ़ावे, नमस्कार करे, दश मुनि संघ को आहारादि देकर शास्त्रादि आवश्यक वस्तु प्रदान करे, आर्यिकाओं को वस्त्रादि देवे, गृहस्थाचार्य (पुरोहित) को भी आहारदान देकर वस्त्रादिक देकर आदर सत्कार करे, दीन-हीन, याचक लोगों को यथाशक्ति दान देवे, यह व्रत की पूर्ण विधि है।

यह विधि दक्षिण परम्परानुसार है।

श्री वीतरागाय नम:

सुगन्धदशमी व्रत कथा

चौपाई

पञ्च परमगुरु वन्दन करों, ताकरि निज भवबन्धन हरों।
सार सुगन्धदशै व्रत कथा, भाषत हूं भाषी मुनि यथा ।।
गुरु अरु शारद के परसादि, वरणों भेद सार पूजादि।
जे भवि व्रत यह करि हैं सही, तिन स्वर्गादिक पदवी लही ।।
सन्मति जिन गौतम मुनिराय, तिनके पद नमि श्रेणिकराय।
करत भयो इसतुति सुखकार, विनकारण जगबन्धु करार ।।
भव्यकमल-प्रतिबोधन-सूर्य, मुक्ति-पन्थ निर्वाहन-धूर्य ।
श्रुतवारिधि कों पोतसमान, इन्द्रादिक या सेवक जान ।।
व्रत सुगन्धदशमी इह सार, कीन्हों किनकिन विधि विस्तार।
अरु याको फल कैसे होय, मोकों उपदेशो मुनि सोय ।।

गौतममुनि का उत्तर

मगधदेश के तुम भूपार, सुन व्रत की सुकथा सुखकार।
परम प्रश्न यह तुमने कहा, मैं भाषों ज्यों जिनवर कहा ।।

सुनत मात्र व्रत को विस्तार, पाप अनन्त हरे तत्कार ।
जे कर्ता क्रमतें शिव जांय, और कहा कहिये अधिकाय ।।

दोहा

जम्बूद्वीप विषें इहां, भरतक्षेत्र परधान ।
तहां देश काशी लसे, पुर वाराणसि मान ।।

चौपाई

पद्मनाम जाको भूपार, कीनों वसुमद को परिहार ।
सप्तव्यसन तज गुण उपजाय, ऐसे राज करे सुखदाय ।।
श्रीयमती जाके वर नार, निजपतिकों अतिही सुखकार ।
एक समै वनक्रीड़ा हेत, जावत थी निजभूति समेत ।।
पुर-समीप में ही जब गयो, निजमन मांहि आनन्द लयो ।
तब ही एक मुनिश्वर सार, करि मासोपवास भवतार ।।
अशनकाज जाते मगि जोय, रानी सों भाखे नृप सोय ।
तुम जाओ देओ आहार, कीजो मुनि की भक्ति अपार ।।
यों सुन रानी मन यो धरयो, भोगों में मुनि अन्तर करयो ।
दुखकारी पापी मुनि आय, मेरो सुख इन दियो गमाय ।।
मनही में दुःखी अति घनो, आज्ञा मान चली पति तनो ।
जाय कियो भोजन तत्काल, आगे और सुनो भूपाल ।।
भूपत के ही घर मुनि गयो, रानी अशन दुखद निरमयो ।
कड़वी तुम्बी को जु अहार, दियो मुनीश्वर कों दुखकार ।।

दोहा

पुनि गुरु से यों शिष कहे, अब किमि इस अघ जाय ।
मुनि बोले जिनधर्म को, धारे पाप पलाय ।।

चौपाई

गुरुशिषवचन सुता यों सुनो, उपशमभाव सुखाकर गुनो ।
पञ्च अभख फल त्यागे जबै, अशन मिले लागो शुभतबै ।।

शुद्धभाव सों छोरे प्रान, नगर उज्जैनी श्रेणिक जान।
तहां दरिद्री द्विज इक रहे, पाप उदै करि बहुदुख लहे ।।
ता द्विज के यह पुत्री भई, पिता मात जमके बसि थई ।
तब यह दुःखवती अति होय, पाप समान न वैरी कोय ।।
कष्ट-कष्ट कर वृद्ध जु भई, एक समै सो वन में गई ।
तहां सुदर्शन थे मुनिराय, अजितसेन राजा तिहिं जाय ।।
धर्म सुनो भूपति सुखकार, यह पुनि गई तहां तिहिवार ।
अधिकलोक कन्या को जोय, पाप थकी ऐसो पद होय ।।

दोहा

जास समै यह कन्यका, घास बोझ सिर धार ।
खड़ी मुनी वच सुनत थी, पुनि निजभार उतार ।।

चौपाई

मुनि मुखतें सुनि कन्याभाय, पूरबभव सुमरण जब थाय ।
याद करी पिछली वेदना, मूर्छा खाय परी दुख घना ।।
तब राजा उपचार कराय, चेत करी पुनि पूंछि बुलाय ।
पुत्री तू ऐसे क्यों भई, सुन कन्या तब यों वरनई ।।
पूरबभव वृतान्त बताय, मैं जु दुखायो थो मुनिराय ।
कड़वो तुम्बी को जु आहार, दीयो मुनि को अति दुखकार ।।
सो अघ अबलों भी मुझ दहे, यों सुनि नृप मुनिवर सों कहे ।
यह किस विध सुख पावे अबै, जब मुनिराज बखानो तवै ।।
जब सुगन्धदशमी व्रत धरे, तब कन्या अघसञ्चय हरे ।
कैसी विधि याको मुनिराय, तब ऋषि भादवमास बताय ।।
सुदि पञ्चमि दिन सों आचरे, यथाशक्ति नवमी लौं करे ।
दशमीदिन कीजे उपवास, ताकरि होय अधिक अघनास ।।

शुक्लपक्ष दशमी दिन सार, दश पूजा करि वसु परकार ।
दशस्तोत्र पढ़िये मन लाय, दशमुख का घटसार बनाय ।।
तामें पावक उत्तम धरे, धूप दशाङ्ग खेय अघ हरे ।
सप्तधान को स्वस्तिक सार, करि तापरि दश दीपक धार ।।
ऐसे पूज करे मन लाय, सुखकारी जिनराज बताय ।
तातें इस विधि पूजा करे, सो भविजीव भवोदधि तरे ।।
इक गोवर्धनपुर नगर सुजान, वृषभदत्त वाणिज तिह थान ।
ताके एक सुता शुभ भई, बन्धुमती तसु संज्ञा दई ।।
तासों कीनों सेठ विवाह, बाजा बाजे अधिक उछाह ।
परणि सु घर लायो सुखकार, आगे और सुनो विस्तार ।।

दोहा

भोग शर्म करती हुई, कन्या इक लखि भाव ।
नाम धरयो तब मोदतें, तेजोमती सुभाय ।।

छन्द

प्यारी न मात को लागे, नहिं तिलकमती सों रागे ।
नानाविधि कर दुख द्यावे, ताके मन सों नहिं भावे ।।
तब तात सुता सो निहारो, कन्या यह दुखित विचारी ।
तब दासी आदिक नारी, तिनसों इमि सेठ उचारी ।।
याकी सेवा सुखकारी, कीजो तुम भक्ति विचारी ।
ऐसे सुनते सुख पावे, तब नीकी भांति खिलावे ।।

चौपाई

एक समय कनकप्रभ राय, दीपान्तर जिनदत्त पठाय ।
नारी सों सब भाखे जाय, हमखों राजा दीपखिनाय ।।
तातें एक सुनो तुम बात, इह दो परणाज्यो हरषात ।
अष्टगुणों युत जो वर होय, इसको वरि दीजो अवलोय ।।

इमि कहि द्विपिचल्यो तत्काल, और सुनो श्रेणिक भूपाल ।
आवे करन सगाई कोय, तिलकमती जांचे तब सोय ।।
बन्धुमती भाखे जब आय, यामें अवगुण हैं अधिकाय ।
मम पुत्री गुणवती घनी, रूपादिक शुभलक्षण भनो ।।
तातें मो कन्या शुभ जान, वर-नक्षत्र सुव्याहो आन ।
इनकी माने नाहीं बात, तिलकमती जांचे शुभ गात ।।
कही फेरि यों ही तब सही, मन में कपटाई धर लई ।
ब्याह समै कन्या मम सार, कर दूंगो ब्याहित जिहिवार ।।
करी सगाई आनन्द होय, ब्याह समै आये तब सोय ।
बन्धुमती की फेरों बार, तिलकमती बहुभांति सिंगार ।।
घड़ी दोय रजनी जब गई, तिलकमती को निजसंग लई ।
जब मशान भूमी मधि जाय, पुत्री कूं तिहि थान बिठाय ।।
तहां दीप जोये शुभ चार, पूरे तेल उद्योत अपार ।
चौगिरधा दीपक चउ धरे, मध्य तिलकमति थिरता करे ।।
तिलकमती सों भाषी जहां, तो मरता आवैगो इहां ।
ताहि विवाह आवजे बाल, यों कहकर चाली तत्काल ।।

दोहा

घर एक मैहि समीप थो, सो दीन्हों दुख पाय ।
नितप्रति रजनी के विषे, आवे तहां सुराय ।।
दीप निमित नहिं तेल दे, तबहि अंधेरे मांहि ।
राजा बैठे ही रहे, सुख पावे अधिकांहि ।।

चौपाई

कछुइक दिन ऐसे ही गयो, बन्धुमती तब यों वच कह्यो ।
अपने गुवाल्यातेंकहि जाय, दोय बुहारी तो दे लाय ।।
तिलकमती आरे करि लई, रात भये जिनपति पैं गई ।
करि क्रीडा सुखबचनउचार, नाथ सुनो अरदास हमार ।।

जुगल बुहारो मेरी मात, आंची है तुम नैं हरषात ।
यातैं ल्या दीज्यो तुम देव, स्वीकृत कीन्हों नृपस्वयमेव ।।
सभा जाय बैठयो तब राय, स्वर्णकार तब सार बुलाय ।
तिनते कही बुहारी दोय, ला द्यो जो अति उत्तम होय ।।
यों सुनि तबही कञ्चनकार, लागि गये घड़ने अधिकार ।
स्वर्णसींक सबके मन मोहि, रत्नजड़ितमूठयो अति सोहि ।।
षोडशभूषण और मंगाय, डाबा में धरि चाल्यो राय ।
एक वेश उत्तम करि लयो, रजनी समय नारि ढिग गयो।।
रत्नजड़ित की कोर जुसार, शोभे सारी के अधिकार ।
भूषण वेश दये नृप जाय, दोय हारी ललित सुहाय ।।
नारि चरण नृपके तब धोय, सिर केशनि से पूजि बहोय ।
क्रीड़ा करि बहुते सुख पाय, प्रात भये नृपती घर जाय ।।
तिलकमति अति हर्षित होय, जाय दई सु बुहारी दोय ।
और दिखाये भूषण वेश, माता देख्यो सार जु वेश ।।
मन में दुखित बचन यों दयो, तेरो भरता तस्कर भयो ।
राजा के भूषन अरू वेश, लाय दये तोकों जो अशेष ।।
हम सबको दुखद्यासी सोय, यों कहि खोसि लये दुखि होय ।
इह दलगीर भई अधिकाय, रात विषें पतिसों कहि जाय ।।
भूषण वेश खोसि लये माय, निज-समीप राखे दुखपाय ।
राय तबै सम्बोधी जोय, मनचिन्ता राखो मति कोय ।।
और घणे ही देहूं लाय, यों सुनि तिलकमती सुखपाय ।
दीप थकी जिनदत्त सुआय, बन्धुमती पतिसों बतलाय ।।
तिलकमती के अवगुण घना, कहा कहूं पति अब वा तना ।
ब्याह समै उठिगी किमिथान, परण्यो चोर तहां सुखठान ।।
सो तस्कर भूपति के जाय, भूषण वेश चोर कर लाय ।
याकों वह दीन्हें तब आय, खोसि रखे मो ढिग में लाय ।।

सेठ देखि कम्पित मन मांय, तब ही राज सुथानक जाय।
धरे जाय राजा के पांय, सब वृतान्त कहो सुनि राय।
कह्यो वेशभूषा तो भाय, परघातक चोर आनियो लाय।
इह विधि सेठ सुना नृप बात, चाल्यो निजघर कम्पित गात।
साह सुता सों यों बच कह्यो, तैं हमकों यह क्या दुख दयो।
पतिको जाने है या नांहि, कहो दोष बिनु जानों कांहि।।
कबहूं दीपक हेतु सनेह, मोकों मम माता नहि देह।
सेठ कहे किस ही विधि जान, तिलकमतीजबबहुरि बखान।।
इक विधि करि में जानूं तात, सो यह सुनो हमारी बात।
जब पति आते मो ढिग जहां, तब उनिपद धोवत थी तहां।।
धोवत चरण पिछानूं सही, और इलाज यहां अब नहीं।
सेठ कहो भूपति सों जाय कन्या, तो इस भांति बताय।।
ऐसे सुनि तब बोलो भूप, इह विधि तो तुम जानिअनूप।
तस्कर ठीक करन के काज, तुम घर आवेंगे हम आज।।
सेठ तबै अति प्रमुदित भयो, आ तैयारी करतो भयो।
तब राजा परिवार मिलाय, तब ही सेठ तणें घर जाय।।
सकल प्रजा जु इकठ्ठी भई, तिलकमती बुलवाय सु लई।
नेत्र मूंद पद धोवत जाय, यह भी नाहीं स्वामी आय।।
जब नृप के चरणाम्बुज धोय, कहती भई यही पति होय।
राजा हंसि यों कहतो भयो, याने मैं तस्कर कर दयो।।
तिलकमती पुनि ऐसी कही, नृप हो या कोई होवे सही।
लोक हंसन लागे तिहि वार, भूप मना कीन्हें ततकार।।
वृथा हास्य लोगो मति करो, मैं ही पति निश्चित मन धरों।
लोग कहें कैसे इह बनी, आदि अन्त लों भूपति भनी।।
तब ही सकल लोक यो कहों, कन्या धन्य भूप पति लहो।
पूरब इन व्रत कीन्हों सार, ताको फल यह फल्यो अवार।।

भोजन अन्तर कर उत्साह सेठ कियो सब देखत व्याह ।
ताकों पटरानी नृप करी, सेठ स्वमन में साता धरो ।।
एक समैं पतियुत सों नार, गई सु जिनवर गेह मंझार ।
वीतराग दर्शन कर सार, पुण्य उपायो सुख दातार ।।
आधी रात गये तब राय, महल थकेलखिवितरक लाय ।
देवसुता वा यक्षिन कोय, ना जाने वा किन्नरि होय ।।
कै यह नारि यहां को आय, ऐसी विधि चितवनकरि राय ।
हस्त, खड्ग ले चालो तहां, तिलकमती तिष्ठी थी जहां ।।

दोहा

जाय पूछियो राय तब, तू को है इहि थान ।
तिलकमती सुनके तबै, ऐसी भांति बखान ।।
भूपति मेरो तात को, रतन सु दीप पठाय ।
मोकूं मम माता इहां, थापि गई अब आय ।।

चौपाई

भाखि गई इमि थानक कोय, आवेगो तो भरता सोय ।
यातैं तुम आये इस ठौर, मैं नारी तुम नाथ गहौर ।।
सुन राजा तब व्याहसु करयो, रैने रह्यो तंठि सुख धरयो ।
राजा प्रात समै अब लोय, निजमन्दिर कों आवत होय ।।
तिलकमती ऐसे तब कही, अब तो तुम मेरे पति सही ।
सर्प यथा डसि जावो कहां, सुनयों भाषी भूपति तहां ।।
निशिकोनिशि आहों तुम पास, तू तो महामोद की रास ।
तिलकमती पूछे शिर नाय, कहा नाम तुम मोहि बताय ।।
राजा गोप कह्यो निजनाम, यो सुनि तिय पायो सुखधाम ।
कहि यों अपने थानक गयो, तबसे ही परभात सु भयो ।।
बन्धुमती कहि कपट विचार, तिलकमती है अति दुखकार ।
व्याह समैं उठिगी किमिथान, जन-जनसो पूछे दुख मान ।।

दोहा

देखो ऐसी पापिनी, गई कहां दुखदाय ।
ढूंढत ढूंढत कन्यका, लखी मसाणा जाय ।।
जाय कही दुखदा सुता, इहि थानक किमि आय ।
भूत प्रेत लागो कहा, ऐसी विधि जतलाय ।।

चौपाई

तिलकमती भाषै उमगाय, तैं भार्या सो कीन्हों माय ।।
बन्धुमती कहि तुरत पुकार, देखो तो इह असत उचार ।
जानो कहा कबैं इह आय, ब्याह समै दुख दिया अघाय ।।
तेजोमती विवाहित करी, सभासमय में नाही टरी ।
खिजि भाषी उठ चलघर अबै, ले आई अपने घर जबै ।।
तिलकमती सों पूछे मात, तैं कैसों वर पायो रात ।
सुता कह्यो वरियो हम गोप, रैंन परणिपरभातअलोप ।।
बन्धुमती भाषी तत्काल, री ! तैं वर पायो गोपाल ।।

दोहा

जिनकी पूज समानफल, हुओ न होसी कोय ।
स्वर्गादिक पद को करे, पुनि देहै शिवलोय ।।

चौपाई

दश सम्वत्सर लों जो करे, ताही के जिनगुण अवतरे ।
करे बहुरि उद्यापन राय, सुनो विधी तुम मनवचकाय ।।
महाशान्ति अभिषेक करेय, जिनवर आगे पुहुप धरेय ।
जो उपकरन धरे जिनथान, ताको भेद सुनों चित आन ।।
दश-रङ्गी चन्देवो लाय, सो जिनबिंब उपरि तनवाय ।
और पताका दशरङ्ग सार, बाजे घन्टानाद अपार ।।
मुक्तमाल की शोभा करे, चांवर युगल अनूपम धरे ।
और सुनो आगे मन लाय, प्रभु की भक्ति किये सुखथाय ।।

धूप दहन दश आरति आन, सिंहपीठ आदिक पहचान ।
इत्यादिक उपकरण मंगाय, भक्ति भावजुत भव्य चढ़ाय ।।
दान अहार आदि चउ देय, कुण्डी श्रुत भी भेंट करेय ।
यथायोग्य मुनि को दे दान, इत्यादिक उद्यापन जान ।।
जो ना इतनी शक्ति लगार, थोरे ही कीजे हितकार ।
जो न सर्वथा घर में होय, तो दूनों व्रत कीजे सोय ।।
पुनि व्रत जो करिये मन लाय, जो सुरमोक्ष सुथानकदाय ।।

दोहा

शाकपिण्ड के दान तें, रतनवृष्टि ह्वै राय ।
यहां द्रव्य लागो कहां, भावनिको अधिकाय ।।
तातें भक्ति उपाय के, स्वातमहित मन लाय ।
व्रत कीजे जिनवर कहो, यों सुनि करि तव राय ।।

चौपाई

द्विजकन्या को भूप बुलाय, व्रत सुगन्धदशमी बतलाय ।
राय सहाय थकी व्रत करयो, पूरब पापबन्ध परिहरयो ।।
उद्यापन कर मन वच काय, और सुनो आगे मन लाय ।
एक कनकपुर जानों सार, नाम कनकप्रभ तसु भूपार ।।
नारि कनकमाला अभिराम, राजसेठ जिनदत्त सुनाम ।
जाके जिनदत्ता वर नार, तिहि ताके लीनों अवतार ।।
तिलकमती नाना गुण भरी, रूप सुगन्ध महासुन्दरी ।
कोई इक पाप उदयपुनि आय, प्राण तजे वाकी तब माय ।।
जननी बिन दुःख पावे बाल, और सुनो श्रेणिक भूपाल ।
जिनदत्त यौवनमय था जबै, अपनो ब्याह विचारो तबै ।।
भोजन करि चाले मुनिराय, मारग मांहि गहल अति आय ।
परयो भूमि पर तब मुनिराज, कीयो श्रावक देखि इलाज ।।
तैठे एक जिनालय सार, तहाँ ले गये किया उपचार ।
फेरि सकल ऐसे वच कह्यो, रानी खोटो भोजन दयो ।।

तातें मुनि महा दुख पाय, होय अचेत गये अधिकाय ।
धिकधिक है ताको अतिघनो, दुष्ट स्वभाव अधिक जातनो ।।
तब ही वन सों आयो राय, सुनी बात राजा दुख पाय ।
रानी सों खोटे वच कहे, वस्त्राभरण खोसि कर लये ।।
काढ़ि दई तब बाहर जबै, दुखी भई अति चित में तबै ।
कष्टातुर व्है आरत कियो, प्राण छोर महिषीतन लियो ।।
ताकी माय भैंस मर गई, तब अति यैं दुर्बलता लई ।
एक समै कर्दम मधि जाय, मग्न भई नाना दुख पाय ।।
तहां थकी देखो मुनि कोय, सींग हिलाये क्रोधित होय ।
तब ही गर्त विषें गड़ि गई, प्राण छोरि के गदही भई ।।
भई पांगुरी पिछले पांय, तब ही एक मुनिश्वर आय ।
पूरब वैर सु मन में ठयो, तहां कलुष परिणाम जु भयो ।।

दोहा

किये क्रोध मन में घनो, दई दुलातें जाय ।
प्राण छोरि निज पापतें, लई सूकरी काय ।।
स्वानादिक के दुःखतै, भूखो प्यासी होय ।
मरि चाण्डाली के सुता, उपजो निन्दित सोय ।।

चौपाई

गर्भ आवते विनस्यो तात, उपजत ही तन त्यागो मात ।
पालें सुजन मरे पुनि सोय, अरु आवत तन में बदबोय ।।
इक योजन लों आवे बास, ताहि थकी आवे नहि स्वास ।
पञ्च अभख फल खावो करे, ऐसी विधि वन में सो फिरे ।।
तहां एक मुनि शिषजुत देख, रागद्वेष तजि शुद्धि विशेष ।
ता वन में आये गुण भरे, लघुमुनिगुरू सों प्रश्न जुकरे ।।
वास निन्द्य आवे अधिकाय, स्वामी कारण मोहि बताय ।
मुनि भाषें सुनि मनवचकाय, जो प्राणी ऋषिकों दुखदाय ।।
ते नाना दुख पावें सही, मुनिनिन्दासम अघकोउ नहीं ।

कन्या इमि पूरब भव मांहि, मुनी दुखायो थो अधिकाहिं ।।
ता करि तियभव में दुखपाय, भई बधिक की कन्या श्राय ।
सो यह देख फिरत है बाल, सुनि संशय भागो तत्काल ।।
याको फल यह जानों सही, ऐसे मुनि श्रुतसागर कही ।
तब ही आयों एक विमान, जिन श्रुत गूरू बन्दे तजिमान ।
मुनिकों नमस्कार कर सार, फेर तहां नृप देव निहार ।।
तिलकमती के पावों परयों, अरू ऐसे सुवचन उच्चरयों ।।

दोहा

स्वामिन के परसाद तैं, में लाहो फलसार ।
व्रत सुगन्धदशमी कियो, पूरब विद्याधार ।।
यों कहि वस्त्राभरण लें, पूजा को मन लाय ।
अरू सुर पुनि ऐसे कही, तुम मेरी वर माय ।।
ता व्रत के परभावतैं, देव भयो में जाय ।
तुम मेरी सार्धमिणी, पदयुत देखिन आय ।।

चौपाई

थुतिकर सुर निजथानक गयो, लोकों इहि निश्चयलखिलयो ।
धन्य सुगन्धदशें व्रत सार, जाकों फलसु अनन्त अपार ।
तब सबही जन यह व्रत धरयो, अपनो कर्म महाफल लहयो ।
तिलकमतो कञ्चनप्रभ राय, मुनि को नमि अपने घर जाय ।।
देती पात्रनि कों बहु दान, करती जिनका पूज महान ।
पाले दर्शन शील सुभाय, अरू उपवास करे मन लाय ।।
पतिव्रत गुण की पालन हार, पुनि सुगन्धदशमी व्रत धार ।
अन्त समाधि थके तजि प्रान, जाय लयो ईशान सुथान ।
सागर दोय जहां थिति लई, शुभतैं भयो सुरोत्तम सही ।
नारिलिङ्ग निद्य छेदयो, चय शिववासी जिनवर्णयो ।।
जहां देव सेवा बहु करें, निरमलचमर तहां शिरढरें ।
और विभवअधिकों जिहिजान, पूरव पुण्य भये तित आन ।।

यों लखि सुगन्धदशेंव्रतसार, कीजे हो ! भवि शर्मविचार ।
भवि नरनारी व्रत जो करें, ते संसार-समुद्र से तिरें ।।

दोहा

श्रुतसागर ब्रह्मचारियों, ले पूरब अनुसार ।
भाषा सार बनाय के, सुखित खशाल अपार ।।

सिंहनिष्क्रीडित व्रत की व्यवस्था

सिंहनिष्क्रीडितं त्रयोदशमासैरष्टाविंशतिदिनैः परिपूर्णं भवति । अवशेषो विधिः हरिवंशपुराणाद् बृहत्सार चतुर्विंशतिकाग्रन्थादुद्यापनसाराच्च सम्यग् ज्ञातव्यः, अत्र तु विस्तार भयान्न व्याख्यातः । एतेषु हानिवृद्धिक्रमो न व्यावर्तितः, यतो हिएतानि व्रतानि महामुनीनां संचरिताण्येव । श्रावकस्यापि करणीयत्वादुपदिष्टानि । अतः श्रावकैर्देशकालाभिज्ञैश्च द्रव्यक्षेत्रकालाभावान् समाश्रित्य सम्यग्यत्नाचारतया तिथिव्रतमार्गमनुलङ्घ्य आधाघ अतानुकूलतया यतेर्मार्गाविरोधेन व्रतमाचरणीयम् । इति वात्सरिकानि व्रतानि ।

अर्थ :—सिंहनिष्क्रीड़ित व्रत तेरह मास अट्ठाईस दिनों में पूर्ण होता है । शेष व्रतों की विधि हरिवंश पुराण, बृहत्सारचतुर्विंशतिका और उद्यापनसार से सम्यक् प्रकार अवगत करनी चाहिए, यहां विस्तारभय से नहीं दी गयी है । इन व्रतों की तिथियों के हानि, वृद्धि क्रम का भी वर्णन नहीं किया गया है, क्योंकि ये व्रत महामुनियों के होते हैं । साधारण श्रावक इन व्रतों का पालन कर सकता है, इसीलिए यहां पर इन का वर्णन किया गया है । अतएव देश-काल मर्यादा विज्ञ श्रावक को द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव का आश्रय लेकर सम्यक् यत्नाचार पूर्वक व्रत तिथि मार्ग का उल्लंघन न करते हुए आगम के अनुकूल और मुनि मार्ग के अविरोधी व्रतों का आचरण करना चाहिए । इस प्रकार सांवत्सरिक व्रतों का निरूपण समाप्त हुआ ।

विवेचन :—सिंहनिष्क्रीड़ित व्रत तीन प्रकार का होता है—उत्तम, मध्यम और जघन्य । उत्तम सिंहनिष्क्रीड़ित व्रत १३ महिना २८ दिन तक किया जाता है, मध्यम ५ महिना १० दिन और जघन्य २ महीना २० दिन तक किया जाता है । जघन्य व्रत में ६० दिन उपवास और २० दिन की पारणाएँ होती हैं । प्रथम एक

उपवास, पश्चात् पारणा, अनन्तर दो दिन का उपवास एक पारणा, पश्चात् एक उपवास, पारणा, तत्पश्चात् तीन दिन का उपवास पारणा, पांच दिन का उपवास पारणा, चार दिन का उपवास पारणा, पांच दिन का उपवास पारणा, पुनः पांच दिन का उपवास पारणा, पश्चात् चार दिन का उपवास पारणा, पांच दिन का उपवास पारणा, तीन दिन का उपवास पारणा, एक दिन का उपवास पारणा, दो दिन का उपवास पारणा एवं एक दिन का उपवास पारणा की जाती हैं अर्थात् ४ + २ + १ + ३ + २ + ४ + ३ + ५ + ४ + ५ + ५ + ४ + ५ + ३ + ४ + २ + ३ + १ + २ + १ दिनों के उपवासों के अनन्तर पारणाएँ की जाती हैं। इस व्रत को शक्तिशाली, इन्द्रियजयी और व्रती श्रावक ही कर सकते हैं। यह तपकी प्रक्रिया है। मध्यम व्रत करने वाला उपर्युक्त उपवासों से भी दूने उपवास करता है, तब पारणा होती है। उत्तम विधि करने वाला २ + ४ + २ + ६ + ४ + ८ + ६ + १० + ८ + १० + १० + ८ + १० + ६ + ८ + ४ + ६ + २ + ४ + २ = २० मध्य की पारणाएँ कुल १४० दिन पुनः इस प्रकार व्रतारम्भ करता है तथा तीसरी बार २ + ४ + २ + ६ + ४ + ८ + ६ + १० + ८ + १० + १० + ८ + १० + ६ + ८ + ४ + ६ + २ + २ + २इस प्रकार कुल व्रत दिन संख्या १४० + १४० + १३८ = ४१८ उपवास + २० पारणा + १२० उपवास + २० पारणा ११५ उपवास + २० पारणा = ४१८ दिन अर्थात् १३ महिना २८ दिन प्रमाण।

सिंहनिष्क्रीड़ित व्रत

यह व्रत तेरह महिने अट्ठाईस दिन में अर्थात् ४१८ दिन में पूरा होता है। यह महामुनि का व्रत है। साधारण श्रावक इस व्रत का पालन नहीं कर सकते हैं। व्रतधारी श्रावक कर सकता है। यह सांवत्सरिक व्रत हैं। यह व्रत तीन प्रकार का है। उत्तम, मध्यम, जघन्य।

उत्तम १३ महिने २८ दिन का

मध्यम ५ महिने १० दिन का

जघन्य २ महीने २० दिन का है। इसमें ६० उपवास और २० पारणे होते है। यह उत्तम शक्तिशाली इन्द्रिय विजयी व्रती श्रावक को करना चाहिए।

उत्तम विधि :—इसमें दो उपवास एक पारणा, ४ उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, पुनः छः उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा,

आठ उपवास एक पारणा, छः उपवास एक पारणा, दस उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, फिर से दस उपवास एक पारणा, दस उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, दस उपवास एक पारणा, छः उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, छः उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, फिर चार उपवास एक पारणा दो उपवास एक पारणा (२+४+२+६+४+८+६+१०+८+१०+१०+८+१०+६+८+४+६+२+४+२=१२०) इस प्रकार १२० उपवास २० पारणे होते हैं। फिर से इसी प्रकार उपवास करे।

फिर (२+४+२+६+४+८+६+१०+८+१०+१०+८+१०+६+८+४+६+२+२+२) इस प्रकार उपवास करना चाहिए।

इस प्रकार (१२०+२०+१२०+२०+११८+२०=४१८ दिन) अर्थात् १३ महिने २८ दिन में यह व्रत पूरा होता है।

मध्यम विधि :—एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, इस प्रकार नीचे लिखी सारणी के अनुसार करना।

१+२+३+४+५+४+६+५+७+६+८+७+९+८+७+६+७+६+५+६+५+४+५+३+४+२+३+१+२+१+२+१=१४५ इस प्रकार १४५ उपवास ३२ पारणे अर्थात् यह व्रत १७२ दिन में पूरा होता है।

जघन्य विधि :—इसमें भी निम्न प्रकार उपवास व पारणे करने चाहिए।

(१+२+३+२+४+३+५+४+५+५+४+५+३+४+२+३+१+३+१=६०) अर्थात् ६० उपवास व २० पारणे इसमें होते हैं। सम्पूर्ण व्रत ८० दिन में पूरा होता है।

—गोविन्द कविकृत व्रत निर्णय

इसकी और भी विधियां हैं जो निम्न प्रकार हैं।

(१) (१+२+१+३+२+४+३+५+४+५+५+३+४+२+३+१+२+१) इस प्रकार इसमें ६० उपवास व २० पारणा होते हैं।

इसकी एक और विधि है।

(२) (१+२+३+४+३+५+६+७+८+९+८+१०+९+११+१० १२+१३+१२+१४+१३+१५+१३+१२+१३+११+१२+१०+११+९+१०

+८+६+८+६+८) इसके बाद ६ प्रोषध उपवास और फिर ७ प्रोषध करना चाहिए । फिर ५+३+४+३+३+१ इस प्रकार ३५० उपवास व ५४ पारणा अर्थात् ४०४ दिन में व्रत पूर्ण होता है ।

अथ स्तेयानन्द निवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करे । वैशाख शु. ७ के दिन एकाशन और अष्टमी के दिन उपवास करे । नवदेवता पूजा, अर्चना, मन्त्र, जाप आदि करे ।

अथ सुदर्शन सेठ व्रत कथा

इस जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र में कुंथुल कर्नाटक नामक एक विस्तीर्ण देश है, उसमें रायबाग नामक नगर है, उसमें बंकसेन नामक राजा राज्य करता था, उसकी पत्नी लक्ष्मीमति थी, उसका धनसेन नामक पुत्र था । उसके अलावा मन्त्री, पुरोहित, राजश्रेष्ठी, सेनापति आदि थे ।

एक दिन श्री गुणभद्राचार्य चर्या के निमित्त से राजघराने की ओर आये । राजा ने उन्हें पडगाहन किया और नवधाभक्तिपूर्वक आहार दिया । निरंतराय आहार हो जाने पर महाराज एक उच्च आसन पर विराजमान हुये । धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा ने कोई एक व्रत बताओ ऐसा कहा तब उन्होंने सुदर्शन श्रेष्ठी व्रत पालन करने को कहा । इस व्रत की विधि कहता हूं सो सुनो ।

व्रत विधि—१२ महीने में से कोई भी महीने के शुक्ल पक्ष की या कृष्ण पक्ष की १०मी के दिन एकाशन करे । ११ के दिन उपवास करे । दूसरी सब विधि पहले के समान करे । अन्तर केवल इतना है कि वेदि पर नवदेवता की प्रतिमा विराजमान करे ।

जाप—"ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा ।"

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे ।

इस प्रकार नव पूजा पूर्ण होने पर उद्यापन करे । उस समय नवदेवता विधान कर महाभिषेक करे । चतुःविधि संघ को आहारदान आदि दें । अनाथों को करुणा दान दे । नव दम्पति को भोजन करावें ।

इस व्रत का पहले अपने पूर्वभव में यथाविधि पालन किया था। उसका उद्यापन भी किया था। इससे ही वह आगे सुदर्शन नामक सर्व धन-सम्पन्न श्रेष्ठी हुआ और सर्व सांसारिक सुख भोगकर अन्त में समाधिपूर्वक मरकर स्वर्ग में महर्द्धिक देव हुआ। वहां का सुख भोगकर वह मनुष्य हो मोक्ष गया। ऐसा इस व्रत का प्रभाव है।

यह दृष्टांत व व्रतविधान श्री गुणभद्राचार्य के मुख से सुन बंकसेनादि को व पूरे परिवार को बहुत ही खुशी हुई। फिर उन्होंने भी मुनि महाराज को नमस्कार करके सुदर्शन श्रेष्ठी व्रत लिया। फिर महाराज सबको आशीर्वाद देकर चले गये।

उसके बाद समयानुसार उन्होंने इस व्रत का पालन किया और उद्यापन किया जिससे वे स्वर्ग गये।

सौभाग्य व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल अष्टमी के दिन व्रतीक स्नान कर तथा शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजाभिषेक का सामान लेकर जिन मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर चौबीस तीर्थंकर की मूर्ति यक्षयक्षि सहित स्थापन करे, और जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, एक सुगन्धित फूलों की माला बनाकर भगवान को समर्पित करे, आरती उतारे, श्रुत व गुरू की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की भी अर्चना करे, ज्वालामालिनी, पद्मावति देवी व जलदेवता को भी अर्घ्य चढ़ावे। तीन सौभाग्यवति स्त्रियों को कुंकु लगावे।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का भी १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में महाअर्घ्य रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर मंगल आरती उतारे, सत्पात्रों को दान देवे, इसी प्रकार चार महीने तक इसी तिथि को उपवास कर पूजा करे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, धर्मध्यान से समय बितावे, अन्त में कार्तिक शुक्ल पौर्णिमा के दिन उपवास कर, उस समय जिनेन्द्र भगवान का पंचामृताभिषेक करे, तीन प्रकार के नैवेद्य से भगवान की

पूजा करे, तीनों स्त्रियों को वायना देवे, चतुर्विधसंघ को दान देवे, फिर पारणा करे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में सुरम्य नाम का देश है, उसमें हस्तिनापुर नामक नगर है, वहां पर पहले एक भूपाल नाम का राजा मनोहर नाम की राणी सहित सुख से राज्य करता था, उसी नगर में धनपाल नाम का सेठ अपनी धनवती नाम की सेठानी सहित रहता था, सेठानी को सन्तान उत्पन्न न होने के कारण सेठ अपनी सेठानी की ओर कभी भी नहीं देखता था।

एक समय नगर के उद्यान में देशभूषण नामक महामुनिश्वर आये, धनवती सेठानी को मालूम पड़ते ही दर्शन के लिए उद्यान में गयी, मुनिराज की तीन प्रदक्षिणा लगाकर नमस्कार किया, धर्मोपदेश सुनकर हाथ जोड़कर नमस्कार करती हुई प्रार्थना करने लगी कि हे महामुनि, मेरे अभी तक संतान उत्पन्न न होने के कारण मेरा जन्म निरर्थक सा दीख रहा है, क्या करूं ?

इस प्रकार उसके दैन्य वचन सुनकर मुनिराज कहने लगे कि हे देवि ! मैं तुम्हारे पूर्वभव कहता हूं सुनो। एक बार तुमने पूर्वभव में एक मुनिराज को देखकर उदासीनता व्यक्त की, ग्लानि की, इसीलिये तुमको संतान उत्पन्न नहीं हुई और उदासीनता हो रही है। यह सुनकर सेठानी को बहुत बुरा लगा, वह प्रार्थना करने लगी कि हे देव इस दुःख से छुटकारा पाने के लिये कुछ उपाय बताओ, तब मुनिराज कहने लगे कि हे पुत्री तुम सौभाग्य व्रत का पालन करो, ऐसा कहते हुये व्रत की विधि कही, उस सेठानी ने प्रसन्नतापूर्वक व्रत को स्वीकार किया और अपने घर वापस लौट आयी, उसने व्रत को अच्छी तरह से पाला अंत में उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से उसको एक बहुत ही सुन्दर भाग्यशाली देवकुमार पुत्र उत्पन्न हुआ, सुख से रहने लगी। एक दिन संसार से वैराग्य लेकर संन्यास विधि से मरण किया और स्वर्ग में सुख भोगने लगी।

समाधिविधान व्रत कथा

वैशाख शुक्ल अष्टमी के दिन प्रातःकाल व्रतिक स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा सामग्री हाथ में लेकर जिनमन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर पंचपरमेष्ठि

भगवान की मूर्ति स्थापन करे, पंचामृताभिषेक करे, भगवान के आगे, शुद्ध भूमि पर पंचवर्ण से अष्टदल कमलयन्त्र याने मांडला बनाकर, मध्य में ह्रीं अथवा स्वस्तिक बनावे, उस स्वस्तिक के ऊपर चावलों का पुंज रखकर एक मंगल कलश रखे, एक थाली में पांच पान रखकर उन पानों पर अर्घ्य रखे, फिर उस थाली को मंगलकलश पर रखे, उस थाली में पंचपरमेष्ठि की मूर्ति स्थापन करे, फिर अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, गणधर पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल को भी पूजा करे, पांच प्रकार के नैवेद्य से पूजा करे।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अनाहत विद्यायै नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, सोलहकारण भावना भावे, पंचगुरु भक्ति पढ़े, व्रत कथा पढ़े, ब्रह्मचर्यपूर्वक उपवास करके धर्मध्यान से समय बितावे, एक थाली में महाअर्घ्य रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, दूसरे दिन सत्पात्रों को दान देकर अपने पारणा करे, इस प्रकार इस व्रत को पांच वर्ष या पांच महिने तक करे, अन्त में उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि की एक नवीन प्रतिमा लाकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, दानादिक देवे। व्रत कथा के लिये चेलना चरित्र पढ़े।

सौख्यसुत सम्पत्ति व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल अष्टमी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजाभिषेक का सामान हाथ में लेकर जिनमन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, ईर्यापथ शुद्धि करके, भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, श्री जिनेन्द्र भगवान का पंचामृताभिषेक करके भगवान की पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्ष-यक्षिणी क्षेत्रपाल की पूजा करे, भगवान के आगे तीन पान लगाकर ऊपर अष्टद्रव्य रखे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हत्परमेष्ठिने नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ्य करके हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य भगवान को चढ़ा देवे, इसी प्रकार

चार महिने तक नित्य पूजा क्रम करे, नन्दादीप लगावे, आगे आने वाली कार्तिक शुक्ला पोर्णिमा के दिन व्रत का उद्यापन करे, उस समय जिनेन्द्र भगवान का महाभिषेक करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, पद्मावति आदि देवियों की पूजा करे, मिट्टी के बारह लाल कुंडे लेकर धोवे, भगवान के आगे शुद्ध भूमि पर अक्षत से बारह स्वस्तिक निकाले, उन स्वस्तिकों पर ह्रींकार बीजमन्त्र लिखकर, उन कुंडों को स्वस्तिक के ऊपर रखे उन कुंडों में बारह प्रकार का धान्य भरे, उसके बाद बारह कलश लेकर उन कलशों में दूध, घी, शक्कर से भरकर उन कुंडों पर रखे, ऊपर सूत लपेटे, उसके ऊपर बाहर प्रकार का नैवेद्य रखे।

दो सौभाग्यवती स्त्रियों को दो वायना भरकर देवे, एक वायना अपने घर ले जावे, सत्पात्रों को दान देवे।

कथा

एक बार राजा श्रेणिक अपने नगरवासियों के साथ भगवान महावीर के समवशरण में गये, उनमें एक राजश्रेष्ठि विजयसेन और विजयावती भी थे, कुछ समय भगवान का उपदेश सुनने के बाद, विजयावती भगवान को हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगी कि हे जिनेन्द्रदेव ! मेरा उद्धार का कुछ उपाय बताइये, तब भगवान उसको संबोधित करके कहने लगे कि हे देवी, तुम सौख्यसुत संपति व्रत को करो, इस प्रकार कहकर भगवान ने उसे व्रत की विधि बतायी, उस सेठानी ने व्रत को भक्ति से ग्रहण किया, नगर में वापस लौट आये, अपनी नगरी में आकर व्रत को अच्छी तरह से पालन किया, अन्त में उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से ऋद्धि-वृद्धि बढ गई, धन समृद्धि बढ़ी, उसके कारण उसको अहंकार बढ़ गया, धर्म को उदासीन भाव से पालन करने लगी।

उसके कारण जितने भी उसके पुत्र थे, वे सब अलग-अलग हो गये और माता-पिता का विरोध करने लगे, घर की लक्ष्मी नष्ट हो गई और दरिद्रता से समय व्यतीत करने लगे। एक बार सुभद्राचार्य मुनिराज आहार के निमित्त नगर में आये, विजयावति ने मुनिराज का पडिगाहन कर मुनिराज को आहार दान दिया, आहार होने के उपरान्त, एक पाटे पर मुनिराज को विराजमान करके, सेठानी ने पूछा कि

हे गुरुदेव, हमारे घर में दरिद्रता ने क्यों डेरा डाला है ? क्या कारण है ? उसके लिये कुछ उपाय बताओ ।

तब मुनिराज ने कहा कि तुमने व्रत को ग्रहण किया और व्रत के प्रभाव से सुख सम्पदा भी बढ़ी, लेकिन अन्त में व्रत के प्रति अहंकार के कारण उदासीनता आ गई, व्रत को ठीक-ठीक नहीं पाला, इसलिये दरिद्रता ने घर में डेरा डाला है, यह सब सुनकर सेठानी को बहुत दुःख हुआ, पश्चाताप करने लगी । पुनः उसने व्रत को स्वीकार किया, भक्ति से व्रत का पालन किया, अन्त में उद्यापन किया, पुनः उसके घर में धन-समृद्धि बढ़ने लगी, पुत्र आदि भी वापस आकर मिल गये, सब लोग एकत्र होकर सुख का उपभोग करने लगे, अन्त में समाधि धारण कर स्वर्ग को गई ।

सप्त कुंभ व्रत

इस व्रत की विधि तीन प्रकार से है उत्तम, मध्यम व जघन्य ।

(१) **उत्तम विधि** :—क्रम से १६/१५/१४/१३/१२/११/१०/९/८/७/६/५/४/३/२/१ फिर १५/१४/१३/१२/११/१०/९/८/७/६/५/४/३/२/१ फिर से १५/१४/१३/१२/११/१०/९/८/७/६/५/४/३/२/१ फिर से १५/१४/१३/१२/११/१०/९/८/७/६/५/४/३/२/१/ इस प्रकार ४२५ उपवास करना, यह उपवास एक-एक करके पूर्ण करना चाहिए । प्रत्येक उपवास पूर्ण होने पर पारणा करना चाहिए । इस क्रम से उपवास करना चाहिए । इस प्रकार ६१ पारणे होते हैं अर्थात् यह व्रत ४२५+६१=४८६ दिन में पूर्ण होता है ।

(२) **मध्यम विधि** :—सब विधि ऊपर के समान है । किन्तु उपवास के प्रारम्भ में ९ उपवास करना होगा तो इस प्रकार ९/८/७/६/५/४/३/२/१ इस क्रम से फिर ८/७/६/५/४/३/२/१ इस क्रम से तीन बार उपवास करना अर्थात् १५३ उपवास हुये और ३३ पारणे हुये इस प्रकार १५३+३३=१८६ दिन में व्रत पूर्ण होता है ।

(३) **जघन्य विधि** :—क्रम से ५/४/३/२/१ फिर ४/३/२/१ फिर ४/३/२/१ ऐसे ४५ उपवास व १७ पारणे मिलकर ६२ दिन में पूर्ण होते हैं ।

—व्रत विधान से

समवशरण व्रत

इस व्रत के २४ उपवास होते हैं, प्रत्येक महिने के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को होता है, इसे एक वर्ष तक करना चाहिये अर्थात २४ उपवास हो जायेंगे । इस व्रत में **ॐ ह्रीं सकलाघविनाशाय सकलगुणकराय श्री सर्वज्ञाय अर्हत्परमेष्ठिने नमः** इस मन्त्र का जाप करना चाहिए ।

—क्रिया कोष

सम्यक्त्व पंचविंशति व्रत

तृतीया के तीन, अष्टमी के आठ, चतुर्थी के आठ और षष्ठी के छः इस प्रकार २५ प्रोषधोपवास करना चाहिए । व्रत समाप्ति के बाद उद्यापन करना ।

—गोविन्दकृत व्रत निर्णय

सर्वतोभद्रतप व्रत

यह एक श्रेष्ठ तप व्रत है, यह असामान्य जीव भी कर सकते हैं । इस व्रत का उपवास क्रम—

प्रथम एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास १ पारणा । तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, उसके बाद पांच उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा, फिर पांच उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पांच उपवास एक पारणा, एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, इस प्रकार ७५ उपवास व २५ पारणे अर्थात ७५+२५= १०० । इसलिये १०० दिन में यह व्रत पूरा होता है ।

—गोविन्दकविकृत व्रत निर्णय

इसकी दूसरी विधि :—इसका प्रथम एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास १ पारणा, पांच उपवास एक

पारणा, छः उपवास एक पारणा, सात उपवास एक पारणा फिर एक उपवास एक पारणा इस क्रम से ७ उपवास तक करना। इस क्रम से ६ बार करना अर्थात १९६ उपवास व ४९ पारण होंगे अर्थात् यह कुल २४५ दिन में पूरा होता है।

व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे, नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप करावे।

सरस्वती व्रत

इस व्रत में तिथि महिना पक्ष का नियम नहीं है, इस व्रत में कुल एकसौ बीस उपवास हैं। वह कभी भी एक वर्ष में पूर्ण होता है, व्रत पूर्ण होते ही यथाशक्ति उद्यापन करना चाहिए। शक्ति नहीं हो तो व्रत दुबारा करे।

—गोविन्दकृत व्रत निर्णय

संयोग पंचमी व्रत

महिने के किसी भी रविवार को आने वाले शुक्ल व कृष्ण पक्ष में पंचमी को प्रोषधोपवास करना। यह व्रत ५ वर्ष करना चाहिए।

—गोविन्दकविकृत व्रत निर्णय

सर्वार्थसिद्धि व्रत

कार्तिक शुक्ल अष्टमी से क्रम से आठ उपवास करना अर्थात् सप्तमी को एकाशन और अष्टमी से १५ तक उपवास, कार्तिक कृष्ण १ को एकाशन, इन दिनों में श्री सिद्धाय नम: इस मन्त्र का जाप १०८ बार करना चाहिए। उद्यापन करना चाहिए, नहीं किया तो व्रत पुन: करे।

—व्रतविधि निर्णय व क्रियाकोष

सुख चिन्तामणी व्रत

इस व्रत में चतुर्दशी के चौदह, एकादशी के ११, अष्टमी के आठ, पंचमी के पांच, तृतीया के तीन इस प्रकार ४१ उपवास करने चाहिए। इस व्रत की शुरूआत करने के लिए कृष्ण पक्ष या शुक्ल पक्ष का नियम नहीं है। सिर्फ तिथि का नियम है। प्रत्येक उपवास प्रोषध करना चाहिए। इस व्रत की पांच भावना है चतुर्दशी के सब उपवासों में पहली भावना भानी, एकादशी को सब उपवासों में दूसरी भावना भानी, उसी प्रकार अष्टमी को तीसरी भावना, पंचमी को चौथी भावना, तृतीया को ५वीं भावना भानी चाहिए।

व्रत के दिन जिनेन्द्र भगवान का १०८ कलशों से पंचामृत अभिषेक करना चाहिए। उपवास के दिन ॐ ह्रीं सर्व करित विनाशनाय चतुर्विंशति तीर्थंकराय नमः इस मन्त्र का त्रिकाल जाप करना चाहिए। यह व्रत चिन्तामणी रत्न के समान सर्व-सुखों को देता है। यह व्रत करते समय तिथि का क्षय हो तो यह व्रत एक दिन पहले ही करे, तिथि की वृद्धि हो तो उस दिन उपवास करना चाहिए।

सुखकरण व्रत

यह व्रत साढ़े ४ महीने का है, एक बार व्रत शुरू किया तो साढ़े ४ महिने तक पूरा करना चाहिए। इसमें एक उपवास एक एकाशन इस प्रकार क्रम है। व्रत पूर्ण होने तक शीलव्रत का पालन करना चाहिए। धर्मध्यान करना चाहिए। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए। नमस्कार मन्त्र का त्रिकाल जाप करना चाहिए।

—गोविन्दकृत व्रत निर्णय

सुखसमाधि व्रत

किसी भी महिने के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को उपवास करना फिर एकाशन फिर दो उपवास एक एकाशन करना चाहिए, इस प्रकार पूरे मास तक करे। व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

—गोविन्दकविकृत व्रत निर्णय

सुख सम्पत्ति व्रत

इस व्रत की विधि तीन हैं इसलिए उसके तीन भेद हैं। (१) वृहत्सुख सम्पत्ति व्रत (२) मध्यम सुख सम्पत्ति व्रत (३) लघुसुख सम्पत्ति व्रत।

विधि— (१) वृहत्सुख सम्पत्ति व्रत—इस व्रत के १२० उपवास हैं प्रतिपदा का एक, द्वितीया के दो, तृतीया के तीन इस क्रम से जो तिथि हो उसके उतने उपवास करना अर्थात् पूर्णिमा के १५ तक करना। इस प्रकार १२० उपवास होते हैं, एक-एक तिथि के उपवास पूर्ण करके दूसरी तिथि करनी चाहिए।

(२) **मध्यम सुख संपत्ति व्रत**—प्रत्येक महिने की पूर्णिमा और अमावस्या को उपवास करना इस प्रकार वर्ष में २४ उपवास होते हैं। ५ वर्ष तक यह व्रत करने से १२० उपवास होते हैं।

(३) **लघु सुख सम्पत्ति व्रत**—किसी भी महीने की शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा तक १६ दिन में १६ उपवास करना चाहिये, यह व्रत सिर्फ एक वर्ष करे। पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए और त्रिकाल णमोकार मन्त्र का जाप करना चाहिए।

—क्रियाकोष किसनसिंह कृत

लघु सम्पत्ति व्रत की विधि गोविंद कवि ने अपने व्रत संग्रह में अलग ही बतायी है, उसमें पंचमी के ५ और १०मी के १० इस प्रकार १५ प्रोषध करना पूर्ण होने पर उद्यापन करना।

सुदर्शन तप व्रत

सम्यग्दर्शन के तीन भेद : औपशमिक, वेदक और क्षायिक, उसमें प्रत्येक भेद के आठ अंग हैं, वे सब मिलकर २४ होते हैं। उसके उद्देश्य से २४ उपवास प्रोषधोपवास से करना चाहिये। यह कभी भी कर सकते हैं, उसका नियम नहीं है।

कथा

यह व्रत सुमीसा नगरो में अतिजय राजा के मन्त्री अमृतमति उसकी स्त्री सत्यभामा। उसका पुत्र प्रहासित उसका मित्र विकसित। इन दोनों मित्रों ने मतिसागर मुनि के पास यह व्रत लिया था और इसका यथाविधि पालन किया था जिससे समाधिमरण करके वे महाशुक्र नाम स्वर्ग में देव हुये।

—महापुराण पर्व ७वां

सूत्र व्रत

श्रावण कृष्ण १ से भाद्रपद शुक्ल पूर्णिमा तक हर रोज मौन लेकर एकाशन करना।

दूसरी विधि—सूत्रों की संख्या ११। उतने उपवास एक महीने में करने के बाद १७ दिन बचे हुये में एकाशन करना चाहिए। इस प्रकार बारह महीने मौन रखकर उपवास एकाशन करना पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये।

सप्तभंगी व्रत

इस व्रत में एक उपवास करके पारणा करना चाहिये, फिर दो उपवास

करके पारणा करना फिर अलग-अलग छः प्रोषधोपवास क्रम से करना । प्रोषधोपवास एक भुक्ति करना (अर्थात् जितने प्रोषधोपवास होते हैं उतने एक भुक्ति) फिर छः प्रोषधयुग्म करना अर्थात् छः समय दो-दो उपवास करके छः पारणे करना । फिर चार भिन्न-भिन्न प्रोषधोपवास करना फिर पारणा करना फिर बीच में पारणा करना अर्थात् तीन उपवास के बाद पारणा करना बाद में चार उपवास एक पारणा ऐसे छः बार करना । पुनः तीन उपवास एक पारणा करके चार उपवास एक पारणा करना फिर छः बार अलग-अलग तीन-तीन उपवास करके पारणा करे फिर पांच उपवास करके पारणा करना चाहिए । फिर छः बार चार उपवास एक पारणा करना फिर सर्वारंभों का त्याग करके भव्य जीवों को छः बार अलग-२ पांच उपवास एक पारणा करना चाहिये । फिर एक उपवास एक पारणा ऐसा सात बार करना चाहिए । फिर छः उपवास लाईन से और पारणा इस प्रकार छः बार पारणा करना । इसके बाद प्रोषधोपवास के सप्तक छः समय अलग-अलग करना । इस व्रत के पारणों की संख्या ५१ है और उपवास की सख्या १६५ है । व्रत शुरू करने पर पूर्ण होने तक क्रम से करना चाहिए । व्रत पूर्ण होने पर शक्ति अनुसार उद्यापन करना चाहिए । इस व्रत में मास तिथि वगैरह का नियम नहीं है । कभी भी शुरू कर सकते हैं ।

संपत् शुक्रवार व्रत

यह व्रत संसारी जीवों को पति-पत्नी दोनों को करना चाहिए । यह अखण्ड सौभाग्य के लिए करना चाहिए । श्रावण महिने का प्रत्येक शुक्रवार सम्पत् शुक्रवार होता है । उस दिन उपवास करना चाहिए यदि उपवास न हो सके तो एकाशन करना चाहिये पर उपवास करना उत्तम है ।

उस दिन मन्दिर में जाकर भगवत के दर्शन कर श्री पार्श्वनाथ भगवान के अभिषेक के बाद पद्मावती देवी की आराधना करनी चाहिये, इसके लिये दूसरे आसन पर पद्मावती की मूर्ति विराजमान करनी चाहिये, उसको नाना प्रकार के वस्त्राभरण पहनाना चाहिए, दीप धूप फूलों के हार आदि से उसकी शोभा बढ़ानी चाहिये, हल्दी कुंकुम भिगोये हुए चने इससे उसकी पूजा करनी चाहिये । इसके बाद मंगल सूत्र उसके गले में पहनाना चाहिये व पूर्णार्घ देना चाहिये, बाद में आरती बोलकर विसर्जन करना चाहिये ।

तब इस व्रत की कथा पढ़नी चाहिये। पद्मावती के सहस्र नाम के प्रत्येक नाम के उच्चारण के साथ कुंकुम लवंग अगर पुष्प आदि बीजाक्षर के साथ प्रत्येक दान के अर्घ के अन्त में अर्घ देना चाहिये, गंधोदक लेकर घर आना चाहिये। घर में प्रत्येक स्थान पर वह छिड़कना चाहिए।

श्रावण के अन्तिम शुक्रवार को पद्मावती को साड़ी पहनानी चाहिए। अलंकार से सुशोभित करना चाहिये। हरी चूड़ियां पाँच हलकुण्ड खोपरे की ५ काचली, कुंकुम केला निबू खाटक शक्कर और दो नारियल ये सब लेकर पद्मावती की ओटी भरनी चोली खड पहनाना। ओटी भरते समय "जय स्फटिक रूपदभामिनि श्री पद्मावति अघहारिणी धरणेन्द्र कुल यक्षिणी दीर्घ आयुरारोग्यरक्षिणी" यह मन्त्र बोलना चाहिये।

बाद में आप्त परिवार हल्दी कुंकुम शक्कर गुड़ खोपरा पान सुपारी वगैरह बांटना चाहिये। एकत्रित हुई सौभाग्यवति स्त्रियों को कुंकुम लगाना चाहिए। ऐसा यह व्रत ५ वर्ष तक करना चाहिए। उद्यापन करना चाहिए।

उद्यापन विधि :—पंचकोडी कुंभ स्थापन करके पाँच कलश की स्थापना करनी चाहिए, पंचवर्णी रेशमी सूत पांचकोण करके चार दिशाओं में केले के चार खंभे खड़े करे। उसका मंडप बांध करके उसके ऊपर चार दीपक लगावे, कुमकुम मिश्रित अक्षत और फूलों की वृष्टि करनी चाहिए, पांच पकवानों के नैवेद्य अर्पण करना चाहिए।

देवशास्त्र गुरु, पद्मावती व सुवासिनी स्त्रियों को कुमकुम व मोती डालकर देना चाहिए। पांच मंगल वस्तु जिनमन्दिर में देनी चाहिए, आर्यिका को वस्त्रदान देना व आहार देना चाहिए, श्रावक को भोजन देना चाहिए।

कथा

प्राचीन समय में सौराष्ट्र देश में परिभद्रपुर में राजा विक्रमादित्य राज्य करता था। वह महापराक्रमी, न्यायनिष्ठ, धार्मिक व प्रजावत्सल था, उसकी पटरानी भूमिभुजा देवी थी यह साध्वी कार्यकुशल व दक्ष थी इन दोनों ने अपने देश में व बाहर अपने धर्म की अच्छी प्रभावना की थी। इसी नगर में एक दरिद्री वणिक श्रुणुय रहता था। उसकी स्त्री रूखभावनी थी, उसकी जैन धर्म पर अति गाढ़ श्रद्धा

थी, उसके हाथ से कभी धर्म-विरुद्ध कार्य नहीं होता था परन्तु घर में हमेशा दरिद्रता रहती थी। फिर भी वह सन्तोष धारण कर धर्म करती रहती थी, उसकी पुत्र-संतति भी अच्छी थी, पर उनका पालन-पोषण कैसे करूं यह चिन्ता उसे हमेशा रहती थी।

एक दिन भाग्योदय से उस नगर में तपस्वी महाराज आये। उनका दर्शन करने पूरी नगरी गई, वहां मुनि महाराज के मुख से धर्मोपदेश सुन कर अपने घर का पूरा दुःख भूल गई और मुनिमहाराज से संपत शुक्रवार व्रत की कथा सुनकर उसने यह व्रत लिया और यथाशक्ति उसका पालन करने लगी।

उसका भाई उसी नगर में रहता था, वह धनवान था, अपने पुत्र के मौंजी बंधन के निमित्त से अपने गांव के सब लोगों को सात दिन खाने के लिए बुलाया पर अपनी बहन को उसने नहीं बुलाया।

बहिन को यह बात ज्ञात हुई। तब उसने सोचा कि शायद वह मुझे भूल गया होगा क्योंकि हम दोनों तो एक रक्त से ऊत्पन्न हुये हैं। मैं खुद ही वहां जाकर मौज कर आऊंगी ऐसा सोचकर वह अपने बच्चों सहित भोजन करने गयी।

खाना शुरू था सब लोग भोजन कर रहे थे, तब उसका भाई कोई बच तो नहीं गया है सब लोग आये हैं न ऐसा सोचकर देखने के लिये निकला। तब उसने अपनी बहन को भोजन करते हुये देखा तो वह उसके पास जाकर कहने लगा "शर्म नहीं आती आमन्त्रण दिये बिना ही किसी के घर पर भोजन करने जाने में ?" तू दरिद्री है इसलिये मैंने तुझे नहीं बुलाया। अब तू कभी भूलकर भी मत आना।

वह खाना वैसे ही छोड़कर घर चली आयी। दूसरे दिन उसके लड़के ने बहुत आग्रह किया जिससे वह फिर दूसरे दिन भोजन पर गयी। तब उसके भाई ने बहुत ही अपशब्दों से उसका अपमान किया व हाथ पकड़कर पंक्ति के बाहर निकाल दिया।

उसके मन में बहुत ही दुःख हुआ। मैंने पूर्व भव में ऐसा कौनसा पाप किया है जिससे मुझे आज इतनी दरिद्रता भोगनी पड़ रही है। वह घर आयी और पद्मावती की स्तुति की और सो गयी।

स्वप्न में पद्मावती वस्त्रालंकार से सुशोभित उसके सामने आयी और कहने लगी।

"महाभागे तू कष्ट मत कर दुःख मत कर तेरा दरिद्रपना अब जा रहा है, तेरा धर्माचरण मैं जानती हूं, एकनिष्ठ होकर तू जिन-परमात्मा का चितन कर जिससे तेरा कल्याण हो, ऐसा बोलकर पद्मावती चली गई।

जब उसकी नींद खुली तो देखती है कि अपने बच्चों का रूप बदला हुआ है, उनके शरीर पर वैभव नाच रहा है। छोटा घर था पर अब बहुत बड़ा घर हो गया है लक्ष्मी से पूरा घर भरा पड़ा है। जहां दो समय का भोजन भी मुश्किल था वहां पंचपकवानों से थालियां भरी पड़ी हैं।

इस प्रकार उसकी दरिद्रता चली गयी यह बात पूरे शहर में फैल गयी। यह बात उसके भाई को भी ज्ञात हो गई। वह उसके पास आया और उसका वैभव देखकर आश्चर्यचकित हो गया। उसने भोजन के लिये बहन को अपने घर बुलाया। वह उसके घर पर गई पर जाते समय बहुत से आभूषण लेती गई, जब भोजन करने बैठी तो पहले अपनी शाल निकाली और एक-एक अलंकार निकालते हुए परोसी हुई थाली में प्रत्येक पदार्थ पर एक-एक अलंकार रख दिया, तब भाई ने पूछा यह क्या कर रही हो भोजन नहीं करोगी क्या ?

तब वह बोली "आपने जिसको भोजन करने बुलाया है वह भोजन कर रहा है।" उसका भाई यह बात समझा नहीं।

तब उसने कहा "भाई ! तेरा निमंत्रण मुझे नहीं था सिर्फ लक्ष्मी को था। मैं दरिद्री हो गई थी तब तुमने अपमान करके मुझे निकाल दिया था। अब मेरे पास वैभव हो जाने पर भोजन पर बुलाया है वही तेरा खाना खायेंगे, मैं तो जा रही हूं।

तब उसके भाई ने उसके पैर पकड़ लिये और क्षमा मांगी बहन स्वभाव से ही दयालु स्वभाव की थी, उसने अपने भाई को गले लगा लिया और दोनों ने आनंद से भोजन किया।

बाद में भाई ने भी यह व्रत लिया। फिर वह तीर्थयात्रा को गई, उसने चतुर्विध संघ को दान दिया, धर्म की उत्तम प्रभावना की और बाद में जिनदीक्षा लेकर घोर तपश्चर्या की जिसके फल से स्त्रीलिंग छेद कर स्वर्ग में जन्म लिया, वहां की आयु पूर्ण कर मनुष्य जन्म लेकर मोक्ष गई।

सप्तपरमस्थान व्रत की विधि

अथ सप्तपरमस्थानं श्रावणमासे शुक्लपक्षादिमदिनमारभ्य शुक्लसप्तदिनं यावत् कार्यम् । व्रतदिने स्नपनपूजनजाप्य कथाश्रवणदानानि कार्याणि । एकवस्तु-भक्षणं कार्यमा सप्तदिनम्, विधिवत् समाप्तावुद्यापनं च । तत्फलम्—

जातिमैश्वर्यगार्हस्थ्यं समुत्कृष्टं तपस्तथा ।
सुराधीशपदं चक्रिपदं चार्हन्त्यसप्तकम् ॥१॥
सन्निर्वाणपदं भव्यलोके हि जिनभाषितम् ।
क्रमात्क्रमविदामेति परमस्थानसप्तकम् ॥२॥

अर्थ :—सप्तपरमस्थान व्रत में श्रावण मास सुदी प्रतिपदा से श्रावण सुदी सप्तमी तक व्रत करना चाहिए । व्रत के दिन अभिषेक, पूजन, जाप, कथाश्रवण, दान आदि कार्यों को करना चाहिए । सातों दिन एक ही वस्तु का भोजन किया जाता है । विधिवत् व्रत करने के उपरान्त उद्यापन किया जाता है । इस व्रत का फल निम्न है—

जाति, ऐश्वर्य, गार्हस्थ्य, उत्कृष्ट तप, इन्द्र पदवी या चक्रवर्ती पदवी, अर्हन्तपद की प्राप्ति इस व्रत के करने से होती है । संसार में निर्वाण ही परमपद है, ऐसा जिनेन्द्र भगवान् ने कहा है । इस प्रकार सप्तपरमस्थान व्रत के पालने से सातवां परमपद निर्वाण प्राप्त होता है । अभिप्राय यह है कि सप्त परमस्थान व्रत के पालने से सप्त परमपद की प्राप्ति होती है । यह व्रत लौकिक अभ्युदय के साथ निर्वाण पद को भी देने वाला है । जो श्रावक इस व्रत का पालन करता है, वह परम्परा से अल्पकाल में ही निर्वाण को प्राप्त कर लेता है ।

विवेचन :—सप्तपरमस्थान व्रत श्रावण सुदी प्रतिपदा से सप्तमी तक सात दिन किया जाता है । प्रतिपदा के दिन अर्हन्त भगवान का अभिषेक तथा सप्तपरम-स्थान पूजन करने के उपरान्त '**ओं ह्रीं अर्हं सज्जातिपरमस्थानप्राप्तये श्रीअभय-जिनेन्द्राय नमः**' इस मन्त्र का जाप करना चाहिए । स्वाध्याय, सामायिक आदि धार्मिक क्रियाओं से निवृत्त होकर उपवास करना चाहिए । यदि उपवास करने की

शक्ति न हो तो किसी एक ही वस्तु का आहार ग्रहण किया जाता है। आहार में दो अनाज या दो वस्तुएं नहीं होनी चाहिए। केवल एक अनाज होना आवश्यक है—

द्वितीया के दिन सप्तपरमस्थान पूजन, अभिषेक के उपरान्त '**ओं ह्रीं अर्हं सद्गृहस्थपरमस्थानप्राप्तये श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः**' मन्त्र का जाप करना, तृतीया को '**ओं ह्रीं अर्हं श्री पारिव्राज्यपरमस्थानप्राप्तये श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय नमः**' मन्त्र जाप, चतुर्थी को '**ओं ह्रीं अर्हं श्रीसुरेन्द्रपरमस्थानप्राप्तये श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः**' मन्त्र का जाप, पंचमी को **ओं ह्रीं अर्हं श्रीसाम्राज्यपरमस्थानप्राप्तये श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय नमः**' मन्त्र का जाप; षष्ठी को '**ओं ह्रीं अर्हं श्री आर्हन्त्यपरमस्थानप्राप्तये श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय नमः**' मन्त्र का जाप; एवं सप्तमी को '**ओं ह्रीं अर्हं श्रीनिर्वाणपरमस्थानप्राप्तये श्रीवीरजिनेन्द्राय नमः**' मन्त्र का जाप किया जाता है। सप्तदिन व्रत करने के उपरान्त उद्यापन करने का विधान है। व्रत के दिनों में रात्रि जागरण करना चाहिए। यदि शक्ति न हो या और किसी प्रकार की बाधा हो तो मध्यरात्रि में एक प्रहर शयन करना चाहिए।

सप्त परमस्थान व्रत

श्रावण महिने में शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से सप्तमी तक करना चाहिये। इस दिन अभिषेक पूजन जप करना चाहिये। कथा सुनकर दान वगैरह देना चाहिये। उस दिन एक ही अन्न का आहार एक समय ही लेना चाहिये, उस दिन अभिषेक के बाद सप्त परमस्थान की पूजा करनी चाहिये और "**ॐ ह्रीं अर्हं सज्जाति परमस्थान प्राप्तये श्री अमयाजिनेन्द्राय नमः**" इस मन्त्र का १०८ बार जाप करना चाहिए, सामायिक आदि क्रिया के बाद यदि उपवास हो तो उपवास करना नहीं तो एक अन्न का आहार लेना चाहिये।

दूसरे दिन सद्गृहस्थ परमस्थान ॐ **ह्रीं अर्हं प्राप्तये श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय नमः।**

तीसरे दिन ॐ **ह्रीं अर्हं श्री सुरेन्द्र परमस्थान प्राप्तये श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय नमः।**

चौथे दिन ॐ **ह्रीं अर्हं श्री सुरेन्द्र परमस्थान प्राप्तये श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय नमः।**

पांचवें दिन ॐ ह्रीं अर्हं श्री साम्राज्य परमस्थान प्राप्तये श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय नमः।

छठे दिन ॐ ह्रीं अर्हं अर्हन्त्व परमस्थान प्राप्तये श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

सप्तमी को "ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्वाण परमस्थान प्राप्तये श्री वीर जिनेन्द्राय नमः इस मन्त्र का जाप करना चाहिये, व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिये।

इस व्रत का दूसरा नाम परमस्थान व्रत है। वे स्थान सात हैं— सज्जाति, सद्गृहस्थल, परिव्राज्य, श्रा सुरेन्द्र, साम्राज्य, अर्हन्त्य और श्री निर्वाण। इस परमस्थान की प्राप्ति के लिये उस दिन उपवास या एकाशन करना चाहिये।

कथा

पहले इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र के दक्षिण में मिटलिका नाम की एक नगरी थी। उसका राजा वारिषेण था, उसने अपनी सम्पत्ति से कुबेर को और सौन्दर्य से चन्द्रमा को भी लजा दिया था।

वहां का सेठ नंदिमित्र था। वह स्वभाव से ही मृदु और धार्मिक था। उसका पूरा समय धर्मध्यान में बीतता था। एक बार उस नगर में ज्ञानसागर नामक मुनि विहार करते हुये आये। उनका दर्शन करने के लिये श्रेष्ठी दम्पति गये। आचार्य महाराज के मुख से धर्म श्रवण किया और मेरी शक्ति के अनुसार मैं कौनसा व्रत धारण कर सकता हूं ऐसा उसने पूछा। तब मुनि महाराज ने उन्हें सप्त परमस्थान का माहात्म्य बताया। उन दोनों ने वह व्रत लिया। यह व्रत कौन-कौन किये ? मुनि महाराज ने उन्हें बताया—

इस भरत क्षेत्र में नेपाल देश में ललितपुर नामक नगरी है। वहां राजा भूपाल राज्य करता था, उसको कोई संतान नहीं थी अतः वह दुःखी था। एक बार विहार करते-करते एक मुनि महाराज वहां आये। तब राजा अपने परिवार सहित उनके दर्शन के लिये गया। तब धर्म श्रवण कर के राजा ने प्रश्न पूछा कि महाराज हम मुनिदीक्षा कब लेंगे ? तब महाराज ने बताया कि जब तुम्हें पुत्रप्राप्ति होगी तभी

तुम दीक्षा लोगे, तब राजा ने पूछा पुत्र पैदा होगा वह कौन होगा और उसका काल क्या है ?

तब महाराज कहने लगे राजन ! कश्मीर प्रान्त में हस्तिनापुर नगर है, उसका राजा अरिमर्दन, उसकी रानी विनोदमंजरी, उसका पुत्र अच्युत और उसके राज्य का श्रेष्ठी रुद्रदत्त और उसकी स्त्री रुद्रदत्ता उसे १६ पुत्र थे, उन सब की शादी करा दी १५ लड़कों को उसने १८ कोटि धन दिया और नागरुद्र को ४ कोटि धन दिया और बचा हुआ ८ कोटि धन उसने जिन धर्म की प्रभावना के लिये जिन मंदिर, जीर्णोद्धार आदि में खर्च किया। फिर रुद्रदत्त ने पिहिताश्रव मुनि महाराज के पास दीक्षा ली। १२ वर्ष तक आचार्य के पास रहकर कठोर तपश्चरण किया। ज्ञान प्राप्त कर आचार्य की आज्ञा से भूतल पर विहार करने लगे।

नागरुद्र व्यसनी निकला, उसने अपना पूरा धन व्यसन में गंवा दिया। अन्त में वह निर्धन हो गया तब वह अपना गांव छोड़कर अन्य जगह चला गया। वहां पर वह साधु का वेष धारण कर रहने लगा और वहां पर कुशास्त्र का अध्ययन करने लगा और उसका प्रचार करने के लिये सद्गुरु की निन्दा करने लगा। वह स्वेच्छाचारी बना अन्त में मरकर नरक गया। वहां पर वह दुःखमय आयु भोग कर कुक्कुट गांव में कुत्ता बना, वह जन्म से ही लंगड़ा था। उसका पूरा अंग रोग से जर्जरित था। दुःख से मरण हुआ। पुनः उसने हस्तिनापुर में एक गरीब बाह्मण के यहां जन्म लिया वहां पर करकर्कटक राजा राज्य करता था। उसी नगर में कुबेर-दत्त श्रेष्ठो रहता था। उसकी पत्नी कनकमाला, उसका पुत्र धनदेव था। धनदेव और वह बाह्मण पुत्र मनोहर दोनों पक्के दोस्त थे, पर धनदेव जिनधर्मीय व मनोहर शैव धर्मी था व दरिद्री था, धनदेव सम्पन्न था, मनोहर क्रोधी तो धनदेव वृत्ति से शान्त था। परस्पर विरोधी स्वभाव होने पर भी वे सच्चे दोस्त थे।

धनदेव विवेकी था उसने मनोहर को जिनधर्मी बनाने का निश्चय किया। वह उसे अपने साथ नियम से जिन मन्दिर ले जाता था, पर धनदेव मन्दिर में जाता था तब वह बाहर खड़ा रहता था।

एक बार दोनों बुद्धिसागर मुनि के दर्शन को गये। उनको नमस्कार करके

वह एक ओर जाकर बैठ गया। तब मनोहर को देखकर कर मुनि महाराज ने पूछा—आप कहां से आये हैं ?

तब वह बोला मैं अपने घर से आया हूं। तब महाराज ने कहा वह तो मुझे मालूम है पर इसके पहले कहां से आये हो वह मालूम है क्या ? तब मनोहर कहने लगा, मुझे वह मालूम नहीं है। वह आप ही मुझे बतावें।

तब मुनि महाराज ने उसका पहला भव बताया। यह सुनकर उसको बहुत दुःख हुआ। तब उसने मुनि महाराज के पास सप्त परमस्थान व्रत लिया और विधि-पूर्वक पालन किया। वह पुनः धनी हो गया और मरकर स्वर्ग में देवेन्द्र हुआ, वहां पर वह रोज जिन मन्दिर में पूजा करता था नंदीश्वर द्वीप में दर्शन को जाता था वहां पर उसने अपना पूरा समय धर्मध्यान में ही बिताया। वहां से च्युत होकर राजन तेरे पेट से जन्म लेगा।

यह सुनकर राजा अपने परिवार सहित अपने निवास स्थान पर आया। उसके बाद रानी को गर्भ रहा और पुत्र जन्म हुआ, उसका नाम श्रीपाल रखा, राजा ने उसको राज्य देकर स्वयं जिनदीक्षा धारण की। कर्मक्षय करके मोक्ष गया। श्रीपाल ने भी बहुत वर्ष तक आनन्द से राज्य किया, यह कथा सुनकर श्रेष्ठी अर्थात नंदिमित्र और नंदिश्री इन दोनों ने यह व्रत ज्ञानसागर महाराज के पास लिया।

संकटहरण व्रत

यह व्रत वर्ष में तीन बार भाद्रपद, माघ और चैत्र इन तीन महीनों में करना चाहिए इन। महिनों में शुक्ल पक्ष की १३ से शुक्ल पक्ष की १५ तक करना चाहिए। प्रत्येक दिन "ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशान्ति कुरू कुरू स्वाहा" इस मन्त्र का १०८ बार त्रिकाल जाप करना। ऐसा यह व्रत तीन वर्ष करना चाहिए और फिर उद्यापन करना चाहिए। यदि उद्यापन की शक्ति न हो तो पुनः व्रत करना चाहिए।

सकलसौभाग्य व्रत

आश्विन शुक्ल १४ को उपवास करना जिन मन्दिर में जाकर भगवान का अभिषेक करना, सब पूजा करने के बाद नवदेवता की पूजा करना, यह पूजा दिन

में चार बार व रात को चार बार करनी चाहिए। प्रत्येक समय अभिषेक करना चाहिए बाद में ॐ **ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो जिन-धर्म जिनागम जिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः**। इस मन्त्र का १०८ बार पुष्पों से जाप्य करना चाहिए। सहस्रनाम पढ़कर पञ्चपरमेष्ठी का १०८ बार जाप करना चाहिये। शास्त्र पढ़ना चाहिए इस व्रत की कथा पढ़नी चाहिए। पूरा समय धर्मध्यान से बिताना चाहिए। ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। सत्पात्रों को आहार देकर फिर दूसरे दिन पारणा करना। ऐसा यह आठ वर्ष करना चाहिए। बाद में उद्यापन करना चाहिए। उस समय नवदेवता विधान कर के ११३ कलशों से अभिषेक करना चाहिए।

कथा

इस भरत क्षेत्र में आर्यखण्ड में सौराष्ट्र नामक एक देश है उसमें द्वारकावती नाम की सुन्दर धनधान्य से सम्पन्न नगरी है, उसका राजा कृष्ण और रानी सत्यभामा थी, वह बड़ी सुन्दर सौन्दशाली थी इसके अलावा भी कृष्ण को बहुत स्त्रियां थीं। एक दिन सत्यभामा स्नान करके वस्त्र पहन के अलंकार डाल रही थी तब वह कांच में अपना रूप निहार रही थी। तब नारद पीछे से आ गये पर वह तो अपना शृंगार देख रही थी उसे मालूम नहीं था पर नारद को अपना अपमान लगा।

इसलिये उन्होंने अपना बदला लेना चाहा, उन्होंने सोचा कि ये अभिमान है मैं आया उसने देखा नहीं। अतः मैं इससे भी सुन्दर कन्या से कृष्ण की दूसरी शादी कराऊंगा। इस विचार से वह सब ओर घूमने लगे। सत्यभामा से भी सुन्दर कन्या कहीं मिली नहीं। अन्त में वे कुण्डनपुर में आये, वहां राजा भीष्मक राज्य करते थे। उनकी रानी लक्ष्मीमति, उसकी पुत्री रुकमणी थी व पुत्र रुक्मी। रुकमणी सब गुणों से सम्पन्न, विद्वान एवं सब कलाओं में निपुण थी। सौन्दर्य की तो वह मूर्ति ही थी।

नारद पहले दरबार में गये। राजा ने उनका सम्मान किया। तब अन्तःपुर में गये, सब ने उसका आदर किया। वहां वह रुकमणी का रूप देखकर चकित हो गये। सत्यभामा का रूप तो इसके रूप के आगे कुछ भी नहीं है। तब इसकी शादी कृष्ण से करानी चाहिए।

तब नारद ने उसको आशीर्वाद दिया और कहा "तू द्वारकाधीश की पत्नी हो" तब रुकमणी ने पूछा द्वारकापति कौन है ? ऐसा पूछने पर उन्होंने यादव कुल के इतिहास का वर्णन करते हुए कृष्ण के अच्छे गुणों का वर्णन किया। यह सुनकर रुकमणी के मन में कृष्ण के प्रति आदरभाव जागा, उसने मन में उसी से शादी करने का निश्चय किया।

नारद बहुत चतुर थे दूसरों के मन की बात जल्दी जान जाते थे। उन्होंने रुकमणी के हृदय की बात जान ली। उसका एक सुन्दर चित्र अंकित कर कृष्ण को बताया कृष्ण उसके रूप से पागल हो गया। उसने शादी करने का निश्चय किया। नारद का काम पूर्ण हुआ।

इधर रुकमणी का भाई रुक्मी यह शिशुपाल के पक्ष का था। शिशुपाल बड़ा पराक्रमी राजा था उसने शिशुपाल को रुकमणी देने का निश्चय किया था। रुकमणी को यह बात मालूम हुई उसको अत्यन्त दुःख हुआ। उस दुःख से वह पागल जैसी हो गयी थी। तब उसकी मां ने उसको समझाया और कहा "बालिके व्यर्थ का दुःख मत करो जो विधि में लिखा है वही होगा। नारद का आशीर्वाद बेकार नहीं जायेगा। उसी समय एक अवधिज्ञानी मुनि वहां आये थे। उन्होंने उसे कृष्ण की पट्टराणी होने को कहा था। मुनि के वचन मिथ्या नहीं होते हैं।"

इधर रुकमणी की शादी का मुहूर्त निकाला गया तब रुकमणी ने दूत के साथ कृष्ण को पत्र भेजा, उसने लिखा "माघ शुक्ल अष्टमी को मेरी शादी निश्चित हुई है। आप उसके पहले आयें मैं आपको नगर के बाहर मन्दिर में मिलूंगी और आपकी राह देखूंगी। यदि आप नहीं आये तो मेरी शादी शिशुपाल से हो जायेगी, ऐसा समझना।"

इधर शादी की तैयारी हो गयी, शिशुपाल सपरिवार लग्न-मण्डप में कुंडनपुर आया। तब तक कृष्ण भी निश्चित स्थान पर आ गये। रुकमणी भी बताये हुये मन्दिर में गयी, कृष्ण ने कहा—चलो, हम इधर से निकल चलें।

तब रुकमणी रथ में बैठ गयी और कृष्ण ने पांचजन्य नामक शंख फूंका उसने इससे शत्रु को जागृत किया। यह गड़बड़ रुकमी और शिशुपाल के कान पर गई तब कृष्ण और शिशुपाल का युद्ध शुरू हो गया। रुकमणी डर गयी उसने कहा शिशुपाल

के पास बहुत सेना है और आप दो ही हैं। तब कृष्ण ने कहा "तू चिन्ता मत कर इसको हम दो ही बहुत हैं।"

शिशुपाल का वध हो गया तब उसकी सेना भाग गयी। तब कृष्ण रुकमणी को लेकर गिरनार पर्वत पर आये। वहां उनका विवाह हो गया और गुप्त रीति से द्वारका गये। सत्यभामा के महल के पास ही एक महल में रुकमणी को रखा और उसे पटरानी पद दिया।

यह बात सत्यभामा को ज्ञात हुई। उसने कृष्ण के पास रुकमणी से मिलने की इच्छा प्रकट की।

तब एक दिन कृष्ण ने सत्यभामा से कहा "प्रिय तू मणिवापिका के उद्यान में बैठ, मैं रुकमणी को वहां लेकर आता हूँ।"

सत्यभामा उस उद्यान में गयी। वहां रुकमणी पहले से ही जाकर बैठी थी। सत्यभामा ने उसे देखा उसके रूप से कोई वनदेवी होगी ऐसा समझकर रुकमणी को उसने आदर से नमस्कार किया और बोली "देवी तू मेरे पर प्रसन्न हो, रुकमणी का कृष्ण से प्रेम हट जाय ऐसा कुछ कर।" कृष्ण पास में ही छिपे हुए देख रहे थे। वे एकदम आगे आये और बोले—"रुकमणी से मिल लिये ?"

तब सत्यभामा गुस्से से बोली कि आप बीच में क्यों बोलते हो ? हम दोनों तो एक हो गयी हैं। तब रुकमणी को ज्ञात हुआ कि यही सत्यभामा है, तब उसे नमस्कार किया।

पर सत्यभामा मन में जलने लगी। वह गुस्से से अन्धी हो गयी। उसने गुस्से से उसके कपड़े निकालकर नग्न करने का सोचा। पर जैसे-जैसे वह वस्त्र खींचती गयी वैसे-वैसे उसके शरीर पर वस्त्र बढ़ते गये। हजारों वस्त्र उसने खींचकर निकाले पर पुनः उसके वस्त्र हो जाते थे।

इस प्रकार जब होता गया तो वनदेवता को सहन नहीं हुआ। वह प्रकट होकर बोली "रुकमणी महान पतिव्रता है इसने पहले जन्म में सकल सौभाग्य व्रत का पालन किया है, इसके कितने ही वस्त्र निकालोगी पर वह नग्न नहीं होगी इसलिये व्यर्थ का उपसर्ग करके पाप मत बांध।"

तब सत्यभामा शरमायी, उसको अपने कृतकृत्य का पश्चाताप हुआ। फिर दोनों एक हो गयीं। दोनों वनक्रीड़ा कर अपने-अपने महल में गयीं।

थोड़े दिन के बाद दोनों को गर्भ रहा एक ही दिन दोनों के पुत्र उत्पन्न हुये। यह बात बताने के लिये दोनों की दासियां कृष्ण के पास गयीं। कृष्ण सोये हुये थे इसलिए सत्यभामा की दासी सिर के पास व रुकमणी की दासी पैर के पास खड़ी थी, उठते ही कृष्ण की दृष्टि रुकमणी की दासी की ओर गयी, इसलिए उसे पहले रुकमणी के पुत्र-जन्म का पता लगा।

पूर्व के वैर से धूमकेतु असुर ने रुकमणी को मायावी निद्रा में सुला दिया, उसके लड़के का हरण किया और उसे एक जंगल में पत्थर के नीचे रखा। पूर्व-पुण्य से एक विद्याधर अपने विमान से जा रहे थे। पर उनका विमान उस स्थान पर एकाएक रुक गया। उस विद्याधर ने नीचे आकर देखा तो उसे पत्थर के नीचे एक छोटा-सा बालक दिखाई दिया। उसकी स्त्री कांचनमाला पुत्रहीन थी, इसलिए उस विद्याधर ने उससे कहा "अपने पुण्य-उदय से ही यह पुत्र हमें मिला है। इसलिए इसे तू ग्रहण कर। तुझे गुप्त गर्भ था और रास्ते में पुत्र उत्पन्न हुआ है, ऐसा सब को कहेंगे।"

बच्चे को देखते ही कांचनमाला को प्रेम उमड़ आया। उसने उसे उठा लिया। अपने राज्य में आकर पुत्र उत्पन्न होने का उत्सव मनाया और उसका नाम प्रद्युम्न रखा। वह लड़का धीरे-धीरे बढ़ने लगा।

इधर रुकमणी की निद्रा खुली तो शय्या पर बच्चे को नहीं देखा जिससे उसकी तलाश शुरू हुई। पर बच्चा कहीं भी नहीं मिला। रुकमणी दुख से चूर हो गई। यह कृष्ण को मालूम हुआ, उन्हें लगा कि मैं इतना बलवान हूं, फिर भी मेरे पर यह आपत्ति कैसे आयी। इसका उसे आश्चर्य हुआ। पर कर्म के आगे किसी की चलती नहीं है। कृष्ण ने रुकमणी को बहुत समझाया।

बहुत समय के बाद नारद वहां आये, वे बालक को ढूंढ़ने पूर्व विदेह में गये। उन्होंने सीमन्धर स्वामी के दर्शन किये और प्रश्न पूछा, तब उन्होंने कहा "पूर्व भव का वैरी उसे ले गया था और उसे एक पत्थर के नीचे रखा, वहां से विद्याधर जा रहा था वह उसको अपने नगर ले गया है।

तब नारद उस नगर में गया, वहाँ के राजा ने उसका स्वागत किया और

नारद रानी के महल में गया। वहां उसने प्रद्युम्न को देखा। फिर वह नारद द्वारका आ गया। सब बात उसने बता दी और कहा—

"आपका पुत्र वापस आयेगा पर अभी उसमें देरी है। जब इस वन में आकाली मयूर नृत्य करेंगे, मणिवापिका तुम्बड़ी में भरी जायगी तब आपका लड़का घर आया ऐसा समझना। तब तक आप दुःख मत करो, वह सुखी है, उसकी चिन्ता भी मत करो।"

इधर सत्यभामा का पुत्र बड़ा हो गया। उसका नाम भानुकुमार रखा। दुर्योधन ने अपनी पुत्री उसको देने का निश्चय किया। रुकमणी चिन्तित हुई। उस समय नारद पम्द्युन को लेकर द्वारका आया। पूर्व कहे अनुसार मोर नाचने लगे मणिवापिका भरी। यह देखकर पुत्र अब आयेगा ऐसा मालूम हुआ। माता-पिता से पद्युम्न ने भेंट की सब जगह आनंद ही आनन्द छा गया और दुर्योधन की पुत्री की शादी भानुकुमार से न होकर पद्युम्न कुमार से हुयी।

कई दिन चले गये, नेमिनाथ तीर्थंकर का समवशरण उस वन में आया। सब लोग दर्शन को गये। प्रभुमुख से धर्म-श्रवण किया, तब रुकमणी ने वरदत्त गणधर से पूछा "पूर्व भव में मैंने कौनसा पाप किया था जिसने मुझसे मेरे पुत्र को अलग किया ?"

तब गणधर ने कहा "पूर्व में मगध देश में लक्ष्मी ग्राम में सोमसेन ब्राह्मण रहता था। उसकी स्त्रो लक्ष्मीमति थी। उसने समाधिगुप्त मुनिराज की निंदा की जिसके कारण वह दुर्धर पाप से ग्रसित हुआ जिससे मरकर वह नरक में गयी। वहाँ से वह सात भव और लेकर नर्मदा के पेट से दुष्कुल में उत्पन्न हुई। जन्म लेते ही उसके माता-पिता मर गये, औरों ने ही उसका पालन किया। बड़ी होने पर वह भीख मांगने लगी।

एक दिन नदी किनारे मुनिराज को देखकर उसके मन में उनके दर्शन की इच्छा हुई। बड़ी भक्ति से उसने मुनि के दर्शन किये और मुनि से व्रत लिये। वहां से उसने मरकर नंदन श्रेष्ठि के घर मक्ष्मीमती नाम से जन्म लिया। श्रेष्ठी के घर मुनि आहार के लिये आये। श्रेष्ठी ने नवधाभक्तिपूर्वक उनको आहार दिया। उस समय लक्ष्मीमती ने उनके मुख से अपना पूर्व भव जान लिया। उनके पास से उसने यह व्रत लिया। व्रत का यथाविधि पालन किया। अन्त

में मरकर तू इस जन्म में आयी है । रुकमणी को आनंद हुआ, उसने वह व्रत स्वीकार किया और यथाविधि फिर से पालन किया ।

इस प्रकार इस व्रत की महिमा है । इसलिये अन्य जीवों को भी यह व्रत पालन करना चाहिये । जिससे सबका कल्याण हो ।

अथ संशयमिथ्यात्वनिवारण व्रत कथा

व्रत विधि :— पहले के समान करें । अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख शु. १४ के दिन एकाशन करें । १५ के दिन उपवास पूजा आराधना व मन्त्र जाप आदि करें । पत्ते मांडे ।

अथ स्थितीकरणांग व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान करे अन्तर सिर्फ इतना है कि कार्तिक शु. ५ को एकाशन करे, ६ के दिन उपवास पूजा आराधना करे ।

जाप :— **ॐ ह्रीं अर्हं स्थितीकरण सम्यग्दर्शनांगाय नमः स्वाहा** । ६ दम्पतियों को भोजन कराये ।

यह सम्यग्दर्शन स्थितीकरणांग पहले वारिषेण मुनि ने पालन किया था जिससे उसकी अच्छी गति हुयी ।

अथ संरक्षणानंद निवारण व्रत कथा

विधि :—कथा और विधि पूर्व के समान है । अन्तर सिर्फ इतना है कि वैशाख शु. ८ के दिन एकाशन करे । ९ के दिन उपवास करे । नवदेवता पूजा मन्त्र आराधना जाप करे । पत्ते मांडे ।

अथ सगरचक्रवर्ती व्रत कथा व्रत

विधि :—मार्गशीर्ष शुक्ला के पहले शनिवार को एकासन करना । रविवार को स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजाद्रव्य के साथ जिनालय जाये । तीन प्रदक्षिणा मन्दिर की लगाकर नंदादीप लगाये । विमलनाथ तीर्थंकर प्रतिमा पातालयक्ष व वैरोटीयक्षी सहित स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे । एक पाटे पर १३ स्वस्तिक बनाकर पान अक्षत फूल फल वगैरह रखें । अष्टद्रव्य से तीर्थंकर की पूजा करना ।

श्रुत व गणधर की पूजा करके यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव की अर्चना करे। पंचपकवान बनाकर चढ़ायें।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं विमलनाथ तीर्थंकराय पातालयक्ष वैरोटीयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प चढ़ायें। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे। इसकी कथा पढ़े। एक पात्र में १३ पान रखकर अष्टद्रव्य व नारियल लेकर महार्घ्य करे। उस दिन उपवास करना। सत्पात्रों को आहारादि देना। दूसरे दिन पूजा व दान करके पारणा करे। तीन दिन ब्रह्मचर्यपूर्वक रहें। इस प्रकार १२ रविवार तक करके फाल्गुन अष्टान्हिका में उद्यापन करे। उस समय विमलनाथ तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे। चतुःसंघ को चार प्रकार का आहारदान दे।

कथा

जम्बूद्वीप में पूर्व विदेहक्षेत्र में सीता नदी के दक्षिण में वत्सकावती देश में पृथ्वी नगर है। वहां जयसेन राजा राज्य करते थे। उनकी जयसेना पट्टरानी थी। उनके रतिषेण व धृतिषेण दो पुत्र थे।

एक दिन आहार निमित्त यशोधर नाम के महामुनीश्वर आये, जयसेन राजा ने प्रतिग्रहण करके अपने रसोई घर में ले जाकर आहारदान दिया। पश्चात् मुनिवर कुछ देर बैठे और धर्मोपदेश किया। यह सुन राजा ने अपना भवप्रपंच पूछा जिसे मुनिवर ने बताया। यह सुनकर राजा को संतोष हुआ। उसी समय उसने सगरचक्रवर्ति व्रत स्वीकार किया। मुनि ने सबको आशीर्वाद देकर विहार किया और राजा ने यह व्रत यथासमय तक पालकर उद्यापन किया।

कालांतर में रतिषेण पुत्र की अचानक मृत्यु हुई। पुत्र शोक से राजा को वैराग्य उत्पन्न हुआ। अतः धृतिषेण पुत्र को राज्यभार देकर मारुत व मिथुन राजा के साथ यशोधर मुनि के पास जिनदीक्षा लेकर कई दिनों तक तपस्या करके समाधि की जिससे आरण स्वर्ग में महाबल नाम के देव हुए।

इनके साथ दीक्षित मारुत भी उसी स्वर्ग में मणिकेतु नाम के देव हुए। वे दोनों देव प्रेम से रहते थे।

एक दिन दोनों ने प्रतिज्ञा की कि हम दोनों में से जो प्रथम मनुष्य-भव

धारण करेगा उसे देवलोक में रहने वाला विरक्त करके जिन दीक्षा के लिए प्रेरणा दे। महाबल वहां से च्युत होकर अयोध्या में समुद्र विजय व धर्मपत्नी सुबला के सगर नाम के पुत्र हुए। युवावस्था में उन्हें चक्रवर्ती पद मिला। इतने ऐश्वर्य प्राप्ति के बाद भी वह धर्ममार्ग को भूलते नहीं थे। उनके साठ हजार पुत्र हुए।

कालांतर में श्रीधर चतुर्मुख मुनिश्वर को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। तभी चतुर्णिकाय देव वहां आये। उस समय मणिकेतु देव ने सगर चक्रवर्ती से अपने पहले भव की बात जो जिनदीक्षा के लिए कहा था विषय भोग दुख और संसार परिभ्रमण के कारणीभूत है। अपनी प्रतिज्ञा पालने हेतु ही मैं इतना निवेदन कर रहा हूं। किन्तु पुत्रमोही सगर पर उस समय कोई प्रभाव नहीं पड़ा। यह देख निराश होकर मणिकेतु देव चले गये।

कुछ दिन पश्चात् मणिकेतु देव निर्ग्रन्थ मुनि का वेष धारणकर सगर चक्रवर्ती के जिन मन्दिर में गये। यह सुन चक्रवर्ती ने आकर नमस्कार किया। पश्चात् पूछा कि आपने यौवनावस्था में यह दीक्षा क्यों धारण की ? मुझे आश्चर्य हो रहा है। तब मुनिवर बोले यह धन-वैभव सब विनाशशील है, अतः जिनदीक्षा लेकर आत्म-कल्याण करना उचित है, किन्तु वह किंचित भी वैराग को प्राप्त नहीं हुए।

एक दिन चक्रवर्ती से उनके साठ हजार पुत्रों ने कार्य देने के लिए निवेदन किया किन्तु राजा ने काम बिना सौंपे ही वापस भेज दिया। यदि कभी जरूरत पड़ी तो तुम्हें बुला लूंगा। कुछ दिन बाद वे पुनः पिता के पास आकर कार्य सौंपने के लिए निवेदन करने लगे। जब तक काम नहीं सौंपेंगे हम भोजन नहीं करेंगे। तब पिता बोले कैलाश पर्वत पर भरत चक्रवर्ती ने तीर्थंकरों के सुवर्णमय मन्दिर बनाये हैं जिनमें अमूल्य रत्नमयी प्रतिमा स्थापित की है। पंचम काल में अत्यंत विषय-मोही लोग उत्पन्न होंगे जिनसे संरक्षण होना आवश्यक है अतः तुम जाकर उस पर्वत के चारों ओर खाई खोदकर गंगा नदी का पानी भर दो। सब ने आनंदित होकर दण्ड रत्न की सहायता से गड्ढे तैयार कर लिये पश्चात् गंगा नदी के पानी हेतु हिमवान पर्वत पर गये। यह मालूम पड़ते ही मणिकेतु देव वहां पहुंच गये और भयंकर दृष्टि विषधर सर्प रूप धारणकर विषारी फुंकार छोड़ा जिससे सब राजपुत्र मूर्छित हो गये। यह

समाचार प्रधान मन्त्री को ज्ञात हुए पर पुत्र-मोह से पिता दुखी होंगे यह सोच उसने हकीकत नहीं बतायी ।

तब उस मणिकेतु देव ने ब्राह्मण रूप धारण किया और चक्रवर्ती के पास गया और रोते हुए भी हकीकत नहीं बतायी परन्तु बोला मेरा एक ही पुत्र था, वही कमाकर खिलाता था, किन्तु दुर्भाग्य से वह मर गया । अब वह मुझे कैसे प्राप्त होगा यह मुझे चिन्ता हुई है । इसको आप ही दूर कर सकते हैं । दूसरा कोई नहीं कर सकता है । इसलिये मैं आपकी शरण में आया हूँ । इसलिये आप कुछ उपाय मुझे बताओ ऐसी मेरी बिनती है । ऐसा सुनकर चक्रवर्ती को बड़ी हंसी आई और उन्होंने कहा हे विप्र महाराज ! आप बड़े भोले हैं । जो मरण को प्राप्त होता है वह वापस जीवित कैसा होगा । काल सबको आता है चाहे वह छोटा हो चाहे वह बूढ़ा हो चाहे जवान हो । वह जीवित कैसे होगा । अब थोड़े ही दिन में तुम्हें भी काल नहीं छोड़ेगा । यदि आप भी अपनी रक्षा चाहते हैं तो जिनदीक्षा धारण करो इसी में आपका आत्म-कल्याण है । यह सब सुन बाह्मण बोला कि यदि काल किसी को नहीं छोड़ता तो फिर एक आवश्यक बात है उसे सुनो मैं कहने के लिये भूल गया था मुझे क्षमा करो । जब मैं आ रहा था तब लोग आपस में बोल रहे थे कि बहुत बुरा हुआ । महाराजा के साठ हजार पुत्र कैलाश पर्वत के चारों तरफ खाई खोदने गये थे वे सब अचानक मरण को प्राप्त हुये । इतना वाक्य पूरा राजा ने सुना नहीं कि राजा को चक्कर आ गया, मूर्च्छित होकर गिर गये तब सेवकों ने उनका शीतोपचार किया जिससे राजा की मूर्छा दूर हुई । तब समय पाकर विप्र ने इस क्षणिक संसार से वैराग्य उत्पन्न होने वाला धर्मोपदेश दिया । जिससे उस ब्राह्मण वेषधारी देव का कार्य सिद्ध हो गया ।

फिर जिसके मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ है ऐसे चक्रवर्ति ने अपने पुत्र भागीरथ को राज्य देकर दृढ़धर्म केवली के पास निर्ग्रंथ दीक्षा ली । तब उस विप्र ने कैलाश पर्वत पर जाकर उन सब पुत्रों को सचेत करके उनसे कहा हे राजपुत्रो ! आपके पिताजी आपके मृत्यु के समाचार सुनकर अत्यन्त दुःखी हुये और विरक्त होकर जिनदीक्षा ग्रहण करली, इसलिए मैं आपका पता लगाते-लगाते यहां आया हूं इसलिये आप जल्दी ही अपनी नगरी में जाओ । यह सुन उन्हें बहुत दुःख हुआ

तब वे विप्र से बोले—महाराज ! अब हम नगर की ओर नहीं जाते हैं हमारे पिताजी ने संसार छोड़कर जिस मार्ग को अपनाया है वही मार्ग हमारा है, इसलिए आप नगर में जाकर भागीरथ से कह दें कि वे हमारी चिन्ता न करें। ऐसा कहकर सबने दृढ़धर्मकेवली के पास जाकर अपने पिताजी के समान जिनदीक्षा धारण की।

बाद में उस विप्र ने अयोध्यापुरी में आकर भागीरथ को बीती हुई सब बातें बतायी, यह सुनकर उसको भी वैराग्य उत्पन्न हुआ। परन्तु पीछे राज्य देखने वाला कोई भी नहीं था, अतः वह श्रावक के व्रत लेकर घर में ही पालन करने लगा।

फिर वह ब्राह्मण वेषधारी देव उस सगर चक्रवर्ती के पास गये। उन्हें नमस्कार कर उन्होंने कहा—हे मुनिवर्य ! मैंने बहुत बड़ा अपराध किया जो आप क्षमा करें। मैं सेवक हूं यह सब मैंने आपको सन्मार्ग में लगाने के लिए किया था। तब सगर बोले—इसमें क्षमा करने का तुमने कौनसा अपराध किया है। उल्टा तुमने मेरे पर उपकार किया है, मित्र-स्नेह के कारण तुमने जो उपकार किया है वैसा करने में कौन समर्थ है। आप श्री जिनेश्वर के सच्चे भक्त हो। यह सब सुनकर उस मणिकेतु को बहुत ही आनन्द हुआ। मणिकेतु भक्ति से सबको वन्दना करके घर गया।

वह मुनि संघ विहार करते-करते श्री सम्मेदशिखरजी पर आया, वहां पर उन मुनिमहाराजों ने कठोर तप किया जिससे कर्मक्षय कर मोक्ष गये। यह बात जब भागीरथ राजा ने सुनी तो उसने भी अपने पुत्र वरदत्त को राज्य देकर कैलाश पर्वत पर जाकर शिवगुप्त मुनि के पास दीक्षा ली।

वे भागीरथ विहार करते-करते उस नदी के तट पर आये वहां प्रतिमा योग आतापन योग वगैरह से तपश्चर्या की। उससे उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ यह जानकर देव वहां आये। उन्होंने उनके चरणों का अभिषेक किया जिससे बहुत ही पानी बहकर आया तो लोग उसी को गंगा नदी कहने लगे और उसी को पवित्र समझ कर उसमें स्नान करने लगे।

फिर वे भागीरथ मुनिराज शुक्लध्यान के योग से सर्व कर्मों का नाश कर मोक्ष गये और वहां अनन्त सुख का अनुभव करने लगे। ऐसा पूर्व जन्म में किये गये व्रत का माहात्म्य है।

अथ सुकुमारव्रत कथा

व्रत विधिः—१२ महीनों में किसी भी महीने के शुक्ल पक्ष की चतुर्थी या कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को एकाशन करे। सम्पूर्ण विधि पहले के समान करे।

जाप :—ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा

इस मन्त्र का जाप १०८ पुष्पों से करे।

कथा

इस जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र में अवंति नामक देश है, उसमें उज्जयनी नामक एक मनोहर नगर है। उसमें प्रधोतन नामक राजा राज्य करता था। उसके नगर में सुरेन्द्रदत्त नामक एक बड़ा गुणशील, सुन्दर, सुकोमल सेठ रहता था, उसको यशोभद्रा नामक पत्नी थी। ३२ कोटि धन का स्वामी था पर उसको पुत्र नहीं था, इसलिये वह चिन्ता में अपना समय निकालता था।

एक दिन नगर के उद्यान में शीलसागर नामक महामुनि संघ सहित आये। यह शुभ समाचार राजा ने सुने तो वह दर्शन करने के लिये गये वहां भक्ति से तीन प्रदक्षिणा देकर वन्दना की। फिर बहुत समय तक धर्मोपदेश सुना फिर राजा विनय से हाथ जोड़कर कहने लगा कि हे ज्ञानसिंधो स्वामिन ! आपकी कृपा से मुझे सब कुछ प्राप्त हुआ है पर मात्र हमारे पुत्र नहीं है इसलिये हम दुःखी हैं। अतः अब हमें पुत्र होगा कि नहीं और उसके लिये हम कौनसा व्रत करें, यह बात हमें आप कृपा करके कहें। यह सुन मुनिश्वर ने उनसे कहा—हे भव्य श्रेष्ठिन ! अब आपको बड़ा पुण्यशाली व भव्य पुत्र उत्पन्न होने वाला है उसके लिये आप सुकुमार व्रत का पालन करो। ऐसा कह कर उन्होंने व्रत की सब विधि बतायी। यह सुन उसको बहुत आनंद हुआ। सब दर्शनकर अपने-अपने स्थान चले गये। फिर सुरेन्द्रदत्त श्रेष्ठी व उसकी पत्नी ने इस व्रत का पालन किया और उद्यापन भी किया।

उसके बाद यशोभद्रा को गर्भ रहा। उसके नव महिने पूर्ण होने पर सुकुमार नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्र का मुख देखते ही श्रेष्ठी को वैराग्य उत्पन्न हुआ जिससे उसने जंगल में जाकर जिनदीक्षा ली। घोर तपश्चरण करके समाधिपूर्वक शरीर छोड़ा जिससे वह स्वर्ग गये और चिरकाल सुख भोगने लगे।

इधर सुकुमार के बड़ा होने पर उसकी माता ने ३२ कन्याओं से उसकी शादी करवायी। सुकुमार सुख से समय बिताने लगा। एक बार उनके घर के सामने बगीचे में एक अवधिज्ञानी मुनि चातुर्मास के निमित्त रुके। वहां उन्होंने वर्षा योग धारण किया।

चातुर्मास पूर्ण होने के दिन प्रात:काल में वह मुनि त्रिलोक प्रज्ञप्ति का पाठ करने लगे। जब वह पाठ सुकुमार के कानों में पड़ा तो उसको पूर्वभव का स्मरण हो गया। इसलिये वे उसी समय वैराग्य को धारण कर उन मुनिश्वर के पास गये, महाराज ने अवधिज्ञान से सब जान लिया था। इसलिये उससे कहा कि हे भव्य! अब तेरी आयु तीन दिन की बची है इसलिये तू अपना आत्म-कल्याण कर। सुकुमार को भी आश्चर्य हुआ। उन्होंने उसी समय दिगंबरी दीक्षा ली। घोर उपसर्ग सहन कर समाधि से मरण को प्राप्त हुये जिससे वे अच्युत स्वर्ग में देव हुये। वहां वे चिरकाल सुख भोगकर अनुक्रम से मोक्ष जायेंगे।

अथ सुभौम चक्रवर्ति व्रत कथा

आषाढ़ शु. ७ के दिन एकाशन करे अष्टमी के दिन सुबह शुद्ध कपड़े पहन कर अष्ट द्रव्य लेकर मन्दिर जाये। पीठ पर उद्धर भूतकाल के तीर्थंकर की प्रतिमा स्थापना कर पंचामृत अभिषेक करावे। भगवान के सामने एक पाटे पर स्वस्तिक निकालकर उस पर अष्ट द्रव्य रखे। निर्वाण से उद्धर तक तीर्थंकरों की पूजा अर्चना करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं उद्धर तीर्थंकराय नम: स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे आरती करे, उस दिन उपवास करे। दूसरे दिन पूजा दान करके पारणा करे। इस प्रकार अष्टमी व चतुर्दशी ८ पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

उस दिन उद्धर तीर्थंकर का विधान कर महाभिषेक करे। चतुर्विध संघ को दान दे। मन्दिर में बर्तन आदि दे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में आर्य खण्ड है, उसमें काश्मीर नामक देश है, उसमें भूतिलक नामक नगर है। वहां प्राचीन काल में भूपाल नामक राजा राज्य करता था। उसकी स्त्री, पुरोहित, मन्त्री, श्रेष्ठी, सेनापति आदि परिवार था।

एक दिन संभूत नामक दिगम्बर दिव्यज्ञानी मुनिश्वर आहार चर्या के लिए वहां आये। तब राजा ने नवधाभक्तिपूर्वक आहार दान दिया। फिर मुनिश्वर एक पाटे पर बैठ गये। राजा ने हमें कोई व्रत दो ऐसा कहा तब उन्होंने सुभौम चक्रवर्ती व्रत करने के लिये कहा। विधि भी पहले के समान सब बता दी। राजा ने यह व्रत किया।

एक दिन शत्रुओं से युद्ध में लड़ रहा था, वह हार गया। मान भंग होने से उसके मन में तत्काल वैराग्य उत्पन्न हुआ। जिससे उन्होंने जंगल में जाकर जिनेश्वरी दीक्षा ली। चक्रवर्ती को देखकर उन्होंने निदान किया अन्त समय समाधि पूर्वक मरण हुआ, महा शुक्र में देव हुआ, स्वर्गीय सुख भोगकर जमदग्नि नामक राजा हुआ, कुमार अवस्था में ही उसे वैराग्य हो गया जिससे मिथ्यातापसी होकर पंचाग्नितप तपने लगा।

इधर एक नगर में दृढ़ग्राही नामक राजा राज्य करता था। वहां हरिवर्मा नामक ब्राह्मण रहता था। दोनों का आपस में बहुत प्रेम था, एक दिन इन दोनों को संसार से वैराग्य हो गया जिससे दोनों ने जिनदीक्षा धारण की और घोर तपश्चर्या करने लगे। अन्त समय में समाधिपूर्वक मरण हुआ जिससे दृढ़ग्राही तो शतार स्वर्ग में व हरिवर्मा ज्योतिलोक में ज्योतिषि देव हुआ। एक बार दोनों देव अचानक सम्मेदशिखर के दर्शन करने आये। वहां वे तपस्या के महत्व की चर्चा कर रहे थे। उन्होंने वहां जमदग्नि को तपस्या करते देखा, वे पक्षी बनकर उस तापस के आश्रम में घोंसला बना कर रहने लगे।

एक दिन दोनों पक्षी आपस में कहने लगे कि आज मैं जंगल में गया था वहां मुझे एक बात सुनने को मिली है वह बहुत ही खराब है तब दूसरे पक्षी ने कहा वह बात कौनसी है ? तब उसने कहा इस जमदग्नि को नरक की गति प्राप्त होगी। इस प्रकार का पक्षियों का वार्तालाप सुनकर वह जमदग्नि बहुत ही गुस्से से उनके पास आया और पूछने लगा कि मुझे नरक गति मिलेगी यह तुम्हें कैसे ज्ञात हुआ ? तब एक पक्षी ने कहा 'अपुत्रस्य गति नास्ति' ऐसे शास्त्र में कहा गया है। यह सुन उसको पश्चाताप हुआ।

आज तक किया गया तप व्यर्थ गया ऐसा सोचकर वह उसी समय उज्जयनी नगरी गया। वहां पर पारद नामक नरपति राज्य करता था। वह उसका मामा

था । जमदग्नि ने अपना पूरा वृतान्त सुना दिया और कहा कि आपकी कोई भी एक कन्या मुझे दें । तब राजा ने अपनी चार लड़कियां उसके पास भेजी पर तीन लड़कियाँ तो डर कर भाग गयी पर एक लड़की को बहुत कुछ चीजें देकर खुश कर लिया । उसे वह तापस अपने आश्रम में ले गया, वहां पर उसका उसने पालन-पोषण किया । जब वह बड़ी हो गई तो उसने उससे शादी कर ली । बहुत समय जाने पर उसको पतिराम व परशुराम ऐसे दो पुत्र उत्पन्न हुये ।

एक दिन अरिंजय नामक मुनि उस आश्रम में गये तब रेणुकी ने यह मेरा भाई है ऐसा सोचकर वंदना की । तब उन मुनि ने उससे कहा हे कन्या ! आज सम्यग्दर्शन रूपी धन देने आया हूं जिससे तुझे स्वर्गादि सुख की प्राप्ति होगी । ऐसा कहकर उसको कामधेनु व विद्यामन्त्र व एक परशु देकर चला गया ।

एक बार सहस्रबाहु राजा उद्यान की शोभा देखने वहां आया, तब रेणुकी ने उस कामधेनु से स्वादिष्ट भोजन मांगकर उसे भोजन कराया । भोजन अति स्वादिष्ट था, खाकर राजा ने कहा यह क्या है ? उसने कहा अरिंजय मुनिश्वर ने दिया है, तब वह राजा जबरदस्ती उस कामधेनु को लेकर जाने लगा, तब उस पतिराम व परशुराम ने उनके दुःख को दूर किया और अनेक विद्याए सिद्ध कीं ।

एक दिन दोनों भाइयों ने साकेत नगरी में रात्रि को जाकर सहस्रबाहु को मारकर उसका राज्य छीन लिया । इसके पहले सहस्रबाहु की रानी गुप्त रीति से शांडिल्य नामक तापस के आश्रम में चली गई थी । उसके गर्भ से महाशुक्र से आया हुआ देव सुभौम बनकर आया । उसका पालन–पोषण वह कर रही थी । एक दिन अचानक शिवगुप्ति नामक महामुनि चर्या के निमित्त से उस आश्रम में आये, तब उस चित्रावती ने उनको नवधाभक्तिपूर्वक पडगाह कर निरंतराय आहार कराया । महाराज आहार के बाद बाहर बैठे थे तब चित्रावती ने अपने पुत्र का सब वृतान्त पूछा । तब अवधिज्ञान से समस्त भविष्य जानकर उसको बताया यह १५ वर्ष की उम्र में षटखंड का अधिपति होगा, यह कहकर वे मुनि वहां से चले गये ।

इधर पतिराम व परशुराम ने बयालीस बार क्षत्रिय वंश का निर्मूल नाश किया था । एक बार उनके घर के ऊपर उल्कापात हुआ । उस समय एक नैमित्तिक को

बुलाकर उससे पूछा तो उस नैमित्तिक ने बताया कि तुम्हारा कोई शत्रु उत्पन्न हुआ है। वह तुम्हारा नाश करेगा। यह सुन उन्होंने परीक्षा करने के लिये एक यंत्र तैयार किया। इधर उस सुभौम राजा की माता अपने पुत्र के साथ अपने घर आयी और सारा वृतान्त सुना। यह सुन उसने अपनी मां का सब दुःख निवारण किया।

एक दिन उस सुभौम राज-पुत्र का अतिशय रूप देखकर उस राजा के परिचारक उस आश्रम में गुप्त रीति से जाकर देखने लगे और अपने राजा परशुराम व पतिराम को सब बात सुनाई तब बहुत सेना लेकर हाथी पर बैठकर जा रहे थे। पर सुभौम राज-पुत्र के पूर्व-पुण्य के कारण एकाएक उसकी आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ और उसके सामने आकर खड़ा रहा। तब उस सुभौम चक्रवर्ति ने उस परशुराम को तत्काल मार डाला और सबको अभयदान दिया और ब्राह्मण वंश का निर्मूलन किया। वह १६ वर्ष की आयु में ही चक्रवर्ती पद को प्राप्त कर छः खण्ड का अधिपति हो गया था। उसकी आयु साठ हजार वर्ष की थी। उसकी ऊंचाई अट्ठाईस हाथ थी। वह सब प्रकार के भोगों को भोग रहा था।

एक दिन अमृत रसायन नामक एक बाण उसे मिला। उसने वह बाण एक प्राणी को मारा जिससे वह मरकर ज्योतिषी देव हुआ। वहां उसने अपने अवधिज्ञान से जान लिया कि मुझे पूर्व भव में राजा ने मारा था। इसलिए बदला लेने की भावना से वणिक का रूप लेकर आम लेकर आया और सब को बताने लगा। तब राजा ने उसे बुलाया और वह राजा को साथ लेकर समुन्द्र के पास गया और यह सम्यक्त्वी है ऐसा सोचकर उसे णमोकार मन्त्र लिख कर पोंछने के लिए कहा तब राजा ने वैसा ही किया जिससे वह सम्यक्त्वहीन हो गया। तब उसके ऊपर अनेक उपसर्ग किये और फिर मार डाला जिससे क्रोधभाव से मरा। अतः वह नरक गया और सहस्रबाहु ने लोभवश तिर्यंच गति में जाकर जन्म लिया। वह जमदग्नि के पुत्र पतिराम व परशुराम हिंसा के कारण नरक गए। वह सुभौम भी नरक गया फिर भी उस व्रत के प्रभाव से भविष्य काल में तीर्थंकर होगा।

सारस्वत व्रत कथा

(मार्गशीर्ष कृष्णा ६ को) पोष कृष्ण ६ नवमी एकाशन कर दशमी को प्रातः शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, तीन प्रदक्षिणापूर्वक भगवान को नमस्कार करे, अखण्ड

दीप जलावे, पंचपरमेष्ठी की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, पंचपरमेष्ठि की पृथक्-पृथक् जयमालपूर्वक पूजा करे ।

ॐ ह्रीं अर्हं गर्भावतार कल्याण पूजिताय श्री जिनेन्द्राय नमः स्वाहा ।

ॐ ह्रीं जन्माभिषेक कल्याण .... नमः स्वाहा ।

इसी प्रकार पांचों कल्याणक के मन्त्रों से क्रम से अष्ट द्रव्य से पूजा करे । श्रुत व गुरु की पूजन करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, पंच पकवान चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा पंचकल्याण पूजितेभ्य श्री जिनेन्द्रेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का जाप्य करे, सहस्रनाम पढ़े, व्रत कथा पढ़े, स्वाध्याय करे, अर्घ्य के साथ नारियल रखकर पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे सत्पात्रों को दान देवे, दूसरे दिन दान पूजा करके स्वयं पारणा करे, तीन दिन स्वयं ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे ।

इस प्रकार पांच दशमी को व्रत करके अन्त में उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठी विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

इस व्रत का पालन अन्त में राजा सुग्रीव ने किया था, उस के फलस्वरूप मोक्ष को गया ।

कथा

श्रेणिक राजा व चेलना रानी की कथा पढ़े ।

सीतादेवी व्रत कथा

कोई भी नन्दीश्वर, अष्टान्हिका पर्व में पंचमेरु की स्थापना कर विधिपूर्वक पंचामृताभिषेक करे, मण्डल मांडकर पंचमेरु की स्थापना कर अष्टद्रव्य से पूजा करे, प्रत्येक मेरु की अलग-अलग प्रतिमाओं की पूजा करे, अस्सी जिनालयों की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं पंचमन्दिर स्थित जिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी की पूजा करे, क्षेत्रपाल की पूजा करे, व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ्य हाथ में

लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य चढ़ा देवे। इस प्रकार आठ दिन पूजा कर सत्पात्रों को दान देवे, स्वयं आठ वस्तुओं में से एक वस्तु से पारणा करे, एकाशन करे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, धर्मध्यान से समय बितावे, पांच पूजा पूरी होने पर उद्यापन करे, उस समय पंचमेरु विधान करके पंचामृताभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे।

कथा

विजयार्ध पर्वत पर जलकापुर नाम का नगर है, उस नगर में अमितवेग नाम का राजा अपनी वेगावति नाम की रानी के साथ सुख से राज्य करता था, उस राजा के मणिमाला नाम की यौवनवति एक सुन्दर कन्या थी, वह कन्या महान विदुषी थी।

एक दिन उसके घर पर मुनिराज आहारचर्या के लिए आये, निरन्तराय आहार होने के बाद ऊंचे आसन पर मुनिराज को बैठाकर प्रार्थना करने लगी कि गुरुदेव मुझे कोई व्रत प्रदान करें, जिससे मुझे मोक्ष की प्राप्ति हो। तब मुनिराज ने कहा कि हे कन्ये! तुम सीतादेवी व्रत का पालन करो, और व्रत की विधि कही, कन्या ने व्रत को ग्रहण किया, मुनिराज जंगल को वापस चले गये।

मणिमाला अष्टान्हिका में एक दिन पूर्व मन्दर मेरु पर जाकर पूजा कर जप ध्यान करके बैठी थी कि एक नरदेव नाम का विद्याधर राजा वहां आया और उस कन्या पर आसक्त होकर पूजा में विघ्न करने लगा, और कर करा कर चला गया। आगे कुछ दिनों में उस कन्या ने आर्यिका दीक्षा ले ली और घोर तपश्चरण करने लगी, इतने में वो विद्याधर वहां आकर उसके तप में विघ्न उपस्थित करने लगा, तब उस कन्या ने निदान किया कि मैं तेरे भोगों में विघ्न उपस्थित करूंगी और मरकर स्वर्ग में देवी हुई, वहां से चयकर वह सीता हुई और वह नरदेव मरकर रावण हुआ। कालान्तर में वह रावण के मरने में कारण बनी।

योगधारण व्रत कथा

ज्येष्ठ शुक्ल तेरस को शुद्ध होकर पूजा कर एकाशन करे और चतुर्दशी के दिन प्रातःकाल शुद्ध वस्त्र पहनकर जिनमन्दिर में जावे, वहां मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, चंद्रप्रभु भगवान

की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापन कर, पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, जिनागम व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चंद्रप्रभ तीर्थंकराय श्यामयक्ष ज्वालामालिनी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, उसी प्रकार **ॐ ह्रीं अष्टांग योगधारक सप्तऋद्धि संपन्नाय गणधर देवाय नमः स्वाहा ।**

इस मन्त्र से भी १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, यह व्रत कथा पढ़े, एक अर्घ्य लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य चढा देवे, उस दिन उपवास करे, दूसरे दिन पूजाभिषेक दानादि करके स्वयं पारणा करे, तीन दिन ब्रह्मचर्यपूर्वक धर्मध्यान से समय बितावे, इसी प्रकार आठ महिने तक पूजाक्रम करके अन्त में व्रत का उद्यापन करे, उस समय चंद्रप्रभ विधान करके महाभिषेक करे, आठ प्रकार का नैवेद्य चढ़ावे, आठ मुनि आर्यिकाओं को दानादि उपकरण देवे ।

कथा

वासुपूज्य तीर्थंकर के काल में नरपति नाम का राजा दीक्षा धारण कर घोर तपश्चरण करने लगा, अन्त में समाधिमरण कर योग धारण करता हुआ व्रत के फल से अहमिन्द्र देव हुआ । वहां से चयकर इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में धर्मनाथ के काल में कौशल देश की अयोध्या नगरी में सुमित्र राजा के यहां मघवा होकर उत्पन्न हुआ, वह मघवा चक्रवर्ति हुआ, वह चक्रवर्ति कुछ दिन राज्य कर दीक्षा धारण करके, योग व्रत को धारण करके घोर तपश्चरण करता हुआ अन्त में अष्ट कर्मों को नासकर मोक्ष को गया ।

सहस्रनाम व्रत कथा

चैत्र महिनादिक में कोई भी महिने के शुभ दिन में इस व्रत को प्रारम्भ करे, स्नान कर-शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा सामग्री लेकर जिनमन्दिरजी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर आदिनाथ भगवान की मूर्ति स्थापन कर पंचामृत अभिषेक

करे, पंचकल्याण के अर्घ्यपूर्वक पूजा करे, यक्षयक्षणी व क्षेत्रपाल की भी पूजा करे, पंच पकवान चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आदिनाथाय गोमुख चक्रेश्वरी यक्ष यक्षि सहिताय नमः स्वाहा । इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का भी १०८ बार जाप्य करे ।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमते नमः स्वाहा, ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंभूवे नमः स्वाहा, ॐ ह्रीं अर्हं वृषभाय नमः स्वाहा इत्यादि १००८ नाम के मन्त्र बोलकर अर्घ्य चढ़ावे, उसी प्रकार इन मन्त्रों का एक सौ आठ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, सहस्रनाम पढ़े, स्वाध्याय करे, व्रत कथा पढ़े, उसके बाद शास्त्र व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की पूजा करे, एक थाली में नारियल सहित अर्घ्य लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे अथवा एकाशन करे । इस प्रकार इस व्रत को एक वर्ष करके उद्यापन करने वाले को सात भव से मोक्ष होता है, दो वर्ष व्रत करके उद्यापन करने वाले को पांच भव से मोक्ष, तीन वर्ष व्रत करके उद्यापन करने वाले को तीन भव से मोक्ष होता है, इस व्रत में १००८ उपवास करने होते हैं अथवा इतने ही एकाशन करने होते हैं, व्रत को पूरा होने पर उद्यापन करे, उस समय सहस्र नाम विधान करे, एक हजार आठ नैवेद्य चढ़ावे, उतने ही कमल पुष्प चढ़ावे, एक हजार आठ कलशों से महाभिषेक करे, चारों प्रकार के संघ को चार प्रकार का दान देवे, एक ही दिन में सर्व पूजा करे ।

इस व्रत में राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

अथ स्नेहनय व्रत कथा

विधि :—पहले के समान सब विधि करें, अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ शु. १४ को एकाशन करे १५ के दिन उपवास करे, णमोकार मन्त्र का जाप दो बार करे, दो दम्पतियों को भोजन कराये ।

कथा

पहले विजयपुर नगरी में विजयसेन राजा अपनी प्रिय प्राणवल्लभा पटरानी विजायवती सहित रहता था । उसका प्रधान मन्त्री जयवंत, उसकी पत्नी

जयावती, पुरोहित विशालकीर्ति उसकी पत्नी विशालमती, राजश्रेष्ठी प्रियदत्त और उसकी पत्नी प्रियमित्रा ये पूरा परिवार सुख से रहता था। एक दिन उन्होंने जयविजय नामक चारण मुनि से यह व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन करके सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गये।

अथ स्त्री वेदनिवारण व्रत कथा

विधि :—पूर्व के समान करे अन्तर सिर्फ इतना है कि चैत्र कृष्णा १ के दिन एकाशन करे २ को उपवास करे। श्रेयांसनाथ तीर्थंकर की पूजा, जाप, मन्त्र आदि के पत्ते माड़ले आदि करे।

सप्तर्द्धि व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल अष्टमी के दिन शुद्ध होकर जिनमन्दिर जी में जावे, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, सुपार्श्वनाथ की यक्षयक्षि की प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, गणधर व श्रुत की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, सप्त परमस्थान के साथ अर्घ चढ़ावे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुपार्श्वनाथाय नंदिविजययक्ष कालियक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे, दूसरे दिन पूजा दान करके पारणा करे, मुनिश्वरों को दान देवे।

कथा

इस व्रत को कच्छ महाकच्छ राजाओं ने किया था, उसके प्रभाव से सर्वकर्मों का क्षय कर मोक्ष को गये।

व्रत में राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

अथ सत्यवचन महाव्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे अन्तर केवल इतना है कि ५ के दिन एकाशन करे, ६ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, दो दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे। सम्मान करे।

कथा

पहले भानुपुर नगरी में भानुरथ राजा भानुमती अपनी महारानी के साथ रहते थे। उसका पुत्र भानुकुमार उसकी स्त्री भानुदेवी। शिवाय भानुधति मन्त्री उसकी स्त्री भानुश्री, भातुकीर्ति पुरोहित उसकी स्त्री भानुज्योति, भानुदत, सारा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने भानुप्रताप मुनि से व्रत लिया, उसका यथाविधि पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गये।

अथ संयतासंयत व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ कृ. ३ के दिन एकाशन करे, ४ के उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, सात दम्पतियों को भोजन करावे। वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले मयूरपुर नगरी में मयूरसेन राजा मयूरवदनी अपनी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र मयूरकंठ और मयूरकंठि, शिवाय मयूरग्रीव उसकी स्त्री मयूरग्रीवी, मयूरकीर्ति पुरोहित, उसकी स्त्री मयूरसुन्दरी, मयूरदत्त श्रेष्ठी, उसकी स्त्री मयूरदत्ता, सारा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने मयूरसागर मुनि से व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ सूक्ष्मसांपरायचारित्र व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ शु. ५ के दिन एकाशन करे, ६ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, ४ दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले पीतपुर नगरी में पीतप्रभ राजा पीतमहादेवी अपनी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र पीतमंदर और उसकी स्त्री पीतसुन्दरी। और पीतपातक मन्त्री उसकी स्त्री पीतगुणिनी, पीतकीर्ति पुरोहित उसकी स्त्री पीतवदना, पूरा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने पीतसागर गुरु से दर्शन करके यह व्रत लिया इसका यथाविधि पालन किया। सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ सामायिक चारित्र व्रत कथा

व्रत विधि :—आषाढ़ शु. १२ के दिन एकाशन करे और १३ को उपवास करे। शुद्ध कपड़े पहनकर अष्टद्रव्य लेकर मन्दिर जावे, वेदीपर पञ्चपरमेष्ठी प्रतिमा स्थापित कर पंचामृत अभिषेक करे। अष्टद्रव्य से अर्चना पूजा करे। महार्घ्य देवे, आरती करे।

जाप :— ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे। यह कथा पढ़े। दूसरे दिन दान पूजा करके पारणा करे। ३ दिन ब्रह्मचर्य पाले।

इस प्रकार १५ दिन में एक बार इस तिथि को उपवास करे। रोज क्षीराभिषेक करे। ऐसी ६ पूजा पूर्ण होने पर कार्तिक के नन्दश्विर पर्व में उद्यापन करे। उस समय पंचपरमेष्ठी व्रत विधान करे। महाभिषेक करे। १ दम्पति को भोजन कराकर उसका सम्मान करे। १०८ आम १०८ केले चढ़ावे, १०८ कमल पुष्प चढ़ावे १०८ जिनचैत्यालयों की वंदना करे। ऐसी इस व्रत की विधि है।

कथा

पहले गंगापुर नगर में गंगासेन नामक राजा अपनी गंगादेवी पट्टरानी के साथ राज्य करता था। उनको गंगाधर नामक पुत्र था व गंगामित्रा नामक स्त्री थी। वैसे ही गंगादेव मन्त्री गंगामति स्त्री। पुरोहित, श्रेष्ठि, सेनापत्ति इत्यादि परिवार था। एक बार उन्होंने गंगासागर नामक मुनि के पास यह व्रत लिया, यथाविधि पालन किया जिससे वे स्वर्ग सुख को प्राप्त कर मोक्ष गये। ऐसा दृष्टान्त है।

अथ संयत व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ कृ० २ के दिन एकाशन करे, ३ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, ३ दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे।

कथा

पहले तारापुर नगरी में ताराकुमार राजा तारादेवी अपनी रानी के साथ रहता था। उसका पुत्र तारासुर और तारामणी शिवाय ताराविजय उसकी स्त्री

तारासुन्दरी, पुरोहित, सारा परिवार सुख से रहता था । एक बार उन्होंने तारासागर नामक मुनि से व्रत लिया, उसका यथाविधि पालन किया । सर्व सुख को प्राप्त किया । अनुक्रम से मोक्ष गए ।

अथ सुनय व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे । अन्तर सिर्फ इतना है कि ज्येष्ठ कृ० २ के दिन एकाशन करे ३ के दिन उपवास करे । पूजा वगैरह पहले के समान करे । णमोकार मन्त्र की चार माला फेरे, चार दम्पतियों को भोजन करावे वस्त्र आदि दे ।

कथा

पहले सुरेन्द्रपुर नामक नगर में शूरसेन नामक राजा अपनी स्वरूपवति रानी के साथ राज्य करता था । उसका पुत्र महासेन व उसकी पत्नी सत्यवति थी । उसका रत्ननिधि नामक प्रधान व रत्नावली नामक स्त्री थी । उसी प्रकार श्रुतकीर्ति पुरोहित और शारदा उसकी स्त्री थी । कुबेरदत्त राजश्रेष्ठी व उसकी पत्नी धनावली थी । ऐसा राजा का परिवार था । उन सबने अनन्तसेनाचार्य गुरु के पास यह व्रत लिया था जिससे उन्हें अनुक्रम से स्वर्ग सुख मिला ।

अथ सप्तयक्षी व्रत अथवा देवकी व्रत कथा

श्रावण शुक्ल ६ को मन्दिर में जाकर भगवान को नमस्कार करे, सुपार्श्वनाथ प्रतिमा का व यक्षयक्षि की प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, वृषभनाथ से लगाकर सुपार्श्वनाथ तीर्थंकर की अलग-अलग पूजा करे, जिनागम और गुरु की पूजा करे, यक्ष यक्षिणी की पूजा करे, क्षेत्रपाल की पूजा करे, सात प्रकार का नैवेद्य बनाकर चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुपार्श्वनाथ तीर्थंकराय नन्दिविजययक्षकालियक्षि सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक अर्घ्य थाली में लेकर नारियल रखे, उस थाली को हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य चढ़ावे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, दूसरे दिन चतुर्विध संघ को आहार आदि देकर स्वयं पारणा करे, इस प्रकार इस व्रत को सात महीने तक उसी तिथि

को करे, अन्त में उद्यापन करे, उस समय सुपार्श्वनाथ विधान करके महाभिषेक करे, मुनि-आर्यिकाओं को उपकरणादि देवे, सात सौभाग्यवति स्त्रियों को भोजन कराकर वायना देवे, वस्त्राभूषण देकर सम्मान करे।

कथा

इस व्रत की कथा में वसुदेव देवकी कृष्ण नारायण की कथा पढ़े। देवकी ने इस इस व्रत को किया था, उसी से उसके सात पुत्र उत्पन्न हुये।

अथ सयोगकेवली गुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ शु० १० के दिन एकाशन करे। ११ के दिन उपवास करे। पूजा वगैरह पहले के समान करे। ३ दम्पतियों को भोजन करावे। वस्त्र आदि दान करे। १०८ कमल पुष्प और १०८ फल चढ़ावे। १०८ चैत्यालयों की वन्दना करे।

कथा

पहले कांचीपुर नगरी में कांचीशेखर राजा कनकमालादेवी अपनी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र कांचनाभ उसकी स्त्री कनकसुन्दरी और कनकोज्वल मन्त्री उसकी स्त्री कनकमंजरी, और कनककीर्ति उसकी स्त्री कनकभूषणी सेनापति आदि पूरा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने कनकसागर मुनि से व्रत लिया। उसको व्रतविधि से पालन किया। सर्वसुख को प्राप्त किया। अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ सासादनगुण स्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान व्रत विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृ० १४ के दिन एकाशन करे ३० के दिन उपवास करे। पूजा वगैरह पहले के समान करे। ६ तिथि पूर्ण होने पर उद्यापन करे। पात्र में दो पत्ते लगाकर अष्ट द्रव्य रखकर महार्घ्य दे। दो दम्पतियों को भोजन करावे। वस्त्रादि से सम्मान करे।

कथा

पहले किन्नरगीत नाम की नगरी में किन्नरकांत राजा किन्नरदेवी अपनी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र किन्नरेन्द्र उसकी स्त्री सुकिन्नरी किन्नागगंद मंत्री उसकी स्त्री किमिन्नादेवी, कीर्तिकांत पुरोहित उसकी स्त्री कीर्तिमुखी

कीर्तिदत्त उसकी पत्नी कीर्तिवती पूरा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने कीर्तिसागर मुनि के पास व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया और अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ सम्यग्मिथ्यात्व (मिश्र) गुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान व्रत विधि करे, अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ कृष्ण ३० के दिन एकाशन करे, आषाढ़ शु. १ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, तीन दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्रादि दान करे, मुनि को दान दे।

कथा

पहले रत्नपुर नगरी में रत्ननाथ राजा रत्नावली अपनी महारानी के साथ रहता था। उसका पुत्र रत्नेश्वर, उसकी स्त्री रत्नमाला और रत्नप्रभ मन्त्री, उसकी स्त्री रत्नमती, रत्नचूल पुरोहित, उसकी स्त्री रत्नसुन्दरी, रत्नदत्त श्रेष्ठी, उसकी स्त्री रत्नदत्ता, रत्नंजय सेनापति पूरा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने रत्नसागर मुनि के व्रत लिया उसका व्रतविधि से पालन किया, सर्वसुख को प्राप्त किया, अमुक्रम से मोक्ष गए।

अथ सूक्ष्मसांपरायगुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के सम्मान सब विधि करे। अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ शु. ७ के दिन एकाशन करे, ८ के दिन उपवास करे, पूजा वगैरह पहले के समान करे, १० दम्पतियों को भोजन करावे। वस्त्र आदि दान करे। १०८ बार पुष्प से जाप करे। चैत्यालय वंदना करे।

कथा

पहले अश्वपुर नगरी में अश्वत्थामा राजा अश्वगामिनी अपनी पट्टरानी के साथ रहता था। उसका पुत्र अश्वहरी व अश्वकांता उसकी स्त्री, अश्वकीर्ति पुरोहित उसकी स्त्री अश्वसेना, मन्त्री, राजश्रेष्ठी वगैरह पूरा परिवार सुख से रहता था। एक बार उन्होंने विश्वसागर मुनि से व्रत लिया, इसका यथाविधि पालन किया। सर्वसुख को प्राप्त किया, अनुक्रम से मोक्ष गए।

अथ समवशरण मंगल व्रत कथा

इस व्रत को श्रावण शुक्ल में पहले रविवार को प्रारम्भ करे, मन्दिर जाने

की विधि पूर्वोक्त प्रकार ही समझना, यहां चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे । अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत, गुरु, यक्षयक्षि, क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वृषभादि वर्धमानांत्य चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, सात प्रकार का नैवेद्य सात जगह चढ़ावे, एक महा-अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, ब्रह्मचर्यपूर्वक उपवास करे, धर्मध्यान से उपवास करे, दूसरे दिन पूजा कर दान देकर स्वयं पारणा करे, इसी क्रम से पाँच शुक्रवार व्रत करे, अंत में उद्यापन करे, चौबीस तीर्थंकर की अलग-अलग पूजा करके महाभिषेक करे, सात मुनिसंघों को आहारादि देवे ।

कथा

इस व्रत को राजा श्रेणिक और रानी चेलना ने किया था, उसी की कथा पढ़े ।

सर्वथाकृत्य व्रत कथा

आश्विन महिने के पहले रविवार को शुद्ध होकर मन्दिर में जाकर नमस्कार करे, फिर चन्द्रप्रभू की प्रतिमा यक्षयक्षी सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि क्षेत्रपाल की पूजा करे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चंद्रप्रभ तीर्थंकराय श्यामयक्ष ज्वालामालिनी यक्षि सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में अर्घ्य रखकर हाथ में लेते हुए, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, यथाशक्ति उपवासादि करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, दूसरे दिन पूजा करके पारणा करे, इस प्रकार पांच रविवार इस व्रत को उपरोक्त विधि से करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय चन्द्रप्रभ तीर्थंकर विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को आहारादि देकर व्रत को पूर्ण करे ।

कथा

इस व्रत को राजा जनक ने पालन किया था, उसने भी स्वर्गादिक विभूति भोगी थी ।

अथ सनत्कुमार चक्रवर्ति व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे । अंतर केवल इतना है कि श्रावण मास के शुक्ल पक्ष में पहले मंगलवार को एक भुक्ति और बुधवार को उपवास पूजा वगैरह करे । शान्तिनाथ तीर्थंकर की आराधना मन्त्र जाप करे, १२ प्रकार के पकवान का नैवेद्य बनाये, १२ दम्पतियों को भोजन करावे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में सीता नदी के उत्तर भाग में वत्सकावति नामक विस्तीर्ण देश में महापुर नामक नगर है । वहां पर धर्मसेन नामक राजा राज्य करता था । अपने पूरे परिवार सहित धर्मध्यानपूर्वक राज्य कर रहा था ।

एक दिन दिव्यज्ञानधारी सुधर्माचार्य राजमार्ग पर आहार के लिये निकले । राजा ने नवधाभक्तिपूर्वक पड़गाहन किया । निरंतराय आहार करवाने के बाद मुनि महाराज ने धर्मोपदेश दिया, तब राजा ने कहा हे भवसागर-तारक दयालु महामुने ! मेरा भवान्तर कहो, तब उन्होंने उसका सर्व भववृत कहा । तब राजा ने कोई दुःख को दूर करने वाला व्रत मांगा । तब महाराजजी ने सनत्कुमार चक्रवर्ति व्रत ले ऐसा कहकर उन्होंने सम्पूर्ण विधि बतायी । यह सुन राजा को बहुत ही खुशी हुई । तब राजा ने इस व्रत का पालन किया ।

एक बार विद्युत (बिजली) के चमकने से उनके मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ । अपने पुत्र को राज्य देकर जिन-दीक्षा ली । और आचाम्लवर्धनादि घोर तपश्चरण किया । एक मास संन्यास योग धारण करने के बाद वे १५वें स्वर्ग गये । वहां पर बाईस सागर की आयु पूर्ण करने के बाद वहां से चय करके सुकौशल नामक विशाल देश है, उसमें विनीतपुर नामक नगर है । वहां इक्ष्वाकुवंशी नतवीर्य नामक राजा व उसकी पटरानी सहदेवी सहित राज्य करता था । उनके गर्भ में पूर्वोक्त देव आकर उत्पन्न हुआ । उसका नामकरण करके सनत्कुमार नाम रखा । थोड़े ही समय में उसने चक्रवर्ति पद प्राप्त कर लिया और अनेक स्त्रियों के साथ राज्य-सुख

भोगने लगा। किसी कारण से उन्हें वैराग्य हो गया, जिससे अपने पुत्र को राज्य देकर शिवगुप्ति केवली के पास जिनदीक्षा ली। फिर तपश्चरण के प्रभाव से उन्हें सप्त-ऋद्धि उत्पन्न हुई। घातिया कर्म का क्षय कर उनको केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। अनेक देशों में विहार कर धर्मोपदेश दिया। शुक्लध्यान के बल से अघातिया कर्मों का क्षय किया और मोक्ष गये। वहां के अनंत सुख को प्राप्त किया।

सर्वसंपत्कर व्रत कथा

श्रावण शुक्ला अष्टमी के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण कर पूजा का सामान हाथों में लेकर जिन मन्दिर को जावे, मन्दिर को तीन प्रदक्षिणा देकर ईर्या-पथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापन कर अभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से तीन प्रकार का नैवेद्य सहित पूजा करे, जिनवाणी की और गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि सहित क्षेत्रपाल की पूजा करे, भगवान के सामने तीन पान रखकर उसके ऊपर अक्षत पुञ्ज रखे, उसके ऊपर फल पुष्पादिक रख कर—

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप करे, इस व्रत कथा को पढ़े, एक थाली में नारियल सहित अर्घ तैयार कर हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाते हुए मंगल आरती उतारे, अर्घ चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, संध्याकाल में सहस्र-नाम पढ़कर दीप-धूप से पूजा करे, दूसरे दिन चतुर्विध संघ को दान देकर स्वयं पारणा करे, इस प्रकार अष्टमी व चतुर्दशी पूजा करते हुए नौ पूजा व्रत करे, व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे (श्रावण महीने की ४, भाद्र की ४ और एक आश्विन शुक्ल अष्टमी को) उद्यापन के समय एक प्रतिमा चौबीस तीर्थंकर की यक्षयक्षि सहित नवीन कराकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करे, पांच प्रकार का नैवेद्य बनाकर नौ-नौ अर्घ सहित क्रम से देव, शास्त्र, गुरु आदि को चढ़ावे। चतुर्विध संघ को दान देवे, आवश्यक उपकरण दान करे, इस प्रकार व्रत की विधि है।

पहले इस व्रत को रत्नभूषण नगर में रत्नशेखर राजा की पट्टरानी रत्न-मंजूषा ने भगवान महावीर के समवशरण में धारण किया, उसने कालानुसार व्रत को

पूर्ण किया, व्रत के प्रभाव से वह स्त्रीलिंग का छेद करते हुए, चक्रवर्ति पद धारण कर कुछ समय सुख भोगकर दीक्षा धारण करके मोक्ष को गई ।

अथ शुक्रवार व्रत कथा

आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष में प्रथम शुक्रवार और कृष्ण पक्ष के अन्तिम शुक्रवार को व्रतिक स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारणकर जिन मन्दिर में जावे, साथ में पूजा की सामग्री भी ले लेवे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापन कर पंचामृत अभिषेक करे, सभामण्डप को अच्छी तरह से श्रृंगारित कर, भगवान के आगे वेदी पर पांच रंगों से अष्टदल कमलाकार यन्त्र निकालकर चतुरस्त्र पंचमण्डल निकाले, उसके अन्दर चांवल की राशि बनाकर उसके ऊपर स्वस्तिक करे, उस स्वस्तिक के ऊपर मगल कलश को सजाकर रखे, उसके आगे एक पाटे पर १०८ स्वस्तिक निकालकर उन स्वस्तिकों पर अष्टद्रव्य रखे, जिनेन्द्र भगवान की पूजा करे, जिनवाणी व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि क्षेत्रपाल की पूजा करे, तीन सेर चांवल के आटे का नौ नैवेद्य बनावे, जिनेन्द्र को तीन चढ़ावे, पद्मावति देवी को तीन चढ़ावे, उसके आगे गलाये हुए चने का पुञ्ज रखे, पद्मावति देवी को वस्त्राभूषण चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनन्तानंत ज्ञान शक्तये अर्हत्परमेष्ठिने नमः स्वाहा ।

१०८ बार पुष्पों से इस मन्त्र का जाप्य करे, जिन सहस्र नाम पढ़े, णमोकार मन्त्रों का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक महाअर्घ करके हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती पढ़े, अर्घ्य चढ़ा देवे, कथा पढ़ने वाले विद्वान का सत्कार करे, घर पर आकर सत्पात्र को दान देवे, फिर अपने बाकी बचे तीन नैवेद्य खाकर एक भुक्ती करे । इस क्रम से आगे प्रत्येक महिने के शुक्रवार को पूजा करे, मध्य में खंड न पड़ते हुए तीन वर्ष तीन महिना शुक्रवार पूजा करना ये उत्तम विधि है । तीनों अष्टान्हिका के अन्दर आने वाले शुक्रवार को पूजा करना मध्यम विधि है, इस प्रकार तीन वर्ष व्रत पालन करने के बाद उद्यापन करना, उस समय महाभिषेक, पूजा करके पांच प्रकार का नैवेद्य बनाकर चढ़ावे, एक हजार आठ कमल पुष्प भगवान को चढ़ावे, छत्तीस साधुसंघों को आहारदानादि उपकरण देवे, ये इस व्रत की पूर्ण विधि है ।

कथा

एक समय कैलाश पर्वत पर भगवान आदिनाथ के समवशरण में बैठा राजा प्रजापति अपनी पट्टरानी सहित भगवान को प्रश्न करने लगा कि हे भगवान ! सबसे ज्यादा वैभव-संपन्न ये ज्वालामालिनी देवी यहां बैठी हैं, इनको ये वैभव किस पुण्य से प्राप्त हुआ सो कहो । तब गणधर स्वामी कहने लगे कि हे राजन सुनो, इसी क्षेत्र के मगध देश में राजपुर नाम का नगर है, उस नगर में पहले जिनदत्त श्रेष्ठी अपनी अनंतमति नाम की सेठाणी के साथ रहता था, उस सेठ के कनकमंजरी नाम की नवयौवन-सम्पन्न एक कन्या थी ।

एक दिन कनकमजरी जिन मन्दिर में जाकर भक्तिपूर्वक नमस्कार करती हुई कहने लगी कि हे भगवान ! मेरे को लोकोत्तम पति प्राप्त हुआ तो मैं आपकी सहस्रदल कमल से पूजा करूंगी, ऐसी प्रतिज्ञा करके वह कन्या घर को वापस आ गई । कुछ समय के बाद उसका विवाह पुण्डरीक चक्रवर्ती के पुत्र से हो गया और वो कनकमंजरी अपने पति के घर में आनन्द से रहने लगी । बहुत काल निकल जाने पर भी उसको संतान उत्पन्न नहीं हुई ।

एक दिन मन में बहुत दुःखी होकर सो गई तब स्वप्न में एक यक्षी देवी कहने लगे लगी कि हे कनकमंजरी ! तूने सहस्रदल कमल चढ़ाने की प्रतिज्ञा की थी सो तू भूल गई है, इसलिए तुझे संतान नहीं हो रही है । की हुई प्रतिज्ञा को याद करो, जब तुम अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करोगी, निश्चित ही तुमको संतान उत्पत्ति होगी । ऐसा सुनते ही रानी की निद्रा भंग हो गई, प्रातः स्नानक्रियादि से निवृत होकर उद्यान के सरोवर पर गई, चारों तरफ सहस्रदल कमल देखने लगी ।

इतने में उसको नवरत्न मंडप में बैठी वैभव-सम्पन्न श्रीदेवी दिखाई दी, उस देवी का वैभव देखकर कनकमंजरी को बहुत आश्चर्य हुआ, वह देवी को कहने लगी हे देवी ! तुमको यह सारा वैभव कौनसे पुण्य से प्राप्त हुआ है ? तब देवी उसकी बात सुनकर कहने लगी कि हे रानी मैंने पहले भव में शुक्रवार व्रत पालन किया था, उसका उद्यापन किया था । व्रत के प्रभाव से ही मुझे इतनी पूज्यता और ऐश्वर्य प्राप्त हुआ है । तू भी गुरु के पास जाकर इस व्रत को ग्रहण कर, व्रत का पालन कर तुझे भी इसी प्रकार ऐश्वर्य प्राप्त होगा ।

ऐसा सुनकर कनकमंजरी को बहुत ग्रानन्द हुग्रा, सरोवर मे उसने एक सहस्त्रदल कमल लेकर भगवान को चढ़ा दिया, ग्रागे कालानुसार उसने इस व्रत को भी पाला, उसके कारण उसे गर्भ रहा ग्रौर उसकी कोख से महान प्रभावशाली सनत्कुमार नाम का पुत्र उत्पन्न हुग्रा, कनकमंजरी कुछ दिनों के बाद मरकर देवी ज्वालामालिनी हुई है । इस प्रकार का कथन सुनकर राजा प्रजापति को बहुत ग्रानन्द हुग्रा ।

भगवान कहने लगे कि ग्रौर भी इस व्रत को किसने पाला सो सुन, इसी क्षेत्र में मथुरा नाम की नगरी में ग्ररविन्द नाम का राजा देवश्री रानी के साथ में सुख से राज्य करता था । उस राजा के ग्रशनिवेग नाम का राजकुमार था । एक दिन प्रातिकर नाम का दूसरे देश का राजा ग्राकर उस ग्रशनिवेग राजकुमार को निद्रावस्था में ही (सोते हुए) उठाकर रथ में डालकर ग्रपने नगर को ले गया ग्रौर ग्रपनी ९६ कन्याग्रों का विवाह ग्रशनिवेग से कर दिया । ग्रौर भी विद्याधर राजाग्रों ने ग्रपनी कन्याग्रों का विवाह कर दिया । सब मिलाकर ८००० कन्याग्रों के साथ विवाह कर साम्राज्यपद का उपभोग करने लगा ।

एक बार नगर के उद्यान में महामुनिश्वर पधारे, ऐसा समाचार वनमालि से प्राप्त होते ही ग्रशनिवेग राजा परिवार सहित नगरवासी प्रजा को लेकर उद्यान में गया, गुरुभक्ति करके नमस्कार किया, धर्मोपदेश सुनकर राजा ने प्रश्न किया कि गुरुदेव मैंने पूर्वभव में ऐसा कौनसा पुण्य किया जिससे मुझ साम्राज्य पद प्राप्त हुग्रा ? तब मुनिराज कहने लगे कि हे राजन् ! तुमने पूर्व भव में शुक्रवार व्रत का पालन किया है, उसी व्रत का यह प्रभाव है ।

राजा सुनकर बहुत प्रभावित हुग्रा, ग्रौर उसने पुनः उसी व्रत को ग्रहण किया ग्रौर नगरी में ग्राकर यथाविधि व्रत का पालन करने लगा, ग्रन्त में उद्यापन किया, राजा मरकर स्वर्ग में देव हुग्रा ।

पुनः गणधर कहने लगे कि हे राजन् ! ग्रौर भी एक कथा कहता हूं सो सुनो इसी भरत क्षेत्र में राजपुर नाम का नगर है, उस नगर में श्रीधर श्रेष्ठी ग्रपनी भार्या श्रीधरी सहित रहता था, उनको शिवगामिनी नाम की एक कन्या उत्पन्न हुई, कन्या के उत्पन्न होते ही सेठ-सेठानी ग्रादि सर्व परिवार की मृत्यु हो गई । उस कन्या के

पाप के कारण उसको बहुत दु:ख होने लगा, कष्ट के कारण इधर-उधर भटकने लगी। वह लड़की एक दिन नगर के बाहर जंगल में गई, उस जंगल में कल्पवृक्ष थे। एक पानी से भरा हुआ सरोवर था, पाप युक्त इस लड़की के वहां पहुंचते ही कल्पवृक्ष अदृश्य हो गये, सरोवर सूख गया, ऐसा देखकर उस शिवगामिनी लड़की को बहुत दु:ख हुआ, और वह वहां मूर्च्छित होकर गिर पड़ी और ऐसे ही वहां निद्राधीन हो गई। निद्रावस्था के अन्दर उसको देवियां दिखती हैं, उन देवियों को उसने पूछा आप लोग किस पुण्य से ऐसे वैभव को प्राप्त हुई हो ?

तब देवियों ने कहा हमने पूर्वभव में शुक्रवार व्रत को यथाविधि पालन किया था, इसलिए ऐसे वैभव को प्राप्त हुई हैं। तब वह लड़की कहने लगी हे देवी मैंने पूर्व भव में कौनसा पाप किया जिससे इतने दु:ख भोग रही हूं ? तब देवि कहने लगी कि हे कन्ये तूने पूर्वभव में जिनेन्द्र पूजा का विध्वंस किया और इस व्रत की और व्रत पालन करने वालों को निंदा की प्रतिबंध लगाया, इसी पाप के कारण तुमको ये कष्ट भोगने पड़ रहे हैं। अगर तुमको सुखी होने की इच्छा है तो तुम इस व्रत को यथाविधि पालन करो। उस कन्या ने शुक्रवार व्रत को ग्रहण किया, यथाविधि पालन किया, व्रत के पूर्ण होने पर उद्यापन किया, अन्त में मरकर ऐश्वर्य-सम्पन्न यक्षि होकर पैदा हुई है। इस प्रकार की कथाओं को सुनकर राजा को बहुत आनन्द आया, भगवान ने राजा को व्रत की विधि अच्छी तरह से कही, राजा ने सहर्ष व्रत को स्वीकार किया, सब लोग नगर में वापस लौट आये, सबों ने व्रतों को यथाविधि पालन किया, आयु के अन्त में मरकर स्वर्ग को प्राप्त हुये।

सुगन्ध बंधुर व्रत कथा

श्रावण शुक्ल १ से लेकर कार्तिक शु. १५ पर्यंत जिनमन्दिर में प्रतिदिन जाकर पार्श्वनाथ भगवान का धरणेन्द्रपद्मावती सहित मूर्ति का पंचामृत अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सुगन्ध बंधुराय पार्श्वनाथाय धरणेंद्र पद्मावति सहिताय नम: स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, घी डालकर खीर चढ़ावे, अवधि से आने वाली अष्टमी और चतुर्दशी को पहले के समान ही पूजा

करे, पांच नैवेद्य चढ़ावे, उस दिन उपवास करे, अथवा एकाशन व एकभुक्ति करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, अन्त में उद्यापन करना। उद्यापन के समय में महा धरणेन्द्र सहित पद्मावति पार्श्वनाथ की मूर्ति का महाअभिषेक करे, एक थाली में रत्नत्रय का यन्त्र गंध से बनावे, एक सेर कोई भी धान्य का पुञ्ज रखकर उसके ऊपर दूध से भरा हुआ कुंभ रखे, उस कुंभ पर यंत्र निकाली हुई थाली रखे, उस थाली के बीच में जिन प्रतिमा रखे, अष्टद्रव्य से पूजा करके पांच प्रकार की मिठाई चढ़ावे तीन रत्न चढ़ावे।

उपरोक्त मन्त्र को ३० बार ३० बार अलग-अलग बोलकर पांच प्रकार की मिठाई, ३० तीस-तीस बार चढ़ावे, ३० फल, ३० सुपारी, ३० पान से मंत्र बोलता जाय और चढ़ाता जाय, याने २४० बार अलग-अलग मन्त्र पढ़े और मन्त्र बोलकर अलग-अलग उपरोक्त द्रव्य चढ़ावे, जिनवाणी की पूजा व गुरु की पूजा करे, यक्ष यक्षि सहित क्षेत्रपाल की पूजा अर्चना सम्मान करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, तीन वायना तैयार करे, माने तीन बांस के करंड मंगवाकर उसमें उपरोक्त सभी पदार्थ भर देवे। एक वायना जिनेन्द्र को चढ़ावे, एक वायना सरस्वती को चढ़ावे, एक स्वयं लेवे, एक महाअर्घ्य करके मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, हाथ का महाअर्घ्य चढ़ा देवे शांतिविसर्जन करके घर पर जावे, शक्ति अनुसार चतुर्विध संघ को आहारदान देवे, स्वयं पारणा करे। इस प्रकार व्रत का विधान है।

कथा

भरतक्षेत्र के उज्जयनी नगर में एक समय रत्नपाल नाम का राजा अपनी गुणवान रत्नमाला रानी के साथ में राज्य करता था, एक दिन नगर के उद्यान में रत्नसागर मुनिराज आये, वनपाल के द्वारा सूचना प्राप्त होने पर राजा-रानी नगर निवासी लोग मुनिराज के दर्शन के लिये उद्यान में गये, दर्शन करके वहां धर्मोपदेश सुना, और रत्नमाला रानी हाथ जोड़कर मुनिराज को प्रार्थना करने लगी कि हे स्वामिन् संसार के दुःखों से छुटकर मोक्ष सुख की प्राप्ति हो ऐसा कोई एक उपाय बताइये, तब मुनिराज ने कहा कि देवि तुम उसके लिये, सुगंध बंधुर व्रत करो, ऐसा कहकर सब व्रत का विधान कह सुनाया, सुनकर रानी को बहुत आनन्द हुआ, और व्रत को ग्रहण किया, अपने नगर में वापस आ गये, रानी ने व्रत को अच्छी

तरह से पालन किया, व्रत का उद्यापन किया, अंत में समाधिपूर्वक मरकर स्वर्ग में स्त्रीलिंग का छेद करके देव हुई, आगे मनुष्य-भव धारण कर मोक्ष में चली गई। यह व्रत को पालन करने का फल है।

अथ सर्वार्थसिद्धि व्रत कथा

कोई भी अष्टान्हिका पर्व में या आषाढ़ शुक्ला अष्टमी से पूर्णिमा पर्यन्त इस व्रत को पाले, तीनों ही अष्टान्हिकाओं में व्रत का पालन करे। अष्टमी के दिन स्नानकर शुद्ध वस्त्र पहने, सर्वपूजा साहित्य हाथ में लेकर जिनमन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करके भगवान को नमस्कार करे, पीठ कर भगवान को स्थापन कर पंचामृत अभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षी व क्षेत्रपाल को भी अर्चना करे, पंच पकवान चढ़ावे।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तर सहस्र नाम सहित श्रीजिनेन्द्राय यक्षयक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, जिनसहस्रनाम पढ़े, १०८ बार णमोकार मन्त्रों का जाप्य करे, एक महाअर्घ्य हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, अर्घ्य चढ़ावे, चतुर्दशी के दिन पूजा करे, इसी प्रकार चार महिने तक पूजा करे, फिर उद्यापन करे। उस समय श्री जिनेंद्रदेव का महाभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, पांच प्रकार के नैवेद्य बनाकर २५ जगह अर्पण करे, पांच मुनियों को आहार दान देवे, उपकरण दान करे, आर्यिका ब्रह्मचारी को वस्त्रादि देवे, श्रावक-श्राविका को भोजनादि देवे, इस प्रकार इस व्रत की पूर्ण विधि है।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में आर्यखंड में सुरम्य देश है. उस देश में देवपाल राजा अपनी लक्ष्मीमती रानी के साथ सुख से राज्य करता था, एक दिन उस नगर के उद्यान में देशभूषण नामक महादिव्यज्ञानी मुनिश्वर आये, ऐसी शुभवार्ता राजा ने सुनी, राजा को परम हर्ष हुआ, राजा अपने परिवार सहित पुरजन को लेकर मुनिदर्शन के लिये गया, मुनिवन्दना करने के बाद राजा अपने परिवार सहित धर्मोपदेश सुनने के लिये मुनिराज के निकट बैठ गया, कुछ समय धर्मोपदेश सुनने के बाद रानी ने हाथ जोड़कर प्रार्थना किया कि हे देव, कोई आत्मकल्याण का मार्ग बताओ तब मुनिराज कहने लगे कि हे देवी, आपको सर्वार्थसिद्धि व्रत का पालन

करना चाहिये, ऐसा कहकर व्रत की विधि को बताया, रानी ने सहर्ष लक्ष्मीमती व सुवर्णमाला ने व्रत को ग्रहण किया और नगरी में वापस लौट आये, क्रमेण उन लोगों ने व्रत का पालन किया, अंत में उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से स्वर्गों के सुख भोगकर, परंपरा से मोक्ष को प्राप्त किया ।

सिद्ध व्रत कथा

श्रावण महिने के शुक्ल पक्ष में पहले रविवार को स्नानकर शुद्ध वस्त्र पहने पूजा सामग्री आदि सब साथ में लेकर जिनमन्दिर जी जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर सिद्ध प्रतिमा और रत्नत्रय प्रतिमा यक्षयक्षि सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से रत्नत्रय भगवान की पूजा करे (अरहनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रतनाथ) ये तीनों भगवान रत्नत्रय कहलाते हैं। सिद्ध परमेष्ठी की पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी की व क्षेत्रपाल की अर्चना करे, आदिनाथ, अरिंजय, अमितंजय, तीनों की भी पूजा करे, एक पट्टे पर तीन स्वस्तिक निकालकर ऊपर तीन पान रखकर प्रत्येक के ऊपर अर्घ्य रखे, तीन जगह अर्घ्य चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं अर्हं अरमल्लिमुनिसुव्रत रत्नत्रयारव्य तीर्थंकरेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, **ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा ।**

इस मन्त्र से १०८ पुष्प से जाप्य करे, इस प्रकार तीन वर्ष अथवा तीन महीने अथवा तीन रविवार को इस व्रत विधि से जाप्य करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय सिद्धचक्र को आराधना यथाविधि से करे मुनिसंघों को चार प्रकार का दान देवे, मन्दिर में उपकरण दान देवे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सुरम्य नामक बड़ा देश है । उस देश में जयंति नाम की नगरी है, उस नगरी का राजा क्षेमंकर अपनी लक्ष्मीमती रानी सहित सुख से राज्य करता था, एक दिन नगर के उद्यान में मुनिगुप्त नाम के मुनिराज आये, राजा को शुभ समाचार प्राप्त होते ही परिवार सहित दर्शन के लिये उद्यान में गया, तीन प्रदक्षिणा लगाकर नमस्कार किया, धर्मोपदेश सुनने को सभा में बैठ गया, कुछ समय धर्मोपदेश सुनने के बाद रानी लक्ष्मीमती हाथ जोड़कर नमस्कार करती हुई प्रार्थना

करने लगी कि हे मुनिराज मेरे कल्याण के लिये कुछ व्रत प्रदान करिये, उसकी प्रार्थना सुनकर मुनिराज कहने लगे कि हे देवि, तुम सिद्ध व्रत का पालन करो, ऐसा कहते हुये, व्रत की विधि कह सुनाई। सुनकर लक्ष्मीमती को बहुत आनन्द हुआ उसने भक्ति से व्रत को ग्रहण किया और नगर में बापस लौट आई, व्रत का पालन अच्छी तरह से किया, उसका उद्यापन भी किया, अंत में समाधि से मरकर स्वर्ग में गई, वहाँ का सुख भोगने लगी।

सौख्य व्रत

इसके दो प्रकार हैं—(१) वृहद् सौख्य व्रत (२) लघु सौख्य व्रत

वृहद् सौख्य व्रत :—इस व्रत में १२० उपवास होते हैं। किसी भी महिने की शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से शुरू करना चाहिए। प्रतिपदा का एक, द्वितीया का दो, तृतीया का ३, चतुर्थी के ४ इस प्रकार क्रम से जो तिथि है उस तिथि के उतने उपवास करना चाहिए पूर्णिमा के १५ इस क्रम से करना चाहिए। कुल १२० उपवास करना चाहिए। वृद्धि तिथि का उपवास नहीं करना चाहिए व्रत पूर्ण होते ही उद्यापन करना चाहिए। यह व्रत १० वर्ष करना चाहिए।

(2) **लघु सौख्य व्रत** :—इसके सिर्फ १६ उपवास हैं। शुद्ध पक्ष की प्रतिपदा से प्रारम्भ करना चाहिए पहले पक्ष में प्रतिपदा का उपवास करना, दूसरे पक्ष में द्वितीया का, तृतीय पक्ष में तृतीया का, चतुर्थ पक्ष में चतुर्थी का इस प्रकार पंचम पक्ष में छठे पक्ष में इस प्रकार १५ पक्ष में पूर्णिमा के दिन और १६वां उपवास अमावस्या को करना चाहिए। यह व्रत आठ महिने करना चाहिये। उद्यापन करना चाहिए। शक्ति न हो तो व्रत दुबारा करना चाहिए।

—गोविन्द कवि कृत व्रत निर्णय

सूतक परिहार व्रत कथा

भाद्र शुक्ला १४ चौदश के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहने पूजाभिषेक का सामान लेकर जिन मन्दिर जी में जावे, प्रथम मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर चौबीस भगवान की यक्ष यक्षिणी सहित मूर्ति स्थापित कर पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, आगम व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की भी पूजा करे।

ॐ ह्रीं अर्हं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का भी १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक थाली में सोलह पान लगाकर उन पानों पर प्रत्येक पर अष्ट द्रव्य व मिठाई रख कर हाथ में अर्घ्य को लेवे, एक नारियल भी रखे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन ब्रह्मचर्य पूर्वक उपवास करे, दूसरे दिन जिनपूजा करके नैवेद्य चढ़ाकर स्वयं घर जाकर पारणा करे।

इस तरह इस व्रत को १६ या ११ या ९ अथवा ५ या तीन वर्ष तक यथाशक्ति करे, अन्त में उद्यापन करे, उस समय महाभिषेक करे, सोलह पात्रों को सोलह प्रकार का पकवान बनाकर देवे, सोलह मुनिसंघ को आहारादि देवे ।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में नेपाल नाम का बहुत बड़ा देश है, उस देश में ललितपुर नाम का गांव है, उस नगर का राजा उतुंग अपनी रानी चित्रगुप्ता के साथ राज्य करता था ।

एक दिन उस नगर के बाहर उद्यान में अवधिज्ञान सम्पन्न श्रुतसागर महामुनि पधारे, राजा को समाचार प्राप्त होते ही, सर्व परिवार सहित नगर वासियों को लेकर उद्यान में गया, मुनिराज के दर्शन कर धर्मोपदेश सुनने के लिए धर्म सभा में जाकर बैठ गया, कुछ समय उपदेश सुनने के बाद रानी चित्रगुप्ता हाथ जोड़कर नमस्कार करती हुई विनय से कहने लगी कि हे गुरुदेव मेरे कल्याण के लिए मुझे कुछ व्रत प्रदान कीजिए ।

तब मुनिराज ने उसको सूतक परिहार व्रत की विधि कही, रानी ने प्रसन्नता से उस व्रत को स्वीकार किया, सब लोग नगर में वापस लौट आये, रानी ने अच्छी तरह से व्रत को पालन किया, अन्त में उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से रानी मरकर स्वर्ग में गई और देवपद पाया । आगे मनुष्य भव में आकर मोक्ष जायेगी ।

सिद्ध कांजिका व्रत

किसी भी महिने के शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष की अष्टमी को कांजि आहार

लेना चाहिए, इस प्रकार यह व्रत चार महीने करना चाहिए। केवल चावल नमक बिना लेना यह कांजिहार है। नदीश्वर व्रत के प्रारम्भ में जो अष्टमी आती है उसी दिन से यह व्रत प्रारम्भ करना चाहिए। व्रत पूरा होने पर उद्यापन करे।

—गोविन्द कृत व्रत निर्णय

सिद्धचक्र व्रत

यह व्रत आषाढ़, कार्तिक व फाल्गुन इन महिनों में शुक्ल पक्ष की अष्टमी से पूर्णिमा तक करना चाहिए वर्ष में तीन बार करना चाहिए। इस व्रत में आठ दिन उपवास या एक उपवास एक आहार कर सकते हैं।

इस व्रत की उत्कृष्ट अवधि १२ वर्ष व मध्यम ६ वर्ष और जघन्य तीन वर्ष है। इस व्रत में आठ दिन जिनमन्दिर में पंचामृत अभिषेक करके अष्टद्रव्य से पूजा करके सिद्धपरमेष्ठी की पूजा करनी चाहिए व उसका चितन करना चाहिए।

सुवर्ण पात्र में सिद्ध भगवान का यन्त्र कर्पूरचन्दन आदि गंध से निकाले। इस यन्त्र पर १०८ बार पुष्पों से प्रतिदिन जाप करना चाहिए। यह जाप जाई जुई के पुष्पों से करे पंचरंगों से नंदीश्वर पर्वत का मण्डल (साथिया) निकालना चाहिये। उस पर कोठे निकालना चाहिये। उसके चार विभाग में चार जिनप्रतिमा महापूजा के लिए स्थापना करनी चाहिए अष्टमी से पूर्णिमा तक अष्टद्रव्य से पूजा करनी चाहिये। इन आठ दिनों में सचित का त्याग करना चाहिये। आरम्भ छोड़ना चाहिये व्रत पूर्ण होने पर कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को भक्ति से सिद्ध यन्त्र की अष्टद्रव्य से पूजा करनी चाहिये। सत्पात्र को आहार दान देना चाहिए फिर पारणा करना चाहिये।

इसकी दूसरी विधि इस प्रकार है ऊपर लिखे अनुसार मांडला बनाकर पहले दिन आठ दूसरे दिन पूजा करके पूजा के समय १६ तीसरे दिन ३२ चौथे दिन ६४ पांचवें दिन १२८ छट्ठे दिन २५६ सातवें दिन पाँच सौ बारह और आठवें दिन १०२४ अर्घ्य जयमाला सहित देना चाहिये नवमें दिन शान्ति विसर्जन वगैरह करना चाहिये। पूजा करने वाला व कराने वाला दोनों सुश्रावक होने चाहिये। विधान शुरू करने पर एक लक्ष जाप करना चाहिये वह मन्त्र इस प्रकार है—

"ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा" इस मन्त्र का जाप लवंग या पुष्पों से करना चाहिये यह जाप अकेले या और लोगों के साथ मिलकर कर सकते हैं।

नवमी के दिन होम कुण्ड बनाकर उसमें 'ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा' इस मन्त्र के १०००० जाप (आहुति) देना चाहिये।

उसके बाद चौबीस तीर्थंकर की पूजा, गुरु पूजा, सरस्वति पूजा करके कलशों से तीन प्रदक्षिणा देनी चाहिए फिर शान्ति विसर्जन करना चाहिए। सरस्वती पूजा के समय जिनवाणी सामने रखनी चाहिए। सरस्वती की पूजा में शास्त्र बन्धन चढ़ाना चाहिए। जयमाला के समय प्रत्येक स्त्री-पुरुष को एक-एक नारियल चढ़ाना चाहिए। यथाशक्ति दान देना चाहिये।

सम्यक्त्व चतुर्विंशति व्रत

वर्ष में एक बार कभी भी इस व्रत की शुरूआत करनी चाहिए परन्तु क्रम से चौबीस प्रोषधोपवास करना चाहिए। पहले दिन एकाशन दूसरे दिन उपवास तीसरे दिन एकाशन करके इस क्रम से एक उपवास एक एकाशन करना चाहिए अर्थात् २४ एकाशन व २४ पारणा इस प्रकार यह व्रत ४८ दिन में पूरा होता है।

—गोविंद कविकृत व्रत निर्णय

इस व्रत में ४८ एकाशन भी कर सकते हैं। इसका जाप **ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति जिनाय नमः** है।

—जैन व्रत विधान संग्रह

श्रुतावतार कथा

ज्येष्ठ शुक्ल एकम के दिन शुद्ध होकर मन्दिर जी में जावे, तीन प्रदक्षिणा पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि की प्रतिमा स्थापन कर व श्रुतस्कंध स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत, देवी व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षी व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हं असि आउसा अनाहत विधाये नमः स्वाहा।

इस मन्त्र को १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, यह व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ चढ़ावे, शक्तिनुसार उपवास करे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, सत्पात्रों को दान देते हुये धर्मध्यान से रहे।

इस प्रकार एकम से चतुर्थी पर्यन्त पूजा करके पांचवें दिन ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी के दिन श्रुत को अलमारी से निकाल करके स्वच्छ करे, नवीन वेष्टन बांधे, श्रुत स्कन्ध विधान का पंचवर्ण रंग से मण्डल निकाल कर श्रुत स्कन्ध विधान करे, उस दिन उपवास करे, षष्ठि के दिन चतुर्विध संघ को दान देकर श्रावक-श्राविकाओं को भोजन वस्त्रादिक देवे ।

इस व्रत को १२ वर्ष करके अंत में उद्यापन करे, उस समय श्रुत स्कंध यंत्र खुदवाकर प्रतिष्ठा करे, जिनमन्दिर में उपकरणादि दान देवे ।

कथा

इस व्रत को भरत चक्रवर्ति ने पालन किया था, अंत में मोक्ष गये, इस व्रत की कथा में राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े ।

श्रावण द्वादशी व्रत का स्वरूप

श्रावणद्वादशीव्रतस्तु भाद्रपदशुक्लद्वादश्यां तिथौ क्रियते । अस्य व्रतस्यावधि द्वादशवर्षपर्यन्तमस्ति । उद्यापनान्तरं व्रतसमाप्तिर्भवति ।

अर्थ :—श्रावण द्वादशी व्रत भाद्रपद शुक्ला द्वादशी को किया जाता है । यह व्रत बारह वर्ष तक करना पड़ता है । उद्यापन करने के उपरान्त व्रत की समाप्ति की जाती है ।

विवेचन :—श्रावण द्वादशी व्रत के दिन भगवान वासुपूज्य स्वामी की पूजा, अभिषेक और स्तुति की जाती है । नित्यनैमित्तिक पूजा-पाठों के अनन्तर गाजे-बाजे के साथ भगवान वासुपूज्य स्वामी की पूजा करनी चाहिए । इस व्रत में चार बार तीनों सन्ध्याओं और रात में लगभग दस बजे "**ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं क्लूं श्रीवासुपूज्य जिनेन्द्राय नमः स्वाहा** ।" इस मन्त्र का जाप करना चाहिए । प्रायः इस द्वादशी तिथि को श्रवण नक्षत्र भी पड़ता है, क्योंकि यह द्वादशी श्रवण नक्षत्र से युक्त होती है । इस व्रत की सामान्य विधि अन्य व्रतों के समान ही है, परन्तु विशेष यह है कि यदि श्रवण नक्षत्र त्रयोदशी को पड़ता हो या एकादशी में ही आ जाता हो तथा द्वादशी को श्रवण नक्षत्र का अभाव हो तो द्वादशी के साथ श्रवण नक्षत्र के दिन भी व्रत करना चाहिए । यों तो प्रायः द्वादशी तिथि को श्रवण आ ही जाता है ऐसा बहुत

कम होता है, जब श्रवण एक दिन आगे या एक दिन पीछे पड़ता है। द्वादशी तिथि व्रत के लिए छह घटी प्रमाण होने पर ही ग्राह्य है।

यदि कभी ऐसी परिस्थिति आवे कि द्वादशी में श्रवण नक्षत्र न मिले, तो उस समय अस्तकालीन तिथि भी ग्रहण की जा सकती है। द्वादशी को प्रातःकाल में श्रवण नक्षत्र का होना आवश्यक नहीं है, किसी भी समय द्वादशी और श्रवण का योग होना चाहिए। ज्योतिष शास्त्र में भाद्रपद शुक्ला द्वादशी और श्रवण नक्षत्र के योग को बहुत श्रेष्ठ बताया है, इसका कारण यह है कि श्रावण मास में पूर्णिमा को श्रवण नक्षत्र पड़ता है, तथा भाद्रपद मास में पूर्णिमा को भाद्रपद नक्षत्र। द्वादशी श्रवण से संयुक्त होकर विशेष पुण्यकाल उत्पन्न करती है, क्योंकि श्रवण नक्षत्र मासवाली पूर्णिमा के पश्चात् प्रथम बार, द्वादशी के साथ योग करता है। चन्द्रमा नीच राशि से आगे निकल जाता है, और अपनी उच्च राशि की ओर बढ़ता है। द्वादशी तिथि को यों तो अनुराधा नक्षत्र श्रेष्ठ माना जाता है, परन्तु भाद्रपद मास में श्रवण ही श्रेष्ठतम बताया गया है। इस कारण श्रवण से संयुक्त द्वादशी कल्याणप्रद, पुण्यकारक और जीवन-मार्ग में गति देने वाली होती है। अपनी मासान्त की पूर्णिमा के संयोग के पश्चात् श्रवण प्रथम बार जिस किसी तिथि से संयोग करता है, वही तिथि श्रेष्ठ, पुण्योत्पादक और मंगलप्रद मानी जाती है। श्रवण की यह स्थिति भाद्रपद शुक्ला द्वादशी को ही आती है, अतः यह व्रत महान् पुण्य को देने वाला बताया गया है।

श्रवण द्वादशी व्रत का महात्म्य जैनियों में बहुत अधिक माना गया है। इस व्रत को प्रायः सौभाग्यवती स्त्रियां अपनी सौभाग्यवृद्धि, सन्तान प्राप्ति तथा अपनी ऐहिक मंगल कामना से करती हैं। इस व्रत की अवधि बारह वर्ष तक मानी गयी है, बारह वर्ष तक विधिपूर्वक व्रत करने के उपरान्त व्रत का उद्यापन करना चाहिए।

मुकुट सप्तमी, निर्दोष सप्तमी और श्रवण द्वादशी ये सब व्रत वर्ष में एक बार ही किये जाते हैं। जो तिथियां इनके लिए निश्चित की गयी हैं, उन उन तिथियों में ही उन्हें सम्पन्न करना चाहिए। श्रवण-द्वादशी व्रत के दिन वासुपूज्य भगवान के पंचकल्याणकों का चिंतन करना चाहिए।

श्रावण द्वादशी व्रत

भाद्रपद सुदी १२ के दिन प्रोषधोपवास करना, इस व्रत के दिन वासुपूज्य

जिनभगवान का अभिषेक पूजन करना ऐसे १२ वर्ष करना चाहिए। पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए। नहीं तो व्रत दूना करे।

—गोविन्दकृत व्रत निर्णय

इस व्रत में चार समय अर्थात् तीन संध्या (सुबह दोपहर शाम) और रात में १०८ बार '**ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय नमः**" मन्त्र का जाप करे। १२ को श्रवण नक्षत्र होता है इसलिए इस व्रत का नाम श्रावण द्वादशी है, इस व्रत की सामान्य विधि दूसरे व्रत के समान ही है। पर यदि श्रवण नक्षत्र त्रयोदशी या एकादशी के दिन आये तो उस दिन करना चाहिए। श्रवण नक्षत्र का जैनों में बहुत महत्व है। सौभाग्यवती स्त्रियां अपने सौभाग्य के लिए करती हैं।

कथा

मालव प्रान्त में पद्मावतीपुर नगरी है। उसमें राजा नरब्रह्मा उसकी रानी विजयवल्लभा; उसकी पुत्री शीलवती अत्यन्त कुरूप कुबड़ी जन्मी। वह जैसे-जैसे बढ़ने लगी वैसे-वैसे उसके माता-पिता को चिन्ता होने लगी। एक बार श्रवणोत्तम महाराज विहार करते-करते वहां आये। राजा परिवार सहित दर्शन को गया। धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा ने अपनी पुत्री के भवान्तर पूछे व कौनसे पाप के फल से उसको यह फल मिला है और अब क्या करने से उसका पाप दूर होगा, यह पूछा। तब मुनि महाराज बोले।

राजन ! इस अवंति देश में पांडवपुर नामक नगर है उसका राजा संग्राम मल्ल और रानी वसुन्धरा थी। उस नगरी का पुरोहित देवशर्मा अपनी कालसूरी स्त्री सहित रहता था, उसकी पुत्री कपिला अत्यन्त गुणी व सुन्दरी थी।

एक बार वह अपनी सहेलियों के साथ वनक्रीड़ा करने गयी। रास्ते में उन्होंने दिगम्बर साधु को देखा और उनकी निन्दा की। इतना ही नहीं उनके अंग पर मिट्टी उड़ायी व थूक दिया। यह उपसर्ग मुनिमहाराज ने शान्तभाव से सहन किया। वे ध्यान में लीन हो गये, उपसर्ग सहन करते हुए केवलज्ञान प्राप्त हुआ। कपिला इस पाप के कारण नरक में गयी। वहां से वह निकल कर हथिनी हुई, माजरी (बिल्ली) हुई सर्पिणी हुई, वहां से चान्डालिन हुई। अब वह राजन तेरे घर जन्मी है पूर्वजन्म के पाप के कारण यह फल भोग रही है। यदि उसे इससे मुक्ति चाहिए तो उसे द्वादशी व्रत पालना चाहिए। जिससे वह यहां से मर कर तेरे ही पेट से अर्ककेतु होगा इसका

छोटा भाई चन्द्रकेतु युद्ध में मरण को प्राप्त होगा। तब अर्ककेतु राज्य सम्भालेगा और जिनदीक्षा लेकर २२वें स्वर्ग में देव होगा, वहां से वह एक जन्म लेकर मोक्ष जायेगा। इसकी माता रानी विजयवल्लभा स्वर्ग में देव होगी और आगे मोक्ष में जायेगी। तब राजा अपने घर गया, लड़की ने वह व्रत किया, अन्त में वह मोक्ष जायेगी।

श्रुतज्ञान व्रत

मतिज्ञान के भेद २८। उसके उपवास २८ द्वादशी अंग-के पहले ११ अंग के ११ उपवास, १२वे अंग में दृष्टिवाद अंग के पांच। उसमें परिकर्म के भेद २ उसके उपवास २। सूत्र एक विषय है उसकी पद संख्या २८ है उसके सम्बंधी २८ उपवास दृष्टिवाद पांचवां भेद चूलिकाउसके ५ उपवास अवधिज्ञान के भेद ६ उसके उपवास ६ मन:पर्यय ज्ञान के दो भेद। उपवास २ केवलज्ञान का एक इस प्रकार ये १५८ होते हैं। ऐसी यह विधि है

दूसरी विधि :—यह व्रत १२ वर्ष और ८ महिने अर्थात् १५२ महिनों में पूर्ण होते हैं। उसके कुल उपवास १४८ हैं। १६ प्रतिपदा के १६, तीन तृतीया के ३, चार चतुर्थी के ४ इस क्रम से जो तिथि है उस तिथि के उतने उपवास करना। इस प्रकार पूर्णिमा के १५ व अमावस्या के भी उसी क्रम से १५ उपवास करना व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना।

श्रुत स्कंध व्रत

भाद्रपद महिने में यह व्रत करते हैं इस महिने जिनालय में श्रुत स्कंध मंडल निकालकर श्रुतस्कंध पूजन विधान करना एक महिने में १६ उपवास प्रोषध पूर्वक करे ऐसा करने से यह व्रत उत्कृष्ट होता है। पारणे के दिन या तो निरस करे या दो रस छोड़कर ले। इस प्रकार यह व्रत १२ वर्ष करना चाहिये। व्रत पूर्ण होते ही उद्यापन करना चाहिये। कितने ही १२ वर्ष करते हैं तो कितने ही पांच वर्ष करते हैं। उद्यापन में बारह-बारह उपकरण घंटा झालर पूजा के बर्तन छत्र चमर वगैरह मन्दिर में दान देना चाहिए। बारह शास्त्र मन्दिर में रखना व्रत के दिन–

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद स्याद्वादमय गभित द्वादशाङ्ग श्रुतज्ञानेभ्यो नमः।

इस मन्त्र का जाप त्रिकाल करना चाहिए। बारह भावना का चिंतन करना चाहिए।

इसकी दूसरी पद्धति— इसमें तिथि महिना इसका नियम नहीं है । श्रुतभक्ति धारी को १५८ उपवास करना चाहिए ।

—गोविंदकृत व्रत-निर्णय

तीसरी विधि :—१६ प्रतिपदा के १६, दो द्वितीया के दो, तीन तृतीया के तीन, चार चतुर्थी के चार, इस क्रम से पूर्णिमा तक पूर्णिमा के १५ और इसी क्रम से अमावस्या के १५ इस प्रकार से १५० उपवास करना (इसको कब करना इसका खुलासा नहीं है) व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करना चाहिए ।

—गोविंदकृत व्रत निर्णय

कथा

जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र में अंगदेश है उस देश में पाटलीपुत्र नगर में बहुत वर्ष पहले राजा चंद्ररुची अपनी चंद्रप्रभा रानी के साथ राज्य करता था । उसकी लड़की श्रुतशालिनी अपने रूप व गुण से सब विद्याओं में प्रवीण थी । बुद्धि से तीक्ष्ण थी । राजा ने उसको एक आर्यिका के पास विद्याध्ययन के लिये भेजा था ।

एक दिन उस लड़की ने अपनी बुद्धि से श्रुतस्कंध मण्डल निकाला यह देखकर आर्यिका को आनंद हुआ । उसकी प्रशंसा की । फिर वह राजकन्या आर्यिका की आज्ञा लेकर घर आयी । राजा को वह शिक्षा में प्रवीण है ऐसा सुनकर आनंद हुआ ।

एक दिन गांव के बाहर उद्यान में एक श्री वर्धमान मुनि आये थे । राजा अपने परिवार सहित मुनि दर्शन को गया । भक्तिपूर्वक वंदना करके मुनि के पास बैठे । मुनि महाराज ने धर्म का स्वरूप समझाया । यह सुनकर बहुत से लोगों ने अणुव्रत लिये । तब राजा ने मेरी लड़की किस पुण्य से विदुषी हुई है यह पूछा तब मुनि महाराज ने उत्तर दिया ।

राजन ! इस जम्बूद्वीप के पूर्वविदेह में पुष्कलावती देश में पुष्करिणी नगर है । वहां राजा सुभद्र अपनी पत्नि गुणवति के साथ राज्य करता था । एक बार वह परिवार सहित सीमंधर स्वामी के दर्शन को गया था । उनकी भक्तिपूर्वक पूजा करके वह बैठ गया और भगवान के मुंह से श्रुत स्कंध का स्वरूप सविस्तार सुना।

उसकी व्रत विधि सुनी तब राजा और रानी ने यह व्रत लिया। यथाविधि पालन किया। कालान्तर में यथाविधि समाधि मरण से मरकर वे अच्युत स्वर्ग में इन्द्र इन्द्राणी हुए। इन्द्राणी का जीव वहां से च्युत होकर तेरे पेट से श्रुतशालिनी नामक लड़की हुई है। तब फिर से यह व्रत उसने शुरू किया। चारित्र के प्रभाव से कषाय को क्षय किया और आखिर में मरकर अहमिन्द्र स्वर्ग में देव हुई। वहां के सुख भोगकर विदेह में कुमुदावति देश में अशोकपुर नगर के राजा पद्मनाभ उसकी रानी जिनप्रभा के पेट से जयंधर नाम से जन्म लिया और बाद में तीर्थंकर चक्रवर्ती व कामदेव पदवी के धारी हुये। प्रजा का पालन किया। और राज्य भोगों से विरक्त होकर जिनदीक्षा ली और कठोर तपस्या करके कर्मों का क्षय करके केवली हुए और अंत में मोक्ष गये।

श्रीखण्ड व्रत

श्रावण वदि षष्ठि को यह व्रत करना चाहिये। व्रत के दिन जिनमन्दिर में जाकर भक्ति से भगवान का अभिषेक विधिपूर्वक करना चाहिए और नित्यनियम की पूजा करना पूजा के बाद पंचनमस्कार मन्त्र का जाप करे। बाद में अंतराय पालकर एकाशन करे। इस प्रकार भाद्रपद शुदि अष्टमी तक एकाशन करे। ऐसे यह व्रत १५ दिन का है व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे।

—गोविन्दकविकृत व्रत निर्णय

अथ हस्तपंचमी व्रत कथा

व्रत विधि :—कार्तिक शुक्ला ४ दिन के एकाशन करे। पंचमी के दिन शुद्ध कपड़े पहनकर अष्टद्रव्य लेकर मन्दिर जाये, दर्शन आदि करने के बाद वेदी पर पंचपरमेष्ठी की प्रतिमा स्थापित करके अभिषेक करे। फिर भगवान के सामने एक पाटे पर ५ स्वस्तिक निकाल कर उस पर ५ पत्ते रखे, उस पर अष्टद्रव्य रखे, पंचपरमेष्ठि की पूजा, आरती स्तोत्र करे। श्रुत व गुरु, यक्षयक्षी की पूजा करे।

जाप :—ॐ ह्रों ह्रीं ह्रीं ह्रौं ह्रः असि आउसा पंचपरमेष्ठिभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र का १०८ बार पुष्प से जाप करे व णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे। फिर यह कथा पढ़े। दूसरे दिन पूजा आदि कर पारणा करे।

इस प्रकार यह व्रत महिने की दो तिथि को करे ऐसी २४ तिथि पूर्ण होने पर कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करें पंचपमेष्ठी विधान करके महाभिषेक करे। चतुःविधि संघ को दान दे। ५ दम्पतियों को भोजन करावे और उनका सत्कार करे।

कथा

यह व्रत पहले सीतादेवी, मंदोदरी, तारादेवी, द्रोपदी, रुकमणि, अंजनादेवी, नीलावती आदि ने किया था। इस व्रत के पुण्य प्रभाव से उनको सब अभ्युदय सुख की प्राप्ति हुई। ऐसा इस व्रत का महत्व है।

अथ हिसानंद निवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान करना चाहिये अन्तर सिर्फ इतना है कि बैशाख शु. ५ के दिन एकाशन करे। ६ के दिन उपवास करे। नवदेवता पूजा, मन्त्र, आराधना, जाप करे ९ पत्ते मांडे। कथा पूर्ववत। ६ पूजा पूर्ण हो जाने पर कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे।

अथ हास्यकर्म निवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि चैत्र कृष्णा ४ के दिन एकाशन करे और ५ के दिन उपवास करे। धर्मनाथ तीर्थंकर की पूजा अर्चना मन्त्र जाप आदि करना चाहिये।

अथ हरिषेण चक्रवति व्रत कथा

व्रत विधिः—माघ शुक्ला ४ के दिन एकाशन करे और ५मी को सुबह शुद्ध होकर कपड़े आदि पहनकर अष्ट द्रव्य लेकर मन्दिर जाये, दर्शन आदि सब करके एक पीठ पर सम्मति (भूतकाल) तीर्थंकर की स्थापना कर पंचामृत अभिषेक करे। पाटे पर १० स्वस्तिक निकालकर उस पर उतने ही पत्ते रखे। अष्ट द्रव्य भी रखे। निर्वाण से सम्मतिनाथ तक पूजा करे।

जाप :—**ॐ ह्रीं अर्हं सन्मति जिनाय यक्षयक्षि सहिताय नमः स्वाहा।**

इस मन्त्र का १०८ बार जाप करे। णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप

करे । जिन सहस्र नाम का पाठ कर सन्मति कथा पढ़े । आरती करे । उस दिन उपवास करके पूरा दिन धर्मध्यानपूर्वक बितावे, दूसरे दिन आहार दान देकर पारणा करे ।

इस प्रकार १० तिथि पूर्ण होने पर उद्यापन करावे । सन्मति तीर्थंकर विधान करे । महाभिषेक करे । चतुर्विध संघ को दान दे ।

कथा

श्री अनन्तनाथ तीर्थंकर के समय चन्द्रसेन नामक राजपुत्र उनके समवशरण में गया वंदना आदि कर वह अपने कोठ में जाकर बैठ गया वहां उसने धर्मोपदेश सुना तब बड़े विनय और भक्ति से वे श्री जयाचार्य गणधर से बोले हे भवसिन्धुतारक ! आप मुझे सब सुख को देने वाला ऐसा कोई व्रत बतायें । तब गणधर ने कहा कि हरिषेण चक्रवर्ति व्रत करना बहुत ही अच्छा है । यह कहकर उन्होंने सब विधि बतायी । वन्दना कर राजा अपने घर आया और यथाविधि व्रत का पालन किया और उद्यापन किया ।

एक दिन रात्रि के समय चन्द्रसेन अपने महल के ऊपर बैठा था कि उसने उल्कापात होते देखा जिससे उसके मन में क्षणिक संसार के प्रति वैराग्य हो गया । फिर वन में जाकर जिन दीक्षा ली और घोर तपश्चर्या करने लगा । समाधिपूर्वक मरण हुआ जिससे वह सनत्कुमार स्वर्ग में देव हुआ । वहां का सुख भोगकर वहां से चयकर मनोरमा रानी का हरिषेण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ उसके पिताजी को एक दिन वैराग्य उत्पन्न हुआ जिससे हरिषेण को राज्य देकर स्वयं दीक्षित हो गया ।

इधर वह हरिषेण भी श्रावक के व्रत लेकर राज्य करने लगा । थोड़े दिन के बाद पद्मनाथ मुनिश्वर को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ, उसी समय इधर हरिषेण के राज्य में १४ रत्न उत्पन्न हुये अर्थात् वह चक्रवर्ति बन गया । इधर माली ने केवलज्ञान की बात बतायी जिससे वह अपने शरीर के अलंकार उसे देकर भगवान के दर्शन करने के लिए गया । वन्दना कर वापस आकर उन्होंने अपनी आयुधशाला में जाकर चक्र की पूजा की । फिर छह खण्ड जीतने के लिए गये । जीतकर जब वापस आये तो सबने उनका समारोह पूर्वक अभिषेक किया । सुख से बहुत साल तक राज्य किया ।

एक बार कार्तिक अष्टान्हिका में अपने हाथ से स्वयं अष्टान्हिका पूजा अभिषेक करने लगा। उपवास भी कर रहा था कि १५ के दिन उसने चन्द्रग्रहण देखा जिससे उसे वैराग्य हो गया और अपने पुत्र को राज्य देकर स्वयं दीक्षित हो गये। घोर तपश्चरण करके समाधिपूर्वक मरण किया जिससे वह सर्वार्थसिद्धि में अहमिंद्र हुआ। वहाँ से चयकर मोक्ष जायेगा। ऐसा इस व्रत का महत्व है।

अथ क्षायिक भोग व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ला ६ को एकाशन करे व सप्तमी को उपवास करे। पात्र में चार पत्ते लगावे णमोकार मन्त्र का जाप चार बार करे।

यह व्रत पहले सुरेन्द्रदत्त सेठ ने किया था व उसकी पत्नी सुमति ने किया था जिससे वे अभ्युदय सुख भोगकर मोक्ष गये।

अथ क्षायिक लाभ व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ला ४ को एकाशन करे ५ के दिन उपवास करे। पात्र में तीन पत्ते रखे, णमोकार मन्त्र का तीन समय जाप करे, तीन दम्पतियों को भोजन करावे।

यह व्रत वसुदत्त सेठ ने किया था। उसको सद्गति प्राप्त हुई।

अथ क्षायिकदान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ला ३ को एकाशन करे। ४ को उपवास करे। फिर पूजा वन्दना करे पात्र में दो पत्ते रखे। णमोकार मन्त्र का जाप दो बार करे। दो दम्पतियों को भोजन कराके वस्त्र आदि दान दे।

यह व्रत विधि सिंहसेन महाराज ने की थी। उसको स्वर्ग सुख मिला था ऐसी कथा है।

क्षमावली व्रत

किसी भी माह की कृष्णपक्ष या शुक्लपक्ष की दशमी को क्षमागुण का चिंतन

करना । उसी प्रकार दशमी को आर्जव वगैरह का चिंतन करना चाहिए । ऐसे दश उपवास करना चाहिए । उपवास में एक एक भावना का चिंतवन करना चाहिए । यह व्रत ५ महीने में पूर्ण होता है । व्रत के दिन जलाभिषेक करना चाहिए । फिर पूजा करनी चाहिए । यथाशक्ति उद्यापन करे ।

—गोविन्द कविकृत व्रत निर्णय

अथ क्षायिकमोह अथवा क्षीणमोह अथवा क्षीणकषाय गुणस्थान व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब विधि करे । अन्तर केवल इतना है कि आषाढ़ शु. ६ के दिन एकाशन करे । १० के दिन उपवास करे । पूजा वगैरह पहले के समान करे । १२ दम्पतियों को भोजन करावे, वस्त्र आदि दान करे । १०८ आम्र, १०८ कमलपुष्प बहावे ।

कथा

पहले त्रिलोकतिलकपुर नगरी में लोकपाल राजा लोकोपकारिणी अपनी महारानी के साथ रहता था । उसका पुत्र लोकहितकार उसकी स्त्री लोकसुन्दरी और लोककीर्ति पुरोहित उसकी स्त्री लोकिकशील सुन्दरी सारा परिवार सुख से रहता था । एक बार उन्होंने लोकसागर मुनि से व्रत लिया तथा उसको व्रत विधि से पालन किया । सर्वसुख को प्राप्त किया । अनुक्रम से मोक्ष गए ।

अथ क्षायिक उपभोग व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब करे । अन्तर सिर्फ इतना है कि ज्येष्ठ शुक्ल ७ के दिन एकाशन करे व ८मी के दिन उपवास करे । पूजा जाप पत्ते वगैरह पहले के समान करे । णमोकार मंत्र का ५ बार जाप करे ।

कथा

यह व्रत पहले देवसेन राजा ने व उसकी रानी देवमती थी उसका लड़का देवकुमार उसकी पत्नी देवमणि ने यशोधर आचार्य से लिया था । यथाविधि पालन करने से वे अनुक्रम से मोक्ष गये थे ।

अथ क्षायिक सम्यक्त्व व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले के समान सब करे। अन्तर केवल इतना है कि ज्येष्ठ शु. २ के दिन एकाशन करना ३ के दिन उपवास करना चाहिए। श्रुत व गणधर पूजा करके यक्षयक्षी व ब्रह्मदेव को अर्चना करनी चाहिए और

"ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अरमल्लि मुनितीर्थंकरेभ्यो यक्षयक्षी सहितेभ्यो नमः स्वाहा।"

इस मन्त्र का जाप करना चाहिए। तीन दिन ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। इस प्रकार प्रत्येक मास में दो बार इस तिथि का उपवास करे। इस प्रकार दश पूजा पूर्ण होने पर कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे। उस समय रत्नत्रय जिनविधान करके महाभिषेक करे। एक दम्पति को भोजन कराना चाहिए।

कथा

पद्मनंदि नामका एक राजा था, उसको पद्मावतो नाम की एक सुशील धर्मपत्नी थी, उसके पद्मसेन नामक मंत्री था, उसकी पद्मगदा नामक स्त्री थी। इस पूरे परिवार सहित राजा सुख से रहता था।

एक दिन उस नगर के उद्यान में श्रीधराचार्य महामुनि आकर उतरे। जब राजा ने सुना तो वे उनके दर्शन के लिये पैदल गये। मुनियों की तीन प्रदक्षिणा देकर पूजा वन्दना कर सामने आकर बैठे। गुरु के मुख से धर्मोपदेश सुनकर राजा ने महाराज से कहा कि हे महाराज! अनंत सुख को देने वाला ऐसा कोई व्रत विधान कहो। तब महाराज जी ने कहा हे भव्योत्तम राजन्! आप क्षायिक सम्यक्त्व व्रत का पालन करो जिससे आपका मनोरथ पूर्ण होगा। ऐसा कहकर महाराज जी ने सब विधि व्रत को बतायी। फिर सब लोग महाराज की वन्दना कर घर आये फिर उन्होंने इस व्रत को विधिपूर्वक पूर्ण किया जिससे उन्हें क्रम से मोक्ष-सुख मिला। यही इस व्रत का विधान है।

त्रिमुखशुद्धि व्रत की विधि

किं नाम त्रिमुखशुद्धिव्रतम्? त्रिमुखशुद्धिव्रते पात्रदानानन्तरं भोजनग्रहणं

भवति । तदभावे, आहारस्याप्यभाव एषः मुखशुद्धि संज्ञको नियमो दैवसिको भवति ।

अर्थ :—त्रिमुखशुद्धि व्रत किसे कहते हैं ? आचार्य उत्तर देते हैं कि त्रिमुख शुद्धि व्रत में पात्रदान के अनन्तर भोजन ग्रहण किया जाता है। यदि द्वारापेक्षण करने पर भी पात्र की प्राप्ति न हो तो उस दिन आहार नहीं लिया जाता है। यह त्रिमुखशुद्धि संज्ञक नियम दिन में ही किया जाता है, अतः यह दैवसिक व्रत कहलाता है।

विवेचन :—त्रिमुखशुद्धि व्रत का वास्तविक अभिप्राय यह है कि पात्रदान के अनन्तर भोजन ग्रहण करने का नियम करना और दिन में तीनों बार—प्रातः, मध्यान्ह और अपरान्ह में द्वार पर खड़े होकर पात्र की प्रतीक्षा करना तथा पात्र उपलब्ध हो जाने पर आहार दान देने के उपरान्त आहार ग्रहण करना होता है। यह व्रत कभी भी किया जा सकता है, दान नहीं दिया जाता है, उपवास करना पड़ता है।

त्रिलोकभूषण व्रत कथा

पौष शुक्ल तृतीया के दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजाभिषेक का द्रव्य लेकर जिनमन्दिरजी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि कर भगवान को नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर नवग्रह व भगवान महावीर की मूर्ति यक्षयक्षिणी सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, जयमाला पूर्वक स्तोत्र पढ़ता हुआ पूजा करे, साथ में नैवेद्य चढ़ावे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षि की व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं अर्हं नवग्रह देवेभ्यो यक्षयक्षि सहितेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, जिनसहस्र नाम पढ़े, व्रत कथा पढ़े, महावीर चारित्र पढ़ें, एक महाअर्घ्य थाली में रखकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, उपवास करे, दूसरे दिन स्वयं पारणा करे, चतुर्विध संघ को आहार दानादिक देवे, इस प्रकार प्रत्येक महिने की उसी तिथि को पूजा कर उपवास करे, अंत में उद्यापन करे, उस समय इस प्रकार बत्तीस महीने तक उपवास पूर्वक व्रत करे,

अंत में उद्यापन करे, उस समय नवग्रह विधान कर महाभिषेक करे, १६ मुनिसंघों को आहार दानादिक देवे, १६ आर्यिका माताओं को आहार दानादिक देवे ।

राजा श्रेणिक व रानी चेलना देवी की कथा पढ़े ।

त्रिकाल तृतीया व्रत कथा

भाद्र शुक्ला ३ के दिन स्नानकर शुद्ध वस्त्र पहनकर मन्दिर में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धि करे, भगवान को साक्षात् नमस्कार करे, मंडप को शृंगारित करके मण्डप वेदी के ऊपर ७२ दल के कोठों का यन्त्रदल पंचवर्ण से मांडे, अष्टमंगल द्रव्य रखे, मण्डल पर आठों दिशा सम्बन्धी आठ सूत्र वेष्टित सजाये हुये मंगल कलश रखे, यंत्रदल में एक सुशोभित श्वेत सूत्र वेष्टित कुंभ रखे, ऊपर चंदोवा बांधे, अभिषेक पीठ पर त्रिकाल चौबीसी की प्रतिमा किंवा चौबीस तीर्थंकर यक्षयक्षिणी सहित स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, एक थाली में पहले के समान यंत्र निकालकर उस थाली में ७२ पान रखे, उन पानों पर गंध, अक्षत, पुष्प फल, आदि रखकर उस थाली को मंडल के मध्य कुंभ पर रखे, उस थाली के मध्य में त्रिकाल तीर्थंकर की मूर्ति रखे, उसके बाद प्रत्येक तीर्थंकर की अलग-अलग पूजा करे, पंचकल्याण के अर्घ चढ़ावे, जयमाला पढ़े, स्तोत्र पढ़े । उनके बीज मन्त्रों को बोलता हुआ प्रत्येक कोष्ठक में अर्घ्य चढ़ावे, श्री फल चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं निर्वाणादि द्वासप्तति त्रिकाल तीर्थंकरेभ्यो नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से पुष्पों को लेकर १०८ बार जाप्य करे, जिनसहस्र नाम पढ़े तीर्थंकरों के जीवन चारित्र पढ़े, व्रत कथा पढ़े, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य ३ माला रूप में करे, जिनवाणी व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी का यथायोग्य सत्कार करे पूजा करे, क्षेत्रपाल का भी सम्मान करे, एक थाली में ७२ पान लगाकर उनके ऊपर प्रथक-प्रथक अर्घ्य रखकर, महाअर्घ्य करे, महाअर्घ्य की थाली हाथ में लेकर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे ।

उस दिन उपवास करे, धर्मध्यान से समय बितावे, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन

करे, दूसरे दिन प्रातःकाल जिनेन्द्र प्रभु को नमस्कार करके घर आवे, सत्पात्रों को दान देवे, फिर अपने पारणा करे । इस प्रकार इस व्रत को तीन वर्ष तक पालन कर अंत में उद्यापन करे, उस समय त्रिकाल तीर्थंकरों की आराधना करनी चाहिये, चतुर्विध संघ को आहारादि देकर संतुष्ट करे, इस प्रकार व्रत का स्वरूप है ।

कथा

इस भरत क्षेत्र के मगध देश में कांची नगर नाम का मनोहर गांव है, उस गांव में पिंगल नाम का एक गुणवान नीतिमान् पराक्रमी राजा राज्य करता था, उस राजा को सागरलोचना नाम की एक अत्यन्त रूपवती, लावण्यवती, गुणवती ऐसी पटट्रानी थी, उसके एक सुमंगल नाम का बड़ा प्रतापी राजकुमार था, इस प्रकार प्रजाजनों का पालन करता हुआ राजेश्वर्य भोगता था ।

एक दिन युवराज सुमंगल नगर के बाहिर उद्यान में गया, वहां पूर्णसागर नाम के मुनिराज अवधिज्ञान समन्वित पधारे, युवराज ने मुनिराज को देखते ही तीन प्रदक्षिणा लगाई और साष्टांग नमस्कार किया, धर्मोपदेश सुनने के बाद कहने लगा कि हे मुनिराज आपकी अत्यन्त मोहक मुद्रा को देखकर मन में आपके प्रति मेरा मोह उत्पन्न हो रहा है, इसका कारण क्या है आप कहिये ।

तब मुनिराज अपने अवधिज्ञान से सब वृतांत जानकर कहने लगे कि हे राजपुत्र हमारे पर तुम्हारा मोह क्यों उत्पन्न हो रहा है मैं सब भव प्रपंच कहता हूं सुन । कुरू जांगल देश में हस्तिनापुर नाम का गांव है, उस गांव में कामुक नाम का एक राजा पहले राज्य करता था, उसकी रानी का नाम कमललोचना था, उसके विशाखदत्त नाम का सुन्दर पुत्र था, राजा का वरदत्त मन्त्री था वह बहुत होशियार था, मंत्री को पत्नी का नाम विशालनेत्री था, उसके गर्भ से विजयसुन्दरी नामक गुणवान सुन्दर एक पुत्री का जन्म हुआ, इस सब के साथ राजा अपना राज्य सुख आनन्द से भोगता था, उस मन्त्री की कन्या, विवाह के योग्य हो गई तब राजा के पुत्र विशाखदत्त के साथ विवाह कर दिया, दोनों ही आनन्द से अपना समय निकालने लगे, कुछ समय बाद कर्मयोग से राजपुत्र को रोग ने घेर लिया और वह मर गया ।

तब सब को बहुत दुःख हुआ, एक दिन ज्ञानसागर नाम के महामुनिश्वर आहार के लिए राज भवन में आये, राजा ने भक्ति से मुनिराज को आहार दिया और मुनिराज को वहां एक आसन पर बैठा दिया, हाथ जोड़ विनय से राजा ने राजपुत्र के मर जाने की दुःखद वार्ता कह सुनाई, तब मुनिराज राजा को सद्-बोधन देकर जंगल में वापस चले गये । मात्र विजयसुन्दरी पति के वियोग से अत्यन्त शोकाकुल होकर बड़े-बड़े आंसू बहाती हुई जोर-जोर से रोने लगी ।

एक दिन क्षांतिमति नाम की एक विदुषी आर्यिका राज भवन में आई, रानी ने माताजी को निरंतराय आहार दिया, उन आर्यिका माताजी ने राजकुमार के वियोगजनित होने वाले दुःख से दुःखी राज्य परिवार को सद्बोधन देकर शांत किया, राजकुमार की पत्नी को पास बुलाकर सान्त्वना दिया और कहने लगी कि हे बेटी दुःख करने से कुछ काम नहीं चलेगा, दुःख निवारण के लिए अब तुम त्रिकाल तृतीया व्रत को करो, इस व्रत के पालन करने से सब दुःखों का निवारण होता है ।

ऐसा कहकर माताजी ने व्रत की विधि बतलाई, आर्यिका माताजी के मुख से सर्व व्रत विधि सुनकर विजयसुन्दरी को बहुत समाधान हुआ, और उसने भक्तिपूर्वक व्रत को ग्रहण किया, और व्रत का पालन करने लगी, व्रत समाप्त होने के बाद उत्सव-पूर्वक उद्यापन किया, अन्त में मरकर स्त्रीलिंग का छेद करती हुई सोलहवें स्वर्ग में देव होकर जन्मी, आयुष्य समाप्त होने के बाद, इस लोक में कांची नगर के पिंगल नामक राजा के यहां तुम सुमंगल होकर उत्पन्न हुए हो, और मैं वही क्षांतिमति आर्यिका का जीव हूं जो तुमको मैंने व्रत प्रदान कर सम्बंध जोड़ा था । मैं मरकर देव हुआ, वहां से मनुष्य भव में आकर मुनि हुआ हूं इस प्रकार तुम्हारा और हमारा पूर्वभव का सम्बन्ध है, इसलिए तुमको मेरे पर मोह उत्पन्न हुआ है, तुम इसी भव से मोक्ष जाने वाले हो, यह सब सुनकर युवराज ने शीघ्र ही श्रावक व्रत ग्रहण किया और पुनः अपने नगर में वापस आ गया ।

एक समय कमल के अन्दर मरे हुए भ्रमर को देख कर युवराज को वैराग्य उत्पन्न हुआ, जंगल में जाकर मुनिश्वर के पास जिनदीक्षा ग्रहण किया, घोर तपश्चरण की शक्ति से केवलज्ञान उत्पन्न हुआ, अघाति या कर्मों का भी क्षय करके शाश्वत सुख को प्राप्त किया । वहां सिद्धों के सुख का अनभव करने लगा ।

अथ त्रीन्द्रिय जाति निवारण व्रत कथा

व्रत विधि :—पहले जैसी सब विधि करे। अन्तर सिर्फ इतना है कि इसमें चैत्र शु. २ को एकाशन और तीज को उपवास करे सम्भवनाथ तीर्थंकर की पूजा, जाप मन्त्र आदि करे पान तीन रखे।

अथ त्रसकाय निवारण व्रत कथा

विधि :—पहले के समान ही है। अन्तर सिर्फ इतना है कि चैत्र शुक्ला १० को एकाशन व ११ को उपवास करना चाहिए। श्रेयान्सनाथ तीर्थंकर का जाप मन्त्र व पूजा करनी चाहिए। पत्ते पूर्ववत् रखना चाहिए।

त्रिभुवनतिलक व्रत कथा

आषाढ महिने के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी के दिन व्रतिक स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहनकर जिन मन्दिर जी में जावे, मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगाकर ईर्यापथ शुद्धिपूर्वक जिनेन्द्र भगवान को साष्टांग नमस्कार करे, अभिषेक पीठ पर पंचपरमेष्ठी की प्रतिमा स्थापन कर पंचामृताभिषेक करे, अष्ट द्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गुरु की पूजा करे, यक्षयक्षिणी व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करना चाहिए, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करना चाहिए, व्रत कथा पढ़े, जिनेन्द्र देव के सामने एक पाटे पर पांच पान लगाकर उन पांचों पानों पर अर्घ्य रखे, एक थाली में अर्घ्य रख कर मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा लगावे, मंगल आरती उतारे, भगवान को महाअर्घ्य चढ़ा देवे, उस दिन उपवास करे, सत्पात्रों को आहारादि देवे, दूसरे दिन पूजा दान करके स्वयं भोजन करे, इसी क्रम से इसी तिथि को चार महिने तक पूजा उपवास करे, इसी तिथि को पांचवें महिने में उद्यापन करे, उस समय पंच परमेष्ठि विधान करके अभिषेक पूजा करे, पाँच प्रकार के नैवेद्य पांच जगह चढ़ा कर पूजा करे, आहार दान आदि देवे। अन्त में पारणा करे।

कथा

इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में कांभोज देश है, उस देश में चित्रांगपुरी नगर है, उस नगर में पहले एक सुखविद नाम का राजा अपनी पट्टरानी सुभद्रा सहित राज्य करता था, उसी नगर में बंधुदत्त नाम का एक सेठ बंधुमती सेठानी सहित रहता था, उसको एक नन्दन नाम का पुत्र था ।

एक दिन नन्दन देव दर्शन करने के लिए जिन मन्दिर में गया, दर्शन करके जब सभा मण्डप में आया तो वहां एक वरदत्त नामक दिगम्बर महामुनि उपदेश कर रहे थे, उसने भी उपदश सुना और प्रभावित होकर अणुव्रतों को ग्रहण करके वापस अपने घर लौट आया, कुछ दिनों के बाद वह नन्दन दुष्टजनों की संगति में पड़कर पाप करने लगा और गुरु से लिए हुए अणुव्रतों को छोड़ दिया, व्रत भंग हो गया, पाप के प्रभाव से मरकर बाईस सागर आयु वाले तमप्रभा नरक में उत्पन्न हुआ और दु:ख भोगने लगा । वहां से आयु समाप्त कर कौशलपुर नगर में सोमदत्त सेठ के घर महिष होकर पैदा हुआ । एक दिन एक खेत के निकट घास खाते हुए उस भैंसे पर अकस्मात बिजली पड़ी और कंठगत प्राण होकर जमीन पर गिर पड़ा, वह भैंसा वहां पड़ा था, उसी रास्ते से एक आर्यिका माताजी बिहार करती जा रही थी, उसने भैंसे की ऐसी अवस्था देख दया से उसके कान में णमोकार मंत्र सुनाया और वह भैंसा वहां ही मर गया, मरकर उज्जयिनी नगरी के राजा यशोभद्र की रानी के गर्भ से कन्या होकर उत्पन्न हुआ । वह कन्या, कुब्जक व गूंगी थी, बोलना भी उसे नहीं आता था और न चलना ही । एक दिन उस नगरी के उद्यान में अरिंजय और अजितंजय नाम के मुनिराज सहस्रकूट चैत्यालय के दर्शन को आये, यह शुभवार्ता राजा ने सुनी, राजा अपने नगरवासियों और परिवार को लेकर मुनिराज के दर्शनों को उद्यान में गया, भगवान का दर्शन कर धर्मोपदेश सुनने को मुनिराज के निकट बैठ गया, कुछ समय तक धर्मोपदेश सुनकर राजा ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि हे देव, मेरी कन्या इस प्रकार गूंगी और कुबड़ी क्यों हुई है, पूर्वभव में ऐसा कौनसा पाप किया है ? तब मुनिराज ने उसके पूर्व भवान्तर कह सुनाये, उसने पूर्वभव में गुरु से लिए हुये अणुव्रतों को भंग कर दिया, यही सबसे बड़ा पाप हुआ है, इस पाप से छुटने के लिये इस लड़की को त्रिभुवन तिलक व्रत का पालन करना चाहिये ।

ऐसा कहकर मुनिराज ने व्रत का स्वरूप कह सुनाया, तब उस राजकुमारी ने व्रत ग्रहण किया, सब लोग आनन्दित होकर नगर में वापस लौट गये, उस राजकन्या ने अच्छी तरह से व्रत को पाला, अन्त में व्रत का उद्यापन किया, व्रत के प्रभाव से उसका गूंगापन दूर हो गया, अच्छी तरह चलने लगी, उसका कुबड़ापन भी दूर हो गया, सुख से रहने लगी। उस कन्या का विवाह अवन्ति देश के राजा शत्रुञ्जय के पुत्र सुरराज के साथ कर दिया, कुछ काल राज्यसुख भोगकर आर्यिका माताजी के संग में जाकर आर्यिका व्रतों को ग्रहण कर लिया और घोर तपश्चरण कर अन्त में समाधिमरण से स्वर्ग में देव हुई, वहां से चयकर चक्रवर्ती हुआ, कुछ समय भोगों को भोगकर जिनदीक्षा ग्रहण कर मोक्ष सुख को पा लिया।

त्रेपन क्रिया व्रत कथा

इस व्रत में श्रावक के आठ मूल गुणों की विशुद्धि के निमित्त आठ अष्टमियों के आठ उपवास, पांच अणुव्रतों की विशुद्धि के लिये पांच पञ्चमियों के पांच उपवास; तीन गुणव्रतों की विशुद्धि के लिये तीन तृतीयाओं के तीन उपवास; चार शिक्षाव्रतों की विशुद्धि के लिये चार चतुर्थियों के चार उपवास; बारह तपों की विशुद्धि के लिये बारह द्वादशियों के बारह उपवास; साम्यभाव की प्राप्ति के निमित्त प्रतिपदा का एक उपवास; ग्यारह प्रतिमाओं की विशुद्धि के लिये ग्यारह एकादशियों के ग्यारह उपवास; चार प्रकार के दानों के देने के निमित्त चार चतुर्थियों के चार उपवास; जल छानने की क्रिया की विशुद्धि के लिये प्रतिपदा का एक उपवास एवं रत्नत्रय की विशुद्धि के लिये तीन तृतीया तिथियों के तीन उपवास; इस प्रकार कुल ४३ उपवास किये जाते हैं। व्रत के दिनों में णमोकार मन्त्र का जाप प्रतिदिन १००८ बार या कम से कम तीन माला प्रमाण करना चाहिये। व्रत के दिनों में भी शीलव्रत का पालन करना आवश्यक है।

आषाढ़ शुक्ल अष्टमी को स्नानकर शुद्ध होकर मन्दिरजी में जावे, प्रदक्षिणापूर्वक भगवान को नमस्कार करे, शान्तिनाथ की प्रतिमा यक्षयक्षि सहित लेकर पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, पंचभक्ष्य चढ़ावे, श्रुत, गुरु, यक्षयक्षि, क्षेत्रपाल इन सबकी यथायोग्य पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं शांतिनाथाय गरुडयक्ष महामानसी यक्षिसहिताय नमः स्वाहा ।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मंत्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े एक पूर्णअर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, सत्पात्रों को दान देवे, ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे, दूसरे दिन पूजा व दान देकर स्वयं पारणा करे, शक्तिनुसार उपवास करे ।

इस प्रकार त्रेपन महिने तक उसी तिथि को व्रत कर पूजा करना चाहिये, यह उतम विधि है, २७ व्रत करने से मध्यम विधि होती है और त्रेपन दिन की जघन्य विधि है । व्रत को उपरोक्त विधि से पालन कर अन्त में उद्यापन करे, उस समय शांतिनाथ विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

इस व्रत को श्रीषेण चक्रवर्ती ने पालन किया था, उसके प्रभाव से कर्म नष्ट कर मोक्ष को गया ।

व्रत कथा में राजा श्रेणिक रानी चेलना की कथा पढ़े ।

त्रिलोकतीज व्रत

भादों सुदि तृतिया दिन जान, त्रिलोक तीज व्रत को ठान ।
प्रोषध तीन वर्ष मध करे, पीछे उद्यापन विधि धरे ।। —कथाकोष

कथा

भावार्थ :—यह व्रत तीन वर्ष में पूर्ण होता है, प्रतिवर्ष भाद्रपद शुक्ला ३ के दिन उपवास करे ।

'ॐ ह्रीं त्रिलोक सम्बन्धि-अकृत्रिम जिन चैत्यालयेभ्यो नमः'

इस मन्त्र का त्रिकाल जाप्य करे, व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे ।

त्रिगुणसार व्रत

त्रिगुणसार व्रत इकतालीस, ग्यारा जेवा प्रोषध तीस ।

—वर्धमान पुराण

भावार्थ :—यह व्रत ४१ दिनों में पूरा होता है जिसमें ३० उपवास और ११ पारणा होते हैं । यथा—

(१) एक उपवास एक पारणा,　　(२) एक उपवास एक पारणा,
(३) दो उपवास एक पारणा,　　(४) तीन उपवास एक पारणा,
(५) चार उपवास एक पारणा,　　(६) पांच उपवास एक पारणा,
(७) चार उपवास एक पारणा,　　(८) चार उपवास एक पारणा,
(९) तीन उपवास एक पारणा,　　(१०) दो उपवास एक पारणा,
(११) एक उपवास एक पारणा ।

इस प्रकार ४१ दिन में व्रत समाप्त करे, प्रतिदिन त्रिकाल नमस्कार-मन्त्र का जाप्य करे । व्रत पूरा होने पर उद्यापन करे ।

ज्ञानपच्चीसी और भावना पच्चीसी व्रतों की विधि

ज्ञानपञ्चविंशति व्रते एकादश्यामेकादशोपवासा: चतुर्दश्यांचतुर्दशोपवासाः कार्याः भवन्ति । मतान्तरेण दशम्यां दशोपवासा: पूर्णिमायां पञ्चदशोपवासा कार्याः भावनापञ्चविंशतिव्रते तु प्रतिपदायामेकोपवासः द्वितीयायां द्वौ उपवासौ, तृतीयायां त्रय उपवासा:, पञ्चम्यां पञ्चोपवासः, षष्टयां षडुपवासा:, अष्टम्याष्टौ उपवासाः कार्याः भवन्ति । मतान्तरेण दशम्यां दशोपवासाः पञ्चम्यां पञ्चोपवासा:, अष्टम्यामष्टौ उपवासाः प्रतिपदायां द्वौ उपवासौ, कार्याः भवन्ति । एषा सम्यक्त्वपञ्चविंशतिका मूढत्रयं मदाश्चाष्टौ अनायतनानि षट्वासादीनां मासतिथ्यादिनियमः न ग्राह्यः ।

अर्थ :—ज्ञानपच्चीसी व्रत में एकादशी तिथि के ग्यारह उपवास और चतुर्दशी तिथि के चौदह उपवास किये जाते हैं । मतान्तर से इस व्रत में दशमी के दस उपवास और पूर्णिमा के पन्द्रह उपवास किये जाते हैं ।

भावना पञ्चीसी व्रत में प्रतिपदा में एक उपवास, द्वितीया तिथि में दो उपवास, तृतीया में तीन उपवास, पञ्चमी तिथि में पांच उपवास, षष्ठी तिथि में छः उपवास और अष्टमी तिथि में आठ उपवास किये जाते हैं । मतान्तर से दशमी तिथि में दस उपवास, पञ्चमी में पांच उपवास, अष्टमी में आठ उपवास और प्रतिपदा में दो उपवास किये जाते हैं । यह भावना पञ्चीसी व्रत तीन मूढ़ता, आठ मद, छः अनायतन और आठ शंकादि दोषों को दूर करने के लिए किया जाता है । इसके उपवास करने के लिए तिथि, मास आदि का नियम ग्राह्य नहीं है । अर्थात् यह व्रत किसी भी मास में किसी भी तिथि से प्रारम्भ किया जा सकता है । ज्ञानपञ्चीसी

और भावनापच्चीसी दोनों ही व्रतों में पच्चीस-पच्चीस उपवास किये जाते हैं। प्रथम ज्ञान प्राप्ति के लिए और द्वितीय सम्यग्दर्शन को निर्दोष करने के लिए किया जाता है।

विवेचन :—पच्चीसी व्रत कई प्रकार से किये जाते हैं। प्रधान दो प्रकार के पच्चीसी व्रत हैं— ज्ञान पच्चीसी और भावना-पच्चीसी। व्रत का उद्देश्य द्वादशांग जिनवाणी की आराधना है तथा सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति उसका फल है। ज्ञान-पच्चीसी व्रत में प्रधान रूप से श्रुतज्ञान की पूजा तथा श्रुतस्कन्ध यन्त्र का अभिषेक किया जाता है। इस व्रत में ग्यारह अंगों के ज्ञान के लिए ग्यारह एकादशियों के उपवास और चौदह पूर्वों के ज्ञान के लिए १४ चतुर्दशियों के उपवास किये जाते हैं। उदाहरण– श्रावण सुदी चतुर्दशी को पहला उपवास, भादों बदी एकादशी को दूसरा, भादों बदी चतुर्दशी को तीसरा, भादों सुदी एकादशी को चौथा, भादों सुदी चतुर्दशी को पांचवाँ, आश्विन बदी एकादशी को छठवां, आश्विन बदी चतुर्दशी को सातवां, आश्विन सुदी एकादशी को आठवां, आश्विन सुदी चतुर्दशी को नौवाँ, कार्तिक बदी एकादशी को दसवां, चतुर्दशी को ग्यारहवां, कार्तिक सुदी एकादशी को बारहवां, चतुर्दशी को तेरहवां, मार्गशीर्ष बदी एकादशी को चौदहवां, चतुर्दशी को पन्द्रहवां, मार्गशीर्ष सुदी एकादशी को सोलहवां, चतुर्दशी को सत्रहवां, पौषबदी एकादशी को अठारहवां, चतुर्दशी को उन्नीसवां, पौषबदी एकादशी को बीसवां, चतुर्दशी को इक्कीसवां, माघबदी एकादशी को बाईसवां, चतुर्दशी को तेई-सवां, माघ सुदी चतुर्दशी को चौबीसवाँ और फाल्गुन बदी चतुर्दशी को पच्चीसवां उपवास करना होगा। इस व्रत के लिए "ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूत द्वादशाङ्गाय नमः।" इस मन्त्र का जाप करना होता है। व्रत एक वर्ष या १२ वर्ष तक किया जाता है। इसके पश्चात् उद्यापन कर दिया जाता है।

भावना पञ्चमी व्रत सम्यक्त्व की विशुद्धि के लिए किया जाता है। सम्य-ग्दर्शन के २५ दोष हैं—तीन मूढ़ता, छः अनायतन, आठ मद तथा शंकादि आठ दोष। तीन तृतीयाओं के उपवास तीन मूढ़ताओं को दूर करने, छः षष्ठियों के उपवास षट अनायतन को दूर करने, आठ अष्टमियों के उपवास आठ मदों को दूर करने एवं प्रतिपदा का एक उपवास, द्वितीयाओं के दो उपवास और पञ्चमियों के पांच उपवास इस प्रकार कुल आठ उपवास शंकादि आठ दोषों को दूर करने के लिए किये जाते

हैं। इस व्रत का बड़ा भारी महत्व बताया गया है। यों तो इसके लिए किसी मास का बन्धन नहीं है, पर यह भाद्रपद मास से किया जाता है। इस व्रत का आरम्भ अष्टमी तिथि से करते हैं। व्रत करने के एक दिन पूर्व व्रत की धारणा की जाती है तथा चार महीनों के लिए शीलव्रत ग्रहण किया जाता है। इस व्रत के लिए **'ओं ह्रीं पञ्चविंशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय नमः'** मन्त्र का जाप प्रतिदिन तीन बार उपवास के दिन करना चाहिए। सम्यग्दर्शन की विशुद्धि करने के लिए संसार और शरीर से विरक्ति प्राप्त करना चाहिए।

भावना-पच्चीसी व्रत का दूसरा नाम सम्यक्त्व पच्चीसी भी है। इस व्रत के उपवास के दिन चैत्यालय प्रांगण में एक सुन्दर चौकी या टेबिल के ऊपर सस्कृत-चन्दन, केशर आदि से संस्कृत कुम्भ चावलों के पुञ्ज ऊपर रखकर उस पर एक बड़ा थाल रखना चाहिए। थाल में सम्यग्दर्शन के गुणों को अंकित करके मध्य में पाण्डुक-शिलाबनाकर प्रतिमा स्थापित कर देनी चाहिए। चार महिनों तक जब तक कि उपर्युक्त तिथियों के उपवास पूर्ण न होजायें भगवान का प्रतिदिन पूजन अभिषेक करना चाहिए। प्रत्येक उपवास के दिन अभिषेकपूर्वक पूजन करना आवश्यक है। यदि सम्भव हो तो व्रत समाप्ति तक प्रतिदिन उपर्युक्त मन्त्र का जाप करना चाहिए। अन्यथा उपवास के दिन ही जाप किया जा सकता है।

ज्ञानावरणीय कर्म निवारण व्रत कथा

आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन में आने वाले कोई भी एक नंदीश्वर पर्व में सप्तमी के दिन एकासन करे, अष्टमी के दिन शुद्ध होकर मन्दिरजी में जावे, तीन प्रदक्षिणा-पूर्वक भगवान को नमस्कार करे, आदिनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, अखण्डदीप जलावे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदिनाथ तीर्थंकराय गोमुखयक्ष चक्रेश्वरी यक्षी सहिताय नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, प्रदक्षिणापूर्वक मंगल आरती उतारते हुये एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, सत्पात्रों को दान देवे,

दूसरे दिन भगवान का दूध का अभिषेक करके अष्टद्रव्य से पूजा करे, पारणा करे, एकम से नवमी पर्यन्त प्रतिदिन क्षीराभिषेक करे, पूजा करे, इस प्रकार इस व्रत को पांच अष्टान्हिका में करे, अन्त में उद्यापन करे, उस समय भक्तामर विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े ।

ज्ञानाचार व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ल सप्तमी को एकासन करके, अष्टमी को शुद्ध हो जिन मन्दिर में जावे, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, आदिनाथ तीर्थंकर की यक्षयक्षि सहित प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, श्रुत व गणधर की पूजा करे, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे, नैवेद्य चढ़ावे ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदिनाथ तीर्थंकराय गोमुखयक्ष चक्रेश्वरी देवी सहिताय नमः स्वाहा ।

इस मंत्र का १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मंत्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, उस दिन उपवास करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, सत्पात्रों को दान देवे, दूसरे दिन पूजा करके दानादिक देकर स्वयं पारणा करे ।

इस प्रकार आठ अष्टमी को पूजा करके व्रत करे, कार्तिक अष्टान्हिका में उद्यापन करे, उस समय आदिनाथ विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को दान देवे ।

कथा

इस व्रत को मेघेश्वर ने पूर्वभव में पाला था, मेघेश्वर होकर भरत चक्रवर्ती के राज्य में रहा, अन्त में दीक्षा लेकर मोक्ष को गया ।

इस व्रत में राजा श्रेणिक व रानी चेलना की कथा पढ़े ।

ज्ञान साम्राज्य व्रत कथा

आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को शुद्ध होकर मन्दिर में जावे, प्रदक्षिणा लगाकर भगवान को नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि भगवान को नमस्कार करे, पंचपरमेष्ठि

भगवान की प्रतिमा का पंचामृताभिषेक करे, अष्टद्रव्य से पूजा करे, पांच प्रकार का नैवेद्य बनाकर चढ़ावे, श्रुत व गणधर, यक्षयक्षि व क्षेत्रपाल की पूजा करे।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा।

इस मन्त्र से १०८ बार पुष्प लेकर जाप्य करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे, व्रत कथा पढ़े, अखण्ड दीप जलावे, एक फूल की माला बनाकर भगवान के चरणों में चढ़ावे, एक पूर्ण अर्घ्य चढ़ावे, मंगल आरती उतारे, इस प्रकार प्रत्येक अष्टमी व चतुर्दशी के दिन व्रत पूजा करे, प्रत्येक दिन दूध का अभिषेक करे, पुष्पमाला चढ़ावे, इस प्रकार चार महीने तक प्रतिदिन एकेक वस्तु छोड़कर भोजन करे, सत्पात्रों को दान करे, ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे, कार्तिक पूर्णिमा के दिन व्रत का उद्यापन करे, उस समय पंचपरमेष्ठि विधान करके महाभिषेक करे, चतुर्विध संघ को आहारादि देवे।

कथा

राजा श्रेणिक और रानी चेलना की कथा पढ़े।

अथ ज्ञानचन्द्र अथवा जिनचन्द्र व्रत कथा

व्रत विधि—चैत्र आदि १२ महीने में कोई भी महीने के शुक्ल पक्ष या कृष्ण पक्ष की चतुर्थी के दिन एकाशन करे व ५ के दिन सुबह शुद्ध कपड़े पहनकर अष्टद्रव्य लेकर मन्दिर में जाये। दर्शन आदि कर वेदि पर पंचपरमेष्टी की प्रतिमा स्थापित करे, उसका पंचामृत अभिषेक करे। अष्टद्रव्य से पूजा करे।

जाप :—"**ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो नमः स्वाहा**"

इस मन्त्र का १०८ पुष्पों से जाप करे, णमोकार मन्त्र का १०८ बार जाप करे। कथा स्तोत्र अर्चना आदि करे। आरती करे। उस दिन उपवास करके धर्मध्यान पूर्वक समय बितावे। दूसरे दिन दान व पूजा करके पारणा करे।

इस क्रम से महीने में एक ऐसी ५ तिथि करे। उद्यापन करे। पंचपरमेष्ठी विधान करे। चतुःविध संघ को दान दे। करुणा दान भी दे।

कथा

यह व्रत पहले जिनचन्द्र राजा ने अपने परिवार सहित यथाबिधि पालन कर उद्यापन किया था। इस कारण उसे राजेश्वर्य मिला था, उसने अनेक कृत्रिम व अकृत्रिम चैत्यालय का दर्शन करके वज्रकपाट खोलकर धर्म प्रभावना की थी, अन्त में उसने दिगम्बर दीक्षा लेकर समाधिपूर्वक मरण किया जिससे वह देव हुआ। वहां बहुत समय तक सुख भोगकर मनुष्य भव लेकर मोक्ष गया। ऐसा इस व्रत का महत्व है।

ज्ञान पच्चीसी व्रत (ज्ञान पंचविंशतिका व्रत)

इस व्रत में एकादशी के ११ और चतुर्दशी के १४ ऐसे २५ उपवास करना चाहिये मतान्तर भेद से दशमी के १० और पूर्णिमा के १५ ऐसे २५ उपवास करना भी कहा गया है।

इस व्रत का उद्देश्य द्वादशाङ्ग जिनवाणी की आराधना उपासना करना है, इससे सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति होती है। इस व्रत में श्रुत ज्ञान की पूजा, श्रुतस्कन्ध यन्त्र का अभिषेक करना होता है, ११ अंग के ज्ञान के लिये ११ उपवास व १४ पूर्वी के ज्ञान के लिये १४ उपवास इस प्रकार २५ उपवास बताये हैं। यह श्रावण कृष्णा चतुर्दशी से शुरू करना चाहिये और प्रत्येक शुक्ल पक्ष व कृष्ण पक्ष की ११ और १४ को यह व्रत करना चाहिये, इस व्रत में जाप **ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूत द्वादशाङ्गाय नमः** इस मंत्र का करना चाहिये। यह व्रत अखंडित १२ वर्ष करना चाहिये। १३वें वर्ष उद्यापन करना चाहिये। उद्यापन की शक्ति न हो तो व्रतः पुनः करना चाहिये।

ज्ञानतप व्रत

वर्ष में कभी भी १५८ उपवास करना चाहिये।

(१) पंचपोरिया व्रत

भादों सुदि पांचें दिन जान, घर पच्चीस बांटे पकवान।

(२) कौमारसप्तमी व्रत

भादों सुदि सप्तमी के दिना, खजरो मण्डप पूजेजिना।

(३) मनचिंती अष्टमी व्रत

भादों सुदि आठें दिन जान, मन चिन्ते भोजन परवान।

(४) दशमिनिमानी व्रत

भादों सुदि दशमी व्रत धार, आदरयुत पर धर आहार ।

(५) चमकदशमी व्रत

चमकदशमि और चमकाय, जो भोजन नहिं तो अन्तराय ।

(६) छहार दशमी व्रत

छहार दशमि व्रत इहि परकार, छह सुपात्र को देय तमोर ।

(७) तमोर दशमी व्रत

सम्बोभ दशमि व्रत को यह बोर, दश सुपात्र को देय तमोर ।

(८) पान दशमी व्रत

पान दशमि बीरा दशपान, दश श्रावक दे भोजन ठान ।

(९) फूल दशमी व्रत

फूल दशमी दश फूलन माल, दश सुपात्र पहिनाय अहार ।

(१०) फल दशमी व्रत

फल दशमी फल दशकरलेय, दश श्रावक के घर-घर देय ।

(११) दीप दशमि व्रत

दीप दशमि दश दीप बनाय, जिनहिं चढ़ाय आहार कराय ।

(१२) झाव दशमी व्रत

झाव दशमी व्रत दशपुरी, दश श्रावक दे भोजन करी ।

न्योन दशमी व्रत

न्योन दशमी दश दशमि कराय, नये-नये दशपात्र जिमाय ।

उड़ददशमी व्रत

दशमी उडद-२ आहार पंच घरन मिलि जो अविकार ।

बारादशमी व्रत

बारा दशमी सुहारी लेय, बारा-२ दशघर देय ।

भण्डार दशमी व्रत

भण्डार दशमी व्रत शक्ति जुपाय, दश जिन भवन भण्डार चढ़ाय ।

(व्रत कथा समाप्त)

प्रशस्ति

स्वस्ति श्री वीर निर्वाण २५१५ मासानां मासे आश्विन मासे शुक्ल पक्षे नवम्यां सोमवासरे श्रवण नक्षत्रे, अभिजित शुभ मुहूर्ते वृश्चिक नामास्थिर लग्ने उत्तर-प्रदेशस्य मेरठ राज्ये, बडोत नगरस्य वृषभजिन चैत्यालय समीपे अनुवादकर्त्ता श्री मूलसंघे सरस्वती गच्छे बलात्कारगणे कुन्दकुन्दाचार्य परंपराया श्री आचार्य आदि-सागर अकली तत्शिष्य समाधि सम्राट आध्यात्मयोगी तीर्थभक्त वंदना-शिरोमणि चतुर्नुयोगज्ञाता महामन्त्रवादी, आचार्य महावीरकीर्ति तत्शिष्य सर्वागममर्मज्ञ, मन्त्र तंत्र, यन्त्र शास्त्र विशेषज्ञ वादीभसूरी, गणधराचार्य कुन्थुसागरेण, व्रत कथा कोष संग्रह व मराठी भाषात् हिन्दी भाषानुवाद मया सर्वजनहितार्थ पद्यानुवाद कृता । इति शुभं भूयात् ।

सूतक विचार

रजःस्रावसूतक

प्राकृतं जायते स्त्रीणां मासे मासे स्वभावतः ।
पंचाशद्वर्षादूर्ध्वं तु अकाल इति भाषितः ।

भावार्थ :—स्त्रियों को स्वभाव से ही महीने-महीनें रजस्राव होता है, वह प्राःकृतिक रज है । दश वर्ष के भीतर और ५० वर्ष के ऊपर जो रजस्राव होता है वह अकाल रज है, यह दूषित नहीं है ।

शुद्धा भर्तुश्चतुर्थेऽह्नि, भोजने रन्धनेऽपि वा ।
देव पूजा गुरूपास्ति होम सेवा तु पंचमे ।।

भावार्थ :—रजस्वला स्त्री चौथे दिन स्नान करने पर पति सेवा और भोजनपान बनाने के योग्य हो जाती है । परन्तु देव-पूजा, गुरूपासना और हवन-सेवा योग्य पांचवें दिन ही होती है ।

अकालिक ऋतुदोष

ऋतुकाले व्यतीते तु यदि नारी रजस्वला ।
तत्र स्नानेन शुद्धिः स्याद्ष्टादशदिनात्पुरा ।

भावार्थ :—ऋतुकाल के बीत जाने पर अठारह दिन के पहले यदि कोई स्त्री रजस्वला हो जाये तो वह स्नान मात्र से शुद्ध हो जाती है ।

सूतक

जातकं मृतकं चेति सूतकं द्विविधं स्मृतम् ।
स्रावः पातः प्रसूतिश्च त्रिविधं जातकस्य च ।।

भावार्थ :—सूतक दो प्रकार का है—(१) जातक (२) मृतक । इनमें जातक सूतक तीन प्रकार का होता है—(१) स्राव (२) पात (३) प्रसूति ।

स्राव, पात और प्रसूति

मासत्रये चतुर्थे स गर्भस्य स्राव उच्यते ।
पातः स्यात् पंचमे षष्ठे प्रसूतिः सप्तमादिषु ।।

भावार्थ :—गर्भाधान के बाद तीन या चार महीने में जो गर्भ च्युत हो उसे स्राव कहते हैं । पांचवें और छठवें मास में जो गर्भ च्युत हो उसे पात कहते हैं । और सातवें से दशवें मास तक जो गर्भ च्युत हो उसे प्रसूति कहते हैं ।

स्राव सूतक

माससंख्या दिनं मातुः स्रावे सूतकमिष्यते ।
स्नानेनैव तु शुद्धयन्ति सगोत्रश्चैव वै पिता ।।

भावार्थ :—जितने महीनों का स्राव हो उतने दिन का सूतक माता को होता है । और सगोत्री बन्धु तथा पिता स्नान मात्र से शुद्ध हो जाते हैं ।

गर्भपात सूतक

पाते मातुर्यथामासं तावदेव दिनं भवेत् ।
सूतकं तु सपिण्डानां पितुश्चैकदिनं भवेत् ।।

भावार्थ :—जितने महीनों का पात हो उतने ही दिन का सूतक माता को होता है तथा सगोत्री भाई, बन्धु तथा पिता के लिए एक दिन मात्र का होता है ।

प्रसूति सूतकम्

प्रसूतौ चैव निर्दोषं दशाहं सूतकं भवेत् ।
त्रिपक्षे शुद्धयते सूती प्रसूतिस्थानमासकम् ।।

भावार्थ :—निर्दोष प्रसूति में बालकोत्पत्ति का सूतक दश दिन का होता है। प्रसूता स्त्री डेढ़ माह में शुद्ध होती है और प्रसूति स्थान एक महीने में शुद्ध होता है।

अनिरीक्षण और अनधिकार सूतक

तदा पुंप्रसवे मातुर्दशाहमनिरीक्षणम् ।
अघं विंशतिरात्रं स्यादनधिकार लक्षणम् ।।
स्त्रीसूतौ तु तथैव स्यादनिरीक्षणलक्षणम् ।
पश्चादनधिकाराघं स्यात्त्रिंशद्दिवसं भवेत् ।।

भावार्थ :—पुत्र जन्म में प्रसूता स्त्री को दश दिन का अनिरीक्षण सूतक होता है। पश्चात् २० दिन का अनधिकार सूतक होता है। और पुत्री जन्म में माता को १० दिन का अनिरीक्षण सूतक होता है और ३० दिन का अनधिकार सूतक होता है।

जननेऽप्येवमेवाघं मात्रादीनां तु सूतकम् ।
आसन्ने दश रात्रि स्याद् षड्रात्रि च चतुर्थके ।।
पंचमे पंच षट्वेदं, सप्तमे च दिनत्रयम् ।
अष्टमे च अहोरात्रि, नवमे च प्रहरद्वयम् ।।
दशमे स्नानमात्रं स्यात् एतद् नासन्नसूतकम् ।
आतृतीयात्समासन्ना अनासन्नास्ततः परे ।।

भावार्थ :—जननाशौच में माता-पिता, भाई और आसन्न बन्धुओं को दश दिन का सूचक होता है। और अनासन्न बन्धुओं को अर्थात् चौथी पीढ़ी में ६ दिन, पांचवीं में ५ दिन, छठी में ४ दिन। सातवीं में ३ दिन, आठवीं में १ दिन रात्रि, नवमी में दो प्रहर, और दशमी पीढ़ी में स्नान मात्र से शुद्ध हो जाती है। तीन पीढ़ी तक आसन्न और चौथी से १० पीढ़ी तक अनासन्न कहते हैं।

अश्वा च महिषी चेटी गौः प्रसूता गृहांगणे ।
सूतकं दिनमेकं स्यात् गृह बाह्ये न सूतकम् ।।

भावार्थ :—घोड़ी, भैंस, दासी, गौ आदि जो अपने गृह के भीतर जने तो एक दिन का सूतक होता है । बाहर नहीं ।

महिष्या पक्षकं क्षीरं गोक्षीरं च दशोदिनम् ।

अष्टमे दिवसे अजाया क्षीरं शुद्ध न चान्यथा ।।

भावार्थ :—जनने के बाद महिषी का दुग्ध १५ दिन में, गाय का दश दिन में और बकरी का ८ दिन में शुद्ध होता है । अन्यथा नहीं ।

मरणसूतक

नाभिच्छेनतः पूर्वे जीवन जातो मृतो यदि ।

मातुः पूर्णमतोऽयेषां पितुश्च त्रिदिनं समम् ।।

भावार्थ :—जीता उत्पन्न हुआ बालक नालच्छेदन के पूर्व ही मर जाये तो माता के लिये दश दिन का और पिता भाई तथा आसन्न बन्धुओं को तीन दिन का सूतक होता है ।

मृतस्य प्रसवे चैव नाभिच्छेदनतः परम् ।

मातुः पितुश्च आसन्नजनानां पूर्णसूतकम् ।।

भावार्थ :—मरा हुआ बालक यदि उत्पन्न हो अथवा नालच्छेदन के पश्चात् मरण करे तो माता, पिता और आसन्न बन्धुओं को दश दिन का सूतक होता है ।

अनतीतदशाहस्य बालस्य मरणे सति ।

पित्रोर्दशाहमाशौचं तदूर्ध्वं पूर्णसूतकाः ।।

भावार्थ :—यदि बालक १० दिन के भीतर ही मर जाये तो मरण का सूतक उन्हीं जन्म के सूतक के दश दिन के भीतर ही समाप्त हो जाता है । यदि दश दिन के बाद मरण करे तो सूतक मानना पड़ेगा ।

जातदंतशिशोर्नाशे पित्रोर्मातुर्दशाहकम् ।

प्रत्यासन्नसगोत्राणामेकरात्रिमम्नं भवेत् ।।

अप्रत्यासन्नबन्धूनां स्नानमेव प्रचोदितम् ।

अन्नप्राशनं नैव मृते बालं दिनत्रयम् ।।

भावार्थ :—दांत उगे हुए बालक के मरण का सूतक माता-पिता को दश दिन का होता है तथा आसन्न बन्धुओं को एक दिन का और अनासन्न बन्धुओं को स्नान मात्र तक का होता है।

कृतचौलस्य बालस्य पितुर्भ्रातुश्च पूर्ववत् ।
आसन्नेतरबन्धूनां पंचाहैकाहमिष्यते ।।
मरणे चोपनीतस्य पित्रादीनां तु पूर्वकम् ।
आसन्नबान्धवानां च तथैवाशौचमिष्यते ।।

भावार्थ :—चौल संस्कार हुए बालक के मरण का सूतक माता, पिता और भाइयों को दश दिन का, आसन्न बन्धुओं को पांच दिन का और अनासन्न बन्धुओं को एक दिन का होता है।

उपनीत (यज्ञोपवीत) संस्कार हुए बालक के मरण का सूतक माता, पिता, भाई और आसन्न बंधुओं को १० दिन का होता है और अनासन्न बन्धुओं को पीढ़ी के प्रमाण से सूतक होता है।

आसन्न बन्धुओं को पीढ़ी प्रमाण सूतक

तृतीयपादे स्यात्पूर्णं चतुष्पादे षडं भवेत् ।
पंचमे दिन पंचैव षष्ठे च तूर्यहा भुवि ।।
सप्तमे च तृतीयं स्यादष्टे पुंस्यहोरात्रिकम् ।
नवमे च दिनार्धं स्याद्दशमे स्नानमात्रतः ।।

भावार्थ :—मरण का सूतक तीसरी पीढ़ी तक दश दिन का होता है पश्चात् चौथी पीढ़ी में ६ दिन का, पांचवीं पीढ़ी में ५ दिन का, छठवीं पीढ़ी में ४ दिन का, सातवीं पीढ़ी में ३ दिन का, आठवीं पीढ़ी में १ दिन रात्रि का, नवीं पीढ़ी में दो प्रहर का और दसवीं पीढ़ी में स्नान मात्र से शुद्ध होता है।

मातामहो मातुलश्च, म्रियते वाऽथ ततस्त्रयः ।
दौहित्रो भागिनेयश्च पित्रोर्वै म्रियते स्वसा ।।
स्वगृहे गृहमाशौचं गृहबाह्यो न सूतकम् ।

भावार्थ :—नाना, नानी, मामा, मामी, पुत्री का लड़का, भानजा, मौसी, बुआ ये यदि अपने घर पर मरें तो ३ दिन का सूतक होता है। अपने गृह से बाहर मरें तो सूतक नहीं।

कन्यायां मरणे चैव विवाहा प्राग्दिनत्रयम् ।
ऊढानां मरणे भर्तुः पूर्णं पक्षस्य चोदितम् ।।

भावार्थ :—कन्या के मरण का सूतक ३ दिन का, और विवाही हुई कन्या अपने घर मरे तो माता, पिता, भाइयों को ३ दिन का और ससुराल वालों को १० दिन का सूतक होता है।

स्वसुर्गृहे मृतो भ्राता भ्रातुर्वाथ गृहे स्वसा ।
अशौचं त्रिदिनं तत्र सूतकं न परत्र तु ।।

भावार्थ—बहिन के घर भाई या भाई के घर बहन का मरण हो तो दोनों के लिये तीन दिन का सूतक होता है। और यदि इनका अन्यत्र मरण हो तो सूतक नहीं होता।

सतीनां सूतकं हत्या पापं षण्मासकं भवेत् ।
अन्या सामास्म हत्यानां प्रायश्चित्तं विधानतः ।।

भावार्थ :—अपने को अग्नि में जला लेवे ऐसी सती होने के पाप का सूतक छः मास का होता है और अन्यान्य हत्याओं का सूतक प्रायश्चित ग्रन्थों में जानकर शुद्धि करे।

गर्भिण्यां मरणे प्राप्ते नैमित्यादिकारणे ।
सहैव दहनं कुर्याद् गर्भच्छेदं न कारयेत् ।।

भावार्थ :—यदि गर्भिणी स्त्री का मरण रोगादिक किसी भी कारण से हो जाये तो उसे गर्भ सहित ही जला देना चाहिये। क्योंकि माता के मरण होने से पूर्व ही बच्चा का मरण हो जाता है।

दुर्मरण— **विद्युत्तोयाग्निचांडाल सर्पपांशद्विजादपि ।**
वृक्षव्याघ्रपशूभ्यश्च मरणं पापकर्मणाम् ।।
आत्मानं घातयेद्यस्तु, विषशास्त्राग्निना यदि ।
स्वेच्छया मृत्युमाप्नोति ततो दुर्मरणं भवेत् ।।

देशकालभयाद्वापि संस्कर्तु नैव शक्यते ।
नृपादानां समादाय कर्त्तव्या प्रेतसत्क्रिया ।।
ज्ञातव्यं सूतकं तस्य प्रायश्चित विधानतः ।
शान्तिकादिविधि कृत्वा प्रोषधादिकसत्तपः ।
मृतस्यानिच्छया सद्यः कर्त्तव्य प्रेतसत्क्रिया ।
प्रायश्चितविधि कृत्वा नैव कुर्यान्मृतस्य तु ।।

भावार्थ :—बिजली, जल, अग्नि, चांडाल, सर्प, पशु, पक्षी, वृक्ष, व्याघ्र तथा अन्य पशु आदि के द्वारा मरण पाप कर्म से होता है । जो मरण स्वेच्छापूर्वक आत्म-घात से होता है उसे दुर्मरण कहते हैं । देश काल के भयवश उसका दाह संस्कार राजाज्ञा लेकर हो करे और इसका प्रायश्चित शास्त्र के अनुसार जप, तप प्रोषधादि व्रतों द्वारा अवधि प्रमाण का शांति करे । यदि मरण अनिच्छापूर्वक हुआ तो तत्काल प्रेतदाह करे, और इसके प्रायश्चित लेने की कोई जरूरत नहीं है ।

सूतक की तत्काल शुद्धि

समारब्धेषु वा यज्ञमहान्यासादिकर्मसु ।
बहुद्रव्यविनाशे तु सद्यः शौचं विधीयते ।।

भावार्थ :—यज्ञ महान्यास, जैसे बड़े-बड़े धार्मिक प्रभावना के कार्यों का समारम्भ कर दिया हो और अपने बहुत द्रव्य लग रहा हो, जिसका विनाश होता हो ऐसी दशा में सूतक या पातक कोई भी हो तत्काल शुद्धि कर अपना कार्य आरम्भ कर देना चाहिये ।

प्रव्रजिते मृते काले देशान्तरे मृते रणे ।
संन्यासे मरणे चैव दिनैकं सूतकं भवेत् ।।

भावार्थ :—जो गृहत्यागी दीक्षित हुआ हो, उत्कृष्ट क्षुल्लक पद ग्रहण किया हो, अथवा मुनि हुआ हो, अथवा देशान्तर में मरण हो, अथवा संग्राम में वा संन्यास में मरण हो तो एक दिन का सूतक होता है ।

मृते क्षणेन शुद्धिः व्रतसहिते चैव सागारे ।

भावार्थ :—संग्राम, जल, अग्नि, परदेश, बाल संन्यास इनमें यदि व्रती श्रावक का मरण हो जाये तो तत्काल शुद्धि होती है ।

व्रतीनां दीक्षितानां च याज्ञिक ब्रह्मचारिणाम् ।
नैवाशौचं भवेत्तेषां पितुश्च मरणं विना ।।

भावार्थ :—व्रती, दीक्षित, याज्ञिक और ब्रह्मचारी इनको सिर्फ पिता-माता के मरण सिवाय और किसी का सूतक नहीं होता ।

जिनाभिषेकपूजाभ्यां पात्रदानेन शुद्धयति ।

भावार्थ :—सूतक निवृत्ति होने के बाद जिनेन्द्र अभिषेक, पूजन और पात्र-दान कर शुद्धि होती है ।

इति सूतक विधान

संक्षिप्त प्रायश्चित संग्रह

वर्तमान समय में जैन समाज के अन्दर प्रायश्चित देने का एक विलक्षण ही रूप हो गया है । प्रायश्चित पापों से छुटकारा पाने तथा शुद्धि होने के लिये होता है । परन्तु वर्तमान प्रायश्चित से न तो पाप ही नाश होता है और न शुद्धि ही होती है अपितु देने वालों और लेने वाले व्यक्तियों में विशेष कषाय की मात्रा बढ़ जाने से उल्टा दोनों के पाप बंध ही होता है ।

इसी हेतु से मैंने खोजकर कुछ प्रायश्चितों का संग्रह किया है । आशा है कि जैन समाज रूढ़िमय प्रायश्चितों की प्रथा को छोड़कर इस जैन शास्त्रोक्त प्रायश्चित विधि के अनुसार ही प्रायश्चित देने का प्रचार करेगी जिससे देने और लेने वाले उभय प्राणियों का हित हो ।

प्रायश्चितं शुद्धिः मलहरणं पाप नाशनं भवति । (छेदपिण्ड)

भावार्थ :—शुद्धि का होना, मल का दूर होना, या पाप का नाश होना प्रायश्चित है ।

प्रायश्चित का प्रमाण

यत् श्रमणानां भणितं प्रायश्चितं अपि श्रावकानापि ।
द्वय त्रयाणां षण्णां अर्धार्धक्रमेण दातव्यम् ।। (छेद पिण्ड)

भावार्थ :—जो मुनियों को प्रायश्चित बताया गया है उससे आधा उत्कृष्ट श्रावकों को करना चाहिये तथा उससे आधा मध्यम श्रावकों से आधा जघन्य श्रावकों

को करना चाहिये। यहां जो प्रायश्चित-विधान बताया जा रहा है वह मुनियों की अपेक्षा से है। अत: श्रावक और श्राविकाओं को उक्त नियमानुसार प्रमाण से लेना चाहिये।

व्रतो में दोष का प्रायश्चित

षष्ठमनुव्रतघाते गुणव्रतशिक्षाव्रतस्य तु उपवासः।
दर्शनाचारातिचारे जिनपूजा भवति निर्दिष्टा ।। (छेदपिण्ड)

भावार्थ :—अणुव्रत, गुणव्रत और शिक्षाव्रतों के घात होने पर उपवास करे। तथा दर्शनाचारादि में दोष लगने पर जिनेन्द्र भगवान् की पूजा करना ही इष्ट है।

पंच महापातकों के प्रायश्चित

षण्णां सच्छ्रावकाणां तु पंचपातकसन्निधो।
महामहो जिनेन्द्राणां विशेषेण विशोधनम् ।।
आदावन्ते च षष्ठं स्यात् श्रमणान्येकविंशतिः।
प्रमादाद्गोवधे शुद्धिः कर्त्तव्या शल्यवर्जितैः।
द्विगुणं द्विगुणं तस्मात् स्त्रीबालपुरुषे हते।
सद्दृष्टिश्रावकर्षीणां द्विगुणं द्विगुणं ततः ।।

भावार्थ :—छह प्रकार के जघन्य श्रावकों को पंचमहापातक दोष लगने पर गो, स्त्री, बालक, श्रावक, ऋषि इनका वध हो जाने पर श्री जिनेन्द्र भगवान की पूजा करना ही विशेष रूप से प्रायश्चित है। नि:शल्य होकर प्रमाद और कषायपूर्वक यदि गाय का वध हो जाये तो श्रमणों (यतियों) को आदि अन्त में षष्ठोपवास तथा मध्य में २१ उपवास करना चाहिये। इसी प्रकार गो वध से दूना स्त्री-वध में अर्थात् स्त्री वध में ४२, बालक वध में ८४, सामान्य मनुष्य वध में १६८, सम्यक्दृष्टि श्रावक के वध में ३६६ और ऋषि वध में ६७२ उपवास यतियों को करना चाहिये। यहां षष्ठोपवास का मतलब यह है धारणा और पारणा के दिन १–१ वक्त भोजन करने से दो वक्त भोजन त्याग हुआ, तथा बीच में एक बेला का ४ वक्त भोजन त्याग हुआ, इस प्रकार छह वक्त भोजन त्याग को षष्ठोपवास कहते हैं।

तृणमांसात्पतत्सर्पपरिसर्पजलौकसाम् ।
चतुर्दश नवाद्यन्तक्षमणानि वधे छिदाः । (प्रायश्चितचूलिका)

भावार्थ :—मृग, शशक, रोधग्रादि, तृणचर जीवों के बध का १४ उपवास, सिंह ग्रादि मांस भक्षियों के वध का १३ उपवास, तीतर, मयूर, कुक्कुट, पारावतादि पक्षियों के वध का १२ उपवास का प्रायश्चित है, सर्पगोनसादि के वध का ११ उपवास, गोधरैक कृकलासादि परिपर्स के वध का १० उपवास, ग्रौर मकर मत्स्यादि जलचर जीवों के वध का ६ उपवास का प्रायश्चित है ।

गर्भस्य पातने पापे द्वादश स्मृताः ।

भावार्थ :—गर्भपात के पतन करने के पाप का १२ उपवास प्रायश्चित है ।

सुतामातृभगिन्यादिचांडालीरभीगम्य च ।
अश्नुवीतोपवासानां द्वात्रिंशत् मसंमयम् ।। (प्रायश्चित चूलिका)

भावार्थ :—पुत्री, माता, बहिन ग्रादि तथा चांडाली इनके साथ संयोग करने वाले व्यक्ति को ३२ उपवास करना चाहिये ।

मद्य मासं मधु स्वप्ने मैथुनं वा निषेवने ।
उपवासद्वयं कुर्यात् सहस्त्रैक जपोत्तमम् ।। (प्रायश्चित चूलिका)

भावार्थ :—यदि स्वप्न में मद्य, मांस, मधु इनका व मैथुन सेवन किया हो तो दो उपवास ग्रौर एक हजार जाप्य करे ।

रेतमूत्रपुरीषाणि मद्यो मांसमधूनि च ।
अभक्ष्यं भक्षयेत् षष्ठं दर्पतश्चेद्विषट् क्षमाः ।।

भावार्थ :—प्रमादवश यदि रेत, मूत्र, मल, मद्य, मांस, मधु, ग्रभक्ष्य, रुधिर, ग्रस्थि, चर्म ग्रजानपने खाने में ग्रा गया हो तो ६ उपवास का प्रायश्चित करे । ग्रौर यदि उक्त पदार्थ ग्रहंकारपूर्वक सेवन किये हों तो १२ उपवास का प्राय-श्चित करे ।

पंचोदुम्बरादीन् भक्षयति देशव्रती यदि प्रमाददर्पाभ्याम् ।
तर्हि तस्य भवतिच्छेदः द्वौ उपवासी त्रिरात्रिद्विकम् ।।

भावार्थ :—देशव्रती ने यदि अजानपूर्वक पांच उदम्बर फलों का सेवन कर लिया हो तो दो उपवास का प्रायश्चित ग्रहण करे। और यदि अहंकारपूर्वक सेवन किया हो तो दो दिन तीन रात्रि का उपवास कर प्रायश्चित ग्रहण करे।

कारुकगृहन्नपानाङ्गनासु भुक्ता सुषट् चतुर्थानि।
कारुकपात्रेषु पुनः भुक्ते पंचैव उपवास॥ (छेदपिण्ड)

भावार्थ :—फारुक, रजक, बरूटादि के गृह में भोजन पान करने से दश उपवास का प्रायश्चित ग्रहण करे। और यदि उसके पात्रों में भोजन किया हो तो पांच उपवास का प्रायश्चित ग्रहण करे।

चाण्डाल अन्नपाने भुक्ते षोडशा भवन्ति उपवासाः।
चाण्डालानां पात्रे भुक्ते अष्टैव उपवासाः॥ (छेदपिण्ड)

भावार्थ :—चांडाल के अन्नपान का सेवन करने से सोलह उपवास का प्रायश्चित ग्रहण करे। और यदि उसके पात्रों में भोजन किया हो तो ८ उपवास का प्रायश्चित ग्रहण करे।

अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा विकलत्रयविघातने।
प्रोषधा द्वि त्रि चत्वारो जपमालस्तथैव च। (प्रायश्चित)

भावार्थ :—अज्ञान एवं प्रमाद से यदि दो इन्द्रिय तेइन्द्रिय और चारइन्द्रिय जीवों का विघात हो जाये तो क्रम से दो उपवास, तीन उपवास और चार उपवास का प्रायश्चित ग्रहण करे। तथा दो तीन और चार जाप्य करे।

प्रायश्चित-समाप्ति के बाद श्रावक का कर्त्तव्य

त्रिसंध्यं नियमस्यान्ते, कुर्यात्प्राणशतत्रयम्।
रात्रौ च प्रतिमां तिष्ठेजितेन्द्रियसंहतिः॥

भावार्थ :—तीनों समय सामायिक करे। तीन सौ उच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करे। और इन्द्रियों को वश में करता हुआ रात्रि में भी प्रतिमारूप तिष्ठकर कायोत्सर्ग करे।

कृत्वा पूजां जिनेन्द्राणां, स्नपनं ते न च स्वयम्।
स्नात्वोपध्यम्बराधं च दानं देयं चतुर्विधम्॥

भावार्थ :—पश्चात् स्नानादि से पवित्र होकर श्री जिनेन्द्र भगवान् का

अभिषेक व पूजन करे । और मुनियों को धर्मोपकरण तथा श्रावकों को चार प्रकार का यथायोग्य दान देवे ।

इत्येवमल्पशः प्रोक्तः प्रायश्चितविधिस्फुटम् ।
अन्य विस्तारतोज्ञेयः शास्त्रेष्वन्येषु भूरिषु ।।

भावार्थ :—इस प्रकार यह थोड़ी-सी प्रायश्चित विधि बताई गई है । यदि विस्तार से जानना हो तो प्रायश्चित शास्त्रों से जाने ।

विशेष :—जिस मनुष्य या स्त्री से अपराध हो जाय मात्र उसी को ही प्रायश्चित लेना चाहिये । अन्य बन्धु वर्ग तथा कुटुम्ब के जन अपराधी नहीं होते ।

इति प्रायश्चित विधि ।

कायोत्सर्ग विधि

ग्रन्थारम्भे समाप्ते च स्वाध्याये स्तवनादिषु ।
सप्तविंशतिरूच्छ्वासः कायोत्सर्गमता इह ।।

भावार्थ :—ग्रन्थारम्भ के आदि में व अन्त में तथा स्वाध्याय में, स्तवन में, २७ श्वासोच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करे ।

अष्टविंशतिमूलेषु दिनस्य मलशुद्धये ।
अष्टाग्रशतमुच्छ्वासः निशायामपि तद्दलम् ।।

भावार्थ :—अट्ठाइस मूलगुणों में अथवा व्रतों में अविचार लगने पर १०८ श्वासोच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करे । यदि दिन में कोई दोष लग गया हो तो भी १०८ बार प्रमाण श्वासोच्छ्वास के कायोत्सर्ग करे और रात्रि में कोई दोष लग जाय तो ५४ श्वासोच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करे ।

पाक्षिकं त्रिशतं ज्ञेयं चतुर्मासमुद्भवे ।
चतुः शतं शतं पंच सांवत्सरे यथागमम् ।।

भावार्थ :—जहां १५ दिन में कोई दोष लग गया हो तो ३०० श्वासोच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करे । और यदि ४ मास में कोई दोष लगा हो तो ५०० श्वासोच्छ्वास प्रमाण कायोत्सर्ग करे ।

पंचविंशतिरूच्छ्वासः भोजने जिनवन्दनाम् ।
गते मरवे निषद्यायां पुरीषादविसर्जनम् ।।

भावार्थ :—भोजन को जाते समय मार्ग में कोई दोष लग जाय या गुरुजनों की बंदना को जाते समय कोई दोष लग जाय अथवा स्थान तजते समय, मल, मूत्र, नाक, श्लेष्म छोड़ते समय कोई दोष लग गया हो तो २५ श्वासोच्छ्‌वास प्रमाण कायोत्सर्ग करे। (आचारसार से उद्‌भूत)

इति कायोत्सर्ग विधि।

सामायिक विधि

समता सर्वभूतेषु संयमे शुभभावना।
आर्तरौद्रपरित्यागस्तद्धि सामायिकं मतम् ॥

भावार्थ :—समस्त संसारी जीवों में समता भाव करना, संयम के पालन करने की भावना करना, और आर्तरौद्र ध्यान का त्याग करना ही सामायिक है।

सामायिक शब्द की निरुक्ति (भाव)

(१) सम (एकरूप) आयः (आगमन) अर्थात् परद्रव्यों से निवृत्त होकर आत्मा में उपयोग की प्रवृत्ति होना।

(२) सम (रागद्वेष रहित) आयः (उपयोग की प्रवृत्ति) अर्थात् रागद्वेष परिणति का अभाव होकर साम्य रूप परिणति का होना सो सामायिक है।

पवित्रवस्त्रः सुपवित्रदेशे, सामायिकं मौनयुतश्च कुर्यात्।

अर्थात् पवित्र वस्त्र पहनकर, पवित्र स्थान में बैठकर मौनपूर्वक सामायिक प्रारम्भ करे।

सामायिकोपयोगी आवश्यक नियम

सामायिक करने के पहले अष्टशुद्धियों पर ध्यान देना जरूरी है। क्योंकि बाह्य कारणों की यथायोग्यता पर विचार न किया जाय तो सामायिक का यथार्थ रूप प्राप्त होने में सन्देह रहता है।

अष्टशुद्धियां

(१) **द्रव्य (पात्र) शुद्धि**—पंचेन्द्रिय तथा मन को वशकर अन्तरंग कषायों को निर्बलकर और बाह्य परिग्रहों का त्याग कर षट्‌काय के जीवों की सर्वथा हिंसा त्याग दी ऐसे उत्तम पात्र तो संयमी साधु हैं और अभ्यासी संयमी श्रावक सामान्य पात्र हैं।

(२) **क्षेत्र स्थान शुद्धि**—जहां कलकलाटादि शब्द सुनाई न पड़े तथा डांस, मच्छर आदि बाधक जन्तु न हों। चित्त में क्षोभ उत्पन्न करने वाले उपद्रव एवं शीत उष्ण आदि की बाधा न हो, ऐसा एकान्त निर्जन स्थान सामायिक के योग्य है।

(३) **काल शुद्धि**—प्रभात, मध्यान्ह और संध्या समय, उत्कृष्ट ६ घड़ी, मध्यम ४ घड़ी और जघन्य २ घड़ी तक सामायिक करे।

(४) **–आसन शुद्धि**काष्ठ, शिला, भूमि, रेत या शीतल पट्टी पर पूर्व दिशा या उत्तर की ओर मुख करके पद्मासन, खड्गासन या अर्धपद्मासन होकर क्षेत्र तथा काल का प्रमाण करके मौन ग्रहणकर सामायिक पाठ प्रारम्भ करे।

(५) **विनय शुद्धि**—आसन को कोमल वस्त्र या बुहारी से बुहारकर ईर्या-पथ शुद्धिपूर्वक सामायिक प्रारम्भ करे।

(६) **मन शुद्धि**—शुद्ध विचारों की तरफ उपयोग रखना।

(७) **वचन शुद्धि**–धीरे-धीरे साम्यभाव पूर्वक मधुर स्वर से पाठ उच्चारण करना।

(८) **काय शुद्धि**—शौच आदिक शंकाओं से निवृत्त होकर यत्नाचारपूर्वक शरीर शुद्ध करके हलन चलन क्रिया रहित सामायिक प्रारम्भ करना।

सामायिक के पांच अतिचार

(१,२,३) मन वचन काय को अशुभ प्रवर्ताना।

(४) सामायिक का समय व पाठ भूल जाना।

(५) सामायिक करने में अनादर करना।

उक्त आठ शुद्धियों पर ध्यान देते हुए पांच अतिचारों को बचाकर सामायिक प्रारम्भ करे।

मन्त्रोच्चारण

सामायिक करते समय णमोकार मन्त्र को ३ स्वासोच्छवास में १ बार पढ़ना चाहिये। १०८ बार मन्त्र के जाप्य में ३२४ श्वासोच्छवास होंगे।

आसन पर खड़ा होकर पूर्व दिशा की ओर मुंह करके **'अहं समस्तसावध-योगविरस्तोमि'** ऐसा कहकर ९ वक्त अथवा ३ बार णमोकार मन्त्र जपकर निम्न-लिखित मन्त्र पढ़कर ३ आवर्त और एक शिरोनति करे।

(१) **आवर्त्त**—दोनों हाथ जोड़ बायें से दायें तरफ घुमाने को आवर्त्त कहते हैं।

(२) **शिरोनति**—तीन आवर्त्त करके एक बार सिर झुकाकर नमस्कार करना।

नमस्कार करने का मन्त्र

प्राग्दिग्विदिगन्तरतः केवलिजिनसिद्धसाधुगणदेवाः।
ये सर्वद्धिसमृद्धाः योगीशास्तानहं वन्दे ॥

यह मन्त्र पूर्व दिशा का है। चारों दिशाओं के लिए उक्त मन्त्र आदि के 'प्राग्दिग्' के स्थान में 'दक्षिणादिग्' इसी तरह 'पश्चिमादिग्' और उत्तर में 'उत्तरा-दिग्' पाठ बदलकर चारों दिशाओं में ३६ बार मन्त्र, १२ आवर्त्त और ४ नमस्कार कर पद्मासनादि आसनेमाढ़ प्रथम सामायिक पाठ संस्कृत (भाषा) पढ़े। पश्चात् बारह भावना, वैराग्य भावना आदि बहुत धीरे-धीरे उस पाठ का भाव समझते हुए पढ़े। फिर नमस्कार मन्त्र का १०८ बार जाप्य करे। जाप्य शुरु करने के पहले **'ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो नमः।'** इसको पढ़ लेवे। और प्रकार जाप्य के अन्त में भी पढ़े।

जाप्य की विधियां तीन हैं।

१. कमल जाप्य

२. हस्तांगुलि जाप्य

३. माला जाप्य

प्रथम कमल जाप्य विधि—अपने हृदय में आठ पांखुरी के एक श्वेत कमल का विचार करे। उसकी हरेक पांखुरी पर पीतवर्ण के बारह-बारह बिन्दुओं की कल्पना करे। तथा मध्य के गोल वृत्ति में १२ बिन्दुओं का विचार करे। इन १०८

बिन्दुओं में प्रत्येक बिन्दु पर एक-एक मन्त्र का जाप्य करता हुआ १०८ बिन्दुओं पर १०८ जाप्य करे। कमल आकृति निम्न प्रकार है–

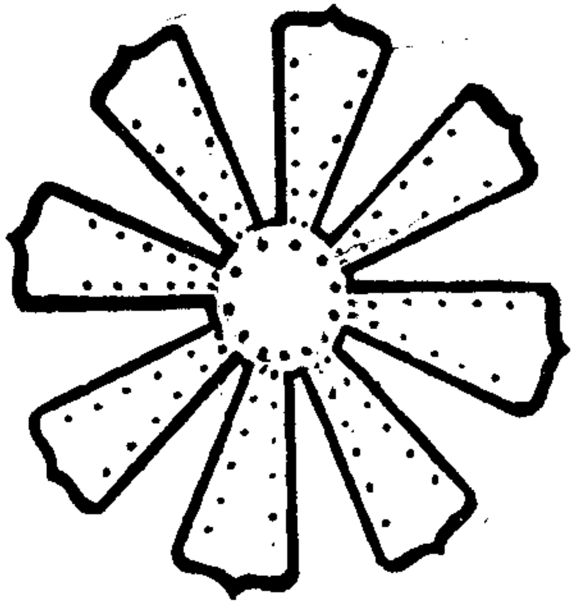

(२) **हस्तांगुलि जाप्य**—हाथ की प्रत्येक अंगुलि में ३–३ पोरवे होते हैं। इस प्रकार एक हाथ की चारों अंगुलियों में १२ पोरवे कुल होते हैं। दाहिने हाथ के प्रत्येक पोरवे पर एक एक बार नमस्कार मन्त्र जपे, इस प्रकार दाहिने हाथ के चारों अंगुलियों के १२ पोरवे पर १२ मन्त्र हुए। १२ मन्त्र हो जाने पर चाहे हाथ के प्रथम अंगुली के प्रथम पोरवे पर अंगूठा रखे इस प्रकार ६ बार में १०८ बार मन्त्र जाप्य हो जायेगा।

(३) **माला जाप्य**—१०८ दाने वाली सूत की माला बनाकर उसके द्वारा जाप्य करे।

इस प्रकार किसी प्रकार से जाप्य पूरा करके कोई स्तुति पाठ वगैरह पढ़ने का अवकाश हो तो पढ़े। बाद में पहले की तरह खड़ा होकर चारों दिशाओं में ६-६ बार नमस्कार मन्त्र जपे और तीन-तीन आवर्त्त तथा पूर्ववत् मन्त्र पढ़कर चारों दिशाओं में ४ नमस्कार जाप्य पूरा करे।

ततः समुत्थाय जिनेन्द्रबिम्बं पश्येत्परं मंगलदानदक्षम् ।
पापप्रणाशं परपुण्यहेतुं सुरासुरैः सेवित पादपद्मम् ।

भावार्थ—सामायिक से उठकर चैत्यालय में जाकर सब तरह के मंगल करने वाले, पापों को क्षय करने वाले, सातिशय पुण्य के कारण और सुर तथा असुरों द्वारा वन्दनीय ऐसे श्रीमज्जिनेन्द्र भगवान् के दर्शन करे ।

सामायिक से लाभ

सामायिक करने के समय क्षेत्र तथा काल का प्रमाण कर समस्त सावद्य लोगों का (गृह व्यापारादि पापयोगों का) त्याग करने से सामायिक करने वाले गृहस्थ के सब प्रकार के पापाश्रव रुककर सातिशय पुण्य का बन्ध होता है, उस समय उपसर्ग में ओढ़े हुए कपड़ों युक्त होने पर भी मुनि के समान होता है । विशेष क्या कहा जाय—अभव्य भी द्रव्य सामायिक के प्रभाव से नवग्रैवेयक पर्यन्त जाकर अहमिन्द्र हो सकता है । सामायिक को भावपूर्वक धारण करने से शान्ति सुख की प्राप्ति होती है, यह आत्म तत्व की प्राप्ति परमात्मा होने के लिए मूल कारण है । इसकी पूर्णता ही जीव को निष्कर्म अवस्था प्राप्त कराती है ।

जाप्य में १०८ दाने होने का कारण

१ समरम्भ, २, समारम्भ, ३ आरम्भ, इन तीनों को मन वचन काय इन तीनों से गुणा किया तो ९ भेद हुए । इन ९ को कृत, कारित, अनुमोदना इन तीनों से गुणा किया तो २७ भेद हुए । इन २७ भेदों को क्रोध, मान, माया, लोभ इन चार कषायों से गुणा किया तो १०८ भेद हुए ।

१०८ भेद ही पापाश्रव के कारण हैं, इनके द्वारा ही पापाश्रव होता है, अतः इनको नष्ट करने हेतु १०८ बार जाप्य किया जाता है ।

इति सामायिक विधि ।

व्रत कथा कोष के ग्रन्थ प्रकाशन खर्च में सहयोग प्रदान करने वाले दान दातारों की सूची निम्न प्रकार है।

३०,०००) ब्र. हंसाबेन, बम्बई

१५,०००) श्रीविनोदकुमारजी जौहरी (सर्राफ) दिल्ली
(स्वर्गीय श्री सुमतप्रसादजी की स्मृति में)

११,०००) श्रीमती दरशनदेवी जैन, दिल्ली
(स्वर्गीय श्री कैलाशचन्दजी जैन की स्मृति में)

७,०००) हीरापार्टी बम्बई आदि

५,०००) श्री शीतलप्रशादजी जैन दिल्ली

५,०००) श्री नरेशकुमारजी जैन दिल्ली

२१००) श्री आदिश्वरलालजी जैन दिल्ली

२१००) श्री हीरालालजी सेठी जयपुर

११००) श्री मूलचन्दजी कैलाशचन्दजी जैन, दिल्ली

१०००) श्री कैलाशचन्दजी जैन, करोल बाग दिल्ली

११००) गुप्तदान

५००) श्री नवीनकुमारजी जैन, दिल्ली

श्री दिगम्बर जैन कुंथु विजय ग्रंथमाला समिति उपरोक्त सभी दान दातारो का हार्दिक आभार प्रगट करते हुए धन्यवाद देती है और आशा करती है कि भविष्य में जब-जब भी इस प्रकार के अद्‌भुत अलभ्य ग्रंथों का प्रकाशन होगा, आप सभी का सहयोग मिलता रहेगा।

भगवान महावीर कैसे बने

Serving JinShasan
180852
gyanmandir@kobatirth.org

सिह को हरिण का शिकार करते देख भगवान श्रीधर केवली की वाणि का स्मरण कर चारण ऋद्धिधारी दो मुनिराज आकाश मार्ग से उतरकर सिह को सम्बोधित कर रहे है। मुनिराजों द्वारा सम्बोधन पाकर भगवान महावीर का दशभव पूर्व का जीव सिह मासाहार का त्याग कर सल्लेखना धारण कर लेता है, तब भेड़िया, बिच्छू, चिवटी, कौवे आदि पशु-पक्षी उसे मरा हुआ समझकर त्राश दे रहे है। सिह वीरता धीरता से उपसर्ग को सहन कर एक माह के बाद मरकर देव हो गया, और दशवे भव मे जगत वंदनीय भगवान महावीर हो गया।